आराध्य सूत्र

भाग-2



















संकलन/सम्पादन

निर्दोषसागर जी एवं निर्लोभसागर जी



प.पू. मुनिश्री निर्दोषसागरजी

जीवन-परिचय

पूर्व नाम	– बाल ब्रह्मचारी श्री पवन जैन
जन्म स्थान	– तारादेही, जिला-दमोह (म.प्र.)
जन्म तिथि	– 02 अक्टूबर 1967
पिता का नाम	– श्री हकुमचन्द डेवडिया
माता का नाम	– श्रीमती पुत्तीबाई जैन
भाई (दो बड़े)	– श्री चन्द्रकुमार जैन , श्री कैलाशचन्द्र जैन
अध्ययन	– सिद्धांत रत्न, न्याय रत्न
मातृभाषा	– हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत
ब्रह्मचर्य व्रत	– पूज्य 108 श्री निर्वाणसागरजी से 29 जून को
मुनि दीक्षा	– 10 अगस्त 2013, रामटेक, नागपुर
मुनि दीक्षा गुरु	– संत शिरोमणि आचार्यश्री 108 विद्यासागरजी महाराज
कृति संपादन	– सूक्तिमुक्तावली, सुबोध संस्कृत भारती, श्रावक चर्या, दशधर्म स्कंध, वृहद् सामायिक पाठ, नाममालादि शब्दकोश, अराधना पाठावली, जयसेन प्रतिष्ठा पाठ, अमृत भारती, श्रुताराधना, तत्त्वार्थ सूत्र (प्रभाचंद्राचार्य कृत), जैनेन्द्रवृत्ति, आराध्य सूत्र, आराध्य सूक्ति, आराध्य सूत्र भाग-2, णमोकार का जाप करो अपनी रक्षा आप करो इत्यादि।

आराध्य सूत्र

भाग-**2**

सफलता के अद्भुत रहस्य एवं उन्नति के उपाय :

संकलन/सम्पादन

मुनि निर्दोष सागर जी, मुनि निर्लोभ सागर जी

नैतिक, व्यवहारिक, धार्मिक, आध्यात्मिक जीवन जीने की कला, हँसते-हँसते मरण को वरण करने की कला, घर को स्वर्ग बनाने वाला, हिन्दी में प्रकाशित अन्य भाषाओं में प्रकाशाधीन आचार्यश्री के अनन्त उपकारों की स्मृति में आराध्य सूत्र का द्वितीय भाग अध्येताओं के लिये प्रस्तुत किया गया इंग्लिश, संस्कृत, प्राकृत मराठी कन्नड़ छह भाषाओं में अनुवादित लोकप्रिय ग्रन्थ ''आराध्य सूत्र'' का द्वितीय भाग।

- आपके पास दो रुपये हैं तो एक रुपये से रोटी खरीदिये और एक रुपये से अच्छी किताब, रोटी जीवन देगी और अच्छी किताब जीवन जीने की कला देगी।
- पुस्तक का मूल्य रत्नों से भी अधिक है, क्योंकि रत्न बाहरी चमक दिखाते हैं जबकि पुस्तकें मन और भविष्य को उज्जवल करती हैं।
- शान्त चित्त वाले मनुष्यों को स्थाई हित के लिये वैराग्य ही प्रिय होता है।

प्रकाशक

श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन शांति निकेतन, उदासीन आश्रम, ईसरी बाजार, पारसनाथ (झारखंण्ड)

★ **कृति**

आराध्य सूत्र भाग-2

सफलता के अद्भुत रहस्य एवं उन्नति के उपाय

★ **संकलन/सम्पादन**

प.पू. मुनिश्री 108 निर्दोषसागरजी महाराज

प.पू. मुनिश्री 108 निर्लोभसागरजी महाराज

★ **संस्करण**

प्रथम-2000, द्वितीय- 5000 गुना चातुर्मास, 2024,

कुल 7000 प्रतियाँ प्रकाशित

★ **प्राप्तिस्थान**

1. श्री दिगम्बर जैन शान्ति निकेतन उदासीन आश्रम

ब्र. पंकज जी शास्त्री

ईसरी बाजार, जिला-गिरिडीह (झारखण्ड) -825167 मो. : 08969166919

2. **बबली दीदी**

कमरा नं.7 , पिसनहारी मढ़िया जी जबलपुर मो. 9993476584

★ **मूल्य :** स्वाध्याय

★ **मुद्रक :** पारस प्रिंटर्स (पवन जैन)

207/जी-10, सांई बाबा काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल-462011

फोन: 0755-4620034, 9826240876

★ **प्रकाशक :** श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन शांति निकेतन,

उदासीन आश्रम, ईसरी बाजार, पारसनाथ (झारखंण्ड)-825167

पहले इसे पढ़ो फिर बढ़ो

यद्विद्या दर्पणायते

प्रिय पाठकों ! यह ग्रन्थ एक दर्पण की भाँति है जैसे कि दर्पण के सामने जाते ही अपने चेहरे की कालिख दिख जाती है उसी प्रकार इस ग्रन्थ के अध्ययन करने से व्यक्ति को अपनी काली करतूतों पर पश्चात्ताप के आँसुओं से पोंछा लग जाता है। ऐसी अतीव रूचिकर विषयवस्तु को इस ग्रन्थ में संजोकर रखा गया है। सर्व प्रथम णमोकार मन्त्र की अचिन्त्य अद्भुत महिमा का वर्णन सोदाहरण प्रस्तुत किया गया है, इसमें लिखा है कि इस महामन्त्र की एक लाख जाप करने वाला व्यक्ति तीर्थकर प्रकृति का बंध करता है। स्वाध्याय करने वाला सुधी श्रावक अनेक जन्मों के सञ्चित कर्मों को क्षणमात्र मे भस्म कर देता है, जैसे सुमेरु के बराबर ईंधन को आग की एक कणिका भस्म कर देती है। संसार के प्रत्येक प्राणी को विषयों की चाह रूपी दावानल प्रतिक्षण जला रही है, उस दावानल को शान्त करने के लिये ज्ञानरूपी मेघ ही बुझानेमें समर्थ है अन्य कोई शक्ति नहीं बुझा सकती है। स्वाध्याय से विवेक आता है, उससे शान्त स्वभाव आता है, उससे संसार शान्त होता है अतः प्रत्येक पल स्वाध्याय में व्यतीत करना चाहिए। दस धर्मों को कर्मों के दस करणों को भस्म करने वाले कहा है, एक क्षण का क्रोध व्यक्ति के सम्मान, सम्पदा, साथी और समझदारी बर्बाद कर देता है, क्रोधी व्यक्ति की रेखाएँ बदल जाती है। क्रोध के काल में औदारिक शरीर की वर्गणायें अधिक मात्रा में खिरने से शरीर दुर्बल हो जाता है।अतः क्रोध से सदा बचने का प्रयास करना चाहिए। मानी की हानि ही हानि। अहंकार रूपी वृक्ष पर दो कड़वे फल लगते हैं जिनमें पहला व्यक्ति को 'अंदर से अयोग्य'बनाता है और दूसरा 'बाहर से अप्रिय' बनाता है अतः अहंकार की कार में जो होगा सवार, उसका जीवन होगा बेकार। दूसरों को छलने से आत्मा मे छाले पड़ते है। कपट मीठा जहर है जिसको खाने में मिठास आती है किन्तु उसका फल मौत होता है। कपटी का चेहरा धर्मात्मा का और हृदय पापी का होता है। **तीन थान संतोष कर धन भोजन अरु दार। तीन तोष ना कीजिये, दान पठन तपाचार।** मानव को धन, भोजन और भार्या में सदासंतोष धरण करना चाहिए, किन्तु दान, अध्ययन और तपश्चरण में कभी संतोष नहीं करना चाहिए। सत्य सदा शान्तिदायक होता है इसलिये अपने जीवन को यदि सत्य की कसौटी पर कसना है तो कम बोलो, मीठा बोलो, धीरे बोलो, जरुरत होने पर बोलो, जब भी बोलो कर्णप्रिय, हृदयग्राही, विनय सम्पन्न बोलो ऐसा बोलने वाले व्यक्ति के मुख से सदा सत्य ही निकलता है। संयम का बंधनभव-भव के बंधन को खोने वाला है अतः अभिनंदन के योग्य होता है ''संयम रतन सम्भाल विषय चोर बहु फिरत हैं''। ज्येठ तपता है तो मेघ बरसते हैं, तवा तपता है तो रोटी सिकती है, दिमाग तपता है तो द्वारका जलती है और जीव तप तपता है तो कर्म जलते हैं। मेघजब तक संग्रह करते है तब

तक काले होते हैं और त्यागते हैं तो उजाले होते हैं अतः त्यागमय जीवन होना चाहिए। इच्छा का निरोध करना तप है इसके माध्यम से मोह क्षीण होता है तब आकिञ्चन्य धर्म आता है। ब्रह्म की उपासना ही परमात्म पद की पूर्णता का कारण है। इस प्रकार दस धर्म का हृदय ग्राही वर्णन इस ग्रन्थ में किया गया है। शिक्षा सहस्त्री में सौ-सौ वाक्य के 10 अधिकार दिये गये हैं, जिनको पढ़कर व्यक्ति के अज्ञान का, आलस का, आर्त-रौद्र ध्यान का ताला खुलकर ज्ञानका, विशुद्धिका और धर्म ध्यान का भण्डार प्राप्त हो जाता है। जैसे धन का सदुपयोग दान में, समय का सदुपयोगप्रभु गुणगान में और मन का सदुपयोग ध्यान में करना चाहिए। समय, सलाह और सम्पदा कभी बिना माँगे नहीं देना चाहिए क्योंकि समय ही सोना है, सलाह जीवन का श्रृंगार है और संपदा पुण्य और परिश्रम की फसल है। प्रतिष्ठा के लिये शिष्टाचार का पालन करना आवश्यक है शिष्टाचार जीवन का पहला आचार है- जैसे शरीर की शोभा वस्त्रों से, आभूषण से, तिलक से, मुकुट से होती है, उसी प्रकार जीवन की शोभा शिष्टाचार रूपी तिलक व मुकुट से होती है। आज की जनता को पानी की बाढ़ ने नहीं डुबोया जितना शराब ने डुबोया है। अतः व्यक्ति को दारू नहीं दूध का सेवन करना चाहिए। दारु मँहगी दूध सस्ता, एक बाटल दारू 1000 रु की, एक लीटर दूध 50 रु का। एक बाटल शराब की कीमत से 20 लीटर दूध आता है जिससे व्यक्ति का परिवार सुख, शान्ति, तन्दुरुस्ती से कमल की तरह खिल उठता है। इस प्रकार शिक्षा सहस्त्री में सुंदर-सुंदर शिक्षाएं दी गयी हैं। इस विषय को एक-एक मोती की तरह संजो करके रखा गया है, अतः मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह कृति अध्येताओं के जीवन मे संजीवनी बटी का काम करेगी। ''अनुभव से आँकना और आँख खोलकर झाँकना'' रत्नत्रय प्रदाता गुरुवर आचार्य श्री विद्यासागर जी एवं ब्रह्मचर्य व दो प्रतिमा प्रदाता मुनि श्री निर्वाण सागर जी तथा पण्डित श्री पन्नालाल जी साहित्याचार्य सागर, पण्डित जगन्मोहन लाल जी शास्त्री कटनी, पण्डित दरबारी लाल जी कोठिया बीना, बा.ब्र. पं. रतन लाल जी शास्त्री इंदौर, बा.ब्र.श्री जिनेश जी शास्त्री, अधिष्ठाता वर्णी गुरुकुल जबलपुर, ब्र. राकेश जी शास्त्री सिद्धायतन सागर, ब्र.प्रदीप जी 'पीयूष', ब्र.विनोद जी अधारताल जबलपुर द्वारा प्राप्त ज्ञान का उपयोग भी इस शास्त्रजी में किया गया है अतः इन सबके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने के लिए हमारे पास शब्द नहीं हैं तथा ''ब्र. प्रतीक भैयाजी'' पठारी, ब्र. पीयूष जी तिलक नगर इंदौर, अभिषेक एवं अक्षत जी (मामा भांजे) सुखदेव नगर इंदौर का अकथनीय सहयोग रहा, एतदर्थ ये सभी आशीर्वाद के पात्र हैं। ग्रन्थ को व्यवस्थित करने में बहुत समय लग गया पुण्यार्जक ने श्रुतसेवा का भाव बनाया इसलिये उन सबके लिये खूब-खूब आशीर्वाद।

: मुनि निर्दोष सागर

: मुनि निर्लोभसागर

विषय दर्पण

क्र.	विषय	पृ.क्र.	क्र.	विषय	पृ.क्र.
1	पहला सुख निरोगी काया	462		प्रभु गुणगान में।	35
2	जिनागम ज्ञान- मुक्तिपथ का वायु यान।	1	20	समय, सलाह, सम्पदा बिना मांगी कभी न दें।	44
3	अपना लोटा छानो।	16	21	प्रतिष्ठा के लिए शिष्टाचार होना चाहिए।	53
4	मजबूरी- भूसा चोरी।	17	22	जुबान पर ताला नहीं लगाम चाहिए।	60
5	सिनेमा में तूफान।	17	23	समुद्र ने नहीं शराब ने लोगों को डुबोया।	67
6	पुस्तक हेतु कुर्ता गिरवी।	17	24	कष्ट सहें और कड़वी बात सुनें	72
7	मेले में मावा नहीं माँ चाहिए।	18	25	कहो वही बात जो सच्ची हो, अच्छी हो, उपयोगी हो।	77
8	चार मूर्ति देखें करतूति	18	26	हाथी पाकर, खुश होता ईंधन ढोकर।	84
9	जामुन खाली है गुठली फेंक दी।	18	27	समय कम अरमान ज्यादा।	89
10	विद्वान और विद्यार्थी का कर्त्तव्य।	19	28.	पंचम काल में 49 विपरीतताएँ	90
11	विप्र का बेटा-गङ्गा पर बैठा।	20	29	अद्भुत जानकारियाँ।	91
12	सिद्धसेन का शास्त्रार्थ।	20	30	आत्म निरीक्षण के पचास प्रश्न।	93
13	संस्कार शिविर।	21	31.	वैराग्य दोहावली	95
14	बहू नमक- बिटिया शक्कर।	23	32	सत्संगति की महिमा।	97
15	षट् लेश्या।	23	33	सेठ की गाड़ी।	99
16	प्रत्येक कार्य में सफलता कैसे प्राप्त करें।	24	34	सत्संगति इत्र की दुकान।	99
17	सफल सीख- स्वस्थ बनो पर।	25			
18	धर्म मगर को दिया।	33			
19	धन दान में, मन ध्यान में, समय				

क्र.	विषय	पृ.क्र.	क्र.	विषय	पृ.क्र.
35	क्षेत्र का प्रभाव- डेरी में शराब।	100	54	संस्कारित शिला।	112
36	वज्रवाहु-उदयसुन्दर।	100	55	मिट्टी का घड़ा महिला के शिर पर खड़ा।	112
37	जैसे झालर की झंकार वैसे जीवन में संस्कार।	101	56	अभिमन्यु। मदालसा।	
38	स्त्री दुःख। जुआ।	105	57	डॉक्टर या डाकू।	113
39	आपकी संस्कृति वस्त्रों पर हमारी संस्कृति चरित्र पर।	106	58	घुड़साल का तोता।	113
40	न कोई प्यार न कोई प्रशंसा।	107	59	मिट्टी के बर्तन।	114
41	देश के प्रति ईमानदार।	107	60	योगत्रय संस्कार।	114
42	अच्छे इंसान की योजना।	107	61	मैं रिश्वत वालों का अन्न नहीं लेता।	115
43	व्यर्थता।	107	62	पश्चात्ताप का रस-देखो कवि सरस	115
44	संस्कार हीन जैनी।	108	63	सप्त व्यसन।	117
45	कुत्ते को काँच महल।	108	64	अभक्ष्य वर्णन।	118
46	पेड़, पशु, मनुष्य।	108	65	रात्रि में भोजन क्यों नहीं करना चाहिये ?	120
47	उतावला सो बावला।	109	66	पानी छानने की क्या आवश्यकता है ?	123
48	बुद्धि, लज्जा,हिम्मत, तन्दुरुस्ती का निवास कहाँ।	109	67	फल पाप का भोगे आत्मा।	125
49	बूढ़े को घण्टी का सहारा।	110	68	पाप आस्रव के कारण।	125
50	एक आँख फूट जाए।	110	69	बुढ़ापे में स्त्री मरण।	127
51	अभ्यास-रानी बछड़े के पास।	110	70	कन्या को दहेज में ऊंट।	127
52	पहले बाल परीक्षा फिर वैसी शिक्षा।	112	71	उत्तम जेल।	128
53	कपूत का जबाब, माँगा माँ से दवा का हिसाब।	112	72	पुण्य की महिमा।	128

क्र.	विषय	पृ.क्र.
73	अरण्य मे रक्षक पुण्य।	129
74	पुण्य झड़ता-पाप गड़ता।	130
75	किसी को सोना.....रोना।	
76	पल में हँसे तो.....रुलाती।	
77	बंदर के अंदर माया का समन्दर।	130
78	नारियल में पानी पुण्य की निशानी।	131
79	कर्मों कि गति।	131
80	मुक्तक माला	132
81	भाग्य और पुरुषार्थ।	132
82	भक्ति- प्रभु भजन से होता-पावन तन मन जीवन।	134
83	पावन मेरे नयन भये...।	134
84	भगवान पैर पर पैर...।	136
85	पुजारी या भिखारी।	136
86	माथे पर तिलक।	136
87	मैं नाती को सोने की.....खीर खाते...। बालक ने ए.बी.सी.डी. आदि वर्णमाला।	137
88	धर्म यज्ञ। दूरदर्शन या देवदर्शन। मैना की भक्ति। पानी से मकान बनता या गिरता। शास्त्रों का हो पठन सुखदा...। देव दर्शन प्रशंसा।	137-138
89	चेहरे पर कालिख। वर्णी जी की शिखर्जी यात्रा।	138
90	हनुमान ने पत्थरों पर राम लिखा। कुम्भकार का दर्शन।	139
91	आपने दोनों हाथ पकड़ लिए।	139
92.	अंधा मन्दिर जा रहा। जन्म के दश अतिशय। केवलज्ञान के दश अतिशय। चौदह देव कृत अतिशय।	141 147
93	रत्न विक्रय जरासंध के पास। प्रातिहार्य।	147
94	धर्मध्यान के बाह्य लक्षण। भगवान का विहार।	141 141
95	ज्वार के दाने मोती।	146
96	ज्ञान और वैराग्य मृतकवत्, भक्ति आज भी जवान।	146
97	पाकिस्तान का जैन मन्दिर। सबको एक-एक पद	146

क्र.	विषय	पृ.क्र.	क्र.	विषय	पृ.क्र.
	हनुमान को।	146	119	उपगूहन अङ्ग।	161
98	जैसा सोचो वैसा पाओ।	146	120	स्थितिकरण अङ्ग।	162
99	जब चिन्त्यो तब...।		121	सिंह कि गुफा में।	163
100	सम्यग्दर्शन की महिमा।	149		माघनन्दि का पुनरागमन।	163
101	देव ने सेठ से पूजा का आग्रह।	149	122	वात्सल्य अङ्ग।	163
102	पाँच लब्धि।	152	123	अपना बनाने के छह कारण।	164
103	लोक मूढता।	153	124	वात्सल्य वश सफेद	
104	जहां प्रकाश वहाँ सुई खोजो।	154		खून। पशु सम्मेलन।	165
105	पगड़ी का पड़ाव बड़ों के।	154	125	ताऊ ने तराशा- वेश्या के।	165
106	घाट में घाट का सन्तुलन।	154	126	मित्र के गले का दो बूँद खून।	166
107	किसके प्रति बहुमान।	156	127	गाय बछड़े के प्रेम ने शेर का।	166
108	विश्वास, बुद्धि, तर्क, श्रद्धा।	157	128	जाती भाई का सहयोग।	167
109	बेटी कुछ खाती नहीं।	157	129	सन्यासी कि झोपड़ी मे गधों से।	167
110	करोड़पति रिक्शा।	157	130	शिकार से वहिष्कार।	167
111	इत्र, मित्र, चरित्र, पवित्र।		131	वात्सल्य गुण ऋद्धि प्रदाता।	168
112	दरिद्र, पापी, कुष्टी।	158	132	एकता में शक्ति की विशेषता।	169
113	निःशंङ्कित अङ्ग।	158	133	परोपकार की महिमा।	169
114	तीन प्रकार के पदार्थ।	158	134	छः प्रकार के लोग।	
115	निःकांक्षित अङ्ग।	159		नारियल में पानी।	170
116	निर्विचिकित्सा अङ्ग।	160	135	गरीब गली में अमीर	
117	चमारों की सभा।	160		मन्दिर में दिये जलाता।	170
	शूद्री के यहाँ जन्मे।		136	सर्प ने काटा चूहा दिखा।	170
118	अमूढ़दृष्टि अङ्ग।	161	137	डबल परीक्षा-पेपर दूँ या जान।	171

क्र.	विषय	पृ.क्र.
138	मन्दिर बनाया तो धन्यवाद।	171
139	धर्म ग्रंथ का रहस्य समझ में।	172
140	क्या कूबड़ लगाना भी।	172
141	कपड़ा नहीं गधा बचाना।	172
142	धर्म कि पुस्तक।	172
	परोपकार के तीन प्रश्न।	173
143	उपकार जननी और जन्मभूमि का।	174
144	कुत्ता, तोता को पालता।	174
145	माँ कि महिमा वरणी।	174
146	माँ एक रानी अनेक।	174
147	इंजीनियर की नहीं।	175
148	मित्र हो इत्र कि तरह।	176
149	प्रभावना अङ्ग।	176
150	सेठ कि उदार भेंट (हरजस)।	177
151	प्रेम पूर्ण आहार-सबसे।	177
152	दस सोपान- दस लक्षण धर्म- उत्तम क्षमा।	178
153	क्रोध-हरण करता बोध।	178
154	यशोधर का यश वर्धन।	182
155	क्रोधान्ध राजा।	182
156	उपकारी नेवला। चिलाती।	183
157	क्रोध पर विजय पाने का फार्मूला।	184
158	क्षमा तीन प्रकार की।	186
159	श्रावक बनूँ या श्रमण।	186
160	गजकुमार मुनि।	186
161	लात का जबाब लात से।	186
162	तीन तरह के धर्मात्मा।	187
163	गागर में सागर।	187
164	किसान का प्रतिशोध।	194
165	दुकानदार की क्षमा।	194
166	क्षमाधर्म दोहावली।	189
167	चिरोंजा बाई का क्रोध।	194
168	गाँधीजी को गाली।	195
169	बिच्छू का आतंक।	195
170	ईसामसीह को शूली।	195
171	सौ बार गङ्गा स्नान।	195
172	उद्दण्ड बालक को क्षमा।	196
173	पं. टोडरमल जी की क्षमा।	196
174	अभी तक गरजती थी।	196
175	सर्प की क्षमा	196
176	द्रोपती की क्षमा।	196
177	मेरा देश महान सौ मे से सौ भगवान।	197
178	पन्द्रह लड्डू।	197

क्र.	विषय	पृ.क्र.
179	सुकौशल स्वामी।	198
	सुकुमाल स्वामी।	198
180	रामचन्द्रजी का आभार।	198
181	तुंकारी की क्षमा।	198
182	आ. शांतिसागरजी पर उपसर्ग।	199
183	दुर्जन-क्रूर-कुमार्गरतों पर।	199
184	मार्दव धर्म-अहं का विसर्जन अर्हं का सर्जन।	200
185	वहाँ मौत है।	202
186	जिसने अपने को कुछ माना।	202
187	विनय से लाभ।	203
188	अहङ्कार को जीतने के उपाय।	203
189	मृदु दोहावली।	206
190	निर्मदी कहानी।	
191	अहङ्कार रूपी लङ्गर खोला नहीं।	209
192	ज्ञानमद, रूपमद।	209
193	मन्दिर का मान नहीं अंदर।	209
194	हमारे हाथ अर्थी के बाहर।	209
195	जुआरी, पुजारी, कमाऊ, अंधा- चार पूत।	210
196	विद्या गुरु को ऊपर बैठाना।	211
197	जैसे को तैसा। दौलत अंधी।	212
198	उत्तम आर्जव- कपट पटकता नरक।	213
199	मायाचारी के प्रकार- किशमिश, बेर, नारियल, छुहारा।	213
200	वेरिस्टर चित्तरञ्जन दास।	214
201	माया से हानि।	215
202	अमृत सूक्ति।	217
203	प्राञ्जल कथानक-दूसरों को खाई अपने लिए कुंआ। मृदुमुनी। माया का फल। घुड़सवार। दो चेहरे। मयूर और कछुए की मैत्री।	218 219-220
204	आर्जव धर्म से लाभ-	220
	चोर को पोटली उठा दी।	221
	डाकू खड़ग सिंह।	221
205	धन की नहीं, साफ नीयत की कमी।	221
206	माया का कुफल त्रियाचरित्र।	222
207	उत्तम शौच धर्म- लोभ मचाता क्षोभ।	226
208	लालच का इलाज।	227
209	शुचि दोहावली।	228
210	शुचि संस्कृत सदन।	228

क्र.	विषय	पृ.क्र.
211	कड़ा के लोभ में जान गँवाई।	231
212	दो कदम पहले सूर्यास्त।	232
213	लोभी ने आँख फोड़ी।	232
214	विप्र का श्री फल।	232
215	लोभ पाप का बाप।	233
216	कंजूस को ठगा।	233
217	सोने का बैल।	233
218	पवित्र हृदय वाला बालक।	234
219	डॉ. को अटैक।	234
220	जवानी का लोभ।	234
221	ईमानदार की मिशाल।	234
222	रायचन्द्र जी से हीरा।	235
223	साधु का उपदेश।	235
224	कड़ार पिंग।	235
225	सत्य धर्म-वाणी को बाण नहीं वीणा बनाएँ।	237
226	असत्य का व्यापार जीवन की हार।	238
227	सत्य संस्कृत सदन।	239
228	सत्य धर्म कथानक-शेर को गधा। वर्ष में एक झूठ। वसु झूठ सेति। सत्यघोष।	240-241
	वाणी से व्यक्ति की पहचान।	243
229	सत्य वर्धन अलीक-विसर्जन।	243
230	सेठ की सत्यता।	246
	सत्य के प्रयोग।	246
	जब से मैं खड़ा हूँ।	
231	मैं चोर हूँ। वारी नैया।	246
	सत्य और सुन्दर।	247
232	कम बोलो-काम का बोलो।	247
233	बांसुरी की विशेषता।	248
234	वचन में चतुराई।	250
235	मैं पर धन कभी नहीं लेता।	250
236	वर्धमान का स्याद्वाद।	251
238	कर्तृत्व बुद्धि।	251
239	स्वारथ का संसार।	252
240	जीवन जीना मौन से।	252
241	अपनी सुरक्षा।	255
	मौनं सर्वार्थ साधनं।	255
242	उत्तम संयमधर्म- संयम धारण भव दुःख वारण।	258
243	संयम संस्कृत सदन।	260
244	शुभचन्द्र और भर्तृहरि।	263
245	वज्रदंत चक्रवर्ती।	264
246	प्रद्युम्न का वैराग्य।	264
	यमपाल का संयम।	265

क्र.	विषय	पृ.क्र.
	बीज रक्षण। धन्वन्तरि	265
	और विश्वानुलोम।	
247	असंयम का होना	
	भव-भव में रोना।	266
248	घड़ी घड़ी में घड़ी बदलती।	268
249	संयम सीख-मोती मिला सीप।	270
250	संयम संस्कृत सदन।	274
251	श्रावक के सत्रह नियम।	277
252	असंयम का परिहार-	278
	नरकाया को सुरपति तरसे।	
	आपने गृहस्थी नहीं बसाई।	
	श्वसुर का जन्म नहीं हुआ।	
253	पार होने के लिए घाट।	279
	ये आँख खुली का और	
	वह आँख बंद का स्वप्न।	279
254	मृगसेन धीवरअभयदान प्रदाता।	279
255	उत्तम तप धर्म-	281
256	द्वादश विध तप-	
	भावों से किया कब।	281
257	शिष्य की परीक्षा।	283
258	स्वाध्याय तास का-	
	विश्वास मोक्ष का।	284
259	सेठ को मुक्ति चाहिए।	285
260	तपधर्म से लाभ।	287
261	तप तन से-भले विचार मन से।	288
262	यमराज का पत्र।	288
263	मनुष्य की उम्र चालीस।	288
264	तीनों अवस्था व्यर्थ।	288
265	जल तरणी विद्या।	289
266	तप की प्रेरणा।	289
267	उत्तम त्यागधर्म-	
	त्याग से बुझाओ राग की आग।	293
268	सोला-सोलह प्रकार का।	295
269	अनङ्गसरा से विशल्या।	296
270	अकलङ्क और निकलङ्क।	297
271	भीम ने नगाड़ा पीटा।	302
272	वर्णी जी का श्रोता।	302
273	वृक्ष की उदारता।	302
274	संसार कूप से	
	निकलने का उपाय।	303
275	त्याग धर्म-काटे कर्म।	304
276	सेठ की सम्पत्ति बीस हजार।	305
277	आहार दान का दाता।	305
278	मन में नवधाभक्ति...	
	ऊपर वाला तेरा खजाना...।	306
279	डॉ. फीस नहीं ली-रिक्शा वाले	306

क्र.	विषय	पृ.क्र.
280	राजा भोज- पं. के दाता।	306
281	धनार्जन मे कष्ट- विसर्जन...।	307
282	राम-सीता ने वन में आहार दान...।	308
283	धीवर को एक रुपया।	308
284	दान से अच्छा धर्म नहीं।	308
285	खजाने में साँप।	308
286	लोग माल उड़ा कर भी बुरा...।	308
287	प्रशंसा के लोभी।	309
288	त्याग की प्रेरणा।	309
289	धन्यकुमार चरित्र दान का श्रेष्ठतम फल।	311
290	उत्तम आकिञ्चन्य धर्म।	320
291	जीवन शैली के चार भेद।	320
292	चार तरह के लोग।	320
293	अनाथ पाने का बोध।	324
294	निज की ओर वापसी।	324
295	कोठी नहीं धर्मशाला।	324
296	रत्न आते ही भाव बिगड़े।	325
297	चाणक्य के पैर में काँटा।	325
298	पण्डितजी का बेटा इन्दौर...।	325
299	बच्चा गुम गया।	325
300	आकिञ्चन्य से लाभ।	326
301	जैन मूर्ति महँगी क्यों।	326
302	परमात्मा के दर्शन।	326
303	सुकुमाल को राई। अज्ञान। भ्रांति टूटी।	326-327
304	परिग्रह से हानि।	327
305	कुँये का पानी गन्दा।	328
306	ममत्व भाव से दुःख।	329
307	अपने पन से दुःख।	329
308	नींद हराम।	
	छाँछ पीकर जोड़ा।	330
	बंदर की बंद मुट्ठी कर चना।	330
	हमारी बारह भावना।	330
309	मोह जीतने के उपाय।	331
310	जो दिन कटे सो आयु में...।	332
311	पुत्र को पत्र- 'घनश्याम'।	333
312	उत्तम ब्रह्मचर्यधर्म-	334
313	ब्रह्मचर्य से लाभ।	334
314	विजय का शुक्लपक्ष मे ब्रह्मचर्य।	335
315	कुशील से हानि।	336
	शील की नौ बाढ।	336
	ब्रह्मचर्य के पाँच अतिचार।	336
316	स्वप्न में गृहस्थी।	342

क्र.	विषय	पृ.क्र.
	कॉलेज की लड़की।	342
	यशोधरा रानी।	342
317	माँ नहीं राक्षसी।	343
318	गर्भ मे ही स्वर्ग की आयु।	344
319	धावला पुस्तक सप्तम।	344
320	उपवास से ब्रह्मचर्य पाला।	344
321	रानी अमृता का छल।	344
322	मैथुन से शारीरिक हानि।	345
323	रोगों का राजा एड्स।	345
324	वीर्यवास। वीर्य रक्षा के उपाय। सामाजिक हानि।	345
	माँ का कलेजा। स्त्री के भाव।	346
325	कुशील से बचने के उपाय।	347
326	ब्रह्मचर्य की पाँच भावनायें।	347
	यह राग आग दहे सदा।	347
327	काजल की कोठरी।	349
328	देशभूषण-कुलभूषण।	349
329	बुढ़िया को वहीं छोड़ दिया।	350
330	वेश-भूषा, बनारसी साड़ी।	350
331	पत्नी ने पति को पिताजी कहा। जब राम बनता हूँ।	350
	मैं आपका पुत्र हूँ।	350
332	सात दिन का जीवन।	351
	भीष्म का ब्रह्मचर्य।	351
	ज्ञानी हँसता।	351
333	क्षमा वाणी जन-जन की।	353
334	अंधे के हाथ में लेम्प।	353
	राजामधु। अशान्तिसागर।	354
	वज्रकर्ण। धवलसेठ।	355
335	निश्चय व्यवहार (सोदाहरण)।	360
336	निमित्त-उपादान (कृष्ण जी की बांसुरी)।	363
337	तत्त्वार्थ सूत्र प्रथम अध्याय-	365
338	सूत्र संख्या। चकार संख्या। तत् संख्या।	365
339	सम्यग्दर्शनादि के दृष्टांत।	365
	बीस प्रकार की भूलें।	366
340	द्वितीय अध्याय-भावों को सम्भालना।	368
341	मन्दिर जाने आने के भाव। गजब का तमाशा।	369
342	भावों का प्रभाव।	369
	मन के हारे हार है।	370
	अग्नि में चार कषायें।	371
343	द्रव्य परावर्तन के दृष्टान्त।	372
344	शरीरोत्पत्ति का क्रम।	374

क्र.	विषय	पृ.क्र.
	सप्त धातु की मात्रा।	374
345	तृतीय अध्याय-	375
346	तीन वातवलय।	375
	नरक के आठ दुःख।	
347	परिणाम। मध्यलोक का वर्णन।	376
348	आहार होता नीहार नहीं।	
	भोग भूमि का वैभव।	379
349	उत्पत्ति क्रम। कुलकर वंश।	381
	वज्रजङ्घ श्रीमति।	381-382
350	नव निधियों का वर्णन।	382
351	मध्यलोक के	
	अकृत्रिम जिनालय।	382
	169 महापुरुष।	383
352	चतुर्थ अध्याय-	384
353	आज्ञा।	384
	उपपाद शैय्या।	384
	देवियों की उत्पत्ति।	384
354	पञ्चम अध्याय-	386
355	क्रिया। सत्य	
	नारायण के छः पुत्र।	386
356	असंख्यात प्रदेश।	387
	आकाश नीला। छः द्रव्य।	387
357	मशीन में छः द्रव्य।	387
	पञ्जय मूढा हि पर समया।	387
358	षष्टम अध्याय-	388
359	वचनों की शक्ति।	388
	इर्यापथ आस्रव।	389
360	पच्चीस क्रियायें।	389
	तन्दुलमच्छ।	389
361	मनुष्य के पाँच दुःख।	
	अधिकरण।	389
362	जीवाधिकरण के 108भेद।	390
	उपयोग संयोग।	390
	फोटो बिगाड़ दी।	390
363	सप्तम अध्याय-	391
364	मूर्च्छा परिग्रह।	392
	वास्तविक अदत्तादान।	392
365	मिलावट। पाँच मार्ग।	392
	लड़की की जिद।	392
366	अष्टम् अध्याय-	394
367	हेतुओं का संक्षेप।	
	पाँच अङ्क का कर्ज।	394-395
368	लालटेन पर कपड़ा।	
	आठ कर्मों का दृष्टांत।	395-396
369	प्रतिपक्षी की भी प्रसिद्धि।	396
	यथायोग्य उदय।	396

क्र.	विषय	पृ.क्र.
370	स्तवुक संक्रमण।	397
371	दशकरण दृष्टान्त।	397
	गुणस्थानों के उदाहरण।	398
372	नवम अध्याय-	399
373	ध्याता का लक्षण। तीन गुप्ति।	
	पाँच समिति।	399
374	प्रतिक्रमण। प्रतिक्रमण विधान।	400
375	दशम अध्याय-	402
376	आठ प्रकार की मुक्ति।	402
	दान-पूजा श्रावक के।	402
377	समवशरण में छत्तीस द्वार।	402
	चार अभाव।	404
378	तीन अनुबद्ध केवली।	
	पाँच श्रुतकेवली।	404
	तीन करण।	405
	बारह प्रकार के समयसार	406
379	छः प्रकार की भूलें।	406
	मैं भ्रम्यो अपन पो।	
380	धावला पुस्तक एक।	406
381	श्रीपाल जी चरित्र।	408
382	भगवान महावीर समवशरण।	409
383	सुरसुन्दरी-मदनसुन्दरी अध्ययन	410
384	सुरसुन्दरी को इच्छित वरदान।	411
385	मैना ने मुनि को दुःख...।	412
386	श्रीपाल जी का विदेश गमन।	413
387	धवल सेठ की कूटनीति।	416
388	आठ हजार कन्याओं से विवाह।	418
389	श्रीपाल जी की साधु वंदना।	421
390	श्रीपाल जी का भवान्तर श्रवण	422
391	राजभोग-वैराग्ययोग।	423
392	अक्षयतृतीया- आज का दान।	425
393	केवलज्ञान वीर जिनेश का।	427
394	श्रुत पञ्चमी।	429
395	संयम साधना का योग-	
	पावन वर्षायोग।	431
396	गुरु पूर्ण माँ।	432
397	सबसे बड़ा कौन,	
	प्रश्न खड़ा मौन।	433
398	आठ दिन के लिए मुनि।	436
399	चैत्र मास न हो दीक्षा प्रयास।	436
400	माँ, महात्मा, परमात्मा।	437
401	शव और शिव।	438
402	वीर शासन- एकम् कृष्णा	439
	सावन वीर प्रभु का शासन।	
403	भील से भगवान-	
	मारीच से महावीर।	440

क्र.	विषय	पृ.क्र.
404	15 अगस्त- तुम मस्ती में मस्त।	442
405	तीन बन्दर। क्षमा। राष्ट्रपिता।	442
406	ढ़ोल की पोल।	443
407	सत्य अहिंसा।	
408	दीक्षा दिवस-स्मरण करें अवश्य।	445
409	प्रसूति गृह में सङ्कल्प।	445
410	मोक्ष सप्तमी।	448
411	आठ प्रकार की मुक्ति।	448
412	मुक्ति की औषधि।	0
413	दीक्षा पर्व मनाने।	0
414	दीक्षा एक लड़ाई है।	0
415	दीपावली- मान्यताएँ।	449
416	पिच्छि परिवर्तन।	450
417	गाँव के लोग आबाद रहें।	451
418	बुढ़ापे में पत्र आया- समझ में।	452
419	मृत्यु महोत्सव सबसे बड़ा उत्सव।	452
420	शराबियों ने खेई नाव।	453
421	पिता का मरण न बिगड़ जाये।	454
422	दुनिया को जीता पर मौत से हारा।	454
423	चारित्र चक्रवर्ती शांतिसागर जी	455
424	आ. ज्ञानसागरजी का व्यक्तित्व	455
425	जिनेन्द्रवर्णी परिचय।	456
426	गणेश प्रसाद वर्णी।	457
427	वर्णी वाणी।	458
428	पं. गोपालदास जी बरैया के रोचक प्रसङ्ग।	459
429	दिशा विज्ञान।	461
430	दीनहीन अनाथ की सेवा अवश्य करें।	461

जिनागम ज्ञान - मुक्ति पथ का वायुयान है।

शास्त्र पढ़ने से क्या होता है?

What you can have And have not by money-पैसों से आप क्या खरीद सकते हैं और क्या नहीं खरीद सकतेहैं ?

By money you can have Amusement but not happiness-पैसे से आप मनोरञ्जन के साधन खरीद सकते हैं, पर खुशी नहींखरीद सकते हैं।

By money you can have Book but not brain.-पैसे से आप पुस्तकें खरीद सकते हैं, पर दिमाग नहीं खरीद सकते हैं।

By money you can have Bed but not sleep.-पैसे से आप बिस्तर खरीद सकते हैं, पर नींद नहीं खरीद सकते हैं।

By money you can have Bowl but not saintliness.-पैसे से आप साधु के उपकरण खरीद सकते हैं, पर साधुता नहीं खरीद सकते हैं।

By money you can have Food but not Appetite.-पैसे से आप भोजन खरीद सकते हैं, पर भूख नहीं खरीद सकते हैं।

By money you can have House but not home.-पैसे से आप मकान खरीद सकते हैं, पर घर नहीं खरीद सकते हैं।

By money you can have Luxuries but not culture.-पैसे से आप शानदार वस्तुएं खरीद सकते हैं, पर संस्कृति नहीं खरीद सकते हैं।

By money you can have Medicines but not health.-पैसे से आप दवाई खरीद सकते हैं, पर स्वास्थ्य नहीं खरीद सकते हैं।

By money you can have Temple but not lord.-पैसे से आप मन्दिर खरीद सकते हैं, पर भगवत्ता नहीं खरीद सकते हैं।

But by SWADHYAY you can have what so ever you may desire.-किन्तु स्वाध्याय के द्वारा आप वह सब खरीद सकते हैं जो-जो आपकी इच्छा है।

1 आपके पास दो रुपये हैं तो एक से रोटी खरीदिए और दूसरे से अच्छी किताब, रोटी जीवन देगी और किताब जीने की कला देगी।

2 पुस्तक का मूल्य रत्नों से भी अधिक है, क्योंकि रत्न बाहरी चमक दिखाते हैं जबकि पुस्तकें मन को उज्ज्वल करती हैं।

स्वाध्याय का महत्त्व

3 बारह तपों में स्वाध्याय के समान तप न हुआ, न है, न होगा, जो कर्म अन्य तपस्वी करोड़ो भवों में निर्जीर्ण करता है, उसे स्वाध्यायी अन्तमुहूर्त में ही निर्जीर्ण करता है स्वाध्यायके द्वारा भोजन करते हुए भी अनशन आदि से अनन्त गुणी विशुद्धि प्राप्त होती है वह स्वाध्याय तप मरण के समय आराधना की सिद्धि के लिए सदा करना चाहिए, अतः श्रुत भावना से पृथक्त्व वितर्क और एकत्व वितर्क रूप शुक्ल ध्यान होते हैं, शुक्ल ध्यान से केवलज्ञान की प्राप्ति और केवलज्ञान से अन्त में मुक्ति की प्राप्ति होती है।

4 जो साधक निरन्तर सिद्धान्तशास्त्रों का अध्ययन करता है, उस बुद्धिमान् के पूर्ण मनोगुप्ति होती है।

प्रथमानुयोग

5 हेय और उपादेय रूप तत्त्व के प्रकाश का इच्छुक भव्यजीव बोधि और समाधि को देने वाले तथा परमार्थ सत् वस्तुस्वरूप का कथन करने वाले पुराण और चरित्ररूप प्रथमानुयोग को अन्य तीन अनुयोगों से अधिक अध्ययन में लायें क्योंकि आँखों में पानी इसी अनुयोग से आता है।

6 शास्त्र के प्रथमानुयोग से प्रशम, करणानुयोग से संवेग,चरणानुयोग से अनुकम्पा और द्रव्यानुयोग से आस्तिक्य सम्यक्त्व के ये चार गुण पुष्ट होते हैं।

7 कौन सा अनुयोग कब पढ़ना-यदि मन शङ्का शील हो तो द्रव्यानुयोग, प्रमादी हो तो चरणानुयोग, तीव्र कषाय हो तो प्रथमानुयोग और यदि मन जड़ हो गया हो तो करणानुयोगपढ़ना चाहिए, पञ्चम काल में प्रायः तीव्र कषायी लोग हैं अतः उन्हें प्रथमानुयोग पढ़कर कषाय मन्द करनी चाहिए।

8 साधु का नौ का अङ्क शाश्वत है नौ का पहाड़ा पढ़ने से घटता नहीं है, नौ दूनी अट्ठारह 1+8=9। श्रावक का आठ का अङ्क आठ का पहाड़ा पढ़ने से घटता जाता है, आठ दूनी सोलह 1+6=7।

9 जिसे देखने से ऐसा प्रतीत हो मानो मूर्तिमान प्रशम गुण है, यही कायशुद्धि है, वीतराग संयम के विना मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती और वीतराग संयम की साधना उत्कृष्ट तप के द्वारा ही सम्भव है, वह उत्कृष्ट तप स्वाध्याय से सम्भव है, स्वाध्याय से ध्यान का अभ्यास करना चाहिए और ध्यान से स्वाध्याय को चरितार्थ करना चाहिए।

10 ज्ञान की आग में जलकर व्यक्ति सूरज बने या न बने, पर दीपक तो बन ही जाता है।

11 ज्ञानी मनुष्य का लोकोत्तर आचार किसके द्वारा कहा जा सकता है? जहाँ अज्ञानी बन्ध को प्राप्त होता है वहीं ज्ञानी कर्म बन्ध से छूटता है।

विद्यार्थी की मौलिक योग्यताएँ

12 अध्ययन का दृढ़ सङ्कल्प, वाणी माधुर्य, अध्ययन में परिश्रम, विनयशीलता, निश्छलता, गुरू में आस्था और भक्ति, समय का सदुपयोग, संयम, सेवावृत्ति, उत्साह, जिज्ञासा, अनुशासन प्रियता, अनालस्यता, एवं जिस विद्या का अध्ययन किया जा रहा है उस पर विश्वास हो।

विद्यार्थी की मौलिक अयोग्यताएँ

13 अहङ्कार, उद्दण्डता, अनुशासन हीनता, आलस्य और विलासी जीवन, अनास्था, असंयम, इन्द्रियों की दासता, अध्ययन में अरुचि, असहिष्णुता, झगड़ालु स्वभाव, वाचालता, कटुवचन, गुरुओं के प्रति अनास्था, अनादर।

शिक्षक के गुण

14 शिष्यगण में प्रेम, उसकी उन्नति का भाव, अच्छे संस्कार देना, ज्ञान का भण्डार, पाण्डित्य, सदाचार, निर्लोभता, कर्तव्य परायणता, सुबोध पाठन शैली, सहिष्णुता, ज्ञानपिपासा, अध्ययन-अध्यापन, सतत शिष्य अभ्युदय की कामना, काव्यात्मक शैली विकसित करता हो।

वक्ता का लक्षण

15 1.वक्ता का सभी शास्त्रों का विधिवत् अध्ययन हो, 2.श्रोताओं की मानसिकता समझे, 3.गूढ़ और गम्भीर विषय योग्यता देखकर देवे, 4.इधर-उधर की बातें न करे, 5.अधिक देर नहीं बोले, 6.प्रथमानुयोग का रस पिलाये, 7.भाषण गन्ने की तरह सरस व छोटा होना चाहिए बाँस की तरह नीरस व लम्बा नहीं होना चाहिए।

श्रोता के आठ लक्षण

16 1.मनन, 2.गहन अध्ययन, 3.ऊहापोह, 4.हेय उपादेय को समझना, 5.शास्त्रों का संग्रह करना, 6.सेवा भावी होना, 7.एकाग्रता से सुनना, 8.पठित विषय का स्मरण रखना।

17 **चौदह प्रकार के श्रोता-** 1.मिट्टी, 2.चलनी, 3.भैसा, 4.हँस, 5.तोता (जितना सुना उतना याद रखना), 6.बिल्ली(चालाक), 7.बगुला(ढ़ोंगी), 8.मशक, 9.बकरा(देर से समझता है और तीव्र कामी होता है), 10.जोंक, 11.फूटे घड़े की तरह, 12.पशु (किसी के दबाव में सुनना),

13.सर्प, 14.शिला की तरह, ऐसे चैदह प्रकार के श्रोता होते हैं।

18 आरोग्य, बुद्धि, विनय, पुरुषार्थ और शास्त्र सम्बन्धी राग, ये पाँच पठन की सिद्धि करने वाले अन्तरङ्ग कारण हैं और आचार्य, पुस्तक निवास, सहायक और भोजन ये पाँच पठन की वृद्धि करने वाले बाह्य कारण हैं।

19 चतुराई प्राप्त करने के पाँच साधन देशभ्रमण, ज्ञानियों से मित्रता, उत्तम स्त्री, राजसभा में प्रवेश, अनेक शास्त्रों का स्वाध्याय करना।

20 स्वाध्याय अभ्यासी साधु पञ्चेन्द्रिय विजेता, संकल्प-विकल्प का त्यागी, त्रिगुप्ति युक्त, क्षण भर में अनन्त कर्मों का नाश करने वाला होता है, साधु जीवन में अन्य-अन्य कर्तव्यों के साथ स्वाध्याय का विशेष महत्त्व है।

''शिक्षा से लाभ''

21 स्वाध्याय से मन एकाग्र होता है, प्रज्ञा वृद्धि, स्वार्थ त्याग की भावना, श्रमपूर्वक अभ्यस्त विद्या ही इस लोक और परलोक के कार्यों को सिद्ध करती है।

22 त्याग, संयम, आचार-विचार, और कर्तव्यनिष्ठा का बोध शिक्षा से ही होता है।

23 अहिंसा और सत्य का घनिष्ठ सम्बन्ध शिक्षा के साथ है।

24 जो नैतिकता और आध्यात्मिकता का विकास न करे, वह शिक्षा व्यर्थ है।

साहित्य श्लोक

25 **न चोरहार्यं न च भातृभाज्यं, न राजहार्यं, न च भारकारि।**
व्यये कृते वर्धत एव नित्यं, विद्याधनं सर्वधनप्रधानं।।

विद्या को चोर चुरा नहीं सकता है, भाई बाँट नहीं सकता है, राजा माँग नहीं सकता हैं, वजन भी नहीं है, व्यय करने पर नित्य बढ़ती है अतः सर्व धनों में विद्या धन प्रधान है।

26 **नास्ति काम समो व्याधिर्नास्ति मोह समोरिपुः।**
नास्ति क्रोध समो वह्नि नास्ति ज्ञान समं सुखं।।

काम के समान व्याधि नहीं, मोह के समान शत्रु नहीं, क्रोध के समान अग्नि नहीं है और ज्ञान के समान सुख नहीं है।

27 **यत्र विद्वज्जनो नास्ति श्लाघ्यस्तत्राल्पधीरपि।**
निरस्तपादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते।।

जहाँ पर विद्वान नहीं होते हैं वहाँ पर अल्प बुद्धि भी प्रशंसनीय होता है, जिस प्रकार जहाँ पर वृक्ष नहीं होते हैं, वहाँ एरण्ड का पेड़ ही वृक्ष माना जाता है।

28 **अनेकसंशयोच्छेदि, परोक्षार्थस्य दर्शकं।**
सर्वस्य लोचनं शास्त्रं यस्य नास्त्यन्ध एव सः।।

अनेक संशयों को दूर करने वाला, परोक्ष पदार्थ को दिखाने वाला सबका नेत्र स्वरूप शास्त्र ज्ञान जिसके पास नहीं है वह अन्धा ही है।

29 **अजरामरवत्प्राज्ञो विद्यामर्थञ्च चिन्तयेत्।**
गृहीतमिव केशेषु मृत्युना धर्ममाचरेत्।।

अपने को अज़र-अमर समझकर विद्या और अर्थ का सञ्चय करना चाहिये, और मौत ने बाल पकड़ ही लिए हैं, ऐसा समझकर के धर्म का आचरण करना चाहिये।

30 **रूपयौवन सम्पन्ना विशाला कुल सम्भवा।**
विद्या हीना न शोभन्ते निर्गंधा इव किंसुकः।।

जिस प्रकार गन्ध से हीन फूल सुशोभित नहीं होते, उसी प्रकार विशाल कुल में उत्पन्न और रूप यौवन से सम्पन्न होने पर भी, विद्या से हीन व्यक्ति सुशोभित नहीं होते हैं।

31 **काव्य शास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमतां।**
व्यसनेन च मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा।।

बुद्धिमानों का समय काव्य और शास्त्र के अध्ययन में जाता है, और मूर्खों का समय व्यसन, निद्रा और कलह में जाता है।

32 **विद्या विवादाय धनं मदाय, शक्तिपरेषां परिपीडनाय।**
खलस्य साधोः विपरीतमेतत्, ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय।।

दुर्जन की विद्या विवाद के लिए होती है, सज्जन की विद्या अज्ञान दूर करने के लिए होती है, दुर्जन का धन अहङ्कार के लिए होता है, सज्जन का धन दान के लिए होता है, दुर्जन की शक्ति दूसरों को परेशान करने के लिए होती है, सज्जन की शक्ति जीवों की रक्षा के लिए होती है।

33 **विद्या ददाति विनयं, विनयाद्यातिपात्रतां।**
पात्रत्वाद्धनमाप्नोति, धनाद्धर्मं ततः सुखं।।

विद्या विनय देती है, विनय से पात्रता आती है, पात्रता से धन प्राप्त होता है, धन से धर्म होता है और धर्म से सुख होता है।

34 **जिणसत्थादो अट्ठे पच्चक्खादीहिं बुज्झदो णियमा।**
खीयदि मोहोवचयो तम्हा सत्थं समधिदव्वं।।
जिन शास्त्र द्वारा प्रत्यक्षादि प्रमाणों से पदार्थों को जानने वाले के नियम से मोह कर्म का क्षय हो जाता है, इसलिए शास्त्र का सम्यक् प्रकार से अध्ययन करना चाहिये।

35 **यथा खरश्चचन्दनभारवाही, भारस्यवेत्ता न तु चन्दनस्य।**
तथा जनोऽयं बहुशास्त्रपाठी शास्त्रस्य वेत्ता न तु निश्चयस्य।।
जैसे गधा चन्दन के भार को ढोता हैं पर चन्दन का ज्ञाता नहीं होता, उसी प्रकार शब्द ज्ञानी भी बहुत शास्त्रों का ज्ञाता होता हैं पर आत्मा का ज्ञाता नहीं होता है।

36 **जेण रागा विरज्जेज्ज, जेण सेयेसुरज्जदि।**
जेण मेत्तीपभावेज्ज, तं णाणं जिणसासणे।।
जिसके द्वारा विषयों के राग से विरक्त हो, रत्नत्रय से राग किया जाए, मित्रता बड़े, उसे जिनशासन में ज्ञान माना है।

37 **वैराग्यरङ्गा परवञ्चनाय, धर्मोपदेशो जनरञ्जनाय।**
वादाय विद्याध्ययनं च मेऽभूत् कियद् ब्रूबे हास्यकरं त्वमीश।।
दूसरों को ठगने के लिए मैंने वैराग्य धारण किया, दूसरों के मनोरञ्जन के लिए धर्मोपदेश दिया, शास्त्रार्थ के लिए विद्याध्ययन किया, हे भगवन् ! हास्यकारी कितनी बातें मैं आपको बताऊँ ? अर्थात् मैं बहुत दोषों का भण्डार हूँ।

38 **न शीतलाश् चन्दन चन्द्र रश्मयो, न गाङ्गमम्भो न च हारयष्टयः।**
यथा मुनेस्तेऽनघ वाक्य रश्मयः, शमाम्बु गर्भाः शिशिरा विपश्चितां।।
हे भगवन ! चन्दन, चन्द्रकिरण, गङ्गा का जल और मोतियों की माला भी उतनी शीतल नहीं हैं जितने शीतल समता रूपी जल से युक्त आपके वचन हैं।

39 **मातेव रक्षति पितेव हिते नियुङ्क्ते, कान्तेव चाभिरमयत्यपनीय खेदं।**
लक्ष्मीं तनोति वितनोति च दिक्षु कीर्तिं, किं किं न साधयति कल्पलतेव विद्या।।
विद्या माता की तरह रक्षा करती है, पिता की तरह हित में लगाती है, स्त्री की तरह खेद को दूर करके रमाती है, लक्ष्मी को बढ़ाती है, दिशाओं में कीर्ति का विस्तार करती है और कल्पवृक्ष की तरह क्या-क्या सिद्ध नहीं करती है ?

40 **सुखार्थिनः कुतो विद्या ,विद्यार्थिनः कुतः सुखं ।**
सुखार्थी वा त्यजेत् विद्यां ,विद्यार्थी वा त्यजेत् सुखं ।।
सुखिया स्वभावी को विद्या कहाँ से मिल सकती है और विद्यार्थी को सुख कहाँ से मिल सकता है, सुखिया स्वभावी विद्या को छोड़ देता है और विद्यार्थी सुख छोड़ देता है।

41 **पुस्तकस्था तु या विद्या ,परहस्ते गतं धनं ।**
कार्यकाले समुत्पन्ने ,न सा विद्या न तद् धनं ।।
पुस्तक की विद्या और दूसरे को दिया हुआ धन समय आने पर काम में नहीं आता है अतःविद्या को कण्ठस्थ करना चाहिए और धन को पास में रखना चाहिए।

42 **वैदुष्येण हि वंशत्वं वैभवं सदुपास्यता ।**
सदस्यतालमुक्तेन विद्वान् सर्वत्रपूज्यते ।।
विद्वत्ता से वंश का पता चलता है, वैभव प्राप्त होता है सज्जन लोग सेवा करते हैं, सभा में सदस्यता प्राप्त होती है, ज्यादा क्या कहें ? विद्वान् सर्वत्र पूजा जाता है।

43 **विद्वत्वं च नृपत्वं च , नैव तुल्यं कदाचन ।**
स्वदेशे पूज्यते राजा ,विद्वान् सर्वत्र पूज्यते ।।
विद्वत्ता और राजापना बराबर नहीं हो सकते क्योंकि राजा तो अपने देश में ही पूजा जाता है किन्तु विद्वान् तो सर्वत्र पूजे जातें हैं।

44 **स्वदेशे पूज्यते राजा , स्वग्रामे पूज्यते प्रभुः ।**
स्वगृहे पूज्यते मूर्खो , विद्वान् सर्वत्र पूज्यते ।।
राजा की पूजा अपने देश में होती है, मुखिया की पूजा अपने गाँव में होती है, मूर्ख अपने घर में ही पूजा जाता है किन्तु विद्वान की सर्वत्र पूजा होती है।

45 **येषां न विद्या तपो न दानं , ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः ।**
ते मर्त्य लोके भुवि भार भूताः , मनुष्य रूपेण मृगाश्चरन्ति ।।
जिनके पास विद्या, तप, दान, ज्ञान, ब्रह्मचर्य, गुण और धर्म नहीं है वे मनुष्य लोक में पृथ्वी पर भार स्वरूप मनुष्य के रूप में पशु के समान विचरण कर रहे हैं।

46 **विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं , प्रच्छन्न गुप्तं धनं ,**
विद्याभोगकरी यशः सुख करी , विद्या गुरूणां गुरूः ।

विद्या बन्धुजनो विदेशगमने, विद्यापरादेवता,
विद्याराजसुपूजते न च धनं, विद्याविहीनः पशुः।।

विद्या मनुष्यों का सुन्दर रूप है, ढका हुआ गुप्त धन है, विद्या भोगों को, यश को, सुख को करने वाली है विद्या गुरुओं की भी गुरु है, विद्या विदेश में बन्धु के समान है, विद्या देवता के समान रक्षक है, राजाओं के द्वारा विद्या की पूजा की जाती है धन की नहीं अतः जो विद्या से रहित है वह पशु के समान है।

47 **अन्यूनमनतिरिक्तं, याथातथ्यं विना च विपरीतात्।**
निःसन्देहं वेदय, दाहुस्तज्ज्ञानमागमिनः।।

न्यूनता रहित, अधिकता रहित, जैसा का तैसा, विपरीतता रहित, सन्देह रहित जानने को गणधर देव सम्यग्ज्ञान कहते हैं। जैसे आगम में 36 इंच लम्बा 24 इञ्च चौड़ा पानी का छन्ना, जिसे दोहरा करने पर सूर्य की किरणे न दिखे ऐसा होना चाहिए, अगर इकहरा से तिहरा से कटे-फटे छेद वाले छन्ने से पानी छाना तो सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र नहीं है।

48 **मोहेन सवृतं ज्ञानं, स्वभावं लभते न हि।**
मत्तःपुँमान् पदार्थानां यथा मदनकोद्रवैः।।

मद को चढ़ाने वाले कोदों को खाकर, मत्त हुये पुरुष की तरह, मोह से ढका ज्ञान स्वभाव को प्राप्त नहीं होता है, ज्ञान का सागर मोह की ओट में दिखाई नहीं देता है।

49 **अन्तो णत्थि सुदीणं,कालो थोवो वयं च दुम्मेहा।**
तण्णवरि सिक्खिदव्वं,जं जरमरणं खयं कुणदि।।

श्रुत का पार नहीं है, समय अल्प और बुद्धि मंद है, अतः वह अवश्य सीखना चाहिये जिससे जन्म, जरा और मरण का नाश हो जाए।

50 **पदमक्खरं च एक्कं, पिहु जो ण रोचेदि सुत्त णिद्दिट्ठं।**
सेसं रोचन्तो वि हु, मिच्छादिट्ठी मुणेयव्वो।।(भ.आ.38)

शास्त्र में कहे हुए एक पद या अक्षर का भी जो श्रद्धान नहीं करता है, शेष का श्रद्धान करते हुए भी वह मिथ्यादृष्टि है।

51 **जिणवयणमोसहमिणं, विसहसुहविरेयणं अमिदभूयं।**
ज़रमरणवाहिहरणं, खयकरणं सव्वदुःखाणं।।(सू.पा.)

जिनेन्द्र भगवान् के वचन विषय सुख का विरेचन करने के लिए, जरा-मरण रुपी व्याधि का क्षय करने के लिए एवं समस्त दुखों का नाश करने के लिए अमृत के समान हैं।

52 **यत्पुष्णाति भवे भवेऽप्यमलिनं, ज्ञानं समासेवितं।**
कैवल्यं च समस्त वस्तु विषयं, तद्विस्मृतं यद्यपि।। (आ.सा.)
यद्यपि भव-भव में आराधित निर्मलज्ञान को भूल जाते हैं, फिर भी वह सकलवस्तु विषयी केवलज्ञान को प्रकट कर देता है।

53 **जना घनाश्च वाचालाः, सुलभाः स्युर्वृथोत्थिताः।**
दुर्लभाह्यन्तरार्द्रास्ते जगदभ्युज्जिहीर्षवः।। (आ.शा.)
गरजने वाले मेघ और ज्यादा बोलने वाले वक्ता सुलभ हैं, किन्तु दयालु वक्ता और जल वाले मेघ दुर्लभ हैं।

54 **प्राज्ञःप्राप्तसमस्तशास्त्रहृदयः, प्रव्यक्त लोकस्थितिः,**
प्रास्ताशः प्रतिभापरः प्रशमवान्, प्रागेव दृष्टोत्तरः।
प्रायः प्रश्नसहः प्रभुपरमनो, हारी परानिन्दया,
ब्रूयाद् धर्म कथां गणी गुणनिधिः, प्रस्पष्टमिष्टाक्षरः।। (आ.शा.)
जो समस्त शास्त्रों के रहस्य का ज्ञाता है, लोक स्थिति को जानता है, जिसे किसी प्रकार की आशा नहीं है, प्रतिभावान है, मन्द कषायी है, प्रश्न पूँछने के पहले ही जिसने उत्तर देख लिया है, प्रायः प्रश्नों को सहन करने वाला है, प्रभुत्व सम्पन्न है, दूसरों का मन हरने वाला है, पर की निन्दा नहीं करता है, गण में प्रमुख है, गुणों का भंडार है, स्पष्ट और मिष्ट भाषी है ऐसा वक्ता होता है।

55 **सामान्य शास्त्रतो नूनं, विशेषो बलवान् भवेत्।**
निर्विशेषो हि सामान्यं भवेत् खरविषाणवत्।।(प.मु.)
सामान्य शास्त्र की अपेक्षा विशेष शास्त्र बलवान होता है, विशेष रहित सामान्य गधे के सींग के समान अभाव रूप होता है,जैसे आदिनाथ जी का आहार सामान्य से एक साल में, विशेष रूप से तेरह माह सात दिन के बाद हुआ था।

56 **उपदेशो हि मूर्खाणां, प्रकोपाय न शान्तये।**
पयः पानं भुजंगानां, केवलं विष वर्धनं।।

उपदेश मूर्खों के क्रोध की शान्ति के लिए नहीं होता किन्तु क्रोध की वृद्धि के लिए होता है अतः उनको उपदेश न दें, जैसे सर्प को दूध पिलाओ तो विष ही बढ़ता है, निर्विष नहीं होता।

57 **दिव्येन ध्वनिना देवास्, तदा सन्मार्ग वृत्तये।**
धर्म तत्त्वादि विश्वार्था, नुवाचेति गणान्प्रति।।(सु.च.)
भगवान् (सुदर्शन केवली) ने सन्मार्ग की प्रवृत्ति के लिए धर्म तत्त्वादि समस्त पदार्थों का दिव्यध्वनि के द्वारा गणधरों को उपदेश दिया। अर्थात् सामान्य केवली के भी गणधर होते हैं, गन्धकुटी में भी मानस्तम्भ होता है।

58 **आयु वित्तं ग्रहच्छिद्रं, मन्त्रं मैथुनमौषधं।**
दानं मानं च अपमानं च, नव गुप्तं च कार्येत्।। (स.कौ.)
आयु, धन, घर के दोष,मन्त्र, व्यभिचार, औषध, दान, सम्मान-अपमान, ये नौ बातें अवश्य ही गुप्त रखें।

59 'या विद्या सा विमुक्तये' विद्या वह है जो मुक्ति को प्राप्त कराये, किन्तु 'सा विद्या या भुक्तये' आज कल विद्या वह हो गई है जो भुक्ति अर्थात् सांसारिक सुख प्राप्त कराए।

दोहावली

60 **भूख सहो, दारिद्र सहो, सहो लोक अपवाद।**
निन्द काम तुम मत करो, यही ग्रन्थ का सार।।

61 **सुलझे पशु उपदेश सुन, क्यों न सुलझे पुमान्।**
नाहर से भये वीर जिन, गज पारस भगवान्।।

62 **किसी आम के वृक्ष तले दो व्यक्ति कहीं से आए थे,**
एक लगा पत्तों को गिनने दूजे ने फल खाए थे।
खाने वाला चतुर मात्र गिनने वाला मूरख जानो,
इसी तरह ज्ञानी और अनुभवी को पहचानों।।

63 **ज्ञान ही भव का कूल है, ज्ञान ही दुःख का मूल।**
राग रहित अनुकूल है राग सहित प्रतिकूल।।
चुन-चुन इसमें उचित को, मत चुन अनुचित भूल।
सब शास्त्रों का सार है, समता बिन सब धूल।।

64 **स्वाध्याय से मिलता ज्ञान, पूज्य जगत में हो विद्वान्।**
है यह सुख सम्पति की खान, कोई वस्तु न इसके समान।।
स्वाध्याय से पाते बुद्धि, स्वाध्याय से मन की शुद्धि।
स्वध्याय से मिलता ज्ञान, इसके बिन नर पशु समान।।
आत्मज्ञान धन गुप्त महान, ज्ञानदान से बढता मान।
भाई बाँटे हरे न चोर, यथा शक्ति इस धन को जोड़।।
सुख में दुख में एक समान, जिनवाणी है मात समान।
माता सकल गुणों की खान, इससे बने वीर भगवान।।

65 **खोदो जितना स्त्रोत को, उतना मिलता नीर।**
सीखें जितना ही अधिक, उतनी मति गम्भीर।।

66 **शिक्षित को सारी मही, घर है और स्वदेश।**
फिर क्यों चूके जन्म भर, लेने से उपदेश।।

67 **एक चरण हूँ नित पढ़े, तो काटे अज्ञान।**
पनिहारी की लेज से, सहज कटे पाषाण।।

68 **लाख मूर्ख तज राखिये, इक पण्डित गुणवान।**
सर शोभा इक हँस से, लाख काक क्या काम।।

69 **जो भी सीखा जीव ने, एक जन्म में ज्ञान।**
उससे अग्रिम जन्म भी, होते उच्च महान।।

70 **सीख सरल को दीजिए, विकट मिले दुख होय।**
वी(पक्षी)ने सीख कपि को दयी, दियौ घोसला खोय।।

71 **पर औगुण मुख न कहे, पोषै पर के प्राण।**
विपदा में धीरज धरे, ये लक्षण विद्वान्।।

72 परिजन धन कछु न चले, मरण समय में साथ।
ज्ञान अडिग निज की निधि, भव भव जावे साथ।।

73 जैसे माता पुत्र को, कर देती बलवान।
जिनवाणी जगमात है, अमर करत है ज्ञान।।

74 विविध भाव के जीव हु, दीखत हैं जगमांहि।
एक कछु चाहे नहीं, एक तजे कछु नाहीं।।

75 मनुष्य जन्म अरू जिनवचन, मिले न बारम्बार।
पक्का फल जो गिर गया, लगे न दूजी बार।।

76 मूढ़ मुढ़ाना बहुत सरल है, मन मुण्डन आसान नहीं।
व्यर्थ भभूत लगाना तन पर, गर भीतर का ज्ञान नहीं।।

77 सरस्वती के भण्डार की बड़ी अपूरव बात।
ज्यों खर्चे त्यों त्यों बढ़े, बिन खर्चे घट जात।।

78 धीरे-धीरे रे मना, धीरे सब कुछ होय।
माली सींचे सौ घड़ा, ऋतु आये फल होय।।

79 **बनती हैं भूमिकाएं प्रथमानुयोग से, आती है योग्यताएं चरणानुयोग से।**
पकती हैं पात्रताएं करणानुयोग से, तब झलकती है आत्मा द्रव्यानुयोग से।।

80 **तन रोगों की खान, धन भोगों की खान।**
ज्ञान सुखों की खान, दुख खान अज्ञान।।

81 सौ का नोट मैला भी हो, तो सौ में ही चलेगा, पर पाँचसौ का नया नोट हो, लेकिन गर्वनर के हस्ताक्षर न हों, तो पाँच रुपये में भी नहीं चलेगा, पकड़ा जावेगा तो जैल होगी इसी प्रकार अरहन्त की मुहर जिसमें लगी है, वही शास्त्र सत्य है।

82 ज्ञान अन्न के समान है जैसे अन्न को अच्छी तरह पचा लेने के बाद ही अपना होता, उसी प्रकार पढ़ा हुआ ज्ञान आत्मसात करने पर ही अपना होता है।

83 मन भर वाचन की अपेक्षा कण भर पाचन अच्छा है, और उच्चारण की अपेक्षा उच्च आचरण अच्छा है।

84 ज्ञानदान तत्काल आनन्द देने वाला है,उससे प्राणी सांसारिक सुखों से तृप्त होकर मोक्ष में सदा आनन्द करता है, अतः चारों दानों में सर्वश्रेष्ठ ज्ञानदान है।

85 अनुभव हीन का ज्ञान बाचाल होता है, अनुभवी का ज्ञान गम्भीर, मौन और विनम्र हो जाता है।

86 पापाचार से बचने के लिए ज्ञान की साधना जरूरी है।

87 सम्यग्ज्ञान युक्त मन हो तो धर्म में लगता है, विषयों से विरक्त होता है, नम्रता धारण करता है।

88 स्वयं को सदा विद्यार्थी बनाए रखिये, ताकि ज्ञान प्राप्ति के द्वार हमेशा खुले रहें।

सरस्वती के चार हाथ

89 ज्ञानदायिनी माँ सरस्वती के चार हाथ हैं जिनमें क्रम से वीणा, शास्त्र, माला और आशीर्वाद के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं जिनसे हमें निम्न लिखित सीख प्राप्त होती है-

1. कम बोलो, काम का बोलो, 2. मीठा बोलो, 3. धीरे बोलो, 4. जरुरत होने पर बोलो।

2. शास्त्र से-ज्ञानी, करे कर्म की हानि।

3. माला से मौन एवं मन साधा जाता है, कायक्लेश तप की साधना होती है, पञ्च परमेष्ठी की भक्ति होती है, ध्यान की साधना होती है।

4. आशीर्वाद सबको अभयदान करना, सब जीवो पर मैत्री भाव करना, हथेली की तरह सबके प्रति साफ़ दिल होना, हमेशा शत्रु पर भी प्रसन्न होना सिखाता है।

90 प्रत्येक व्रत की पाँच-पाँच भावनाओं का पालन नहीं करना चारित्र का मल है, सम्यक्त्व का मल शंकादि दोष हैं, ज्ञान का मल संशय, विपर्यय और अनध्यवसाय है, तप का मल प्राणियों और इन्द्रियों के विषय में संयम का अभाव है।

91 रामचन्द्र जी बाल्यावस्था में पानी में चन्द्रमा को देखकर उसे पकड़ कर खेलना चाहते थे, नहीं पकड़ पाने पर रोने लगे, पूँछा क्यों रोते हो? मन्त्री ने कहा चन्द्रमा चाहिये, राजा ने कहा ! ले आओ चन्द्रमा को, मन्त्री ने दर्पण रख दिया, उसमें बिम्ब पड़ा देखकर, रामचन्द्रजी प्रसन्न हो गये, दर्पण छाती से चिपका कर खेलने लगे, इसी प्रकार ज्ञानज्योति को पाकर ज्ञानी प्रसन्न होता है।

92 अन्तराय कर्म का तीव्र उदय होने पर शास्त्र रचना और शास्त्र श्रवण का लाभ नहीं होता है।

93 जो शिक्षित है, वही आँखों वाले होते हैं और अशिक्षित के माथे पर तो दो गड्ढे होते हैं।

94 **दुरभिनिवेश-** न्याय मार्ग को भूलकर दूसरों का तिरस्कार करने के भाव से कार्यकरने को दुरभिनिवेश कहते हैं।

95 जीव जिससे रत्नत्रय की रक्षा करता है,शारीरिक सुख से अत्यन्त विरक्त होता है,पाप को रोकता है और विशुद्धि को बढ़ाता है,सर्वज्ञदेव ने उसे ही ज्ञान माना है।

96 मुनिराजों में जैसे-जैसे शास्त्रज्ञान की वृद्धि होती जाती है वैसे-वैसे ही संसार से उनकी आसक्ति दूर होती चली जाती है।

97 तत्त्वज्ञानी मनुष्य को बहुत भारी प्रयत्न करके वही कार्य करना चाहिए, जिससे मन की अत्यन्त निर्मल शुद्धि हो जावे।

98 स्वाध्याय से भव्य जीवों का 'ज्ञान'सूर्य की किरणों के समान प्रकाशमान होता है,'चारित्र'चन्द्रमा के समान उज्ज्वल होता है और'मन' अपने वश में रहता है।

99 मोक्षलक्ष्मी समागम में उत्सुक मुनियों ने शान्ति के महायुद्ध में 'ज्ञान रूपी शस्त्र' के द्वारा 'रागरूपी' पहलवान को मार गिराया है।

100 ज्ञानी और मूर्खों में यही विशेषता मानी गयी है कि ज्ञानीजन नष्ट,मृत और बीती बातों का शोक नहीं करते हैं, अज्ञानी किया करते हैं।

101 विद्वानों ने शास्त्र का उत्कृष्ट फल ''संसार से भय'' कहा है, अतः जो शास्त्र से धन की इच्छा करते हैं,वे अमृत से विष की इच्छा करते हैं।

102 अन्य दर्शन में जो शुभ वाक्य दिखाई देते हैं वे जैन वाक्य हैं,क्योंकि जो मोती अन्यत्र दिखाई देते हैं उनकी उत्पत्ति समुद्र में ही होती है।

103 जिसने व्याकरण नहीं पढ़ा है वह ज्ञान नेत्र से हीन, जन्मान्धवत् है,जो न्यायशास्त्र से रहित है वह तर्कशास्त्र के कहने में असमर्थ है अतः मूकवत् है, जो साहित्य से रहित है वह साहित्य सदन में प्रवेश पाने में पद विहीन है अतः वह पङ्गु है और जो शब्दकोष से रहित है वह निर्धन है।

104 शास्त्ररूपी समुद्र से निकाल कर गणधरादि सत्पुरुष रूप मेघों ने जिसकी वर्षा की है,ऐसे चारों अनुयोग रूप जल को भव्य जीव रूपी चातक प्रीति के लिए बार-बार पियें। 'इन्द्रियों के निरोधपूर्वक' किया गया स्वाध्याय परम तप है।

105 विनय से सहित विद्या सब के मन को हरती है, जिस प्रकार मणि सहित सोने की अङ्गूठी सबके नेत्रों को आनन्दित करती है।

106 अमावस्या और पूर्णमासी को सिद्धान्त ग्रन्थों का स्वाध्याय गुरुघातक है, चतुर्दशी को स्वाध्याय शिष्यघातक है, अष्टमी का स्वाध्याय दोनों को घातक है और प्रतिपदा स्वाध्याय का ही घात करने वाली है। अतः सिद्धान्त ग्रंथों का अध्ययन इन तिथियों में वर्जित है आराधना ग्रंथों का स्वाध्याय किया जाता है।

107 शान्त चित्त वाले मनुष्यों को स्थायी हित के लिए वैराग्य ही प्रिय होता है।

108 ज्ञानी को संसार में नहीं, संन्यास में आनन्द आता है।

109 विद्वान् पुरुष भले ही कुरूप हो तथा वस्त्र-अलङ्कार और वेष से हीन हो, तो भी सज्जनों की सभा में सुशोभित होता है।

110 ब्रह्मचर्य, परोपकार, अहङ्कार का अभाव, क्षमा, धैर्य और लोभ का परिहार ये विद्या के परिपाक के उज्ज्वल फल हैं।

111 शस्त्रविद्या और शास्त्रविद्या ये दोनों विद्याएँ ज्ञान के लिए हैं परन्तु पहली शस्त्रविद्या वृद्धावस्था में हास्य कराती है और दूसरी शास्त्रविद्या सदा आदर को प्राप्त कराती है।

112 ये प्राणीउपदेशदाता के विना संसार रूपी दुःखों के महासागर में परिभ्रमण कर रहे हैं।

113 विनय से स्वाध्याय करने वाला त्रिगुप्ति धारी होता है, उसके मुख से असत्य, रूक्ष, कठोर, स्वप्रशंसात्मक, परनिन्दात्मक वाणी नहीं निकलती है।

114 ज्ञान और धन पुरूषार्थ पर निर्भर है, जैसे खोदने से पानी निकलता है वैसे ही रटने से विद्या आती है व पुरुषार्थ से धन आता है।

115 विनय के अभाव में सर्व शिक्षा निरर्थक है, शिक्षा का फल विनय है, विनय किस अभीष्ट फल को नहीं देती है ? विनय का फल सर्व कल्याण है, श्रुतकेवली अवस्था पढ़ने से नहीं तपश्चरण से आती है।

116 सत्य बोलना ही सरस्वती की पूजा है, ज्ञान की कीमत नहीं आत्मज्ञान की कीमत है।

117 ज्ञानार्जन के बाद आत्महित में दृष्टि न गयी तो धनार्जन के समान ज्ञानार्जन कहलायेगा।

118 ज्ञानी का अपमान, ज्ञान ग्रहण में बाधा, ज्ञान सामग्री का तिरस्कार एवं ज्ञानी से घमण्ड करने से जीव कर्णहीन, वचनहीन एवं बुद्धिहीन होता है।

119 ग्यारह अङ्ग, नौ पूर्व का ज्ञान भव्य मिथ्यादृष्टि को हो सकता है, ग्यारह अङ्ग का ज्ञान अभव्य को भी हो सकता है।

120 चञ्चल मन में विद्या और धर्म नहीं ठहरते हैं।

121 ज्ञान की साधना करने वाला व्यक्ति संत बने या न बने श्रावक तो बन ही जाता है।

122 नीति और ज्ञान कभी बासे नहीं होते हैं, ये उपयोग के विना पङ्गु है।

123 व्यक्ति को लायक बनने में वर्षों लगते हैं, नालायक बनने के लिए एक क्षण ही काफी है।

124 जहाँ स्याद्वाद है वहाँ कोई विवाद नहीं, जहाँ एकान्तवाद है वहाँ विवाद है।

125 मेहँदी से लाल रङ्ग बांटने पर निकलता है, उसी प्रकार अभ्यास करने पर आत्मा से ज्ञान

निकलता है।

126 दुधारु गाय भी बिना दुहे दूध नहीं देती, इसी प्रकार आत्मा में ज्ञान है किन्तु बिना अभ्यास के अपना ज्ञान प्रकट नहीं होता।

127 शिक्षा ऐसी हो कि जिससे मनुष्यों में मनुष्यता का विकास हो।

128 ज्ञान की जड़ कड़वी होती है पर ज्ञान का फल मीठा होता है, अतः ज्ञान प्राप्त करते समय कष्ट होता है प्राप्त हो जाने पर सुख होता है।

129 शास्त्रानुसार अपनी बुद्धि करना, बुद्धि के अनुसार शास्त्र नहीं करना, पढ़ो, समझो, आचरण में लाओ, फिर उपदेश दो।

130 जिसके परिणाम जितनेअधिक विशुद्ध होंगे उतना अधिक उस जीवको श्रुत का क्षयोपशम होगा।

131 जैसे बम्बई घूमकर आए व्यक्ति को सब कुछ झलकता है, दर्पण में हाथी जैसे विशाल प्राणी भी झलकते हैं, आँख की पुतली मसूर बराबर होकर भी मेरु को विषय बना लेती है, उसी प्रकार ज्ञान रूपी दर्पण में सब कुछ झलकता है।

132 राहगीर मील के पत्थर को देखकर मञ्जिल पाते हैं, साधु शास्त्र रूपी मील के पत्थर को देखकर मोक्ष मार्ग में चलते हैं।

133 **दो प्रकार का ज्ञान-मुख का ज्ञान-** 'शरीर अलग है आत्मा अलग है' पाठ कर लेते हैं। **हृदय का ज्ञान-** सुकुमाल स्वामी ने 'शरीर अलग है आत्मा अलग है' ऐसा चिन्तन करते हुए सियालनी को भगाया नहीं और सर्वार्थसिद्धि स्वर्ग गए।

134 चिकित्सक बनने वाले को पढ़ाई के लिये चैबीस घण्टे कम पढ़ते हैं, तब कुशल चिकित्सक बनता है उसी प्रकार दस मिनिट स्वध्याय करने वाले कुशल आत्मज्ञ कैसे बन सकते हैं ?

135 जैसे हीरा ही हीरे को काटता है, वैसे ही ज्ञानी ही कर्मों को काटता है अज्ञानी नहीं।

''अपना लोटा छानो''

136 गणेश प्रसाद वर्णीजी ने धर्म माता चिरोंजाबाई जी से कहा ! हम शास्त्रपढ़ने नहीं जायेंगे, कुछ लोग आते हैं सोते रहते हैं, बाई जी ने कहा सारा कुँआ छानलोगे तो जिवानी कहाँ डालोगे ? सभी लोग मोक्ष जानेवाले नहीं हैं, एक का भी कल्याण होता है, तो अच्छा है।

137 विद्यालय एक मन्दिर है, सरस्वती वहाँ की देवी है, शिक्षक पुजारी है, विद्यार्थी भक्त हैं, अतः

विद्यालय शुद्ध और व्यसन मुक्त होकर जाना चाहिए, चप्पल पहनकर गुटका खाकर विद्यालय में प्रवेश नहीं करना चाहिए।

''मजबूरी -भूसा चोरी''

138 साढूमल में पण्डित हीरालालजी शास्त्री रोज प्रवचन करते थे, एक व्यक्ति रोज प्रवचन सुनता था, पर गरीब था, अतः अपने घर से पाँचवे घर में चोरी करने गया, पर पाप के डर से, इसमें कम पाप लगेगा ऐसा मानकर एक बोरा भूसा की चोरी की, बोरा फटा था, तो भूसा वहाँ से घर तक गिरता रहा ध्यान नही दिया, लाइन बन गयी, सुबह लोगों ने देखा तो वह पकड़ा गया, पञ्चायत हुयी, पूछा तुमने चोरी की है, उसने कहा! हाँ की है, क्यों की है ? तब कहा ! हम तीन दिन से पानी में आटा घोलकर पीकर दिन निकाल रहे हैं, हमारा बेटा तीन दिन से दूध मांग रहा है उसको कब तक दूध के स्थान पर पानी में आटा घोलकर पिलाते रहेंगे ? हमने सोचा एक बोरा भूसा चार आना में बिकेगा, तीन-चार दिन दूध आयेगा, फिर आगे देखेंगे, क्योंकि पण्डित जी रोज प्रवचन में कहते हैं ज्यादा आसक्ति नहीं रखना चाहिये, प्रवचन सुनने का यह परिणाम था।

''सिनेमा में तूफान भ्रम बुद्धि से सत्यानाश ''

139 एक महिला सिनेमा के पर्दे पर आन्धी-तूफान-वर्षा देख कर सोचने लगी, मेरे छत पर कपड़े सूख रहे हैं वे उड़ जायेंगे और भींग जायेंगे, उन्हे चलकर उठा लूँ, वह सिनेमा घर से उठकर शीघ्रता से घर की ओर चल पड़ी, शीघ्रता के कारण एक मोटर से टकराई और मरगई, उसी प्रकार संसारी प्राणी नकली को असली समझ कर भ्रम बुद्धि से दुःखी होते हैं।

''पुस्तक हेतु कुर्ता गिरबी''

140 एक सज्जन अत्यन्त गरीब थे, एक दिन बाजार से गुजर रहे थे, कोई व्यक्ति अत्यन्त उपयोगी दो पुस्तकें बेच रहा था, उसके पास पैसे नहीं थे, उधार देने को वह तैयार नहीं हुआ, अतः अपना कुर्ता गिरबी रख कर वे पुस्तकें खरीद लाये, चार छह दिन बाद जब पैसे आये तब कुर्ता बापस ले आये, क्या हम में ऐसी ज्ञान की ललक है ? उन्होंने कुर्ता को नहीं, ज्ञान को कीमती समझा, हम धन रखने के लिए तिजोरियाँ खरीदते हैं, कार के लिये गैरिज बनवाते हैं, ड्राइवर रखते हैं, क्या कभी तत्त्व ज्ञान की पुस्तकें खरीदतें हैं व शास्त्रों के लिए अलमारी खरीदते हैं ?

''मावा नहीं माँ चाहिए''

141 मेले में बेटा गुम गया, पुलिस ने मेन गेट पर खड़ा कर दिया, अब जिस प्रकार बेटे को माँ को ढूँढ़ने की ललक है, हमें आत्मा को ढूँढ़ने की ललक होनी चाहिए अन्यथा जीवन की शाम में क्या होगा ?

142 मोहल्ले वाले बहकाते हैं पर पुरुषार्थ से लड़की की शादी होकर रहती है, उसी प्रकार आत्महित में विघ्न आते हैं लेकिन पुरुषार्थ से कार्य सिद्धि होकर रहती है, अतः दूसरे से राग-द्वेष नहीं करना चाहिए।

143 श्रुतकेवली के बाद जो आचार्य हुये हैं वे अरातीय आचार्य कहलाते हैं।

144 गणधरादि हमारे लिये पत्र लिख गये कि स्त्री-पुत्रादि सब पराये हैं, हमने पत्र की पूजा तो की पर खोल कर देखा ही नहीं।

चारमूर्ति-देखो करतूति

145 पहली मूर्ति एक कान से सुनती और दूसरे कान से निकाल देती थी, दूसरी मूर्ति कान से सुनती और देखकर मौन हो जाती, तीसरी मूर्ति कान से सुनती और मुँह से बता देती, चैथी मूर्ति कान से सुनती और हृदय में धारण कर लेती, इसलिए उनकी कीमत क्रमशः एक-दो-तीन-चार हजार थी, हम कौन सी और कितनी कीमत की मूर्ति हैं स्वयं पहचाने।

146 विदेह क्षेत्र में सीमन्धर भगवान का गर्भ व जन्म कल्याणक कुन्थुनाथ भगवान के समय हुआ, केवलज्ञान कल्याणक मुनिसुव्रत भगवान के समय हुआ, और भविष्य के सातवें तीर्थङ्कर के काल में मोक्ष जायेंगे, उनकी आयु एक कोटीवर्ष पूर्व की है।

''जामुन खा ली है गुठली फेंक दी''

147 बच्चे को गुलाबजामुन में रखकर दवा खिलाने की कोशिश की, माँ ने कहा बेटागुलाब जामुन खा लेना, मैं आ रही हूँ, और आकर पूछा! बेटा गुलाब जामुन खा ली ? बच्चा बोला हाँ माँ गुलाबजामुन खा ली, गुठली बाहर थूक दी, उसी प्रकार लोग ख्याति पूजा लाभ की गुलाबजामुन खा लेते हैं, तत्त्वाभ्यास की गुठली थूक देते हैं।

''एक बैल एक गधा''

148 सेठ ने दो विद्वानों को प्रवचनार्थ बुलाया और अलग-अलग एक-दूसरे का परिचय पूछा, एक ने कहा वह पक्का बैल है, दूसरे ने कहा वह पक्का गधा है, सेठजी ने भोजन के समय दोनों को

घास-भूसा का भोजन परोस दिया, विद्वानों के पूँछने पर सेठजी ने कहा ! आप लोगों ने जैसा परिचय दिया वैसा हमने भोजन परोस दिया, दोनों विद्वान् लज्जा से नतमस्तक हो गए और ईर्ष्या छोड़ दी।

★★★

"विद्वान् और विद्यार्थी का कर्त्तव्य"

1 शिक्षक के योग्य शिक्षा- व्यवस्थित वैज्ञानिक विधि और उस विषय सम्बन्धी कार्य कुशलता शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक को आवश्यक है।

"तीन चीजें शिक्षक को जरूरी हैं"

2 तत्त्वज्ञान की जिज्ञासा उत्पन्न करना, उसका ज्ञान कराना और सदाचार मय जीवन होना जैसे- पञ्चतन्त्र में एक राजा के पाँच सौ मूर्ख लड़के थे, राजा ने घोषणा करा दी कि जो मेरे बेटों को विद्वान बनायेगा, उसे आधा राज्य और कन्या दी जायेगी 'विष्णुशर्मा' ने बच्चों को 'काव्य शास्त्र विनोदेन' इस कहानी के वाक्य से पढ़ाना शुरू किया, उसी प्रकार शिक्षक कहानी से पढ़ाना शुरू करे।

"मास्टरी"

3 शिक्षक जिस विषय को पढ़ाता है, उस पर पूरी मास्टरी होना चाहिये, कुञ्जी में देखकर पढ़ाने से विद्यार्थी गुरू नहीं बन सकते, कुञ्जी देखने की अपेक्षा दो घण्टे पहले अच्छी तैयारी कर लो, वहाँ देखोगे तो आँख छिपाना पड़ेगी चोरी और मायाचारी का दोष लगेगा।

"जैसा शिक्षक वैसा विद्यार्थी"

4 एक राजा की चोरी हो गयी, मन्त्री को एक सेठ पर द्वेष के कारण शक था, मन्त्री ने कहा इसने चोरी की होगी, निर्णय हुआ कि चोर के हाथ में अग्नि का गोला दिया जाय जो जलेगा वह चोर कहलायेगा, सेठ के सामने बड़ी विपत्ति आ गयी, अग्नि में तो सब जलेंगे चाहे चोर हो या साहूकार, किसी ने सलाह दी तुम हाथ में काठ रखलेना वह कुछ कहे तो कहना तुम हाथ से दो तो मैं हाथ में लूँगा, तुम सण्डासी से दोगे तो मैं काठ पर लूँगा, इसी तरह शिक्षक जैसा पढ़ायेगा विद्यार्थी वैसा ही बनेगा, क्योंकि विद्यार्थी शिक्षक का आचरण सीखता है।

5 समझना ज्ञान है समझाना कला है।

''विप्र का बेटा गङ्गा पर बैठा''

मूर्ख बेटे से पिता ने बार-बार कहा कि तू व्यापार नहीं कर सकता, न मजदूरी न भीख माँग सकता है, अतः वेद पढ़ेविना तेरा जीवन बेकार है, वह घर से भागा गङ्गा किनारे जाकर बैठ गया, बोला हे गङ्गा मैया जब तक मैं विद्वान नहीं बन जाऊँगा तब तक आहार जल का त्याग है, कई दिन हो गये, इन्द्र का आसन कम्पायमान हुआ, इन्द्र ने अप्सराओं को भेजा, अप्सराएं विप्र का वेश बनाकर मुठ्ठी में रेत भरकर गङ्गा में फेंकने लगी, लड़के ने देखा पूछा ये क्या कर रही हो ? अप्सराओं ने कहा हमें गङ्गा पार जाना है इसलिये पुल बना रहे हैं, उसने कहा ऐसे पुल नहीं बनता तो अप्सराओं ने कहा उसी प्रकार कोई भोजन छोड़कर विद्वान नहीं बनता अक्षर-अक्षर रटना पढ़ता है।

6 बोर्ड पर कक्षा, विषय, दिनाँक लिखें, शिक्षक की दृष्टि छात्र पर रहे, इससे विद्यार्थी की श्रद्धा बढ़ेगी, आपकी पक्की मास्टरी होगी।

7 पीछे वाले विद्यार्थी से ये न कहें कि 'सुनाई पढ़ रहा है या नहीं', उससे सरल प्रश्न पूँछलें।

8 वक्ता धर्मसभा में पास हो जाते है, किन्तु पर्व में महावीर जयन्ती, अक्षय तृतीया, दीवाली, आदि में फैल हो जाते हैं, वहाँ सामान्य जनसमुदाय वाला उपदेश होना चाहिए विद्वानों की अपेक्षा बच्चों को समझाना कठिन है।

''सिद्धसेन का शास्त्रार्थ''

9 सम्मइ सूत्र के कर्ता आचार्य सिद्धसेन बहुत बड़े वादी थे, नगर-नगर में जाकर वाद करते थे और जीत लेते थे, एक बार एक नगर में गये, पता लगा यहाँ कोई अत्यन्त निपुण वादी है, अभी जङ्गल गया है, सिद्धसेन जी जङ्गल चले गये जैसे-तैसे उसको ढूँढ़ लिया, सिद्धसेनजी ने कहा हमसे वाद करो, उसने कहा भाई राजा के सामने वाद करना ठीक है नहीं तो निर्णय कौन करेगा, सिद्धसेनजी नहीं माने बोले ग्वालों को बुलाओ गाय श्रोता होगीं ग्वाले जज होंगे, ऐसा ही किया, सिद्धसेनजी दो घण्टे तक संस्कृत में बोलते रहे, ग्वाले संस्कृत क्या जानें ? प्रतिवादी आया उसने बढ़िया नाचना गाना प्रारम्भ किया, सब ग्वाले प्रसन्न हो गये, तब सिद्धसेनजी ने कहा भैया तुम जीते हम हारे, 'वक्ता को द्रव्य, क्षेत्र, काल का जानने वाला होना चाहिए'।

10 जो वक्ता शादी के समय कहे संसार असार है और मृत्यु के समय कहे बन्ना-बन्नी के गीत गाना चाहिए वह क्षेत्रकाल का ज्ञाता नहीं है।

11 **काक चेष्टा वको ध्यानं, श्वान निद्रा तथैव च।**
अल्पाहारी गृह त्यागी विद्यार्थी पञ्चलक्षणं।।

कौओं जैसी चेष्टा, बगुले जैसी एकाग्रता, कुत्ते जैसी निद्रा, अल्पाहार, गृहत्याग ये विद्यार्थी के पाँच लक्षण हैं।

12 पाँच तत्त्व शिक्षा में बाधक- अहङ्कार, क्रोध, अरुचि, रोग, आलस्य।

13 अजगर करे न चाकरी,पञ्छी करे न काम। दास मलूका कह गए सब के दाता राम।। ऐसा मानकर आलसी बने रहना अच्छा नहीं है।

★★★

संस्कार शिविर

1 **कैसे अदा करेंगे उपकार हम तुम्हारे,**
हम तो बने सितारे, गुरु आपके सहारे।
तन को रचा सम्हारा माता-पिता ने मेरे,
जीवन सम्हारा तुमने, भर ज्ञान उर में मेरे।।।कैसे।।
तुम देवता से बढ़कर, मेरे लिये हो गुरुवर,
चरणों में शीश मेरा है गुरु जी तुम्हारे।।।कैसे।।
जब तक है हम जमीं पर, विस्मृत न कर सकेंगे,
पथ के प्रदीप मेरे, गुरुदेव हो सहारे।।।कैसे।।
तुमसे मिला है सब कुछ, तुम को क्या भेंट दूं मैं,
सूरज के आगे जुगनू की बात क्या करुं मैं।।।कैसे।।
जीवन सजाने वाले बस इतनी आरजू है,
नजरे न मोड़ लेना दर से कभी हमारे।।।कैसे।।

2 मंगलाचरण का प्रयोजन-पुण्य प्राप्ति, निर्विघ्न कार्य सम्पन्न, नास्तिकता का परिहार, शिष्टाचार का पालन।

3 चित्र अनावरण का प्रयोजन चित्त अर्थात् मन का अनावरण अर्थात् उज्ज्वलता है।

4 दीप प्रज्वलन का प्रयोजन अज्ञान का नाश हो, ज्ञान का प्रकाश हो।

5 शास्त्र भेंट का प्रयोजन गुरु शिष्य को ज्ञान दान देकर अपने जैसा बनाए।

6 ज्ञान की आग में जलकर व्यक्ति सूरज बने या न बने, पर दीपक तो बन ही जाता है।

7 **तत्त्वज्ञानविहीनानां, दुःखमेव ही शाश्वतं।**

अर्थात्-जो तत्त्वज्ञान से रहित हैं उनको हमेशा दुःख ही प्राप्त होता है।

8 **वरमेको गुणी पुत्रो, न च मूर्खशतान्यपि।**

एकश्चन्द्रस्तमोहन्ति, न च तारागण शतैरपि।।

सैकड़ों मूर्ख पुत्रों की अपेक्षा एक गुणवान पुत्र अच्छा है, क्योंकि एक चन्द्रमा अन्धकार को दूर कर देता है सैकड़ों तारें नहीं।

9 **संसार में गुरू कृपा सबसे निराली, होली यही दशहरा यह ही दीवाली।**

जो शिष्य है वह सदैव ऋणि रहेगा, कोई कभी न उपकार चुका सकेगा।।

10 यदि एक साल की योजना बनाना चाहते हो तो उर्वरा भूमि में बीजों की बुवाई करो, यदि दस साल की योजना बनाना चाहते हो तो पेड़ लगाओ, और सौ साल की योजना बनाना चाहते हो तो एक पीढ़ी को संस्कारित करो, एक पाठशाला खोलना अर्थात् एक जेल बन्द कर देना है।

शिक्षक में ये छः चीजें

11 शिक्षक में ये छः चीजें होना आवश्यक हैं- उच्चाचरण हो, शिष्य पर प्रेम हो, उसकी उन्नति का भाव हो, निर्लोभ हो, कर्तव्य परायण हो, (डॉ- पं.पन्नालाल जी साहित्याचार्य सागर वालों ने बावन वर्ष मोराजी में सर्विस की लेकिन छुट्टी एक भी नहीं ली वे सहिष्णु थे)।

12 आपको ए ग्रेड का बनना है तो सिगरेट पीना छोड़ो।

13 जीवन में धर्म का लायसेंस नहीं, धर्म होना चाहिए।

14 चिकित्सक बिगड़ता है तो एक मरीज बिगड़ता है, वकील बिगड़ता है तो एक केस बिगड़ता है, एक इञ्जीनियर बिगड़ता है तो एक बिल्डिंग बिगड़ती है और एक टीचर बिगड़ता है तो हजारों विद्यार्थी बिगड़ जाते हैं।

15 आज कल के विद्यार्थी विद्या का सदुपयोग न कर विद्या की अर्थी निकालते हैं, यदि अनूकूल नहीं हुआ तो हड़ताल करते है, हजारों विद्यार्थियों को अन्तराय डालते हैं।

15 अहङ्कार, क्रोध, आलस, भूख शिक्षा में बाधक तत्त्व हैं।

16 धर्मात्मा होने का सम्बध शास्त्रों से नहीं, स्वयं के आचरण से है।

17 नेत्र, आरोग्य, आदि के अनेक शिविर लगते हैं, इन शिविरों में शरीर के एक-एक अङ्ग का कल्याण होता है, लेकिन सम्यग्ज्ञान शिक्षण शिविर में पूर्ण आत्मा का कल्याण होता है।

''बहु नमक बिटिया शक्कर''

18 एक बार पड़ोसन ने सास से पूँछा आपके घर की शान्ति का राज़ क्या है ? सास ने कहा हमारी बेटी शक्कर है और बहु नमक के समान है, बहु ने सुना तो उसके व्यवहार में अन्तर आ गया, सास ने बहू से पूछा ! बेटा क्या तुम्हारा स्वास्थ्य खराब है ? बहु ने कहा कुछ नहीं हम तो पराये घर से आए हैं इसलिए नमक के समान हैं, और आपकी बेटी शक्कर के समान है, तब सास ने कहा ! हमारा अभिप्राय यह था कि जैसे शक्कर पर्व के दिनों में विशेष रूप से काम आती है, उस प्रकार बेटी का कभी-कभी सुख मिलता है, किन्तु जैसे नमक प्रत्येक पदार्थ में काम आता है, वैसे ही हमारी बहु है, तब बहु प्रसन्न हुई, सही ज्ञान के अभाव में झगड़ा होता है।

19 बच्चों को श्रृङ्गार देते हैं संस्कार नहीं, सम्पत्ति देते हैं पर शान्ति नहीं, हम उन्हे सब कुछ देते हैं पर श्रेष्ठ जीवन नहीं और नीम का बीज बोकर आम की आशा करते हैं।

★★★

"षट्लेश्या"

1 **चण्डो ण मुचई वेरं, भण्डणसीलो य धम्म दयरहिओ।**
दुट्ठो ण य एदि वसं, लक्खण मेयं तु किण्हस्स।।
जो अत्यन्त क्रोधी होता है, बैर नहीं छोड़ता है, कुछ भी बकता रहता है, धर्म और दया से रहित होता है, दुष्ट होता है और किसी के वश में नहीं आता है वह कृष्ण लेश्या वाला कहलाता है।

2 **मन्दो बुद्धि विहीणो, णिव्विणाणी य विसयलोलो य।**
माणी मायी य तहा, आलस्सो चेव भेज्जो य।।
णिद्दा वंचण बहुलो धणधण्णे होदि तिव्वसण्णा य
लक्खणमेयं भणियं, समासदो नील लेस्सस्स॥
जो काम करने में धीमा, बुद्धिहीन, विवेकहीन, विषय लोलुपी, अहङ्कारी, मायावी, आलसी, फूट डालने वाला, निद्रालु, ठगिया, धनधान्य में अति तीव्र लालसा रखने वाला हो वह नील लेश्या वाला कहलाता है।

3 **रूसई णिन्दइ अण्णे, दूसइ बहुसो य सोयभयवहुलो।**
असुयइ परिभवइ परं, पसंसये अप्पयं बहुसो।।
णय पत्तियइ परं सो, अप्पाणं यिव परं पि मण्णंतो।
थूसइ अभित्थुवंतो, ण य जाणइ हाणि वड्ढिं वा।।

मरणं पत्थेइ रणे, देइ सुबहुगं वि थुव्वमाणो दु।
ण गणइ कज्जाकज्जं, लक्खण मेयं तु काउस्स।।

दूसरे के ऊपर क्रोध करना, दूसरे की निन्दा करना, अनेक प्रकार से दूसरों को दुःख देना अथवा औरों से बैर करना, अधिकतर शोकाकुलित रहना तथा भयग्रस्त रहना, दूसरों के ऐश्वर्यादि को सहन न कर सकना, दूसरे का तिरस्कार करना, अपनी नाना प्रकार से प्रशंसा करना, दूसरों के ऊपर विश्वास न करना, अपने समान दूसरों को भी मानना, स्तुति करने वाले पर सन्तुष्ट हो जाना, अपनी हानि वृद्धि को कुछ भी न समझना, रण में मरने की प्रार्थना करना, स्तुति करने वाले को खूब धन दे डालना, अपने करने योग्य अथवा नहीं करने योग्य का विवेक नहीं होना ये सब कापोत लेश्या वाले के चिन्ह है।

4 **जाणइ कज्जाकज्जं, सेयमसेयं च सव्वसमपासी।**
दयदाणरदो य मिदू, लक्खणमेयं तु तेउस्स।।

अपने करने योग्य अथवा नहीं करने योग्य, सेवन करने योग्य अथवा नहीं सेवन करने योग्य को समझने वाला हो, सबके विषय में समदर्शी हो, दया और दान में तत्पर हो, मन-वचन और काय के विषय में कोमल परिणामी हो ये सब पीत लेश्या वाले के चिन्ह हैं।

5 **चागी भद्दो चोक्खो, उज्जव कम्मो य खमदि बहुगं पि।**
साहू गुरू पूजण रदो लक्खणमेयं तु पम्मस्स।।

दान देने वाला हो, सरल परिणामी हो, जिसका उत्तम कार्य करने का स्वभाव हो, कष्टरूप तथा अनिष्ट रूप उपद्रवों को सहन करने वाला हो, मुनिजन, गुरुजन आदि की पूजा में प्रीति युक्त हो, ये सब पद्म लेश्या वाले के लक्षण हैं।

6 **ण य कुणइ पक्खवायं, ण वि य णिदाणं समो य सव्वेसिं।**
णत्थि य रायद्दोसा, णेहो वि य सुक्क लेस्सस्स।।

पक्षपात न करना, निदान को न बांधना, सब जीवों में समदर्शी होना, इष्ट से राग और अनिष्ट से द्वेष न करना, स्त्री, पुत्र, मित्र आदि में स्नेह रहित होना ये सब शुक्ल लेश्या वाले के लक्षण हैं।

★★★

"प्रत्येक कार्य में सफलता कैसे प्राप्त करें ?"

1 तपस्वी साधु के इच्छित कार्य को सिद्ध करने वाली जो शक्ति, कान्ति, द्युति और धृति होती है, वह इन्द्र के भी नहीं होती है।

2 'हम पुण्यवान् हैं, जिन्हें मुनि आज्ञा देते हैं' ऐसा विचार कर बुद्धिमानों को मुनियों की आज्ञा का पालन करना चाहिए।

3 योगियों के हित-अहित का विचार करने वाले पुरुष के मानसिक विनय होती है, उससे सिद्धि की प्राप्ति होती है।

4 **सफल सीख-** स्वस्थ बनो पर मोटे नही, चंगे(पतले) बनों पर निर्बल नहीं, बलवान बनो पर दुष्ट नहीं, सरल बनो पर मूर्ख नही, धीर बनो पर सुस्त नहीं, न्यायी बनो पर निर्दयी नहीं, उत्साही बनो पर जल्दबाज नहीं, दृढ बनों पर हठी नहीं, समालोचक बनो पर निन्दक नहीं, प्रशंसक बनो पर चापलूस नहीं, स्पष्ट बनो पर उद्दंड नहीं, चतुर बनो पर कुटिल नहीं, योगी बनो पर रोगी नहीं, विनम्र बनो पर याचक नहीं, साधु बनो पर स्वादु नहीं।

5 वस्तुयें ऐसी इस्तेमाल करें जो कम दाम की हों, पूरे काम की हों और होने का अभिमान न हो और खोने का भय न हो।

6 विवेक, सन्तोष, दया, क्षमा, ज्ञान, शुभदान, निरहंकारता, जितेन्द्रियता और निष्कषायता ये गुण मनुष्यों को सदा सुखदायक होते हैं।

कण्ठाभरण श्लोक

7 **अन्यदीयमिवात्मीय, मपि दोषं प्रपश्यता।**
कः समः खलु मुक्तोऽयं, युक्तः कायेन चेदपि।।
दूसरों के समान जो अपने दोषों को देखता है, वह शरीर से सहित होने पर भी मुक्त के सामान है।

8 **दिवसेनैव तत्कुर्याद्येन रात्रौ सुखं वसेत्,**
अष्टमासेन तत्कुर्याद्येन वर्षाः सुखं वसेत्।
पूर्वे वयसि तत्कुर्याद्येन वृद्धः सुखं वसेत्,
यावज्जीवेन तत्कुर्याद्येन प्रेत्य सुखं वसेत्।।
दिन में ऐसा काम करना चाहिए जिससे रात्री में चैन की नींद आए, आठ महीने ऐसा काम करना चाहिए जिससे वर्षाऋतु में एक जगह रहकर धर्मध्यान कर सकें, पूर्व अवस्था में ऐसा काम करना चाहिए जिससे वृद्धावस्था में धर्मध्यान कर सकें और **''पूरे जीवन ऐसा काम करना चाहिए जिससे भविष्य सुखी हो जाए।''**

9 **नित्यं हिताहार विहारसेवी, समीक्ष्यकारी विषयेष्वरक्तः।**
दाता समः सत्यपरः क्षमावान, आप्तोपसेवी च भवत्यरोगः।।

जो हितकारी आहार-विहार करता है, सोच-विचार कर काम करता है, विषयों में आसक्त नहीं होता है, दानी है, समतावान है, सत्यनिष्ठ है, क्षमावान है और ज्ञानियों की सङ्गति करता है वह हमेशा नीरोग रहता है।

10 **व्यसनानि सन्ति बहुशो, व्यसनद्वयमेव केवलं।**
विद्याभ्यसनं व्यसन, मथवा प्रभुपाद सेवनं।।

व्यसन तो बहुत से हैं किन्तु उनमें दो ही व्यसन महत्त्वपूर्ण है, एक तो विद्या अध्ययन का व्यसन और दूसरा प्रभु के चरणों की सेवा का व्यसन।

11 **देहेनिर्ममता गुरौविनमता, नित्यंश्रुताभ्यासता,**
चारित्रोज्ज्वलता महोपशमता, संसारनिर्वेगता।
अन्तर्बाह्य परिग्रह त्यजनता, धर्मज्ञता साधुता,
साधोसाधुजनस्य लक्षणमिदं, संसार विक्षेपणं।।

शरीर में निर्ममत्व, गुरु में विनय, नित्य श्रुताभ्यास, उज्ज्वल चारित्र, अत्यन्त शान्ति, संसार से वैराग्य, अन्तरङ्ग बहिरङ्ग परिग्रह का त्याग, धर्म का ज्ञाता, साधु का साधुओं ने यह संसार का नाश करने वाला लक्षण बताया है।

12 **ग्रामो नास्ति कुतः सीमा, भार्या नास्ति कुतः सुतः।**
प्रज्ञा नास्ति कुतो विद्या, धर्मो नास्ति कुतः सुखं।।

जहाँ ग्राम ही नहीं है तो उसकी सीमा कहाँ से होगी, स्त्री ही नहीं है तो पुत्र कहाँ से होगा, बुद्धि ही नहीं है तो विद्या कहाँ से होगी और धर्म ही नहीं है तो सुख कहाँ से प्राप्त होगा ?

13 **सम्पत्तौ नियमः शक्तौ, सहनं यौवने व्रतं।**
दारिद्रये दानमप्यल्पं, महालाभाय जायते।।

सम्पत्ति होने पर नियम पालना, शक्ति होने पर भी क्षमा करना, युवावस्था में व्रत लेना और दरिद्र होने पर भी थोड़ा दान करना भी महालाभ के लिए होता है।

14 **चक्षुर्भ्यां हँसते विद्वान्, दन्तोद्भाटेन मध्यमः।**
अधमा अट्टाहासेन, न हसन्ति मुनीश्वराः।।

विद्वान् नेत्रों से हँसते हैं, मध्यम पुरुष दाँतों से हँसते हैं, अधम पुरुष अट्टाहास करते हैं, मुनीश्वर हास्य नहीं करते हैं।

15 **वित्ते त्यागः क्षमा शक्तौ, दुःखे दैन्य विहीनता।**
निर्दम्भता सदाचारे, स्वाभावोऽयं महात्मनां।।
महापुरुषों का यह स्वभाव है धन होने पर दान देते हैं, शक्ति होने पर क्षमा करते हैं, दुःख आने पर दीनहीन नहीं होते और आचरण से छलावा नहीं करते हैं।

16 **तुष्यन्ति भोजने विप्राः, मयूरा घन गर्जने।**
साधवः पर सम्पत्तौ, खलाः पर विपत्तिषु।।
ब्राह्मण भोजन से सन्तुष्ट होते हैं, मयूर मेघ के गरजने से सन्तुष्ट होते हैं, सज्जन दूसरों की सम्पत्ति को देखकर सन्तुष्ट होते हैं, और दुष्ट दूसरों की विपत्ति को देखकर सन्तुष्ट होते हैं।

17 **न रणे विजयाच्छूरोऽ, ध्ययनात् न च पण्डितः, न वक्ता वाक् पटुत्वेन, न दाता चार्थदानतः।**
इन्द्रियाणां जये शूरो, धर्मं चरति पण्डितः, हितप्रयोक्तिभिः वक्ता, दाता सम्मान दानतः।।
रण में विजय प्राप्त करने से नहीं इन्द्रियों के जीतने से योद्धा कहलाता है, अध्ययन से नहीं आचरण से पण्डित कहलाता है, बोलने से नहीं हित में लगाने से वक्ता कहलाता है, दान देने से नहीं सम्मानपूर्वक देने से दाता कहलाता है।

18 **औचित्यमेकमेकत्र, गुणानां राशिरेकतः।**
विषायते गुणग्राम, औचित्यं परिवर्जितः।।
करोड़ गुणों की तुलना में भारी औचित्य गुण है, दान तथा प्रिय वचनों के द्वारा दूसरे को सन्तुष्ट करने का नाम औचित्य गुण है, इस गुण की बड़ी महिमा है, एक ओर एक औचित्य गुण और दूसरी ओर गुणों की राशि है, औचित्य गुण के विना गुणों की राशि विष तुल्य प्रतीत होती है, यदि मनुष्य में प्रिय वचनों के द्वारा दूसरे को सन्तोष दिलाने की क्षमता न हो तो उसके सभी गुण व्यर्थ हैं।

19 **सत्यं वदात्र यदि जन्मनिबन्धुकृत्य, माप्तं त्वया किमपि बन्धुजनाद्धितार्थम्।**
एतावदेव परमस्ति मृतस्य पश्चात्, सम्भूयकायमहितं तव भस्मयन्ति।।(आत्मानुशासन-83)
आचार्य भगवन् पूँछते हैं हे भव्य ! सच-सच बताओ कि तूने इस संसार में बन्धुजनों के द्वारा आत्म हितकारी कुछ प्राप्त किया है अर्थात् नहीं ? किन्तु इतना अवश्य है कि मरने के पश्चात तुम्हारे इस अहितकारी शरीर को ये सब मिल करके भस्म कर देते हैं।

20 **अश्रोत्रीव तिरस्कृतापरतिरस्कार श्रुतीनां श्रुतिः,**
चक्षुर्वीक्षितुमक्षमं तव दशां दुष्यामिवान्ध्यं गतं।
भीत्येवाभिमुखान्तकादतितरां कायोऽप्ययं कम्पते,
निष्कम्पस्त्वमहो प्रदीप्तभवनेऽप्यासे जराजर्जरे।। (आत्मानुशासन 91)
वृद्धावस्था में दूसरों के तिरस्कार पूर्ण वचनों को सुनने में समर्थ न होने से ही मानो कान बहरे हो जाते हैं, वृद्धावस्था की दयनीय दशा को देखने में समर्थ न होने से ही मानो नेत्र अन्धे हो जाते हैं, फिर भी खेद है कि जरा से जर्जरित शरीर में यह प्राणी निश्चिन्त बैठा है।

21 **मूर्खाः यत्र न पूज्यन्ते, धान्यं यत्र सुसञ्चितं।**
दाम्पत्ये कलहो नास्ति, तत्र श्रीः स्वयमागता।।
जहाँ पर मूर्खों की पूजा नहीं की जाती है, धान्य का संचय किया जाता है, दाम्पत्य जीवन में कलह नहीं है, वहाँ पर लक्ष्मी स्वयं आ जाती है।

22 **स्त्रीषु राजकुले सर्पे, सदृशे शत्रु विग्रहे। आयुधाग्रे न कर्त्तव्यो, विश्वासश्च कदाचन।।**
नदीनां शस्त्रपाणिनां, नखिनां शृङ्गिणां तथा। विश्वासो नैव कर्त्तव्यः, स्त्रीषु राजकुलेषु च।।
स्त्रियों का, राजाओं का, युद्ध में समानता रखने वाले शत्रु का, शस्त्र वाले का, नदी का, नाखून और दाँत वाले का तथा सींग वाले का कभी विश्वास नहीं करना चाहिये।

23 **एकस्यापि विरोधेन लभते विपदं नरः।**
महानपि कुलीनोऽपि, किं पुनर्बहुभिः सह।।
एक व्यक्ति का विरोध करने से महान पुरुष भी विपत्ति में पड़ जाता है, फिर अधिक लोगों का विरोध करने वाले मनुष्य का तो कहना ही क्या ?

24 **अर्थनाशं, मनस्तापं, गृहे दुश्चरितानि च।**
वञ्चनं चापमानं च, मतिमान न प्रकाशयेत्।।
धन का नाश, मानसिक सन्ताप, घर के दुश्चरित्र, स्वयं का ठगा जाना एवं स्वयं के अपमान को बुद्धिमान प्रकाशित न करें।

25 **मूखैरलब्धतत्त्वैश्च सहालापश्चतुर्फलः।**
वाचो व्ययो मनस्ताप, मपवादश्च ताड़नं।।
अनुभवहीन व मूर्खों से बात करने के चार फल वचनों का व्यय, मानसिक सन्ताप, अपयश और प्रतारणा प्राप्त होती है।

26 **नयेन नेता विनयेन शिष्यः, शीलेन लिङ्गि प्रशमेन साधुः।**
जीवेन देहः सुकृतेन देही, वित्तेन गेही रहितो न किञ्चित्।।
नीति से रहित नेता, विनय से रहित शिष्य, ब्रह्मचर्य से रहित व्रती, शान्ति से रहित साधु, जीव से रहित देह, पुण्य से रहित प्राणी और धन से रहित गृहस्थ का कोई मूल्य नहीं है।

27 **संयमाय श्रुतं धत्ते धर्माय संयमं।**
धर्मं मोक्षाय मेधावी धनं दानाय भुक्तये।।
बुद्धिमान संयम के लिए श्रुत, धर्म के लिए संयम, मोक्ष के लिए धर्म, दान और भोग के लिए धन ग्रहण करते हैं।

28 **विनयं राजपुत्रेभ्यः, पण्डितेभ्यः सुभाषितं।**
अनृतं द्यूतकारेभ्यः, स्त्रीभ्यः शिक्षेत् तु कैतवं।।
राजपुत्रों से विनय, ज्ञानियों से शिक्षाप्रद वाक्य, ज्वाँरियों से झूठ, स्त्रियों से मायाचारी की शिक्षा मिलती है।

29 **खादन्न गच्छामिहसन्न भाषे, गतं न सोचामि कृतं न मन्ये।**
द्वाभ्यां तृतीयो न भवामि राजन्, किं कारणं भोऽहं भवामि मूर्खः।।
चलते हुए मैं खाता नहीं हूँ, हँसते हुए बोलता नहीं हूँ, नष्ट हुए का शोक नहीं करता, किए हुए कार्य का अहङ्कार नहीं करता, दो लोग बात कर रहे हों तो मैं बीच में नहीं बोलता, तब मैं मूर्ख कैसे कहलाऊँगा।

30 **अनभ्यासे विषं विद्या, अजीर्णे भोजनं विषं।**
विषं सभा दरिद्रस्य, वृद्धस्य तरुणी विषं।।
अभ्यास के विना विद्याविष है, अजीर्ण में भोजनविष है, दरिद्र को सभाविष है एवं वृद्ध को तरुणी विष के समान होती हैं।

31 **विषय विरतिः संगत्यागः कषाय विनिग्रहः।शमयम दमास्तत्त्वाभ्यासस्तपश्चरणोद्यमः।।**
नियमित मनोवृत्ति र्भक्तिजिनेषु दयालुता। भवति कृतिनः संसाराब्धेस्तटे निकटे सति।।
'निकटभव्य' में विषयों से विरक्ति, परिग्रह का त्याग, कषायों का शमन, शान्ति, आजीवन नियम, इन्द्रिय दमन, तत्त्व अभ्यास,तपश्चरण में पुरुषार्थ, मोक्ष के लिए पक्का इरादा, जिनेन्द्र भगवान में भक्ति और दयालुता पायी जाती है।

32 **वपुर्गृहं धनं दाराः पुत्राः मित्राणि शत्रवः।**
सर्वथान्यस्वभावानि, मूढ़ः स्वानि प्रपद्यते।।
शरीर, घर, धन, स्त्री, पुत्र, मित्र, शत्रु ये सभी भिन्न स्वभाव वाले हैं फिर भी अज्ञानी इन्हें अपना मानता है।

33 **विसय कसाओ गाढ़ो, दुस्सुदि दुच्चित्त दुट्ठगोट्ठि जुदो।**
उग्गो उम्मग्गपरो उवओगो जस्स सो असुहो।।
विषय कषाय की तीव्रता, खोटे शास्त्रों का अध्ययन, दुर्ध्यान, दुष्ट लोगों की सङ्गति, स्वभाव की तीव्रता और उन्मार्ग में गमन होना अशुभ परिणाम माने जाते हैं इनसे पाप का ही बंध होता है।

34 मुस्कराहट एक ऐसा अस्त्र है जो न चुभता है न चूकता है और मुस्कान बड़ी-बड़ी मुश्किलों को आसान बना देती है।

35 रामचन्द्रजी का जन्म नवमी को हुआ, नौ का अङ्क अपनी मर्यादा नहीं छोड़ता पूरा पहाड़ा पढ़ लिजिए, उसी प्रकार श्रीरामचन्द्रजी ने अपनी मर्यादा को कभी नहीं छोड़ा था।

36 पञ्चेंद्रिय के विषय शत्रु हैं तथा जो धर्म, दान, हितकारी तप एवं दीक्षा आदि के ग्रहण करने का निषेध करता है वह व्यक्ति भी शत्रु है।

37 जो हितकारी तप, दान, धर्म तथा चारित्र आदि को बलपूर्वक प्रेरणा देकर ग्रहण कराता है, वह इस जगत् में श्रेष्ठ बन्धु है।

38 जिसके कर-कमल में दानरूपी अमृत है, मुख कमल में वचन रुपी अमृत है, हृदय कमल में दया रुपी अमृत है वह मनुष्य किस को प्रिय नहीं होता है ? अर्थात् सभी को प्रिय होता है।

39 मनुष्य पर्याय, उत्तम कुल में जन्म, लक्ष्मी, बुद्धि तथा कृतज्ञता ये सब विवेक के विना होते हुए भी कुछ नहीं हैं, अर्थात् विवेक के विना इनकी सार्थकता नहीं होती है।

40 किसी भी क्षेत्र में जरूरत का सही आँकलन करना अथवा क्या करने योग्य है क्या नहीं करने योग्य है इसका ज्ञान होना औचित्य गुण कहलाता है, इसे ही विवेक कहते हैं।

41 जहाँ समुद्रों का पानी पीने से प्यास नहीं बुझी, तो क्या ओस की बूँद चाटने से बुझ सकती है ? स्वर्ग के सुख से सुखी नहीं हुये तब मनुष्य पर्याय के भोगों से कैसे सुखी होंगे ?

42 छोटी सी नदी पार करने के लिये घाट की जरूरत होती है, संसार समुद्र को पार करने के लिए मनुष्य पर्याय, उच्च कुल एवं धर्मरूपी घाट को पकड़ना पड़ता है।

43 जेल में, पिजड़े में तथा नरक में पराधीन होकर जो वेदना सही है, उसके सामने मुनि अवस्था के

कष्ट कुछ भी नहीं हैं।

44 तीनों लोकों में ऐसा कोई भी न हुआ, न है, और न होगा, जिसके कार्य में विघ्न न आये हों और कार्य निर्विघ्न हुआ हो क्योंकि भाग्य पुरुषार्थ की परीक्षा किया ही करता है।

45 धन और नारी का मोह छोड़ दिया जाय, तो शेष मोह अपने आप छूट जाता है।

46 जिन्दगी की दौड़ में वो लोग पीछे रह गये, जो कभी दौड़े ही नहीं, 'दौड़ेंगे' कहते-कहते रह गये।

47 मात्र पढ़ने वाले, पढ़ाने वाले, शास्त्र का चिन्तन करने वाले तथा आसक्ति पूर्वक कार्य करने वाले सब मूर्ख हैं, जो क्रियावान् है अर्थात् पठित एवं चिन्तित योग्य कार्य को करता है, वही पण्डित है।

48 अध्ययन के विना मन विकलांग हो जाता है, और मेहनत के विना शरीर विकलांग हो जाता है।

49 शान्त बनना सन्त बनने से भी कठिन है, शान्त मनुष्य वह हो सकता है, जो अपनी प्रशंसा नहीं चाहता है।

50 जो सत्य, तप, ज्ञान, अहिंसा तथा ज्ञानियों की विनय और ब्रह्मचर्य को धारण करता है वह विद्वान् है, न कि केवल जो पढ़ता है वह विद्वान् है।

51 पर के सम्बन्ध से होने वाली चिन्ता शुभ-अशुभ रूप क्यों न हो, निश्चय से बन्ध कराती है, अतः मुझ मुमुक्षु को पर की चिन्ता से क्या प्रयोजन है ? मैं सदा एक हूँ अतः मुझे पर से क्या प्रयोजन है ?

52 निर्मलज्ञान से सुशोभित जो मनुष्य जैनधर्म का ज्ञान कराते हैं, वे समस्त पृथिवीतल पर अनायास ही जीवसमूह की रक्षा करते हैं।

53 जिसने दोनों हाथ दान की विधि में, मन जैनमत में, वचन सत्य और प्रिय भाषण में, प्राण सब मनुष्यों का उपकार करने में और धन प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा महोत्सवों में सैकड़ों बार लगाया है, ऐसा तीन लोक का अद्वितीय तिलक भाग्यशाली श्रावक पञ्चम काल में भी होता है।

54 शास्त्रज्ञान, चारित्र और शान्त भाव नामक परम दुर्लभ धन जिनके पास है, वे मनुष्य धनी कहे गये हैं, शेष निर्धन माने गये हैं।

55 यहाँ पर व्यक्ति काले-गोरे का भेद करता है, किन्तु मरने के बाद राख तो सबकी एक जैसी ही होती है।

56 डण्डा मारकर छत्ते से शहद नहीं मिलती, अतः दादागिरी की अपेक्षा मिठास से काम लीजिए।

57 ज्योतिषियों के चक्कर काटने की अपेक्षा अपना पुण्य बढ़ाइए और कार्य शैली बदलिए।

58 गुब्बारे रंग आदि की वजह से नहीं अपनी आन्तरिक क्षमता से आकाश को छूते है।

59 धूर्त मनुष्य ज्ञान का तिरस्कार व सरल मनुष्य ज्ञान की प्रशंसा और ज्ञानी लोग ज्ञान का उपयोग करते हैं।

60 नाम को पकड़ने वाला मर जाता है, गुणों को पकड़ने वाला तर जाता है।

61 नीरोगता, विद्वत्ता, सज्जनों के साथ मित्रता, महान् कुल में जन्म और स्वाधीनता ये धन के विना भी मनुष्यों का ऐश्वर्य कहलाता है।

62 कर्म तेरे अच्छे हैं तो किस्मत तेरी दासी है, नियत तेरी साफ है तो घर में ही मथुरा काशी है।

63 सफल व्यक्ति जन्म से नहीं कर्म से महान माना जाता है, साधु वस्त्र त्याग से नहीं क्रिया से होता है, धर्मस्थल प्रदर्शन से नहीं प्रार्थना से होता है, सम्प्रदाय संख्या से नहीं सामूहिक क्रियाओं के करने से सफल माना जाता है।

64 जिनका मुख प्रसन्नता का घर है, हृदय दया सहित है, वचन अमृत झराने वाले हैं और कार्य परोपकार करना है, वे सज्जन सभी के द्वारा वन्दनीय होते हैं।

65 अच्छा नेता वह नहीं जो चुनाव जीतता है, बल्कि अच्छा नेता वह होता है, जो लोगों के दिलों को जीतता है।

66 दिल जीतना है तो बड़ों का आशीर्वाद लेना और छोटों को प्यार देना सीख लें।

67 बीती बात को भूलने में ही भलाई है, वरना वर्तमान में जीना दूभर हो जायेगा और भविष्य असम्भव लगने लगेगा।

68 धार्मिक कार्यों में कञ्जूसी नहीं करनी चाहिए, क्योंकि कञ्जूसी के दोष से मनुष्य नियम से दरिद्र होता है।

69 जिसके पास सत्य, तप, इन्द्रिय विजय नहीं है, प्राणी मात्र के प्रति दया नहीं है वह चाण्डाल कहलाता है।

70 सत्य से धर्म उत्पन्न होता है, दान से दया बढ़ती है, क्षमा से धर्म स्थापित किया जाता है एवं क्रोध और लोभ से धर्म का नाश होता है।

71 इस जगत् में सत्पुरुष वे हैं जो उत्तम तप, चारित्र तथा यम आदि को स्वीकृत कर प्राणान्त होने पर भी नहीं छोड़ते हैं।

72 सादगी से बढ़कर कोई श्रृङ्गार नहीं है और विनम्रता से बढ़कर कोई व्यवहार नहीं है।

73 संसार के सभी रस करूण रस के चरण चूमते हैं।

74 त्याग, विद्या तथा विवेक ये तीन गुण जिसके पास हैं, पर अहङ्कार नहीं है तो मेरा उसके लिए नमस्कार हो।

75 मनुष्य जिस समय खोटे कार्य में प्रवृत्त होता है उसी समय वह निश्चय से मर जाता है, फिर चिरकाल बाद मरे हुए उस मनुष्य के विषय में इस समय शोक क्यों किया जाता है ?

76 एक अहिंसा ही प्राणियों का सुख, कल्याण अथवा मोक्ष प्रदान करती है, अहिंसा विहीन तप, श्रुत और संयम का समूह भी वह सुख नहीं प्रदान करता है।

77 दया रूपी कौस्तुभ मणि जिसके हृदय में विद्यमान है, धर्म की उन्नति से हर्षित होने वाला वही पुरुषोत्तम श्रेष्ठपुरुष है।

धर्म मगर को दिया

78 संसारी प्राणी गुरु से पूँछता है सुख कहाँ है ? गुरु कहते हैं हमने अभी मगर को बताया है, उससे पूँछ लो, वह मगर से पूँछने गया, मगर ने कहा पहले हमें पानी पिला दो प्यास लग रही है, वह मनुष्य हँसता है कि पानी में रहकर भी प्यासा है, मगर भी कहता है, कि तुम भी हँसी के पात्र हो, सुख आत्मा का स्वभाव है तुम सुख को बाहर ढूँढ़ते हो।

ज्यों तिली में तेल है, ज्यों चकमक में आग।
तेरा प्रभु तुममें बसे, जाग-जाग रे जाग॥

79 बोलो तो ऐसे कि लोग लिखने लगें, आचरण करो तो ऐसा कि लोग सीखने लगें।

80 एक बार का गुस्सा दिमाग के दस हजार ज्ञान तन्तुओं को नष्ट कर देता है।

81 अन्धकार को कोसने से अन्धकार नहीं मिटता किन्तु एक छोटा सा दीपक जला देने से अन्धकार मिट जाता है।

82 जैसे कीचड़ से सनी झाड़ू से घर साफ़ नहीं होता है, उसी प्रकार कषायों से सनी आत्मा को सुख नहीं मिलता है।

83 हाथ की रेखाएं टेडी हैं तो निराश मत होइए, अपने नजरिये को बेहतर बनाइए हस्त रेखाएं स्वतः अनुकूल हो जायेंगी।

84 सम्यग्दर्शन, दया, दान, तप, सन्तोष, संयम और परोपकार का स्वभाव होना ये उत्तम धर्मात्माओं के चिन्ह हैं।

85 रावण विद्याधरों का अधिपति था और श्रीराम भूमिगोचरी थे, फिर भी राम के द्वारा रावण जीता गया, ठीक कहा है, जहाँ धर्म है वहाँ विजय है ?

86 सब वचनों में 'देदो' वचन कष्ट देने वाला है, 'नहीं है' यह वचन उससे भी अधिक कष्ट देने वाला है, 'लेलो' यह वचन सब वचनों में राजा है और 'नहीं चाहिए' यह वचन सब वचनों में राजाधिराज है।

87 व्यक्ति अपनी जुबान ठीक करले तो जन्मपत्री की गड़बड़ी और शनि की साढे साति कुछ नहीं बिगाड़ सकती है।

88 सफल व्यक्ति कोई महान काम नहीं करते किन्तु वे छोटे-छोटे कामों को भी महान ढंग से करते हैं।

89 अच्छी पुस्तकों के रहने पर मित्रों की कमी नहीं खटकती है। पोशाक बहुमूल्य तो हो, पर भड़कीली न हो।

90 मैं नरक में भी अच्छी पुस्तकों का स्वागत करूँगा, इनमें वह शक्ति है कि ये जहाँ होगी वहाँ स्वर्ग बन जायेगा, विचारों के युद्ध में पुस्तकें ही अस्त्र हैं। 'सबसे बड़ा पाप अङ्गूठा छाप'।

91 पुराने कपड़े पहन कर नयी पुस्तक खरीदिये, जहाँ अच्छी पुस्तकें हैं वहाँ से लोभ, मोह, भ्रम, भय को भगाना कठिन नहीं है, अधिक पढ़ने से मन शैतान नहीं पवित्र होता है।

92 रोग में हितकारी भोजन करना, स्वामी के सामने सत्य बात कहना, दुष्ट के साथ न्यायपूर्ण व्यवहार करना, शत्रु का क्षय करना, ज्ञान होने पर ध्यान करना, धन होने पर दान करना और स्त्री समूह के समक्ष कोमल व्यवहार करना औषध है।

93 वृद्धावस्था रूप को, चिन्ता सब सुखों को एवं शक्ति को, दुर्जन की सेवा विशाल अभिमान को, याचना गौरव को, अपने आपकी प्रशंसा गुणों को और लक्ष्मी दया को नष्ट करती है।

94 लक्ष्मी पुरुषार्थ के अनुसार होती है, कीर्ति त्याग व दान के अनुसार होती है, विद्या अभ्यास के अनुसार होती है और बुद्धि कर्मों के अनुसार होती है।

95 आपका व्यवहार व्यक्तित्त्व का आईना और चारित्र की कसौटी है, व्यक्ति की महानता का आधार परिवार, पैसा, पद नहीं उसकी शालीनता होती है, चेहरे के रङ्ग की अपेक्षा श्रेष्ठ व्यवहार के ढ़ंग का प्रभाव ज्यादा पड़ता है।

96 सोच के बोलें, न कि बोल के सोचें, बोलने से पहले एक बार सोचो, लिखने के पहले दो बार सोचो, और करने से पहले तीन बार सोचो, लोगों के मना करने से पूर्व बोलना बन्द कर दो।

97 निरन्तर वृद्धजनों(गुणवानों) की सेवा और अभिवादन करने वाले मनुष्य की आयु, विद्या, यश

और बल ये चार वस्तुएँ वृद्धि को प्राप्त होती हैं।

98 धन का उपार्जन उस प्रकार करना चाहिए जिस प्रकार धर्म नष्ट न हो और सुख भी क्षीण न हो, परस्पर सापेक्ष रहने वाले धर्म और सुख की सेवा करनी चाहिए, अर्थात् गृहस्थ को धर्म, अर्थ और काम पुरुषार्थ का परस्पर विरोध न करते हुए पालन करना चाहिए।

99 **जाँचे सुर तरु देय सुख, चिन्तत चिन्ता रैन।**
बिनजाँचे बिन चिन्तये, धर्म सकल सुख देन।।
कल्पवृक्ष माँगने पर देता है, चिन्तामणी रत्न चिन्तन मात्र से देता है, पर धर्म विना माँगे और विना चिन्तन के ही सब कुछ दे देता है।

★★★

''धन दान में- मन ध्यान में समय प्रभु गुणगान में हो''

1 **परेशानी में एकदम प्रतिक्रिया न करें-** उत्तेजित अवस्था में मन की विवेक शक्ति नष्ट हो जाती है, लोगों के माँगने पर ही अपनी सफाई दीजिए, अपने निर्दोष होने को लोगों पर थोपिये नहीं, सलाह या उत्तर देते समय आपकी आवाज हमेशा नम्र, आदर पूर्ण और नियन्त्रित होनी चाहिए, आपकी चाहे कितनी भी आलोचना की जाए या दोष लगाया जाय, आपको कभी अनियन्त्रित तरीके से व्यवहार नहीं करना चाहिए और जबाव देते समय कभी चीखना या चिल्लाना नहीं चाहिए।

2 भूत का चिन्तन, भविष्य की चिन्ता- संसार के लिए सर्वाधिक महत्त्व इस बात का है, कि आप इस समय क्या हैं, न कि आप क्या थे और क्या होंगे, वर्तमान का सदुपयोग करें व भूत की घटना से शिक्षा लें।

3 आप अपने भाग्य के निर्माता हैं- जीवन के प्रति स्वयं को जिम्मेदार समझना चाहिए, क्योंकि विचार, शब्द और कार्य ही आपके भविष्य के आधार हैं, जीवन के प्रति आपका सही दृष्टि कोण मुख्य परिवर्तन ला सकता है।

4 दूसरों की सन्तुष्टि से पहले आत्म सन्तुष्टि होना चाहिए- ध्यान रखिये आपके लिए यह अधिक महत्त्वपूर्ण है कि आप अपने सम्बन्ध में क्या विचार रखते हैं, बजाय इसके कि दूसरे आपके सम्बन्ध में क्या विचार रखते हैं, आपके बारे में दूसरे का निर्णय आवश्यक नहीं कि सही हो, क्योंकि निर्णय उसके मानसिक स्तर के अनुसार होता है, इसकी चिन्ता किये विना कि

दूसरे आप के बारे में क्या विचार रखते हैं, सदा सरल-सुन्दर जीवन शैली से जीवन जीते हुए अपनी स्वभाविक स्थिति में रहिए और दूसरों को कृत्रिम रूप से प्रभावित करने का प्रयत्न मत कीजिए, आप जो नहीं है वैसा दिखाने का प्रयत्न करना मानसिक तनाव का सबसे बड़ा कारण होता है।

5 स्वभाव की पवित्रता, मित्रता, त्याग, सत्य, कृतज्ञता, ब्रह्मचर्यता और शूरता ये गुण सम्पत्ति के कारण हैं।

6 यदि एक सत्य गुण है, तो अन्य बहुत से गुणों की क्या आवश्यकता है ? अर्थात् सत्य के साथ सभी गुण रहते हैं।

7 महापुरुषों की कार्यसिद्धि धैर्यगुण(पुरुषार्थ) में निवास करती है, केवल उपकरण या साधन-सामग्री में नहीं।

8 मानव उतनी ही नकल करता है, जितनी उसमें बुद्धि की कमी होती है, जब कोई निर्धन धनवान की नकल करता है, तो वह बर्बाद हो जाता है।

9 बच्चों को जङ्गल के पौधे की तरह स्वाश्रित बनायें न कि घर के गमले की तरह पराधीन, ताकि उन्हे कोई पानी भी न दे तब भी वे अपने बलबूते फल-फूल सकें। केवल अच्छी बातें नहीं अच्छे काम भी करना चाहिए।

10 विद्वान् के आगे अपने गुण नहीं कहना चाहिए क्योंकि वह स्वयं जानता है, और मूर्ख के आगे भी अपने गुण नहीं कहना चाहिए, क्योंकि वह विद्वानों के द्वारा कहे हुए गुणों को समझता ही नहीं है।

11 निन्दा और नुकसान होने पर भी चेहरे की सौम्यता बनाये रखने वाला और जीवन की सबसे बड़ी घटित घटनाओं को भूलने वाला सदा सुखी रहता है।

12 अज्ञानी मनुष्यों का जीवन शून्य है, बन्धुहीन मनुष्यों की दिशाएँ शून्य हैं, पुत्ररहित का घर शून्य है और दरिद्रता सर्व गुणों से शून्य होती है।

13 जिसका जन्म गुरुसेवा में, मन समीचीन ध्यान की चिन्ता में और धन का उपयोग सत्पात्र दान में जाता है, वह पण्डित है।

14 वेषधारी साधु को, गुरु को, गौ को, ब्राह्मण को, राजा को, स्त्री को, मूर्ख को, बालक को और सर्प को ज्ञानीजन नाराज नहीं करते हैं।

15 महापुराणों के ज्ञाता सत्पुरुष प्रिय पदार्थ के चले जाने पर विषाद नहीं करते हैं और आ जाने पर

हर्ष नहीं करते हैं क्योंकि ज्ञान का फल सन्तोष है।

16 पड़ोसी से प्रेम करने वाला व्यक्ति विपत्ति में भी सुखी रहता है, क्योंकि पड़ोसी सहयोग करता है और पड़ोसी से बैर रखने वाला व्यक्ति सम्पत्ति में भी दुःखी रहता है क्योंकि पड़ोसी परेशान करता है।

17 जो व्यक्ति गुस्से के समयगूंगा, निन्दा सुनने के समय बहरा, बुरे दृश्यों को देखने के समय अन्धा बन जाता है वह मुसीबतों से बच जाता है।

18 इंसान का दिमाग कभी बूढ़ा नहीं होता पर आवेश, आग्रह और आशङ्का दिमाग को बूढ़ा कर देते हैं।

19 मनुष्यों का मन ही बन्ध व मोक्ष का कारण है, घर में आसक्त मन बन्ध के लिए और तप में स्थित मन मोक्ष के लिए होता है।

20 लोक में ज्ञानी पुरुष स्वयं तरते हैं और जहाज के समान दूसरों को भी तारते हैं।

21 मोक्ष के लिए प्रयास करने वाला ज्ञानी जीव संसार, शरीर और भोगों से विरक्त रहता है और ब्रह्मचर्य, व्रत, ध्यान, तप, दया में राग भाव करता है, तथा कषायों को बीमारी के समान देखता है।

22 जो होने वाला है वह होता ही है और जो नहीं होने वाला है वह नहीं होता है, इस प्रकार की निश्चित बुद्धि वाले मनुष्यों को चिन्ता कहीं बाधा नहीं पहुँचाती है।

23 अन्य पुरुष के रहने पर चिन्ता होती है, चिन्ता से कर्मबन्ध होता है और उससे संसार बढ़ता है इसलिए मोक्ष की इच्छा करने वाले मनुष्य को 'सब चिन्ताओं से रहित मैं एक हूँ, निश्चिन्त हूँ' ऐसा चिन्तन करना चाहिए।

24 श्रावक दान के द्वारा उत्तम भोग को, पूजा के द्वारा जगत् के स्वामित्व को, ब्रह्मचर्य के द्वारा कुल के ऐश्वर्य को और उपवास के द्वारा निर्वाण सुख को प्राप्त होता है।

25 'हाव-भाव से, इशारे से, गति से, चेष्टा से, साथ-साथ बात करने से, नेत्र तथा मुख के विकार से' इतनी बातों से मनुष्य के मन की बातों का अनुमान हो जाता है।

26 स्वादिष्ट और रोग हरने वाली औषधि की तरह, हित चिन्तक और बुद्धिमान मनुष्य दुर्लभ होते हैं।

27 जो विद्वान् दूसरों को सम्बोधित करते हैं, यथार्थ में वे ही सब को जानने वाले हैं, अन्य लोग जो घट में रखे हुए दीपक के समान किसी के काम नहीं आते हैं, वे मूर्ख हैं।

28 सर्पों के द्वारा डसे हुए मनुष्यों का शरीर ही नष्ट होता है, परन्तु दुर्जन के द्वारा डसा हुआ मनुष्यों

का वंश, वैभव, पाण्डित्य, क्षमा तथा कीर्ति आदि गुण क्षण भर में नष्ट हो जाते हैं।

29 मैं मानता हूँ कि समय अमूल्य है, पर आपको भी मानना पड़ेगा कि जीवन बहुमूल्य है।

30 सड़क से गुजरती किसी की अर्थी को देखकर यह मत कहना कि बेचारा चल बसा, अपितु उस अर्थी को देखकर सोचना, कि किसी दिन मेरी अर्थी भी इन्हीं रास्तों से यूं ही गुजर जायेगी और लोग सड़कों के दोनों ओर खड़े देखते रह जायेगें, दूसरे की मौत से अपनी मृत्यु का बोध ले लेना चाहिए।

ज्ञानी बुजुर्गों की सङ्गति करो

31 ज्ञानी बुजुर्गों की सङ्गति करो, क्योंकि उनकी एक-एक झुर्री पर हजार अनुभव लिखे होते हैं, उनके काँपते हाथ, हिलती गर्दन, लड़खड़ाते कदम, मुरझाया चेहरा सन्देश देता है कि जो भी शुभ करना है, आज ही कर लो कल नही कर पाओगे, बूढ़ा इंसान धरती का सबसे बड़ा शिक्षालय है, क्योंकि उसे देखकर उगते सूरज की डूबती कहानी का बोध होता है।

32 कुछ लोग पैसे के मालिक होते हैं, कुछ लोगों का पैसा मालिक होता है, आप क्या हैं ?

33 स्नेह असंयम का मूल होने से स्नेह युक्त व्रत, तप व संयम प्रशंसनीय नहीं है, पाप ज्ञान का वध करता है।

34 स्वार्थसिद्धि के अभाव में परमोपकारी भी कट्टर शत्रु हो जाता है, उपकार से शत्रु भी मित्र बन जाता है।

35 अनादि अशुभ परिणामों का नाश करने के लिये रात-दिन समता का अभ्यास आवश्यक है।

36 अग्नि वायु से और कषाय असहिष्णुता से भड़कती है।

37 जो पर की निन्दा कर अपने को गुणी सिद्ध करता हैं, वह दूसरों को कटु औषधि पिलाकर स्वयं नीरोग होना चाहता है।

38 सौभाग्य को ठुकरा देना भी दुर्भाग्य है।

39 आँख, कान, नाक, हाथ, पैर दो दो हैं किन्तु इन सबका कार्य एक एक हैं और रसना एक है पर काम दो है खाना और बोलना अतः रसना इन्द्रिय में खाने और बोलने दोनों का संयम अत्यावश्यक है।

40 पुण्य का बन्ध इच्छा रहित व्यक्ति को होता है।

41 ''ये वस्तुएं मेरे भोगने योग्य हैं, मैं भोक्ता हूँ'' यह अशुभ भाव 'सङ्कल्प' कहलाता है।

42 संयम लेकर निदान करना अर्थात् शिला पर सुख से बैठने के लिये कन्धे पर बड़ी शिला धारण

कर ले जाना है।

43 अति प्रिय मनुष्य भी क्रोध करने से शत्रु बन जाते हैं, अयोग्य कार्य से यश भी अपयश रूप परिणमन कर जाता है।

44 घर में सर्प होने पर निकाले विना शयन करना मुश्किल है, उसी तरह संसार रूपी वन को पार किये विना सुखी होना मुश्किल है।

45 संसारी प्राणी ने जगत में नारायण, प्रतिनारायण, चक्रवर्ती, सौधर्मेन्द्रादि दक्षिणेन्द्र पद, लोकपाल, सौधर्मेन्द्र की शची, पञ्चानुत्तरवासी देव और लौकन्तिकदेव के सुखों को प्राप्त नहीं किया, बाकी सब सुख प्राप्त किये हैं।

46 मन को वश में करने पर राग-द्वेष-मोह आदि सब नष्ट हो जाते हैं, अनियन्त्रित मन संसार का कारण है।

47 मन्द या तीव्र गति से शास्त्र न पढ़े। ज्ञानाभ्यास में रुचि नहीं होती है तो कषाय और आरम्भ में प्रवृति होती है।

48 मानसिक दृष्टिकोण ही जीवन में सब कुछ है। सफलता के लिए भय मुक्त होना आवश्यक है।

49 शारीरिक व्यायाम जिस प्रकार शरीर की शक्ति को बढ़ाता है, उसी प्रकार एकाग्रता मन की शक्ति को बढ़ाती है, कठिन विषयों पर भी अपना ध्यान केंद्रित करने का अभ्यास करना चाहिए ताकि मन पर सच्चा नियन्त्रण पाया जा सके, एकाग्रता का अर्थ वर्तमान क्षण में जीना है, अर्थात् प्रत्येक कार्य मन लगा कर करना है।

गुस्सा कमजोरी की निशानी है

50 गुस्सा कमजोरी की निशानी है- आप गुस्से की बजाय अपने व्यक्तित्त्व के बल पर कार्य करवा सकते हैं, किसी व्यक्ति द्वारा कोई कार्य करवाने के लिए आपका गम्भीरता पूर्वक कहना ही पर्याप्त होना चाहिए, आपके शब्दों और भावों में महान शक्ति है।

51 अनाशक्ति और भूलने की क्षमता- किसी कार्य या वस्तु में ध्यान लगाने और उससे ध्यान हटाने का अभ्यास आपको साथ-साथ करना है, जीवन में सफलता पाने के लिए पुरानी अनावश्यक बातों को भुला देना महत्त्वपूर्ण गुण है, याद रखना कभी-कभी महत्त्वपूर्ण है जबकि भूल जाना ज्यादा उपयोगी होता है।

52 आध्यात्मिक उन्नति के लिए मौन, एकान्त और आत्मनिरीक्षण से शारीरिक, मानसिक शक्ति का सञ्चय होता है।

53 समय बर्बाद मत कीजिए अन्यथा समयआपको बर्बाद कर देगा।

54 हीन भाव से दूर रहें जो काम दूसरे लोग कर सकते हैं वह आप भी कर सकते हैं बस सोई हुयी शक्तियों को जगाना है।

हर क्षण हम मृत्यु के समीप

55 हर क्षण हम मृत्यु के समीप पहुँच रहे हैं, न्यूनतम समय में अधिकतम काम करना है, मानसिक वेगों को नियन्त्रित करिए आपको हर जगह इस प्रकार का धीरज अपनाना चाहिए और सांसारिक विषयों और इन्द्रियों के सुखों को पाने के लिए बैचेनी और उत्सुकता से बचना चाहिए, पानी की शक्ति जिस प्रकार बाँध बनाने से बढ़ जाती है ठीक उसी प्रकार मन की शक्ति मन को नियंत्रित करने से बढ़ जाती है।

कमजोरियों को स्वीकारिये

56 कमजोरियों को स्वीकारिये- अपनी कमजोरियों को जान लिया तो समझ लीजिए कि आपने उनको दूर करने का पहला कदम उठा लिया है, अपने आपको अपनी आँखों से देखिए दूसरों की आँखों से नहीं अर्थात् आत्मनिरीक्षण स्वयं कीजिए।

चेतन मन को गन्दगी से न भरिये

57 चेतन मन को गन्दगी से न भरिये- सकारात्मक सोच सदैव नकारत्मक सोच पर विजयी होती है, विना माँगे सलाह न दीजिए, टीका-टिप्पणी करने से बचिए, आप जो उपदेश देना चाहते हैं उसे शब्दों में देने के बजाय अपने व्यवहार द्वारा देना उचित है, वह अधिक असर कारक व वजन दार होगा।

58 **कर्म करने में अहङ्कार की भावना का त्याग-** कर्तव्य समझकर उपकार करें, बदले में अपेक्षा न रखें।

59 सदैव आशावादी बनिए- आप किसी कार्य को करने में चाहे कितनी बार असफल हो चुके हैं, आपके द्वारा किया गया छोटे से छोटा प्रयत्न व्यर्थ नहीं जाता है, हमेशा परमात्मा का स्मरण कीजिए।

60 'नहीं' कहना भी सीखिए, अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व रखिए, जो सच्चाई की स्थिति में कठोर विरोध होने पर भी एक चट्टान की तरह खड़ा रह सके, आपका लक्ष्य दूसरों को खुश करना नहीं आत्म विकास करना होना चाहिए।

61 संसार में कुछ भी अत्यावश्यक या अपरिहार्य नहीं, हम इस जगत पर निर्भर रहते हैं, यह जगत हम पर निर्भर नहीं रहता है, संसार हमारे विना पहले भी चलता आ रहा था, और आगे भी चलता रहेगा।

62 जीवन में मुफ्त कुछ नहीं मिलता सब पुण्य से आता है- किसी की सम्पति को नाजायज तरीके से अपने कर्तव्य की सीमा के बाहर जाकर हथियाने का विचार मत करिये, वह आपके पास टिकेगी नहीं।

63 कर्म करते हुए ही आनन्द लीजिए फल का इन्तजार मत कीजिए।

64 परिवर्तनों को अपनाइए- हम एक घण्टे पूर्व जो थे वह अब नहीं हैं, परिवर्तनों से घबराने की बजाय उनका आदर करना चाहिए और लाभ के लिए उनका उपयोग करना चाहिए।

65 **टालने की आदत से बचें-** सफल व्यक्ति वें होते हैं, जो अपनी कुर्सी से उठ कर तत्काल कार्य करते हैं, किसी चीज को शुरू करने का सही समय बस यही है, कल पर नहीं टालिए।

66 लालच छोड़िये- हर वस्तु आपके लिए नहीं है, दूसरों का भी ख्याल रखिये।

67 छोटे-छोटे कार्यों को भी महत्त्व दीजिए, उनको एकाग्रता एवं सावधानी से कीजिए।

68 निर्णय या चुनाव करते समय अस्थिर या चञ्चल चित्त नहीं होना चाहिए।

69 आप जितना देते हैं उससे अधिक पाते हैं, आप अपना ज्ञान दूसरों को देकर अधिक ज्ञानवान बनते हैं, खुशी देकर प्रसन्न बनते हैं, धन देकर सम्पन्न बनते हैं, इसलिए दूसरों को देने में उदार बनो क्योंकि जो देते हैं वे बचाते हैं, जो बचाते हैं वे खो देते हैं।

70 सारे विश्व को अपना परिवार समझकर सदैव मुस्कराइये इससे आप हर समय सकारात्मक रहेंगे।

71 अपने को सुखी रखने का उपाय यह है कि पड़ोसी सुखी रहे, पड़ोसी चीखेगा तो आप सुखी नहीं रहेंगे।

72 **सांसारिक लगाव कम कीजिए,** व सांसारिक वस्तुओं का संग्रह कम कीजिये, संसार एक विशाल जङ्गल है, इसमें आप जितना घुसते जायेंगे उतना खोते जायेंगे और भ्रमित होते जायेंगे, आपके विकास का मार्ग संसार के विभिन्न अनुभवों की संख्या बढ़ाने में नहीं वरन् अपनी चेतना में गुणात्मक परिवर्तन करने में है।

73 चीजों को अपने आप होने दीजिए जबरदस्ती मत करिये, अपने नाम के एकाउन्ट, जमीनादि में अनावश्यक टांग अड़ाना छोड़िये।

74 दूसरों से आशा मत रखिये- किसी को दी गयी सहायता के बदले जैसे ही कुछ पाने का विचार

मन में आता है, और यह शुद्ध कार्य व्यापारिक लेन-देन में बदल जाता है।

75 समस्याएं जीवन का अभिन्न अङ्ग हैं- कोई भी व्यक्ति चाहे वह कितना ही दुष्ट क्यों न हो, उस के सभी दरवाजे बन्द कभी नहीं होते, अर्थात् एक न एक गुण प्रत्येक व्यक्ति में होता है।

76 जितना लें उससे अधिक दें, बन्धनों से ऊपर उठें, नियमित व्यायाम करें, अच्छी सङ्गति चुनें।

77 स्वस्थ मन के लिए सात्विक भोजन करें- अच्छे स्वास्थ्य का एक रहस्य सदैव थोड़ा भूखा रहना है, पर्याप्त मात्रा में पानी, सब्जियां, फल लेवें, वस्त्र आदि वस्तुओं की व दांत, नाखून आदि अङ्गों की सफाई रखें।

78 विश्राम और शिथलीकरण- शारीरिक एवं मानसिक मेहनत के बीच-बीच में विश्राम(योग निद्रा) करते रहें।

79 अच्छी नींद लीजिए- अच्छी मानसिकता से, सात्विक भोजन व शान्तिपूर्ण जीवन से सुखद नींद आती है।

80 मृत्यु से भय क्यों ?- जो जीवन भर मृत्यु की तैयारी करते हैं वे मृत्यु से डरते नहीं हैं, जैसे साल भर पढ़ने वाला विद्यार्थी परीक्षा से घबराता नहीं है।

81 पहल आपको ही करना होगी- सजग नागरिक होने के नाते अन्याय, अव्यवस्था के विरुद्ध आवाज उठाना अधिकार भी है, और कर्तव्य भी है, संसार को बदलने के लिए स्वयं को बदलिए, उसका प्रभाव निश्चित ही दूसरों पर पड़ता है।

82 बुराईयों का बदला न लीजिए- दूसरा क्षमा करने योग्य न हो तो भी आप क्षमा करके हल्के हो जाते हैं, बदला लेने का आनन्द क्षणिक होता है एवं क्षमा करने का आनन्द स्थाई होता है।

83 सन्देह नहीं विश्वास रखिए- शुभचिन्तकों पर विश्वास नहीं करने से धोखा खाना बेहतर है।

84 कोई भी व्यक्ति अपने द्वारा किये गये दुष्कर्म के फल से बच नहीं सकता, चाहे समुद्र में करो या आकाश में।

85 **अपने में ईमानदार रहिए-** सत्य का कभी पतन नहीं हो सकता है और असत्य कभी टिक नहीं सकता है, जीवन के सङ्कटों में सत्य की नौका हिल सकती है पर डूब नहीं सकती, कर्म के फल मिलने में देर हो सकती हैं पर विना फल दिए कर्म जाते नहीं, विचारों, शब्दों और कर्मों में एक रूपता रहे, सज्जन की यही सच्ची पहचान है।

86 **संसार द्वन्द्वात्मक है-** सुख-दुःख, शत्रु-मित्र, रात-दिन, सर्दी-गर्मी दोनों आते हैं अतः समता रखना चाहिए यदि आप अपमान नहीं चाहते तो आपको प्रशंसा पाने की इच्छा भी छोड़ना चाहिए।

87 **मधुर सङ्गीत सुनिये**- मन की उच्च स्थिति बनाये रखने में मधुर ध्वनि का महत्त्व है।

88

89 सही मुद्राओं में रहें स्थिर एवं सीधी आसन से बैठें जिससे गर्दन, रीड की हड्डी, कमर आदि पर गलत असर न हो।

90 **प्रकृति का साथ स्वच्छ और सुरुचि पूर्ण वातावरण**- स्वच्छता के बाद ही आप ईश्वर को पा सकते हैं, वातावरण का मन पर बहुत प्रभाव पड़ता है।

91 सुन्दर चित्र और फोटो लगाइए, जैसा बनना है वैसे चित्र लगाइए, चित्र में वास्तविक कम्पन निहित है।

92 आपके मन पर तापमान, जलप्रदूषण, वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण और मानसिक प्रदूषण प्रभाव डालते हैं, इनसे बचें।

93 **कूड़े-करकट को फेंकते रहिए**, एक अन्दर और एक बाहर का फार्मूला घर को साफ रखता है, एक नयी वस्तु लाओ तो पुरानी बस्तु बाहर कर दो। कुछ भी बरबाद न कीजिए कपडा, पानी, कागज, बिजली आदि।

94 **भविष्य जानने के उत्सुक न हो**- क्योंकि पूरा भाग्य निश्चित नहीं, आप अच्छे प्रयत्न से भाग्य बदल सकते हैं, जीवन जीने का सही तरीका अपनी जीवन यात्रा में जो कुछ सामने आये उसका सकारात्मक मन और साहस से सामना कीजिए।

95 **लालसा और इच्छाओं पर नियन्त्रण**- भौतिक इच्छाओं और इन्द्रिय सुखों से प्राप्त तृप्ति अस्थायी और पीड़ा से युक्त होती है, हम इन क्षणिक सुखों से अधिक ऊँची किस्म की प्रसन्नता के अधिकारी हैं, जो स्थायी और सन्तोष जनक है, आवश्यकताएँ और आराम देने वाली मूल वस्तुएं जीवन को बनाए रखने के लिए जरूरी हैं तथा प्रकृति से प्राप्त होने वाला सुख सात्विक है, जबकि इच्छाओं में तामसिक व राजसिक सुख गर्भित है अपने विकास और जीवन के सत्यों को जानने की इच्छाएं अच्छी इच्छाएं हैं।

96 धन कमाने की दौड़ में शामिल न हो क्योंकि धन सब कुछ दे सकता है पर खुशी नहीं दे सकता है।

97 **समय न होने का बहाना मत बनाइये**- सबसे अधिक व्यस्त व्यक्ति के पास सबसे ज्यादा समय होता है, बस श्रद्धा और इच्छा शक्ति होना चाहिए पर्याप्त समय निकलआयेगा।

98 **निरन्तर विकास करिये**- मूल लक्ष्य शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास करना होना चाहिए, क्योंकि वही सदैव साथ रहने वाली वस्तुएं हैं।

★★★

''समय, सलाह, सम्पदा विना माँगे कभी न दें ''

1 **छोटी-छोटी बातों पर परेशान मत होइये-** उदार मन के बनिये, छोटी-छोटी बातों का बतङ्गड़ न बनाइये, भूलने और क्षमा करने के गुणों का विकास कीजिए, छोटी-छोटी बातों पर बिगड़ने से केवल आपके झूठे अहङ्कार को सन्तोष मिलता है।

2 **अहम् त्यागिये-** आपके विना भी संसार चल सकता है, संसार रूपी इस महान विद्यालय में कुछ प्रशिक्षण पाने के लिए आपका एक अस्थायी पड़ाव है, कोई महान कार्य करके आप मूल रूप से स्वयं अपनी सहायता कर रहे हैं, संसार की नहीं।

3 समय या परिस्थिति के अनुसार इन वाक्यों का प्रयोग करने में संकोच न करिये, कि 'मुझे खेद है', 'मुझसे गलती हो गयी', 'मुझे सहायता की आवश्यकता है' या 'मुझे मालूम नहीं', 'क्षमा करें' इत्यादि।

4 बाह्य परिस्थितियों में तनाव पैदा करने की शक्ति नहीं- मानसिक तनाव बाह्य परिस्थितियों के कारण नहीं होता, बल्कि आपकी उनके प्रति प्रतिक्रिया के कारण होता है, आप अपनी भावनात्मक प्रतिक्रियाओं को इस सीमा तक नियंत्रित कर सकते हैं कि बाहरी दुनिया में कुछ भी घटित होता रहे, पर आप पर उसका कोई प्रभाव न पड़े, इससे 'मन' दूसरों के आघातों से प्रभावहीन व स्वतन्त्र बनता है।

5 **अप्रिय घटनाओं से घबराइये मत-** जब तक हम उन्हें बढ़ा-चढ़ाकर नहीं समझें तब तक वे घटनाएं हमें विचलित नहीं कर सकतीं। शान्ति पूर्वक हर चीज को स्वीकार कर उसका सामना किया जा सकता है। किसी दुःखद घटना पर जरूरी ध्यान देना और उसके हानिकारक प्रभावों से बचने के लिए उपाय करना बिल्कुल अलग बात है, लेकिन जरूरत से ज्यादा चिन्ता करने और परेशान होने से समस्या खड़ी हो जाती है। यदि आप चीजों को कुछ दूर से देख सकें तो पायेंगे, कि वे चीजें उतनी भयानक नहीं है जितनी आपने उन्हे झूठे नजरिये से कल्पना करने पर पाया था।

6 **चीजों को त्यागना सीखिए-** वास्तव में सच्चाई यह है कि खुशी चीजों को एकत्रित करने में नहीं वरन त्यागने अर्थात् उनका मोह छोड़ने में है। आप जब अपने को किसी विशेष चीज से जोड़ लेते हैं या आसक्त हो जाते हैं, तो आपके विचारों और कार्यों की स्वतन्त्रता खत्म हो जाती है। इससे आप सच्चाई को उस रूप में नहीं देख पाते हैं जैसी कि वह है और सच्चाई का वह

अज्ञान कष्ट और विसङ्गति पैदा करता है।

7 क्या आप अपने को अकेला और ऊबा हुआ महसूस करते हैं ?आध्यात्मिक शब्दावली में अकेला व्यक्ति वह है जिसे आत्मज्ञान नहीं है और जो स्वयं सत्य का सामना नहीं कर सकता है, केवल ऐसा ही व्यक्ति दूसरी वस्तुओं और व्यक्तियों के पीछे भागता है, ताकि वह अपने मन को स्वस्थ रख सके। जब उसके पास अपने मन को व्यस्त रखने के लिये कोई व्यक्ति या वस्तु नहीं होती है, तो वह ऊबने लगता है, **''वह यह अनुभव नहीं करता कि अपने ध्यान को अपने अन्दर केन्द्रित करके विना किसी वस्तु के भी खुशी पायी जा सकती है।''** ऐसा व्यक्ति जो आत्मा में उपस्थित है अपने उस आन्तरिक आनन्द और शान्ति को पाने में सफल रहता है। यदि आप अकेले नहीं रह सकते तो इसका अर्थ है कि आपके मन में शान्ति नहीं है, **जिस शान्ति को आप पाने के लिए बेचैन हैं, वह तभी मिल सकती है जब आप अपने साथ मित्रता कर लें,** और देर सबेर आपको ऐसा करना ही पड़ेगा। अपने आप से भागना शान्ति की राह नहीं, इससे केवल शान्ति पाने में देर लगती है।

8 किसी की असहमति या स्वीकृति से परेशान न हो- आपको स्वीकार करने वाला व्यक्ति तकनीकी रूप से आपका मूल्याङ्कन करने के अयोग्य हो सकता है, अथवा वह आपके विरुद्ध द्वेष और विपक्षी मनोभाव रखने वाला हो सकता है, इसलिए आप उसे सही कैसे मान सकते हैं ?

9 व्यवहार और बातचीत में आत्मकेन्द्रित होने से बचिए- बातचीत में ''मुझे, मैं, मेरा'' इत्यादि अहम् पूर्ण कथन नहीं होना चाहिए, जब असल में चेतन का विस्तार हो जाता है तो केवल अपने लिए कार्य करने और जीवित रहने का विचार बिल्कुल अर्थ हीन लगने लगता है।

10 **छः अवसरों में साहस-** पद से गिर जाने पर, बीमारी में, नुकसान में, यात्रा में, निःसन्तान होने पर, व्रतों में परेशानी आने पर साहस रखना चाहिए।

11 **बुरा व्यवहार करने वालों से लड़िए मत-** अपना स्तर न गिराकर, उच्च मानसिक स्थिति और आदर्श को बनाए रखकर बुरा व्यवहार करने वालों की उपेक्षा कर देनी चाहिए।

12 **आदर्शवादी के तनाव से बचिए-** गलतियों से शिक्षा लेते हुये हम निरन्तर अपना ज्ञान बढ़ाकर और अभ्यास करके अपनी अपूर्णता को कम कर सकते हैं।

13 **परिस्थितियों के साथ सामञ्जस्य और समझौता करना सीखिए-** विसङ्गतियाँ प्राणियों के कर्मानुसार बनती हैं, हमारी इच्छानुसार नहीं बन सकती हैं, अतः हम जिन चीजों को नियन्त्रित

और परिवर्तित नहीं कर सकते हैं, उनके अनुसार अपने को ढालना और उनसे समझौता करना सीखना चाहिए।

14 **दूसरों को प्रभावित करने के चक्कर में मत पड़िए-** दूसरों को प्रभावित करने के प्रयत्न और उससे खुशी पाने के चक्कर में आप अपनी प्रसन्नता की कुञ्जी अपरोक्ष रूप से दूसरों को सौंप देते हैं। कोई भी कार्य मुख्य रूप से आत्म सन्तोष पाने की दृष्टि से करना चाहिए। दूसरों की सराहना का इन्तजार नहीं करना चाहिए।

15 **अपनी समस्याओं व कठिनाइयों का विज्ञापन मत करिये-** मानव की प्रकृति के अनुसार कोई भी आपकी समस्याओं में दिलचस्पी नहीं रखता, हर एक व्यक्ति सिर्फ अपनी समस्याओं में रुचि रखता है। आपकी समस्याएं सुनकर सामने वाला ऊब जायेगा या अपने से अधिक परेशान समझकर क्षणिक सन्तोष का अनुभव करेगा। आपकी मानिसक कमजोरी या बचपना समझेगा। अपनी समस्याओं का हल किसी समझदार से लीजिए। लगातार शिकायत व नोंक-झोंक से बचिए। विना पूँछे ज्यादा स्पष्टीकरण और सफाई न दीजिए। लोग अपनी मानसिकतानुसार जो सोचते हैं, सोचने दीजिए।

16 **सहनशीलता का विकास कीजिये-** सहनशीलता सबसे महान गुण है, अपने प्रति कठोर बनें जबकि दूसरों के दोषों तथा कमियों के प्रति उदार, दूसरों के अपराधों को भूलने और क्षमा करने से मन और चेतना शक्तिशाली और शुद्ध बनती है, एक सहनशील व्यक्ति सभी सीमाओं को पार कर किसी भी ऊँचाई पर पहुँच सकता है।

17 **धर्म के स्वरूप को समझें-** धर्म शास्त्रों को पढ़े विना आप धर्म नहीं समझ सकते हैं, और धर्म को समझे विना आप अपना भविष्य उज्ज्वल नहीं कर सकते हैं।

18 **हर विषय में न उलझें-** एक विषय के ही विशेषज्ञ बनें, सांसारिक विषयों के ज्ञान की कोई सीमा नहीं है, किसी भी व्यक्ति द्वारा हर चीज का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना असम्भव है, इसलिए केवल एक विषय के विशेषज्ञ बनिए और उसी से संसार की सेवा कीजिए, दूसरे क्षेत्रों में आम व्यवहार के लिए सामान्य ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं, हमारा लक्ष्य आत्मज्ञान पाना है, संसार चलाना नहीं।

19 **बेझिझक सहायता दीजिए और लीजिए-**यदि कोई सहायता न दे या न ले तो द्वेष न करें, जितना आप देते हैं, उससे अधिक आपको मिलता ही है।

20 **प्रत्येक क्षण का आनन्द लीजिए-** कुछ लोग बाद में सुखी रहने के लिए पहले संघर्ष करते हैं,

पर शायद वह क्षण आये ही न, अतः प्रत्येक कार्य में आनन्द लीलिए, आनन्द मन में है अतः वस्तुओं के न होने पर भी सुखी रहिए।

21 **प्रत्येक व्यक्ति से शिक्षा लें-** संसार में ऐसा कोई नहीं जिसे सब कुछ आता हो, अतः प्रत्येक व्यक्ति से कुछ अनुभव लीजिए।

22 **आकांक्षा लेखन- अ**पने ध्येय को लिखें, सन्त, पण्डित या वक्ता जो भी बनना चाहते हैं उसे अनेक स्थानों पर लिखें।

23 **निर्णय शुभ घड़ी का-** हजारों मील लम्बी यात्रा का शुभारम्भ मात्र एक कदम से होता है, अतः शुभ घड़ी में सोच विचार कर कार्य प्रारम्भ कर देना चाहिए।

24 **दुश्चिन्ता न बने बाधा-** दुश्चिन्ताओं से घिरा हुआ व्यक्ति अचानक ही विदारक कष्टों को झेलने के लिए मजबूर होता है।

25 जो सङ्कटों का भविष्य दृष्टा है, वह दो बार कष्ट प्राप्त करता है, जिस दिन ज्ञात हुआ उस दिन और जिस दिन कष्ट आयेगा उस दिन।

26 क्रोध एक ऐसी अदृश्य ज्वाला है जिसके अङ्गारों में मनुष्य भीतर ही भीतर सुलगता रहता है, और अपने अद्वितीय व्यक्तित्व को वह अनुपयोगी राख के ढेर में परिवर्तित कर लेता है।

27 विरोधाभासी आकांक्षाओं को एक साथ उद्देश्य न बनाएँ, यदि आप धनवान बनने की इच्छा रखते हैं तो, सन्त बनने की इच्छा को तिलाञ्जलि देना होगा।

28 **एक समय में मात्र एक ही उद्देश्य 'श्रेष्ठ ध्येय'** आपको निर्धारित करना है, और जुट जाना है, पूरी शक्ति से उस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए, फिर आपका ध्येय निश्चित ही आपके जेब में होगा।

29 **खोजिये अपनी महान कमजोरी-** अपनी सबसे बड़ी कमजोरी को ढूँढ़कर और उसमें अपेक्षित सुधारकर व्यक्ति उस स्थान पर खड़ा हो सकता है, जहाँ की एक गञ्जे व्यक्ति को भी कङ्घी खरीदने के लिए मजबूर कर सकता है।

30 कीजिए विकास सर्वाधिक अपेक्षित गुण का- वक्ता बनने के लिए दर्पण में देखकर पहले एकान्त में अभ्यास करें।

31 अपनी कमियों का केवल प्रलाप ही न करते रहें, इस प्रलाप को त्याग कर नई वैकल्पिक दिशा खोजने के प्रयास में जुट जाइये।

32 रुचि के चयनित क्षेत्र में प्रतिदिन कुछ न कुछ अवश्य कीजिए, पत्रिकाएँ पढ़िए, व्यवहारिक

प्रयोग कीजिये, जो आपके लिए तो लाभप्रद हो, साथ ही आपके समाज एवं राष्ट्र के गौरव में भी अपना कुछ योग दान दे सकें, तभी आप सिर ऊँचा उठाकर गर्व की अनूभूति कर सकेंगे।

33 वही जीवन सही अर्थों में सौभाग्य शाली है, जिसने मात्र स्वयं के बारे में नहीं सोचा वरन् समस्त समाज के लिए अपनी उपयोगिता सिद्ध कर दी है, अपने जीवन में ऐसे पुष्पों की फुलवारी सजाइये जिसकी सुगन्ध मात्र आपके घर की चारदीवारी तक ही सीमित न रहे बल्कि आसपास को भी लाभ दे सके।

34 **आत्म विश्वास हो आपकी नींव-** आत्म विश्वास वह सञ्जीवनी बूटी है, जो व्यक्ति के घोर तम निराशा जन्य, मरणासन्न हृदय में भी नवीन जीवन सञ्चार करने की क्षमता रखती है, आत्म विश्वास ही आपकी वह नींव है जिसका सम्बल पाकर आप विश्व विजय जैसा अति महत्त्वाकाङ्क्षी स्वप्न देखने का भी साहस कर सकते हैं।

35 अधिकांश सफल व्यक्तियों ने जो भी कार्य प्रारम्भ किया, इस दृढ़ विचार से प्रारम्भ किया कि असफलता शब्द उनके लिए बना ही नहीं। आत्मविश्वास ही सफलता की प्राप्ति का महामन्त्र है।

36 **''वृत्तेन हि भवत्यार्यो न धनेन न च विद्यया''**- मनुष्य उद्यम से ही सफल होता है, धन एवं विद्या का स्थान गौण होता है।

37 अपनी कमजोरियों की कभी भी अन्य व्यक्ति के शक्तिशाली बिन्दुओं से तुलना न करें, बल्कि आप ही श्रेष्ठ हैं, यह धारणा अपने मन में अमिट बनाइए। अपनी कमियों एवं अक्षमताओं को अधिक महत्त्व न दीजिए, बल्कि उनमें गुणात्मक सुधार करने का प्रयास जारी रखिए।

38 **लेखा-जोखा रखिए प्रयासों का-** आत्मसंयम, मौन, नियमितता, दृढसङ्कल्पता, मितव्ययता, उद्यमता, लगन, न्याय, परिमितता, स्वच्छता, शान्ति, पवित्रता एवं विनम्रता बनाए रखें।

39 सतत अध्ययन की प्रवृति अपनाएं, सामाजिक कार्यों में रुचि बढ़ाएँ।

40 आप सफल तभी बनते हैं जब आप भी उस सङ्गठन का एक हिस्सा बन जाते हैं, उसके कार्यों में बढ़कर हाथ बँटाते हैं। यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि आप मात्र हाथ बाँधे ही न खड़े रहें और अन्य लोग सङ्गठन के कार्यों को करते हुए वहाँ उपस्थित जनसमुदाय के आकर्षण का केन्द्र बन जायें। उन कार्यों को करने का अनुभव अर्जित कीजिए, यही अनुभव आपकी सफलता को शीघ्रता प्रदान करता है।

41 **महान सोचें महान बनें-** जैसी सोच होती है प्राय: वैसा ही भविष्य होता है।

42 **जहाँ चाह वहाँ राह-** एक बार में मात्र एक ही कार्य करें और उसकी सफलता के लिए पूरी लगन, सम्पूर्ण साधन और सम्पूर्ण शक्ति लगा दें। आकांक्षा पूर्ति में सर्वाधिक सहायक साहित्य का अध्ययन करें। जो भी पढ़ें पूरे मनोयोग से धीरे-धीरे बड़े ही मनन पूर्वक और प्रत्येक वाक्य को आत्मसात करते हुए पढ़िए एवं उद्देश्य पूर्ण रुचि अपनाइए।

43 **बाँटिए और समस्याओं पर राज्य कीजिये-** भली-भाँति समझी गई समस्या आधी सुलझी हुयी होती है।

44 **छोटे बच्चों को भी मित्र बनाइए-** अपने अवकाश के समय में कुछ क्षण छोटे बच्चों के साथ रहने के लिए भी सुरक्षित रखिये, इनके साथ खेलने का आनन्द उठाइए। ये आनन्द के सागर हैं। इनकी मीठी-मीठी बातें, तुतलाती बोली, लड़खड़ाते शब्द, आपको आनन्द के सागर में डुबो देंगे। इनकी निश्छल जीवन शैली आपको प्रत्येक वस्तु के प्रति एक न एक दृष्टिकोण से परिचित करायेगी। इनके अजीवों-गरीब प्रश्न आपको अधिक गहराई से सोचने पर मजबूर कर देंगे।

45 **निश्चित आदेश दीजिए अपने मन को-** लक्ष्य के अनुरूप अपने मन से काम लें, महत्त्वाकाङ्क्षी हो, एक मात्र अधिकाधिक उपयोग हो मस्तिष्क का, ऑक्सीजन की पर्याप्त मात्रा हो, तो मस्तिष्क पूरी तरह कार्य करता है।

46 सर्वोत्तम स्मृति से महत्त्वपूर्ण है धुँधली सी लिखावट- अपनी स्मृति का भरोसा न करें महत्त्वपूर्ण बातें अवश्य लिखें।

47 **अद्वितीय प्रतिभा आपकी-** साहसी व्यक्ति अकेला ही आगे बढ़ने का साहस करते हुए महासाहसी बन अद्वितीय सफलता अर्जित करता है।

48 प्रसिद्ध कहावत है कि दो नावों में सवार व्यक्ति कभी भी अपनी यात्रा पूरी नहीं कर पाता है।

49 मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि किसी तथ्य को दोबारा पढ़ने पर, उसे याद रखने या याद करने में लगभग पैंतालीस प्रतिशत कम समय लगता है।

50 विभिन्न व्यक्तियों के नामों को याद रखने से उन व्यक्तियों पर अच्छी छाप छूटती है, एवं व्यवसाय और कार्य क्षेत्र में वाञ्छित सहयोग प्राप्त होता है।

51 जो भी सीखें उसका अभ्यास अवश्य करें, अभ्यास ही व्यक्ति को परिपूर्ण बनाता है, 'करत-करत अभ्यास के जड़ मति होत सुजान'।

52 **रखिए सुनिश्चित ध्येय-** आपका उत्तम व्यवहार सौभाग्य को आकर्षित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जो अकेले चलते हैं वे तेजी से आगे बढ़ते हैं।

53 पुस्तकीय ज्ञान की अपेक्षा व्यवहारिक अभ्यास द्वारा सीखा हुआ ज्ञान मस्तिष्क में अधिक देर रहता है, और आप सफलता को शीघ्र एवं सुनिश्चित करते हैं।

54 **उत्कृष्ट आकाङ्क्षा-** सफलता प्राप्ति के लिए दृढ़ विश्वास रखिए, लाभ में अधिक लालच कष्टों को आमन्त्रित करता है, यह कहावत सत्य है और दुर्भाग्य की पौषक है।

55 कैसा भी छोटा मौका मिले उसे हाथ से न जाने दें, बढ़ना ही चाहते हो तो नीचे से प्रारम्भ करो।

56 अवसर आने पर उसके लिए स्वयं को तैयार रखना ही व्यक्ति की सफलता का गुप्त रहस्य है।

57 क्षणिक या अल्प कालीन उपलब्धियाँ केवल अल्पकालीन प्रसन्नता ही प्रदान करती हैं, साहस में ही लक्ष्मी निवास करती है।

58 **सुखी होने के दस उपाय-** 1.अनावश्यक चीजें न खरीदें, 2.कभी-कभी न बोलना भी सीखें, 3.सबकी राय से निर्णय लें, 4.अपनी गलती स्वीकारें, 5.सम्मान से बुलावें, 6.सदैव व्यस्त रहें, 7.पहले लिखें बाद में उधार दें, 8.व्यवहारिक बनें, 9.सोचें फिर बोलें, 10.बहुत कम बोलें।

59 **दु:खी होने के दस उपाय-** 1.समय पर काम नही करना, 2.पूर्व सुखों का स्मरण करना, 3.अपनी बात को ही सत्य बताना, 4.देर से सोना-उठना, 5.हमेशा स्वयं के लिये सोचना, 6.लेन-देन का हिसाब न रखना, 7.किसी पर विश्वास न करना, 8.निष्प्रयोजन झूठ बोलना, 9.विना मांगे सलाह देना, 10.किसी के लिए कुछ नहीं करना।

60 सर्वश्रेष्ठ को ही लक्ष्य बनाकर चलें, प्रत्येक दिन अपना कार्य पहले दिन से कुछ अच्छा करने का प्रयत्न करें।

61 किसी के बारे में बुरा विचारें भी नहीं- विचार बहुत शक्ति शाली हथियार है, कोई भी व्यक्ति अच्छा बुरा जैसा करता है, उसी के अनुसार भोगेगा उसके लिए आप क्यों परेशान होते हैं।

62 **हर परिस्थिति से शिक्षा लें-** हर क्षण और परिस्थिति नयी होती है, हम उससे नया अनुभव ले सकते हैं।

63 **तुलना न करें-** आपके पास जो है, उससे अधिकतम सन्तोष पाने का प्रयत्न कीजिए, इस परिवर्तनशील संसार में एक के बाद एक बढ़िया और आकर्षक चीजें आती रहेंगी उनका कोई अन्त नहीं है।

64 **विनम्र बनें-** सबसे अधिक महान व्यक्ति वह है जो सबका सेवक है, महान व्यक्ति जैसे-जैसे

अधिक धन, सम्मान, शक्ति, प्रतिष्ठा पाते हैं, वैसे-वैसे अधिक विनम्र बनते जाते हैं, अहङ्कार करना अविकसित व अस्वस्थ मन की निशानी है, घमण्ड और अक्खड़पन से व्यक्ति निश्चय से पतन की ओर जाता है, वास्तविक महानता गुणों और विशेषताओं से आती है न कि पद या धन से, वही शासन करने योग्य है, जो मुकुटको विना इच्छा के पहनता है।

65 **सराहना करना चाहिए-** अच्छे कर्मचारी को यह बताने से न चूकिए कि कम्पनी के लिए उनका कितना महत्त्व है, इससे प्रोत्साहन मिलता है।

66 **अपने निर्णय स्वयं लें-** आप दूसरों से सलाह ले सकते हैं, लेकिन अन्तिम निर्णय खुद का होना चाहिए, महान बनने के लिए आपको अपने जीवन में एक न एक खाई खुद ही पार करनी पड़ेगी, किसी न किसी दरवाजे से आपको अकेला ही निकलना होगा।

67 व्यक्ति के पास नब्बे रुपये हैं, तो दस रुपये का आभाव खटकता है, सौ रुपये के चक्कर में रहता है, नब्बे रुपये का सुख नहीं भोग पाता है।

68 आवश्यकता शरीर से जुड़ी है और आकङ्क्षा मन से। दुःख आवश्यकता में नहीं, आकाङ्क्षा में है।

69 **शिष्टाचार-** जी, श्री, आप, धन्यवाद और कृपया शब्दों का उदारता से उपयोग कीजिए।

70 अपने से बुजुर्ग आगन्तुक का स्वागत करते हुए खड़े हो जाइए।

71 उधार ली हुई चीजों को वापस कीजिए, एवं किसी से व्यङ्ग पूर्ण वचन का उपयोग न कीजिए।

72 रहस्यों को अपने तक सीमित रखिए। उनको बताने के लोभ से बचिए। अपने घनिष्ट मित्र को भी कोई रहस्य बताने से पहले दोबार विचार कीजिए। जो लोग आपके चारों ओर रहते हैं उनके नाम याद रखिए।

73 निजी गोपनीयता का आदर कीजिए, किसी के कमरे मे जाने से पहले दरवाजा खटखटाइये आज्ञा लेकर प्रवेश कीजिए।

74 आप असहमत हो या सहमत जब लोग बोल रहें हों, तो उनके बीच मे टोकने की प्रवृत्ति को रोकिए, चाहे वह चीज आप पहले से जानते हों या नहीं। ध्यान से और पूरी तरह सुनिये अपनी बारी आने पर ही बोलिये। एवं क्रोध किये विना असहमत होना सीखिए।

75 समय की पाबन्दी कीजिए बैठकों को निश्चित समय पर कीजिए।

76 जब तक पूँछा न जाए, लोगो को विना माँगे सलाह न दीजिए, अपने वचनों का पालन कीजिए।

77 काम या व्यापार की बातें सड़क पर न कीजिए। प्रशंसा सबके सामने कीजिए, आलोचना

एकान्त में।

78 ऐसे समय भी प्रसन्नता दिखाना सीखिए जब कि आप वैसा अनुभव नहीं कर रहे हैं।

79 कौन गलत है या सही है इसकी चिन्ता मत कीजिए, जबकि क्या सही है इसकी चिन्ता ज्यादा कीजिए।

80 किसी से पहले कभी न कहिए वह थका हुआ उदासीन या बीमार दिखाई दे रहा है।

81 किसी के द्वारा दी गई सहायता के लिए उनके प्रति आभार तथा कृतज्ञता प्रकट कीजिए।

82 काम पर समय से आइये और छुट्टी से पहले मत जाइये।

83 आपने जो वस्तु जिस परिस्थिति में ली है उसे उसी स्थिति में लौटाइये।

84 कुछ समय केवल अपने परिवार के लिए सुरक्षित रखिए और उन्हें अपने शब्दों तथा कार्यों से यह जताइये, कि आप उन्हें प्यार करते हैं और वे आपके लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

85 जब निंदा करने का अवसर आये तो अपनी जुबान बन्द रखिए, दूसरों को सदैव गलत मत समझिए, निर्णय लेने से पहले दोनों पक्षों को सुन लीजिये, ये छोटी-छोटी बातें समय पर बहुत प्रभाव डालती हैं।

86 सत्ता और शक्ति के पीछे भागें नहीं, उनको अपने आप आने दें, महानता सदैव अपने प्रयत्नों से प्राप्त की जाती है, यह किसी को उपहार में बहुत कम मिलती है। निषेध मेंआकर्षण होता ही है।

87 अपने मस्तिष्क में केवल ऐसे ही विचार रखने हैं जो आपको प्रसन्नता का अनुभव कराएँ, न कि आपको अवांछित कष्ट प्रदान करें।

दोहावली

88 **वह ही जीवित लोक में, जिसको नहीं कलङ्क। मृतकों में नर है वही, यश जिसका सकलङ्क।।**

89 **निन्दक जन पर अज्ञ यह, करता है बहु रोष। पर निज पर करता नहीं, रखकर भी बहु दोष।।**

90 **जो पदार्थ इस विश्व में, निश्चित उसका नाश। अतुल कीर्ति ही एक है, जिसका नहीं विनाश।।**

91 **ऋषियों का जो वेश धर, बनता कातर दास। सिंह खाल को ओढ़कर, चरता है वह घास।।**

92 **धर्मात्मा का रूप धर, जो नर करता पाप। झाड़ी भीतर व्याध सा, बैठा वह ले चाप(धनुष)।।**

93 **धूर्त नहीं है त्यागता, मन से कोई पाप। पर निष्ठुर रचता बड़ा, त्याग आडम्बर आप।।**

94 **शर(बाण) सीधा होता तथा, वक्र तमूरा आर्य। इससे आकृति छोड़कर, नर के देखो कार्य।।**

95 **जिस बुध ने त्यागे अहो, लोक निन्द सब काम। जटा जूट अथवा उसे, मुण्डन से क्या काम।।**

96 **हँसी जिसे भाती नहीं, करवानी निज नाम। विना विचारे वह नहीं, करता बुध कुछ काम।।**

97 **अपराजित शत्रु बुरा और अधूरा काम। शेष अग्नि सम वृद्धि पा बनते विपदा धाम।।**

98 **द्रव्य क्षेत्र साधन समय और स्वरूप विचार। करले पहले कार्य फिर करे विबुध विधि वार।।**

99 **श्रम इसमें कितना अधिक कितना लाभ अपूर्व। बाधा क्या-क्या आयेगी सोचे नर यह पूर्व।।**

★★★

''प्रतिष्ठा के लिये शिष्टाचार होना चाहिए''

1 **आँसू न बहाइये दुर्भाग्य पर-** चीटियाँ कभी आँसू नहीं बहातीं, बल्कि पुरुषार्थ करके सफलता प्राप्त करती हैं, तराजू के एक पलड़े पर अरबों चीटियां दूसरी ओर मनुष्य, अर्थात् मनुष्य में अरबों चीटियों से ज्यादा बल है।

2 आप जो भी देते हैं, वह कई गुना होकर आपके पास वापस आता है, सलाह दें या भावना दें, यदि वापस कभी नहीं भी मिलते हैं तो आत्म सन्तोष का परम सुख दायक उपहार आप प्राप्त करते हैं।

3 **लक्ष्यसाध्य-** अर्जुन की तरह लक्ष्य के अलावा और कुछ नहीं दिखना चाहिए।

4 **आचरणीय सूत्र-** 1.प्रत्येक शब्द को हृदयङ्गम करें, 2.वाञ्छित विषय में गहन रुचि विकसित करें, 3.जो भी पढ़ें उसका मन से हानि-लाभ का विचार अवश्य करें, 4.पाठ को ध्यान से सुनें, 5.प्रत्येक संशय को कागज पर लिखें और पाठ पूरा होने पर उसका स्पष्टीकरण प्राप्त करें, 6.सामान्य शब्दों का ही अधिकाधिक प्रयोग करें, तथा शब्दों को ही अपना मार्गदर्शक बनाएं।

5 प्रशंसा का एक वाक्य व्यक्ति की जिन्दगी बदल देता है, कटाक्ष करने से हृदय से अपना स्थान मिट जाता है।

6 दिगम्बर मुनि होने के लिए केवल वस्त्र ही नहीं उतारना पड़ते वल्कि मन से वासनाओं को भी उतारना पड़ता है।

7 'मौन' शक्ति व आनन्द का अक्षय कोष है, एक घण्टे का मौन सात घण्टे की गहरी नींद के बराबर है, और एक घण्टा बोलने से सात कि.मी. चलने बराबर शक्ति खर्च होती है।

8 मन तो भिखारी का पात्र है जो कभी भरता ही नहीं है।

9 व्यक्ति चेहरे के रङ्ग को नहीं बदल सकता, पर जीवन जीने के ढंग को अवश्य बदल सकता है।

10 **काम-क्रोध-मद-लोभ की जो लों मन में खान।**
तो लों पण्डित मूर्खो भव्यो एक सामान।।

11 जिस देश में तीर्थ, प्रतिमाएँ और धार्मिक लोग न हों, धर्म की रक्षा करने वाले पुरुषों को उस

देश में नहीं जाना चाहिए।

12 वह कौन सी गति है जो सैकड़ों बार प्राप्त न हुई हो, वह कौन सा सुख है जिसे पहले अनेक बार न भोगा हो और वे कौन सी लक्ष्मियाँ हैं जो अनेक बार प्राप्त न हुई हों, हे मन ! फिर भी तुम्हारी इच्छायें बढ़ती जा रही हैं।

13 जो आशा के दास हैं वे समस्त संसार के दास हैं, इसके विपरीत आशा जिनकी दासी है समस्त संसार उनका दास है।

14 **राजा का नाश खोटी मन्त्रणा से,** मुनि का नाश परिग्रह से, कुल का नाश कुपुत्र से, लज्जा का नाश शराब से, स्नेह का नाश प्रवास से, समृद्धि का नाश अन्याय से, बालक का नाश लाड़-प्यार से, व्रतों का नाश अध्ययन नहीं करने से, ब्रह्मचर्य का नाश कुसङ्गति से, खेती का नाश देख-रेख न करने से, मैत्री का नाश स्नेह नहीं करने से, एवं धन का नाश आलस से हो जाता है।

15 ऐश्वर्य का आभूषण सज्जनता, ज्ञान का आभूषण शान्ति, धन का आभूषण पात्रदान, शक्ति का आभूषण क्षमा, शौर्य का आभूषण वचन संयम, अध्ययन का आभूषण विनय, तप का आभूषण क्रोध न करना एवं धर्म का आभूषण निश्छलता है।

16 जिसके पास निर्दोष विनय है, कल्पवृक्ष उसका सेवक है, चिन्तामणि रत्न उसके हाथ में है और यक्ष उसके पास रहता है।

17 विनय मुक्ति का कारण है, विनय लक्ष्मी का कारण है, विनय प्रीति का कारण है और विनय बुद्धि का भी कारण है, विनय के विना विजय नहीं होती है।

18 **मोक्ष को प्राप्त कराती है वह विनय है,** विनय से सब प्रकार के कल्याण नियम से प्राप्त होते हैं, 'विद्या ददाति विनयं' जब सामान्य विद्या विनय को देती है तो जिनवाणी के अध्ययन से तो विनय आना ही चाहिए, क्योंकि जिनवाणी में सद्गुणों का ही कथन है, मनुष्य पर्याय का सार जिन मुद्रा धारण करना है, जिनवाणी की शिक्षा सम्यक् विनय से समाधि आदि गुण प्राप्त होते हैं, विनयसम्पन्नता, विनयतप, मार्दव धर्मादि प्राप्त होते हैं।

19 **न्यायाधीश के चार गुण-** शिष्टता पूर्वक सुनना, बुद्धिमत्ता पूर्ण उत्तर देना, गम्भीर होकर विचार करना, और निष्पक्ष न्याय करना।

20 फल युक्त वृक्ष और कुलीन मनुष्य नम्र होते हैं परन्तु सूखी लकड़ी और मूर्ख कभी नम्र नहीं होते हैं।

21 शिक्षाहीन साधु का बहुरूपिया के समान वेष धारण करना आत्म विडम्बना है और विनयहीन मनुष्य की शिक्षा भी दुर्जन की मित्रता के समान खोटा फल देने वाली है।

22 जितेन्द्रियपना विनय का कारण है, विनय से गुणों की वृद्धि होती है, अधिक गुणवान पुरुष में जनसमूह अनुरक्त होता है और जनसमूह के अनुराग से सम्पदाएँ प्राप्त होती हैं।

23 जिस प्रकार सूर्य की तीक्ष्ण किरणें कमल की पाँखुड़ी को विकसित कर देती हैं, उसी प्रकार गुरु के वचन भव्यों के मन रूपी पाँखुड़ी को विकसित कर देते हैं।

24 विद्या के साथ मर जाना अच्छा है, परन्तु अयोग्य को विद्या नहीं देनी चाहिए, विद्या लेकर मूर्ख शिष्य शत्रु बन जाता है।

25 दान, दया, इन्द्रिय दमन, देव दर्शन, देवपूजन, इन पाँच दकारों से दुर्गति नहीं होती है।

26 गाय, भैंस तथा दासी-दास आदि जीवधन, कोई धन नहीं है, सुवर्ण आधा धन है, अनाज महाधन है, **''विद्या, ब्रह्मचर्य और मित्र''** ये तीन धन से भी बढ़कर हैं।

27 विदेशों में विद्या धन है, सङ्कटों में बुद्धि धन है, परलोक में धर्म धन है और **''ब्रह्मचर्य सर्वत्र धन है।''**

28 समस्त शास्त्रों में पाँच प्राणी जीवित रहते हुए भी मृत कहे जाते हैं, 1.दरिद्र, 2.बीमार, 3.मूर्ख, 4.परदेश में गमन करने वाला और 5.नित्य नौकरी करने वाला।

29 विद्वत्ता युवकों को संयमी बना देती है, विद्वत्ता बुढ़ापे का आराम है, विद्वत्ता निर्धनता में धन का काम देती है एवं विद्वत्ता धनवानों को आभूषण का काम देती है।

30 घूँस कानून को मोल ले लेती है, दान से कोई कङ्गाल नहीं बनता, दया वह भाषा है जिसे बहरे भी सुन सकते हैं और गूँगे भी समझ सकते हैं।

31 छोटी-छोटी बातों पर बिगड़ने से केवल झूठे अहङ्कार को सन्तोष मिलता है और गलत धारणा रिश्तों को समाप्त कर देती है।

32 लगातार शिकायत और नौक झोंक से बचें, विना पूँछे ज्यादा स्पष्टीकरण और सफाई न दें।

33 अपने प्रति कठोर बनें एवं दूसरों के दोषों तथा कमियों के प्रति उदार बनें।

34 कठोरता, कटुता, कर्कस वाणी और घटिया व्यवहार ये सब प्रभावी व्यक्तित्त्व के दुश्मन हैं।

35 नम्रता, मिष्ठवाणी और मधुर व्यवहार आपके श्रेष्ठ मित्र हैं।

36 दूसरों से गलती होने पर माफ कर देना, अपने से गलती हो तो माफी माँग लेना ऊँचा उठने का सरल मन्त्र है।

37 पुरुषार्थ, साहस, धैर्य, आत्मबल, बुद्धि और शारीरिक बल, ये छह जिसके पास हैं देव भी उसके आज्ञाकारी होते हैं।

38 काम, अर्थ व यश के विषय में किया गया पुरुषार्थ निष्फल हो सकता है, परन्तु **''धर्म कार्य का संकल्प निष्फल नहीं होता है।''**

39 उद्योग, कलह, खुजली, जुआ, मद्यपान, परस्त्री, आहार, मैथुन और निद्रा, इनका जैसे-जैसे सेवन किया जाता है वैसे-वैसे ये बढ़ते जाते हैं।

40 सहयोग लेकर या पूँछकर भटकने से बचो और समय बर्बाद करने से बचें, एक बार भटकने की अपेक्षा दो बार पूँछना अच्छा है।

41 जैसे मकड़ी जाल तोड़कर बाहर नहीं जाती है, उसी में मर जाती है, उसी प्रकार प्रायः गृहस्थों का हाल होता है।

42 उधार लिये वाहन के पेट्रोल की टङ्की फुल करके दीजिये।

43 थके हों, उदासीन हों, बीमार हों तो हर किसी को न बताएं।

44 चेहरे से ज्यादा चरित्र को मूल्य दीजिए, व्यक्ति सुन्दर नहीं होता है, सफलता सुन्दर बना देती है।

45 विचारों के प्रति सावधान रहिये, विचार ही वाणी, व्यवहार व चरित्र बनाते हैं।

46 समस्या घर में नहीं है, मन में है, जो भी निराशा और चिन्ता पैदा होती है, जैसे ही मन की दशा सुधरती है, तत्काल समाधान हो जाता है।

47 अपनी प्रशंसा, पर की निन्दा, महापुरुषों से ईर्ष्या और अप्रासङ्गिक बहुत बोलना, ये कार्य अपने आप को नीचे गिरा देते हैं।

48 जो मनुष्य प्रायश्चित्त, आयुर्वेद, ज्योतिष और धर्म की बात शास्त्र पढ़े विना कहता है, उसे ब्रह्मघाती कहते हैं।

49 जो व्याकरण शास्त्र का अध्ययन किये विना पदार्थों का विवेचन करना चाहता है, वह चन्द्रमा का चुम्बन करना चाहता है, सूर्य को ग्रहण करना चाहता है, चन्द्र और ताराओं से सहित आकाश को आच्छादित करना चाहता है और भुजाओं से अपार गहरे समुद्र को तैरना चाहता है।

50 अच्छे गुणों की तारीफ सभी करते हैं, पर पालन कोई-कोई करता है, जैसे फूलों का सार इत्र है, वैसे ही जीवन का सार चरित्र है।

51 विचारों को व्यवस्थित कीजिए- प्रत्येक बात या घटना को सकारात्मक रूप से देखें चाहे वह कितनी ही दुःख पूर्ण क्यों न हो, नकारात्मक विचार मन को कमजोर बनाते हैं।

52 भावनात्मक लगाव को कम कीजिए, जीवन को सरलता से लीजिए, हमें यह तथ्य समझना चाहिए कि कोई भी समस्या हमेशा रहने वाली नहीं है।

53 **समस्याओं और कठिनाइयों का स्वागत करें-** आप जीवन की प्रत्येक समस्या से शिक्षा और लाभ ले सकते हैं, और उससे अपने व्यक्तित्त्व का विकास कर सकते हैं। प्रत्येक सङ्कट और कठिनाई में अपने आप से पूछिये कि यह समस्या मुझे क्या सन्देश देती है तथा इससे मैं क्या लाभ उठा सकता हूँ ? समस्या का सामना करने के बाद आपको पहले से अधिक बुद्धिमान और परिपक्व बनकर निकलना चाहिए। जीवन में जो भी बात आपके साथ घटित होती है वह अच्छाई के लिए होती है।

54 **हर बात का कोई न कोई कारण अवश्य होता है,** अचानक कुछ नहीं होता। कर्मों के बन्धन से मुक्त होने के लिए सफलता-असफलता, लाभ-अलाभ, निन्दा-प्रशंसा में अपने मन को सन्तुलित रखिए। कोई घटना या प्रसङ्ग इतना महत्त्वपूर्ण नहीं होता, जितना कि उसके प्रति आपकी मानसिक प्रतिक्रिया या दृष्टिकोण होता है। संसार न अच्छा है न बुरा, यह इस बात पर निर्भर करता है कि आप इसे कैंसे देखते हैं यह आपकी मानसिक स्थिति पर निर्भर करता है। जो आपके अन्दर है वही बाहर भी दिखाई देता है। प्रयोगों से घबराना नहीं चाहिए क्योंकि विकास उन्हीं से होता है।

55 परोपकार करना चाहिए परन्तु अध्यक्ष नहीं बनना चाहिए, हर कार्य की शुरुआत मुस्कान से कीजिए।

56 किसी को उसकी गलतियाँ न बतायें वरना वह आपकी गलतियाँ ढूँढ़ने लगेगा।

57 आँख की पुतली से यह शिक्षा मिलती है कि छोटों से बड़ा काम निकलता है इसलिए छोटों का ध्यान रखना चाहिए।

58 जीवन में ऐसे मित्र जरूर रखिए जिससे कि दर्पण देखने की जरूरत न पड़े अर्थात् मित्र गलतियाँ बताते रहें।

59 ज्ञानी मित्र के सदृश जीवन में कोई वरदान नहीं है।

60 मिलने पर मित्र का आदर करो, पीठ पीछे उसकी प्रशंसा करो, तथा आवश्यकता के समय मदद करो।

61 यदि दृढ़ मित्रता चाहते हो तो बहस करना, उधार लेना-देना, मित्र की स्त्री से बात करना छोड़ दो।

62 अपनी कला दूसरों को सिखाइए, आपकी सफलता विश्वव्यापी हो जाएगी।

63 धन को इतना मूल्य मत दीजिए कि आप अपने चरित्र और स्वभाव को गिरवी रख बैठें।

64 आशा को सहेली और उत्साह को मित्र बनाइए आप मञ्जिल पा जायेंगें।

65 उदारता का पहला अधिकारी अपना भाई है बाद में पडोसी या पात्र दान है।

66 दूसरों को सम्मान देना और झगड़े से दूर रहना ये आत्म रक्षा के अचूक मन्त्र हैं।

67 हर समय इतने व्यस्त रहें कि चिन्ता करने का समय ही न मिले, समय का धन की तरह सदुपयोग करें।

68 क्रोध यमराज है, तृष्णा नरक की वैतरणी नदी की तरह दुखदाई है, विद्या कामधेनु गाय है और सन्तोष इन्द्र का नन्दनवन है।

69 अपने कर्मचारी से भी इतने धैर्य और शान्ति से बात करें,कि वह अपने कर्तव्य के लिये सहज प्रेरित हो जाय।

70 मन में दूषित विचार उठते ही दिशा बदल दें अन्यथा भीतर की दिव्यता और पवित्रता खण्डित हो जाएगी।

71 गिरते हुये को गिराने के लिये टक्कर नहीं रोकने के लिए सहारा दें, आप प्रेम दें दूसरे आपसे नफरत करना छोड़ देंगे।

72 मनोरञ्जन का उपयोग नमक की तरह थोडा करें मनोरञ्जन को भोजन न बनायें।

73 ओंठो से हँसना अच्छी बात है, आँखों से हँसना उससे भी अच्छी बात है पर दाँतों से हँसना अधम बात है।

74 जो समय को बर्बाद करता है समय उसे बर्बाद कर देता है, अतः समय का सदुपयोग ही आत्मोत्थान का उपाय है।

75 जीवन की सर्वोच्च शैली का सूत्र-'न्यूनतम लेना, अधिकतम देना और श्रेष्ठतमजीना' है।

76 जो हम सोचते हैं वह कभी-कभी होता है पर जो नहीं सोचते हैं वह अक्सर होता है।

77 प्रतिभा से धन कमाया जाता है धन से प्रतिभा नहीं, आत्मविश्वास खोना ही सबसे बड़ी हानि है।

78 किसी काम में सफलता तभी मिलती है जब कार्य करने में आनन्द आये।

79 धृतराष्ट्र ने मुनिराज से पूँछा मेरी आँखों के सामने मेरे सौ पुत्र मारे गये क्या कारण है ? मुनिराज ने कहा कि तीन भव पूर्व तुमने सर्पिणी के सौ बच्चे मारे थे, यह उसका फल है।

80 दुनिया में जितने धर्म हैं सभी ने जीना सिखाया, लेकिन जैन धर्म की विशेषता है कि उसने जीने के साथ मरना भी सिखाया है। राम-कृष्ण जीवन सुधारते हैं, तो महावीर मृत्यु भी सुधारते हैं, मृत्यु भी आदमी की परीक्षा है।घर में कैसे जीना राम से सीखिए, कैरियर कैसे बनाना यह कृष्ण

से सीखिए और मरण को सुमरण कैसे बनाना है यह महावीर से सीखिए। कृष्ण शुरूआत, राम बीच का पड़ाव तो महावीर मंजिल हैं। बचपन कृष्ण की तरह नटखट, जवानी राम की तरह मर्यादित और बुढ़ापा महावीर की तरह वैराग्यवान होना चाहिए।

81 कर्म रुपी केसिट अन्दर है, उचित-अनुचित व्यवहार बाहर दिखाई देता है।

82 जीवन में चरित्र, हृदय में पवित्रता, वाणी में मधुरता, व्यवहार में कुशलता, प्राणियों में मित्रता और स्वभाव में नम्रता ये शुभ भावनाएं ही शुद्धाचरण हैं।

83 **वर्तमान के षडावश्यक-** लोग देवपूजा नहीं डॉक्टर पूजा करते हैं, मन्दिर परिक्रमा नहीं अस्पताल की परिक्रमा करते हैं, गुरु उपासना नहीं टी.वी.की उपासना करते हैं, स्वाध्याय के नाम पर समाचार पत्र पलटाते हैं, संयम जेल या अस्पताल में करते हैं, तप पैसा कमाने के लिए मेले में या बाज़ार में धूप में बैठकर करते हैं, दान के नाम पर टेक्स या घूस देते हैं।

84 मन्दिर धन से बनता है पर पूजा मन से होती है, मन की सादगी और शान्ति यौवन को स्थाई बनाती है।

85 हमारी विचार धारा ही हमें बूढ़ा या जवान बनाती है, चलता हुआ आदमी और दौड़ता हुआ घोड़ा कभी बूढ़ा नहीं होता है।

86 जीवन में बहादुरी की जरुरत कभी-कभी पड़ती है किन्तु समझदारी की जरूरत हर समय पड़ती है।

87 ज्ञानी को बोलना और अज्ञानी को मौन अखरता है, वाणी के मौन से मन का मौन और भी श्रेष्ठ है।

88 भरतचक्रवर्ती की अपेक्षा राम के भाई भरत ज्यादा अच्छे हैं, क्योंकि उनको सिंहासन मिला पर बैरागी रहे, भरतचक्रवर्ती ने साठ हजार वर्ष दिग्विजय में ही गंवा दिये।

89 भरतचक्रवर्ती ने जैसे राजा श्रेयाँस को आहार दान के समय, जयकुमार को स्वयंवर के समय प्रोत्साहित किया वैसे ही बाहुबली को प्रोत्साहित करते तो शायद युद्ध नहीं होता।

90 **पाप समय निर्बल बनों, धर्म समय बलवान।**
वैभव समय विनम्र अति, दु:ख में धैर्य महान।।

91 **छिलका और चावल-** 'जिस शरीर में धर्म के साधक जीव का निवास है, उस शरीर की रक्षा बड़े यत्न से करना चाहिए' इस प्रकार की शिक्षा जिनागम का ऊपरी छिलका है, और 'देह त्यागने योग्य ही है' यह शिक्षा जिनागम का चावल है, असली बाह्य परिग्रह तो शरीर ही है, उससे भी जो ममत्व नहीं करता वही परम निर्ग्रन्थ है और इन्द्रियों की विषयाभिलाषा अन्तरङ्ग

परिग्रह है।

92 संसार के सब काम ध्यान से करते हैं, जैसे नोट गिनना, गाड़ी चलाना, भोजन करना, टी.वी. देखना आदि सब ध्यान से करते हैं पर माला, पूजा, ध्यान, प्रवचन विना ध्यान के करते हैं।

93 इतने बड़े बनो कि चिन्ता न सताए व इतने उदार बनो कि गुस्सा न आये, दस प्रतिशत लापरवाही से नब्बे प्रतिशत चिन्ताएँ बढ़ जाती हैं।

94 इतनी थकान काम करने की मेहनत से नहीं होती जितनी टाल-मटोली की आदत से होती है। हर चीज आसान होने से पहले मुश्किल लगती है।

95 यदि पुरुष संसार लक्ष्मी में आसक्त हो जाता है, तो मुक्ति लक्ष्मी उससे दूर हो जाती है और यदि सांसारिक लक्ष्मी की उपेक्षा करता है तो मुक्ति लक्ष्मी निकट आती है।

96 रुकावटों से उबरने का एक ही हल है, हिम्मत न हारना। जैसे शान्त समुद्र से नाविक कभी कुशल नहीं बनता है, जब उसमें लहरें उठती हैं तब नाविक कुशलता प्राप्त करता है।

97 जब तक योग्य समय न प्राप्त हो, तब तक अपना बुरा करने वाले के साथ भी सद्व्यवहार करना चाहिए।

98 कषाय का कण मात्र भी यदि जीवित है तो आत्मा के अनन्त तेज 'जो कि स्वाधीन है' उसको नष्ट कर देता है।

99 आचरण के विकास का मूल 'भाव शुद्धि' है, पहले चलना सीखो तब दौड़ना आयेगा।

100 सत् और असत् पुरुषों में बहुत बोलना सत्यव्रत है, सत् और असत् पुरुषों में परिमित बोलना भाषा समिति है, सज्जनों में ही अधिक या कम बोलना सत्य धर्म है इस प्रकार इन तीनों में अन्तर है।

★★★

''जुबान पर ताला नहीं लगाम चाहिए''

1 जल्दबाजी का व्यसन हमें विचार करने का मौका ही नहीं देता, विना विचारे किया गया कार्य सफल नहीं होता है।

2 व्यक्ति को दूसरों से नहीं अपनों से खतरा होता है, गाँधीजी को गोडसे ने मारा, सीता को राम ने वन में छोड़ा, रावण की मौत का कारण विभीषण हुआ, अञ्जना को घर से सास ने निकाला और विपत्ति में पिता ने छाया तक नहीं दी, पाण्डवों को मारने का प्रयास कौरवों ने किया, आदिनाथ को मारीच ने बदनाम किया, भरत ने बाहुबली से युद्ध किया।

3 नम्रता सबके साथ रखो, मगर नजदीकी बहुत कम लोगों के साथ और उन्हे भी भरोसा करने से पहले परख लो।

4 जरूरत से ज्यादा बोलने का मतलब यह नहीं होता कि आप बातचीत में कुशल हैं।

5 गलतियाँ हमें सीखने का अवसर देती हैं, उनसे सीखना बहुत जरूरी है, गलती को दुहराना सबसे बड़ी गलती है।

6 अपनी गलती के लिए न तो किसी पर दोष लगायें न बहाने बनायें।

7 अपनी गलती महसूस करें तो मांफी मांगे अपनी सफाई पेश न करें।

8 गलती स्वीकार करने से दूसरा व्यक्ति विनम्र हो जाता है।

9 बहसबाजी अहङ्कार की लड़ाई से ज्यादा कुछ भी नहीं है, असहमत हुये विना असहमति जताना कला है।

10 आप खुश होगें तो लोग आपके पास आयेंगे, आप दुखी होंगे तो लोगआँख चुरायेंगे, लोग आपकी खुशियां बाँटना चाहते हैं, आपका दुःख नहीं बाँटना चाहते हैं, जिन्दगी के कड़वे घूँट आपको अकेले ही पीना पड़ेंगे।

11 दयालुता, आपसी समझ और आत्मत्याग से रिश्ते बनते हैं, ईर्ष्या, स्वार्थ, अहङ्कार और रूखे व्यवहार से टूटते हैं।

12 लोकनिन्दा का भय न हो तो मनुष्य को राक्षस बनते देर नहीं लगती है।

13 कार्य के प्रारम्भ के पहले समय, स्थान और परिणाम के विषय में विचार जरूर कर लेना चाहिए।

14 यदि एक बिन्दु सिन्धु से पृथक् हो जाती है तो सूर्य उसे सुखा देता है, जो समाज से, धर्म से कट कर रहेगा, वह सूख जायेगा।

15 ब्रह्म 108 का प्रतीक है- 'ब' वर्ण 23, 'र' वर्ण 27, 'ह' वर्ण 33, 'म' वर्ण 25 = 108।

16 उदार बनो उड़ाऊ न बनो अर्थात् बर्बाद करने वाले नहीं, 'आय के अनुसार होगा व्यय, तो कभी न होगा क्षय'।

17 धन, जमीन का बटवारा हो सकता है कर्मों का नहीं, पुण्य छिपाकर करो, पाप छपा कर करो।

18 जैसे थोड़े से जामन से दूध फट जाता है, वैसे थोड़े से क्रोध से मोक्ष मार्ग बिगड़ जाता है।

19 कर्मों की विचित्रता- कोई तो विशाल भवनों में रहता है, किसी को वृक्ष की छाया भी नहीं मिलती है, कोई रेशम और रत्नों में मढ़ा है, किसी को फटा वस्त्र भी नहीं मिलता है।

20 जीवन में सुखी होने के लिये दूसरों से तुलना करना और दूसरों से अपेक्षा रखना छोड़ें।

21 अपेक्षा हर सुख की मिठास को फीका कर देती है।

22 छलाङ्ग लगाने के पहले देख भाल कर लेना चाहिये।

23 विना देखे किसी वस्तु का प्रयोग न करें औरविनापढ़े कहीं हस्ताक्षर न करें।

24 उदारता का हर कार्य स्वर्ग की ओर एक कदम रखता है।

25 शेर को भी मक्खियों से रक्षा तो करना ही पड़ती है।

26 जुबान को ताले की नहीं, लगाम की जरूरत पड़ती है।

27 कर्ज,फर्ज, मर्ज(रोग)कभी छोटे नहीं होते हैं।

28 एक मिनट देर से पँहुचने से एक घण्टा पहले पहुँचना अच्छा है।

29 **जिद खराब होती है-** सीता ने सोने का मृग पाने की जिद की, जिससे राम का वियोग एवं भयङ्कर युद्ध हुआ। रावण ने सीता को पाने का जिद की तो प्राणों की आहूति कर दी, पर सीता को वापस नहीं कर सका। पवनञ्जय ने अञ्जना को देखने की जिद की जिससे बाइस वर्ष द्वेष रखना पड़ा।

30 'राम नाम सत्य है' मुर्दे को नहीं, डोली में बैठने वाले दूल्हे को सुना देना तो उसका जीवन बर्वाद होने से बच सकता है।

31 जिस विष का प्रभाव मन्द हो गया है उस विष की तरह थोड़े भी विकार के कारण को अपनाने से कल्याण नहीं होता है।

32 जो साधर्मी पर आपत्ति आने पर भी सोता रहता है, कुछ प्रतिकार नहीं करता है, वह समस्त सम्पत्ति से वञ्चित रहता है, क्योंकि अर्हन्तदेव ने वैय्यावृत्य को बाह्य और अभ्यन्तर तपों का हृदय कहा है, अर्थात् शरीर में जो स्थिति हृदय की है वही स्थिति तपों में वैयावृत्य की है।

33 **स्वाध्याय के लाभ-** तर्कणा, ब्रह्मचर्य, बुद्धि का उत्कर्ष, परमागम की परम्परा पुष्ट होती है, मन, इन्द्रियाँ और आहारादि संज्ञाओं का निरोध होता है, क्रोधादि कषायों का भेदन होता है, दिनों-दिन तप में वृद्धि होती है, संवेग भाव बढ़ता है, परिणाम प्रशस्त होते हैं, समस्त दोष दूर होते हैं, अन्य वादियों का भय नहीं रहता, जिनशासन की प्रभावना करने में समर्थ होता है।

34 जैसे न चाहते हुए भी संसार के जीवों को गरीबी आदि का कष्ट भोगना पड़ता है, वैसे ही कर्म से पीड़ित ज्ञानी को भी न चाहते हुए भी भोग भोगना पड़ता है, अतः सम्यग्दृष्टि जीव भोगों का सेवन करते हुए भी उनका सेवन नहीं करता है, क्योंकि विना इच्छा के किया गया कर्म विरागी

के कर्म बन्ध का कारण नहीं होता है, जैसे दूसरे के विवाह आदि उत्सव में जबर्जस्ती नाचने के लिए पकड़ लिया गया व्यक्ति नाचते हुए भी नहीं नाचता है, वैसे ही ज्ञानी विषयों को भोगता हुआ भी नहीं भोगता है, क्योंकि वह विषय भोग को अच्छा नहीं मानता है।

35 राग-द्वेष से किये गये कार्य और त्याग से जीव को बन्ध होता है और तत्त्वज्ञान पूर्वक किये गये कार्य व त्याग से मोक्ष होता है।

36 भरत चक्रवर्ती जैसा पुण्यानुबन्धी (सातिशय) पुण्य मोक्षलक्ष्मी की ओर ले जाता है। अतः बन्ध होने पर भी सहन करने योग्य है।

37 राग-द्वेष के त्याग को साम्यभाव कहते हैं। अतः मैं जीवन में राग और मरण में द्वेष का त्याग करता हूँ, लाभ में राग अलाभ में द्वेष का त्याग, इष्ट संयोग में राग और इष्ट वियोग में द्वेष का त्याग, उपकारक मित्र में राग और अपकारक शत्रु में द्वेष का त्याग, सुख में राग दुःख में द्वेष का त्याग करता हूँ, क्योंकि साम्य भाव समस्त सदाचार का शिरोमणि है।

38 जो ऐश्वर्य माँगता है वह ईश्वर को नहीं माँगता है।

39 मित्र पर अन्ध श्रद्धा व शत्रु पर अन्ध अश्रद्धा नहीं होनी चाहिये।

40 चोरी से नहीं सेवा वृत्ति से विद्या मिलती है।

41 मधुर वचन बोलने वालों के पास दरिद्रता कभी नहीं आती है।

42 विना परीक्षाके पुरस्कार नहीं मिलता है।

43 काम वासना से विवेक नष्ट हो जाता है।

44 राक्षसी आचरण से आध्यात्मिक साधना नहीं होती है, उसके लिये संयम चाहिये।

45 प्रजा का पालन करना नहीं प्रतिज्ञा का पालन करना बड़ा धर्म है।

46 जिस व्यक्ति से किसी को प्रेम न मिला हो, उसके लिये कौन प्राण देगा?

47 गुरू का शासन कठोर होता है, किन्तु गुरू स्वयं कठोर नहीं होते हैं।

48 नमक व मीठा निकाल दिया जाय तो शेष स्वाद अपने आप छूट जाते हैं।

49 **किससे क्या खराब**-अनुचित आहार से पेट खराब होता है, आलस्य से दिन खराब होता है, कर्कशा स्त्री से रात खराब होती है, मूर्ख पुत्र से कुल खराब होता है, झूठ बोलने से बात खराब होती है, कटु भाषण से सम्बन्ध खराब होते हैं, लोलुपता से नियत खराब होती है, अनियमितता से स्वास्थ्य खराब होता है, जरुरत से ज्यादा धन हो तो बुद्धि खराब होती है और अपने कर्तव्यों का पालन न किया जाय तो पूरा जीवन खराब होता हैं। कर्तव्य ही धर्म है, कर्त्तव्य ही पूजा है,

कर्तव्य से ही उज्ज्वल भविष्य बनता हैं।

50 जीवन एक युद्धक्षेत्र है, हम सब योद्धा हैं, यहाँ सभी को जीवन से लड़ना होता है। जीवन में मुसीबतें भी आती हैं, उनसे लड़ना सीखो मुसीबतों के सामने झुकने और घुटने टेकने से काम नहीं चलेगा। जीवन में आयी चुनौतियां भी एक चुनाव हैं, चुनाव का सामना तो करना ही होगा। हालांकि यह पैराशूट लेकर विमान से कूदने जैसा भारी काम है। तुम्हे इस निराशा के चक्र से बाहर निकलना होगा, कि 'मैं कुछ नहीं कर सकता' अपने साहस को मजबूत बनाइये और चलना शुरू कीजिए। सफलता आपका इन्तजार कर रही है, ईश्वर यद्यपि आपके साथ हर पल है, लेकिन पहला कदम आपको ही उठाना होगा।

51 शाम को पश्चिम में सूर्यास्त होते देखिये, और फिर सोचिए सूर्य ने पश्चिम का अनुकरण किया तो डूब गया, हम भी पाश्चात् संस्कृति का अनुकरण करेगें तो संसार समुद्र में डूब जायेंगे।

52 शरीर कमजोर हो और मन मजबूत हो तो काम चल जायेगा, पर मन कमजोर हो शरीर मजबूत हो तो काम नहीं चलेगा।

53 धर्म केवल ग्रन्थों, पन्थों और सन्तों के पास नहीं बल्कि हर एक के दिल से होना चाहिए। धर्म का सम्बन्ध दीवारों से नहीं दिल से होना चाहिए। लोगों को प्रभावित नहीं प्रकाशित करें। सूर्य दिन में प्रकाश करता है और चन्द्रमा रात में लेकिन सन्त ऐसे ज्योति पुरुष हैं जो दिन-रात दोंनो को प्रकाशित करते हैं,

54 कुछ लोग व्यवहार की वजह से दिल में उतर जाते हैं और कुछ लोग दिल से उतर जाते हैं।

55 धर्म बुढ़ापे की औषधि नहीं युवा होने का टॉनिक है, दो दिन ही जियें लेकिन सिर का ताज बनकर जियें या फिर महाराज बनकर जियें।

56 **जीवन एक युद्ध है,** जीवन में लड़ना पड़ता है चिकित्सक बीमारी से लड़ता है, वकील अन्याय से लड़ता है, शिक्षक अज्ञान से लड़ता है और मुनि कर्मों से लड़ते हैं। श्रावक को अपने क्रोध से लड़ना चाहिए, क्योंकि जीवन का असली शत्रु तो क्रोध ही है। लड़ना ही है तो शेर से लड़ो गधे से लड़ने में क्या फायदा, पड़ोसी से लड़ना यानि कि गधे से लड़ना है। जीवन का असली शेर तो क्रोध है इसे जीतना सच्ची विजय है।

57 सत्ता और सत्य यूँ ही सीधे-सीधे नहीं मिलते हैं, दोनों के लिए तप जरूरी है। सत्ता दूसरों को सता-सता कर मिलती है और सत्य स्वयं को तपा-तपा कर प्राप्त किया जाता है। सत्ता शाश्वत नहीं है, सत्ता का पत्ता कभी भी कट सकता है, लेकिन सत्य शाश्वत है, सत्ता और सत्य दोनों के

बीच युद्ध होता है, लेकिन महाभारत का उदाहरण साक्षी है कि युद्ध के अठारहवें दिन जीत सत्य की ही हुई थी।

58 जिस तरह बाल काले करने के लिए डाई लगाते हैं, उसी तरह काले मन को सफेद करने के लिए सत्सङ्ग की डाई लगाना चाहिए। बाल पुनः सफेद हो जाते हैं पर मन पुनः काला नहीं होता है।

59 टी.वी., फ्रिज, कूलर, ए.सी., पङ्खा आदि का रिमोट है तो मन का भी रिमोट होना चाहिए और केवल पुण्य का चैनल लगाकर रखना चाहिए।

60 ईश्वर पर भरोसा कीजिए पर ईश्वर के भरोसे मत बैठिये, क्योंकि ये विचार अच्छे सेहत मन्द को भी मानसिक तौर पर विकलाङ्ग बना देते हैं।

61 मोक्ष गिफ्ट या लिफ्ट में नही खुद में सिफ्ट होने पर मिलता है।

62 जन्मदिन होटल में दोस्तों को पार्टी देकर या पर्यटन स्थल की सैर करके, मोमबत्ती बुझाकर और केक काटकर नहीं, बल्कि किसी गरीब को पढ़ा लिखाकर योग्य बनाने से मनाना सार्थक होगा।

63 ईमानदारी रखने से और अच्छी चीज देने से व्यापार में कभी फैल नहीं होते हैं।

64 जन्म के समय ढाई किलो वजन होता है, चिता की राख भी ढाई किलो होती है, फिर ढाई दिन की उपलब्धि पर इतना अहङ्कार क्यों? त्याग में अपने से बड़े को देखिए और सजग होइये।

65 सज्जन गाय की तरह घास के बदले कई गुना देता है, दुर्जन सर्प की भान्ति दूध पीकर भी जहर उगलता है, फिर भी सज्जन अपना स्वभाव नहीं छोड़ते हैं।

66 स्थान बदलने से नहीं मनःस्थिति बदलने से परिस्थिति बदल जाती है।

67 जैसे नेत्रों में जरा सा कण जाने से वस्तु ठीक से नहीं दिखती है, उसी तरह मन में थोड़ी सी भी वासना रहने से आत्म दर्शन नहीं होता है।

68 दर्पण में चेहरा तभी दिखाई पड़ता है जब वह साफ और स्थिर हो, उसी प्रकार शुद्ध मन से भगवान के दर्शन होतेहैं।

69 कञ्जूस अन्धा होता है,क्योंकि उसे धन के सिवाय कुछ भी दिखाई नहीं देता हैं। फिजूल खर्ची भी अन्धा होता है, वह आज को देखता है कल की नहीं सोचता। रिझाने वाली नारी अन्धी होती है वह बुढ़ापे की झुर्रियां नहीं देखती। अज्ञानी भी अन्धा होता है क्योंकि उसे कुछ समझ में नहीं आता है।

70 अन्धा वह नहीं जिसकी आँखे फूटी हैं, अन्धा वह है जो अपने दोष छिपाता है।

71 अपनी विद्वत्ता पर अभिमान करना सबसे बड़ा अज्ञान है।

72 आलसी, बहुभोजी, क्रूर, जो देश-काल का ज्ञाता न हो, निन्दित भेषी हो उसे घर में स्थान नहीं देना चाहिए।

73 पहले दिन अतिथि कहलाता है दूसरे दिन बोझ लगता है तीसरे दिन काँटे जैसा चुभता है।

74 अन्याय को मिटाइये पर अपने को मिटाकर नहीं।

75 अविनय से पढ़ी विद्या और बेईमानी से कमाया धन अधिक समय नहीं टिकता है।

76 जो बात वाणी प्रकट नहीं कर पाती उस बात को आँखे आसानी से बोल देती हैं।

77 अश्रुपूर्ण प्रेम अत्यन्त लुभावना होता है, आँखो के आंसु अमूल्य वस्तु हैं।

78 प्रेम के, कृतज्ञता के, आनन्द के, दुःख के और पश्चात्ताप के आँसुओं से जीवन का बाग पनपता है।

79 सुन्दर आचरण सुन्दर शरीर से अच्छा है, आत्मप्रशंसा, छोटे पन का चिन्ह है।

80 शिल्पकार की हथौड़ी के प्रहार को सहे विना मूर्ति नहीं बनती, कठोर विपदाओं के विना उन्नति नहीं होती।

81 इतिहास पढ़ने से मनुष्य बुद्धिमान बनता है तथा महान व्यक्ति किसी का अपमान नहीं करता है।

82 एकता का किला बड़ा मजबूत होता है, इसके भीतर रहने वाला प्राणी दुःख नहीं भोगता है।

83 अनेक तिनकों से बनाई गयी रस्सी बड़े-बड़े हाथियों को बाँध लेती है।

84 प्रत्येक व्यक्ति को हाथ की पाँच अङ्गुलियों की तरह रहना चाहिए, कोई छोटी, कोई बड़ी होने पर भी कोई चीज सब इकट्ठी होकर उठाती हैं।

85 दुनियाँ में दो ही ताकतें हैं, कलम की और तलवार की, अन्त में तलवार कलम से हार जाती है।

86 पागल, प्रेमी और कवि इनकी कल्पनाएं एक सी होती है।

87 खूबसूरती मदिरा से भी बुरी है, क्योंकि मदिरा पीने वाले को मदोन्मत्त करती है, खूबसूरती स्वयं को और देखने वालों को मदोन्मत्त करती है।

88 जिस भवन में अतिथि के चरण नहीं पड़ते, वह भवन 'वन' बन जाता है, वहाँ सत्कार का लोप हो जाता है।

89 मस्तिष्क की शक्ति अभ्यास है आराम नहीं। धैर्य सारे आनन्द और शक्तियों का स्रोत है।

90 शत्रु रूप लोहा भले ही गरम हो जाय पर हथौड़ा ठण्डा रहकर ही काम दे सकता है।

91 पहले अपना निर्णय नहीं देना चाहिए, वस्तु निर्णय के तीन तत्त्व हैं अनुभव, ज्ञान और व्यक्त करने की क्षमता।

92 निर्लोभी व्यक्ति का सिर सदा ऊँचा रहता है, स्वभाव की नीचता वर्षों में भी मालूम नहीं होती है।

93 एक पाठशाला खोलना अर्थात् एक जेलखाना एवं एक अस्पताल बन्द करना है।

94 आजीविका का साधन शरीर और चारित्र निर्माण का साधन पाठशाला है।

95 प्रेम और खाँसी छुपाये नहीं छुपते, प्रेम आँखों से नहीं मन से देखता है।

96 बड़ा वही है जो अपने को सबसे छोटा मानता है, शूट-बूट और ठाट-बाट में बड़प्पन नहीं होता, जिसकी आत्मा पवित्र है वह बड़ा है। सच्ची बड़ाई उसी की है जिसकी शत्रु भी सराहना करते है।

97 जो बदला लेने की सोचता है वह अपने ही घाव हरा-भरा रखता है।

98 नयी चीज सीखने की जिसने आशा छोड़ दी है, वह बूढ़ा है, बुढ़ापा देखता है और सोचता है, जवानी देखती है और करने को तैयार होती है।

99 बुद्धिमान विवेक से, साधारण मनुष्य अनुभव से, आज्ञानी आवश्यकता से और पशु स्वभाव से सीखते हैं।

100 माया जब आती है तो बुद्धि चली जाती है, माया वेश्या है बुद्धि सती है, दोंनो की सङ्गति कैसे ?

★★★

''समुद्र ने नहीं-शराब ने लोगों को डुबोया''

1 गोरा रङ्ग कुछ दिन अच्छा लगता है पर अच्छा व्यवहार पूरे जीवन भर सुख और सुकून देता है।

2 उच्च आकाङ्क्षा वाले व्यक्ति को नीति का ज्ञान होना चाहिए।

3 मुस्कान देने वाला दरिद्र नहीं होता परन्तु पाने वाला माला-माल हो जाता है।

4 मुस्कान थके हुये का विश्राम है, प्रेम की भाषा है, गुलाब सुगन्ध से, स्त्री मुस्कान से वश में करती है।

5 मलिन वस्त्र वाले, गन्दे दाँत वाले, बहुत खाने वाले, कठोर बोलने वाले, सूर्योदय और सूर्यास्त होने के समय सोने वाले व्यक्ति को लक्ष्मी त्याग देती है।

6 जिस प्रकार जवान स्त्री बूढ़े पुरूष का आलिङ्गन नहीं करना चाहती उसी प्रकार लक्ष्मी भी आलसी, भाग्यवादी और साहस हीन व्यक्ति को नहीं चाहती है।

7 वक्त की धार बहुत तेज होती है, वक्त और सागर की लहरें किसी की प्रतीक्षा नहीं करती हैं।

8 विना बुद्धि का वक्ता, विना लगाम के घोड़े की तरह होता है।

9 लोभी को धन से, मानी को विनय से, मूर्ख को उसका मनोरथ पूरा करके, पण्डित को सच बोलकर, विनय से मित्र को, सम्मान से बाँधवों को, दान-मान से स्त्री व सेवकों को, तथा

चतुराई से सबको वश में करना चाहिये।

10 कुलीन कन्या कुरूप भी हो तो विवाह कर लो, सुन्दर होने पर भी असंस्कारित हो तो विवाह मत करो।

11 जल्दवाजी के विवाह में जीवन भर पश्चाताप करना पड़ता हैं।

12 समुद्र ने नहीं शराब ने अधिक लोगों को डुबाया है, जब शराब का प्रवेश होता है तो बुद्धि बाहर निकल जाती है।

13 संसार की सारी सेनायें मिलकर इतनी सम्पति नष्ट नहीं करतीं जितनी अकेली शराब नष्ट करती है।

14 शिक्षक मोमबत्ती की तरह स्वयं जलकर दूसरों को प्रकाशित करता है।

15 मछली मांस को ही देखती है, उसके नीचे छिपे काँटे को नहीं, वैसे ही यह जगत विषयों के बाह्य आकर्षण को ही देखता है, उससे होने वाले दु:ख को नहीं देखता है।

16 सत्य और तैल सदैव ऊपर रहते हैं, सत्य और गुलाब के चारों ओर काँटे होते हैं।

17 स्त्रियाँ, राजा और लतायें, जो भी साथ में होता है उसी से लिपट जाते हैं।

18 जो भोजन, निद्रा और व्यायाम चिन्ता रहित होकर करता है तथा सदा हँसमुख रहता है वह दीर्घायु होता है।

19 हँसी संक्रमण की बीमारी है, एक को हँसते हुए देखकर दूसरे को हँसी आ ही जाती है।

20 जब मैं स्वयं पर हँसता हूँ तो मेरा बोझ हल्का हो जाता है।

21 हास्य वह मिश्री है जो उपदेश की कड़वी कुनैन को भी इतना मीठा बना देती है कि बच्चों से लेकर बूढ़े तक उसे बड़ी रूचि से खा लेते है, हास्य पाचन क्रिया को ठीक करने की बहुत अच्छी दवा है।

22 अच्छा बनने के लिये अपना स्वभाव, संस्कार, आदतें, सिद्धान्त, आदर्श, बुद्धि, और भावनाओं का परीक्षण करें।

23 अच्छे व्यक्तित्व को प्राप्त करने के लिये मन लगाकर पढ़ो, विवेक शक्ति विकसित करो, अपने सिद्धान्तों को स्पष्ट करो, विचारों पर काबू रखो।

24 विचारों के अनुसार व्यवहार होता है, कसरत से शरीर बनता है, अभ्यास से मन विकसित होता है, दृढ़ मनोबल से व्यक्तित्व बनता है तथाआत्मविश्वास के विना मनुष्य लङ्गड़ा है।

25 वास्तविक दु:ख की अपेक्षा कल्पित दु:ख बड़ा होता है और देर तक चलता है, जैसे परीक्षा तीन

घण्टे में हो जाती है किन्तु चिन्ता साल भर होती है।

26 अन्धकार में रास्ता बदल ने वाले को और अशान्ति में निर्णय लेने वाले को मञ्जिल नहीं मिलती है।

27 आदर देना भी जीवन देने के समान है, आदर में बनावटीपना नहीं होना चाहिये।

28 भलाई करना एक व्यापार है, जिसका फल ब्याज सहित अवश्य मिलता है।

29 जो धर्म का विकास करता है, वह नर से नारायण बन जाता है, जो धर्म का विनाश करता है, वह नर से वानर बन जाता है।

30 जीभ का घाव जल्दी भरता है पर जीभ से किया घाव कभी नहीं भरता है।

31 स्वयं पर अनुशासन करो, समस्या आने पर समाधान की खोज करो, तनाव वाली स्थिति से दूर रहो।

32 प्रति दिन यदि थोड़ा भी धर्म, धन और श्रुत का सञ्चय किया जाये तो वह समुद्र से भी अधिक हो जायेगा।

33 शरीर को भोजन दो वेतन जैसा, आत्मा को भोजन दो चिन्तन जैसा, अधिक खाने से चर्बी बढ़ती है, बुद्धि नहीं।

34 मकान ममता का घर है और मन्दिर समता का घर है। साधर्मी में नख और मांस की तरह स्नेह होना चाहिये।

35 मनुष्यता, मुमुक्षुता, महापुरूष का सत्सङ्ग ये तीन बहुत दुर्लभ है। साधु सुलभ है पर साधुता दुर्लभ है।

36 भावुकता का भूत विना अनुभव के नहीं उतरता है।

37 व्रती की चिन्ता गुरुओं को भी होती है, जटायु जब व्रती बना तो उसकी रक्षा का भार ऋद्धिधारी मुनिराज ने सीता को सौंपा था।

38 अधिक बैठे रहने से, अधिक भोजन से, अधिक विषय सेवन से, मलमूत्र रोकने से, अधिक जागने से, अभक्ष्य भक्षण से रोगों की उत्पति होती है।

39 पुरूषार्थी वह है जो दुर्भाग्य की रेखाएँ मिटा दे।

40 चैसठ प्रहरी पीपल- बाजार में नहीं मिलता, पीपल को चैसठ पहर तक घोटते रहो, उसके एक-एक कण को कई बार घोटने के बाद चैसठ प्रहरी बनता है, उसका सेवन करने से हड्डी का बुखार निकल जाता है, इसी तरह एक-एक भावना को बार-बार घोटने पर संसार का रोग

समाप्त हो जाता है।

41 वात्सल्य से कठोर हृदय वाला व्यक्ति भी मोम की तरह कोमल हो जाता है।

42 'अर्ध रोग हरी निद्रा, सर्व रोग हरी क्षुधा' सोने से आधा रोग दूर होता है और भोजन करने से पूरा रोग दूर होता है।

43 जिसे संसार रैन बसेरा लगता है, उसे परिग्रह रखने की आवश्यकता नहीं होती है।

44 आसक्ति का राक्षस यदि नष्ट हो गया तो दुनियाँ तुम्हारी पूजा करेगी।

45 दान परिग्रह का प्रायश्चित्त है इसमें अभिमान करने की क्या बात है। मन भर चर्चा से कण भर आचरण श्रेष्ठ है।

46 जिनवाणी बही खाता नहीं, आचरण का शास्त्र है। जैसे ब्याज 24 घन्टे चलता है, वैसे ही कर्म बन्ध भी 24 घण्टे होता है।

47 सन्त और बालक वर्तमान में जीते हैं, बाकी सब भूत-भविष्य में जीते हैं इसलिये अध्यात्म से रीते हैं।

48 जीवन का ध्येय सत्य की उपासना होना चाहिये सत्ता की लालसा नहीं।

49 जैसे कमरे की सफाई दिन में तीन बार करते हैं, वैसे ही पश्चात्ताप से आत्मा की सफाई भी करना चाहिए।

50 आपसे त्याग नहीं बनता तो कोई बात नहीं, पर त्यागी की निन्दा तो मत करो।

51 कोई कितना भी मूर्ख क्यों न हो कोशिश करने वाले को बुद्धिमान बनते देर नहीं लगती।

52 चञ्चल मन से आठ घण्टे पढ़ने की अपेक्षा एकाग्रमन से दो घण्टे पढ़ना सार्थक है।

53 ज्यादा न बोलें, विना मांगे सलाह न दें, ज्यादा टोका-टाकी न करें, व्यङ्ग भरी भाषा न बोलें तो झगड़े से बच सकते हैं।

54 गुस्सा और तकरार से बिगड़ी बातें, प्रेम पूर्ण व्यवहार से सुधर जाती हैं, गुस्सा स्वर्ग को नरक बना देता है।

55 मरने के लिये चुटकी भर जहर काफी होता है और जीने के लिए स्वस्थ सन्तुलित आहार लेना जरूरी है।

56 चिन्ता जीवन की समस्या है, चिन्तन चिन्ता का समाधान है।

57 व्यक्ति को मैत्री भाव सबसे रखना चाहिए पर मित्र का चयन पत्नि की तरह सावधानी से करना चाहिए।

58 बुढ़ापे में खाली बैठकर भुनभुनाने की अपेक्षा उत्साह पूर्वक कुछ गुनगुनाते रहना अच्छा है।

59 बालों को काला करके बुढ़ापे को ढाका तो जा सकता है पर बुढ़ापे से बचा नहीं जा सकता है।

60 वृद्धों को भार समझने की अपेक्षा अपना भाग्य समझें, बूढ़ा वृक्ष फल दे या न दे पर सघन छाया तो देता ही है।

61 रावण की बीस आँखें थी पर दृष्टि एक पर खराब थी, आज के मानव की दो आँखे हैं पर दृष्टि हजार पर खराब हैं, हमारी दुर्गति तो रावण से भी ज्यादा होगी।

62 दुराचारी कितने भी ऊँचे वंश का क्यों न हो सदा अनादर ही पाता है।

63 बुढ़ापे में सबसे बड़ी पीड़ा अपने अङ्गो के शिथिल होने की नहीं बल्कि सम्बन्ध शिथिल होने की होती है।

64 स्पर्धा अपने विकास में होना चाहिये किसी के ह्रास में नहीं।

65 यदि शत्रु सता रहा हो तो भी विनम्रता मत छोड़ो, क्योंकि धनुष झुकता है तो बाण दूर तक जाता है।

66 रत्नों में हीरा, वृक्षों में चन्दन, पशुओं में गाय, और धर्म में अहिंसा सर्वश्रेष्ठ है।

67 चन्द्रमा रात में, सूर्य दिन में, पर साधु चैबीस घण्टे ज्ञान का प्रकाश प्रदान करते हैं।

68 संकल्प लेना गाड़ी चालु करने जैसा है, चालु करने के बाद एक्सीलेटर दबाने से स्पीड बढ़ती है, इसी तरह विशुद्धि बढ़ाना ऐक्सीलेटर बढ़ाने की तरह है।

69 जो शरीर सुख में आसक्त है, वह आत्मा को ठगता है।

70 दीवाल बनाते हैं तो ऊपर की ओर जाते हैं, तोड़ते हैं तो नीचे की ओर आते है, इसी प्रकार संयम लेते हैं तो ऊपर के गुणस्थान में जाते है, संयम तोड़ते हैं तो नीचे के गुणस्थान में आते हैं।

71 जिनवाणी इशारा है, गुरू सहारा है, धर्म कार्य में जो वाद-विवाद करता है वह बर्बाद हो जाता है।

72 सन्तोष स्वभाविक धन है, विलासता कृत्रिम दरिद्रता है।सफलता संयोग से नहीं समर्पण से मिलती है।

73 जहाँ आपका काम बोल रहा हो वहाँ आप न बोलें।

74 कुछ प्रश्नों के उत्तर मौन से दिये जा सकते हैं।

75 निर्णय एक बार, प्रयत्न बार-बार करना चाहिए।

76 विचारों की दरिद्रता हमें बेचारा बना देती है। अति खुशी के वक्त वायदा और अति गुस्से में कोई निर्णय न करें।

77 हम रोते हैं कि हमारे पास जूते नहीं हैं, जरा उनके बारे में सोचो जिसके पास पैर ही नहीं हैं।

78 जो चीज पाप के उदय में प्रतिकूल होती है वही चीज पुण्य के उदय में अनुकूल हो जाती है, जो हवा मोमबत्ती की कमजोर लौं को बुझा देती है, वही हवा जङ्गल की आग को विकराल बना देती है।

79 लड़कर प्राप्त करने से अधिक समर्पण से प्राप्त कर सकते हैं। दुविधा से बचोगे तो सुविधा में रहोगे।

80 व्यक्ति बोलकर जितना कष्ट पाता है उतना मौन रहकर नहीं। 'मूर्खों से बात न करें, समय बचेगा।

81 कम बोलने का गुण आ जाय तो व्यक्ति बहुत बड़ा साधक बन जाय।

82 सफलता के लिये लक्ष्य न बदलें, रास्ता बदल दें।

83 उड़ान ऊँची हो लेकिन जड़ें मजबूत होना चाहिए।

84 मञ्जिले उन चरणों को मिलती हैं जो थमते नहीं, बात उन्ही की बनती है जो मुश्किलों में रुकते नहीं।

85 गलत करने से बचना है तो गलत बोलने से भी बचें।

86 हम हीन नहीं होते, हीनता के शिकार होते हैं।

87 विद्या की प्राप्ति पुस्तक के अध्ययन से होती है किन्तु विवेक सत्सङ्गति से आता है।

88 सफलता यदि सरलता से मिल जायेगी तो उसका आनन्द ही समाप्त हो जायेगा।

89 पीछे वालों पर हँसो मत, आगे वालों से जलो मत।

90 कोई भी लक्ष्य बड़ा नहीं, जीता वही जो डरा नहीं।

91 यदि हाथ की लकीरों से भाग्य बनता है, तो जिनके हाथ नहीं हैं क्या उनका भाग्य नहीं होता है ?

92 फल पाने को चेहरा नहीं चाल बदलो।

93 सफलता पूँछने से नहीं जूझने से मिलती है।

94 सच्चे पुरूषार्थ में अच्छे फल शीघ्र ही लगते हैं।

★★★

''कष्ट सहें और कड़वीबात-सुने धीरज के साथ''

1 नींद, नशा और तेज रफ्तार दुघर्टना के कारण हैं।

2 बुद्धिमान की प्रशंसा उसकी अनुपस्थिति में करना चाहिए पर स्त्री की उसके सामने करना चाहिए।

3 यदि तुम आय से कम में निर्वाह कर सकते हो, तो सोना बनाने का पत्थर तुम्हारे पास है।

4 कार्य करते हुये भयभीत होना मूर्खता है और कार्य करते हुये सावधान रहना बुद्धिमत्ता है।

5 भारतीय लोग धन से अधिक धर्म को, भोग से अधिक योग को एवं संस्कारों का आधार सदाचार को महत्त्व देते हैं।

6 भीड़ में गाड़ी के ब्रेक पर पैर और हार्न पर हाथ रखकर धीरे-धीरे गाड़ी निकाल ली जाती है, उसी प्रकार संसार से निकलने के लिये पञ्चेन्द्रियों के विषयों पर ब्रेक और धर्म का हार्न बजाते हुए मञ्जिल प्राप्त करना चाहिए।

7 अपनी बेटियाँ धनवान को नहीं धर्मवान को देना चाहिए।

8 शादी के बाद एक सप्ताह तक ब्रह्मचर्य से रहकर दृढ़ भक्ति करना चाहिये, इससे धार्मिक सन्तान की प्राप्ति होती है।

9 पिच्छी-कमण्डलु के विना मोक्ष नहीं, तथा रत्नत्रय के विना मात्र पिच्छी-कमण्डलु लेने से भी मोक्ष नहीं होता है।

10 ज्ञानी पन्थ नहीं किन्तु पथ देते हैं, ताकि आप उर्ध्वगति कर सको।

11 प्रवचन समय पास करने का नहीं, समयसार बनने का उपक्रम है।

12 अपनी आँख करोड़ों में नहीं दोगे फिर गरीब कैसे हो ?

13 बैंक-बैलेंस नहीं ब्रेन बैलेंस (मानसिक सन्तुलन) महत्त्वपूर्ण है।

14 किसी से दृष्टि चिपकनी नहीं चाहिए नजर नीचे रखकर ही बोलना चाहिए।

15 भोजन को प्रसाद मानकर ग्रहण करो जो अन्दर बैठे परमात्मा को चढ़ाया जा रहा है, नैवेद्य प्रसन्नता पूर्वक चढ़ाया जाता है।

16 इष्ट पदार्थ कभी अलग न हो इस भाव को तृष्णा कहते हैं।

17 नदी का जल, वृक्ष का फल, सूर्य की तपन, दीपक का प्रकाश, सन्त का अनुभव व आशीर्वाद सबको प्राप्त होता है।

18 संसार में सुखी रहना है तो समन्वय करना सीखो, अन्यथा सब जगह से हटना पड़ेगा, परिस्थिति के अनुसार मनःस्थिति बनाकर समय के साथ चलो।

19 जहाँ खड़े हैं वही से कदम बढ़ाएँ, स्मरण रखें अपनी तुलना दूसरों से कदापि न करें, दूसरों की बराबरी करने की अपेक्षा उससे भी श्रेष्ठ बनने का प्रयत्न करें।

20 जब आप स्वयं पर विश्वास नहीं कर पाते तो दूसरे लोग आप पर किस आधार से विश्वास

करेंगे।

21 सदैव सामने वाले की आखों में झाँककर उसे समझने की कोशिश करें।

22 आत्म विश्वास सृजन एवं अन्य लोंगों को अपनी और आकर्षित करने के लिए यह भी आवश्यक है कि आप अपनी औकात के अनुसार समृद्ध दिखने का यत्न करें।

23 तनाव से दूर रहिए एवं तनावहीन दिखने का अभ्यास कीजिये।

24 दूसरे व्यक्तियों को आनन्द प्रदान करने के लिए और उनको अपनी ओर आकर्षित करने के लिए उनकी बातों को मन्त्रमुग्ध होकर सुनना सर्वोत्तम साधन है, सहमत न होते हुएभी कभी-कभी सहमति दिखाते रहिए।

25 व्यापार हो या नौकरी ईमानदारी से करें, विश्वास अर्जन का आधार सत्य वचन है।

26 स्व व्यवसाय को भली-भाँति जानें- अल्पज्ञान भयङ्कर शत्रु है, पूर्ण जानकारी के अभाव में किसी भी कार्य में सफलता की प्राप्ति में प्राय: सन्देह रहता है।

27 योग्य प्रशंसा व उत्कृष्ट कार्य करें- जब आपके कार्य व्यवहार सुरुचि पूर्ण परिष्कृत एवं विश्वसनीय होते हैं, तब प्रत्येक व्यक्ति आप से बार-बार मिलकर गौरव की अनुभूति करता है।

28 आप अपने आदर्शों पर खरे उतरें- आपके लेन-देन साफ सुथरे हों, दूसरों का विश्वास अर्जित करने के लिए लेन-देन में पूरी ईमानदारी रखें।

29 मनसे भय का भूत निकालें- मात्र भय शब्द ही व्यक्ति के शक्तिशाली मन में अजीव सी हलचल उत्पन्न कर देता है, खोजिये सर्वाधिक सताने वाले भय को, 'कीजिए वही जो सर्वाधिक डराए, जिससे डर मिट जाय'।

30 सीखिए भूत की भूलों से- अनेक और बड़ी गलतियाँ किये विना कोई भी व्यक्ति महान नहीं बनता है, पिछली गलतियों से सीखकर भविष्य में अपने कार्य में सही सुधार करना ही बुद्धिमान व्यक्ति का विवेक पूर्ण कदम है।

31 वादा भूल न जाएँ- सदैव स्मरण रखें कि आप जो भी वादा करें, उसे पूरा करने का हर सम्भव प्रयास करें।

32 परोपकार को मित्र बनायें, बहुत सम्पत्ति होने पर भी नियमों का पालन करें, दरिद्र हो कर भी दान करें।

33 शक्ति होने पर भी कष्ट व कड़वी बातें सहन करें, युवावस्था में व्रत संयम को निभायें।

34 ये चार बातें छोटी होने पर भी बड़ा लाभ प्रदान करती है- न उधार लो, न दो, क्योंकि उधार देने

से अक्सर पैसा और मित्र दोनों ही खो जाते हैं।

35 मूर्ति के समान मनुष्य का जीवन सभी ओर से भव्य और सुन्दर होना चाहिए।

36 सत्सङ्गति और विवेक ये दोनों निर्मल नेत्र हैं जिसके पास ये नहीं वह अन्धा है व कुमार्ग गामी क्यों नहीं होगा ? 'अच्छा काम स्वयं से शुरू करें, बाद में दूसरों से कहें।

37 बैठे रहने से किस्मत भी बैठ जाती है, बीमारियाँ भी आ जाती हैं और जीवन भी बैठ जाता है।

38 करणीय कार्य को कल पर मत डालो उसे आज ही करो।

39 किरण ढूँढने वालों को उजालों की कमी नहीं रहती है।

40 काम सही ढङ्ग से किया जाय तो परिणाम सही निकलता है।

41 सुविधा का उपभोग करें पर सुविधा भोगी न बनें।

42 गलती चाहे छोटी भी क्यों न हो, उसे भुलाओ मत।

43 प्रसिद्ध होने की अपेक्षा ईमानदार होना अधिक अच्छा है।

44 जो व्यवहार तुम स्वयं नहीं चाहते हो उसे औरों के साथ भी मत करो।

45 शान्ति के लिए टाङ्ग खिचाई नहीं मदद करना चाहिए।

46 भूल करना दोष है, भूल को दुहराना महादोष है।

47 **सावधानी रखो**- एक ही पत्थर से दुबारा टकराना मूर्खता है।

48 बुराई मिटाने के लिए शस्त्र नहीं सङ्कल्प की आवश्यकता है।

49 सफलता का श्रेय औरों को दें और गलतियों की जिम्मेदारी स्वयं लें।

50 जहाँ पूर्वाग्रह(हठाग्रह) है वहाँ सत्य की खोज के सारे रास्ते बन्द हो जाते हैं।

51 बड़प्पन बड़ा पद प्राप्त करने में नहीं बड़ा कार्य कर दिखाने में है।

52 सहनशील व्यक्ति प्रतिकूलताओं में घबराता नहीं है।

53 मन की अहिंसा जब शब्दोंमेंउतरती है तो वह सत्य कहलाती है, और आचरण में उतरती है तो परोपकार कहलाती है।

54 धर्म पुण्य के लिए नहीं आत्म शुद्धि के लिए करना चाहिए पुण्य स्वयं ही मिल जाएगा।

55 जब छोटा सा शस्त्र महान विध्वंस कर सकता है तो फिर छोटा सा नियम निर्वाण क्यों नहीं कर सकता है ?

56 पद, सत्ता या पुरस्कार की आकाङ्क्षा न कर उसके योग्य बनने का प्रयत्न करें।

57 जीवन में सुख के साथ विवेक न हो तो सुख विलासी बनाता है, और यदि दुःख के साथ विवेक

न हो तो दु:ख कायर बनाता है।

58 आज तक जो नहीं हुआ वह अब हो सकता है, यदि उसके पीछे निष्ठा और तीव्र प्रयत्न हो।

59 गलती कर के न झुठलायें और न छुपायें बल्कि स्वीकृति के साथ सुधारने का प्रयत्न करें।

60 अनास्था और अविश्वास की लगाम हाथ में लेकर कोई भी चले नैतिकता का रथ आगे बढ़ नहीं सकता है।

61 संसार का सबसे बड़ा दिवालिया वह है जिसने धैर्य, साहस और विश्वास खो दिया है।

62 मर्यादा मनुष्य को अभाव में धैर्य प्रदान करती है, विपत्ति में कर्तव्य का विवेक जगाती है।

63 अपनों में सिर्फ अच्छाइयाँ ही न ढूँढे उनकी खामियाँ भी स्वीकार करें, उन्हें सहने और बदलने की प्रेरणा भी दें।

64 सफलता इसमें नहीं कि हमसे भूल कभी न हो, बल्कि इसमें है कि एक भूल हमसे दोबारा न हो।

65 एकता वही होती है जहाँ स्वार्थ, प्रलोभन और अहम्भाव नहीं होता है।

66 विलम्ब और विखराव सफलता के दो विघ्न हैं।

67 आस्था वहाँ होती है जहाँ हम हजार प्रतिकूलताओं के बीच भी डाँवाडोल न हों।

68 संवर और निर्जरा बन्धन मुक्ति के ये दो साधन हैं।

69 कर्म क्षय के दो उपाय- चिन्तन और भक्ति।

70 जो अधिक सुनता है और कम बोलता है वही व्यक्ति बुद्धिमान है।

71 बुराइयों पर सजग पहरा देना और अच्छाईयों का सम्मान करना न्याय कहलाता है।

72 इच्छाओं का परिमाण और अनासक्ति यह अपरिग्रह का व्यवहारिक रूप है।

73 प्रामाणिकता और पापभीरुता धार्मिकता की ये दो कसौटी हैं।

74 मन का काँटा शरीर के काँटे से भी ज्यादा चुभता है।

75 'अनुशासन' कानून और व्यवस्था की सफलता का आधार है।

76 धर्म का आधार विरक्ति है और विरक्ति का फल विषय-कषाय का त्याग है।

77 आकिञ्चन्य और तपस्या से साधु में साधुता आती है।

78 विवेक और संयम उद्दण्डता पर नियन्त्रण करते हैं।

79 भोजन करना पर भजन मत भूलना।

80 औरों की ऊँचाई देखकर स्वयं को छोटा मत समझो।

81 समय की कमी नहीं सम्यक् योजना की कमी होती है। जहाँ समझने की गुञ्जाइश न हो वहाँ मौन रहना श्रेष्ठ है।

82 मूल्यवान पूरा जीवन ही नहीं महत्त्वपूर्ण प्रसङ्ग या क्षण भी होता है।

83 ऐसा कोई काम मत करो जिसे छिपाने की जरूरत हो।

84 अनैतिकता से पैसे कमाना कला नहीं क्रूरता हैं।

85 आकाङ्क्षा, कम करो, उपलब्धियाँ बढ़ जाएँगी।

86 हमारी चिन्ताएँ हमेशा हमारी कमजोरियाँ बताती हैं।

87 गुणी व्यक्ति ऐश्वर्य के अभाव में भी धनाड्य माना जाता है।

88 महत्त्वाकांक्षी नहीं महान् बनने का प्रयत्न करो।

89 सङ्कट के समय धैर्य रखना ही आधी लड़ाई जीत लेना है।

90 विचारों की भीड़ से मुक्त होना ही एकान्त हैं।

91 पहचान सिर्फ चेहरे से नहीं, चरित्र से होती है।

92 जीवन में अविश्वसनीय होना सबसे बड़ा घाटा है।

93 लक्ष्य सपने की तरह नहीं स्थिर सङ्कल्प हो, कोई कभी यह न सोचे कि मेरे विना कोई काम रूक जायेगा।

94 गलती एक क्षण में हो जाती है, पर उसे सुधारने में बहुत समय लगता है।

95 जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है अपने आप में रहना। धर्म शून्य समाज स्वयं मनुष्य के लिए आफत है।

96 ईमानदारी के विना दयालुता नहीं आ सकती है। पाप पाप ही है, फिर चाहे वह बड़ा हो या छोटा।

97 समय बदलने पर लोगों की नजर भी बदल जाती है।

98 जो इतिहास से अनजान हैं उन्हें परिवर्तन अखरता है।

★★★

''कहो वही जो-सच्ची हो, अच्छी हो, उपयोगी हो''

1 सरल व्यक्ति धोखा खा सकता है पर धोखा दे नहीं सकता है।

2 भीतरी अनुशासन जागे विना जीवन बदल नहीं सकता। अपने अहं को आदर्शों और उद्देश्यों से ऊपर न उठने दें।

3 झगड़े मिटाने के लिए जीवन में समन्वय की जरूरत है। जहाँ कथनी और करनी एक होती है उसे साधना कहते हैं।

4 संसारकी उपलब्धियाँ समय में और सत्य की उपलब्धियाँ सङ्कल्प में होती हैं।

5 सफल व्यक्ति बड़े कामों से महान् नहीं बनता बल्कि छोटे कामों को अच्छे ढंग से करता है।

6 भय वस्तु से पैदा नहीं होता राग से पैदा होता है,'राग'विराग में बदला कि भय समाप्त हो जाता है।

7 सब मेरे विचारों से सहमत हों, यह मत सोचिए, बल्कि यह सोचिए कि मेरे विचार सही व शुद्ध हों।

8 केवल चाबी का गुच्छा मिलने से ताला नहीं खुलता बल्कि सही चाबी से ताला खोलने की कला समझिए।

9 विश्वास के महल में सन्देह की छत न हो अन्यथा यह छिद्र बनकर हर मौसम में दुख देगी।

10 शिकायत, उपालम्भ(उलाहना) या आरोप लगाने से पूर्व सोचिए 'क्या यह बात बहुत बड़ी है'?

11 चिन्तन के साथ निर्णय करना जरूरी है, अन्यथा चिन्तन भार-भूत बन जायेगा।

12 गम्भीर व्यक्ति शोर नहीं मचाता, वह अपनी शक्ति और स्थिति देखकर काम करता है।

13 'यह भी बीत जायेगा' यह ऐसा स्वर्णिम सूत्र है, जो निराशा के अंधेरे में आशा का चिराग जला देता है।

14 आवश्यकता से ज्यादा सङ्ग्रह और उपयोगिता से ज्यादा आकांक्षा जीवन और जीविका के बीच असन्तुलन पैदा करते हैं।

15 करने योग्य काम बहुत है, जिन्दगी बहुत छोटी है, इसलिए हर क्षण सार्थकता से जियें।

16 सिद्धान्त कितने ही अच्छे क्यों न हो पर जीवन में उतारे विना सफल परिणाम नहीं मिल सकता हैं।

17 गाँठ में सरलता नहीं होती है, भले ही वह कपड़े में, रस्सी में, शरीर में या विचारों में हो।

18 यश की चाह और अहं का पोषण दोनों एक साथ जीवित नहीं रह सकते हैं।

19 उन सभी कर्मों को अशुभ मानें जो निजी गुणों का अन्त कर देते हैं।

20 बेईमानी के धन से ईमानदारी की गरीबी अच्छी है।

21 महान् वही होता है जिसमें विनम्रता होती है। जीवन में प्रतिक्रिया नहीं, समीक्षा करना सीखें।

22 नियति व पुरूषार्थ में विश्वास रखने वाले का मनोबल बढ़ता है। मनोबल बीमारी और बुढ़ापे

से बचाता है।

23 आधे मन से किये काम के नतीजे भी आधे ही आते हैं। अल्प समय की फिसलन दीर्घ काल तक दुःख देती है।

24 वेश भूषा अपने आप में एक परिचय पत्र है इसलिये भोगी बनकर नहीं, योगी या उपयोगी बनकर जियें।

25 हमारा आदर्श वीतरागता है उसे पाने का साधन संयम है।

26 चाह मोक्ष की हो जिसके बाद कोई चाह शेष नहीं रहती है।

27 समय का ज्ञाता वही होता है जो समय निरर्थक नहीं खोता है और न दुरुपयोग करता है।

28 यदि सम्यक पुरुषार्थ है तो भविष्य कभी बुरा नहीं हो सकता है।

29 जागृति का एक क्षण करोड़ों मूर्छा के क्षणों से श्रेष्ठ है।

30 जन्म की कुण्डली ज्योतिषि बनाता है पर भविष्य की कुण्डली हम स्वयं बनाते हैं।

31 एक क्षण भी प्रमाद मत करो यह वाक्य छोटा है पर साधना बड़ी है।

32 सौ बार सिद्धांतों की दुहाई देने की अपेक्षा एक बार उनका आचरण करना अच्छा है।

33 स्वयं के प्रति ईमानदार बनना ही सच्चे धर्मात्मा की पहचान है।

34 कलाँ का सूत्र हैआँख खोलकर देखना और संयम का सूत्र हैआँख बन्द कर देखना।

35 उपेक्षित व्यक्ति सक्षम और प्रतिभा सम्पन्न क्यों न हो पर उसमें आत्मविश्वास की कमी रहती है।

36 वह मत कहो जो तुम नहीं कर सकते हो।

37 शुद्ध साध्य के लिए शुद्ध साधना की आवश्यकता होती है।

38 अतीत को वर्तमान नहीं बनाया जा सकता, पर उससे अनुभव अवश्य लिया जा सकता है।

39 जो असुर और सुरेन्द्रों के भोगों से तृप्त नहीं हुआ वह मनुष्यों के अल्प भोगों से किस प्रकार तृप्त हो सकता है ? समुद्र का जल पीने से जो सन्तुष्ट नहीं हो सका, वह तृण के अग्रभाग पर स्थित पानी के पीने से क्या तृप्त हो सकता है ?

40 विष और विषयों में अत्यन्त दूर का अन्तर है, क्योंकि विष तो खाये जाने पर मारता है परन्तु विषय स्मरण से भी मारते हैं।

41 मन का विशुद्ध होना ही तीर्थ है, वचन, संयम और इन्द्रिय निग्रह करना भी शरीर में उत्पन्न तीर्थ है, जिस पुरुष के ये तीर्थ हैं वे उसकी स्वर्ग गति को निर्दिष्ट करते हैं।

42 न मुझे भक्तों की भीड़ से, न शिष्यों के समूह से, न पुस्तकादिक से, न शरीरादि से और न किसी

कार्य से प्रयोजन है, विशुद्ध चैतन्य स्वरूप आत्मा में ही मेरी सदा लीनता रहे।

43 जिस उपाय के द्वारा चित्स्वरूप आत्मा से वेग पूर्वक शीघ्र ही सङ्क्लेश दूर हो जाता है, और चित्स्वरूप में विशुद्धि आती है, मोक्षाभिलाषी जीव को वही उपाय करना चाहिए।

44 जीवन में तेरह गुण- आत्मसंयम, मौनभाव, नियमितता, दृढसङ्कल्प, मितव्ययता, उद्यमता, लगन, न्याय, परिमित वचन, स्वच्छता, शान्ति, पवित्रता एवं विनम्रता ये 13 गुण जीवन में विकास के हेतु हैं।

45 उदारता, दयालुता, नम्रता, स्नेह युक्त और परोपकार करने वालों को कुछ भी असम्भव नहीं है।

46 लोक व्यवहार के लिये छः बातें- 1.किसी को डांटना नहीं, 2.दबाना नहीं, 3.अलोचना नहीं करना, 4.गुणों की हार्दिक प्रशंसा करना, 5.किसी की ज्यादा निगरानी नहीं करना, 6.गुणवानों के प्रति नम्रता रखना।

47 **महाकष्ट के चार कारण-** 1.किसी वस्तु पर अधिकार रखना, 2.गर्भधारण करना, 3.कर्जदार होना, 4.कुत्ते की रति क्रिया प्रारम्भ में सुखकर अन्त में दुःखकर होती है।

48 **परीक्षा-** आपत्ति में मित्र की, युद्ध के समय शूरवीर की, सङ्कट के समय कुटुम्बी जनों की, निर्धन अवस्था में पत्नि की परीक्षा होती है।

49 पुत्र पर कर्जा छोड़ने वाला पिता शत्रु है, व्यभिचारिणी माता-पुत्र की शत्रु है, रूपवान स्त्री-पति की शत्रु है, मूर्ख पुत्र-पिता का शत्रु हैं।

50 मनुष्य को विद्या के समान आँख, सत्य के समान तप, राग के समान दुःख, त्याग के समान सुख अन्य कोई नहीं हैं।

51 **अधिक दुःख-** लोक में निर्धन दुःखी उससे ज्यादा कर्जदार इन दोनों से ज्यादा रोगी इससे ज्यादा जिसकी स्त्री दुष्ट है वह दुःखी है।

52 **स्वर्गगामी-** गरीबों को दान देने वाला, शक्ति होने पर भी क्षमा करने वाला, युवावस्था में तप करने वाला, ज्ञानी होने पर भी मौन रहने वाला, सुख सम्पन्न होने पर भी वैराग्य धारण करने वाला एवं दयावान ये स्वर्गगामी होते हैं।

53 **आभूषण-** हाथ का आभूषण दान, कण्ठ का आभूषण सत्य, कान का आभूषण शास्त्र श्रवण, मीठे वचनों पूर्वक दान, गर्व रहित ज्ञान, क्षमा युक्त वीरता आभूषण है।

54 सौ में एक शूरवीर, हजार में एक ज्ञानी, दस हजार में एक वक्ता, लाखों में एक दानी होता है।

55 **तीन बातें-** चैतन्य स्वभाव की प्रतीति करो, प्रेम पूर्ण व्यवहार करो, आलस कभी मत करो।

56 **सात बातें दुःखदायी-** अधिक बोलना, व्यर्थ भटकना, अधिक शयन, अधिक भोजन, अधिक शृङ्गार, हीन भावना औरअहङ्कार दुःखदायी है।

57 **यशस्वी के आठ गुण-** शान्त स्वाभाव, उत्साह, सत्यनिष्ठा, धैर्य, सहनशक्ति, नम्रता, समता, साहस।

58 **तीन शुद्धि-** स्नान से देह की, दान से धन की और ध्यान से मन की शुद्धि होती है।

59 **तीन सफलता-** धन की सफलता दान में, शक्ति की सफलता सेवा में, विद्या की सफलता विवेक में है।

60 **सफलता के दस सूत्र-** 1.जीवन भर सीखतें रहें, 2.थोड़ा कार्य करें किन्तु श्रेष्ठ करें, 3.स्वयं एवं दूसरों के प्रति ईमानदार रहें, 4.अपने शरीर और स्वास्थ्य का ध्यान रखें, 5.सन्तोषी बने, 6.दूसरों को सम्मान देना सीखें, 7.जितनी बड़ी चादर उतने पैर फैलायें(आय से व्यय कम करें), 8.सुने अधिक बोले कम, 9.वचन को पूरा करें, 10.भविष्य की चिन्ता छोड़ें, भूत को भूल जाएँ, वर्तमान में जीना सीखें।

61 **चार काम न करों-** बुरा मत देखो, बुरा मत कहो, बुरा मत सुनो, और बुरा मत सोचो।

62 प्रेम और घृणा करने वाले दोनों अन्धे होते हैं।

63 खुशियाँ समेटो नहीं बाँटो, खुशियाँ बाँटने से बढ़ती हैं।

64 पहले लोग दरवाजे पर लिखते थे- 'शुभ लाभ', 'बाद में लक्ष्मी जी सहाय करें' फिर 'वेलकम' अब 'कुत्ते से सावधान रहें' लिखने लगे हैं, अर्थात् हृदय की विशालता एवं विशुद्धि कम होती जा रही है।

65 **पाँच मकार-मन्दिर,** मूर्ति, माला, मन्त्र, महात्मा इन पाँच पर भारतीय संस्कृति टिकी है।

66 अच्छे कार्य को कभी टालो मत, न उदासीनता से करो, कार्य को बोझ मत समझों, उसमें रूचि लो, हमेशा आँखें खुली और मुँह बन्द रखो।

67 **छः बोल-** 1.कम बोलों, 2.धीरे बोलो, 3.मीठा बोलों, 4.आदर से बोलों, 5.समझ के बोलों, 6.किसी के बीच में न बोलों।

68 धर्म के आठ मार्ग- 1.पूजन करना, 2.आगम अध्ययन, 3.दान, 4.तप, 5.सत्य बोलना, 6.क्षमा, 7.निर्लोभता, 8.सन्तोष।

69 सीधे चलने पर गॉड(भगवान) बनते हैं उलटे चलने पर डॉग(कुत्ता) बनते हैं, निर्णय आपका है।

70 **पाँच बातें-** 1.कभी किसी का दिल दुःखाने वाली बात मत कहो, 2.जो भी तुम्हारा भला करे

उसकी बात मानो, 3.अधिक योग्य बने विना बड़ों की बराबरी का दावा मत करो, 4.जहाँ ज्ञान की दो बातें मिलें, ध्यान से सुनो, 5.जब किसी से द्वेष हो तब सोचो ये अपना ही तो है क्योंकि अपने से कभी घृणा और द्वेष नहीं होता है।

71 **चार चीजें छोटी नहीं**- 1.घाव, 2.कर्जा, 3.कषाय, 4.अग्नि इनको कभी छोटा न समझें।

72 **पाँच भकार**- 1.भाषा, 2.भेष, 3.भ्रातृ प्रेम, 4.भाव, 5.भोजन ये सब भारतीय संस्कृति के अनुरूप सात्विक होने चाहिए।

73 **तीन शक्ति**- 1.उत्साहशक्ति, 2.मन्त्रशक्ति, 3.प्रभुत्व शक्ति सदा अपने पास रखें।

74 **वैराग्य के पाँच सूत्र**- 1.जीव यम के दाँतों के बीच रहकर भी जीने की इच्छा करता है, 2.संसारी प्राणी मोह उदय के कारण संसार से निकलने का उपाय नहीं करता है, 3.सारा संसार अज्ञान रुपी अन्धकार में जी रहा है, 4.पदार्थों के देखते ही राग या द्वेष रुपी जहर चढ़ता है, 5.पैर रखते ही पाप होना शुरू हो जाता है।

75 **स्वास्थ्य, शान्ति एवं दीर्घायु के शिक्षा सूत्र**- 1.खाओं कम चबाओ ज्यादा, 2.बोलो कम, विचारो ज्यादा, 3.बैठो कम, चलो ज्यादा, 4.लेना कम, देना ज्यादा, 5.पहनों कम, खुले वदन रहो ज्यादा, 6.उपदेश कम आचरण ज्यादा, 7.आज्ञा कम, सेवा ज्यादा, 8.खेद कम, प्रसन्न ज्यादा, 9.सोओं कम, जागो ज्यादा।

76 **छः बातों से मूर्खता जानी जाती है**- 1.अकारण क्रोध करना, 2.विना प्रयोजन वार्तालाप करना, 3.विना आधार पूँछताछ करना, 4.अपरिचित व्यक्ति का विश्वास करना, 5.शत्रु को मित्र समझना, 6.लोक विरुद्ध काम करना।

77 **छः बातों पर अमल करना**- 1.समता बढाना, 2.कषाय घटाना, 3.निज-पर का विवेक करना, 4.आत्म ध्यान करना, 5.मैथुन से डरना, 6.उत्साह से भरना।

78 **सात बातें अच्छी नहीं लगती**- 1.कञ्जूस को दान देने वाला, 2.लोभी को याचना करने वाला, 3.चोर को उजाला, 4.मूर्ख को उपदेश देने वाला, 5.कर्जदार को साहूकार, 6.रूपवान को बुढ़ापा, 7.व्याभिचारिणी को पति अच्छा नहीं लगता है।

79 **तीन चीजें**- समय, मृत्यु और ग्राहक ये किसी की प्रतीक्षा नहीं करते हैं।

80 सभी चीजें अनुभव करके नहीं छोड़ी जातीं, जैसे जहर खाकर नहीं छोड़ा जाता है।

81 बैल का दाँत, गाय का दूध, घोड़े की चाल व्यक्ति का व्यवहार एवं कन्या का रूप बिकता है।

82 साधु के पास हाथ बाँधकर नहीं, जोड़कर जाना चाहिए, हाथ जोड़कर जाने से श्रावक और

श्रमण का दिल जुड़ जाता है, किन्तु मदारी और जादुगर के पास मुट्ठी बाँधकर जाना चाहिए, बन्द मुट्ठी में मन्त्र काम नहीं करता है।

83 कलहकारी व्यक्ति की मूर्खता के चार गुण होते हैं- अहङ्कारी होना, दुर्वचनी, हठी, अहितकारी वाणी बोलना।

84 दूसरों के साथ हँसिये, दूसरो पर मत हँसिये, तुम बर्फ के समान विशुद्ध और पवित्र रहो, तब भी निन्दा से नहीं बच सकते हो।

85 जो विना पूँछे किसी को सलाह नहीं देता है, दूसरों की अच्छी सलाह को मान लेता है, सोच विचार कर कार्य शुरू करता है, हाथ में लिये कार्य को अधूरा नहीं छोड़ता है, पहले तौलता है बाद में बोलता है 'वही बुद्धिमान है'।

86 जिसे सोने के लिये गोली नहीं खाना पड़ती हो और उठने के लिये अलार्म की जरूरत नहीं पड़ती हो वह सबसे सुखी आदमी है।

87 जिसको स्वयं पर भरोसा नहीं, वह राम भरोसे क्या कर लेगा ? ईश्वर पर भरोसा रखिये, ईश्वर के भरोसे मत रहिये।

88 बचपन में अध्ययन, जवानी में अर्जन, बुढ़ापे में चिन्तन ये तीन बातें याद रखना चाहिए।

89 जिव्हा घी खाने से चिकनी और मीठा खाने से मीठी नहीं होती, अतः जिव्हा की तरह निस्पृह होना चाहिए।

90 डाकिया पत्र लाता है, चाहे मृत्यु का हो या खुशी का सब में निरपेक्ष रहता है। आप भी डाकिया की तरह मध्यस्थ बने।

91 नदी के इस तरफ दर्पण रखा है उसमें नदी का पानी दिख रहा है व पर्वत पर लगी आग दिख रही है पर वह दर्पण पानी से गीला नहीं होता और अग्नि से जलता नहीं वह दोनों से निर्लिप्त रहता है।

92 पेट को दीजिये, जीभ को देने की जरूरत नहीं, आँख सुधरने से मन सुधरता है, जीभ सुधरने से जीवन सुधरता है।

93 पुत्र एक कुल को तारता है, पुत्री दो कुलों को तारती है।

94 जो भजन नहीं करते, वे मनुष्य नहीं मल-मूत्र बनाने की मशीन हैं।

95 समय के पैर नहीं पंख होते हैं, वह चलता नहीं उड़ता है, अतः समय की कीमत करनी चाहिए।

96 दुर्गुणि व्यक्ति में भी एकाध गुण तो होता ही है, जैसे कैसा भी मकान हो कम से कम एक

दरवाजा तो होता ही है।

97 जीवन भर रावण का काम किया, अन्त में शव को 'राम नाम सत्य है' सुनाते हैं। यह विडम्बना नहीं तो क्या है?

★★★

''हाथी पाकर-खुश होता ईंधन ढोकर''

1 जिससे ज्यादा राग हो वह धोखा दे तब लगता है राग दुःखदाई है।

2 वैराग्य के विना अध्यात्म का उपदेश पचता नहीं है।

3 जिनका हृदय क्रूर है वे धर्मात्मा कैसे हो सकते हैं।

4 धर्मात्मा इस बात का अवश्य ख्याल रखता है कि कहीं मेरी खुशी में किसी की आँखों में आँसू तो नहीं छिपे हैं।

5 अपने दोष अपने को दिखाई नहीं देते जैसे अपनी आँख की लालिमा स्वयं को दिखाई नहीं देती, अगर कोई बताता है तो हमें नाराज न होकर उसे सुधार लेना चाहिए।

6 ब्रह्मचर्य के विना शेष गुण महत्त्व को प्राप्त नहीं होते हैं अतः ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिये गम्भीर होना जरूरी है।

7 विशालहृदय में ईर्ष्या का वास नहीं होता है तथा घृणा सेवा में बाधक है।

8 जहाँ आज तक सन्तोष नहीं मिला अज्ञानी प्राणी वहीं खोज रहा है।

9 ईमानदार की लोग मदद करते हैं।

10 समर्पित को धोखा देना महापाप है।

11 आकुलता संसार को बढ़ाने वाली है।

12 नासमझ दूसरों को समझाना चाहता है, उसकी बात भीतर से नहीं मुँह से निकलती है, इसलिए कानों तक रहती है हृदय तक नहीं पहुँचती है।

13 सारा जीवन सुख के साधन जुटाने में और दुःख के साधन हटाने में निकल जाता है।

14 दीक्षा भूमिका है, पूर्णता नहीं, अपना अपराध दूर करना मोक्ष मार्ग है।

15 निष्पक्ष होने से नई बात सीखने को मिलती है।

16 अज्ञानी को और सब का पता है पर खुद का पता नहीं है।

17 वैरागी को आभार भी भार लगता है।

18 दिखने वाले पुद्गल को ओझल कर देखने वाले आत्मा को देखो।

19 जो अपना नहीं उसी की चिन्ता में संसार बसा है, संसार की असलियत देख लें तो राग खत्म हो जाये।

20 जीवन आदर्श से बदलता है उपदेश से नहीं।

21 भोग का काल अल्प, लालसा का काल अनल्प होता है।

22 इष्ट-अनिष्ट राग-द्वेष के फैसले हैं, वस्तु स्वरूप नहीं।

23 असुन्दर को ही सजाया जाता है।

24 विवाद वस्तु स्वरूप को नहीं बदल सकता है।

25 ककड़ी का जहर निकल जाय तो मीठी लगती है, उसी प्रकार आत्मा का विभाव/विकार निकल जाए तो आत्मा में आनन्द आता है।

26 वर्षों का बना महल क्षण में धराशायी हो जाता है उसी प्रकार अनादि का कर्म महल अन्तर्मुहूर्त के ध्यान में धराशायी हो सकता है।

27 उठा-धरी को पुरूषार्थ समझना कर्तृत्व बुद्धि है।

28 मोह से दूर होना याने मोक्ष के निकट होना है।

29 आशा का गड्ढा सन्तोष रूपी जल से भरेगा, विश्व की सम्पदा से नहीं।

30 सभी पूँछेंगे आप कैसे हैं, जब तक आपके पास पैसे हैं।

31 झगड़ा न समझी की अचूक पहचान है।

32 यश से अधिक सत्य की कीमत है।

33 विनय को विवेक का प्रकाश चाहिये, तत्काल उद्विग्न होना अविवेक है।

34 आज परोपकार गौण और यश लिप्सा मुख्य हो गयी है।

35 व्यक्ति का परिचय वस्त्रों से नहीं, गुणों से होता है वैसे ही आत्मा का परिचय कर्म नोकर्म से नहीं, चैतन्य स्वरूप से होता है।

36 अपनी भूल को समझने वाला स्वयं सुधरता है।

37 निन्दक से रुष्ट होना अपने लिये हानिकारक है।

38 मन वहीं लगता है जहाँ प्रीति होती है।

39 कड़वा मजाक दोस्ती का जहर है।

40 विना विचारे की गयी दया, कहीं-कहीं हिंसा से बढ़कर होती है।

41 जीवन में इतने ज्यादा मीठे न बनें कि लोग चखें और चटकर जायें और इतने कडवे भी न बनें

कि लोग चखें और थूँ-थूँ करने लग जायें।

42 चिड़ियों की तरह हवा में उड़ना और मछलियों की तरह पानी में तैरना सीखने के बाद अब हमें इंसानों की तरह जमीन में चलना सीखना बाकी है।

43 अपने परिणामों को परखने की कला आ जाये बस यही तो जागृत होना है।

44 धर्मात्मा दयालु ही होगा, सम्यग्ज्ञानी वैरागी होता ही है।

45 जो तृण नाखून से टूट जाय, उस पर कुल्हाड़ी चलाने से क्या प्रयोजन है।

46 गरीब लोग प्रेम और सहानुभूति के भूखे होते हैं।

47 घृणा को केवल प्रेम से जीता जा सकता है।

48 विवेक की आँखें स्वयं को पतन से बचाती है।

49 सन्त जागते रहें और पापी सोते रहें, तो संसार का भला होगा।

50 जय, विजय और प्रभुत्व की आकाङ्क्षा मानवता से पतित कर दानव बना देती है।

51 ऋण, हत्या और बैर ये संसार के बढ़ाने वाले हैं।

52 पठन कार्य में रसना की लम्पटता बाधक है।

53 कृतज्ञता मनुष्यता की जननी है और कल्याण का मार्ग निरीह वृत्ति है।

54 घर के साथ-साथ कषाय भी छोड़ो, नहीं तो जहाँ जाओगे वहीं घर बसाओगे।

55 पर पदार्थ के आलम्बन से स्वसंवेदन छूट जाता है।

56 अनुभवी हित की बात करता है फ़ालतू बात नहीं करता है।

57 कषाय तीव्र होने पर संसार की कोई भी शक्ति दुर्गति में जाने से नहीं रोक सकती है, एवं कषाय मन्द होने पर कोई भी शक्ति दुर्गति में नहीं ले जा सकती है।

58 हँसी मजाक से व्रत भङ्ग हो जाता है।

59 **क्यों व्यर्थ रोते हो ?** तुम्हारा क्या गया जो रोते हो ? तुम क्या लाये थे जो तुमने खो दिया ? तुमने क्या पैदा किया था जो नाश हो गया ? तुम न कुछ लेकर आये थे, जो लिया यहीं से लिया, जो दिया यहीं पर दिया, खाली हाथ आये थे, खाली हाथ जाओगे, जो आज तुम्हारा है, कल किसी और का था, आगे किसी और का होगा, तुम इसे अपना समझकर मग्न हो रहे हो, बस यही प्रसन्नता तुम्हारे दुःख का कारण है।

60 **निमित्त का असर किस पर-** शीशी में रखी शराब से शीशी में कुछ प्रभाव नहीं होता, कोई आदमी पीले, तो नशा चढ़ जाता है।

61 **आपका हृदय कैसा है-** किसमिस के समान, बादाम, नारियल या बेर के समान स्वयं निर्णय करें।

62 शक्ति को पहचानना, अभिव्यक्त करना और उसका उपयोग कर लाभ उठाना चाहिए।

63 शरीर की, वचन की, मन की एवं आत्मा की शक्ति उत्तरोत्तर अनन्त गुनी होती है।

64 सकारात्मक और नकारात्मक सोच-चार मिलने वालों ने कहा 'आप अस्वस्थ्य दिख रहे हैं' मन ने स्वीकार कर लिया और व्यक्ति बीमार हो गया, तब अस्वस्थ व्यक्ति अपने को स्वस्थ मानेगा, तो स्वस्थ क्यों नहीं होगा ? इसके लिए चार की नहीं अकेले की आवश्यकता है।

65 मुट्ठी में सारी दुनिया का मतलब अगर आपके पास सोच है तो पेन्सिल से सारी दुनिया का नक्शा बना सकते हैं।

66 'उन्नतं मानसं यस्य, भाग्यं तस्य समुन्नतं' जिसकी उच्चकोटि की मानसिकता होती है उसका भाग्य समुन्नत होता है।

67 खिलोने नष्ट होने के लिए ही होते हैं, बच्चे को पता नहीं होता इसलिए रोता है, किन्तु बड़े नहीं रोते पर बड़े खिलोने टूटने पर अज्ञानी रोने लगते हैं, ज्ञानी नहीं रोता है।

68 'मुझे वही करना है जो मेरे हित में है' इससे अन्तः स्त्रावी ग्रन्थियाँ प्रभावित होती हैं, जिससे हमारी शारीरिक शक्ति बढ़ती है व प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है, जिससे बीमारियों से छुटकारा मिलता है।

69 पिच्छि के वेंत की तरह मन को ज्ञान के पानी में भिगोकर धीरे-धीरे मोड़ो, वरना टूट जाएगा।

70 सोच बदले विना चारित्र नहीं बदलता है, अभी तो उजाला दिख रहा है ऐसा मानकर भोजन कर लेते हैं, आलू का त्याग है झोल का नहीं, ऐसा मानकर झोल ले लेते हैं, जब तक चारित्र के प्रति दृढ़ता नहीं होती तब तक चारित्र नहीं पलता है।

71 मन प्रायः गलत दिशा की ओर प्रेरित करता है, मौज-मस्ती के लिए, पाप-पाखण्ड के लिए, भोग-विलासिता के लिए, धन-वैभव के लिए, नाम-यश के लिए। एक बार मन की हो जाए तो उसकी माँग बढ़ जाती है, मन की मानोगे तो पाप में फँसोगे और दुर्गति में जाओगे। अतः मन को मनाने की कला सीखें। जो मन की मानता है वह आँसू बहाने को विवश होता है और जो मन को मना लेता है वह मुस्कुराने की कला सीख लेता है। धर्म शिक्षा की लगाम से दुष्ट मन रूपी घोड़े को नियन्त्रित कर सकते हैं।

72 दूर रहकर भी बीमार व्यक्ति के लिए सकारात्मक प्रार्थना या जाप किये गए, उसे शीघ्र लाभ

मिला, जिन्हें नकारात्मक प्रार्थना की गयी, वे ज्यादा बीमार हो गये, वचनों के माध्यम से अपने को व दूसरों के चारित्र को निर्मल बना सकते हैं।

73 आत्मघात किसी भी समस्या का हल नहीं है बल्कि एक नई समस्या है, पहली कक्षा में भर्ती होना है एवं अनेक समस्याओं को निमन्त्रण देना है।

74 मन घड़ी के उस पैण्डुलम की तरह है, जो सदा दायाँ-बायाँ घूमता रहता है।

75 मन उस विषेले सर्प के समान है, जो काँचुली तो छोड़ देता है पर विष नहीं छोड़ता है।

76 मन गधे की उस लीद की तरह है, कि जो ऊपर से चिकनी और अन्दर से खुरदरी होती है।

77 मन उस मृग की तरह है, जो तृण से आच्छादित खाई को न देखकर तृण खाने दौड़ता है और खाई में गिर जाता है।

78 मन उस श्वान की तरह है, जो हड्डी को चूसते हुये दाड़ों से रिसते हुये खून के स्वाद में खुश होता है।

79 मन स्तम्भ से बन्धे हुये उस नटखट बन्दर की तरह है, जो कभी शान्त नहीं बैठता, उछल कूँद करता रहता है।

80 मन उस चिकनी मछली की तरह है, जो पकड़ में नहीं आती, हाथों से बार-बार फिसल जाती है।

81 मन उन मेंढकों की तरह है, जिन्हें तराजू पर तौलना सम्भव नहीं है।

82 मन उस बगुले की तरह है, जो कि तन से धवल और मन से काला होता है।

83 मन विना लगाम के घोड़े की तरह है, जो सवार को मञ्जिल तक नहीं पहुँचाता, गड्ढे में अवश्य पटक देता है।

84 मन उस जल की तरह है, जिसका कोई निश्चित रूप गन्ध नहीं होता है।

85 मन उस दरवाजे की तरह है, जो भीतर की तरफ और बाहर की तरफ भी खुलता है।

86 मन को वश में करने का उपाय परिग्रह और परिचय से अपने को दूर रखना है।

''मन का शमन''

87 **मन की गति-** एक प्रश्न पूँछा कि वायु से भी अधिक चञ्चल क्या है ? तब उत्तर में कहा- चञ्चल गिलहरी को पकड़ना, समुद्र की लहरों को गिनना, आकाश की ऊँचाई को मापना, सागर की गहराई को मापना आसान है, किन्तु मनुष्य के मन की गति को मापना आसान नहीं है।

88 मानव मनु की नहीं मन की सन्तान है,मन बर्फ की तरह न हो पानी की तरह हो, जिससे मन किसी भी पात्र में समा जाये।

89 **मन को मोड़ना-** मन को मनाकर दिशा बदल दो, समस्या को समाधान के रूप में देखो, समस्या के पहाड़ को रास्ता बदल कर पार करो, संसार में ऐसा कोई कल्पवृक्ष नहीं जो आपकी इच्छा पूरी कर दे, अतः मन को तोड़ने की अपेक्षा इच्छायें ख़त्म करें।

90 सात सौ खरब बोल्ट की पावर आपके पास है, सकारात्मक सोचेंगे तो उस रूप में काम आएगी, नकारात्मक सोचेंगे तो पल भर में सारा खून पानी बन जायेगा।

91 नकारात्मक विचारों का प्रवेश बन्द करें।

92 लम्बी यात्रा का शुभारम्भ एक कदम से शुरू होता है।

93 छोटी-मोटी गलतियों पर अप्रसन्न न हों।

94 कभी किसी के वाद-विवाद में न उलझें।

95 साहस में लक्ष्मी का वास होता है।

96 अधिक लालच कष्टों को आमन्त्रित करता है।

★★★

''समय कम-अरमान ज्यादा, मार्ग लम्बा सामान ज्यादा यात्रा कैसे करें ?''

1 जो सीखा उसका अभ्यास अवश्य करें, अभ्यास ही मनुष्य को परिपूर्ण बनाता है।

2 मनुष्य उद्यम से ही सफल होता है, धन एवं विद्या का स्थान तो गौण है।

3 नम्रता वह जादुई पिटारा है जिसके खुलते ही चित्त में चाहत व लोकप्रियता बढ़ने लगती है।

4 जीवन में कभी भूल करना नहीं और किसी से सम्बन्ध जोड़ना नहीं, सौ सगे सौ दुःख, हाथ जोड़ो पीछा छोड़ो।

5 क्रोध अदृश्य ज्वाला है जो भीतर ही भीतर सुलगता है जो अपने अद्वितीय व्यक्तित्व को राख कर देता है।

6 जो भी पढ़े पूरे मनोयोग से, धीरे-धीरे मनन पूर्वक प्रत्येक शब्द को आत्मसात करते हुये पढ़ें।

7 वाञ्छित विषय में गहन रुचि रखें, जो भी पढ़े उसकी मानसिक समीक्षा अवश्य करें।

8 टहलना वह व्यायाम है जिसके बाद अन्य व्यायाम की जरूरत नहीं होती है, इससे स्थूलता पर

नियन्त्रण, सौन्दर्य प्रसाधन आदि लाखों रोगों मे लाभ मिलता है।

9 हृदय और फेफडो का व्यायाम तत्सम्बन्धी रोगों को पास नहीं आने देता है।

पञ्चमकाल में उनञ्चास विपरीतताएँ

10 1.राजा-लोभी, 2.मित्र-विश्वासघाती, 3.पुत्र-अर्थलोभी, 4.नारी-दुश्चरित्र, 5.भाईबन्धु-विपरीत 6.मन्त्री-असन्तुष्ट, 7.विद्वान-धनहीन, 8.पापीलोग-सुखी, 9.कुदेवों की पूजा, 10.पति-क्रोधी, 11.नगरी-प्रजाहीन, 12.देह-व्याधि पीड़ित, 13.गँवार-सर्वकलावान, 14.कायर-सुभट, 15.क्षमावान-निर्दयी, 16.शूद्र-बलवान, 17.अकाल मृत्यु, 18.मूर्ख-अहङ्कारी, 19.स्नेही-दुर्जन, 20.वैश्य-कपटी, 21. राजा-नीच, 22.सज्जन-विरोधी, 23.राजा-स्व स्थान हीन, 24.वर्षा-अल्प 25.मनुष्य-वचनहीन, 26. मन्त्री-बुद्धिहीन, 27.तापसी-दया हीन, 28.भट्टारक-तामसी, 29.वृक्ष-फल रहित, 30.कुंवारी कन्या-चञ्चल, 31.दासी-आज्ञाहीन, 32.राजपुत्र-विवेकहीन, 33.शूद्र-विवेकी, 34.किसान-दुःखी, 35.पुरूषार्थ-हीन-सुखी, 36.अकाल, 37.विपरीत ऋतुयें, 38.स्वप्रशंसा, 39.परनिन्दा, 40.वेश्या-लज्जालु, 41.राजा-गजहीन, 42. अशुद्वपाठ, 43.लोभी-विप्र, 44.माता-कुटिल, 45.कुटिलता पूर्ण दया, 46.अनङ्ग क्रीड़ा, 47.उच्चकुलीन-निर्लज्ज, 48.भीलों के गाँव में व्यापार और 49.नीच जाति के लोग भजन गायेंगे।

11 **पञ्चम काल में मनुष्य में बीस दोष-** 1.कुण्ठित, 2.लोभी, 3.क्रोधी, 4.कृतघ्न, 5.पापिष्ठ, 6.दुष्ट , 7.रूखे, 8.क्रूर, 9.जड़, 10.मूर्ख, 11.मर्यादा रहित, 12.अधार्मिक, 13.हिंसा, 14.चोरी, 15.असत्यवादी, 16.कातर, 17.परनिन्दक, 18.चुगलखोर, 19.मानी और 20.धूर्त।

12 मनुष्य कृश, रोगाक्रान्त, बाधाओं से युक्त, इस काल में ईति-भीति, चोरों का भय रहेगा, पृथ्वी रूखी रहेगी, व्याधों द्वारा नारी हरण, सर्प, कीड़े, मृगादि का भय होगा।

13 आपका उत्तम बर्ताव ही सौभाग्य को आकर्षित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

14 दुर्भाग्य पर आँसू बहाकर अपने को दीन हीन न बनायें।

15 दूसरे को कुछ देना यह भी एक कला है, इसे सीखने का प्रयत्न करें।

16 विना लक्ष्य के फेंके गये तीर व्यर्थ हो जाते हैं एवं शक्ति और समय का दुरुपयोग होता है।

17 सफलता में प्रेरणा एक प्रतिशत, परिश्रम निन्यानवे प्रतिशत होना चाहिये।

18 रौब-धौंस की प्रवृत्ति घातक है, दूसरों से व्यवहार में कभी क्रोध न करें।

19 नफरत न दिखाएँ, चाहे सामने वाला बिल्कुल पसन्द न हो।

20 अपने चाहने वालों को छोटा-मोटा उपहार देकर प्रसन्न करें।

21 सबसे बड़ा उपहार प्रेम बाटने से मिलता है उससे सङ्कट का निवारण होता है।

22 चोट पहुँचाने वाली हँसी मजाक से सदैव बचें।

23 जो भी वादा करें उसे पूरा करने का प्रयास करें।

24 दूसरों की कमजोरी पर, मजबूरी पर व्यङ्ग बाण न चलायें।

25 अपनी कार्य कुशलता की डींग न हाके।

26 दूसरे लोगों के मस्तिष्क को पढ़ने का प्रयास करें, उन्हे ध्यान से देखें, और मानसिकता को परखें कि वे कैसी मनोदशा में है, उसके अनुसार वार्तालाप करें, देखें व्यक्ति बात करने के इच्छुक हैं या नहीं।

27 व्यवहार कुशल लोगों से 'व्यवहार' सम्बन्धी बारीकी को सीखने का प्रयत्न करें, किसी से कटु सत्य न बोलें, प्रिय वक्ता बनें, सत्य को भी विनम्रता से बोलें, प्रत्येक शब्द को हृदय तराजू पर तौलें तब बोलें।

28 शैतान अपना कार्य निकालने के लिये धर्मशास्त्र का भी पाठ करता है।

29 दूसरों की समस्या भली भाँति सुनें, भाषण करने का अभ्यास करें, किसी समूह की सदस्यता ग्रहण करें, समाजोपयोगी कार्यों के लिये कुछ समय अवश्य देवें।

30 (जीवन में परिवर्तन) आयु कम है, काम बहुत है, शरीर क्षीण हो रहा है, ऊर्जा कम हो रही है, तेज घट रहा है, तुमको जो कुछ भी जप, तप, व्रत, उपवास, ध्यान, ज्ञानार्जन, परोपकार, दान, पुण्य करना है जल्दी कर लो वरना समय बीतने पर पश्चात्ताप के अलावा कुछ हाथ नहीं लगेगा, जीवन प्रदर्शन से नहीं बदलेगा, रोने-धोने से नहीं बदलेगा, ध्यान रखो जीवन जब भी बदलेगा तुम्हारे दृढ़ सङ्कल्प, समर्पण, श्रद्धा एवं कठोर परिश्रम से बदलेगा, सत्य एवं साधना से बदलेगा।कुछ सङ्कल्प लीजिए और अपने जीवन को परिवर्तन की दिशा में बढ़ाने का प्रयास कीजिए।

31 **अद्भुत जानकारियाँ-** (दक्षिण भारतीय राग शङ्कराभरण सुनने से पागलपन ठीक हो जाता है)।

32 राग दरबारी के श्रवण से सिरदर्द में आराम होता है।

33 हँसाने वाला विद्यार्थी मूर्ख नहीं होता है।

34 मुस्कान के वक्त चेहरे की चौदह मांस पेशियाँ खिंचती है चेहरा उदास हो तब बहत्तर मांस

पेशियाँ खिंचाव में आ जाती है।

35 ओम् के ध्यान के लिये श्रेष्ठ समय रात्रि दो से प्रातः आठ बजे तक है।

36 भारतीय समयानुसार पूर्णाहार का श्रेष्ठ काल दिन दस बजे से दो बजे तक है।

37 हृदय रोगी 'मैं' शब्द का सर्वाधिक प्रयोग करते हैं।

38 पेप्सी-कोकाकोला में डाला गया दाँत दस दिन में पूर्णतः गल जाता है।

39 आँख खोलकर छींकना और हँसते हुए सीटी बजाना असम्भव है।

40 कुछ भी गुटकते समय श्वांस रुक जाती है।

41 मानव शरीर की कार्यक्षमता सभी यन्त्रों से इकतालीस प्रतिशत अधिक है।

42 मानव मस्तिष्क की मात्र ग्यारह प्रतिशत स्मरण कोशिकाएँ सक्रिय होती हैं।

43 एक बार मुँह में गुटखा दवा कर सोने वाले का गाल फाड़ कर टूथब्रश बाहर निकल आया था।

44 गुटखे में रखी रेज़र पत्ती गल जाती है।

45 मुम्बई में लगभग बारह सौ चालीस ऐसे मदिरालय हैं, जहाँ नृत्य गायन द्वारा ग्राहकों का मनोरञ्जन करने वाली छः लाख कन्याएँ हैं, अधिकांश कन्याएँ फिल्मी दुनिया में प्रवेश पाने घर से भागी थीं।

46 मुम्बई की होटलों में बर्तन माँजने वाले लगभग तीन लाख ऐसे लड़के हैं, जो हीरो बनने घर से भागे थे।

47 विश्व ब्रिटिश शोधों के अनुसार संगीतकार के मस्तिष्क का एक भाग चैगुना विकसित होता है।

48 दाहिने हाथ से लिखने वाले सामान्यतः कुछ वर्ष अधिक जीते हैं।

49 सिगरेट के धुएँ से गीले रूमाल पर काले निशान पड़ जाते हैं।

50 मांसभोजी शाकाहारी से सात गुना ज्यादा खर्चीला होता है और छः वर्ष अल्प जीता है।

51 तम्बाकू में चार हजार तत्त्व होते हैं, चौबीस विष होते हैं और ब्यालीस प्रतिशत ऐसे पदार्थ होते हैं, जो कैन्सर उत्पन्न करते हैं।

52 कैन्सर पीड़ितों में से बीस प्रतिशत वे लोग होते हैं जो स्वयं निकोटीन का सेवन नहीं करते किन्तु धूम्रपान करने वालों के साथ रहने से बीमार होते हैं।

53 कैडम्बरी कम्पनी की चॉकलेटों में सन् दो हजार तीन में जीवित कीड़े निकले थे।

54 दिल्ली यूनीवर्सिटी में आयोजित कोकाकोला प्रतियोगिता विजेता आठ बोतल पीकर सदा के लिए सो गया।

55 खुला मुँह रख कर सोने वाला जीवन भर में आठ मकड़ी का मुँह में प्रवेश करा लेता है।

56 एक स्वस्थ मनुष्य पाँच सैकण्ड में एक श्वास पूर्ण करता है, पन्द्रह सैकण्ड में तीन और साठ सैकण्ड में बारह बार।

★★★

आत्म निरीक्षण के 50 प्रश्न

स्वयं के स्वयं से-उन्नति के बढ़ते कदम

1 क्या आपकी आँख सूर्योदय के पहले खुल जाती है ?

2 क्या आप आँख खुलते ही बिस्तर छोड़ देते हैं ?

3 क्या दिन भर आपके चेहरे पर खुशी खेलती रहती है ?

4 क्या आप समय का पूर्ण सदुपयोग करते हैं ?

5 क्या आप खाओ-पियो-मौज उड़ाओं के सिद्धान्त को ही अच्छा समझते हैं ?

6 क्या आप प्रतिदिन कोई अच्छी पुस्तक पढ़ते हैं ?

7 क्या आप सभी प्रकार की बुरी आदतों से दूर रहते हैं ?

8 क्या आप अपना खाना विना शिकायत के चुपचाप खा लेते हैं ?

9 क्या आप श्रम को सर्वश्रेष्ठ कर्म समझते हैं ?

10 क्या आपको श्रम की रोटी खाने में आनन्द आता है ?

11 क्या आप वस्त्र आभूषण दूसरों के दिखाने के लिए पहनते हैं ?

12 क्या आपको बिस्तर पर लेटते ही नींद आ जाती है ?

13 क्या आपका गुस्सा आने के दूसरे क्षण ही उतर जाता है ?

14 क्या आपसे मिलने वाला हर व्यक्ति प्रसन्न रहता है ?

15 क्या कभी आपसे छोटे लोगों ने आपकी कोई गल्ती पकड़ी है ?

16 क्या कभी आपने अपने से छोटों की कोई गलती पकड़ी है ?

17 क्या आप दूसरों के कष्टों को अपना कष्ट समझते हैं ?

18 क्या आप इस बात का ध्यान रखते हैं कि किसी के घर ऐसे समय न पहुँचे, जब घर के सदस्यों को असुविधा हो ?

19 क्या आप दूसरों से ली गई वस्तु का पूरा ध्यान/सुरक्षा रखते हैं ?

20 क्या आप हँसी-मजाक में भी झूठ बोलते हैं ?

21 क्या आप मूर्खों की चापलूसी से प्रसन्न रहते हैं ?
22 क्या आप मूर्खों से भी शिक्षा ग्रहण कर लेते हैं ?
23 क्या गुणवान लोगों की सङ्गति आपको अच्छी लगती है ?
24 क्या दु:खियों की सेवा करने में आपको आनन्द आता है ?
25 क्या आप अपने से बड़े लोगों की विनय करते हैं ?
26 क्या आपकी इन्द्रियाँ आपके नियन्त्रण में हैं ?
27 क्या आप कम बोलते हैं ?
28 क्या आप समाज और संस्कृति के संरक्षण में योगदान देने की भावना रखते हैं ?
29 क्या आप दूसरों के प्रति कृतज्ञता रखते हैं ?
30 क्या आप किसी के मेहमान बनते समय उसके काम में हाँथ बटाते हैं ?
31 क्या आप इस बात का ख्याल रखते हैं कि एक बार की हुई भूल को दूसरी बार न करें ?
32 क्या आप दूसरों की बात ध्यान से सुनते हैं ?
33 जो काम आपको दिया जाता है, क्या उसे दूसरे की देख-रेख के विना ठीक तरह से कर लेते हैं ?
34 क्या आप दूसरों पर विश्वास रखते हैं ?
35 क्या आपका गुस्सा आपके काबू में रहता है ?
36 क्या आप दीन-दुखियों की मदद करते हैं ?
37 क्या आप परमात्मा एवं परलोक के बारे में विचार करते हैं ?
38 क्या आप दूसरों की गालियाँ सुनकर भी शान्त रहते हैं ?
39 क्या आपको अपने से बातें करना आता हैं ?
40 क्या आपको अपनी सुनना आता है ?
41 क्या आप गुरुओं/ज्ञानियों की सेवा करके आनन्द का अनुभव करते हैं ?
42 क्या कभी आप अपने को हल्का अनुभव तो नहीं करते हैं ?
43 क्या आप पूजा-प्रतिष्ठा की चाह से मुक्त हैं ?
44 क्या कभी आप अपने को अकेलेपन में खुश रख लेते हैं ?
45 क्या आप धन या अधिकार की तृष्णा से रहित हैं ?
46 क्या कभी आपने अपनी दानवता के दर्शन किए हैं ?

47 क्या आप अपने किए हुए अहसान को भूल जाते हैं ?

48 क्या आप अपनी मृत्यु के बारे में विचार करते हैं ?

49 क्या आप कभी दुष्टजनों के बीच भी सज्जनता का परिचय देते हैं ?

50 क्या आप संसार की नश्वरता का कभी विचार करते हैं ?

51 क्या अभी तक आपने अपने जीवन जीने का कोई आदर्श लक्ष्य निर्धारित किया है ?

★★★

वैराग्य दोहावली

1 **जो सुख चाहो मित्र तुम तज दो बातें चार।**
चोरी चुगली जामनी (जमानत) और पराई नार।।

2 **जो सुख चाहो जीव तुम तज दो बातें चार।**
बहुभोजन बहुजागना बहुसोना बहुजार(मैथुन)।।

3 **जो सुख चाहो आत्मा तज दो बातें चार।**
कुगुरू कुदेव कुधर्म अरु दुःख कर असदाचार।।

4 **जो-जो देखी वीतराग ने, सो-सो होसी वीरा रे।**
अनहोनी कबहूँ न होसी रे, काहे होत अधीरा रे।।

5 **वीतराग ने क्या क्या देखा, तु जाने क्या वीरा रे।**
वीतराग की वाणी सुनकर, हर ले भव की पीरा रे।।

6 **जो चाहत दुःख से बचे, करो न पर की चाह।**
पर पदार्थ की चाह से, मिटे न मन की दाह।।

7 **खाने से नहीं पचाने से पहलवान बनते हैं, कमाने से नहीं बचाने से धनवान बनते हैं।**
पढ़ने से नहीं चिन्तन से विद्वान् बनते हैं, चर्चा से नहीं चर्या से भगवान् बनते हैं।।

8 **ज्ञान बढ़े गुणवान की सङ्गति, ध्यान बढ़े तपसी सङ्ग कीने,**
मोह बढ़े परिवार की सङ्गति, लोभ बढ़े धन में चित दीने।
क्रोध बढ़े नर मूढ़ की सङ्गति, काम बढ़े तिए को सङ्ग कीने,
बुद्धि विवेक विचार बढ़े कवि दीन सो 'सज्जन सङ्गति' कीजे।।

9 जर, जोरू और जमीन ये भाई-भाई को दुश्मन बनाते हैं।
सच्चाई, कर्तव्य और मौत इनको याद रखना जरूरी है।
माँ, बाप और जवानी ये जीवन में एकही बार मिलते हैं।
अकल, चारित्र और हुनर ये कोई चुरा नहीं सकता है।
तीर, वाणी और प्राण ये निकलकर वापस नहीं आते हैं।
धन, भोजन और स्त्री ये पर्दे के योग्य हैं।

10 यह विवेक का नहीं विज्ञापन का युग है, चिन्तन का नहीं चाटुकारिता का युग है।
चारित्रवान मनीषियों का नहीं चारित्रहीन चमचों का युग है।
सत्य शोधकों का नहीं सत्ता लिप्सुओं का युग है।
आचार का नहीं प्रचार का युग है। दूरदृष्टि का नहीं दूर दर्शन का युग है।
शब्द साधना का नहीं शब्द जाल का युग है।
प्रज्ञा पुरूषों का युग नहीं पण्डितों का युग है।
परमेष्ठियों का युग नहीं पाखण्डियों का युग है।

11 जैसे मूरख हाथी पाकर ईंधन उस पर ढ़ोता है।
तैसे मूरख अमृत पाकर अपने पग को धोता है।।

12 मानव ने जीवन में, विषय भोगों को चाह लिया।
काजू की खीर में, हींग का बघार लगा दिया।।

13 नदी की शोभा पानी से होती है रेत से नहीं,
पर्वतों की शोभा वृक्षों से होती है पत्थरों से नहीं।
वृक्षों की शोभा फलों से होती है पत्तों से नहीं,
मानव जीवन की शोभा संयम से होती है विषय भोगों से नहीं।।

14 कुछ जन्म लेते हैं जमाने के लिए, कुछ जन्म लेते हैं धन कमाने के लिए।
कुछ जन्म लेते हैं मोक्ष जाने के लिए, शेष पैदा हुए है आबादी बढ़ाने के लिए।।

15 साधु ऐसा चाहिए जैसे सूप स्वभाव।
सार-सार को गहि रहे, थोथा देय उड़ाए।।

★★★

सत्सङ्गति की महिमा

1 **निधानं सर्वरत्नानां, हेतुकल्याणसम्पदां।**
सर्वस्य उन्नतेर्मूलं, महतां सङ्ग उच्यते।।
समस्त रत्नों का खजाना, कल्याण व सम्पदा का कारण, एवं सबकी उन्नति का मूल गुणवानों की सङ्गति मानी गई है।

2 **अयं निजः परोवेति, गणनालघु चेतसां।**
उदारचरितानां तु, वसुधैव कुटुम्बकं।।
यह हमारा है, यह पराया है ऐसी मान्यता छोटे मन वालों की होती है, किन्तु उदार चरित्र वालों के लिए तो सारी पृथ्वी ही कुटुम्ब होती है।

3 **साधूनां दर्शनं पुण्यं, तीर्थभूताः हि साधवः।**
कालेन फलति तीर्थः, सद्यः साधु समागमः।।
साधुओं का दर्शन पुण्य वर्धक है क्योंकि साधु तीर्थ स्वरूप होते हैं, तीर्थ काल पाकर फलदायी होता है किन्तु साधु समागम तत्काल फलदायी होता है।

4 **दुर्जनजनसंसर्गात्, साधुजनश्चापि दोषमायाति।**
दसमुख कृतापराधे, जलनिधिरपि बन्धनं प्राप्तः।।
दुर्जनों की सङ्गति से साधु जनों में भी दोष आ जातें है जैसे कि रावण के सीता हरण करने पर समुद्र को भी बन्धन प्राप्त हुआ था।

5 **अणुरप्यसतां सङ्गः, सद्गुणं हन्ति विस्तृतं।**
गुण रूपान्तरं याति, तक्र योगाद् यथा पयः।
थोड़ी भी दुर्जनों की सङ्गति महान सद्गुणों का नाश करती है जैसे कि छाछ के संयोग से दूध अपना स्वभाव छोड़ देता है।

6 **कीटोऽपि सुमनसङ्गा-, दारोहति सतां शिरः।**
अश्मापि याति देवत्वं, महद्भिः सुप्रतिष्ठतः।।
पुष्पों की सङ्गति से कीड़ा भी सज्जनों के सिर पर चढ़ जाता है और महापुरुषों के द्वारा प्रतिष्ठित होकर पत्थर भी देवत्व को प्राप्त हो जाता है।

7 **गुणा गुणज्ञेषु गुणी भवन्ति, ते निर्गुणं प्राप्य भवन्ति दोषाः।**
सुस्वादुतोयाः प्रवहन्ति नद्यः, समुद्रमासाद्य भवन्त्यपेयाः।।

गुण गुणवानों को पाकर गुणी हो जाते हैं और गुणहीन को पाकर दोष रूप परिणमन कर जाते हैं जैसे कि मीठे जल वाली नदियाँ समुद्र में मिलकर खारी हो जाती हैं।

8 **हीयते हि मतिस्तात !, हीनैः सह समागमात्।**
समैश्च समतामेति, विशिष्टैश्च विशिष्टतां।।
नीच लोगों की सङ्गति करने से मति हीन हो जाती है, बराबरी वालों की सङ्गति से मति बराबर रहती है और विशिष्ट लोगों की सङ्गति करने से मति विशिष्ट हो जाती है।

9 **दुर्जनेन समं सख्यं, प्रीतिं चापि न कारयेत्।**
उष्णो दहति चाङ्गाराः, शीतः कृष्णायते करं।।
दुर्जनों के साथ मित्रता और प्रीति दोनों ही नहीं करनी चाहिये क्योंकि अङ्गार गरम होता है तो जलाता है और ठण्डा होता है तो हाथ काला करता है।

10 **चन्दनं शीतलं लोके चन्दनादपि चन्द्रमा।**
चन्द्र चन्दनयोर्मध्ये शीतला साधु सङ्गतिः।।
लोक में चन्दन शीतल है, चन्दन से भी शीतल चन्द्रमा है, चन्दन और चन्द्रमा से भी शीतल साधु सङ्गति है।

11 **चित्त मिले तो चेला कीजे, मित्र मिले तो मेला।**
साधु मिले तो सङ्गति कीजे, न तो सबसे भला अकेला।।

12 **सङ्गत कीजे साधु की, ज्यो गन्धी को वास। जो गन्धी कुछ दे नही, तो भी वास सुवास।।**

13 **क्रोधी लोभी कामी मदी, चार सूझते अन्ध। इनकी सङ्गति छोड़िये, नहीं कीजे सम्बन्ध।।**

14 **खोटी सङ्गति कटुवचन, अरु पर तिय सों नेह। कारण बने विनाश के, नशे धरम-धन-देह।।**

15 **ज्ञान बढ़े गुणवान की संगति, ध्यान बढ़े तपसी संग कीने।**
मोह बढ़े परिवार की संगति, लोभ बढ़े धन में चित दिने।
क्रोध बढ़े नर मूढ़ की संगति, काम बढ़े तिय को संग कीने।
बुद्धि विवेक विचार बढ़े, कवि दीन सो सज्जन संगति कीजे॥

16 सौ भोगी एक बालक के हृदय का परिवर्तन नहीं कर सकते, किन्तु एक योगी हजारों लोगों के हृदय का परिवर्तन कर देता है।

17 सत्सङ्ग में और श्मशान में शान्ति मिलती है।

18 निकट में आये हुए मनोरञ्जक विषयों से भी जिनका धैर्य स्खलित नहीं होता है, वे ही विद्वानों के द्वारा गुणवान माने जाते हैं।

19 जो गुणवानों की अवहेलना करता है वह कठिन तप करता हुआ भी और शास्त्रसमुद्र को जानता हुआ भी कल्याण को प्राप्त नहीं होता है।

20 **सेठ जी ने गाड़ी खरीदी** पन्द्रह दिन ड्राईवर के पास बैठकर देख लिया कैसे चलाता है और ड्राईवर की छुट्टी कर दी और स्वयं चलाने लगे, जङ्गल में गाड़ी बिगड़ गयी, कुछ जानते नहीं थे, अत: दूसरे से मदद लेकर घर पहुँचे, इसी प्रकार जब तक मोक्ष मार्ग के सच्चे ड्राईवर न बन जायें, तब तक गुरुओं की सङ्गति में रहना चाहिए।

21 पृथिवी पर नीम के वृक्ष बहुत दिखाई देते हैं परन्तु चन्दन कहीं-कहीं प्राप्त होता है, पत्थरों से पृथिवी भरी पड़ी है परन्तु चिन्तामणि रत्न दुर्लभ है, कौओं की काँव-काँव सदा सुनायी पड़ती है परन्तु कोयल की कूक यदा-कदा ही सुनायी पड़ती है, इससे पता चलता है कि यह जगत् दुर्जनों से व्याप्त है सज्जन तो पृथिवी पर थोड़े ही हैं।

22 गुणवानों के साथ सङ्गति, गुणवानों के साथ वार्तालाप और गुणवानों के साथ मित्रता करने वाला मनुष्य दु:खी नहीं होता है।

23 सन्त जहाँ बैठ जाते हैं वहीं पर आनन्द यात्रा शुरू हो जाती है और जब चल देते हैं तो यात्रा का आनन्द शुरू हो जाता है।

24 सत्सङ्गति का फल बुद्धि है, बुद्धि का फल दुराग्रह का त्याग है, दुराग्रह के त्याग का फल शान्ति है और शान्ति रूपी वृक्ष का फल सुख है।

25 जहाँ अच्छी हवा नहीं होती वहाँ रोग बढ़ते हैं और जहाँ सत्सङ्ग नहीं होता वहाँ आत्म रोग बढ़ते हैं।

26 परिवार में रहने से संसार बढ़ता है अत: व्यतीत रात्रि और व्यतीत जिन्दगी पर दृष्टि पात करो और आगे के लिए सजग हो जाओ।

27 हर एक के अभिप्राय को सुनकर कुछ समय विचार करो, सहसा कदम मत बढ़ाओं।

28 **इत्र बेचने वाले** के पास विना पैसे की सुगन्धी मिलती है, उसी तरह सत्सङ्गति में सुखी होने के सूत्र मिलते हैं।

29 सङ्गति का प्रभाव प्रकृति में भी देखने को मिलता है, वायु का सङ्ग पाकर धूल आकाश की ऊँचाईयों को प्राप्त होती है, वहीं धूल जल का साथ पाकर नीचे की ओर बहने वाली कीचड़ बन जाती है।

30 अग्नि के संयोग से पानी विभाव को प्राप्त हो जाता है, उसी प्रकार रागादि रूप अग्नि का स्पर्श

होते ही स्वभाव भी विभाव रूप हो जाता है।

31 दूध ने पानी की सङ्गति की तो पतला हो गया, आधी कीमत हो गयी, बदनाम हो गया और स्वाद भी बिगड़ गया किन्तु अल्पमूल्य वाले पानी को दूध ने अपने मूल्य का बना दिया।

32 **क्षेत्र का प्रभाव-** दूध की डेरी में बैठकर कोई शराब भी पिये तो लोग समझेंगे दूध पी रहा है और मदिरालय में बैठकर कोई दूध भी पिये तो लोग समझेंगे शराब पी रहा है।

33 एक क्षण की साधु की सङ्गति से वज्रबाहु, उदयसुन्दर का जीवन बदल गया था और महावैरागी चारुदत्त कुसङ्गति से वेश्यागामी हो गया था।

34 **राजकुमार वज्रबाहु की शादी** मनोरमा राजकन्या से हुई थी, जब उनका साला उदयसुन्दर पहली बार बहिन को लेने आया, तो वज्रबाहु ने इस शर्त पर ले जाने की स्वीकृति दी कि हम भी साथ में चलेंगे, हाथी पर सवार होकर तीनों जा रहे थे, जङ्गल में पहुँचते ही मुनिराज के दर्शन हो गये, देखते ही वज्रबाहु के मन में वैराग्य उत्पन्न हो गया, उदयसुन्दर साले ने हँसी में कहा, जीजाजी आप दीक्षा ले लोगे तो हम भी दीक्षा ले लेंगे और छब्बीस राजाओं के साथ तीनों दीक्षित हो गये, वज्रबाहु मनोरमा के राग मे ससुराल जा रहा था क्षण भर की साधुसङ्गति से जीवन बदल गया था।(प.पु.)

35 **बुजुर्गो की सङ्गति करो** उनकी एक-एक झुर्री पर हजार-हजार अनुभव लिखे होते हैं, काँपते हाथ, हिलती गर्दन, लड़खड़ाते कदम, मुरझाया चेहरा यह सन्देश देता है कि जो भी शुभ करना है आज कर लो, कल नहीं कर पाओगे, बूढ़ा इंसान धरती का सबसे बड़ा शिक्षालय है, उसे देखकर उगते सूरज की डूबती कहानी का बोध होता है।

36 बैटरी डिस्चार्ज होने पर लाईट की सङ्गति से ऊर्जावान होती है, उसी तरह साधुओं की सङ्गति से आत्मा की शक्ति जाग्रत होती है।

37 मुनियों का रूप नहीं स्वरूप देखा जाता है पर वर्तमान में निःस्वार्थ समागम दुर्लभ हो गया है।

38 लौकिक जन की सङ्गति से व्यक्ति वाचाल, कुटिल व दुर्भावना से युक्त हो जाता है, अतःलौकिक संसर्ग त्याज्य है।

39 चन्दन बार-बार घिसे जाने पर भी उत्तम गन्ध से युक्त रहता है, सोना बार-बार तपाये जाने पर भी सुन्दर रहता है, गन्ना बार-बार निचोड़े जाने पर भी मधुर रहता है, सचमुच ही प्राणान्त होने पर भी महात्माओं की प्रकृति में विकार नहीं आता है।

40 जो सम्पत्ति में विनय से नम्रीभूत रहते हैं, विपत्ति में स्वाभिमान रूप पर्वत के शिखर पर आरूढ़

रहते हैं और ज्ञान होने पर मौन रहते हैं या कम बोलते हैं ऐसे आश्चर्य कारक चारित्र के धारक सज्जनपृथिवी में जयवन्त रहते हैं एवं श्रेष्ठ माने जाते हैं।

41 सत्पुरुषों की मित्रता सात कदम साथ-साथ चलने अथवा सात पदों का वार्तालाप होने पर हो जाती है, सत्पुरुषों में भी जो सत्पुरुष हैं उनकी मित्रता तीन कदम साथ चलने से हो जाती है और जो सन्तों में सन्त हैं, उनकी मित्रता पद-पद पर होती है।

42 सत्पुरुष अपने असंख्य गुणों से भी सन्तुष्ट नहीं होते हैं पर दूसरों में स्थित अल्पगुणों से भी प्रसन्न रहते हैं, उनकी यह चेष्टा आश्चर्यकारी है।

43 सज्जन पुरुष अपने गुण और दूसरों के दोष नहीं कहते हैं और किसी के कुछ माँगने पर मना नहीं करते हैं।

44 कामधेनु पशु है, कल्पवृक्ष लकड़ी है पारसमणि पत्थर है और चिन्तामणि भी पाषाण है अतःसज्जनों की समानता किसी से नहीं हो सकती है।

45 जो किसी पर दोषारोपण कर प्रवचन नहीं करता, ईर्ष्या नहीं करता, अपनी स्तुति नहीं करता, दूसरे का उपहास नहीं करता, दूसरे की गुप्त बात नहीं कहता, क्रोध को मारता है, शान्ति को स्थिर रखता है, प्रीति से पीछे नहीं हटता तथा अहङ्कार रहित होता है उसे सत्पुरुष सदा 'सज्जन' कहते हैं।

★★★

संस्कार की महिमा

''जैसे झालर की झंकार-वैसे जीवन में संस्कार''

1 **अमन्त्रमक्षरं नास्ति, नास्ति मूलमनौषधं।**
अयोग्यः पुरुषो नास्ति, योजकस्तु सुदुर्लभः।।

ऐसा कोई अक्षर नहीं है जो मन्त्र बनने की क्षमता नहीं रखता हो, ऐसी किसी वृक्ष की जड़ नहीं है जो किसी न किसी रोग के काम न आती हो, ऐसा कोई मनुष्य नहीं है जो अयोग्य हो लेकिन इन तीनों का संयोजन करने वाला दुर्लभ होता है।

2 **अभ्युत्थानमुपागते गृहपतौ, तद्भाषणे नम्रता,**
तत्पादार्पित दृष्टिरासनविधौ, तस्योपचर्या स्वयं।
सुप्ते तत्र शयीत् तत्प्रथमतो, जह्याच्च शय्यामिति,
प्राज्ञैः पुत्रि निवेदिताः कुलवधू, सिद्धान्त धर्मा इमे।।

बुद्धिमान जनक ने सीता को कुलवधू के ये धर्म बतलायें कि पति के आने पर खड़े हो जाना, उनके साथ नम्रता से बात करना, उनके बैठ जाने पर चरणों में दृष्टि रखना, उनकी सेवा स्वयं करना, उनके सो जाने पर सोना, उनके उठने से पहले उठ जाना।

3 **न्यायोपात्तधनो यजनगुणगुरुन्, सद्गीस्त्रिवर्गं भजन्,**
नन्योन्यानुगुणं तदर्ह गृहिणी, स्थानालयो ह्रीमयः।
युक्ताहार विहार आर्यसमितिः, प्राज्ञः कृतज्ञो वशी,
श्रृण्वन् धर्मविधिं दयालुरघभीः, सागार धर्म चरेत्।।

न्याय पूर्वक धनोपार्जन करने वाला, गुणवानों की पूजा करने वाला, मिष्टवचन बोलने वाला, धर्म, अर्थ तथा काम पुरुषार्थ का एक दूसरे का घात न करने वाला, गृहस्थ धर्म के योग्य स्त्री, योग्य आवास, लज्जायुक्त,योग्य आहार-विहार वाला हो, सत्सङ्गति हो, बुद्धिमान हो, कृतज्ञ हो, इन्द्रियों को वश में रखने वाला हो, धर्मोपदेश सुनने वाला हो, दयालु हो, पापभीरु हो, ऐसा श्रावक होता है।

4 **शनैः पन्था शनैः कन्था, शनैः पर्वत मस्तके।**
शनैः विद्या शनैः वित्तं, पञ्चैतानि शनैः शनैः।।

एक-एक कदम चलते-चलते रास्ता पार हो जाता है, छोटे-छोटे कपड़ों को इकट्ठा कर सिलने पर ओढ़ने का वस्त्र बनता है जिसे कन्था कहते हैं, एक-एक सीढ़ी चढ़ते-चढ़ते पर्वत की चोटियों पर पहुँच जाते हैं, एक-एक पद पढ़ते-पढ़ते विद्वान् बन जाते हैं और एक-एक कोंड़ी जोड़ते-जोड़ते करोड़पति बन जाते हैं, ये पाँच चीजें धीरे-धीरे प्राप्त होती हैं।

5 **अनाहूतः प्रविशति, ह्यपृष्टो बहुभासते।**
अविश्वस्ते विश्वसिति, मूढ़श्चेतो नराधमः।।

जो विना बुलाये किसी के घर में प्रवेश करता है, विना पूँछे बहुत बोलता है, अविश्वसनीय पर विश्वास करता है वह मूर्ख अधम नर है।

6 **मौनं कालविलम्बश्च प्रयाणं भूमिदर्शनं।**
भृकुट्यन्यमुखीवार्ता, नकारः षड्विधः स्मृतः।।

निषेध के छह भेद हैं- मौन हो जाना, उत्तर देने में देर करना, गमन कर देना, भूमि की ओर देखना, भृकुटी चढ़ाना, दूसरा प्रसङ्ग छेड़ देना।

7 **माता यस्य गृहे नास्ति, भार्या च प्रियवादिनी।**
अरण्यं तेन गन्तव्यं, यथारण्यं तथा गृहं।।
जिसके घर में माता नहीं हैं, प्रिय बोलने वाली स्त्री नहीं हैं, उसे जङ्गल मे चलें जाना चाहियें क्योंकि जैसा जङ्गल वैसा घर।

8 **दोषान् गृह्णाति यत्नेन, गुणांस्त्यजति दूरतः।**
दोषग्राही गुणत्यागी, चालनिरिव दुर्जनः।।
दुर्जन चलनि की तरह दोषों को यत्न पूर्वक ग्रहण करता है और गुणों को दूर से ही छोड़ देता है।

9 **खलानां कण्टकानां च, द्विधैव हि प्रतिक्रिया।**
उपानन्मुख भङ्गे वा, दूरतः परिवर्जनं।।
दुष्टों व काँटों के प्रति दो प्रकार की प्रतिक्रिया होती है, या तो उनका जूते से मुख भङ्ग कर दो, या दूर से छोड़कर चले जाओ।

10 **अनुचित कर्मारम्भो स्वजनविरोधो बलीयसि स्पर्धा।**
प्रमदाजनविश्वासो मृत्योर्द्वाराणि चत्वारि।।
मृत्यु के चार द्वार- अनुचित कार्य प्रारम्भ कर देना, आत्मीय जनों का विरोध करना, बलवान से स्पर्धा करना, स्त्रियों का विश्वास करना।

11 **भोगे रोगभयं सुखे क्षयभयं, वित्तेऽग्नि भूभृद्भयं,**
दासे स्वामी भयं जये रिपुभयं, वंशे कुयोषिद्भयं।
माने म्लानभयं गुणे खलभयं, काये कृतान्ताद्भयं,
सर्वं नामभयं भवेदिदमहो वैराग्यमेवाभयं।।
भोग में रोग का भय है, सुख में क्षय होने का, धन में राजा का और अग्नि का, दास को स्वामी का, विजय में शत्रु का, कुल में खोटी स्त्री का, सम्मान में अपमान का, गुणों में दुष्ट का, शरीर में मृत्यु का सभी जगह भय है, 'केवल वैराग्य ही अभय है'।

12 **माता शत्रुः पिता वैरी, येन वालो न पाठितः।**
शोभते न सभामध्ये, हँसमध्ये वको यथा।।
वह माता शत्रु है, पिता बैरी है जिसने अपने बालक को नहीं पढ़ाया क्योंकि जैसे हँसों के मध्य बगुला सुशोभित नहीं होता है वैसे ही अशिक्षित पुत्र सभा में सुशोभित नहीं होता है।

13 **लालनात् बहवोदोषास्ताडनाद् बहवो गुणाः।**
तस्मात् पुत्रं च शिष्यं च ताडयेत् न तु लालयेत्।।
संतान और शिष्य को लाड़ करने से उनमें बहुत दोष उत्पन्न हो जाते हैं और प्रताड़ित करने से उनमें बहुत गुण उत्पन्न होते हैं इसलिए पुत्र और शिष्य को यथासम्भव प्रताड़ित करना चाहिए लाड़ नहीं।

14 **लालयेत् पञ्चवर्षाणि दशवर्षाणि ताडयेत्।**
प्राप्ते तु षोडशे वर्षे पुत्रे मित्रवदाचरेत्।।
पाँच वर्ष तक लाड़-प्यार करना चाहिए, दस वर्ष डांटकर संस्कारित करना चाहिए और सोलह वर्ष के बाद पुत्र के साथ मित्र के समान व्यवहार करना चाहिए।

15 **प्रथमेनार्जिता विद्या, द्वितीयेनार्जितं धनं।**
तृतीये न तपस्तप्तं, चतुर्थे किं करिष्यति।।
बाल अवस्था में विद्या अर्जित नहीं की, युवा अवस्था में धन अर्जित नहीं किया, प्रौढ़ अवस्था में तपस्या नहीं की तो वृद्ध अवस्था में क्या करेगा ?

16 **यस्य त्रिवर्ग शून्यानि, दिनान्यायान्तियान्ति च।**
स लोहकार भस्त्रेव, श्वसन्नपि न जीवति।।
जिसके दिन धर्म-अर्थ-काम पुरुषार्थ से शून्य व्यतीत होते हैं वह लुहार की भस्त्रा के समान सांस लेता हुआ भी नहीं जीता है। अर्थात् धर्म को मुख्य रखकर प्रत्येक कार्य करना चाहिए।

17 **गुणाः सर्वत्र पूज्यन्ते, पितृवंशो निरर्थकः।**
वासुदेवं नमस्यन्ति, वसुदेवं न ते जनाः।।
पिता का वंश निरर्थक है गुण ही सर्वत्र पूजे जाते हैं, लोग कृष्णजी को नमस्कार करते हैं उनके पिता को नहीं।

18 **गुणाः कुर्वन्ति दूतत्वं, दूरेऽपि वसतां सतां।**
केतकी गंधमाघ्राय, स्वयमायान्ति षट्पदाः।।
सज्जनों के दूर रहने पर भी गुण दूत की तरह काम करते हैं जिस प्रकार केतकी की गन्ध को सूंघकर भोरें स्वयं आ जाते हैं।

19 **यौवनं जीवितं चित्तं, छाया लक्ष्मीश्च स्वामिता।**
चञ्चलानि षडेतानि, ज्ञात्वा धर्मरतो भवेत्।।
यौवन, जीवन, मन, छाया व सौन्दर्य, लक्ष्मी और स्वामित्व ये छह चञ्चल हैं ऐसा जानकर धर्म में सलग्न होना चाहिए।

20 **दारिद्रं नाशनं शीलं, दानं दुर्गति नाशनं।**
अज्ञान नाशिनी प्रज्ञा, भावना भव नाशिनी।।
दरिद्रता सज्जन स्वभाव का नाश करती है, दान दुर्गति का नाश करता है, बुद्धि अज्ञान का नाश करती है और सद् भावना भव का नाश करती है।

21 **यादृशं भक्षयेदन्नं तादृशी जायते मतिः।**
दीपोऽपि भक्ष्यते ध्वान्तं कज्जलं च प्रसूयते।।
जैसा व्यक्ति अन्न खाता है वैसी बुद्धि होती है, जैसे दीपक अन्धकार खाता है तो काजल का वमन करता है।

22 देश और विदेश के भेद से संसार दो भागों में बँटा है- देश में भगवत्ता है, विदेश में भौतिकता है। देश में पवित्रता है, विदेश में पतन है। देश में वीतराग विज्ञान की शिक्षा दी जाती है, विदेश में भौतिक निर्माण की शिक्षा दी जाती है। देश धर्म को लेकर आगे बढ़ता है, विदेश धन के पीछे भागता है। देश में आत्मा को शुद्ध करने का उपदेश दिया जाता है, विदेश में देह को सम्भालने का उपदेश दिया जाता है। देश में मन्दिर हैं, जिससे संस्कार मिलते हैं, विदेश में सिनेमा घर हैं, जिनमें भौतिक जीवन जीने की शिक्षा मिलती है।

23 **स्त्री दुःख**-1.परतन्त्रता का दुःख 2.पति के दुर्लभ होने पर शरीर को व्यर्थ समझती है 3.सपत्नि के होने का दुःख 4.मासिक धर्म से होने का दुःख 5.बन्ध्या होने का दुःख 6.विधवा होने का दुःख 7.प्रसूति होने का दुःख 8.अन्धी सन्तान होने का दुःख 9.पति के नहीं चाहने का दुःख 10.भाग्य हीन पति मिलने का दुःख 11.लड़की-लड़की ही गर्भ में आने का दुःख, 12.बार-बार मृत सन्तान होने का दुःख 13.बिल्कुल अनाथ हो जाने का दुःख 14.गर्भ धारण करने का दुःख, 15.पति के जीवित रहते हुये वियोग होने का दुःख 16.हृदय पीड़ा कारक रोग होने का दुःख।

24 **कुम्भकार मिट्टी का घड़ा बनाकर** उसे तपने के लिये भट्टा में रख देता है, पकने के पहले उसमें पानी की एक बून्द भी नहीं पड़ने देता, और पकजाने पर जल घड़े का कुछ बिगाड़ नहीं

पाता, उसी प्रकार माता-पिता बच्चों को कठोर अनुशासन में रखते हैं, तो वे बड़े होने पर बिगड़ नहीं पाते हैं।

25 यौवन अवस्था में एक स्त्री होती, बुढापे में जरा, तृष्णा, गुस्सा ये स्त्रियाँ और बढ़ जाती हैं।

26 जन्म से बाटल में दूध पीने वाला, जीवन में पानी हो या शराब बाटल से ही पियेगा,माँ-बाप ने बच्चों को नौकरों के हाथ थमा दिया, तो वे भविष्य में नौकर ही बनेगें।

27 तम्बाकू के सेवन से प्रतिवर्ष अस्सी लाख मौतें होती हैं।

28 पिता-पुत्र में, पति-पत्नि में, भाई-बहिन में, गुरू-शिष्य में स्वर्ग-नरक व्यवहार से ही बनता है।

29 बुढ़ापे में जवानी से ज्यादा शौक होता है। भभकता है दीप जब बुझने को होता है।

30 फूलों का सार इत्र है, जीवन का सार चरित्र है।

31 बड़ों के सामने बड़े बनोगे तो विरोध होगा, छोटे बनकर के रहोगे तो आशीष मिलेगा।

32 हर्ष से परिपूर्ण दृष्टि और प्रीति से लहराता मन, सज्जनों को इतना ही सत्कार उचित जान पड़ता हैं, शेष कार्य शिष्टाचार का विस्तार है।

33 लवण सागर और क्षीर सागर शास्त्रों में दो सागर कहें हैं, जिसके मन में प्रेम, करूणा, भक्ति का भाव हो वह क्षीर सागर हैं, जिसके मन में काम, क्रोध, मद, मोह, मान, मत्सर हो वह लवण सागर है।

34 उतना भार उठाओ साथी, जितना ले चल सकते हो। उतनी बात कहो तुम मुख से, जितनी पूर्ण कर सकते हो।

35 **आप की संस्कृति वस्त्रों पर हमारी संस्कृति चरित्र पर-** विवेकानन्दजी अमेरिका गये, लोगों ने देखा, ये एक चोला पहन कर आये हैं, क्या यही विवेकानन्द हैं ? हम लोग समझते थे कि ये टिप-टॉप होंगे, फिर एक व्यक्ति ने पूँछ लिया कि आपके देश की यही संस्कृति है ?विवेकानन्दजी ने कहा आप की संस्कृति वस्त्रों पर टिकी है, हमारी संस्कृति चरित्र पर टिकी है, वस्त्र तो दर्जी बना सकता है पर चरित्र का निर्माण सिर्फ गुरू ही कर सकते हैं।

36 जीवन में मिठास चाहिए तो अपने व्यवहार, विचार, आचार में माधुर्य लाओ, चाय में चीनी डालना भूल जाओं तो कोई बात नहीं, मगर बोली में चीनी डालना मत भूलो, विना चीनी की चाय तो डायबिटीज के मरीजों के काम आती है, विना मिठास की वाणी किसी के काम में नहीं आती है।

37 मन्दिर और सन्तो के पास जाकर सिर झुकाते हैं क्योंकि सिर में गुस्से का, गर्दन में मान का, हृदय में माया का और पेट में लोभ का वास होता है, अर्थात् हम देव-शास्त्र-गुरु के सामने झुक कर अपनी कषायों का विसर्जन करते हैं।

38 पुरुष गुस्सा करना छोड़ दे और स्त्री जिद करना छोड़ दे तो घर में खुश हाली छा जाये।

39 शिक्षा जीवन निर्वाह की कला सिखाती है, संस्कार जीवन निर्माण की कला सिखाते हैं।

40 **न कोई प्यार, न कोई प्रशंसा-** ईमानदार व्यक्ति किसी विद्वान के पास पहुँचा, बोला मैं ईमानदारी से जीवन यापन करता हूँ, पर कोई मेरी प्रशंसा नहीं करता और न प्यार, विद्वान ने कहा ईमानदारी अच्छी बात है, पर उसके साथ मधुर व्यवहार और सेवाभाव भी जुड़ा रहना चाहिये, यदि आप इतना करते हो तो फिर प्रशंसा की कमी नहीं रहेगी और न प्यार पाने की शिकायत करना पड़ेगी।

41 इंसान की भूख इतनी बढ़ गयी कि वह संस्कृति और नैतिक मूल्यों को भी खाने लगा है।

42 पहले आदमी जङ्गली था, तब कन्दमूल खाता था, फिर थोड़ा समझदार हुआ तो अन्न खाने लगा, और आधुनिक हुआ तो रुपया कमाने लगा, ध्यान रखना पेट रुपयों से नहीं रोटी से भरेगा।

43 **देश के प्रति ईमानदार-** जापान में दो भारतीयों ने सिगरेट पीकर सड़क पर डाल दी, कुछ बच्चों ने उठाकर कचरादान में डाल दी, पूँछा आप क्या कर रहे हैं ? बच्चों ने कहा ! हम अपने देश की सड़कों को गन्दा नहीं देख सकते, आप अतिथि हैं इसलिये आपका स्वागत है।

44 एक भारतीय विदेश इलाज कराने गया, उसको दूध की आवश्यकता थी, दूध वाले से माँगा, उसने कहा आज नहीं मिल सकता, कण्ट्रोल का दूध है, तुम चाहों तो मकान मालिक से लेलो, भारतीय ने कहा तुम पानी क्यों नहीं मिला लेते, उसने कहा तुम देश के गद्दार हो, विवाद हो गया, मकान मालिक ने उसको घर से निकाल दिया, गद्दार को हमारे देश में स्थान नहीं है।

45 **अच्छे इंसान बनाने की योजना-** आइंस्टीन से किसी ने पूँछा संसार में इतना दुःख कलह क्यों है, जबकि विज्ञान ने एक से बढ़कर एक सुख-साधन दिये हैं, उत्तर मिला कि बस एक कमी रह गयी कि अच्छे मनुष्य बनाने की योजना नहीं बनी, देश व सम्प्रदाय के पक्षधर सभी दिखते हैं, पर ऐसे लोग नहीं दिखते जो अच्छे इंसान बनाने की योजना बनाये।

46 **व्यर्थता-** गुण न हो तो रूप व्यर्थ है, नम्रता न हो तो विद्या व्यर्थ है, साहस न हो तो हथियार व्यर्थ है, होश न हो तो जोश व्यर्थ है, उपयोग न हो तो धन व्यर्थ है, भूख न हो तो भोजन व्यर्थ है,

परोपकार जो न कर सके उसका जीवन व्यर्थ है।

47 हम प्रगति की ऊँचाईयों को छू रहे हैं, और दूध की जगह दारू पी रहे हैं।

48 **घड़ी (WATCH) का रहस्य-** Word -शब्द-हर समय जो शब्द बोलते हो वह हित-मित-प्रिय हो A=Action-चेष्टा- हर समय जो कार्य करते हो उसे ठीक और सहजता से करो। T=Time-समय-हाथ से निकला समय वापस नहीं आता, हर क्षण का महत्व समझें। C=Character-चरित्र- अपना चरित्र अच्छा रखो कमाने में समय लगता है खोने में नहीं। H=Health-स्वास्थ्य-स्वास्थ अच्छा रखों।

49 **संस्कार हीन जैनी-** उड़ान भरते हुये वायुयान खराब हो गया, परिचारकों ने घोषणा कर दी कि सुरक्षा असम्भव, उसमें 73 व्यक्ति यात्रा कर रहे थे, घोषणा सुनते ही ईसाईयों ने बाइबिल पढ़ना शुरू कर दिया, मुसलमानों ने कुरान की आयतें बोलना शुरू कर दीं, कोई गीता का पाठ करने लगा, उसी वायुयान मे तीन जैनी भाई थे वे कुछ भी स्मरण न कर दरवाजे की ओर देख रहे थे, कि दरवाजा खुले और नीचें कूदें, उनके पास न पाठ करने को कुछ था न भगवान का स्मरण, क्योंकि वे संस्कार हीन थे।

50 ससुराल में बेटी को कोई भला-बुरा कह दे तो सह लेती है, और यदि उसके माँ-बाप को कुछ कहा, तो झाँसी की रानी बन कर सामने आती है, इधर बेटों के सामने बहु सास-ससुर से कुछ कह दे, तो निकम्मे बेटे चुप्पी नहीं तोड़ते हैं।

51 जङ्गल के राजा शेर को खरगोश ने अपनी युक्ति से कुये में पटक कर जङ्गल के सब जीवों को सुखी कर दिया, इसी तरह पाप रूपी शेर को संसार रूपी कुये में पटक कर अपनी आत्मा को सुखी करना चाहिए।

52 **कुत्ते को काँच का महल-** कुत्ते को काँच के महल में रात को छोड़ दिया वह अपने ही प्रति बिम्ब को देखकर रातभर भौंकता रहा कोई दूसरा कुत्ता नहीं था, स्वयं की छाया थी, ये संसारी प्राणी भी पर को नहीं निज को भोग कर स्वयं मर रहा है।

53 **पेड़, पशु और मनुष्य में अन्तर-** पेड़ के पास न तो गति है और न ही दिशा, पशु के पास गति तो है लेकिन दिशा नहीं, पर मनुष्य के पास गति भी है और दिशा भी, अतः मनुष्य सम्पूर्ण है, पशु कभी उसी जीवन में इंसान नहीं बन सकता, पर इंसान कभी भी उसी जीवन में पशु बन सकता है, मनुष्य में प्रभु और पशु दोनों बनने की सम्भावना है, मनुष्य एक सीढ़ी है, एक ही सीढ़ी ऊपर चढ़ने के भी काम आती है और नीचे उतरने के भी काम आती है।

54 **उताबला सो बाबला-** एक दिन कड़ाके की ठण्ड थी, उस दिन रानी चेलना का हाथ रजाई के बाहर रह गया, ठण्ड के कारण हाथ अकड़ गया, रानी की नींद खुली और हाथ की दशा देखकर मुँह से निकल गया, उनका क्या होगा ? राजा ने आवाज सुनी लेकिन अभिप्राय नहीं समझ सका, उसने सोचा चेलना का सम्बन्ध किसी और से भी है, इसीलिए उसको याद कर रही है, राजा क्रोध में तमतमा उठा, म्यान से तलवार खींचकर रानी को मारने तैयार हो गया, उसको सामने एक पङ्क्ति लिखी दिखी

सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदं।

बृणुते हि विमृस्य कारणं गुण लुब्धा स्वमेव सम्पदा।।

अर्थात् अचानक कोई काम नहीं करना चाहिए, क्योंकि 'अविवेक' आपत्तियों का बहुत बड़ा स्थान है, जो सोच विचार कर काम करते हैं, उन्हें गुणों की लोभी सम्पत्तियाँ स्वयं प्राप्त हो जाती हैं, यह पढ़कर राजा सहम गया, सोचा मारने के पहले पूँछ लें ये किसको याद करती है ? राजा ने चेलना को जगाया और पूँछा तुम किसको याद कर रही हो ? चेलना ने कहा स्वामिन् ! कल अपन लोगों ने जङ्गल में नदी किनारे विराजमान मुनिको देखा था, वे ऐसी ठण्ड में वहाँ रहते हैं, मैं तो महल के अन्दर रजाई में हूँ, आज रजाई के बाहर हाथ रहा तो ये दशा हो गयी, तब मैंने सोचा उन मुनि का क्या होगा? राजा ने कहा ओहो! इसको स्वप्न में भी साधु दिखाई देते हैं, विना पूँछे तलवार चला देता तो मैं अपनी प्राण प्रिया को खो देता।

55 **बुद्धि, लज्जा, हिम्मत, तन्दुरुस्ती का निवास कहाँ-** एक यात्री को यात्रा में क्रमशः चार स्त्रियाँ मिलीं, सबसे पहले खूबसूरत स्त्री मिली, यात्री ने पूछा! तुम कौन हो और कहाँ रहती हो? स्त्री ने जबाव दिया मैं बुद्धि हूँ और मनुष्य के दिमाग में रहती हूँ। दूसरी ने कहा मेरा नाम लज्जा है, और मैं मनुष्य की आँखों में रहती हूँ, शालीनता और सद्व्यवहार मेरा स्वभाव है। तीसरी स्त्री ने कहा मेरा नाम हिम्मत है, और मैं मनुष्य के हृदय में रहती हूँ। चौथी स्त्री ने कहा मेरा नाम तन्दुरुस्ती है और मैं मनुष्य के पेट में रहती हूँ। वह व्यक्ति बढ़ा और उसे चार पुरूष मिले, पहले पुरूष ने कहा मेरा नाम क्रोध है और मैं मनुष्य के दिमाग में रहता हूँ। यात्री ने कहा वहाँ बुद्धि रहती है तुम कैसे रह सकते हो ? क्रोध ने कहा जब तक मैं नहीं आता हूँ तभी तक बुद्धि रहती है, और मेरे आते ही बुद्धि वहाँ से भाग खड़ी होती है। दूसरे पुरूष ने कहा मेरा नाम लोभ है और मैं पुरूष की आखों में रहता हूँ, यात्री ने कहा वहाँ लज्जा रहती है, लोभ ने कहा

कुछ धन सम्पत्ति रखकर देखिये कि लज्जा किस प्रकार लोभी की आँखों से भागती है। तीसरे पुरूष ने कहा मेरा नाम भय है, और मैं लोगों के हृदय में रहता हूँ, यात्री ने कहा वहाँ हिम्मत रहती है तुम कैसे रह सकते हो ? भय ने कहा लोग अन्तःकरण की आवाज नहीं सुनते और गलत कार्य करते रहते हैं और भयभीत भी रहते हैं, परिणाम स्वरूप हिम्मत वहाँ से चली जाती है, चौथे पुरूष ने कहा मेरा नाम रोग है और मैं मनुष्य के पेट में रहता हूँ। यात्री ने टोका लेकिन वहाँ तन्दुरुस्ती रहती है, पुरूष ने कहा बिल्कुल गलत, जब तक लोग सात्विक, सुपाच्य आहार की जगह गरिष्ठ भोजन, मांस, मदिरा, तम्बाकू आदि का सेवन करते रहेगें और नियमित जीवन नहीं जियेगें तब तक तन्दुरुस्ती वहाँ रह ही नहीं सकती, वहाँ फिर मैं ही रह सकता हूँ, यात्री स्त्री-पुरूषों के रूप में मिले सत्य के प्रकाश में आगे बढ़ गया।

56 **बूढ़े को घण्टी का सहारा**-चौथी मञ्जिल पर बूढ़े पिताजी को रुका दिया एक घण्टी रख दी, छाती के ऊपर छप्पर पर एक रस्सी बाँध दी, उठना हो तो रस्सी का सहारा ले कर उठ जाना, खाने की इच्छा हो तो घण्टी बजा देना, चार साल का बच्चा घण्टी उठा लाया, तीन दिन तक किसी को ख्याल नहीं आया, चौथे दिन बूढ़े पिता की लाश मिली।

57 **लोभी और मात्सर्य**- एक व्यक्ति पर देवी प्रसन्न हो गयी, प्रकट होकर बोली जो मांगना हो मांग लो, जो माँगोगे उससे दूना नहीं माँगने वाले पड़ोसी को मिलेगा, पहले अब कौन मांगे, जो माँगे वो घाटे में, ईर्ष्यालु बोला मेरी एक आँख फूट जाय, और मेरे आँगन में एक कुँआ खुद जाय, विना माँगने वाले की दोनों आँखें फूट गयी, दो कुआं खुद गये, बेचारा अन्धा कुए में गिर कर मर गया, दूसरों को दुःखी करने से हम दुःख उठाते हैं।

58 जिसके सिर पर माँ-बाप का हाथ, वह कभी नहीं होता अनाथ।
सद्गुण होते उसके साथ, दुनिया में होता ऊँचा उसका माथ॥

59 लोग भगवान् को भी दोष देने से नहीं मानते, एक व्यक्ति बोला मैं ईश्वर से परेशान हूँ, लता में बड़े कद्दू लगाए और पेड़ में छोटे आम लगाए, जब आम के पेड़ के नीचे सोया और नाक पर आम गिरा तब समझ में आया कि भगवान् ने ठीक किया है। लोग अज्ञानता वश किसी की भी समीक्षा करने लगते हैं।

60 "**अभ्यास**", रानी बछड़े के पास- राज महल के छत पर बैठे राजा ने रानी से कहा कि अपन अपने बल का परीक्षण करें कि अपन दोनों में कौन बलवान है ? दोनों तैयार हो गये, बल का कैसे पता लगायें, राजा ने कहा ! वह गाय खड़ी है उसके छोटे से बछड़े को वहाँ से यहाँ तक

लाया जाए, पहले रानी गयी और पहले खण्ड तक बछड़े को ले आयी, फिर राजा गया वह भी वहाँ तक ले आया, दोनों समान एक बल वाले हुये, अब रानी छः महीने तक उस बछड़े को रोज लाती रही, राजा ने उस दिन से कोई अभ्यास नहीं किया, छः माह बाद रानी बोली अपने बल की पुनः परीक्षा कर लें, उसी बछड़े को लाने की बात हुयी, रानी तो बछड़े को उठाकर तत्काल विना थके ऊपर ले आयी, राजा उस बछड़े को उठा ही नहीं सका, राजा को बडा खेद हुआ सोचने लगा मेरी शक्ति कैसे क्षीण हुयी, तब रानी ने कहा हे राजन् ! खेद मत करो यह अभ्यास की शक्ति है।

61 **वृथा वृष्टिः समुद्रेषु, वृथा तृप्तस्य भोजनं।**
वृथा दानं समर्थस्य, वृथा दीपो दिवापि च।।
समुद्र में पानी का बरसना व्यर्थ है, जिसका पेट भरा है उसको भोजन कराना व्यर्थ है, समर्थ को दान देना व्यर्थ है और दिन में दीपक जलाना भी व्यर्थ है।

62 **एकः स्वादु न भुञ्जीत्, स्वार्थमेको न चिन्त्येत्।**
एको न गच्छेदध्वानं नैकः सुप्तेषु जागृयात्।।
समूह में अकेले स्वादिष्ट भोजन नहीं करना चाहिए, अकेले अपना स्वार्थ सिद्ध नहीं करना चाहिए, रास्ते में अकेले नहीं चलना चाहिए, तथा सब सो रहे हों तब अकेले जागृत नहीं रहना चाहिए।

63 **सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयः।**
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत्।।
सभी सुखी हों, सभी निरोगी हों, सभी कल्याण को प्राप्त हों, कोई दुःखी न हो।

64 बालक से सरलता, जवान से जोश, बूढ़े से उदासी लेने योग्य हैं।

65 **पाश्चात्य संस्कृति-** ए से एप्पल अर्थात् खाने से शुरू होती है, जेड से जेबरा(गधा) बनाकर समाप्त होती है, भारतीय संस्कृति अ से अरहन्त से शुरू होती है, ह से हरि अर्थात् भगवान् के नाम पूर्वक पूर्ण होती है।

66 यूज एंड थ्रो का ज़माना है, लोग वस्तु को प्रयोग करके फेंकते हैं, लेकिन लोगों ने यह नियम माँ-बाप के साथ भी बना लिया है, अपना स्वार्थ सिद्ध करके बृद्धाश्रम में छोड़ देते हैं।

67 नौ माह माँ ने गर्भ में रखा, लेकिन वह बेटा माँ को फ्लेट में भी नहीं रख पाता है।

68 प्रत्येक समय संवेदनशील बने, अपने प्रति सहनशील बने, प्राणी मात्र पर स्नेहशील बने।

69 **पहले बाल परीक्षा फिर वैसी शिक्षा-** पूर्व में बच्चे पाँच वर्ष के हो जाते थे, तव उनके सामने तलवार, माला, तराजू, आदि रख देते थे, उससे कहते उठाओ तुम्हे क्या पसन्द है, यदि तलवार उठाई तो सैनिक बनेगा, माला उठाई तो माला जपेगा, तराजू उठाई तो व्यापारी बनेगा, वैसी ही शिक्षा उसको देते थे।

70 **कपूत का जबाव, माँगा माँ से दवा का हिसाब-** बेटा बोला, माँ मैंने तुम्हारी साड़ी और दवाई में इतना खर्च किया है उसका बिल दो, माँ ने कहा बेटा तुम्हे याद नहीं मैंने तुम्हारे लिये कितना खर्च किया, नौ माह पेट में रखा, गर्मी, ठण्डी, वर्षा में स्वयं न सोकर तुम्हे सुलाया भूखे रहकर तुम्हे खिलाया, मैं गीले में तुम्हे सूखे में सुलाया, सभाओं में अपमान सहा, मैंने तुमसे कभी बिल नहीं माँगा?

71 न्याय पूर्वक धन का अर्जन न होने से सन्तान भाग रही है, तलाक दे रही है, सलफ़ास खा रही है।

72 जिस प्रकार घड़ा बनने पर यदि अग्नि में नही पकाते हैं तो पानी नही भर सकते, उसी प्रकार सन्तान को उत्पन्न किया पर संस्कार नहीं दिया तो कच्चे घड़े की तरह काम में नहीं आएगी।

73 बच्चे गुरुओं(माता-पिता-गुरु) से संस्कार पाते थे तो गुरू बनते थे, अब नौकरों से संस्कार पाते हैं तो नौकर बनते हैं।

74 **संस्कारित शिला-**

उद्यान में लतायें अपनी सुगन्धी दशों दिशाओं में फैला रही थी, वहीं एक विशाल शिला पड़ी थी, लतायें उसको देखकर हँसती और कहती की तुम इतने विशालकाय होकर भी पैरों से रौंदे और ठुकराये जाते हो, वह लज्जित होता था, उस उद्यान में एक शिल्पी आया, उसने संस्कारित करके मूर्ति बना दी, पुष्प मूर्ति के चरणों में पड़ा था, पुष्प ने पूँछा आपकी ये अवस्था कैसे हुयी कि मैं लोगों के सिर पे बैठने वाला, आज आपके चरणों में पड़ा हूँ ? उत्तर दिया ! शिल्पी ने 'अनावश्यक कलेवर हटाकर' संस्कारित कर दिया गुरु ने प्राणप्रतिष्ठा करके मुझे पूज्य बना दिया, 'जन्मतो जायते शूद्रः संस्कारात् द्विजमुच्यते' अर्थात् जन्म से सभी शूद्र होते हैं, संस्कार से ही उच्च कुलीन माने जाते हैं।

75 **मिट्टी का घड़ा, महिला के शिर पर खड़ा-**

जमीन में पड़ी मिट्टी ने घड़े से पूँछा, तुम्हारा और हमारा अंश और वंश एक है, फिर तुम सिर पर विराजे हो और मैं पैरों के नीचे पड़ी हूँ ? घड़े ने कहा बहिन सत्य है किन्तु हमने खूब संस्कार रूप यातनाएँ सही हैं, कुम्हार ने सबसे पहले परिवार से जुदा किया, खोदा, पानी में गलाया, फिर रौंदा, लौंदा बनाकर चाक पर रखकर घुमाया, चीवर(कपड़े) से काटा, लकड़ी से पीटा, धूप में सुखाया,

अवा में पकाया, इतने कष्ट सहे, तब सुन्दरी के सिर का सिंहासन मिला है, इसी प्रकार मानव को संस्कार मिलता है, तो पूज्य बनता है, गर्भ में भी संस्कार मिलता है, अभिमन्यु ने चक्रव्यूह में प्रवेश करना गर्भ में ही सीख लिया था, किन्तु सुभद्रा को नींद आने से चक्रव्यूह से निकलना नहीं सीख पाया था, संस्कार से मुनि या राजा बनते हैं, राजरानी मदालसा ने अपने बैटों को मुनि के संस्कार डाले, खिलाती, सुलाती, झुलाती, पिलाती तब

''सिद्धोऽसि बुद्धोऽसि निरञ्जनोऽसि, संसार माया परिवर्जितोऽसि।
संसारस्वप्नं तज मोहनिद्रां, मदालसा वाक्यमुवाच पुत्र!।।''

हे पुत्र ! तु सिद्धों के समान है, केवलज्ञानियों के समान है, कर्म कलुषता से रहित है, संसार की माया से रहित है, तु संसार को स्वप्न के समान समझकर मोह रूपी निद्रा को छोड़ इत्यादि संस्कारों से सात बेटे मुनि बन गये, तब ससुरजी ने कहा बेटा एक पुत्र ऐसा दो, जो राज्य को चला सके, तब मदालसा ने उसको राजा बनने के संस्कार डाले ''त्वं शूरोऽसि (तुम शूर हो), त्वं वीरोऽसि (तुम वीर हो)'' इत्यादि संस्कार देने से वह राजा बना।

76 **डॉक्टर या डाकू-**

माँ बेटे को डाकू भी और डॉक्टर भी बना सकती है, घड़ा जब तक कच्चा है, तब तक चोट सहता है, पकने के बाद नहीं, एक बच्चे ने स्कूल से पेन चुरा लिया, घर आया तो माँ ने मुस्करा दिया, माँ की मुस्कराहट से वह आगे चलकर डाकू बन गया, फाँसी की सजा हुयी, अन्तिम इच्छा माँ के दर्शन की प्रकट की, माँ जैसे ही पास में आयी लड़के ने उसकी नाक काट दी, पूँछा ऐसा क्यों किया ? उसने कहा मुझे माँ ने डाकू बनाया है, इसलिये फाँसी मेरी नही इनको होना चाहिए, जिस दिन मैं पेन चुराकर लाया था, तब माँ ने डॉटा नहीं मुस्कराया था, अगर उसी दिन डांटा होता तो मैं दुबारा चोरी करने का साहस नहीं कर सकता था।

77 दस लाख पाठक जो संस्कार डालते हैं, उतने संस्कार एक पिता डाल सकता है, एक लाख पिता जो शिक्षा देते हैं वे एक माता दे सकती है।

78 **घुड़साल का तोता-** राजा ने दो तोते पलवाये एक घुड़साल में, एक रनवास में रखा, राजा एक दिन घुड़साल गया तो तोता बोला ! रे बदमास पीछे हट जा, राजा को सुनकर क्रोध आया मेरा नमक खाकर मेरा अपमान करता है, इसको मरवा दो, राजा रनवास गया वहाँ का तोता राजा को देखकर दूर से ही मीठे नम्र स्वर में बोला, हे महाराज साहब स्वागत है, पधारिये, आसन

ग्रहण कीजिये हे रानी, राजा साहब पधार रहें है, स्वागत करों, इसका व्यवहार देखकर राजा आश्चर्य में पड़ गया, एक माँ के दो बच्चे, एक भद्र दूसरा अभद्र ऐसा क्यों, मन्त्री जी ने जवाब दिया राजन् ! ये सङ्गति व संस्कार का फल है, अपने आचरण से लोग आचरण सीखते है, गाँधी जी ने पहले अवगुण छोड़े फिर दूसरों से छुड़वाये।

79 **युग के आदि में भरत**-बाहुबली लड़े थे, इसलिए हमने लड़ना सीखा, बाद मे उन्होंने संयम लिया, पर हमने संयम लेना नहीं सीखा, महाभारत सुनकर आये किसी व्यक्ति से पूँछा कि क्या सीखा ? बोला ! चाहे लड़ मरो, मगर किसी को पाँच पैसा भी मत दो, अर्थात् व्यक्ति बुराई ग्रहण करता है अच्छाई नहीं यह उसकी कमी है।

80 **मिट्टी के बर्तन**- पत्नी के कहने से बेटे ने माँ-बाप को खेत में रखा, एवं उनको मिट्टी के बर्तनों में भोजन देता था, जब उसके बेटे ने देखा, तो वह भी अपने पापा के लिए एक साथ मिट्टी के वर्तन ले आया, पापा के पूँछने पर उसने कहा ! आपके लिए जरुरत पड़ेगी इसलिए ले आया हूँ, सुन कर वह डर गया, एवं अपने माँ-बाप को घर लाकर प्रेम से सेवा करने लगा।

81 बुढापे में माँ-बाप आँखों से अन्धे होते हैं, पर हृदय से अन्धे नहीं होते हैं।

82 आप कुछ भी पढ़ लो, अपनी भाषा सीखो, माँ की भाषा समझो। लड़का पढ़ लिख कर आया, माँ ने गले लगाया, आँसु बहाये, आशीर्वाद दिया, लड़का ट्राँसलेटर से पूँछता है, ये क्या कह रहीं हैं ? उसने समझाया 'mydear son'। इतनी योग्यता तो हो कि अपनी माँ की भाषा को समझ सके।

83 पुत्र जन्म लेते ही यौवन हरण कर लेता है, बाल्यावस्था में भोजन बटा लेता है, समर्थ होने पर धन हर लेता है, पुत्र के समान बैरी कोई नहीं होता है।

84 **योगत्रय का संस्कार-मन का संस्कार**- सीता ने राम से कहा, कि लोगों के कहने से मुझे छोड़ा, पर धर्म नहीं छोड़ना। सीता रावण के यहाँ रही पर रावण का रूप और वैभव देखकर भी अडिग रही यह मन का संस्कार है। वचन का संस्कार जैसे- अंधे व्यक्ति से''हे सूरदास जी ! यहाँ से कोई निकला है'' ? मन सन्तुष्ट करने वाले वचन बोलना वचन का संस्कार है।काय का संस्कार- लोह मयी आभूषण पहनाने पर भी पाण्डव अडिग रहे, सुकौशल स्वामी को व्याघ्री ने खाया पर वे अडिग रहे।

85 **प्रकृति, विकृति, संस्कृति-** भूख लगने पर खाना प्रकृति है, बिना भूख के खाना विकृति है, अतिथि को खिलाकर खाना संस्कृति है।

86 **मैं रिश्वत वालों का अन्न नहीं लेता-** एक थानेदार के पड़ोस में एक भिखारी भीख माँग रहा था, पड़ोसी ने दुत्कार दिया, वह आगे बढ़ गया, थानेदार को दया आई, भिखारी को आवाज देते हुये कहा! ठहरो मैं खाना भेजता हूँ, भिखारी अनसुनी करके आगे बढ़ गया, थानेदार ने समझा इसने सुना नहीं, उसने नौकर से कहा उसे रोटी दे आओ, नौकर ले गया, तो भिखारी ने मनाकर दिया, कहा ! मैं रिश्वत लेने वाले का अन्न-जल ग्रहण नहीं करता, नौकर ने भिखारी को चार गालियाँ सुनाई और वापस आ गया, उसने थानेदार को बताया, थानेदार सुनकर सन्न रह गया, बहुत गुस्सा आई दर-दर का भिखारी होकर मेरी उपेक्षा करता है, लेकिन मन आत्म ग्लानि से भर गया, सब कुछ होने के बाद भी थानेदार को उथल-पुथल मच गई, उसने रिश्वत लेना छोड़ दिया, एक वर्ष बाद वही भिखारी दरवाजे पर खड़ा भीख माँग रहा था, 'दाता रोटी दे दो' थानेदार ने कहा मेरे जैसे रिश्वत खोर का तुम अन्न कैसे खाओगे ? भिखारी ने हँसकर कहा! आप रिश्वत नहीं लेते, आपकी चरण रज माथे, थानेदार ने उसके चरण पकड़ लिए, और कहा! तुम मेरे सच्चे शिक्षक हो।

पश्चात्ताप का रस, देखो कवि सरस

87 **हाय कुछ न कर सके न पीर पर की हर सके, रात बात में गयी प्रात खात में गया।**
फिर हमारी जिन्दगी से एक दिन निकल गया, जागरण के कोष से एक दिन निकल गया।।
जैसे-जैसे श्वाँस कम हो रही है देह से, मोह त्यों-त्यों बढ़ रहा है, आदमी की गेह से।
भावना के द्वार पर साधना के हाट पर, रात सोच में गयी प्रात खात में गया।
फिर हमारी जिन्दगी से एक दिन निकल गया, जिन्दगी के कोष से एक दिन निकल गया।।
इसलिये सुधार कर आज का न काल कर, हँस रही थी जो कली देखते ही ढह गयी।
रात चाह में गयी प्रात आह में गया, फिर सरस की जिन्दगी से एक दिन निकल गया।।

88 **कम खाना कम सोवना, कम दुनिया से प्रीत।**
कम बोलो मुख से वचन, यह साधु की रीत।।

89 सुख दु:ख दाता कोई न आन, मोह राग रुष दु:ख की खान।
निज को निज पर को पर जान, फिर दु:ख का नहीं लेश निदान।।

90 बड़े न होते गुणन बिन, विरद बढ़ाई पाय। कहत धतूरे को कनक, गहना गढ़यो न जाय।।

91 भला बुरा लखिये नहीं, आये अपने द्वार। मधुर बोल जस लीजिए, नातर अजस तैयार।।

92 धर्महानि सङ्क्लेश अति, शत्रु विनय कर होय। ऐसा धन नहीं लीजिए, भूखे रहिए सोय।।

93 धाम पराया वस्त्र पर, पर सय्या परनार। पर घर वसवौ अधम ये, त्यागे विवुध विचार।।

94 को स्वामी मम मित्र को, कहा देश में रीत। खरच किता आमद किती, सदा चिन्तवों मीत।।

95 दुष्ट तिया का पोषना, मूरख को समझाय। बैरी ते कारज परे, कौन नाही दु:ख पाय।।

96 विपदा को धन राखिये, धन दीजे रख दार। आतम हित को छाड़िये, धन दारा परिवार।।

वर्जनीय कार्य

97 जाके किये लाज आवे, जग में अजस पावे, घनेन सो वैर होय, पापहु की बढ़ती।
काय को कलेस होय, आपुस मे नेस (बिगाड) होय, नीचनि पे पेस होय, धर्म प्रीति हटती।
कुल को अचार जाय, क्रिया को प्रचार जाय, हेय-उपादेय की समझ दूर पड़ती।
देश, कुल, नृप, पुर, नीति के विरोधी, ऐसे कारज न करो, मीत तजो रीती अड़ती (विपरीत)।।

98 मञ्जिल उन्ही को मिलती है, जिनके सपनों में जान होती है।
पङ्खों से कुछ नहीं होता, हौसलों में उड़ान होती है।।

99 पानी पीना छानकर, कछु कष्ट न होय। जीव दया हो जायगी, पाप लगे न कोय।।

100 रोगी, भोगी, आलसी, शङ्का, हठी अज्ञान। ये दुर्गुण दारिद्र्य के सदा रहत भगवान्।।

★★★

"सप्तव्यसन"

1 **जुआ मांस और मदिरा वेश्या हिंसा चोरी जारी।**
सप्त व्यसन का सेवन करके करी नरक तैयारी।।

चाय

2 **कफ काटन, वादी हरन, धातु हीन, तन छीन।**
लोहू को पानी करे, दो गुण अवगुण तीन।।

तम्बाकू

3 **तकारतन नाशनं, मकारमति भ्रष्टकं।**
ककारकफ दायकं, अदन्ति ते मतिनाशकं।।

4 **इच्छा झगड़ा ज्ञान अरु, विद्या निद्राहार।**
खुजली मैथुन अरु व्यसन, सेवन ते बढ़ जाय।।

5 "**जुँआ**" से धर्म, लक्ष्मी, सद्बुद्धि, सुख, सत्य, सन्तोष, प्रतिष्ठा, निष्ठा, विश्वास और सद्गति ये दस वस्तुएँ नष्ट हो जाती हैं।

6 जुँआ- छोटा सा जुँआ सिर पर चढ़ जाये तो बैचेन होते हैं, यदि जुआ व्यसन शिर पर चढ जाये तो तन, मन, परिवार बैचेन होता है, जुआ हारने वाले को मृगमरीचिका की डोर में बाँध कर सर्वनाश के कगार पर लाता है, जीतने वाला लालच के मकड़जाल में फँसकर मारा जाता है, जुआ का खेल आग का खेल है, बर्बादी का अड्डा है, घर फूँककर देखा जाने वाला तमाशा है, देता कुछ है और लेता सब कुछ है, प्रलोभन का विष देता है और कुप्रवृत्तियों और विनाश को देता है।

7 "**मांस**" खाने वाला जीव भव-भव में अल्पायु, विकलाङ्ग, रोगी, नेत्र रहित, बहरा, दुर्जन, छोटे कद का, कोढ़ी और नपुंसक होता है।

8 कोई कहता है कि मांस जीव का शरीर है और फल-शाक आदि भी जीव का शरीर है, फिर मांस अखाद्य है और फल आदि खाद्य क्यों है ? इसके उत्तर में कहा गया है कि मांस तो जीव का शरीर है पर जीव का शरीर मांस हो, ऐसा नियम नहीं है, त्रस जीव का शरीर मांस है पर स्थावर का शरीर मांस नहीं है, जैसे पिता पुरुष ही है पर सब पुरुष पिता नहीं होते हैं।

9 जो अन्न मात्र अग्नि पर पकाया गया है अथवा घी मिलाकर पकाया गया है, मांस भक्षण का

त्यागी मनुष्य उस अन्न को बासी नहीं खावें, जहाँ मांस का दोष होने से बासा अन्न आदि भक्ष्य नहीं है वहाँ मदिरा, मुरब्बा तथा अचार आदि की कथा ही क्या है ?

10 माँस के त्यागी पुरुषों के द्वारा घुना अन्न, गोभी आदि पत्तियों का शाक, मक्खन, जमीकन्द, मूली तथा चमड़े के पात्र में रखा हुआ पानी आदि भी छोड़ा जाता है।

11 एक ओर सब शास्त्रों को रखो और एक ओर "**ब्रह्मचर्य**" को, दोनों का फल बराबर है, इसी तरह एक ओर सब पाप रखो और दूसरी ओर "**मद्यपान**" रखो, दोनों का पाप समान होता है।

12 यदि अपने शरीर पर लगी हुई सूक्ष्म चींटी भी दु:ख देती है तो फिर ऐसा जानने वाले लोगों के द्वारा बाण से मृग को क्यों मारा जाता है, "**शिकार**" क्यों किया जाता है ?

13 विना दी हुई वस्तु का जो ग्रहण करता है वही चोरी है, चोरी नरक वास का कारण है अत: "**चोरी**" नहीं करनी चाहिए।

14 चोरी को ज्ञानी पुरुष सबसे बड़ा पापास्त्रव का द्वार कहते हैं, चोर को चिड़ीमार, शिकारी तथा व्यभिचारी लोगों से भी अत्यधिक पापी माना जाता है।

15 "**परस्त्रीसेवन**" के भाव से महान् पाप होता है और उसके फल स्वरूप अज्ञानी जनों को सातवे नरक सम्बन्धी महान् दु:ख भोगना पड़ता है।

16 अवन्ती देश में चण्ड नामक चाण्डाल मांस का त्याग करने से मरकर यक्षों का प्रधान हुआ था।

★★★

अभक्ष्य वर्णन

1 जो पदार्थ भक्षण करने/खाने योग्य नहीं होते हैं, उन्हें अभक्ष्य कहते हैं, इसके पाँच भेद हैं- त्रस हिंसाकारक, बहुस्थावर हिंसाकारक, प्रमादकारक, अनिष्ट और अनुपसेव्य।

2 जिस पदार्थ के खाने से त्रस जीवों का घात होता है, उसे त्रस हिंसाकारक अभक्ष्य कहते हैं, जैसे पञ्च उदम्बर फल, घुना अन्न, अमर्यादित वस्तु जिनमें बरसात में फफूँदी लग जाती है, चौबीस घण्टे के बाद का मुरब्बा, अचार, बरी, पापड़ और द्विदल आदि के खाने से "**त्रस जीवों का घात**" होता है, दूध में या दूध से बने हुए दही आदि में दो दाल वाले मूँग, उड़द, चना आदि अन्न की बनी चीज मिलाने से द्विदल बनता है।

3 जिस पदार्थ के खाने से अनन्त स्थावर जीवों का घात होता है उसे "**स्थावर हिंसाकारक**" अभक्ष्य कहते हैं जैसे- प्याज, लहसुन, आलू, मूली आदि कन्दमूल तथा तुच्छफल खाने से अनन्त स्थावर जीवों का घात होता है।

4 जिसके खाने से प्रमाद या काम विकार बढ़ता है वे "**प्रमाद कारक**" अभक्ष्य हैं जैसे- शराब, भाँग, तम्बाकू, गाँजा और अफीम आदि नशीली चीजें, ये स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक हैं।

5 जो पदार्थ भक्ष्य होने पर भी अपने लिए हितकर न हों वे "**अनिष्ट**" हैं जैसे- शीतज्वर वाले को हलुआ एवं जुकाम वाले को दही, लस्सी आदि ठण्डी चीजें हितकर नहीं हैं।

6 जो पदार्थ सेवन करने योग्य न हों वे "**अनुपसेव्य**" हैं जैसे- लार, मूत्र आदि पदार्थ।

7 जो मद्य, मांस, मधु, पाँच उदम्बर फल एवं रात्रि भोजन का त्यागी होता है, वह ब्राह्मण कहलाता है।(महाभारत शान्ति पर्व)

8 विस्तार से अभक्ष्य के बाईस भेद भी हैं-

ओला घोर बड़ा निशि भोजन, बहुबीजा बैंगन संधान।
बड़, पीपर, ऊमर, कठऊमर, पाकर फल जो होय अजान।
कन्दमूल माटी विष आमिष, मधु माखन अरु मदिरापान।
फल अतितुच्छ तुषारचलित रस, ये बाईस अभक्ष्य बखान।।

ओला, दहीबड़ा, रात्रि भोजन, बहुबीजा, बैंगन, चौबीस घण्टे बाद का अचार, बढ़, पीपल, ऊमर, कठूमर, पाकर, अजानफल (जिसको हम पहचानते नहीं ऐसे कोई फल, पत्ते आदि फास्ट फूड भी अजान फल जैसे ही हैं), कन्दमूल (मूली, गाजर आदि जमीन के भीतर लगने वाले), मिट्टी, विष (शङ्खिया, धतूरा आदि), आमिष(मांस), शहद, मक्खन, मदिरा, अतितुच्छ फल (जिसमें बीज नहीं पढ़े हों ऐसे बिल्कुल कच्चे छोटे-छोटे फल), तुषार-बर्फ और चलित रस (जिनका स्वाद बिगड़ जाये ऐसे फटे हुए दूध आदि) ये सब अभक्ष्य हैं। दहीं बिलोने के बाद मक्खन को निकाल कर तत्काल गर्म कर लेना चाहिए अन्यथा वह अभक्ष्य हो जाता है अथवा कच्चे दूध से भी जो यन्त्र से मक्खन निकाला जाता है, उसमें भी कच्चे दूध की मर्यादा 48 मिनट की है, उसी मर्यादा के अन्दर मक्खन निकाल कर जल्दी से गर्म करके घी बना लेना चाहिए। बाजार की बनी हुई चीजों में मर्यादा का विवेक न रहने से और अनछने जल आदि से बनाई जाने से सब अभक्ष्य हैं, अर्क, आसव (शीरा), शर्बत आदि भी अभक्ष्य हैं, चमड़े में रखे घी, हींग, पानी आदि भी अभक्ष्य हैं, इसलिए इन अभक्ष्यों का त्याग कर देना चाहिए।

★★★

रात्रि में भोजन क्यों नहीं करना चाहिये ?

1 **श्वभ्रद्वाराणि चत्वारि प्रथमं रात्रिभोजनं।**
परस्त्रीगमनं चैव संधानानन्तकायिनां।।
नरक के चार द्वार हैं रात्रिभोजन, परस्त्रीगमन, अचार भक्षण और जमीकन्द भक्षण।

2 **अस्तङ्गते दिवानाथे, ह्यापो रुधिरमुच्यते।**
अन्नं मांस समं प्रोक्तं, मार्कण्डेय महर्षिणा।।
सूर्य के अस्त हो जाने पर पानी खून कहलाता है एवं अन्न को वैष्णव मार्कण्डेय महर्षि ने मांस के समान कहा है।

3 **चातुर्मासे तु सम्प्राप्ते रात्रि भोजं करोति यः।**
तस्य शुद्धि र्न विद्येत् चन्द्रायणशतैरपि।।(मार्कण्डेय महर्षि)
चातुर्मास में जो रात्रि में भोजन करता है उसकी चन्द्रायण व्रत अर्थात् कृष्ण पक्ष के चन्द्रमा की कलाओं के समान एक-एक ग्रास घटाना और शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा की कलाओं के समान एक-एक ग्रास को बढ़ाना एक चन्द्रायण व्रत कहलाता है ऐंसे सैकड़ों व्रत करने से भी शुद्धि नहीं हो सकती है।

4 भोजन के साथ पेट में मक्खी जाने से उलटी होती है, चीटी जाने से पेशाब में जलन होती है, बाल जाने से स्वर भंग होता है, जुंआ-लीख जाने से जलोदर रोग होता है, मकड़ी जाने से कोढ़ होता है, छिपकली जाने से मृत्यु होती है, इसलिए भोजन में सूर्य का प्रकाश विवेक और शोधन क्रिया आवश्यक है।

5 अहिंसा व्रत की रक्षा व मूलगुण की शुद्धि के लिए धीरपुरुष मन-वचन-काय से रात्रि में चारों प्रकार के आहार का त्याग करें। (सागार धर्मामृत)

6 जो स्वभाव से रात्रिभोजन का त्याग करता है, वह अपने कुल के आभूषणपने को व तीन जगत के स्वामियों की सम्पदा को प्राप्त होता है। (सागार धर्मामृत)

7 रत्नत्रय से परिपूर्ण तथा अणुव्रतों को धारण करने में तत्पर भव्य जीव सूर्योदय के रहते दोष रहित भोजन करते हैं। (सागार धर्मामृत)

पद्मपुराण से उद्धृत

8 जो दयालु पुरुष रात्रि में भोजन नहीं करते, वे वैमानिक देव होते हैं और वहाँ उत्कृष्ट भोगों को प्राप्त करते हैं और स्वर्ग से आकर प्रशंसनीय मनुष्य पर्याय प्राप्त कर चक्रवर्ती आदि के वैभव

से प्राप्त सुख का उपभोग करते हैं।

9 जगत् में जो धनवान, गुणों से उदार, सुन्दर, दीर्घायु, सम्यग्ज्ञान से सहित और प्रधान पद पर स्थित हैं वे सब दिन में भोजन करने से हुए हैं।

10 जो दिन में भोजन करते हैं, वे सूर्य के समान प्रभा वाले, चन्द्रमा के सामान सौम्यदर्शन तथा स्थायी भोगों से युक्त होते हैं।

11 दिन में भोजन करने से मनुष्य संसार में उत्कृष्ट प्रताप से युक्त, नगरों के स्वामी, नाना प्रकार के वाहनों से सहित, सामन्तों से पूजित, भवनवासी देव, वैमानिक देव, चक्रवर्ती के वैभव से सहित और उत्कृष्ट लक्षणों से सम्पन्न होते हैं।

12 दिन में भोजन करने से मनुष्य उन नगरियों में ऐसे विद्याधर राजा होते हैं, जो कलाओं में निपुण हैं, जिनके शरीर, नेत्र और हृदय में स्नेह उत्पन्न करने वाले हैं, जो अमृत झराने वाली वाणी से समस्त जगत् को आह्लादित करते हैं तथा उत्साह से युक्त होते हैं, दिन में भोजन करने से मनुष्य नारायण, बलदेव, चक्रवर्ती, बिजली और लाल कमल के समान कान्ति वाले देदीप्यमान सुन्दर कुण्डलों से युक्त एवं राजाओं से सम्बन्ध करने वाले होते हैं।

13 दया में तत्पर रहने वाले जो लोग रात्रि में भोजन नहीं करते हैं उन्हें सेवकों के द्वारा तैयार किया हुआ इच्छानुकूल भोजन प्राप्त होता है।

14 जो लोग रात्रिभोजन से दूर रहते हैं, वे शान्त हृदय, ब्रह्मचर्य सहित तथा साधु समूह के लिए हितकारी होते हैं।

15 दिन में भोजन करने से स्त्रियाँ श्रीकान्ता, सुप्रभा तथा सुभद्रा के समान लक्ष्मी तुल्य कान्ति वाली होती हैं।

16 जिन्होंने पहले रात्रि भोजन का त्याग किया था वे स्त्रियाँ यान तथा हाथी आदि वाहनों पर लीलापूर्वक गमन करती हैं और सुन्दर भवनों में निवास करती हैं, वे स्त्रियाँ स्वर्ग में इच्छानुकूल भोग को प्राप्त होती हैं, तथा मस्तक पर हाथ रख आज्ञा की प्रतीक्षा करने वाले परिवार से घिरी रहती हैं।

17 जिनपुरुषों ने पहले रात्रिभोजन का त्याग किया है, वे सुरीली आवाज वाले, निर्मल शरीर से युक्त तथा सुन्दर वस्त्राभूषणों से सहित मनुष्य होते हैं, इस लोक में जो सुन्दर राजा दिखाई देते हैं, वह सब निःसन्देह रात्रिभोजन त्याग का ही फल है।

18 जो मनुष्य सूर्यास्त हो जाने पर भोजन करते हैं, वे विद्वानों के द्वारा मनुष्यता से युक्त पशु कहे गये

हैं।

19 जो रात्रि में भोजन करता है, वह अल्पआयु, अल्पधन से युक्त, रोग से पीड़ित और परभव में सुख से हीन होता है।

20 जो दुर्बुद्धि रात्रि में भोजन करता है, वह हजारों उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी काल तक खोटी योनियों में दुःख को प्राप्त होता है।

21 रात्रि में भोजन करने से पुरुष स्त्री वेद को प्राप्त होते हैं, और वे स्त्रियाँ अनाथ, सौभाग्यहीन, माता-पिता तथा भाई से रहित, शोक एवं दरिद्रता से युक्त होती हैं, जिनके हाथ-पैर आदि अङ्ग रूक्ष तथा फटे हुए हैं, जिनकी नाक चपटी है, जिनका देखना ग्लानि को उत्पन्न करता है, जिनके नेत्र कीचड़ से भरे हैं, जिनके लक्षण दुष्ट हैं, जिनके शरीर से दुर्गन्ध आती है, जिनके होठ कटे तथा मोटे हैं, जिनके कान विरूप हैं, जिनके केश पीले तथा रूक्ष हैं, जिनके दाँत तूमड़ी के बीज के समान हैं, शरीर सूखा है, जो कानी, लंगड़ी और कान्ति रहित हैं, विरूप हैं, कठोर चमड़ी वाली हैं, अनेक रोगों से सहित हैं, मलिन हैं, फटे वस्त्र वाली हैं, खराब भोजन से जीवित हैं, दूसरों के कार्य पर आश्रित हैं, दुःखों के भार से दबी हुई हैं, बाल्यावस्था में ही पति के मरण के दुःख से दुःखी हैं, पानी भरती हैं, लकड़ियाँ ढोती हैं, बड़े दुःख से पेट भर पाती हैं, सब लोगों से तिरस्कृत हैं, कुवचन रूप वसूला से जिनका मन नष्ट हो गया है, तथा शरीर सैकड़ों घावों का आधार है, ऐसी स्त्रियाँ रात्रिभोजन करने से ही होती हैं।

22 रात्रिभोजन में तत्पर लोग कटेकान, कटीनासिका, धन तथा बन्धुओं से रहित पति को प्राप्त होते हैं, जो रूक्ष शरीर वाले दास दासी आदि हैं, जो पुत्र, पत्नि और पति आदि से रहित हैं और जो दुर्भाग्य रूपी ग्रह से ग्रस्त हैं, वे रात्रिभोजन से ही होते हैं।

23 रात्रिभोजन के पाप से जीव दुर्गति को प्राप्त होते हैं, लोक में जो रोगी, दरिद्र और क्रूर पुरुष दिखाई देते हैं, वे भी रात्रिभोजन के पाप से दिखाई देते हैं, जिनके हाथ-पैर फटे हैं, जो दीन हैं, लकड़ी और घास ढोते हैं, मलिन वस्त्र वाले हैं तथा नीच कुल में उत्पन्न हैं, वे सब रात्रिभोजन करने से ही होते हैं, रात्रिभोजन के फल से मनुष्य रोग से पीड़ित, दूसरों के घरेलू नौकर तथा अपने बन्धुजनों से रहित होते हैं, रात्रि में भोजन करने वाला मिथ्यादृष्टि मनुष्य सूकर, भेड़िया, बिलाव, उल्लू तथा कौआ आदि की योनियों में उत्पन्न होता है।

24 भोजन की तीव्र लालसा रखने वाला जो पापी जीव सूर्य के अस्त हो जाने पर भी भोजन करता है, वह दुर्गति को नहीं जानता, यह नहीं समझता कि इस रात्रिभोजन के पाप से मुझे नरकादि

दुर्गति में जाना पड़ेगा।

25 अन्धकार के समूह से जिसके नेत्र आच्छादित हो रहे हैं, तथा पाप में जिसकी बुद्धि लग रही है, ऐसा पापी जीव मक्खी, कीड़े तथा बाल आदि को खा जाता है।

26 जो रात्रिभोजन करता है, वह डाकिनी-शाकिनी तथा भूत-प्रेतादि निन्द्य प्राणियों के साथ खाता है।

27 जो रात्रि में खाता है उसने कुत्ता, चूहा, बिल्ली आदि मांसाहारी जीवों के साथ खाया, अथवा व्यर्थ के विस्तार से क्या ? इतना ही कहा जाता है, कि रात्रि में खाने वाले ने सब अपवित्र पदार्थ खाये, रात्रि में दीपकों के ऊपर जो चीटी आदि जीव पड़ते हैं, रात्रि में खाने वाले पुरुष ग्रासों के साथ उन्हें भी निगल जाते हैं।

28 जिन लोगों ने रात्रिभोजन रूप अधर्म को धर्म मान रखा है,उन पापकर्म से क्रूर मनुष्यों को समझाना कठिन है।

29 सूर्य की किरणों से अछूता भोजन प्रेतों के समूह से जूठा हो जाता है, तथा सूक्ष्म जीवों से युक्त होता है, अतः रात्रि में खाना उचित नहीं है।

30 जो रात-दिन खाता है "**वह जिनधर्म से विमुख**", व्रतरहित व नियम से दूर है, ऐसा मनुष्य पर भव में सुखी कैसे हो सकता है ?

31 रात्रिभोजन के लोभी मनुष्य परभव में तिर्यञ्च तथा नरकादि गतियों में अन्धे, बौने, अत्यन्त विकलाङ्ग, अल्पायु, शोक, क्लेश, विषाद तथा दुःख से परिपूर्ण, कोढ़ आदि रोगों से सहित, दरिद्रता से पीड़ित अत्यन्त चञ्चल और अल्प आदर वाले नियम से होते हैं।

32 रात्रि में अन्न के बर्तन तथा अग्नि आदि में अनेक जीव पड़ते हैं, जिससे मांस खाने का दोष तथा हिंसा होती है, अतः रात्रिभोजन छोड़ने के योग्य है।

★★★

पानी छानने की क्या आवश्यकता है ?

1 दया से परिपूर्ण हृदय वाला जो गृहस्थ छने हुए जल से सब कार्य करता है वह मोक्ष को प्राप्त होता है। (धर्मोपदेश पीयूष श्रावकाचार)

2 सत्पुरुषों ने जैनधर्म के नीति मार्ग में ऐसा ही कहा है कि पानी का छानना धर्म है, जैनियों का यह धर्म तीनों लोकों में प्रसिद्ध है।

3 जिनेन्द्र भगवान ने पृथ्वी पर जीव दया की सिद्धि के लिए सघन वस्त्र से पानी छानने को पुण्य कहा है।

4 जैनधर्म में निपुण तथा दयालु मनुष्यों को पानी छानने की शुभ क्रिया में प्रमाद नहीं करना चाहिए।

5 जो छनाजल पीते हैं वे भव्य एवं बुद्धिमान है, विना छना जल पीने वाले पाप से विकल हृदय पुरुष पशु तुल्य हैं।

6 छने, निर्मल, णमोकार मन्त्र से पवित्र किये हुए जल से जिनपूजा के लिए विधि पूर्वक प्रतिदिन स्नान करना चाहिए।

7 स्त्री समागम, आहार, मल विसर्जन तथा आरम्भादि में लीन रहने वाला और अशुद्ध वस्तुओं को स्पर्श करने वाला गृहस्थ स्नान कर तथा धुले हुए पवित्र वस्त्र धारण कर ही जिनपूजा करें।

8 पूजा के लिए स्नान करने से जीवघात होता है, ऐसा जो कहता है वह पसीना आदि मल को दूर करने के लिए स्नान करता हुआ लज्जित क्यों नहीं होता है ?

9 नदियों और तालाबों का जो गहरा पानी, वायु तथा घाम से अच्छी तरह प्रासुक है, उस जल में प्रवेश कर स्नान के योग्य कहीं-कहीं माना गया है।

10 वायु से ताड़ित, पत्थर तथा घटीयन्त्र से ताड़ित एवं सूर्य की किरणों से सन्तप्त वापिका के जल को मुनि प्रासुक मानते हैं, यद्यपि उपर्युक्त लक्षण वाला जल आगम में प्रासुक कहा गया है तथापि अत्यावश्यकता वश उससे स्नान ही करना चाहिए, उसे विना छाने पीना नहीं चाहिए।

11 जो वस्त्र छत्तीस अङ्गुल लम्बा और चौबीस अङ्गुल चौड़ा है, उसे दुहरा कर पानी छानना चाहिए।

12 वस्त्र के मध्य आये हुए जीवों को जल के मध्य में छोड़(जीवानी) कर जो पानी पीता है वह उत्कृष्ट गति को प्राप्त होता है। (प्रश्नोत्तर श्रा.)

13 छना हुआ पानी एक मुहूर्त(48मिनिट) तक, प्रासुक दो पहर(6 घण्टे) तक और अत्यधिक गर्म किया हुआ पानी दिन-रात अर्थात् चौबीस घण्टे तक चलता है, पश्चात् उसमें सम्मूर्छन जीव उत्पन्न हो जाते हैं।

14 एक मुहूर्त के बाद पानी को फिर से नहीं छानना, अथवा सछिद्र या मलिन वस्त्र से छानना और जीवानी को अन्य जलाशय में डालना, जलगालन व्रत में योग्य नहीं माना गया है। (सागार धर्मामृत)

15 इस प्रकार जो सदा पानी छानने में यत्न करते हैं, वे धर्मस्नेही भव्य जीव निरन्तर सुखी रहते हैं।

16 जिस जलाशय से यत्न पूर्वक छानकर जल लाया गया है, ज्ञानी पुरुष जिवानी को उसी जलाशय

में डालें। (सागार धर्मामृत)

17 विना छने जल में असंख्यात जीव होते हैं, अतः विना छना पानी पीने वाला पुरुष पाप का अर्जन करता है। (सागार धर्मामृत)

18 जिनेन्द्र भगवान् ने एक बूँद मात्र जल में जो जीव बतलाये हैं, वे यदि कबूतर के बराबर हो कर उड़ें, तो जम्बूद्वीप में न समावेंगे। (सागार धर्मामृत)

★★★

"फल पाप का-भोगे आत्मा आपका"

1 **बन्धु विरोध करे सगरे, झगरे नित होत सुधारस चाँटत,**
मित्र करे करनी रिपु की, धरणीधर देखत न्याव न पाटत।
पूत कपूत का कार्य करे, नारी सती पति सो चित पाटत,
या विधिना प्रतिकूल भये तब, ऊँट चढ़े पे कूकर काटत।।

अर्थात् "पाप के उदय में" बन्धु विरोध करने लग जाते हैं, अमृत चाँटते हुए भी झगड़े होते हैं, मित्र शत्रु जैसा व्यवहार करने लग जाता है, राजा देखते हुए भी न्याय नहीं करता है, पुत्र कुपुत्र का काम करने लग जाता है, सती स्त्री भी पति से विरक्त हो जाती है, ऊँट पर सवारी करने पर भी कुत्ता काट देता है।

पापास्रव के कारण

2 **चरिया पमादबहुला, कालुस्सं लोलदाय विसयेसु।**
परपरितावपवादो, पावस्सय आसवं कुणदि।।
सण्णाओ य ति लेस्सा, इंदियवसदाय अत्तरुद्दाणि।
णाणं च दुप्पउत्तं मोहो पावप्पदा होंति।।

प्रमाद युक्त चर्या, परिणामों की मलिनता, विषयों की लोलुपता, दूसरे को कष्ट देना, परनिन्दा करना, आहार, भय, मैथुन, परिग्रह ये चार संज्ञाएँ, कृष्ण, नील, कापोत ये तीन लेश्यायें, इन्द्रियों की पराधीनता, आर्त-रौद्र ध्यान, ज्ञान का दुरुपयोग और मोह ये सभी 'पाप आस्रव के कारण' हैं।

3 एकान्त आदि पाँच मिथ्यात्व, क्रूर परिणाम, पच्चीस कषाय, पन्द्रह प्रमाद, कुटिलता में तत्पर पन्द्रह योग, आठ मद, चार संज्ञाएँ, पञ्चेन्द्रियों के सत्ताईस विषय, चार आर्त्तध्यान, चार रौद्रध्यान, सात व्यसन, व्रत धारण कर विषाद करना, पाँच पाप, बारह अविरति, राग-द्वेष,

मिथ्यात्व, सात भय, तीन वेद और शोक पच्चीस क्रियाओं में सम्यक्त्ववर्धिनी क्रिया को छोड़कर शेष चौबीस क्रियाएँ और मायाचार ये सब पाप बन्ध के लिए होते हैं अर्थात् उपर्युक्त कारणों से पाप बन्ध होता है।

4 हिंसादि पाँच पाप क्रोधादि चार कषाय, मिथ्याज्ञान, पक्षपात, मात्सर्य, आठ मद, दुरभिनिवेश, तीन अशुभ लेश्याएँ, चार विकथा, चार आर्तध्यान, चार रौद्रध्यान, ईर्ष्या, असंयम और तीन शल्यों में जो प्रवृत्ति है वह अशुभ भाव है।

5 **तुष्यन्ति भोजने विप्राः, मयूरा घन गर्जने।**
सज्जना परसम्पत्तौ, दुर्जाना पर विपत्तिषु।।
ब्राह्मण भोजन से सन्तुष्ट होते हैं, मयूर मेघ गरजने से, सज्जन पर की सम्पत्ति देखकर और दुर्जन पर की बिपत्ति देखकर सुखी होते हैं।

6 **श्वापि देवोऽपि देवः श्वा, जायते धर्मकिल्विषात्।**
कापि नाम भवेदन्या, सम्पद्धर्माच्छरीरिणां।।
पाप के उदय से देव भी कुत्ता बन जाता है और पुण्य के उदय से कुत्ता भी देव बन जाता हैं धर्म के प्रभाव से प्राणी को अचिन्त्य विभूति कि प्राप्ति होती है।

7 **स हि गमन बिहारी कल्मषध्वंसकारी, दशशतकरधारी ज्योतिषां मध्यचारी।**
विधुरपि विधियोगात् ग्रष्यते राहुणासौ, लिखितमपि ललाटे प्रोज्झतुं कः समर्थः।।
चन्द्रमा आकाश में विहार करता है, अन्धकार को दूर करता है, हजारों किरणों का धारक है, ज्योतिर्विमानों के मध्य में चलने वाला चन्द्रमा भी भाग्य के योग से राहु द्वारा ग्रस लिया जाता है, क्योंकि हो ललाट पर लिखी हुयी रेखा मिटाने में कौन समर्थ है। कौन टाल सकता है ?

8 **को जानात्यत्र किं कार्यं, कदा काले भविष्यति।**
अहो ! राज्याभिषेकस्य, काले रामो भवेद् वनं।।
कौन जानता है, कब क्या होने वाला है ? अहो ! राज्याभिषेक के समय राम का वन गमन हुआ था।

9 **असम्भवं हेम मृगस्य जन्म, तथापि रामो लुलुभे मृगाय।**
प्रायः समापन्नविपत्तिकाले, धियोऽपि पुंसां मलिनी भवन्ति।।
सोने के मृग का जन्म लेना असम्भव है, फिर भी रामचन्द्र जी स्वर्ण मृग से प्रभावित हो गए, सो ठीक है क्योंकि विपत्ति के काल में बुद्धिमानों की बुद्धि भी नष्ट हो जाती है।

बुढ़ापे में स्त्री मरण

10 **वार्द्धक्ये वनिता मृतिर्ननु नृणां, कष्टप्रदा जायते,**
रोगाक्रान्त शरीरिणां पुनरहो, वाच्यं किमत्र क्षितौ।
पुत्रा नैव वदन्ति मिष्ट वचनं, दूरं प्रयान्ति स्त्रियः,
नप्तारो निकटं न यान्ति कटुकं, वाक्यं वदन्ति भृशं।।

वृद्धावस्था में स्त्री का मरना कष्टकारी होता है, यदि शरीर में रोग हो तो और दुर्दशा होती है, पुत्र मिष्ट वचन नहीं बोलते हैं, उनकी स्त्रियाँ दूर से भागती हैं, नाती पास में नहीं आते तथा अत्यधिक कटु वचन बोलते हैं।

11 **ऊँट को जातिस्मरण**- एक सेठ के यहाँ कन्या हुयी, सेठ के पास एक ऊँट था जो उस कन्या का पूर्व भव का पति था, सेठ ने कन्या की शादी की, तो दहेज में ऊँट दे दिया, वह कन्या ऊँट पर सवार हुयी, तो ऊँट को जातिस्मरण हो गया, कि ये मेरी पत्नि थी, अब मेरे ऊपर बैठी है, ऊँट बैठ गया आगे नहीं बढ़ा खूब पिटाई की, लेकिन नहीं उठा, कन्या को भी जाति स्मरण हो गया कि ये मेरा पति था, इसलिये बैठ गया, कन्या ने समझाया तुम्हारी पर्याय बदल गयी है, अब विकल्प मत करो, इस पर्याय में कड़वी नीम खाना पड़ती है और भार ढोना पड़ता है।

12 **चक्र ने नहीं-एक तीर ने प्राण हरे**- पुण्य के उदय में कृष्ण जी की मृत्यु जरासन्ध के सुदर्शन चक्र से नहीं हुई, पर पापोदय में एक बाण से हो गयी, उसी तरह लक्ष्मण की मृत्यु रावण के सुदर्शन चक्र से नहीं हुई, लेकिन देवों ने स्नेह की परीक्षा के निमित्त 'राम नहीं रहे' यह झूठ बोला, तो सुनते ही लक्ष्मण जी के प्राण निकल गये।

13 सारी दुनिया को पानी पिलाने वाला भी, प्यासा मर जाता है जैसे श्रीकृष्ण जी।

14 खरदूषण चौदह हज़ार विद्याओं एवं चौदह हज़ार विद्याधरों का स्वामी था, पाप के उदय में लक्ष्मण से युद्ध में मारा गया था।

15 प्रजा के द्वारा किया हुआ पाप राजा को, राजा के द्वारा किया गया पाप मन्त्री को, स्त्री के द्वारा किया हुआ पाप पति को और शिष्य के द्वारा किया गया पाप गुरु को भी भोगना पड़ता है।

16 पापास्त्रव में अभिप्राय मुख्य है, जैसे ससुराल की गाली और शत्रु की गाली का अभिप्राय अलग-अलग होता है।

17 पतन जब होता है, तो उसमें वृद्धि ही होती है, जैसे सीढ़ी से गेंद खिसकाओं तो सीधे नीचे गिरती है।

18 **उत्तम जेल-** संसार में सबसे उत्तम जेल ब्रिटेन में है, फ्रांस का एक व्यक्ति उसको देखने गया, प्रत्येक कमरे में रेडियो, टी-वी, टेलीफोन, फ्रिज, लाइब्रेरी सभी सुविधाएं उपलब्ध हैं, जेल अधिकारी ने आगन्तुक से राय माँगी, उस व्यक्ति ने हँसकर कहा सब सुविधाओं के उपरान्त भी बन्धन तो बन्धन ही है, कैदी को सजा तो पूरी करना ही होगी, इसी प्रकार सांसारिक विषयों का बन्धन है।

19 नियम का भङ्ग करने से और देव-शास्त्र-गुरु की आज्ञा का लोप करने से महापाप का बन्ध होता है।

20 आत्मा रुपी राम से मिलने के लिए पाप रुपी रावण का त्याग जरूरी है।

21 विपत्तियाँ उड़ती हुयी आती हैं और वापस पैदल जाती हैं।

22 कुत्ते के भाग्य में रोटी के साथ सब्जी नहीं होती है।

23 **लगती है तकदीर को जब ठोकर गम्भीर। राजा फिरता रङ्क बन रानी भरती नीर।।**

24 **बढ़े पाप से पाप ही, यह उक्ति ध्रुव सत्य। पाप बड़ा है आग से, चिन्तन हो बुध नित्य।।**

25 **मरघट में जाकर जगे, हर मन में वैराग्य। हर नाते को फूँक दे, वह मरघट की आग।।**

26 **विपदाओं के दुःख से, यदि चाहो निज त्राण। हानि अन्य की छोड़कर, करो स्व-पर कल्याण।।**

27 **जब तक तेरे पुण्य का बीता नहीं करार। तब तक तुझ को माफ है औगुण करो हजार।।**

28 **कर्मों की गति मन क्या जानें, सब को नाच नचावें। अपने अपने कर्मों का फल तीर्थङ्कर भी पावें।।**

★★★

पुण्य की महिमा

1 क्षमा आदिक दस धर्म, बारह व्रत, उत्कृष्ट श्रावक का आचार, बारह तप, समीचीन मुनि के लिए चार प्रकार का आहारादि दान देना, ज्ञान-ध्यान आदि का अभ्यास करना, जिनेन्द्र देव की पूजा करना, समीचीन धर्म के धारक पुरुषों का सम्मान करना, सद्गुरुओं की सदा सेवा करना, जिन प्रतिमाओं और जिन मन्दिरों का निर्माण कराना, जिन प्रतिमाओं की महान् अभ्युदय को सिद्ध करने वाली प्रतिष्ठा कराना, जिनेन्द्र प्रतिमाओं का महोत्सव के साथ अभिषेक करना, अनुप्रेक्षाओं आदि का चिन्तन करना, तप के लिए समीचीन पुरुषार्थ करना, अन्य जीवों का उपकार करना तथा मनुष्यों को धर्म आदि का उपदेश देना इन कार्यों से तथा रत्नत्रय आदि भावों से, श्री जिनेन्द्रदेव के स्मरण से एवं निर्ग्रन्थ साधुओं की भक्ति करने से ''भव्य जीव आश्चर्यकारी पुण्य को प्राप्त करते हैं''।

2 छःद्रव्य, सात तत्त्व, पाँच अस्तिकाय, नौ पदार्थ, बन्ध-मोक्ष और मोक्ष के कारण रूप बारह अनुप्रेक्षाओं में, रत्नत्रय, शुभकर्म, दया आदि सद्धर्म इत्यादि में जो प्रवृत्ति करता है वह शुभ भाव है।

3 **रागो जस्स पसत्थो, अणुकम्पा संसदो य परिणामो।**
चित्तम्हि णत्थि कलुसं, पुण्णं जीवस्स आसवदि।।
नव देवताओं के प्रति प्रशस्त राग हो व जीवों के प्रति दया हो और तीव्र क्रोध-मान-माया-लोभ का अभाव होने से 'पुण्य का आस्रव' होता है।

4 अनन्त चतुष्टय का घात पुण्य से नहीं, पाप से होता है, इसीलिए पुण्य को बढ़ाना चाहिए और पाप को घटाना चाहिए।

अरण्य में रक्षक पुण्य

5 **वने रणे शत्रु जलाग्निमध्ये, महार्णवे पर्वतमस्तके वा।**
सुप्तं प्रमत्तं विषमस्थितं वा, रक्षन्ति पुण्यानि पुरा कृतानि।।
'वन में' राम के लिए यक्ष के द्वारा रामपुरी की रचना। 'रण में' खरदूषण से युद्ध मे विराधित विद्याधर के द्वारा लक्ष्मण का सहयोग। 'शत्रु विद्याधर रावण से' भूमिगोचरी राम की विजय। 'जल में' पोटली बनाकर फेंक दिए जाने पर देवों द्वारा यमपाल चाण्डाल के लिए सिंहासन की रचना। 'अग्नि के मध्य में' सीता के अग्नि कुण्ड को देवों द्वारा जल कुण्ड मे परिवर्तित करना। 'समुद्र में' श्रीपाल जी को धवल सेठ द्वारा गिरा दिए जाने पर भी रक्षा होना। 'वंशस्थ पर्वत पर' श्री कुलभूषण-देशभूषण जी का श्री राम-लक्ष्मण जी के द्वारा उपसर्ग निवारण। 'सुप्त अवस्था में' सर्प से नेवले द्वारा बालक की रक्षा। 'प्रमत्त अवस्था में' पूर्व के उपकृत जटायु एवं कृतान्तवक्त्र के जीव देवों द्वारा श्री राम का सहयोग। 'विषम स्थिति में' पाण्डवों की लाखा महल से रक्षा एवं प्रतिसूर्य विद्याधर ने अञ्जना को वन में बहन बनाकर सहायता की और हनुरुह द्वीप ले गया। इन सभी स्थितियों में पूर्वकृत पुण्य ने रक्षा की।

6 **यस्य पुण्यं च पापं च, निष्फलं गलति स्वयं।**
स योगी तस्य निर्वाणम्, न तस्य पुनरागमः।।
जिसके पुण्य और पाप दोनों की निर्ज़रा होती है पुनः आस्रव नहीं होता है उस योगी को निर्वाण प्राप्त होता है एवं वहाँ से पुनः संसार में आगमन नहीं होता है, इसके पहले पुण्य की नहीं पाप की निर्जरा होती है।

7 **पुण्य झड़ता-पाप गड़ता-** पाप काँटे की तरह है, पुण्य फूल की तरह है, काँटे को किसान बुद्धि पूर्वक जला देता है, फूल स्वयं झड़ जाते हैं, उसी प्रकार पाप को साधु बुद्धि पूर्वक छोड़ देता है, पुण्य की निर्ज़रा चौदहवें गुण स्थान के अन्त में स्वयं हो जाती है।

8 **विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा, सदसि वाक् पटुता युधि विक्रमः।**
यशसि चाभिरुचि र्व्यसनं श्रुतौ, प्रकृति सिद्धमिदं हि महात्मनां।।
विपत्ति में धैर्य, ऐश्वर्य होने पर क्षमाभाव, सभा में वचनों की चतुराई, युद्ध में पौरुष, यश में अभिरुचि, स्वाध्याय का व्यसन इतनी विशेषताएँ महात्माओं में स्वभाव से होती है।

9 **पापानुबन्धीपुण्य-** पुण्य के उदय में अशुभ भावों से पाप का बन्ध करना।

10 **पापानुबन्धीपाप-** पाप के उदय में अशुभ भावों से पाप का बन्ध करना।

11 **पुण्यानुबन्धीपुण्य-** पुण्य के उदय में शुभभावों से पुण्य का बन्ध करना।

12 **पुण्यानुबन्धीपाप-** पाप के उदय में शुभभावों से पुण्य का बन्ध करना।

13 **बंदर के अंदर-माया का समन्दर-** एक किसान के पास तीन बैल थे, दो को जोतता था एक बँधा रहता था, बैल के समीप एक सीका था जो पेड़ पर टाँग रखा था, जिसमें किसान अपना नाश्ता रखता था, बन्दर बदमाशी करता था, डिब्बा खोलकर भोजन करके जूठन बैल के मुँह में लगा देता था, किसान ने भोजन गायब पाया और बैल का मुँह जूठा देखकर पिटाई करने लगा, बन्दर रोज चालाकी करता, दस-पन्द्रह दिन बीत गये, पड़ोसी ने देखा कि बैल को व्यर्थ में पीटता है, समझाया इसे क्यों पीटते हो ? बैल इतने ऊँचे सीके तक कैसे पहुँच सकता है, वह इससे बहुत ऊपर है, किसान ने कहा जूठन तो इसी के मुँह में लगी है फिर सन्देह कैसा ? उसने कहा ! एक दिन तुम छिपकर देखों मामला क्या है, किसान ने स्वीकार किया, प्रतिदिन की तरह बन्दर आया, खाना खाया, जूठन बैल के मुँह में पोत दी, उसी तरह बैल तो हुआ पुण्य एवं बन्दर हुआ पाप, खोटी प्रवृत्ति पाप करता है, अपयश पुण्य का होता है।

14 किसी भाग्यशाली मनुष्य की ही लक्ष्मी परोपकार के लिए, विद्या विवेक के लिए और सन्तान समाधि के लिए सहायक होती है।

15 संसार में पुण्यशाली मनुष्य की लक्ष्मी विवेक के साथ, बुद्धि शास्त्र के साथ, शक्ति शान्ति के साथ, प्रभुता न्याय/नीति के साथ और श्रद्धा धर्म के साथ मिलकर सफल होती है।

16 औषध, मित्र, नक्षत्र, शकुन, वास्तु और ज्योतिष पुण्य के उदय में अनुकूल होते हैं और पाप के उदय में वे सब प्रतिकूल हो जाते हैं।

17 तीन बालकों में होड़ लगी कि तुम हमको हँसा दो, तो मैं तुम्हारी सेवा करूँगा, उसको पचास तरह से हँसाया लेकिन वह नहीं हँसा, इसी तरह पुण्य-पाप को चुनौती दें, कि इनके आने पर हम हर्ष-विषाद नहीं करेंगे।

18 **नारियल में पानी-** पुण्य की निशानी- जो होनहार है वह नारियल के भीतर पानी के समान होती ही है और जो जाने वाली है वह गज के द्वारा खाये हुये कैथे के दल के समान जाती ही है, अर्थात् जैसे नारियल में पानी अपने आप आ जाता है और हाथी के द्वारा खाये हुये कैथे का दल अपने आप चला जाता है, वैसे ही भाग्य की अनुकूलता होने पर लक्ष्मी विना प्रयत्न के प्राप्त हो जाती है और प्रतिकूलता होने पर अकस्मात् चली जाती है।

19 पुण्यशाली मनुष्य खाद्य, स्वाद्य, पवित्र सुगन्धित पान और लेह्य (चाटने योग्य पदार्थ) तथा इनके संयोग से निर्मित स्वादिष्ट भोजन स्वर्णादि की थालियों आदि में खाते हैं, इनके पुण्य से रसोईय द्वारा निर्मित कुछ भी भोजन अमृत के समान जान पड़ता है।

20 **कर्मों की गति-**

श्रीकृष्ण जी ने जब कंस को मार डाला तो उसकी स्त्री जीवद्यशा प्रतिनारायण पद के धारी अपने पिता जरासन्ध के पास गयी और उससे कहा कि आपके रहते हुये कंस जैसा पति और चाणूर जैसा पहलवान कृष्ण ने मार डाला, इतना सुनते ही जरासन्ध की क्रोधाग्नि प्रज्वलित हो गयी, तब जरासन्ध ने अपने बेटे को यादव कुल के नष्ट करने को कहा, तो कृष्ण का सामना करते हुए वह मारा गया, पुनः जरासन्ध ने अपने छोटे भाई अपराजित को आदेश दिया, कृष्णजी से युद्ध में वह भी मारा गया, अब जरासन्ध स्वयं यादवों को नष्ट करने की बुद्धि से निकला, इस बात का समाचार वसुदेव और समुद्रविजय आदि को मिला, तो इन सब ने जरासन्ध की शक्ति का विचार करते हुए मथुरा नगरी को छोड़कर जङ्गलों में रहने का निश्चय किया, चूँकि नेमिनाथजी का जन्म हो चुका था, फिर भी इनको मथुरा छोड़कर जाना पड़ा, जिस स्थान पर यादव वंशी छिपे हुए थे, उसी रास्ते से जरासन्ध अपनी सेना लेकर निकल रहा था, तब यादव लोग भी युद्ध की तैयारी करने लगे कि अब सामने आये शत्रु का सामना करना है, इस बुद्धि से समुद्रविजय, उग्रसेन, वसुदेव आदि दसों भाई युद्ध को तैयार हुये एक देव ने आकर सैकड़ों जलती हुयी चितायें विक्रिया से दिखा दीं और वह देव वृद्धा माँ का रूप बनाकर रोने लगा, जरासन्ध ने इन जलती हुयी चिताओं को देखकर पूँछा ! कि ये चिताएँ किसकी जल रही हैं और आप क्यों रो रही हो, तब वृद्धा ने कहा कि यादव वंशी राजा मथुरा छोड़कर इस जङ्गल में आपके भय से छिप गये थे, लेकिन आपका यहाँ आगमन हो गया, इसलिए सभी यादव इनमें जलकर मर गये,

इनमें मेरा पति भी मर गया है, मैं यादव वंशीय राजाओं की दासी हूँ, मुझसे अग्नि में प्रवेश नहीं किया गया है इसलिए में रो रही हूँ, इस प्रकार का समाचार सुनकर जरासन्ध अपने नगर वापस चला गया, उधर श्री नेमिनाथजी और कृष्णजी के प्रभाव से देवों ने द्वारिका नगरी की रचना की, सब नगर के बीचों-बीच कृष्ण जी का अठारह खण्ड का सर्वतोभद्र नामक महल बनाया और समुद्रविजय आदि दस भाईयों का आठ खण्ड का महल बनाया, कृष्णजी के साढ़े तीन करोड़ कुमार रणविद्या में कुशल थे, वे कृष्णजी जरासन्ध से कैसे जीते जा सकते थे।

मुक्तक-माल

21 **पङ्क के विना पङ्कज उग नहीं सकता, पङ्ख के विना पक्षी उड़ नहीं सकता।**
पुण्य को भी पाप की तरह हेय समझने वालों, पुण्य के विना तीर्थङ्कर पद मिल नहीं सकता।।

22 **विश्व का कल्याण धन से नहीं धर्म से होता है, धन का विकास पाप से नहीं पुण्य से होता है।**
धन को धर्म से श्रेष्ठ मानने वाले रे मानव !, धर्म का कार्य धन से नहीं तन मन से होता है।।

23 **कहीं पर भूख तड़फन की, कहीं पर मौज उड़ते हैं, कहीं पर दूध कुत्ते को, कहीं बालक बिलखते हैं।**
किसी की देह नङ्गी है, कहीं परदे लटकते हैं, कहीं सूती नहीं मिलता, कहीं सिलकन पहनते हैं।
किसी का चैन से सोना, किसी का रात भर रोना, किसी को सुध न उठने की, किसी का काम वश रहना।
कहीं पर चैन की वंशी, कहीं अरमान के टुकडे, कहीं हर अङ्ग पर जेवर, कहीं पर बाल भी बिखरे।
कहीं हैं धूल कालिख तो कहीं पावडर महकते हैं, कहीं पर होंठ में लाली, कहीं पर दिल धधकते हैं।
कहीं अर्थी निकलती है, कहीं तबला ठनकता है, कहीं रोना सदा जुट कर, कहीं अट्टाहास होता है।

24 **न जाने कैसे खेल खिलाती है जिन्दगी, पल में हँसे तो पल में रूलाती है जिन्दगी।**
शीशे का बनाया था मैंने सपने में महल, पर चोट पत्थरों की दिलाती है जिन्दगी।
सोचा था मैंने अब न किसी को सताऊँगा, पर गलतियों पे गलति कराती है जिन्दगी।
प्यासा दौड़ता है मृग पानी की चाह में, बालू को भी पानी सा दिखाती है जिन्दगी।
रे मन ! जिसे तू चाहता वो मिल नहीं सकता, सपनों को सदा झूठा बनाती है जिन्दगी।।

★★★

भाग्य और पुरुषार्थ की महिमा

1 **अबुद्धिपूर्वापेक्षाया, मिष्टानिष्टस्वदेवतः।**
बुद्धिपूर्वव्यपेक्षाया, मिष्टानिष्ट स्व पौरुषात्।। (आ.मी.)

अबुद्धि पूर्वक होने वाले इष्टानिष्ट में अपना भाग्य प्रधान होता है, बुद्धि पूर्वक होने वाले

इष्टानिष्ट में अपना पुरुषार्थ प्रधान होता है।

2 **उद्यमेन हि सिद्धयन्ति, कार्याणि न मनोरथैः।**
न हि सुप्तस्य सिंहस्य, प्रविशन्ति मुखे मृगाः।।
पुरुषार्थ से ही कार्य सिद्ध होते हैं सङ्कल्प करने मात्र से नहीं, जिस प्रकार सोये हुए सिंह के मुख में मृग अपने आप प्रवेश नहीं कर जाते हैं किन्तु सिंह को पुरुषार्थ करना पड़ता है।

3 **कथनी बिन करनी करे, ज्ञानीजन दिन रात।**
निजी बढ़ाई के विना, जैसे मुह में दाँत।।

4 **उद्यम साहस धीरता, पराक्रमी मतिमान।**
एते गुण जो पुरूष में, सो निरभै बलवान।।

5 **जीवन है अनमोल, इसे जो व्यर्थ गमाया करते हैं,**
अपना कर्तव्य भुलाकर, वे पीछे पछताया करते हैं।
जो धर्म निभाते हैं अपना, सदा सुख पाया करते हैं,
वो सच्चे अर्थों में जीवन को सफल बनाया करते हैं।।

6 जिन्दगी सिर्फ अपने ही दम पर जी जाती है, दूसरों के कन्धे पर तो अर्थी ही जाती है।

7 ईश्वर से आशीर्वाद ले लिया भरपूर फसल होगी, बीज बोया नहीं, फसल काटने गया तो कुछ नहीं मिला, आशीर्वाद के साथ पुरूषार्थ आवश्यक है, जैसे पुत्र माँगा पर ब्रह्मचर्य ले लिया तो सन्तान नहीं होती है।

8 सीरियल= सी-देखो, रियल-वास्तविक, उसे देखो जिसके देखने से पाप का बन्ध न हो।

9 इम्पोसिबल= यानी आई एम पोसिबल, अर्थात् असम्भव कुछ भी नहीं है।

10 नारद की उत्पत्ति कुलिङ्गी तापस से होती है, जो कलहप्रिय, धर्मप्रिय होते हैं, इनके माता-पिता को भाग्य से मुनिराज का उपदेश मिल जाता है, बच्चे को अकेला छोड़ मोक्षमार्ग में लग जाते हैं।

11 प्रत्येक वस्तु किराये की हो सकती है, पर विवेक किराये से नहीं मिलता, वह तो निजी ही होना चाहिए।

12 हाथी के कान, पीपल के पत्ते, हवा, पानी ये सदा चञ्चल होते हैं, उसी प्रकार धनादि से मन सदा चञ्चल होता है।

★★★

"दर्शन पूजन भक्ति की महिमा"

''प्रभु भजन से होता-पावन तन मन जीवन''

1 भगवान् को भगवान् के रूप में देखने के लिए वैसी दृष्टि चाहिए बागवान को भगवान् के दर्शन नहीं होते हैं।

2 मन्दिर में दो तरह के दर्पण होते हैं काँच के दर्पण में बाहरी चेहरा दिखता है और भगवान् रूपी दर्पण में आत्मा का स्वरूप दिखाई देता है।

3 **स्नपनं पूजनं स्तोत्रं, जपः ध्यानं श्रुतिस्तवः।**
क्रियाः षडुदिताः सद्भिः, देव सेवासु गेहिनां।। (य.ति.च.)
अभिषेक, पूजन, स्तोत्र, जाप, ध्यान एवं शास्त्र स्वाध्याय आचार्यों ने गृहस्थों के लिए देवपूजा के समय ये छः आवश्यक बतलाये हैं।

4 **तुम निरखत मुझको मिली मेरी सम्पति आज।**
कहाँ चक्री की सम्पदा कहाँ स्वर्ग साम्राज्य।

5 **पावन मेरे नयन भये तुम दरस तैं, पावन पाणी भये तुम चरणन परस तैं।**
पावन मन हो गयो तिहारे ध्यान तैं, पावन रसना मानी तुम गुण गान तैं।।
पावन भयी पर्याय मेरी, में भयो पूरण धनी। मैं शक्ति पूर्वक भक्ति, कीनी पूर्ण भक्ति नहीं बनी।।
धन धन्य ते बड़भागि भविजन, नींव शिवघर की धरी।
वर क्षीरसागर आदि जल मणिकुम्भ भरि भक्ति करी।।

6 इन्द्रभूति गौतम को भगवान् के दर्शन से ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तपाराधना की प्राप्ति हुयी थी।

7 **जिनपूजाप्रभावेन, सतीर्थेश पदं नृणां।**
जायते महिमोपेतं, त्रैलोक्यपतिपूजितं।।
जिन पूजा के प्रभाव से तीनों लोकों के इन्द्रों से पूजित महिमाशाली तीर्थङ्कर पद की प्राप्ति होती है।

8 **जिनाधीशस्य सत्पूजां, वारैकं यः करोति सः।**
सुखं संसारजं लब्ध्वा, मुक्तिस्त्रीं च वशं नयेत्।।
जो जिनेन्द्र भगवान की एक बार भी समीचीन रूप से पूजा करता है वह संसार के सुखों को भोगकर मोक्ष प्राप्त करता है।

9 विषय-कषाय से हाथ-पैर धोकर मन्दिर जी में प्रवेश करना चाहिए।

10. जिनेन्द्र भक्ति, पूजा तथा आर्षग्रन्थों का स्वाध्याय अविपाक निर्जरा का कारण तो है ही किन्तु मोक्ष का भी कारण होता है।

11 अकृत्रिम जिन प्रतिमाओं के दोनों ओर श्री देवी और सरस्वती देवी स्त्री का रूप धारण कर खड़ी हैं, सर्वाल्हाद और सनतकुमार नाम के यक्षदेव खड़े हैं। (त्रि.सा.)

12 लोग भगवान् का भजन तो करते हैं पर श्रद्धा नहीं करते, आप भगवान् का भजन भले ही न करें पर उनके ऊपर श्रद्धा अवश्य करें, किन्तु 'अति भक्ति से प्रबल अन्तराय कर्म की शक्ति क्षीण अवश्य हो जाती है'।

13 परमात्मा की परम शान्त वीतराग मूर्ति की पूजन का महत्त्व यह है कि संसारी जीव संसार के माया और गृहस्थी के प्रपञ्च में ज्यादा फँसा रहता है तथा मन चञ्चल होने से और आत्मा बलवान न होने से केवल शास्त्रों से परमात्मा का वर्णन सुनकर एकाएक विना किसी नक्से के परमात्म स्वरूप का नक्सा या चित्र अपने हृदय में खींचने में समर्थ नहीं होते हैं, वे भी उस मूर्ति के द्वारा परमात्म स्वरूप का कुछ-कुछ ध्यान और चिन्तन करने में समर्थ हो जाते हैं और उसी से आगामी दुखों और पापों की निवृत्ति पूर्वक अपने आत्मस्वरूप की प्राप्ति में अग्रसर होते हैं, कोई चित्रकार चित्र खीचनें का अभ्यास करता है तब वह सुगम और सादे चित्रों को देखकर अपना चित्र खींचने का अभ्यास बढ़ाता है, एकदम कठिन गहन और गम्भीर चित्र को वह नहीं खींच सकता, जब उसका अभ्यास बढ़ जाता है तब कठिन रङ्गीन चित्रों को भी बड़ी सुन्दरता से बनाने लगता है और छोटे चित्रों को बड़ा और बड़े चित्रों को छोटा करने लगता है, जब चित्र विद्या में निष्णात हो जाता है, तब चलती-फिरती वस्तुओं का भी चित्र बड़ी सफाई के साथ बातों-बातों में ही खींचकर रख देता है और चित्र को न देखकर केवल व्यवस्था और हाल मालूम करके उसका साक्षात् जीता-जागता चित्र भी अङ्कित कर देता है, उसी प्रकार यह संसारी जीव एकाएक परमात्म स्वरूप का ध्यान नहीं कर सकता अर्थात् परमात्मा का फोटो अपने अन्दर नहीं खींच सकता वह परमात्मा की परम वीतराग मूर्ति पर से ही अपना ध्यान बढ़ाता है। निरन्तर दर्शनादि के अभ्यास से जब वीतराग छवि से परिचित हो जाता है तब शनैः शनैः एकान्त में बैठकर उस मूर्ति का फोटो अपने हृदय में खींचता है और फिर कुछ देर तक रहने के लिए समर्थ होता है। ऐसा करने पर उसका मनोबल और आत्मबल बढ़ने लगता है फिर वह इस

योग्य हो जाता है, कि उस मूर्ति के मूर्तिमान श्री अरहन्त देव का समवसरणादि विभूति सहित साक्षात् चित्र अपने हृदय में खींचने लगता है, इस प्रकार के ध्यान का नाम रूपस्थ ध्यान है और यह ध्यान प्राय: मुनि अवस्था में होता है।

14 माता-पिता के घर, मित्र के घर, गुरु के घर और ईश्वर के घर जाने के लिए निमन्त्रण की जरुरत नहीं होती है।

15 मन्दिर, सम्मेदशिखर आदि आयतन की पूजा करते हैं एकेन्द्रिय या जड़ की नहीं।

16 स्वाध्याय में अहङ्कार हो सकता है पर भक्ति व जाप में अहंकार की सम्भावना कम होती है।

17 राजगृही के पाँचों पर्वत भगवान् वासुपूज्य को छोड़कर सभी तीर्थङ्करों के समवसरणों के आगमन से पवित्र हुए हैं।

18 जो तीनों कालों में निर्वाण भक्ति पढ़ता है वह स्वर्ग-मोक्ष का पात्र होता है।

19 भगवान् पैर पर पैर इसलिए रखे हैं क्योंकि चलना बाकी नहीं है, हाथ पर हाथ रखे इसलिए बैठे हैं क्योंकि कुछ करना बाकी नहीं है, नासाग्र दृष्टि किये हैं क्योंकि कुछ देखना बाकी नहीं है, ज्ञान चक्षु खुल गया है इसलिए चर्म चक्षु बन्द हो गये हैं मात्र आत्मदर्शन कर रहे हैं।

20 यज्ञ करके पशुओं को मारकर रुधिर का कीचड़ करके अगर स्वर्ग में जाया जाता है तो नरक कैसे जाया जायगा ? (जि.सं.)

21 इन्द्रियों को पशु बना करके, तपोमय वेदी बना करके और अहिंसा की आहूति बना करके आत्म यज्ञ करना चाहिए। (जि.सं.)

22 पुजारी प्रार्थना करता है, हे प्रभो ! तुम्हे जो मिला है वह मुझे भी मिल जाय और भिखारी याचना करता है कि हे प्रभु ! तुमने जो छोड़ा है वह मुझे मिल जाय।

23 सुमेरु समान निश्चल भक्ति संसार नाश कर मुक्ति लाभ कराती है।

24 भक्त जन को सब विद्या सिद्ध हो जाती हैं, भक्ति के विना जो साधु खूब चरित्र पालता है उसका तप बञ्जर भूमि में बोये शाली धान के बीज के समान निष्फल है।

25 मन से पञ्च परमेष्ठी के गुणों में अनुराग होना भाव पूजा है एवं हाँथ जोड़ना बैठकर नमस्कार करना आदि द्रव्य पूजा है।

26 माथे पर तिलक यह सङ्केत करता है, कि भगवान् का आदेश हमे शिरोधार्य है। भगवान् पर विश्वास ही जीवन है और सन्देह ही मृत्यु है।

27 हे जिनदेव ! मैं निरन्तर आपकी वन्दना कर प्रणाम करता हुआ अन्य सीमित फल की याचना नहीं करता हूँ, आप में ही मेरी वह सुदृढ़ भक्ति विद्यमान रहे, जो समस्त स्वर्ग और मोक्षरूपी फल को देती है, यह वर मुझे दीजिये।

28 एक गरीब, अन्धी एवं निःसन्तान वृद्धा ने भगवान को प्रसन्न कर लिया, भगवान ने कहा एक बार में जो वरदान चाहो माँग लो, उसने कहा ! मैं अपने नाती को सोने की थाली में खीर खाते देखूँ, अर्थात् उस वृद्धा ने एक ही वरदान में आँखे, बेटा-बहुएं नाती, धन सम्पत्ति सब कुछ माँग लिया, इसी प्रकार भक्त को 'मेरे न चाह कछु और ईश रत्नत्रय निधि दीजे मुनीश' रत्नत्रय माँग लेने पर तीन लोक की कोई भी सम्पत्ति शेष नहीं रहती है, इसलिए रत्नत्रय ही माँगना चाहिए अन्य कुछ नहीं।

29 बालक ने ए.बी.सी.डी. आदि सारी वर्णमाला भगवान् को सौंप दी और कहा हे भगवन् ! इन्ही शब्दों से सारी स्तुतियाँ बनती हैं, आपको जो पसन्द हो वह स्तुति आप बना लेना और हमारी भक्ति स्वीकार कर लेना, यह निश्छल भक्ति कहलाती है।

30 **धर्मयज्ञ में हवन विधि-** आत्मा यजमान है, शरीर वेदी है, सन्तोष साकल्य है, शुक्ल ध्यान प्राणायाम है, सिद्धपद की प्राप्ति फल है, सत्य बोलना स्तम्भ है, तप अग्नि है, चञ्चल मन पशु है, इन्द्रिय समिधा है, यही धर्म यज्ञ कहलाता है।

31 दूरदर्शन नहीं देव दर्शन करो क्योंकि घर ममता बढ़ाता है और मन्दिर समता बढ़ाता है।

32 मैनासुन्दरी की भक्ति भोगों के लिए नहीं, पाप को पुण्य रूप सङ्क्रमण करने के लिए थी।

33 नष्ट हुआ कूप, वंश, कुल, तालाब, वापी, राज्य, शरणार्थ आये व्यक्ति, गौ, विप्र और विशीर्ण जिनालय इन का उद्धार करने से चार गुणा फल प्राप्त होता है।

34 जैसे पानी से मकान बनता भी है तो गिरता भी है इसी प्रकार प्रशस्त और अप्रशस्त राग को जानना चाहिए।

35 **जो जाणदि अरहंतं, दव्वत्तगुणत्त पज्जयत्तेहिं।**
सो जाणदि अप्पाणं, मोहो खलु जादि तस्स लयं।।
जो अरिहन्त को द्रव्य-गुण-पर्याय से जानता है, वह आत्मा को जानता है और उसका मोह अवश्य नाश को प्राप्त होता है।

36 उदासोऽहम्, दासोऽहम्, सोऽहम्, अहम्। प्राणी पहले संसार शरीर भोगों से उदास होता है फिर

पञ्च परमेष्ठी का दास होता है फिर अपने आप को भगवान के समान चिन्तन करता है तब वह मात्र ज्ञायक हो जाता है।

37 **देवदर्शनप्रशंसा-** प्रातः काल उठकर मङ्गलों के देने में समर्थ, पाप प्रणाशक, श्रेष्ठ पुण्य के हेतु तथा सुर-असुरों के द्वारा सेवित चरण-कमलों से युक्त श्री जिनेन्द्र प्रतिमा का अच्छी तरह दर्शन करना चाहिए।

38 हे भगवन् ! आज आपके दर्शन से मेरे नेत्र कृतकृत्य हो गये हैं, जन्म सफल हो गया है और सब पाप विलीन हो गये हैं।

39 हे देव ! आपके चरण युगल के दर्शन से कर्मों का क्षय होता है, दर्शन करने वाला व्यक्ति बोधि तथा समाधि को, संसार की निकटता को, पाप के मूल कारण के विनाश को तथा परलोक में सर्वार्थसिद्धि के विपुल सुख को प्राप्त होता है।

40 **नासा मुखे तथा नेत्रे, हृदये नाभि मण्डले।**
स्थानेषु व्यङ्गी तेष्वेषु, प्रतिमां नैव पूज्यते।।
नाक, मुख, नेत्र, हृदय, नाभि मण्डल के भग्न होने पर उस प्रतिमा की पूजा नहीं करनी चाहिये।

41 **पतिते जिनबिम्बे, ऽष्टशतेन स्नापयेद् घटैः।**
अष्टोत्तरशतं कुर्यान्, मूल मन्त्रेण चाहुतीः।। (जि.सं.)
अगर प्रतिमा जी गिर जाती है तो उसी प्रतिमा का एक सौ आठ कलशों से अभिषेक एवं एक सौ आठ मन्त्रों से हवन करें।

42 जिनबिम्ब के गिर जाने का जो प्रायश्चित है वही प्रायश्चित अस्पृश्य मनुष्य के प्रतिमा को छू लेने पर है। (जि.सं.)

43 जो हिंसा करता है उसका ध्यान, अभिषेक, दान, सत्कर्म सभी निष्फल होते हैं। (जि.सं.)

44 चेहरे पर लगी कालिख को देखकर, सबसे पहले साफ करने का भाव होता है उसी प्रकार जिनदेव रूपी दर्पण को देखकर आत्मा पर लगी कर्म-नोकर्म रुपी कालिख को छुटाने का पुरूषार्थ करना चाहिये।

45 **वर्णी जी के साथ शिखरजी यात्रा** में सागर वालों का रसोइया था, वर्णी जी को भोजन रुचा नहीं, नाराज होकर बोले तुम्हारे हाथ का भोजन नहीं करेंगे, स्वयं भोजन बनाया तीन घण्टे लग गये, धुँआ से आखों में दर्द हो गया, रात में स्वप्न में बाईजी ने कहा ! तुम गुस्से में यात्रा करोगे

तो नरक जाना पड़ेगा, भावना पवित्र होना चाहिए।

46 **सीता जी को लङ्का से लाने के लिए** पुल बाँधने की आवश्यकता पड़ी, हनुमान जी पत्थर पर राम का नाम लिखकर पानी में डालते थे, तो पत्थर पानी में नहीं डूबता था, रामचन्द्रजी ने पानी में पत्थर डाला तो डूब गया, तब रामचन्द्र जी ने हनुमान जी से पूँछा आप पानी में पत्थर डालते हैं तो डूबता नहीं इसमें क्या रहस्य है ? तो हनुमान जी बोले भगवन् ! जो आपके हाँथ से छूट जाएगा वह डूबने से कैसे बच सकता है, इसी प्रकार जिसके हृदय में सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के प्रति श्रद्धा नहीं है वह संसार समुद्र में डूबने से कैसे बच सकता है ?

47 **कुम्हार का दर्शन-** एक व्यक्ति को मुनिराज ने देवदर्शन का नियम दिया तो वह कहने लगा की हमारे घर से मन्दिर दूर है, तो मुनिराज ने कहा तुम्हारे घर के सामने कौन रहता है ? व्यक्ति बोला !'कुम्हार', तो मुनिराज ने कहा प्रतिदिन उसी के दर्शन कर लिया करो, तो व्यक्ति तैयार हो गया और प्रतिदिन कुम्हार के दर्शन करने लगा, एक दिन कुम्हार सुबह-सुबह मिट्टी लेने दूर खान पर चला गया, तो व्यक्ति ढूँढ़ते हुए खान पर गया, कुम्हार मिट्टी खोद रहा था तो उसे स्वर्ण मोहरों से भरा एक घड़ा मिला, व्यक्ति दर्शन करके लौट रहा था, तो कुम्हार ने उसे देख लिया और सोचा कि लगता है इसने ये खजाने का घड़ा देख लिया है और ये अगर राजा के पास जाकर बोल देगा तो खजाना भी जाएगा और मैं भी जेल जाऊँगा, तो उस व्यक्ति को बुलाकर कहा कि देखो आधा तुम ले लो और आधा मैं ले लेता हूँ, व्यक्ति सोचता है कि इस कुम्हार के नियम पूर्वक दर्शन से इतना लाभ हुआ है तो भगवान् के दर्शन करने से पता नहीं कितना लाभ होगा और उसने प्रतिदिन देवदर्शन का नियम ले लिया।

आपने दोनों हाथ पकड़ लिये

48 एक राजा की असमय में मृत्यु हो गई, उसका बच्चा छोटा था उसे ही राजा बना दिया, पड़ोसी राजा ने मौके का लाभ उठाना चाहा, पर बच्चे के मंत्रियों ने कहा राजन् ! राज्य तो राजा सम्भालेंगे, जब तक वे छोटे हैं तब तक हम सहयोग करेंगे, मन्त्री की बात सुनकर राजा ने कहा यदि हमारे प्रश्नों का बच्चा उत्तर दे देगा तो हम राज्य नहीं लेगें, सबको चिन्ता हुई, माँ ने बच्चे को रात भर समझाया बेटा राजा ऐसा पूँछे तो ऐसा उत्तर देना, प्रातः काल जब जाने लगा तो बच्चे ने कहा माँ ! यदि राजा ने इन प्रश्नों में से कोई भी प्रश्न नहीं पूँछा तो क्या मैं अपनी कल्पना से भी उत्तर दे सकता हूँ ? माँ ने कहा ! हाँ बेटा पर लाज रखना, बच्चा राजा के सामने उपस्थित हुआ, राजा ने उसके दोनों हाँथ पकड़ लिये और कहा आप पराधीन हो अपनी रक्षा

कैसे करोगे ? तब बच्चे ने उत्तर दिया, राजन् विवाह के समय जब लड़का कन्या का एक हाँथ पकड़ता है तो पूरे जीवन रक्षा करनी पड़ती है, आपने तो मेरे दोनों हाथ पकड़ लिये हैं, अब हम निश्चिन्त हैं, राजा ने प्रसन्न होकर छाती से लगा लिया, राज गद्दी दे दी, इसी प्रकार जो भगवान के दोनों चरण की शरण ले लेता है उसे किसी प्रकार की चिन्ता नहीं रहती है।

49 यदि हम दया के विना चलते हैं तो वह मोक्ष मार्ग नहीं मोह मार्ग है।

50 मन्दिर जाने के लिये घड़ी देखकर शीघ्र आरम्भ का त्याग करना मोह की मन्दता है एवं मन्दिर में घड़ी देखकर पूजा बन्द करना मोह की तीव्रता है।

51 भगवान की पूजा और पत्नि से प्यार में नौकर नहीं रखा जाता है।

52 तलवार का नाम लेने से जीभ नहीं कटेगी पर परमात्मा का नाम लेने से कर्म जरूर कटेंगे पर आज मन्दिरों में भक्त कम और भिखारी ज्यादा आते हैं।

53 सच्चा धर्मात्मा वह नहीं जो भगवान को दो-दो थाली द्रव्य चढ़ाता है, किन्तु सच्चा धर्मात्मा तो वह है जो भोजन करने बैठता है और उसे पता चले कि पड़ोसी भूखा है, तो अपनी आधी थाली उसके घर दे आता है।

54 **विसर्जन की कथा-**

गणेश जी के भक्त, नाव में बैठकर, नदी पार कर रहे थे,
तूफान को आया देखकर सभी डर रहे थे,
अचानक नाव में पानी भरने लगा,
तो हर भक्त गणेशजी का स्मरण करने लगा,
गणेशजी नाव पर दौड़े-दौड़े आये, कुछ नृत्य के दृश्य दिखलाये,
नाव थर्राने लगी, भक्त की जान मुंह में आने लगी,
भक्त बोला, भगवान हम मर रहे हैं,
ऐसे समय में आप ये क्या कर रहे हैं ?
गणेशजी बोले प्रिय भक्तों,
जिस तरह तुम मुझे विसर्जन करने के लिये ले जाते हो,
तब तुम जिस तरह नाचते गाते खुशियाँ मनाते हो,
मैं भी बस उसी क्रम को दोहरा रहा हूँ,
और नाच गा कर तुम्हे डुबा रहा हूँ।

55 अन्धा मन्दिर जा रहा था, किसी ने कहा तुम्हें दिखता नहीं है तो मन्दिर क्यों जाते हो ? उसने कहा ! हमें नहीं दिखता तो क्या भगवान को भी नहीं दिखता है ?

56 मन्दिर के शिखर को देखकर प्रणाम करना, मालूम नहीं मन्दिर तक पहुँच पाते कि नहीं।

57 मूर्ति में मूर्तिमान के दर्शन करना चाहिए।

58 'प्रभू चरण छह तीन रहू, दुनिया से छत्तीस' भगवद् भक्ति 63 की तरह, संसार से उदासीनता 36 की तरह होना चाहिए।

59 **धर्मध्यान के बाह्य लक्षण**- शास्त्र के अर्थ की खोज करना, शीलव्रत का पालन करना, गुणों के समूह में अनुराग रखना, अङ्गड़ाई, जमुहाई, छींक, डकार और श्वासोच्छ्वास में मन्दता होना शरीर को निश्चल रखना, आत्मा को व्रतों से युक्त करना आदि धर्मध्यान के बाह्य लक्षण हैं।

60 **भगवान् के विहार की महिमा**- जिस मार्ग से भगवान् का विहार होता है, वह मार्ग अपने चिन्हों से एक वर्ष तक यह प्रकट करता है कि वहाँ से भगवान् का विहार हुआ है, तथा रत्नवृष्टि से वह मार्ग ऐसा सुशोभित होता है जैसे नक्षत्रों के समूह से चन्द्रमा सुशोभित होता है, उस समय मन्दबुद्धि मनुष्य तीक्ष्णबुद्धि के धारक हो जाते हैं, समस्त हिंसक जीव अहिंसक हो जाते हैं और भगवान् के विहार से अनुगृहीत भूमि में दो सौ योजन तक उपद्रव आदि नहीं होते हैं और पचास वर्ष तक कोई उपद्रव-दुर्भिक्ष आदि नहीं होता है, भगवान् के समीप रहने वाले लोगों को खेद, पसीना, पीड़ा तथा चिन्ता आदि कुछ भी उपद्रव नहीं होता है।

61 **दीक्षोपरान्त उपवास**- सुमतिनाथ और मल्लिनाथ भगवान् ने भोजन करने के बाद दीक्षा धारण की तथा दीक्षा के तीन दिन के बाद तीन दिन का उपवास लिया, पार्श्वनाथ और वासुपूज्य भगवान् ने दीक्षा के बाद एक दिन का उपवास धारण किया था और शेष तीर्थकरों ने दो दिन का उपवास लिया था, किन्तु आदिनाथ भगवान् की दीक्षा लेने के बाद छह माह के अनशन की कथा सर्वत्र प्रसिद्ध है।

62 **केवलज्ञान उत्पत्ति स्थान**- वृषभनाथ भगवान् को पूर्वताल नगर के सकटामुख वन में, नेमिनाथ भगवान् को गिरनार पर्वत पर, पार्श्वनाथ भगवान को आश्रम के समीप, महावीर भगवान को ऋजुकूला नदी के तट पर शेष तीर्थङ्करों को अपने-अपने नगर के उद्यान में केवलज्ञान उत्पन्न हुआ था।

63 वृषभनाथ, श्रेयाँसनाथ, मल्लिनाथ, नेमिनाथ और पार्श्वनाथ भगवान् को पूर्वाण्ह काल में शेष को अपराण्ह काल में केवलोत्पत्ति हुयी थी।

64 **विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति शाकिनी भूत पन्नगाः,**
विषं निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे।।
जिनेन्द्र भगवान् के स्तवन करने से अनेक विघ्न, शाकिनी, भूत, सर्प एवं विष भी निर्विषता को प्राप्त हो जाते हैं।

65 **देवाधिदेव चरणे परिचरणं, सर्वदुःखनिर्हरणं।**
कामदुहि कामदाहिनी, परिचिनुयादादृतो नित्यं।।
देवाधिदेव के चरणों की पूजा समस्त दुःखों का नाश करने वाली है, मनोरथों को पूर्ण करने वाली है, काम का नाश करने वाली है, इसलिए विनय पूर्वक नित्य पूजा करनी चाहिये।

66 **विषापहारं मणिमौषधानि, मन्त्रं समुद्दिश्य रसायनञ्च।**
भ्राम्यन्त्यहो न त्वमितिस्मरन्ति, पर्यायनामानि तवैव तानि।।
लोग विष को दूर करने के लिए मणि, मन्त्र, औषधि, रसायन आदि को ढूँढते हैं पर वे यह नहीं समझते कि हे भगवन् ! वे सब आपके ही पर्यायवाची नाम हैं।

67 **सुखाय दुःखानि गुणाय दोषान्, धर्माय पापानि समाचरन्ति।**
तैलाय बालाः सिकतासमूहं, निपीडयन्ति स्फुटमत्वदीयाः।।
अज्ञानी प्राणी सुख को प्राप्त करने के लिए दुःख के साधन जुटाता है, गुण प्राप्त करने के लिए दोष देखता है, धर्म के लिए पाप करता है, उसका ऐसा करना मानो तैल के लिए रेत पेलने जैसा है।

68 **यदर्च्चा भावेन प्रमुदित मना दर्दुर इह, क्षणादासीत् स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः।**
लभन्ते सद्भक्ताः शिव सुख समाजं किमु तदा, महावीरस्वामी नयनपथ गामी भवतु मे।।
जिन भगवान् की पूजा के भाव से मेंढक क्षण भर में ऋद्धिधारी देव हो गया, फिर सच्चे भक्त मोक्ष प्राप्त कर लें तो क्या आश्चर्य है ? वे महावीर भगवान् मेरे नेत्रों के पथगामी बने।

69 **शुद्धे ज्ञाने, शुचिनि चरिते, सत्यपि त्वय्यनीचा,**
भक्तिर्नोचे, दनवधि सुखा, वञ्चिका कुञ्चिकेयम्।
शक्योद्घाटं, भवति हि कथं, मुक्ति कामस्य पुंसो,
मुक्तिद्वारं, परिदृढ़ महा, मोह मुद्रा कवाटं।।
विशुद्ध ज्ञान और निर्मल चरित्र के रहते हुए भी यदि जिनेन्द्र भगवान् में उत्कृष्ट भक्ति नहीं है, तो फिर मिथ्यात्व रूपी मुद्रा से अङ्कित मोक्ष मन्दिर का द्वार कैसे खोला जा सकता है।

70 **जन्मोन्मार्ज्यं भजतु भवतः पाद पदमं न लभ्यं,**
तच्चेत् स्वैरं चरतु न च दुर्देवतां सेवतां सः।
अश्नात्यन्नं यदिह सुलभं दुर्लभं चेन्मुधास्ते,
क्षुद्व्यावत्यै कवलयति कः कालकूटं वुभुक्षुः।।
जिसको संसार समुद्र को सुखाना हो, वह जिनेन्द्र भगवान् के चरणों की सेवा करे, यदि जिनेन्द्र भगवान् के चरण न मिलें, तो स्वेच्छानुसार भावपूजा, जाप, ध्यान आदि कर लें, पर कुदेवों का पूजन न करें, क्योंकि प्राणी भूख मिटाने के लिए अन्न मिलता है तो ही खाता है, अन्यथा भूखा बैठा रहता है, पर भूख मिटाने के लिए कालकूट जहर नहीं खाता है, कुदेव कालकूट जहर से भी ज्यादा हानिकारक हैं।

71 **आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि, नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या।**
जातोऽस्मि तेन जन बान्धव ! दुःख पात्रं, यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भाव शून्याः।।
हे जनबांधव ! मैंने आपका नाम सुना, पूजा की, दर्शन भी किए, किन्तु भक्ति पूर्वक हृदय में धारण नहीं किया इसलिए दुःखों का पात्र हुआ हूँ, क्योंकि भाव शून्य क्रिया पूर्ण फलदायी नहीं होती है।

72 **जिने भक्ति र्जिने भक्ति र्जिने भक्ति र्दिने दिने।**
सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु भवे भवे।।
जिनेन्द्र भगवान् में मेरी भक्ति हो, जिनेन्द्र भगवान् में मेरी भक्ति हो, जिनेन्द्र भगवान् में मेरी भक्ति हो, हमेशा हो, हमेशा हो, हमेशा हो, पूज्यपाद महाराज जी ने ऐसी भावना व्यक्त की है।

73 **त्वत्संस्तवेन भवसन्ततिसन्निबद्धं, पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजां।**
आक्रान्तलोकमलिनीलमशेषमाशु, सूर्यांशुभिन्नमिवशार्वरमन्धकारं।।
हे भगवन् ! आपका स्तवन करने से अनेक भवों के पाप क्षण भर में नष्ट हो जाते हैं, जिस प्रकार रात्रि कालीन अन्धकार सूर्य की किरणों से क्षण भर में नष्ट हो जाता है।

74 **आस्तां तवस्तवनमस्तसमस्तदोषं, त्वत्सङ्कथापि जगतां दुरितानि हन्ति।**
दूरे सहस्त्रकिरणः कुरुते प्रभैव, पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि।।
हे भगवन् ! समस्त दोषों से रहित आपका स्तवन तो दूर रहे, आपका नाम ही संसारी प्राणियों के पापों को नष्ट करता है, जिस प्रकार सूर्य दूर ही रहता है, किन्तु उसकी किरणें ही तालाबों में कमलों को विकसित कर देती हैं।

75 **देवागमनभोयान, चामरादिविभूतयः।**
मायाविष्वपि दृश्यन्ते, नातस्त्वमसि नो महान्।।
देवों का आगमन, आकाश में गमन, चमर आदि समवसरण की विभूति तो मायावियों में भी देखी जाती है अतः इन से नहीं किन्तु वीतरागता, सर्वज्ञता और हितोपदेशिता से भगवान् आप महान हैं।

77 **बिम्बादलोन्नति यवोन्नतिमेव भक्त्या, ये कारयन्ति जिनसद्म जिनाकृतिञ्च।**
पुण्यं तदीयमिह वागपि नैव शक्ता, स्तोतुं परस्य किमु कारयितु र्द्वयस्य।।
बिम्ब के फल बराबर जिनालय बनवाता है या यवा के बराबर भक्ति पूर्वक प्रतिमा स्थापन करवाता है उसके पुण्य का वर्णन सरस्वती देवी भी नहीं कर सकती, फिर जो जिनप्रतिमा-जिनालय दोनों बनवाते हैं, उनका तो कहना ही क्या ?

78 लोग एक मुट्ठी चावल को निर्माल्य समझते हैं, मन्दिर के पैसे बिजली आदि को निर्माल्य नहीं समझते, जो निर्माल्य खाता है उसकी पीठ पर कूबड़ होती है, अगले जन्म में देवों के विमान को खींचता है।

79 व्यन्तरों का सर्वत्र आवास होता है, उनसे स्वीकृति लेकर कार्य करें, नहीं तो बाधायें उपस्थित होती हैं।

80 जाप/सामायिक ईशान दिशा में बैठकर करने से विशेष लाभ होता है, दक्षिण में जाप-स्वाध्याय वर्जित है एवं अभिषेक पूजा उत्तर मुख होकर करना चाहिए।

81 यदि भगवान् की दृष्टि बाहर नहीं जाती है तो समाज की उन्नति नहीं हो सकती है, भगवान् की दृष्टि जितनी दूर जाती है समाज उतनी सुखी रहती है।

82 नन्दीश्वर द्वीप में अकृत्रिम प्रतिमाओं का अभिषेक होता है। (ति.प.)

83 जो श्रावक खाली हाथ मन्दिर जाता है वह मन्दिर से खाली हाथ ही वापस आता है।

84 दुनिया को छोड़ो तब भगवान् मिलते हैं, भगवान् को भी छोड़ो तब आत्मा मिलती है।

85 भगवान् का पादमूल मेरे अन्दर की पवित्रता का कारण है अतः काया की आराधना नहीं काया के माध्यम से भगवान् के गुणों की आराधना की जाती है, तभी स्तुति होती है और ऋद्धियाँ भी प्रकट होती हैं।

86 अनावश्यक पत्थर निकाल देने पर मूर्ति बनती है और कर्म नोकर्म का भार दूर होने पर भगवान्

आत्मा प्रकट होती है।

87 देव-शास्त्र-गुरू का चेहरा नहीं स्वरूप का दर्शन-चिन्तन किया जाता है।

88 सिद्धों का नाम लेने वाले भी पूज्य हैं, धन्य हैं व गुणी हैं।

89 जिनबिम्ब एक्स-रे के समान होता है, दर्पण केमरे के समान होता है।

90 हे जिनेन्द्र ! चर्म मय नेत्र से भी आपका दर्शन होने पर वह पुण्य प्राप्त होता है, जो भविष्य में केवलज्ञान प्राप्त कराता है, फिर अन्तर्मन से दर्शन करने पर तो शीघ्र ही केवलज्ञान प्राप्त होता है।

91 दुर्जनों को गले लगाना सच्चा शङ्कर बनने का रास्ता प्रभु ने बताया है।

ज्वार के दाने, मोती बने

92 सेठ की सेवा के लिए गरीब बालक तीर्थ यात्रा में गये थे, सेठ से पहले ज्वाँर के दाने चढ़ाये और भगवान् से पहले प्रार्थना की और कहा 'भगवन् क्षमा करना हम गरीब हैं' और आकर सो गये, सेठ ने सोचा मुझसे पहले कौन मोती चढ़ा कर गया है, पता चला बच्चों ने ज्वाँर के दाने चढ़ाये थे वे मोती बन गये तब सेठ का गर्व चूर-चूर हो गया, भक्ति के लिए सोना-चाँदी की नहीं श्रद्धा और समर्पण की आवश्यकता होती है।

ज्ञान और वैराग मृतक

93 नारद जी गङ्गा स्नान करने गये, घाट पर एक कन्या रो रही थी, पचास-पचास साल के ज्ञान और वैराग्य नामक दो मृत पुत्र पड़े थे, कन्या का नाम था भक्ति, पञ्चम काल में ज्ञान और वैराग्य बूढ़े हो गये किन्तु भक्ति रूपी माँ युवती है अर्थात् संगीत से सब झूमने लगते हैं अतः क्षयोपशम के अनुसार अपने ज्ञान और वैराग्य को बढ़ाते हुए भक्ति के माध्यम से अपना कल्याण करना चाहिए।

94 सास अपनी बहु को मन्दिर ले गयी उसे गाय को देखकर दूध की याद आ गयी राक्षस का स्टेच्यु देखकर डर गयी, सास ने कहा इसी प्रकार भगवान् के दर्शन से अपने स्वरूप की याद आ जाती है, इसलिए जिनदर्शन जरूरी है, अतः हमें अन्य को न देखकर अपने आदर्श को देखना चाहिए जिससे हमें उन जैसा बनने की प्रेरणा मिलती रहे।

पाकिस्तान में जैन मंदिर

95 पाकिस्तान में चालीस जैन परिवार थे, आतङ्कवाद से परेशान होकर मन्दिर सहित पाकिस्तान छोड़ने का विचार किया हवाई अड्डे पर अङ्ग्रेज गवर्नर ने कहा प्रति व्यक्ति इतना सामान ले जा

सकते हो आस्थावान लोगों ने अपनी सम्पति वहीं छोड़ दी जयपुर में घास की झोपड़ी में भगवान विराजमान किये परिश्रम करके पहले पूजन द्रव्य फिर भोजन द्रव्य खरीदते थे कुछ दिन बाद पहले मन्दिर फिर घर बनवाया। जो खाली हाथ आये थे, वास्तव में जिसके पास धर्म है वह खाली नहीं कहलाता है, बाद में वे सब मालामाल हो गये, अतः आस्था रखकर आयतानों की रक्षा करना चाहिए।

सबको एक एक पद

96 सीता जी की प्राप्ति के बाद रामचन्द्रजी ने हनुमान जी से कहा मैने अङ्गद, विभीषण सुग्रीव आदि को प्रत्युपकार के रूप में एक-एक पद दिया है, तुम्हे कौन सा पद चाहिए ? उन्होंने मना किया रामचन्द्रजी के आग्रह पर बोले मैं दो पद लूँगा, रामचन्द्रजी ने कहा तुम्हारी मर्जी, हनुमान जी बोले मर्जी नहीं अर्जी है वैसे पद से मद आता है, रामचन्द्रजी की स्वीकृति के बाद हनुमान जी ने दोनों पैर पकड़ लिये और कहा प्रभु ये दोनों पद हृदय में रहेंगे तो तीन लोक की सम्पति मिल जायेगी, बाकी के पद अपद हैं, आपद के आस्पद हैं एवं पद में राजी होने वाला भूतपूर्व बन जाता है तथा प्रभु में राजी होने वाला अभूतपूर्व बन जाता है, रामचन्द्रजी ने हनुमान जी के शीश पर आशीष का हाथ रख दिया।

97 परिणामों का परिणाम- दोष अर्थात् दुर्बलता या विकारों से मुक्ति ही दुःखों से मुक्ति का उपाय है।

98 **सोऽहमित्यात्त संस्कारस्, तस्मिन् भावनया पुनः।**
तत्रैव दृढ़ संस्काराल्,-लभते ह्यात्मनि स्थितिं।।

'**जैसा सोचो वैसा पाओ** सोऽहम्, शुद्धोऽहम्, बुद्धोऽहम्' मैं भगवान् जैसा शुद्ध, बुद्ध, ज्ञानी हूँ ऐसा बार-बार ध्यान करने से आत्मा में स्थिरता होती है, आत्म सुझाव, आत्म सम्बोधन, हिंसा छोड़ता हूँ अहिंसा ग्रहण करता हूँ आदि आत्मा को सम्बोधित करके आत्मा को अच्छा बनने की सलाह दें, अवगुण छोड़कर गुणों को ग्रहण करें इससे आत्मा में स्थिरता प्राप्त होती है।

99 आत्मा में ही समीचीन भावना उत्पन्न होती है, आत्मा ही हित का ज्ञाता होता है, आत्मा स्वयं ही हित में लगता है इसलिए आत्मा का गुरु आत्मा है और यदि आत्मा पापों को कषायों को अवगुणों को नहीं छोड़ता है तो आत्मा स्वयं का ही शत्रु है।

''अतिशय-''

100 **दश अतिशय हैं जन्म के, दश ही केवलज्ञान।**
चौदह होते देवकृत, अतिशय चौतिस जान।।

''जन्म के दस-''

अतिशय रूप, सुगन्ध तन, नाही पसेव निहार। प्रिय हित वचन, अतुल्य बल, रुधिर श्वेत आकार।।
लक्षण सहस रु आठ तन, समचतुष्क सण्ठान। वज्रवृषभ नाराच जुत, ये जनमत दश जान।।

''केवलज्ञान के दस-''

योजन शत इक में सुभिख, गगन गमन मुख चार। नहीं अदया उपसर्ग नहीं, नाहीं कवलाहार।।
सब विद्या ईश्वरपनो, नाहीं बढ़े नख केश। अनमिष दृग छाया रहित दश केवल के वेश।।

देवकृत चौदह-

देवरचित हैं चार दश, अर्धमागधी भाष। आपस माहि मित्रता, निर्मल दिश आकाश।।
होत फूल फल ऋतु सबै, पृथ्वी काँच समान। चरण कमल तल कमल है, नभते जय जयवान।।
मन्द सुगन्ध बयार पुनि, गन्धोदक की वृष्टि। भूमि विषै कण्टक नहीं, हर्ष मयी सब सृष्टि।।
धर्म चक्र आगे चले, पुनि वसु मङ्गल सार। अतिशय श्री अरहन्त के, ये चौतीस प्रकार।।

101 **रत्नवृष्टि की बिक्री**-एक वणिक अपना खरीदा हुआ माल बेचने के लिए बहुत से अमूल्य मणि लेकर जरासन्ध से मिला, उन मणियों को देखकर राजा जरासन्ध ने उससे पूँछा कि ये मणि तुम कहाँ से लाये हो ? वणिक ने कहा हे स्वामिन् ! ये मणि उस द्वारिका पुरी से लाये हैं जहाँ अत्यन्त पराक्रमी राजा कृष्ण जी रहते हैं, यादवों के स्वामी समुद्रविजय और उनकी रानी शिवादेवी को जब तीर्थङ्कर श्री नेमिनाथ जी उत्पन्न हुये थे, तब पन्द्रह मास तक देवों ने रत्न वृष्टि की थी, उन्हीं रत्नों में से ये रत्न लाये हैं, तात्पर्य यह है कि दिव्य रत्नों का भी व्यापार होता है।

''प्रातिहार्य-''

102 **तरु अशोक के निकट में, सिंहासन छविदार, तीन छत्र सिर पर लसें, भामण्डल पिछवार।**
दिव्य ध्वनि मुखते खिरे, पुष्प वृष्टि सुर होय, ढौरे चौसठ चमर जस, बाजे दुन्दभि जोय।।

''अनन्त चतुष्टय-''

103 **ज्ञान अनन्त, अनन्त सुख, दरश अनन्त प्रमान। बल अनन्त अरिहन्त सो, इष्ट देव पहचान।।**

''अट्ठारह दोष-''

104 **जन्म जरा तृषा क्षुधा, विस्मय आरत खेद, रोग शोक मद मोह भय, निद्रा चिन्ता स्वेद।**
राग-द्वेष अरु मरण जुत, ये अष्टादश दोष, नाही होत अरहन्त के सो छवि लागत मोष।।

''सिद्धों के अष्ट गुण-''

105 **समकित दर्शन ज्ञान अगुरुलघू अवगाहना। सूक्ष्म वीरजवान निराबाध गुण सिद्ध के।।**
सिद्धों का सुमिरण करे, पाप रहे न कोय। करम झरत क्षण एक में, निज गुण सिद्धि होय।।

''आचार्य के छत्तीस गुण-''

106 द्वादश तप दश धर्म जुत, पालें पञ्चाचार। षडावश्यक गुप्तित्रय, आचारज गुणसार।।

''बारह तप-''

107 अनशन ऊनोदर करें, व्रतसंख्या रस छोर।
विविक्त शैयासन करें, काय क्लेश सुठौर।।
प्रायश्चित धर विनय जुत, वैयावृत स्वाध्याय।
पुनि उत्सर्ग विचार के, धरे ध्यान मन लाय।।
हमने भगवान् के दरबार में बड़ी गजब बात देखी है।
देते हुए उसके हाथ नहीं देखे पर झोलियाँ सबकी भरी देखी हैं।।

108 शास्त्रों का हो पठन सुखदा, लाभ सत्सङ्गति का।
सद् व्रत्तों का सुजस कहके, दोष ढाकूँ सभी का।।
बोलूँ प्यारे वचन हित के आपका रूप ध्याऊँ।
तो लों सेऊं चरण जिन के मोक्ष जो लों न पाऊँ।।
तव पद मेरे हिय में मम हिय तेरे पुनीत चरणों में।
तव लों लीन रहूँ प्रभु जब लों न पाया न मुक्ति पद मैंने।।

109. ऐसो वेद न देखो पांड़े, आसं पास कपासा। खोद विनोद करो मत पांड़े, अर्धं-अर्धं स्वाहा॥

110 साधना अभिशाप को वरदान बना देती है। भावना पाषाण को भगवान् बना देती है।।

111 जब चिन्तये तब सहस फल, लक्षा गमन करेय। होय अनन्त फल तब, जब जिनवर दर्शेय।।

112 पूजा तीन प्रकार की, छोटी-बड़ी-मझोल। जैसा मौका देखिये, वैसी लीजे खोल।।

113 क्षणभङ्गुर जीवन की कलियाँ, प्रातः काल खिली न खिली,
मलयाचल की शुचि शीतल वायु, सुगन्ध समेत मिली न मिली।
कलिकाल कुठार लिये फिरता, तन नम्र से चोट झिली न झिली,
भज ले अरिहन्त अरी रसना!, फिर अन्त समय में हिली न हिली।।

114 पतझड़ में पेड़ के पत्ते झड़ जाते हैं, बुरे वक्त में सगे भाई लड़ जाते हैं।
चारदिन की जिन्दगी है, प्रेम से बिता डालो, अन्त समय में सभी मौन चले जाते हैं।।

★★★

"सम्यग्दर्शन की महिमा"

1 सम्यक्त्व रत्न के बदले जो विषय सुख की आकाङ्क्षा करता है, वह मनुष्य उस विषयी मनुष्य के तुल्य है जो किसी दासी के साथ सम्भोग करने के बदले में चिन्तामणि रत्न देता है।

2 विशुद्धि- व्रतों के पालन करने से सम्यग्दर्शन की विशुद्धि में वृद्धि होती है।

3 दर्शन विशुद्धि- प्रारम्भ के चार अङ्ग निःशङ्कित, निःकाङ्क्षित निर्विचिकित्सा और अमूढ़दृष्टि वीतरागता प्रकट करते हैं एवं अन्त के चार अङ्ग उपगूहन, स्थितिकरण, वात्सल्य और प्रभावना सम्यग्दर्शन की विशुद्धि को बढ़ाने वाले हैं।

4 अनुपगूहन- निन्दा का भाव वात्सल्य और स्थितिकरण के अभाव में होता है।

5 हार्ट फ़ैल होना उतना हानिकारक नही जितना कि श्रद्धा का फ़ैल हो जाना हानिकारक है।

6 सिंह को अपने शत्रु की पहचान होती है, कुत्ते को नहीं, इसी प्रकार सम्यग्दृष्टि को अपने वास्तविक शत्रु मिथ्यात्व की पहचान होती है मिथ्यादृष्टि को नहीं।

7 **व्यन्तर ने सेठ से अपनी पूजा का आग्रह किया**, सेठ ने मना कर दिया, उसने कहा हम तुम्हारे लड़के को मार डालेंगे, सेठ ने कहा आयु पूर्ण हुए विना कोई नहीं मरता, दुर्भाग्य से लड़का मर गया, व्यन्तर ने कुछ दिन बाद फिर कहा हमारी पूजा करो नहीं तो दूसरे लड़के को ले जायेंगे, सेठ ने कहा- हमको ले चलो हम तुम्हारी पूजा नहीं कर रहे हैं, लड़के ने क्या बिगाड़ा है, देव ने क्षमा माँगी, कोई किसी का कुछ नहीं कर सकता, अतः हमें भय और लोभ से भी व्यन्तरादि की पूजा नहीं करना चाहिए।

8 **श्रद्धानं परमार्थाना, माप्तागम तपोभृतां।**
त्रिमूढ़ापोढ़मष्टाङ्गं, सम्यग्दर्शनमस्मयं।
तीन मूढ़ताओं से रहित आठ अङ्गों से सहित सच्चे देव-शास्त्र-गुरु का श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन कहलाता है।

9 दर्शन मोह की 3 और अनंतानुबंधी की 4 इन सात प्रकृतियों के उपशम, क्षय अथवा क्षयोपशम से क्रमशः औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक सम्यग्दर्शन होते हैं।

10 सम्यग्दर्शन से दुर्गति का नाश होता है, निर्दोष ज्ञान से कीर्ति की प्राप्ति होती है, चारित्र से लोक में पूजा होती है परन्तु मोक्ष तीनों की एकता से ही प्राप्त होता है।

11 सम्यग्दृष्टि को सभी कर्मो का अन्तःकोड़ा-कोड़ी सागर से ज्यादा स्थिति बन्ध नहीं होता है।

12 मिथ्यात्व से यदि दुर्गति हुई तो निगोदादि में दीर्घकाल तक भ्रमण करना पड़ता है, यदि सुगति

हुई तो देवगति में किल्विष या आभियोग्य जाति का देव हो दुःख उठाना पड़ता है, इन्द्रियों की इच्छानुकूल प्रवृत्ति करना मिथ्यात्व का लक्षण है।

13 ज्ञानीजनों ने समस्त पापों को सरसों के समान और मिथ्यात्व को मेरु के समान उपमा दी है।

14 जिस प्रकार राम को सीता का पता लगते ही प्राप्त करने की अत्यधिक छटपटी हुयी, उसी प्रकार अपनी आत्मा की खबर लगते ही सम्यग्दृष्टि को आत्मा की प्राप्ति की छटपटी होना चाहिए, जिसे छटपटी नहीं है वह सम्यग्दृष्टि नहीं है।

15 विपत्ति में धैर्य रखने से, प्रारब्ध कार्य के पूर्ण करने आदि से तथा प्रशंसनीय प्रशम आदि गुणों से प्राणियों के आत्मरूप सम्यग्दर्शन का भी निर्णय किया जाता है।

16 सम्यग्दर्शन के एक-एक अङ्ग को प्राप्त कर भव्य जीव मोक्ष को प्राप्त हुए हैं, फिर जो समस्त अङ्गों से सहित हैं वे क्या मुक्त नहीं होंगे, अर्थात् अवश्य होंगे। (प्रष्नोत्तर श्रावकाचार)

17 सम्यग्दर्शन रूपी रत्न का यह महान् गुण है कि दूसरे के द्वारा किये हुए दोष को भी प्रयत्न पूर्वक छिपाया जाता है।

18 मनुष्य सम्यक्त्व के माहात्म्य से तीर्थङ्कर तथा चक्रवर्ती आदि की विभूति को पाकर अन्त में मोक्ष रूप परमपद को प्राप्त होता है।

19 सम्यग्दर्शन वास्तव में सूक्ष्म है, वह केवलज्ञान अथवा अवधि और मनःपर्ययज्ञान का विषय है, न कि मति-श्रुत ज्ञान का विषय है और न देशावधिज्ञान का इन ज्ञानों से उसकी उपलब्धि नहीं होती है।

20 आठवें गुणस्थान तक सब कर्मों की स्थिति अन्तः कोड़ा-कोड़ी सागर पड़ती है, इसके आगे कम होती जाती है। क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि जीव केवली के पादमूल में तीन करण पूर्वक मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व को सम्यक् प्रकृति में संक्रमित करके सम्यक् प्रकृति की क्षपणा करता हुआ जब सम्यक् प्रकृति की स्थिति अन्तर्मुहूर्त मात्र रह जाती है उसको कृतकृत्य वेदक कहते हैं।

21 आठ अङ्गों से सहित सम्यत्व दृढ़ होता है अन्यथा सम्यक्त्व की हानि होती है।

22 सम्यक्त्व से रहित ध्यान दुःख का ही खजाना है, तप का फल सन्ताप मात्र है, स्वाध्याय भी बन्धन है, अज्ञानी जनों के इन्द्रिय निग्रह भी अच्छा फल देने वाले नहीं हैं, अनुपम दान, ब्रह्मचर्य निश्चय से श्री को देने वाले नहीं हैं, तथा तीर्थादि की यात्रा भी पूर्ण फल नहीं देती है, सभी कार्य अन्तर्गडु अर्थात् भीतर से सारहीन होते हैं अतः सम्यक्त्व प्राप्त करने का पुरुषार्थ करना चाहिए।

23 प्रथमानुयोग से प्रशम, करणानुयोग से संवेग, चरणानुयोग से अनुकम्पा, द्रव्यानुयोग से आस्तिक्य गुण प्रकट होता है, अर्थात् चारों अनुयोगों के अध्ययन से ये चार गुण प्रकट होते हैं।

24 **संवेयो णिव्वेओ, णिन्दा गरुहाय उवसमो भक्ति।**
वच्छल्लं अणुकम्पा, गुणठ्ठ समत्त जुत्तस्स।।
संवेग, निर्वेग, निन्दा, गर्हा, उपशम, भक्ति, वात्सल्य, अनुकम्पा ये **''सम्यग्दर्शन के आठ गुण हैं''**।

25 करूणा, वात्सल्य, सज्जनता, आत्मनिन्दा, समता, भक्ति, वैराग्य, धर्मानुराग **''ये भी सम्यग्दर्शन के आठ गुण''** माने गये हैं।

26 **धर्मे धर्मफले शास्त्रे, साधौ सङ्गविवर्जिते।**
निश्चलो योऽनुरागोऽयं, संवेगः स निगद्यते।।
धर्म में, धर्म के फल में, शास्त्र में, परिग्रह रहित साधु में जो अत्यधिक अनुराग है वह **''संवेग''** कहलाता है।

27 **माद्यनमित्रकलत्राद्याः सर्वे संयोग सम्भवाः।**
मुक्त्वा रत्नत्रयं पूतमिति निर्वेदमादिशेत्।।
मनोहर मित्र, स्त्री आदि सभी संयोगज सम्बन्ध हैं, एक रत्नत्रय ही पवित्र है, ऐसा मानना **''निर्वेद''** कहलाता है।

28 **कषायाकुलितो जीवः, कार्यमार्य विनिन्दतं।**
कृत्वानुतायते चान्ते, सा निन्दा निंद्य नाशिनी।।
कषाय से आकुलित होकर सज्जनों के द्वारा निन्दनीय कार्य हो जाने पर अन्त में जो पश्चात्ताप किया जाता है, वह पापों को नाश करने वाली **''निन्दा''** कहलाती है।

29 **जातेऽत्र दुष्कृते घोरे, रागद्वेषादि द्वेषतः।**
आलोचना मतागर्हा, गुरुणामग्रतो बुधैः।।
राग-द्वेष के कारण घोर दुष्कृत हो जाने पर गुरु के आगे दोषों को कहना **''आलोचना''** कहलाती है इसप्रकार आलोचना एवं ''प्रतिक्रमण'' आत्मशोधन की डायरी कहलाती है।

30 **कालुष्य कारणे जाते, दुर्निवारे गरीयसि।**
नान्तः क्षुभ्यति कस्मिंश्चिच्छान्तात्मासौ निगद्यते।।
महान् दुर्निवार कलुषता के कारण उपस्थित हो जाने पर भी अन्तरङ्ग में क्षोभ नहीं होना

''**उपशम**'' कहलाता है।

31 **देवे सङ्घे श्रुते साधौ, कल्याणादिमहोत्सवे।**
निर्व्याजाराधना ज्ञेया, भक्ति र्भव्यार्थ साधिका।।
जिनेन्द्र भगवान में, चतुर्विध सङ्घ में, शास्त्र में, साधु में, पञ्चकल्याणक आदि महोत्सवों में निश्छल भक्ति होना भव्य के मोक्ष की सिद्धि कराने वाली ''**भक्ति**'' कहलाती है।

32 **चतुर्विधस्य सङ्घस्य, वैयावृत्यमगर्हितं।**
अन्नौषधिभिर्दिव्यं, वात्सल्यमभिधीयते।।
मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका की आहार-औषधि आदि के द्वारा प्रशंसनीय सेवा करना ''**दिव्य वात्सल्य**'' कहलाता है।

33 **कर्मपाक भवानेक, दुःखानुभव भाविषु।**
जीवेष्वाद्रतमो भावो, -ऽनुकम्पा कथिता जिनैः।।
कर्म के उदय से अनेक भवों में दुःख भोगने वाले जीवों के प्रति दया होना ''**अनुकम्पा**'' कहलाती है।

''**पञ्च लब्धि-**''

34 अशुभ कर्मो का अनुभाग उत्तरोत्तर अनन्तगुणा हीन होना ''**क्षयोपक्षम लब्धि**'' है। उत्तरोत्तर भावों की विशुद्धि होना ''**विशुद्धिलब्धि**'' है। सद्गुरुओं का उपदेश प्राप्त होना ''**देशनालब्धि**'' है। समस्त पाप कर्मों के उत्कृष्ट स्थिति और उत्कृष्ट अनुभाग का घात करके अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण स्थिति में और द्विस्थानीय(लता/दारू) अनुभाग में करना ''**प्रायोग्यलब्धि**'' है, अथवा आयुकर्म के अलावा सात कर्मों की स्थिति को अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर कर देना, घातिया के अनुभाग को लता/दारू रूप अघाति के पाप प्रकृति के अनुभाग को नीम/काँजीर रूप करने को ''**प्रायोग्यलब्धि**'' कहते हैं। अधःकरण, अपूर्वकरण, और अनिवृत्तिकरण रूप परिणामों का प्राप्त होना ''**करणलब्धि**'' है प्रारम्भ की चार लब्धियाँ भव्य व अभव्य दोनों को सामान्य से हो सकती हैं, किन्तु करणलब्धि केवल भव्य को ही होती है।

35 छठवें-सातवें गुणस्थानवर्ती की तरह पूर्ण परिग्रह का त्यागी न होने पर भी चौथे-पाँचवे गुणस्थानवर्ती सल्लेखना करने का अधिकारी है।

36 ''**आनन्दस्वरूप शुद्धात्मा का चिन्तन होने पर रस**'' विरस हो जाते हैं, गोष्ठी-कथा आदि

का कौतूहल विघटित हो जाता है, पञ्चेन्द्रियों के विषयों की प्रीति घट जाती है, शरीर सम्बन्धी प्रीति भी विश्राम ले लेती है निरन्तर चलने वाली वाणी भी मौन ले लेती है और मन भी दोषों के साथ मृत्यु को प्राप्त करने की इच्छा करता है अर्थात् मन में उठने वाले विविध विकल्प शान्त हो जाते हैं।

37 **सम्यग्दनर्शन शुद्धः, नारक तिर्यङ्नपुंसकस्त्रीत्वानि।**
दुष्कुल विकृताल्पायु, र्दरिद्रतां च व्रजन्ति नाप्यव्रतिकाः।।
''**शुद्ध सम्यग्दृष्टि जीव**'' अविरति होने पर भी नरक, तिर्यञ्च, नपुंसक, स्त्री पर्याय, नीचकुल, विकृत अङ्ग, अल्पायु और दरिद्रता को प्राप्त नहीं होता है।

38 ''**सबसे बड़ा अन्धकार**'' मिथ्यात्व है, जिसको करोड़ सूर्य भी नहीं हटा सकते हैं, यही सबसे बड़ी आग है जिसको मेघ भी नहीं बुझा सकते हैं, यही सबसे बड़ा जहर है जो प्राणियों को जन्म-जन्मान्तरों में विषाक्त बना कर रखता है।

39 **लोकमूढ़ता**- आश्विन मास में लोग नदी में खड़े होकर पूर्वजों को पानी दे रहे थे, पण्डित बनारसीदास जी अपने घर की ओर मुँह करके पानी देने लगे, किसी ने पूछा क्या कर रहे हो ? पण्डितजी ने कहा घर में गाय प्यासी बँधी है उसको पानी पिला रहे हैं, लोगों ने कहा यहाँ से गाय की प्यास कैसे बुझ जायगी ? पण्डितजी ने कहा ! जब आपके मृतक पूर्वज तृप्त हो सकते हैं तो मेरी गाय की प्यास क्यों नहीं बुझ सकती है, तब लोगों को अपनी ''**अज्ञानता**'' का अहसास हुआ।

40 राम को राज्य नहीं मिला तो हर्ष-विषाद नहीं किया, उस समय ज्ञानी थे, जब सीता का हरण हुआ और लक्ष्मण को शक्ति लगी, तो रो रहे थे, तब वे ''**अज्ञानी**'' थे।

41 कषाय और इन्द्रियासक्ति इस ''**संसार की जड़ है**'' और ''**इस जड़ की भी जड़**'' है मिथ्यादर्शन।

42 ''**सम्यक्त्वी की पहचान**''- अपने में सम्यक्त्वी से होने वाले गुण प्रशमादि से उत्पन्न ''**वचन व्यवहार और काय व्यवहार**'' के अनुमान से जाने जाते हैं।

43 एक शची इन्द्राणि अपने जीवन में ''**असंख्य तीर्थङ्करों के कल्याणक**'' मनाती है, पहली बार के प्रथम दर्शन से ही शची इन्द्राणि को सम्यग्दर्शन हो जाता है।

44 तन, मन, धन पर दृष्टि रखने वाले ''**मिथ्यादृष्टि**'' है एवं पूजन, मनन, अध्ययन पर दृष्टि रखने वाले ''**सम्यग्दृष्टि**'' है।

जहाँ प्रकाश वहाँ सुई नहीं

45 एक बुढ़िया सुई खोज रही थी, किसी ने पूछाँ हे अम्ब! क्या खोज रही हो ? उसने कहा ! सुई। सामने वाले ने कहा ! प्रकाश में खोजो। बुढ़िया सड़क के उजाले में जाकर सुई को खोजने लगी, किसी ने पूँछा क्या खोज रही हो अम्मा ? उसने कहा ! सुई। सामने वाले ने पूँछा कहाँ गिरी है ? अम्मा ने कहा ! घर में। तब सामने वाले ने कहा ! घर में उजाला कर के खोजो तब मिलेगी। उसी प्रकार हमारी **''आत्मा एवं शान्ति अन्दर है''** पर हम उसे बाहर **''पैसे, गाड़ी, सुविधा, ऐश-आराम आदि में खोज रहे हैं''**।

46 जैसे कुम्हार के चक्र पर रखी मिट्टी घूमती है वैसे ही जीव मोह पिशाच के द्वारा कोल्हु के बैल की तरह निरन्तर चिन्तातुर होकर घूमते हैं।

47 जैसे मुख में जीभ साथ में आती है और दाँत बाद में, उसी तरह अगृहीत मिथ्यात्व साथ में आता है, गृहीत बाद में आता है, दूध में पानी मिलाना गृहीत है और जो स्वाभाव से मिला है वह अगृहीत है।

48 पगड़ी का पड़ाव बड़ों के शिर पर- घर में छोटे लड़के को भले ही लाड़ प्यार अधिक हो किन्तु पगड़ी तो बड़े लड़के को ही बाँधी जाती है, उसी तरह से सम्यक्त्व की भले ही प्रशंसा की गयी हो, लेकिन मोक्ष तो चरित्र से ही प्राप्त होता है।

घट में घट का संतुलन-

49 जैसे पनहारिन सिर पर जल का घट रखकर, हाथ छोड़कर चलती है, बातें करती है, हँसती है, लेकिन घट का सिर से सन्तुलन नहीं बिगड़ने देती है, प्रतिपल स्मृति घट पर रहती है कहीं गिर न जाये। जैसे गाय जङ्गल घास चरने जाती है, पर बछड़े का ध्यान हमेशा करती है। जैसे नृत्य कारिणी पूरे मञ्च पर नाचती है पर वाद्य स्वरों के साथ पैरों का संतुलन बनाकर रखती है, उसी प्रकार सम्यग्दृष्टि जीव सबके बीच में रहता है, किन्तु अपने आत्मा को नहीं भूलता है।

50 नित्य स्वाध्याय सम्यग्दर्शन का प्रबल कारण है।

51 आठ अङ्ग बन्दर के भी होते हैं, मनुष्य के भी होते हैं, किन्तु जैसे मनुष्य के होते हैं, वैसे बन्दर के नहीं होते, उसी प्रकार आठ अङ्ग मिथ्यादृष्टि के भी होते हैं, सम्यग्दृष्टि के भी होते हैं, किन्तु जैसे सम्यग्दृष्टि के होते हैं, वैसे मिथ्यादृष्टि के नहीं होते हैं।

52 **अप्पा मेल्लिवि जगतिलउ, जे परदव्वे रमन्ति।**
अण्णु किं मिच्छादिट्ठियह, मत्थइं सिंगइ होन्ति।।(दो.पा.)

जो सर्वश्रेष्ठ आत्मा को छोड़कर पर द्रव्यों में रमण करता है वही तो मिथ्यादृष्टि है, इसके अलावा और क्या मिथ्यादृष्टि के माथे पर सींग होते हैं ?

53 अपने दोषों को विलीन करना है तो परमात्मा में लीन हो जाओ।

54 जैसे मन्त्र की पूर्णता विष को दूर करती है वैसे ही आठ अङ्ग की पूर्णता संसार को दूर करती है।

55 **वरं नरकवासोऽपि, सम्यक्त्वेन समायुतः।**
न तु सम्यक्त्वहीनस्य, निवासो दिवि राजते।।
सम्यक्त्व के साथ नरक में रहना अच्छा है, किन्तु सम्यक्त्व के विना देवगति में भी रहना अच्छा नहीं है।

56 **हिंसोज्झितएकाकी, सर्वोपद्रवसहो वनस्थोऽपि।**
तरुरिव नरो न सिद्धयति, सम्यग्बोधादृते जातु।।
हिंसा से रहित, एकाकी, समस्त उपद्रव को सहन करने वाला मनुष्य वृक्ष की तरह जङ्गल में रहने पर भी सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान के विना मोक्ष को प्राप्त नहीं होता है।

57 **सद्दहदिय पत्तेदिय, रोचेदिय तह पुणो वि फासेदि।**
धम्मं भोगणिमित्तं, ण दु सो कम्मखयणिमित्तं।।
"**अभव्य मिथ्यादृष्टि**" जीव जिनेन्द्र भगवान के द्वारा कहे गए तत्त्वों की श्रद्धा करता है, प्रतीति करता है, रुचि करता है, स्पर्श भी करता है किन्तु "**धर्म को भोग का कारण बनाता है कर्मक्षय का कारण नहीं बनाता**" है।

58 **हिंसा रहिए धम्मे अट्ठारस दोस वज्जिए देवे।**
णिग्गंथे पवयणे, सद्दहणे होई सम्मतं।।
हिंसा रहित धर्म, अठारह दोष रहित देव, निर्ग्रन्थ गुरु के श्रद्धान करने से "**सम्यग्दर्शन**" होता है।

59 **नरत्वेऽपि पशूयन्ते, मिथ्यात्वग्रस्तचेतसा।**
पशुत्वेऽपि नरायन्ते, सम्यक्त्वव्यक्त चेतना।।
मिथ्यादृष्टि होने से "**मनुष्य पशु के समान**" है और सम्यग्दृष्टि होने से "**पशु मनुष्य के समान**" है।

60 **शमबोधवृत्त तपसां, पाषाणस्येव गौरवं पुंसः।**
पूज्यं महामणेरिव, तदेव सम्यक्त्व संयुक्तम्।।
दर्शन, ज्ञान, चारित्र और तप सम्यक्त्व के विना "**पाषाण के समान**" है और सम्यक्त्व से

सहित होने पर "**महामणि के समान**" मूल्यवान हो जाते हैं।

61 **गतानुगतिको लोको, न लोका पारमार्थिकः।**
बालुका पुञ्जमात्रेण, गतं मे ताम्रभाजनम्।।

संसारी प्राणी देखा-देखी करते हैं, परमार्थ का विचार नहीं करते, नारद जी ने कमण्डल को गुमने के भय से गङ्गा के किनारे रेत से ढक दिया, लोगों ने समझा इससे पुण्य होता होगा इसलिए सबने रेत के ढेर लगा दिए, नारद जी स्नान करके जब बाहर आये तो वहाँ पर रेत के अनेक ढेर बन गये नारद जी ने अपना कमण्डल बहुत खोजा किन्तु कमण्डल ही गुम गया "**यह लोकमूढ़ता है**"।

62 **मूढ़त्रय मदाश्चाष्टौ, तथानायतनानि षट्।**
अष्टौ शङ्कादयश्चेति, दृग् दोषाः पञ्चविंशतिः।।

तीन मूढ़ता, आठ मद, छह अनायतन, आठ शङ्कादि दोष ये "**सम्यग्दर्शन के पच्चीस दोष**" हैं।

63 आठ मद, तीन मूढता, छः अनायतन, आठ शङ्कादि दोष, सात व्यसन, सात भय, पाँच अतिचार, इन "**चवालीस दोषों**" से रहित सम्यग्दृष्टि होता है।

64 सात भय, सात व्यसन, पच्चीस दोष से रहित, संसार शरीर भोगों से विरक्त, आठ अङ्ग सहित सम्यग्दृष्टिपञ्च परमेष्ठी का भक्त होता है।

65 जो उग्र, तीव्र स्वभाव, दुष्ट, दुर्भाव, कुशास्त्र श्रवण करने वाला, दुष्टभाषी, मिथ्यामद से युक्त है वह मिथ्यादृष्टि है।

66 जो क्षुद्र (नीच प्रकृति), रौद्र, रुष्ट, दूसरों का बुरा चाहने वाले, चुगलखोर, घमण्डी, ईर्ष्यालु, गायक, याचक, भण्ड वचन बोलने वाला, एवं जिसका दुष्ट स्वभाव है वह मिथ्यादृष्टि है।

"किसके प्रति बहुमान-"

67 आत्मा के प्रति या शरीर के प्रति ? लौकिक धन श्रेष्ठ है या ज्ञानधन ? इन्द्रिय सुख का बहुमान या अतीन्द्रिय सुख का ? इष्ट क्या है इन्द्रिय सुख या सम्यग्दर्शनादि ? अनिष्ट क्या है ? दुःख, आकुलता, मिथ्यादर्शन, मिथ्यादृष्टि इन्द्रिय सुख के लिये "**बीस हजार का वी.सी.आर., फ्रिज आदि खरीदता है**" लेकिन धर्म के लिए "**पुस्तक मन्दिर से लेकर पढ़ता**" है।

68 मिथ्यादृष्टि मोक्ष के साधन भूत "**आत्मा का एक क्षण को भी**" चिन्तन नहीं करता, रात-दिन दूसरों के विषय में सोचता है।

''विश्वास''

69 मैं अन्धेरी रातों में बेधड़क चलता हूँ।''**बुद्धि**''- मैं प्रकाश में भटक जाती हूँ।''**श्रद्धा-**''मैं पाषाण को भगवान् बना देती हूँ। ''**तर्क-**'' मैं भगवान को पाषाण बना देता हूँ।

70 साईकिल चलाना आता नहीं और ढलान में बैठ गए तो हाथ-पैर टूटेंगे और गिरने के भय से बैठेंगे ही नहीं तो सीख नहीं पायेंगे, विना सीखे पानी में कूदेंगे तो डूबेंगे और डूबने के भय से पानी में उतरेंगे ही नहीं तो सीखेंगे कैसे ? इसी प्रकार योग्य गुरु से शिक्षा दीक्षा लेकर रत्नत्रय की आराधना करना चाहिए।

बेटी कुछ खाती ही नहीं, बहु राक्षस

71 बेटी से माँ कहती है, तुम काम मत करो, ससुराल से थककर आई हो। बेटी कितना भी खाये, माँ यही कहेगी, बेटी कुछ खाती ही नहीं, वही माँ बहु के लिये कहती है न जाने कहाँ से आयी राक्षसी खाती है ढेर सारा, काम कुछ नहीं करती। बहु को उदार दृष्टि से देखें और अवगुणों को भी गुण समझें, सम्यग्दृष्टि सास वही है जो बहु-बेटी दोनों को समान देखे, सम्यग्दृष्टि बहु वह है जो माँ और सास को एक जैसा देखे।

72 मिथ्यात्व पागल बना देता है, अनन्तानुबन्धी स्वगृह में प्रवेश नहीं करने देती है।

73 मोह को निद्रा की उपमा दी है जैसे स्त्यानगृद्धि निद्रा में व्यक्ति बड़े-बड़े काम कर लेता है पर उसे खुद होश नहीं रहता मैं क्या कर रहा हूँ अथवा शराबी की चेष्टाओं के तुल्य मिथ्यादृष्टि की चेष्टाएँ होती है।

करोड़पति रिक्शा चालक

74 करोड़पति बाप का बेटा करोड़ रुपये का भान न होने से रोड़पति बना रिक्शा चला रहा था, पिता के मित्र से पता चलते ही रिक्शा वहीं छोड़ देता है, उसी प्रकार संसारी प्राणी को आत्मा की भगवत्ता पता न होने से विषय कषाय में सुख खोज रहा है। सम्यग्दृष्टि होते ही विषय-कषाय से विरक्त हो जाता है।

75 जिनेन्द्र देव की पूजा शान से नही भक्ति से होती है, भक्ति के लिए शान्ति की आवश्यकता होती है।

76 **अज्ञानी जीव धतूरे में इत्र**, वैश्या में चरित्र, दुर्दिन में मित्र और पापी हृदय में पवित्रता संसार में सुख खोजने में लगा है।

77 प्रयत्न पूर्वक शरीर का एक-एक कण तपश्चरण में लगा करके, जीवन का एक-एक क्षण ज्ञान

की साधना में अर्पण करके मानव जीवन को वरदान सिद्ध करना चाहिए अत: देव-शास्त्र-गुरु की निंदा नहीं विनय करके सम्यग्दर्शन की रक्षा करना चाहिए क्योंकि सम्यग्दर्शन लोक की सम्पत्ति से श्रेष्ठ है।

''दरिद्र, पापी, कुष्ठी, कुलक्षयी कौन होता-''

78 देव का निन्दक दरिद्र, गुरु का निन्दक पापी, स्वामी का निन्दक कुष्ठी व गोत्र का निन्दक कुल का क्षय करने वाला होता है, साधु का निन्दक अपने आप को दूषित करता है, क्योंकि जो सूर्य पर भस्म फेंकता है वह भस्म उसी के सिर पर पड़ती है।

79 **बुझते हैं वे दीप जो तैल से जला करते हैं।**
हम तो हैं वे दीप जो आस्था से जला करते हैं।।

★★★

''निःशंकित अङ्ग की महिमा''

1 **सकलमनेकान्तात्मकमिदमुक्तं वस्तुजातमखिलज्ञै:।**
किमु सत्यमसत्यं वा, न जातु शङ्केति कर्तव्य:।।
भगवान् ने समस्त वस्तुओं को अनेकान्तात्मक कहा है सो यह सत्य है कि असत्य है ऐसी शङ्का नहीं करना नि:शङ्कित अङ्ग कहलाता है।

2 **इदमेवेदृषमेव, तत्त्वं नान्यन्न चान्यथा।**
इत्यकम्पायसाम्भोवत्, सन्मार्गेऽ संशया रुचि:।।
तत्त्व यही है, ऐसा ही है, अन्य नहीं है, अन्य प्रकार से भी नहीं है इस प्रकार तलवार पर चढ़ाये हुए पानी के समान दृढ़ श्रद्धान होना नि:शङ्कित अङ्ग है।

3 घर में सर्प की शङ्का होने पर नींद खत्म हो जाती है, उसी प्रकार जिनेन्द्र भगवान् के द्वारा कथित पदार्थ में शंका होने से सम्यग्दर्शन में दोष लग जाता है।

4 धन, यौवन, परिवार पर शङ्का करना चाहिए देव-शास्त्र-गुरु पर नहीं।

कन्धे पर कुत्ता

5 चार बदमाश एक-एक मील की दूरी पर खड़े हो गये और दक्षिणा में प्राप्त हुए बछड़े को चारों ने क्रम से कुत्ता कह दिया, पण्डित जी ने बछड़े को छोड़ दिया, उसी प्रकार दृढ़ श्रद्धा व पहचान न होने से धोखा होता है।

6 तीन प्रकार के पदार्थ- सूक्ष्म परमाणु, कालाणु, धर्मादि द्रव्य ये इन्द्रियों से नहीं जाने जाते अत: सूक्ष्म हैं।

7 अन्तरित- भूतकाल में हुए राम-रावण आदि या भविष्य में होने वाले तीर्थङ्कर आदि अन्तरित पदार्थ कहलाते हैं, एवं दूरवर्ती- द्वीप समुद्र स्वर्ग-नरक आदि दूरवर्ती पदार्थ कहलाते हैं। ये आस्तिक्य गुण के विषय हैं।

8 इह लोक भय, पर लोक भय, मरण भय, वेदना भय, अगुप्ति भय, अनरक्षा भय, अकस्मात् भय सम्यग्दृष्टि इन सात भयों से रहित होता है।

9 अञ्जनचोर के समान निःशङ्क होना चाहिए।

★★★

"निःकाङ्क्षित अङ्ग की महिमा"

1 **इह जन्मनि विभवादी, न्यमुत्र चक्रित्वकेशवत्वादीन्।**
एकान्तवाददूषित, परसमयानपि च नाकाङ्क्षेत्।।
इस लोक में वैभव आदि, परलोक में चक्रवर्ती का वैभव एवं एकान्तवाद से दूषित परमत की इच्छा नहीं करना निःकाङ्क्षित अङ्ग है।

2 **कर्म परवशे सान्ते, दुःखैरन्तरितोदये।**
पाप बीजे सुखेऽनास्था, श्रद्धानाकाङ्क्षणा स्मृता।।
पराधीन, बाधासहित, जिसकी परम्परा टूट जाती है एवं बन्ध का कारण हीनाधिक प्राप्त होने वाला इन्द्रिय विषय जन्य सुख 'दुःख' ही है ऐसी श्रद्धा होना निःकाङ्क्षित अङ्ग है।

3 **सपरं बाधासहियं, विच्छिण्णं बन्धकारणं विसमं।**
जं इन्दियेहिं लद्धं, तं सोक्खं दुक्खमेव तहा।।
इन्द्रियों के द्वारा प्राप्त होने वाला सुख पराधीन, बाधा सहित, अनियमित, बन्ध का कारण व हीनाधिक एवं दुःख रूप ही है।

4 व्रतादि क्रियाओं को करते हुए उनसे भोगों की इच्छा करना, कर्म और उसके फल में आत्मीय भाव रखना, अन्यदृष्टि प्रशंसा करना और काङ्क्षा रूप भाव मिथ्यात्व का चिन्ह है।

5 भोग अभिलाषा से पर भव में इष्ट पदार्थो का संयोग होना तो दूर, किन्तु इसलोक सम्बन्धी स्वार्थ की सिद्धि भी नहीं होती है।

6 जैसे उन्मत्त के मन में नाना प्रकार के विकल्प उठते हैं, वायु से समुद्र में तरङ्गें उठती हैं, वैसे ही मिथ्यात्व के उदय में नाना विकल्प उठते हैं।

★★★

"निर्विचिकित्सा अङ्ग की महिमा"

1 यह सम्यग्दर्शन का सबसे उत्कृष्ट अङ्ग है।

2 **स्वभावतोऽशुचौकाये, रत्नत्रयपवित्रिते।**
निर्जुगुप्सा गुणप्रीति, र्मता निर्विचिकित्सिता।।
स्वभाव से अपवित्र किन्तु रत्नत्रय से पवित्र शरीर में 'गुणों में प्रीति के कारण' ग्लानि नहीं करना निर्विचिकित्सा अङ्ग माना गया है।

3 **क्षुत्तृष्णाशीतोष्ण, प्रभृतिषु नाना विधेषु भावेषु।**
द्रव्येषु पुरीषादिषु, विचिकित्सा नैव करणीया।।
भूख, प्यास, ठण्डी, गर्मी आदि नाना भावों में एवं मल-मूत्र आदि द्रव्यों में ग्लानि नहीं करना निर्विचिकित्सा अङ्ग है।

4 अपने गुणों की प्रशंसा और दूसरों के अवगुणों की निन्दा करना विचिकित्सा है, उससे जो रहित है वह निर्विचिकित्सा है।

5 जो जीव दुर्भाग्य से दु:खी है, तीव्र असाता के उदय में घृणास्पद है, ऐसे जीवों से भी ग्लानि नहीं करना निर्विचिकित्सा अङ्ग है।

शूद्री के यहाँ जन्में

6 मन में ऐसा भाव भी नहीं आना चाहिए कि मैं सम्पत्तियों का घर हूँ, ये विपत्तियों का घर है, ये हमारे जैसा नहीं हो सकता, किन्तु इससे विपरीत सोचें कि कर्मोदय से जितने भी त्रस-स्थावर जीव हैं, वे सब समान है, जैसे शूद्री के उदर से जन्मे दो बेटे एक विप्र के यहाँ पला, एक शूद्र के यहाँ पला, इस कारण उनमें जाति भ्रम हो गया, लेकिन वास्तव में दोनों शूद्र की सन्तान हैं, उसी प्रकार वेदनीय कर्म के दो भेद हैं एक सातावेदनीय एक असातावेदनीय।

चर्मदर्शकों की सभा है

7 राजा जनक की सभा में अष्टावक्र ऋषि गये, लोग एक दम हँस पड़े तो अष्टावक्र ऋषि बोले लोग मेरे चमड़े के आठों टेड़े अङ्गों को देखकर हँसते हैं, अत: ये राजा जनक की सभा नहीं चर्मदर्शकों की सभा है।

★★★

"अमूढ़दृष्टि अङ्ग की महिमा"

1 **कापथे पथि दु:खानां, कापथस्थेऽप्यसम्मति:।**
असम्पृक्तिरनुत्कीर्ति, रमूढ़ा दृष्टिरुच्यते।।
दु:खों के कारणभूत मार्ग में, खोटे मार्ग में स्थित व्यक्तियों के विषय में मन से सम्मति नहीं देना, शरीर से सम्बन्ध नहीं रखना, वचन से प्रशंसा नहीं करना अमूढ़दृष्टि अङ्ग माना जाता है।

2 **लोके शास्त्राभासे, समयाभासे च देवताभासे।**
नित्यमपि तत्त्वरुचिना, कर्त्तव्यममूढ़दृष्टित्वं।।
खोटे शास्त्रों में, मिथ्यामतों में एवं कुदेवों में आत्मज्ञानी को सावधानी रखनी चाहिये इसे अमूढ़दृष्टि अङ्ग कहते हैं।

3 सम्यग्दर्शन की शोभा अमूढ़ता से है, सूक्ष्म, अन्तरित व दूरवर्ती पदार्थों में मूढ़ता नहीं होना चाहिए।

4 **आपगासागरस्नान, मुच्चय: सिकताश्मनां।**
गिरिपातोऽग्निपातश्च, लोकमूढ़ं निगद्यते।।
नदी और सागर में स्नान करना, बालू और पत्थर के ढेर लगाना, पर्वत से गिरना और अग्नि में जलकर(सतिप्रथा को) धर्म मानना लोक मूढ़ता है।

5 **वरोपलिप्सयाशावान्, रागद्वेषमलीमसा:।**
देवता यदुपासीत, देवता मूढ़मुच्यते।।
वरदान की आशा से राग-द्वेष से मैले देवी-देवताओं की आराधना करना देव मूढ़ता कहलाती है।

6 **सग्रन्थारम्भहिंसानां, संसारावर्त वर्तिनां।**
पाखण्डिनां पुरस्कारो, ज्ञेयं पाखण्डिमोहनं।।
संसार में भ्रमण करने वाले, आरम्भ परिग्रही, हिंसक, कुगुरुओं का सम्मान करना गुरु मूढ़ता कहलाती है।

★★★

"उपगूहन अङ्ग की महिमा"

1 **स्वयं शुद्धस्य मार्गस्य, बालाशक्तजनाश्रयां।**
वाच्यतां यत्प्रमार्जन्ति, तद्वदन्त्युपगूहनम्।।
स्वयं शुद्ध मार्ग की, बालक व असमर्थ लोगों के द्वारा होने वाली निन्दा को जो दूर करते हैं, उसे

उपगूहन अङ्ग कहते हैं।

2 **धर्मोऽभिवर्द्धनीयः, सदात्मनोमार्दवादि भावनया।**
परदोषनिगूहनमपि, विधेयमुपबृड्हण गुणार्थं।।
हमेशा मार्दव आदि भावना के द्वारा आत्म धर्म की वृद्धि करनी चाहिये पर के दोषों को ढ़कना चाहिए इसे उपगूहन अङ्ग कहते हैं।

3 आत्मीय गुणों की वृद्धि करना ही इसका लक्षण है, आत्मशुद्धि में दुर्बलता नहीं आने देना उपबृड्हण अथवा उपगूहन है, आत्मा को रत्नत्रय भाव से च्युत नहीं होने देना ही उपबृड्हण है, इससे गुण श्रेणी रूप से निर्जरा होती है। जिनेन्द्रभक्त सेठ की तरह, निन्दा उसी के कान में करें और प्रशंसा माइक से करें।

4 उपगूहन अङ्ग पालन नहीं होने से नीच गोत्र का बन्ध एवं अशुभ नाम कर्म का बन्ध होता है।

5 **ये परस्खलितोन्निद्राः, स्वदोषेभ निमीलिनः।**
तपस्विनस्ते किं कुर्यु, रपात्रं त्वन्मतश्रियः।।
जो दूसरों के दोष देखने में जागृत हैं और अपने दोष देखने के लिए हाथी की तरह आँख बन्द किये हुए हैं, वे बेचारे जैन मत के योग्य ही नहीं हैं।

6 अपनी आँखों की लालिमा स्वयं को नहीं दिखती है, स्वयं के दोष भी स्वयं को नहीं दिखते हैं, इसलिए दूसरा बताता है तो सुधारना चाहिए, नाराज नहीं होना चाहिए, अशुभ सूचना सुनकर नाराज होना फ़ोन फेंकने के सामान है।

★★★

"स्थितिकरण अङ्ग की महिमा"

1 **दर्शनाच्चरणाद्वापि, चलतां धर्मवत्सलैः।**
प्रत्यवस्थापनं प्राज्ञैः, स्थितिकरणमुच्यते।।
सम्यग्दर्शन से अथवा चारित्र से चलायमान होने वालों को धर्मात्माओं के द्वारा फिर से उसी में स्थापित करना बुद्धिमानों ने स्थितिकरण अङ्ग कहा है।

2 **कामक्रोधमदादिषु, चलयितुमुदितेषु वर्त्मनो न्यायात्।**
श्रुतमात्मनः परस्य च, युक्तया स्थितिकरणमपि कार्यं।।
काम, क्रोध, मद आदि के द्वारा मोक्ष मार्ग से स्वयं अथवा दूसरों के चलायमान होने पर श्रुत एवं युक्ति के द्वारा स्थितिकरण करना चाहिये, धर्म में स्थित करना अधर्म में नहीं, अज्ञानी जन धर्म

के लिए पाप का उपदेश देते हैं, वे ऐसा करते हैं मानो शीत के लिए अग्नि में प्रवेश करते हैं।

3 **आदहिदं कादव्वं, जं सक्कई तं परं पि कादव्वं।**
आदहिद परहिदादो, आदहिदं सुट्ठुकादव्वं।।
अपना हित करना चाहिए व जितना बने पर का भी करना चाहिए, परन्तु अपने और पर के हित में आत्महित अच्छा करना चाहिए।

4 पुष्पडाल मुनि का स्थितिकरण वारिषेण मुनि ने 12 वर्ष में किया था।

सिंह की गुफा में चतुर्मास

5 एक आचार्य के दो शिष्य थे, एक ने वेश्या के बगीचे में चातुर्मास करने की आज्ञा ली, दूसरे ने शेर की गुफा में बैठकर चतुर्मास की आज्ञा ली, चतुर्मास के बाद जिन्होंने वेश्या के बगीचे में चातुर्मास किया, गुरु ने उनको विशेष आशीर्वाद दिया, शेर की गुफा वाले मुनि ने अगला चातुर्मास वेश्या के बगीचे में माँगा, गुरू ने रोका तो भी नहीं माने, वेश्या का राग सुनकर वे विचलित हो गये, वेश्या से अपनी भावना प्रकट की, वेश्या ने रत्नकम्बल की माँग की, साधु बारह वर्ष का कठोर परिश्रम करके रत्नकम्बल लाये और वेश्या को दे दिया, वेश्या ने पैर पोंछकर उसे नाली में फेंक दिया, साधु चकित हो गये, पूँछने पर वेश्या ने कहा जिस प्रकार आपने अपने कीमती संयम को खो दिया, वह रत्नकम्बल को फैकने के ही समान है, ऐसा कहकर वेश्या ने साधु का स्थितिकरण किया था।

माघनन्दी का पुनरागमन

6 व्यक्ति चरित्र से भ्रष्ट भले ही हो जाये, पर ज्ञान पूज्य होता है, जैसे आचार्य माघनन्दी जी चरित्र से भ्रष्ट हो गये थे, फिर भी मुनि महाराज उनसे समाधान करने उनके घर गये थे, इस निमित्त से उनका स्थितिकरण हो गया था, सोना गन्दे स्थान पर पड़ा हो तो भी मूल्यवान होता है।

★★★

"वात्सल्य अङ्ग की महिमा एवं रक्षाबन्धन पर्व"

1 **स्वयूथ्यान्प्रति सद्भाव, सनाथाऽपेत कैतवा।**
प्रतिपत्तिर्यथायोग्यं, वात्सल्यमभिलप्यते।।
सद्भाव से सहित और मायाचारी से रहित होकर साधर्मियों की यथायोग्य सेवा करना वात्सल्य कहलाता है।

2 **अनवरतमहिंसायां, शिवसुखलक्ष्मी निबन्धने धर्मे।**
सर्वेष्वपि च सधर्मिषु, परमं वात्सल्यमालम्ब्यं।।
मोक्षसुख के कारणभूत अहिंसा धर्म में एवं सभी साधर्मियों में निरन्तर वात्सल्य भाव रखना चाहिये।

3 **अरावप्युचितं कार्यं, मातिथ्यं गृहमागते।**
छेत्तुं पार्श्वगतं छायां, नोपसंहरते द्रुमः।।
घर पर आए हुए शत्रु का भी सम्मान करना चाहिये, जिस प्रकार काटने के लिए आए हुए शत्रु को भी वृक्ष छाया देता है।

4 **न कश्चित् कस्यचिद् मित्रं, न कश्चित् कस्यचिद् रिपुः।**
व्यवहारेण जायन्ते, मित्राणि रिपवस्तथा।।
न कोई किसी का मित्र है, न कोई किसी का शत्रु है व्यवहार से ही मित्र और शत्रु बनते हैं।

5 **उत्सवे व्यसने चैव, दुर्भिक्षे राष्ट्र विप्लवे।**
श्मशाने राज द्वारे च, यः तिष्ठति सः बान्धवः।।
उत्सव में, कष्ट में, अकाल पड़ने पर, राष्ट्र में विप्लव होने पर, श्मशान में और राजदरबार में जो साथ देता है वही बन्धु कहलाता है।

6 **अपना बनाने के छः कारण-** मिलने पर मुस्कुराना, आदर करना, नाम याद रखना, सच्चे हृदय से बात करना, गुणों की प्रशंसा करना, भेजने जाना आदि।

7 प्रेम की शक्ति दण्ड की शक्ति से हजार गुणी प्रभावशाली और स्थायी होती है।

8 छेड़ के तो देखे कोई इस दिलेर को, प्रेम-मोहब्बत मे तो कुत्ते भी काट लेते हैं शेर को।

9 जो वजन होता है प्यार का, वह वजन नहीं होता है व्यापार का।

10 सम्बन्ध बनाए रखने के लिए व साधना में आगे बढ़ने के लिए कष्टों को सहना अनिवार्य है।

11 जिसका जो धन अथवा शरीर साधर्मी जनों के उपयोग में आता है यथार्थ में वही उसका धन है, जो समर्थ होकर भी आपत्ति के समय सम्यग्दृष्टि की उपेक्षा करता है, उस कठोर हृदय की जिन शासन में क्या भक्ति हो सकती है ?

12 **वैय्यावृत्ति-** प्रतिकार करने में समर्थ होकर भी रोग से दुःखी सम्यग्दृष्टि की जो उपेक्षा करता है, वह पापी सम्यग्दर्शन का घाती है। जो सम्यग्दृष्टि साधर्मी की भक्ति नहीं करता, वह झूठ-मूठ का विनयी बना फिरता है।(हरि.पु.)

13 **वात्सल्य से सफेद खून-** माँ का बच्चे के प्रति इतना वात्सल्य होता है, कि उसके स्तन में दूध आ जाता है और तीर्थङ्कर का तीनों लोकों के जीवों के प्रति वात्सल्य होता है इसलिये उनके पूरे शरीर में रक्त दूध जैसा होता है।

14 भरत जी ने रामचन्द्र जी की खड़ाऊ सिंहासन पर रखकर राज्य किया था, किन्तु आज एक अङ्गुल जमींन के लिए भाई अपने ही भाई को हथकड़ी डलवा देता है।

15 मत ठुकराओ गले लगाओ धर्म सिखाओ।

16 वही मनुष्य जगत का उपकार कर सकता है, जो अन्दर से निर्मल है।

''पशु सम्मेलन-''

17 विदेश में पशु सम्मेलन हुआ, सब जगह के पशु-पक्षी आये उनकी विशेषता बतलाई, बाद में भारतीय पशु-पक्षी को बताया, पिटारे में दो केंकड़े थे जो बाहर निकलना चाहते थे, लेकिन एक दूसरे की टाँग खीच कर गिरा देते थे, इसी तरह भारत के लोग किसी की भी उन्नति को देखकर उसे गिराना चाहते हैं।

18 अत्यन्त दुःखी को मधुर वाणी और वात्सल्य की जरूरत होती है।

19 वात्सल्य से कठोर हृदय व्यक्ति भी मोम की तरह कोमल बन जाता है।

20 बराबरी वाला निन्दा या प्रशंसा करे तो ध्यान देना चाहिए।

21 दुनिया कुछ अच्छी दिख रही है तो इसका श्रेय पढ़े लिखे लोगों को नहीं प्रसन्न लोगों को जाता है।

22 स्नेह न मिलने पर मित्र खल बन जाते हैं जैसे सरसों से तैल निकल जाने पर खली बन जाती है।

23 प्रेम पूर्ण व्यवहार अमृत के समान एवं द्वेष पूर्ण व्यवहार विष के समान होता है।

24 जिस प्रकार उत्तम सेवक स्वामी के कार्य में सदा दासभाव रखता है उसी प्रकार सिद्ध प्रतिमा, जिनबिम्ब, जिनमन्दिर, शास्त्र और चतुर्विध सङ्घ में दासभाव अर्थात् किसी प्रकार की बाधा या आवश्यकता होने पर उसे दूर करना, ज्ञान से पर के दुःख दूर करना पर वात्सल्य है परीषह उपसर्ग से पीड़ित होकर शुभाचार ज्ञान-ध्यान में शिथिलता न लाना स्व वात्सल्य है।

ताऊ ने तराशा, वेश्या के घर से लाया

24 फलटण में रहने वाले प्रतिमाधारी श्रावक के परिवार का लड़का दस साल से वेश्या के यहाँ रहता था, शादी के समय ताऊजी ने बुलाने का निर्णय किया, परिवार वालों ने आना-कानी की, फिर भी भाई पत्र देकर आया और बोला शादी में आना हो तो आ जाना, उसको गुस्सा आया तो

मना कर दिया, अन्त में ताऊजी स्वयं वहाँ गये, नीचे खड़े होकर आवाज दी, लड़के की नींद खुली वहीं से झाँक कर देखा अरे ! ताऊजी आये हैं, वह नीचे आया चरणों में माथा रखा, ताऊजी ने कहा ! चलो बेटा घर में शादी है, उसने कहा ताऊजी ! घर में सभी लोग तिरस्कार करेंगे, ताऊजी ने कहा बेटा ! तुम्हारे विना शादी नहीं होगी और उसे घर ले आये, मन्दिर ले गए तिलक लगाया साथ में बैठकर भोजन कराया, शादी के बाद ताऊजी ने कहा ! अब तुम जा सकते हो, तो वह चरणों में गिरकर रोने लगा, कि मैंने कुल को कलङ्कित किया, सबको कष्ट दिया, अब मुझे माफ़ करें, प्रायश्चित दें, उसने धीरे-धीरे व्रत धारण किये, मुनि बन गया, समाधि मरण किया, बोहरा गाँव में आज भी समाधि स्थल है, दर्शनार्थी आज भी दर्शन को जाते हैं।

दो बूँद खून-मित्रता की परीक्षा

25 दो मित्र विदेश से धन कमाकर लाये, रास्ते में रात हो गई, धन की रक्षा हेतु तीन-तीन घण्टे सोने का वादा किया, एक देव सर्प बनकर के आया, एक मित्र को काटने लगा तो दूसरे ने विरोध किया, तो सर्प ने कहा ! तुम मित्र के गले का दो बूँद खून दो तो हम चले जायेगें, तलवार से गर्दन रेत कर खून निकाला तो मित्र की नींद खुल गई गर्दन पर तलवार चलते देखी लेकिन फिर सो गया, सर्प चला गया खून देने वाले मित्र को आकुलता हुई मित्र क्या सोचेगा, जब इसका नम्बर आया सोने का तो नींद नहीं आई कारण पूछा तो कहा ! कि मैंने आपका खून निकाला था तब आपने क्या सोचा था ? तब मित्र ने कहा कि मित्र गर्दन काट रहा है तो हमारा भला ही कर रहा होगा, मित्र पर ऐसा विश्वास वफादार होना चाहिए।

गाय बछड़े के प्रेम ने शेर का दिल जीत लिया

26 एक शाम बूढ़ी गाय धीरे-धीरे चलकर घर की ओर आ रही थी, इतने में एक शेर सामने आ गया और गाय से कहा मैँ बहुत दिनों से भूखा हूँ अतः आज अपनी भूख शांत करूँगा, तब गाय ने शेर से कहा ! मैं अपने बछड़े को दूध पिला आऊँ फिर तुम मुझे खा लेना, शेर हँसा और बोला! कि तुम मुझे धोखा देना चाह रही हो, गाय ने कहा मैं बछड़े की सौगन्ध खाकर कहती हूँ, दूध पिला कर अवश्य आ जाऊँगी, शेर ने बोला ठीक है, जैसे ही गाय घर पहुँची और बछड़े से दूध पीने को कहा, तो बछड़े ने देर से आने का कारण पूँछा, बताने पर उसने कहा, कि आपके स्थान पर मैं जाऊँगा, आग्रह करने पर भी उसने दूध नहीं पिया और दोनों शेर के पास चल दिए, एक के स्थान पर दो को आता देख शेर खुश हुआ, बछड़ा कहता है शेर पहले मुझे खायगा और

माँ सीगों से उसे पीछे करके कहती है कि शेर पहले मुझे खायगा, गाय-बछड़े के प्रेम ने शेर का हृदय परिवर्तन कर दिया और उनका वात्सल्य देखकर दोनों को खाने का इरादा छोड़ दिया।

सन्यासी की झोपड़ी में गधों से भी आदमी जैसा व्यवहार

27 एक राजा जङ्गल में सैर करने गया, अचानक आँधी तूफ़ान आने से सभी सैनिक-साथी बिछुड़ गये, छाया पाने की इच्छा से राजा एक महात्मा की झोपड़ी में गया, महात्मा लेटा हुआ था, राजा को देखकर बैठ गया, सोचा बैठने से दो लोग बन जायेंगे, इतने में पानी में भीगता हुआ एक गधा भी आ गया, महात्मा बोले राजन् ! हम लोग खड़े हो जाते हैं, जिससे ये गधा भी झोपड़ी के अन्दर आ जायगा, राजा ने कहा ! क्या करते हो गधे को भी झोपड़ी के अन्दर ? महात्मा ने कहा राजन् ! ये साधु की झोपड़ी है यहाँ गधों से भी मनुष्यों जैसा व्यवहार किया जाता है, ये रईसों की कोठी नहीं है जहाँ मनुष्यों से भी गधों जैसा व्यवहार किया जाता है।

''जाति भाई का सहयोग-''

28 पण्डित पन्नालाल जी सागर वालों का बेटा बीमार हो गया, इन्दौर ले गये, भोजन अपने हाथ से बनाते थे, तो माचिस खरीदने बाजार गये, कहीं माचिस नहीं मिली, पण्डित जी ने पूँछा, तो दुकानदारों ने कारण बताया, कि हमारे यहाँ एक गरीब है, उससे माचिस बिकवाते हैं, ताकि वह भी सम्पन्न हो जाय, यदि हम लोग रुपये देते तो उसको हीनता महसूस होती।

''शिकार से बहिष्कार-''

29 जनता पार्टी के नेता श्री के-के- हेगड़े की पत्नि ने आचार्य विद्यानन्द जी को बतलाया था कि सौ वर्ष पहले की बात है, कि जैन परिवार में एक व्यक्ति ने शिकार कर दिया था तो समाज ने उसे जाति से बन्द कर दिया था, प्रभावशाली परिवार होने से दस हजार अन्य लोग भी वैष्णव बन गये थे, जिस दिन वे लोग जैन से वैष्णव बने थे, उस दिन वे लोग प्रति वर्ष जैन मन्दिर में पूजा पाठ करते हैं एवं सात्विक भोजन करते हैं, अतः एक व्यक्ति के पाप के पीछे अनेकों को वीतराग धर्म से वञ्चित नहीं करना चाहिए, प्रायश्चित्त प्रतिक्रमण से शुद्ध करना चाहिए।

30 कल्याण सागर जी महाराज गृहस्थ अवस्था में यात्रा के दौरान बीमार हो जाने पर एक व्यक्ति ने सहयोग किया था बदले में पैसे न लेकर कहा आप भी परोपकार करना उसका प्रभाव यह हुआ कि उन्होंने मुनि दीक्षा लेकर भी **''णमोकार द्वारा पर का कल्याण किया था।''**

31 उपकार करके धन्यवाद न लेकर बदले में दूसरों का उपकार करने की प्रेरणा देना चाहिए।

32 प्रेम चाहते हो तो दूसरों को भी प्रेम देना चाहिए।

''वात्सल्य गुण ऋद्धि प्रदाता-''

33 धर्मात्मा में, व्रतों में, स्वाध्याय में, जिन पूजन में वात्सल्य करो, वात्सल्य गुण के प्रभाव से ही समस्त द्वादशाङ्ग विद्या सिद्ध होती है, सिद्धान्त सूत्र (ज्ञान) में और सिद्धान्त के उपदेशक उपाध्याय (ज्ञानी) में सच्ची भक्ति के प्रभाव से ज्ञानावरण कर्म का रस सूख जाता है जिससे समस्त विद्याएं सिद्ध होती हैं, वात्सल्य गुण के धारक को देव भी नमस्कार करते हैं और वात्सल्य से ही अठारह प्रकार की बुद्धि ऋद्धि, दो प्रकार की आकाश गामिनी ऋद्धि, अनेक प्रकार की चारण ऋद्धि, अनेक प्रकार की विक्रिया ऋद्धि, तीन प्रकार की बल ऋद्धि, सात प्रकार की तप ऋद्धि, छः प्रकार की रस ऋद्धि, आठ प्रकार की औषध ऋद्धि, दो प्रकार की क्षेत्र ऋद्धि इत्यादि अनेक ऋद्धियाँ प्रकट होती हैं।

34 जिसको जिनवाणी में वात्सल्य नहीं है, विनय नहीं है, उसको यथावत् अर्थ का ज्ञान नहीं होता, विपरीत अर्थ ग्रहण करता है, मनुष्य के जीवन का आभूषण वात्सल्य है, देव-शास्त्र-गुरू और दया धर्म में वात्सल्य निर्वाण का कारण है।

35 अतिथि को पानी, मीठी वाणी, आसन और छाया देने में कृपणता न करें।

मैत्री दोहावली

36 **प्रीति ऐसी कीजिये जैसे लोटा डोर।**
गला फँसावे आपनो, जल पीवे कोई और।।

37 **धर्मी खड़ा बाजार में सबकी माँगे खैर।**
न काहू सो दोस्ती न काहू से बैर।।

38 **चार मिले चौसठ खिले बीस रहे कर जोड़।**
ज्ञानी ऐसे मिलन में पुलकित सात करोड़।।
एक शरीर में अस्सी लाख करोड़ रोम होते हैं भ.आ.

39 **मर जाऊँ माँगू नहिं अपने तन के काज।**
परोपकार के कारणे मोय न आवे लाज।।

40 **भविजन धागा प्रेम का मत तोड़ो चटकाय।**
टूटे से फिर न जुड़े, जुड़े गाँठ पड़ जाय।।

41 **जो जुदा करे उस कैंची को भूमि पर पटकी जाती है।**
जो दो को एक करे सुईयाँ पगड़ी में रक्खी जाती है।।

42 **अन्धकार में दीप जलाना सबके वश की बात नहीं है,**
कठिन समय में साथ निभाना हर साथी की रीत नहीं है।
मन के मौन समन्दर में जब पीड़ाओं का ज्वार उठा हो,
पीड़ाओं को पीकर मुस्कराना सबके वश की बात नहीं है।।

43 **पोथी पढ़-पढ़ जग मुआ पण्डित भया न कोय। ढ़ाई अक्षर प्रेम का पढ़े सो पण्डित होय।।**

44. **जहाँ सुमति तहां संपति नाना, जहाँ कुमति तहां विपति निधाना॥**

★★★

"एकता में शक्ति की विशेषता"

1 "**कलौ युगे सङ्घेशक्ति-**" धागे से धागा मिलकर कपड़ा और तिनके से तिनका मिलकर रस्सा बनता है जिससे बड़े-बड़े हाथी भी बाँधे जाते हैं, पाँच अगुलियाँ मिलती हैं तब ग्रास मुख में जाता है।

2 एक और एक ग्यारह होते हैं, सङ्गठन शक्ति परिवार में, समाज में, देश में समृद्धि को लाती है।

3 जहाँ सुमति तहाँ सम्पति नाना, जहाँ कुमति तहाँ विपति निधाना। जहाँ एकता है वहाँ अनेक प्रकार की समृद्धि व ऋद्धि सिद्धि होती है और जहाँ पर वैमनस्य होता है वहाँ पर अनेक प्रकार की विपत्तियाँ आती हैं।

4 सहानुभूति और सहृदयता सुमति में होती है, यह स्वर्ग का द्वार है, जहाँ कुमति है वहाँ नरक का द्वार है एवं जीवन में दुःख, सङ्कट, तनाव व अशान्ति का कारण है।

5 **कौरवशतं वयं पञ्च, परस्पर विरोधिनः।**
अन्यस्मिन् विरोधे तु, वयं पञ्चाधिकं शतं।।
कौरव सौ हैं और पाण्डव पाँच हैं किन्तु पाण्डव कहते हैं कि तीसरा विरोध करेगा तो हम पाँच और कौरव सौ नहीं किन्तु हम एक सौ पाँच हैं।

★★★

"परोपकार की महिमा"

1 पाप में लीन पुरुष कापुरुष है, पाप से निवृत्त पुरुष पुण्यवान् पुरुष है, निज-पर के हित में संलग्न पुरुष सत्पुरुष है और जिसका परहित करना ही कार्य है वह महापुरुष है।

2 **परोपकाराय वहन्ति नद्यः, परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः।**
परोपकाराय दुहन्ति गावः, परोपकाराय सतां प्रवृत्तिः।।

परोपकार के लिए नदियाँ बहती हैं, गायें दूध देती हैं, वृक्ष फल देते हैं और परोपकार के लिए सज्जनों की प्रवृत्ति होती है।

परोपकार दोहावली

''बदले की आशा विना'', सन्त करें उपकार। बादल का बदला भला, क्या देता संसार।।

स्वार्थ त्याग के साथ में जो होवे उपकार। जलधि से वह अधिक है उसकी शक्ति अपार।।

परहित सरस धरम नहीं भाई, पर पीड़ा सम नहीं अधमाई।

ग्राम वृक्ष के फूल फल, भोगें जैसे लोग। उन्नत मन के द्रव्य का, वैसा ही उपयोग।।

दुष्ट भलाई न करें, करो कोटि उपकार। सर्पनि दूध पिलाइये, विष ही के दातार।।

उपकारी निज को तभी, माने धन से हीन। याचक जब ही लौटते, होकर आशा हीन।।

हर शख्स को यहाँ मौत ने घेरा है, तन तरुवर पर कुछ दिन का बसेरा है।
मत सताओ दुखियों को मेरे दोस्त, चार दिन की चाँदनी फिर अँधेरा है।।

''**अहसान-**'' तुम किसी पर अहसान करो तो भूल जाना, कोई तुम्हारा अहसान करे तो मत भूलना।

छः प्रकार के लोग- आत्मम्भरी, कुटुम्बम्भरी, समाजम्भरी, प्रदेशम्भरी, राष्ट्रम्भरी, वसुधैवकुटुम्बकम्।

जब पृथ्वी पर कृतघ्नियों का भार बढ़ता है तब पृथ्वी भी काँपने लगती है अर्थात् भूकम्प आने लगता है।

नारियल ने प्रथम अवस्था में पानी पिया था, उसका उपकार चुकाने के लिये अपने सिर पर पानी धारण किये रहता है।

चन्द्रमा समस्त संसार को तो धवल करता है परन्तु अपने में स्थित निज कालिमा को क्यों नहीं साफ करता ? इससे पता चलता है कि प्रायः परहित में लीन सज्जनों का अपने कार्य में आदर नहीं होता है।

गरीब गली में अमीर मन्दिर में दीप जला रहा

गरीब गली में एवं धनी मन्दिर में दीप जला रहा था, गरीब को अधिक सुख मिला, धनी को कम सुख मिला, क्योंकि अन्धेरी गली में प्रकाश की जरूरत थी, मन्दिर तो स्वभाव से जगमगा रहा था, मन्दिर में दीपक रखना स्वार्थ है, गली में दीपक रखना परोपकार है, इसलिए दोनों के सुख एवं पुण्य में अन्तर है।

16 उत्तम पुरुष परोपकारी होता है बदले में कुछ नहीं चाहता है, मध्यम पुरुष अपना उपकार किये जाने पर प्रत्युपकार करता है परन्तु नीच पुरुष प्रत्युपकार नहीं करता है बल्कि उपकार किये जाने पर भीअपकार करता है।

17 **सर्प ने काटा चूहादिखा-** जिसे सर्प ने काटा था सर्प बिल में अन्दर खिसक गया उसी समय चूहा निकला अतः उसने समझा चूहे ने काटा है तो कुछ नहीं हुआ और जिसे चूहे ने काटा था, चूहा बिल में घुस गया उसी समय सर्प निकला, अतः उसने समझा सर्प ने काटा है तो वह डरकर मर गया, एक मिनट में सारी कोशिकाएँ मर गयीं, सकारात्मक सोच से शक्ति बढ़ती है, परोपकार की भावना से आत्मा को सिंह जैसा बल प्राप्त होता है, नकारात्मक सोच से शक्ति घटती है।

18 **डबल परीक्षा-पेपर दूँ या जान बचाऊँ-** परीक्षा देने जा रहे बच्चे ने रास्ते में पड़ी घायल बुढ़िया का इलाज करवाया, जब चिकित्सक ने कहा अब कोई खतरा नहीं है तब वह विद्यालय गया, तो प्राचार्य ने प्रवेश नहीं दिया, उसने रास्ते का सारा हाल सुनाया, प्राचार्य ने फ़ोन पर चिकित्सक से पूँछा, चिकित्सक ने कहा हाँ मैं आपको धन्यवाद देने ही आ रहा था, क्योंकि आपके विद्यालय में परोपकार की शिक्षा दी जाती है, बाद में बच्चे ने परीक्षा दी, परिणाम में वह प्रथम आया, प्राचार्य ने समस्त विद्यार्थियों के सामने उसका सम्मान किया और कहा ये हमारे विद्यालय की शान है।

मन्दिर बनाया धन्यवाद फैक्ट्री बनाता तो

19 सेठ छिदामीलाल जी से फिरोजाबाद में आयकर अधिकारी ने पूँछा सेठजी इतना पैसा इस मन्दिर में लगाया, इसके बदले में नई फैक्ट्री खुल जाती सेठजी ने उत्तर दिया यदि एक फैक्ट्री और लगाता, तो मुर्दाबाद के नारे लगते, मन्दिर बन गया तो सब धन्यबाद देते हैं, फिर मैं कौन सा मन्दिर बनाने वाला हूँ, मैंने तो इस फैक्ट्री के मजदूरों से प्राप्त पैसे को मन्दिर बनाने वाले शिल्पियों मजदूरों को बाँट दिया, मैं तो इधर का पैसा उधर वितरित करने वाला हूँ, यह निरभिमानता है।

''सब व्यवस्था अहिंसा के लिये-''

20 दुनिया के सब कार्य अहिंसा के लिये, चौराहे पर लाल बत्ती अहिंसा के लिये, आपस में दो टकरा न जाएँ इसलिए यातायात नियन्त्रक पुलिस अहिंसा के लिये, मजिस्ट्रेट अहिंसा के लिये, पुलिस, चिकित्सक, कानून व्यवस्था, विधानसभा, मन्त्री आदि सभी विभाग अहिंसा के लिये हैं।

धर्म ग्रन्थ का रहस्य समझ में आया

21 महात्मा ने घायल पड़े सिपाही से कहा शास्त्र सुनोगे ? सिपाही बोला नहीं, पानी पीऊँगा, महात्मा पानी ले आया, कहा सिर ऊँचा करोगे ? कर दिया, सेवा से द्रवीभूत होकर मरणोन्मुख सिपाही की आँखों में आँसू आ गये और उसने कहा महाराज मैंने धर्म ग्रन्थ नहीं पढ़े लेकिन आपके सेवा भाव से धर्म ग्रन्थों का रहस्य समझ में आ गया है कि परोपकार के समान कोई धर्म नहीं है और पर को पीड़ा देने से बड़ा कोई अधर्म नहीं है।

क्या कूबड लगाना भी जानता है

22 बुढ़िया को कूबड़ हो गया, लोग चिढ़ाते थे, वह दुःखी थी, एक व्यक्ति ने कहा माँ दुःखी मत होओ इसका समाधान मैं जानता हूँ, बुढ़िया ने पूँछा क्या ठीक करना जानता है ? व्यक्ति ने कहा हाँ, तो ठीक कर दूँ ? बुढ़िया बोली जब ठीक करना जानता है, तो लगाना भी जानता है ? व्यक्ति बोला हाँ जानता हूँ, तब बुढ़िया ने कहा, मेरी कूबड़ रहने दे, जो मेरी मजाक करते हैं, उनकी पीठ पर एक-एक कूबड़ लगा दे, बस मेरा दुःख खत्म हो जायेगा, व्यक्ति दूसरों के दुःख को देखकर सुखी होना चाहता है जो असम्भव है।

कपड़ा नहीं गधा बचाना

23 परोपकार से स्वोपकार भी होता है, कीचड़ में फँसे हुए गधे को देखकर न्यायाधीश अपनी गाड़ी से उतर कर उसे बाहर निकालने लगे, ड्राईवर ने कहा अरे साहब आप क्या कर रहे हैं मैं निकाल देता हूँ, उन्होंने नहीं सुना और गधे को निकाल दिया, कपड़े गन्दे हो गये थे, किन्तु समय नहीं था कि कपड़े बदल सकें, उसी हालत में अदालत पहुँच गये, मित्रों ने पूँछा कि आपको आज क्या हो गया इतने गन्दे कपड़े क्यों हैं ? नौकर ने सारा समाचार सुनाया और कहा साहब बड़े दयालु हैं, जज ने कहा ! नहीं भैया मैंने कुछ नहीं किया, मैंने अपनी ही पीड़ा कम की है।

धर्म की पुस्तक

24 1978 में आचार्य श्री विद्यासागर जी के पास जापान से एक दल आया, आचार्य श्री ने उन्हें एक पुस्तक दी उन्होंने पूँछा ये पुस्तक किस धर्म की है ? आचार्य श्री ने कहा जैन धर्म की, उन्होंने कहा हम नौजवान हैं धर्म नहीं मानते, आचार्य श्री ने कहा ! दुनिया में ऐसा कोई नहीं जो धर्म को न मानता हो, आप कैंसे कह रहे हैं ? तब आचार्य श्री ने कहा, आपके शिर में कोई लाठी मारे तो कैसा लगेगा, युवक बोला ! बुरा लगेगा, और कोई पट्टी बाँधे तो कैसा लगेगा ? युवक बोला !

अच्छा लगेगा, आचार्य श्री बोले ! बस यही तो अधर्म और धर्म है, तब युवक बोला कि धर्म ऐसा है तो हम मानते हैं, आचार्य श्री ने कहा धर्म विशाल है, मात्र विधि विधान को ही धर्म नहीं कहते हैं।

परोपकार के तीन प्रश्न

25 एक बहुत गरीब परिवार था, एक बार जङ्गल में एक भविष्य वक्ता सन्त आये थे, माँ ने बेटे से कहा ! तुम जाकर पूँछो हमारे दुःख के दिन बीतेंगे या भूखे ही मरते रहेंगे, माँ के आग्रह से बेटा सन्त के पास चला, चलते-चलते शाम हो गयी, एक गाँव में सेठानी की कोठी के पास जाकर पूँछा क्या हम यहाँ रात व्यतीत कर सकते हैं ? स्वीकृति दे दी, सेठानी ने पूँछा कहाँ जा रहे हो ? लड़का बोला ! माँ का प्रश्न पूँछने सन्त के पास जा रहा हूँ, सेठानी ने कहा एक प्रश्न मेरा भी पूँछ आना, मेरी बेटी गूँगी है, वह कभी बोलेगी या नहीं, शादी होगी या नहीं ? आगे बढ़ा तो जङ्गल में प्यास बुझाने तापस की झोपड़ी में गया, तापस ने पानी पिलाकर पूँछा कहाँ जा रहे हो ? सन्त के पास प्रश्न का उत्तर लेने, तापस ने कहा, एक प्रश्न मेरा भी पूँछ आना, मुझे पच्चीस वर्ष तप करते हो गये परमात्मा का दर्शन क्यों नहीं हो रहा है ? आगे बढ़ा भूख से पीड़ित हुआ तो हल जोत रहे किसान से भोजन माँगा, उसने भोजन करा दिया और पूँछा कहा कहाँ जा रहे हो ? उसने बताया तो किसान बोला हमारा भी एक प्रश्न पूँछ आना, मेरे खेत में फसल होती है पर फल नहीं लगते क्या कारण है ? सन्त के पास पँहुच कर अभिवादन कर कहा कृपया हमारे चार प्रश्नों का समाधान करें, सन्त ने कहा ! हम एक दिन में तीन प्रश्नों का ही समाधान करते हैं, उसने सोचा किसका प्रश्न छोड़ दूँ ? माँ का प्रश्न छोड़कर सबसे पहले सेठानी का प्रश्न पूँछा, सन्त ने कहा ! जिसको देखकर लड़की बोलने लगेगी, वही उसका वर होगा, तापस के प्रश्न के उत्तर में कहा ! तापस की दाढ़ी में जब तक मणि रहेगी तब तक परमात्मा का दर्शन नहीं होगा, किसान के खेत में जब तक सोने-हीरे के घड़े गढ़े रहेंगे, तब तक फसल नहीं आयगी, उत्तर लेकर वापस चला, किसान को बताया तो उसने घड़े निकाल कर उसी को दे दिये, तापस ने भी मणि उसी लड़के को दे दी, सेठानी की लड़की उसी लड़के को देखकर बोलने लगी, तो उसने उसी के साथ शादी कर दी, माँ के पास गया माँ आश्चर्य में थी, उसने कहा माँ परोपकार करने वाले का उपकार स्वयं हो ही जाता है।

★★★

उपकार जननी और जन्मभूमि का

1 जन्म लेने मात्र से मातृभूमि का ऋण चढ़ जाता है, तब नौ माह गर्भ में रखने वाली माँ का ऋण कितना होगा ?

2 लोक में माँ के समान कोई हितकारी नहीं है जो माँ को ठुकराते हैं वे जीवन में उन्नति नहीं कर पाते हैं।

3 समस्त रिश्तों में माँ का रिश्ता नौ माह बड़ा होता है।

4 एक माँ का दिल है जो दुनिया में मुफ्त में दुआ देता है, पत्नि तलाक दे सकती है पर माँ नहीं।

5 हमारा रिश्ता माँ से प्रारम्भ होता है- जैसे आसमाँ, धरती माँ, जिनवाणी माँ, गौ माँ और भारत माँ।

6 माँ की पूजा होती है, क्योंकि माँ और परमात्मा के शरीर में दूध रहता है, पृथ्वी माँ से दूध की नदियाँ बहती हैं, गौ माँ मीठा दूध देती है।

7 आज का बेटा माँ के साथ ऐसा व्यवहार करता है जैसे फटा पुराना सामान कोने में डाल देते हैं।

8 भगवान् बनने के बाद भी माँ को याद करते हैं, वामादेवी, त्रिशलानन्दल, कौशल्यानन्दन, मरूदेवी के लाल।

9 माँ ने तुम्हे मात्र दूध से नहीं पाला गर्भ में नौ माह खून से पाला है, तभी तो कहते हैं 'हमारा खून है'।

10 **कुत्ता तोता को पालता**-पालने वाले को नहीं पालता- आज की औलाद कुत्ते, तोते आदि जानवरों को तो पालती है पर पालने वाले माँ-बाप को नहीं पालती है, एक माँ-बाप कह रहे थे काश हम कुत्ता होते तो बेटे-बहु के हाथ का खाना तो मिलता।

11 **माँ की महिमा वरणी न जाय-** विवेकानन्द जी से किसी ने पूछा आप अपनी माँ के गीत क्यों गाते रहते हो, उन्होंने अपनी पगड़ी उतारी और कहा, उस पत्थर को पगड़ी में बाँध कर नौ घण्टे पेट में बाँधो और घूम कर आओ, वह घबरा गया, मैं तो नौ मिनट भी नहीं बाँध सकता, तब उसे माँ की महिमा समझ में आई।

12 माँ-बाप सन्तान को बुढ़ापे की लाठी समझते हैं पर वही लाठी माँ-बाप का सिर फोड़ देती है।

13 **माँ एक रानी अनेक-** माँ बाप के इतने उपकार होते हैं कि सात जनम तक स्वयं के शरीर की चमड़ी के जूते बनाकर पहनाओ तो भी नहीं चुकेंगे। रानी छयानवें हजार हो सकती हैं पर माँ एक ही होती है।

14 **इंजीनियर की नहीं-इंसानियत की डिग्री चाहिए-** डॉक्टर, इञ्जीनियर इत्यादि की डिग्री मिल सकती है पर इंसानियत की डिग्री नहीं मिल सकती क्योंकि इंसानियत की डिग्री कर्तव्य से आती है।

15 माँ-बाप जिसको बोलना सिखाते हैं, बुढ़ापे में उसके सामने खाँसने-बोलने में डरते हैं।

16 बाप दूल्हा राजा कहता है, माँ नजर उतारती है, बेटा उन्हीं माँ-बाप को नजरों से उतारकर सीढ़ियों से नीचे उतार देता है, कहता है कि ! माँ-बाप ने मेरे लिये क्या किया ? ये शब्द बोलना भी उन्हीं ने सिखाया है और कचराघर में नहीं फेंका, बड़े-बड़े योद्धा कंस, कर्ण जैसे नदियों में बहा दिये गये, तुम्हे नहीं बहाया ये क्या कम है।

17 एक माँ बाप पाँच-छः बच्चों को पाल लेते हैं, पर पाँच-छः बच्चे एक माँ बाप को क्यों नहीं पाल सकते हैं ?

18 कृष्णजी ने रूक्मणि से दूध माँगा और सो गये, वह दूध रखकर चली गयी, बोली जब नींद खुले तब पी लेना, एक बार यशोदा माँ से माँगा और सो गये, माँ सारी रात बैठी रही बेटे को पहले दूध पिलाऊँगी फिर सोऊँगी, ये माँ और पत्नि में अन्तर होता है।

19 माँ-बाप को दो बार नरक तुल्य पीड़ा होती है, एक बार बेटी की विदा हो जब, दूसरा बेटा मुख मोड़े तब।

20 काल चक्र सबको निचोड़ देता है, बेटा आश्रम में लाके माँ-बाप को छोड़ देता है।

21 माँ-बाप मन्दिरों में जा के दुआ माँगते हैं, तब कहीं जाकर सन्तान का जन्म होता है। बेटा माँ-बाप को दवा भी लाके नहीं देता है।

22 कुत्ता एक रोटी खाता है और रात-दिन वफादारी करता है, किन्तु हम माँ के दूध के थोड़े भी वफादार नहीं है।

23 दौलत को कहते हैं इसमें मेरा अधिकार है, माँ बाप को नहीं कहते कि इनकी सेवा सुरक्षा करना मेरा अधिकार है, श्रवणकुमार का आदर्श अन्धे माँ-बाप को कांवर में बिठाकर तीर्थ यात्रा करायी थी, श्रवण ने कहा था मेरे माँ-बाप आँखो से अन्धे हैं पर हृदय से नहीं।

24 पत्नि, मित्र और भगवान् का भी चुनाव हो सकता है पर माँ-बाप का नहीं।

25 बूढ़े माँ बाप को जीते जी तो शूल चुभाये, मरने पर अर्थी पर फूल चढ़ाए।

★★★

"मित्र हो इत्र की तरह-जो जीवन में सुगन्ध फैलाये"

1 बीमार के लिए, धनहीन के लिए, परदेश गये हुए के लिए व शोक से दुःखी मनुष्य को मित्र का दर्शन औषधि के समान है।

2 पवित्रता, त्यागशीलता, शूरवीरता, सुख-दुःख में समानता, सरलता, अनुराग और सत्य व्यवहार ये मित्र के गुण हैं।

3 इस असार संसार में मन के विश्वास के पात्र स्वभाविक मित्र की प्राप्ति होना "**निःसन्देह यही सार**" है।

4 रहस्य प्रकट करना, याचना करना, निर्दयता पूर्ण व्यवहार करना, चित्त की चञ्चलता, क्रोध, असत्य भाषण और जुआ खेलना ये मित्र के दूषण हैं।

5 नाना दुःखों के कारण कुमार्ग में आसक्त मन वाले मित्र को जो रोकते नहीं हैं वे मानों भयङ्कर सर्पों से व्याप्त गहरे कुंए में गिरने कि प्रेरणा करते हैं।

6 यदि किसी से उत्कृष्ट प्रीति रखना चाहते हो तो उससे वाचनिक विवाद, अर्थ का लेन-देन और परोक्ष में उसकी स्त्री से सम्पर्क ये तीन काम मत करो।

7 देना, लेना, गुप्त बात कहना, गुप्त बात पूँछना, भोजन करना और कराना ये छः प्रीति के लक्षण हैं।

8 'आइये-आइये, इस आसन पर बैठिये, आपके दर्शन से मैं प्रसन्न हुआ हूँ, क्या समाचार है, प्रतिकूलता में भी आप प्रसन्नता बनाए रखते हैं, बहुत समय बाद क्यों आए हो' इस प्रकार घर पर आये हुए मित्र से जो आदर पूर्वक सम्भाषण करते हैं उनके घर संशय रहित मन से सदा ही जाना चाहिए।

9 गाँठ में दाम, परलोक में धर्म, विदेश में विद्या, जीवन में सच्चरित्र, कष्ट में सद्बुद्धि, बुढ़ापे में माला ये छः मित्र कहे गए हैं।

★★★

प्रभावना अङ्ग की महिमा

1 **अज्ञानतिमिरव्याप्ति, मपाकृत्य यथायथं।**
जिनशासनमाहात्म्य, प्रकाशः स्यात्प्रभावना।।

जैसे बने तैसे अज्ञान रूपी अन्धकार को हटाकर जिनशासन का माहात्म्य फैलाना प्रभावना कहलाती है।

2 **आत्मा प्रभावनीयो, रत्नत्रयतेजसा सततमेव।**
दानतपोजिनपूजा, विद्यातिशयैश्च जिनधर्मः।।
रत्नत्रय की आराधना से निरन्तर आत्मा की प्रभावना करनी चाहिये एवं दान, तप, जिनपूजा और विद्या के अतिशय से जिनधर्म की प्रभावना करनी चाहिये।

3 **''नाम की प्रभावना चाहने वाला''** आत्महित व धर्म की प्रभावना भी नहीं करता है।

4 **धर्मनिर्मूलविध्वंसं, सहन्ते न प्रभावकाः।**
विना सावद्य लेशेन, न स्याद् धर्मप्रभावना।।
प्रभावक लोग धर्म के निर्मूल विध्वंस को सहन नहीं करते हैं, क्योंकि विना पाप के धर्म की प्रभावना सम्भव नहीं है।

सेठ की उदार भेंट

5 सेठ हरजस राय दिल्ली वालों ने विधान के बाद पूरी समाज को लड्डू बँटवाये, एक गरीब ने लड्डू नहीं लिये, मुनीम ने सेठ को खबर दी, कि गरीब ने कहा है कि हम सेठ को खिला नहीं सकते तो उनकी भेंट कैसे लेवें ? सेठ जी दूसरे दिन बग्घी पर सवार होकर उसकी दुकान की ओर गये, वह हाथ ठेला पर चना-मूंगफली बेचता था, सेठ ने उसकी बरनी में से चना-मूंगफली निकाल कर खा लिये, पानी पिया और कहा भैया अब हमारी भेंट स्वीकार करो, हमने तुम्हारे यहाँ खा लिया, यह उदारता कहलाती है।

6 **प्रेम पूर्ण आहार-सबसे बड़ा उपहार-** बनारस में महावीर जयन्ति के अवसर पर श्री जी की शोभा यात्रा निकलती थी किंतु कुछ वर्षों से विरोधी तत्त्वों के कारण रथ नहीं निकाल सकते थे, महावीर जयन्ती के अवसर पर पण्डित जगनमोहनलाल जी कटनी वालों को बुलाया, उनके कहने से सबसे पहले विरोधियों को प्रीति भोज दिया गया, चल समारोह के कार्य उन्हीं को सौंप दिये, रथ निकाला गया, चौराहे पर भोजक ने आलाप भरकर राग गाया 'दौलत पक्षपात तज देखो, साँचो देव कौन है इनमें' सुनते ही सबकी दुकानें खुल गयीं थी।

★★★

-: दस धर्म:-

धर्म के दस सोपान

पहला सोपान-उत्तम क्षमा धर्म

क्रोधी की दुनिया विरोधी

1 जिसमें हम दुनिया को आनन्द बाँटते हैं उसको कहते हैं त्यौहार, जो आत्मा को आनन्द देने वाला होता है उसे कहते हैं पर्व। त्यौहार में जोड़ना होता हैं और पर्व में छोड़ना होता है।

2 **पर्व तीन प्रकार के होते हैं-** 1. अनादि निधन पर्व- दस लक्षण, सोलहकारण आदि, 2. घटनाविशेष से संबंधित पर्व- रक्षाबन्धन, अक्षय तृतीया आदि, 3. निमित्तविशेष से संबंधितपर्व- पञ्चकल्याणक आदि।

3 **क्षमा-** जिसमें क = कषायों का, श= शमन हो और मा= माँ की तरह जो आत्मा की रक्षा करे उसे क्षमा कहते हैं।

4 **कषायों को उपमा**-क्रोध अन्धा, मान बहरा, माया गूँगी और लोभ नकटा होता है।

5 क्रोध उत्पत्ति के कारण- इच्छा पूर्ति में बाधा होना, मनचाहा न होना, मानसिक अस्त-व्यस्तता, अस्वस्थता, भोजन और मौसमादि का प्रभाव।

6 संसार और मुक्ति के बीच मानव जीवन में साधना रूपी पर्व नहीं मनाया तो दीपावली जैसे अनेक पर्व निकल जायेंगे और अन्त में जीवन का दिवाला भी निकल जाएगा और हम कुछ भी नहीं कर पाएँगे।

7 यदि आप से हर व्यक्ति खुश है तो आपने जीवन में बहुत से समझौते किए हैं, यदि आप हर व्यक्ति से खुश हैं तो आपने दूसरों की बहुत सी भूलों को अनदेखा किया है।

8 **भैंस और खेती** को लेकर आलसी मित्रों में विवाद-दो मित्र आपस में बैठे-बैठे चर्चा छेड़ देते हैं, एक कहता है 'हम इस साल खेती करेंगे' दूसरा कहता है 'हम इस साल भैंसें खरीदेंगे', पहला कहता है आपकी भैंसे मेरे खेत में नहीं आना चाहिए, दूसरा कहता है पशु हैं आयेंगे तो हम क्या करेंगे, इसी बात को लेकर दोनों में झगड़ा हो जाता है, और आपस में एक दूसरे का सिर फोड़ देते हैं, अत: व्यर्थ की चर्चा नहीं छेड़ना चाहिए।

क्रोध नशाता बोध-

1 **क्रोध इंसान को शैतान बना देता है, क्रोध दोस्त को दुश्मन बना देता है।**
अरे क्रोधाग्नि में जलने वालों, क्रोध गुलशन को वीरान बना देता है।।

हर बार क्रोध करने पर कुछ सौन्दर्य नष्ट हो जाता है।
क्रोध धीमा किन्तु घातक जहर है।
क्रोध से रक्त में उबाल आता है।
हृदय की धड़कन, रक्त सञ्चार एवं रक्तचाप में वृद्धि हो जाती है।
नाड़ी मण्डल भी क्षुब्ध हो जाता है।
मन की स्थिति में भयंकर परिवर्तन आ जाता है।
चेहरा, आखें, कान लाल हो जाते हैं।
वाणी और शरीर में कम्पन होने लगता है।
भाषा अनियंत्रित एवं आचरण विवेक हीन हो जाता है।
शनैः-शनैः शरीर में अनेक विकृतियां पनपने लगती है।
आयुर्वेद के अनुसार शरीर में पित्त का प्रकोप बढ़ जाता है।
एसिडिटि, अपच, अल्सर, भूख न लगना, पाचन क्रिया आदि की समस्या पैदा हो जाती हैं।
क्रोध से होने वाले तनाव से मधुमेह, पागलपन, हृदयरोग की आशङ्का बढ़ जाती है।
कभी-कभी इससे दिल का दौरा, लकवा, ब्रेन हेमरेज तक हो जाता है।
क्रोध में व्यक्ति की ऊर्जा का बड़ा हिस्सा नष्ट हो जाता है, इसके कारण कमजोरी आती है।
क्रोधी काँपता है एवं गुस्से के बाद शरीर शिथिल हो जाता है।
क्रोधी व्यक्ति से उसके परिजन, मित्र, हितैषी भी बोलते हुए कतराते हैं।
गुम-सुम वातावरण, सन्नाटा जैसा छाया रहता है।
क्रोधी के हित की बात भी स्वजन बताने का साहस नहीं कर पाते हैं।
परिणाम स्वरूप क्रोधी अलग-थलग पड़ जाता है, कुण्ठित हो जाता है।
इस प्रकार उस पर दोगुनी मार पड़ती है।
एक तो क्रोध का तनाव, दूसरा अलग-थलग पड़ने एवं कुण्ठा ग्रस्त होने का तनाव।
इन तनावों से व्यक्ति धीरे-धीरे शारीरिक एवं मानसिक रोगों से ग्रस्त हो जाता है।
क्रोध से नुकसान ही नुकसान है, इससे पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन तो खराब होता ही है।
स्वास्थ्य भी चौपट हो जाता है।
गाली देने वाला तभी विजयी होता है जब सुनने वाला नाराज हो।
जिस प्रकार अग्नि किसान के कष्ट से सञ्चित धान्य को जला देती है, उसी प्रकार क्रोध भी

व्रती के समस्त पुण्य को क्षण भर में जला देता है।

29 परस्पर के घर्षण से वन के वृक्षों में अग्नि उत्पन्न होने पर वे वृक्ष ही जलते हैं, परन्तु क्रोध रूपी अग्नि नियम से सम्यग्दर्शन रूपी वृक्ष को भी जला देती है।

30 क्रोध देव गति को नष्ट कर, नरकगति में पहुंचाता है एवं सम्यग्दर्शन, विभूति, आयु और यश आदि का भी क्षय करता है।

31 सुन्दर मनुष्य भी क्रोध के समय वानर के समान हो जाता है व क्रोध से पाप का बन्ध कर करोड़ों जन्मों में कुरूप होता है।

32 लोभ से क्रोध होता है, क्रोध से बैर होता है और बैर से शास्त्र का जानकार विद्वान् पुरुष भी नरक जाता है।

33 पुत्र को लेकर पति-पत्नि में विवाद हो गया- पत्नि कहती मैं बेटे को डॉक्टर बनाऊँगी, पति कहता मैं बेटे को वकील बनाऊँगा। जज ने कहा ! बच्चे से पूँछो वह क्या बनना चाहता है, बोले ! बच्चा तो अभी हुआ ही नहीं।

34 बुढ़िया ने क्रोध में रोटी नहीं खाई पर बहु का दिमाग खा लिया।

35 जैसे वस्त्र के ऊपर लगा छोटा सा दाग वस्त्र पहनने का मजा बिगाड़ देता है, ट्यूब में हुआ छोटा सा पञ्चर कार को बेकार कर देता है, वैसे ही बैर की लगी छोटी सी गाँठ जीवात्मा को परमात्मा होने से रोक देती है।

36 क्रोध बुरे विचारों की खिचड़ी है, उसमें द्वेष, भय, तिरस्कार, घमण्ड, अविवेक सब मिले होते हैं।

37 क्रोध को हम बारूद के समान विस्फोटक और रासायनिक गैस की तरह अत्यन्त ज्वलन शील पदार्थ मान सकते है। क्रोध के समय विवेक नष्ट हो जाता है। वर्षों की मित्रता को क्रोध क्षण में नष्ट कर देता है।

38 क्रोध चारित्र मोह की प्रकृति है इससे संयम का घात होता है और निकट तम सम्बन्ध को भी तोड़ देता हैं।

39 प्रतिशोध के समय बोध अन्धा होता है एवं क्षमा माँगने पर क्षमा करना अहङ्कार को पुष्ट करना है।

40 क्रोध अग्नि या चण्डाल है, वह शरीर और क्षमादि गुणों को जलाता है।

41 क्रोध अज्ञानता से शुरू होता है और पश्चात्ताप पर खत्म होता है।

42 बहुत क्लेश से सञ्चित हुए यश और तप क्रोध से क्षण भर में नष्ट हो जाते हैं।

43 क्षमा के समय परमात्मा और क्रोध के समय राक्षस एकही व्यक्ति के दो पहलु होते हैं।

44 सभी को भूलना अच्छा है पर स्वंय को भूलना पागलपन है, लेकिन व्यक्ति क्रोध के समय स्वयं को भूल जाता है।

45 क्रोध इञ्जन है, अविवेक और अज्ञान उसके दो पहिए हैं।

46 क्रोध के लक्षण शराब और अफीम से मिलते हैं।

47 क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष, आदि बुद्धि का नाश तो करते ही हैं, निराशा के भी जनक हैं, निराशा तनाव की जननी है और तनाव अनेक रोगों की जड़ है, पेट के घाव में तनाव अहम भूमिका निभाता है।

48 **क्रोधात् भवति सम्मोहः, सम्मोहात् स्मृतिविभ्रमः।**
स्मृतिभ्रंशात् बुद्धिनाशः, बुद्धि नाशात् प्रणश्यति।।
क्रोध से मोह उत्पन्न होता है, मोह से स्मृति भ्रम, स्मृति के नाश से बुद्धि का नाश होता है, और बुद्धि के नाश से मनुष्य नष्ट हो जाता है।

49 **क्षणे रुष्टा क्षणे तुष्टा, रुष्टातुष्टाश्च क्षणे-क्षणे।**
अव्यवस्थित चित्तानां, प्रसादोऽपि भयङ्कराः।।
जिनका मन वश में नहीं होता है वे क्षण भर में सन्तुष्ट हो जाते हैं और क्षणभर में गुस्सा हो जाते हैं उनकी प्रसन्नता भी दुःखदायी होती है।

50 **वैरं वैश्वानरं व्याधिः, वादो व्यसन लक्षणाः।**
महानर्थाय जायन्ते, वकाराः पञ्चवर्जिताः।।
वैर, अग्नि, व्याधि, विवाद और व्यसन ये पाँच वकार अनर्थकारी हैं।

51 **मृगमीनसज्जनानां, तृणजलसन्तोषविहित वृत्तीनां।**
लुब्धकधीवरपिशुनाः, निष्कारणवैरिणो भवन्ति।।
हिरण घास में सन्तुष्ट रहता है, मछली जल में सन्तुष्ट रहती है, सज्जन सन्तोषी होते हैं फिर भी शिकारी हिरन का, मछुआरा मछली का और दुष्ट लोग सज्जनों के अकारण बैरी होते हैं।

52 **सुहदुक्खसुवहुसस्सं कम्मखेत्तं कसेदि जीवस्य।**
संसारदूरमेरं तेण कसाओत्ति णं वेन्ति।।

जीव कषाय करके जिसमें सुख-दुःख रूपी धान उत्पन्न होती है, ऐसे संसार रूपी लम्बे खेत को जोतता है अर्थात् जीव कषाय करके संसार को बढ़ाता है।

53 **कषायैः रञ्जितं चेतस्तत्त्वं नैवावगाहते।**
नीली रक्तेम्बरे रागो दुराधेयो हि कौंकुमः।।(स्व.सं.)
कषाय से अनुरञ्जित चित्त में तत्त्व अवगाहित नहीं होता जैसे नीले रङ्ग के वस्त्र में कुमकुम का रङ्ग चढ़ता नहीं है।

54 **उत्तमे तु क्षणं कोपः, मध्यमे स्यात् मुहूर्तकं।**
जघन्ये स्यादहोरात्रं, चाण्डाले मारणान्तिके।।
उत्तम प्रकृति के पुरुष क्षण भर क्रोध करते हैं, मध्यम प्रकृति के एक मुहूर्त, जघन्य प्रकृति के चौबीस घण्टे और चाण्डाल प्रकृति के मर जाते है पर क्रोध नहीं छोड़ते हैं।

55 **यशोधर का यशवर्धन**-श्रेणिक ने अपने शिकार में बिघ्न जान यशोधर मुनिराज के गले में सर्प मारकर डाल दिया, तीन दिन बाद चेलना से कहा तो चेलना श्रेणिक को लेकर मुनिराज के पास पहुँची, मुनिराज के ऊपर सेकड़ों चीटियों का उपसर्ग हो रहा था। चेलना ने उपसर्ग दूर किया। मुनिराज ने ध्यान खोला तो दोनों ने नमोस्तु किया। मुनिराज ने दोनों को धर्म वृद्धि का आशीर्वाद दिया। श्रेणिक को पश्चात्ताप हुआ, कि मैंने मुनिराज को तीन दिन भूखा रखा, उपसर्ग किया, उसके बाद भी ये हमारा कल्याण चाहते हैं। मेरे स्थान पर यदि कोई दूसरा होता तो मैं उसे मृत्यु दण्ड देता। अब मैं स्वयं राजा हूँ और स्वयं अपराधी हूँ, अतः मुझे स्वयं आत्मघात कर लेना चाहिए। मुनिराज मनःपर्यय ज्ञानी थे अतः वे श्रेणिक के मन की बात जान गये, और बोले राजन् ! आत्मघात करना तो पाप है ही आत्मघात की बात सोचना भी पाप है। ऐसा सुनकर श्रेणिक को आश्चर्य हुआ और सोचा ये तो साक्षात् भगवान् हैं, और अत्यधिक पश्चात्ताप करते हुए मुनि से क्षमा माँगकर प्रणाम किया, जिससे सम्यक्त्व को प्राप्त कर, बाद में भगवान महावीर के पादमूल में क्षायिक सम्यक्त्व और तीर्थंकर प्रकृति का बंध किया, जिसके प्रभाव से सप्तम नरक की तेंतीस सागर की आयु घटकर पहले नरक की मात्र चौरासी हज़ार वर्ष शेष रह गयी, यह था क्षमा का प्रभाव।

56 **क्रोधान्ध राजा**-प्यास से पीड़ित राजा जङ्गल में भटक गया था, थककर एक वृक्ष के नीचे लेट गया, थोड़ी देर बाद आँख खुली तो उसने देखा कि वृक्ष की खोह से कुछ-कुछ पानी बह कर आ रहा है, राजा ने पत्तों का दोना बनाया पानी भरने को रख दिया दोना भरा था कि एक तोते ने दोने को नीचे गिरा दिया, बड़ी खिन्नता हुयी, पुनः पानी इकट्ठा किया तोते ने फिर गिरा दिया

राजा को बहुत क्रोध आया और उसने निश्चय किया कि यदि इस बार पानी गिराया तो उसका काम तमाम कर देगें। तीसरी बार जैसे ही पानी पीने को हुआ तो तोते ने फिर गिरा दिया। तो राजा ने तोते को चाबुक से मार डाला, और राजा बेसब्री से सोचता है यहाँ पानी भरने की अपेक्षा जहाँ से पानी आरहा है वहीं जाकर के पानी पी लिया जाय, वहाँ जाकर देखा तो वहाँ पानी नहीं अजगर के मुख से निकलने वाली लार थी जो साक्षात् जहर था। राजा को सारी स्थिति समझ में आगई समय निकल चुका था, इतने छोटे से पक्षी ने सम्राट के प्राणों की रक्षा में अपने प्राण समर्पित कर दिये, मैं क्रोधान्ध प्रजापाल होकर भी एक छोटे से जीव की रक्षा नहीं कर सका।

57 **उपकारी नेवला-** (क्रोध के समय विवेक खो जाता है) किसान की पत्नी पानी भरने गयी थी, उसका बालक पालने में सो रहा था, इतने में सर्प आया, नेवले ने सर्प को मारकर बच्चे की रक्षा की, नेवले के मुँह पर खून लगा देख कर महिला ने सोचा इसने बच्चे को मार डाला होगा और विना सोचे पानी का घड़ा नेवले के ऊपर पटक दिया, नेवला मर गया, अन्दर आकर देखा तो बालक सो रहा था और नीचे सर्प मरा हुआ पड़ा था, उसने विना सोचे परमोपकारी नेवले को मार डाला था।

क्षमा से लाभ-

1 **भक्ति भाव भादों नदी, सभी चली थर्राय।**
सरिता वही सराहिये, जेठ मास ठहराये।।

2 दण्ड में उल्लास है पर शान्ति नहीं, क्षमा में शान्ति और आनन्द है, एवं यश भी मिलता है।

3 जो वर्तमान में जीता है वह वर्धमान हो जाता है।

4 करोड़ो बार आत्मध्यान और एक बार क्रोध के समय क्षमा का बराबर फल है।

5 जैसे प्रकाश, पवन, पानी, आकाश, सभी के लिए हैं, उसी प्रकार क्षमा धर्म सबको सुखी करता है।

6 जैसे रोग किसी व्यक्ति विशेष को नहीं होता, दवाई किसी व्यक्ति विशेष के रोग को दूर नहीं करती, उसी प्रकार धर्म सभी के दुखों को दूर करता है।

7 प्रेम की उद्दीप्त भावना शरीर को उत्तम स्वास्थ्य प्रदान करने का सर्वोत्तम साधन है, प्रेम ही आपको स्वास्थ्य व परमानन्द की अनुभूति करायेगा।

8 विद्युच्चर मुनि की क्षमा- उग्र तप के धारी विद्युच्चर नामक मुनिराज को चामुण्डा नामक

व्यन्तरी ने घोर उपसर्ग किया, उस उपसर्ग को समता से सहनकर मोक्ष को प्राप्त हुए हैं।

9 **चिलाती मुनि-** चिलाती मुनि ने पूर्व अवस्था में एक कन्या को विवाह मण्डप से हरण किया, तो राजा श्रेणिक के सेनिकों ने उसका पीछा किया किया, अन्त में चिलाती ने उस कन्या की गर्दन काटकर फेंक दी, वह कन्या मरकर व्यन्तरी हुई, चिलाती मुनि बनकर तप करने लगे, तब व्यन्तरी ने चिलाती मुनि की आँखें फोड़ दी, उन्होंने समता पूर्वक इस उपसर्ग को सहन किया व सर्वार्थसिद्धि को प्राप्त हुये।

क्रोध पर विजय पाने का फार्मूला-

1 क्रोध छोड़ने के लिए सभी लोगों को यह अवधारणा पक्की करनी चाहिए, कि मुझमें यह एक बड़ा दोष है।

2 इसका कारण या हेतु मैं स्वयं हूँ, अन्य किसी का दोष मुझे विचलित नहीं कर सकता है।

3 अतः 'हर हाल में छोड़ना है' ऐसा लक्ष्य बनाना चाहिए।

4 क्रोध को छोड़ना मुश्किल है, क्योंकि लोग लम्बे समय से पाले हुए हैं।

5 पर क्रोध छोड़ना असम्भव नहीं है, सङ्कल्प एवं अभ्यास से क्रोध पर काबू पाया जा सकता है।

6 जिस प्रकार परीक्षा पास करने, मकान बनाने, गृहस्थी चलाने, बच्चों को पढ़ाने, शादी करने आदि के लिए प्रयत्न करना पड़ता है, ठीक उसी प्रकार क्रोध छोड़ने के लक्ष्य के प्रति हर पल सावधान रहना चाहिए।

7 इसके लिए रह-रह कर प्रतिज्ञा करनी होगी, कि 'क्रोध नहीं करूँगा'।

8 थोड़ा अङ्कुश लगने पर एक घण्टे, दो घण्टे या तीन घण्टे के लिए प्रयत्न करें।

9 एक दिन, दो दिनों की अवधि के लिए प्रतिज्ञा कीजिए।

10 याद दिलाने वाले छोटों को पारितोषिक और बड़ों को धन्यवाद दें एवं सदैव मुस्कराते रहें।

11 उन्हें कहिए कि वे क्रोध आने पर क्रोध नहीं करने की प्रतिज्ञा को याद दिलायें।

12 विश्वास रखें क्रोध को छोड़ने के लिए अपने परिजनों, निकट सहयोगियों की मदद लीजिए।

13 धीरे-धीरे क्रोध पर विजय पाने में आप सफल हो जायेंगे।

14 प्राणायाम से, स्थान छोड़ देने से, एकान्त में जाकर क्रोध के कारण भूलने से और श्वाँस से, कषाय रूपी धुआँ को निकालने से क्रोध शान्त होता है।

15 क्रोध में जबाव नहीं देना, क्रोध के समय की फोटो सदा साथ रखना, यदि दर्पण हो तो उसें देखते रहो।

16 क्रोध के समय मौन रहना, सामने वाले ने अपराध किया है या नहीं ? यदि किया है तो ठीक गाली दे रहा है यदि नहीं किया है तो गाली देकर अपना पुण्य नष्ट कर रहा है।

17 यदि तुझे गाली देने से शान्ति मिलती है तो दे ले मेरा क्या जाता है।

18 इस प्रकार का शान्त वातावरण हो कि घर ही मन्दिर बन जाए, अज्ञानियों के समान हम व्यवहार करें तो हम में और अज्ञानियों में क्या अन्तर है ?

19 पृथ्वी अपने हृदय विदीर्ण करने वालों को ठण्डा पानी व हरी-भरी फसल देती है, वृक्ष पत्थर मारने वालों को छाया व फलादि देता है, मनुष्य को भी दुर्व्यवहार करने वालों को क्षमा प्रदान करना चाहिए।

20 अजनबी व्यक्ति ने आचार्य विद्यासागरजी से अटपटा प्रश्न किया-What is your busines. आचार्य श्री ने शान्ति से उत्तर दिया- Busy nes is my busines. अर्थात् धर्म ध्यान में व्यस्त रहना ही हमारा व्यापार है।

21 स्वार्थ समस्त दुर्गुणों की जड़ है, पृथ्वी पर जितने बड़े-बड़े युद्ध हुए हैं उनका मूल कारण स्वार्थ था, स्वार्थ व्यक्ति को परमार्थ से विमुख कर देता है।

22 अपना काम स्वयं करने से कषाय कम होती है।

23 **झगड़े मिटाने के चार उपाय-** सहिष्णुता का विकास, समग्रता का चिन्तन, विनोदप्रियता और मौन।

24 मासोपवास करो, सत्य का विस्तार करो, ध्यान करो, बाहर वन में निवास करो, ब्रह्मचर्य धारण करो और भिक्षावृत्ति से भोजन करो परन्तु यह सब करने वाला यदि क्रोध करता है तो सब निरर्थक है।

25 क्रोध करने का मतलब दूसरों की गलतियों की सजा खुद को देना है।

26 पत्नि ने गुस्से में कहा मैं मायके जा रही हूँ, पति ने मुस्करा कर कहा मैं भी ससुराल घूम आऊँगा और पप्पू भी ननिहाल हो आयेगा। इस प्रकार की विनोदप्रियता से गुस्सा शान्त हो जाता है।

27 गाली बेरंग चिट्ठी है उसे लेंगे नहीं तो देने वाले के पास ही पहुँच जायेगी, अतः गाली नहीं गीत गाओ।

28 पहले महिलाएँ कपड़े धोती थीं तो कपड़े पीटने में कषाय निकल जाती थी, आज वांशिग मशीन है तो कषाय पति व बच्चों पर निकलती है।

29 सत्पुरूषों की शत्रुता तभी तक चलती है, जब तक शत्रु नम्र न हो जाए।

30 क्रोध आता है तो दरवाजे को भी लात मार देते हैं, क्षमा माँगते समय कहते है वह तो अजीव है उससे क्या क्षमा मांगना।

31 क्षमा तीन प्रकार की होती है स्वार्थ वश, मजबूरी वश और वास्तविक।

स्वार्थ वश क्षमा- ग्राहक अनेक चीजों को देखने के बाद भी नहीं खरीदता है तो भी दुकानदार उसे क्षमा कर देता है ऐसा मानकर कि आज न सही फिर कभी खरीदने आयेगा।

मजबूरी वश क्षमा- घमण्डी पहलवान रोड से जा रहा था, छत से दूसरे पहलवान ने ईंट फेक कर मारी, वह सोचता है आज किसकी मौत मण्डरा रही है, हाथ में ईंट लेकर ऊपर जाता है देखता है, वहाँ तो कोई महा पहलवान अभ्यास कर रहा है, उसे देखकर पैरों के नीचे से जमीन खिसक गयी, कहा ! भाई साहब आपकी ईंट वापस करने आया हूँ।

वास्तविक क्षमा- दुष्टों ने नाव में बैठकर साधु को परेशान किया लोगों ने कहा आपके पास शक्ति है आप नाव को पलट दो, साधु ने कहा हम नाव पलटने की जगह बुद्धि पलटते हैं।

32 **श्रावक बनूँ या श्रमण**-दर्शक ने पूँछा था गृहस्थ बनूं या साधु? जब तक साधू बनने की क्षमता नहीं है तब तक पति पत्नि में समन्वय करने की कला होनी चाहिए, एक व्यक्ति ने पत्नि से कहा लालटेन जला लाओ, पत्नि दिन में बारह बजे लालटेन जलाकर आंगन में ले आयी, उसने नहीं पूँछा कि दिन में लालटेन की क्या आवश्यकता है? भोजन करने बैठे, भोजन में नमक नहीं था शान्ति से भोजन करके आ गये, गृहस्थी में इस तरह रहो और बाद में साधू बनकर समता की साधना करो, प्रश्न का उत्तर मिल गया।

33 **गजकुमार मुनि**-कौन जल रहा था ? गजकुमार मुनि के उपसर्ग की वार्ता सुनकर एक सज्जन बोल उठे, कैसी बिडम्बना है, गजकुमार मुनि का शिर जल रहा था और उनका ससुर हँस रहा था, देखो संसार की दशा, तब एक ने कहा भाई ! मुनिराज तो समता रुपी अमृत का पान कर रहे थे, अपूर्व आनन्दप्राप्त कर रहे थे, अरे ! कषाय की भट्टी में तो उनका ससुर जल रहा था, मुनि का शरीर जल रहा था आत्मा हँस रही थी, ससुर की आत्मा जल रही थी, शरीर हँस रहा था, देखो यह स्वभाव दृष्टि का बल है।

34 **लात का जबाव लात से**-लात का जबाव लात से गधा ही देता है, आप गधे तो नहीं है न ? भौंकने का जबाव भौंककर कुत्ता ही देता है, आप कुत्ते तो नहीं है न ? क्रोध का जबाव क्रोध से क्रोधी ही देता है, आप क्रोधी तो नहीं है न ? घृणा का जबाव प्रेम से सन्त ही देता है, आप सन्त के अनुयायी है न ? तो फिर गुस्सा क्यों करते हैं ? सामने वाला गुस्सा करे तो आप चुप रहें,

क्रोधी वक्ता बने तो आप श्रोता बनें, थोड़ी देर में अपने आप शान्त हो जायेगा, दरअसल क्रोध तात्कालिक पागलपन है, बच्चा गलती करता है तो आप उसे क्षमा कर देते हैं, क्योंकि नादान है अरे भाई ! क्रोध करने वाले भी तो नादान हैं अतः उन्हे भी क्षमा कर देना चाहिए।

35 आप हाइवे पर सही तरफ कार चलाते हैं, कोई उल्टी तरफ से आकर टकरा जाता है तो भी दोनों का नुकसान होता है अतः टकराव को हर हाल में टालिए।

36 स्फटिक और पानी पर पदार्थ के संयोग से कुछ देर के लिए स्वभाव छोड़ देते है, उसी तरह आत्मा है अशुभ निमित्तों से कुछ देर के लिए अपना स्वभाव छोड़ देती है।

37 माँ-बाप दौलत दे सकते हैं पर योग्यता स्वयं प्राप्त करना पड़ती है।

38 रसोई बनाने वाले को, कवि को, वैद्य को, गायक को, हाथ में शस्त्र लिये हुए को, स्वामी को, धनी को, मूर्ख को और रहस्य के जानने वाले को कुपित नहीं करना चाहिए।

39 महावीरस्वामी ने दुश्मन को नहीं दुश्मनी मिटाने को कहा है।

40 दुनिया परिवार को नहीं व्यवहार को चाहती है।

41 शान्ति, समता साधक पुरूषों का स्वभाविक धर्म है।

42 प्रतिकूल परिस्थितियों में अपने विचार और व्यवहार को सम्भालना समर्थ और साधक पुरूष के लिए ही सम्भव है।

43 पानी कितना ही गर्म क्यों न हो जाय पर अन्त में ठण्डा होना ही पड़ता है।

44 **तीन तरह के धर्मात्मा-** 1. जैसे पत्थर पानी को ग्रहण नहीं करता वैसे ही कुछ लोग धर्म को ग्रहण नहीं करते हैं, 2. जैसे मिट्टीपर जब तक पानी डालो तब तक कोमल रहती है, वैसे ही कुछ लोग जब तक उपदेश सुनते हैं तब तक कोमल रहते हैं, 3.जैसे रुई पानी को समाहित करके रखती है वैसे ही कुछ लोग धर्म को समाहित करके रखते हैं।

''गागर में सागर''-

45 क्षमा करने के लिए शक्ति चाहिए, क्रोध तो कमजोरी की निशानी है, क्रोधी स्वभाव से यहीं नरक व क्षमा भाव से स्वर्ग बनता है।

46 मित्रों से नहीं शत्रुओं से माफी माँगना चाहिए।

47 जैसे चौराहे पर घर है तो धूल व शोर आदि के अनेक उपद्रव होंगे, उसी प्रकार संसार में हैं तो प्रतिकूलताएँ तो होंगी ही, अतः सहन करना चाहिए व क्षमा करना चाहिए।

48 गाली लेने-देने की वस्तु नहीं है अथवा गाली नहीं लेंगे तो किसके पास रहेगी ?

49 गाली सुनकर लोगों को गुस्सा आता है, पर अगर कोई पूँछे की आपको गाली कहाँ लगी, तो आप क्या उत्तर देंगे ? तथा सोचना चाहिए की मेरे पाप का उदय है, अन्यथा मुझे ही गाली क्यों दी दूसरो को क्यों नहीं दी ?

50 अभी तक मैंने जो साधना या अध्ययन किया है, सामने वाला गाली देकर मेरी परीक्षा कर रहा है, परीक्षा सौभाग्य से होती है अतः इस परीक्षा में मुझे उत्तीर्ण होना है।

51 हानि में लाभ देखें तो क्रोध नहीं होगा।

52 विजय क्रोध की नहीं क्षमा की होती है।

53 शीतल जल की स्थिति अधिक और गर्म जल की कम होती है, इसी प्रकार क्षमा देर तक रह सकती है क्रोध ज्यादा देर तक नहीं रह सकता है।

54 ठण्डा लोहा गरम लोहे को काटता है उसी प्रकार क्षमावान क्रोधी पर विजय प्राप्त करता है।

55 कोई पदार्थ इष्ट अनिष्ट नहीं तो गाली को अनिष्ट क्यों मानते हो।

56 असम्भव नाम को अलग कर दो, क्रोध को प्रयत्न पूर्वक जीतो।

57 पृथ्वी का नाम क्षमा है, वह मनुष्य के सारे अपराध क्षमा करती है, उसी प्रकार आत्मा का स्वभाव क्षमा है, उसे भी सभी के अपराध क्षमा करना चाहिए।

58 शिष्य और शीशी में डांट जरूरी है, पर बैर जरूरी नहीं है।

59 जैसे मेहमानों का तिरस्कार करने पर दोबारा नहीं आते हैं उसी प्रकार कषायों का तिरस्कार करने से वापस नहीं आती हैं।

60 गाँधी जी कहते थे कि जीवन में सफल बनना है, तो एक शत्रु अपने पास रखो, जिससे की आप हमेशा सावधान रहें।

61 कषायी को स्वयं के और दूसरों के अहित की चिन्ता नहीं होती, अतः कषाय से बचें।

62 बहुत से लोग ऐसे पाये जाते हैं कि वैसे तो मेरा स्वभाव एक दम शान्त है पर कोई छेड़ दे तो मुझसे शान्त नहीं रहा जाता, पर ऐसी शान्ति किस काम की जो क्रोध के निमित्त मिलने पर काम न आये ?

63 जिसकी हम प्रशंसा करें और उसे क्रोध आवे ऐसा कैसे हो सकता है ? प्रशंसा सुनकर तो लोगों को मान आता है, क्रोध नहीं ।क्षमा का धारी तो वह है जिसे गाली सुनकर भी क्रोध न आये, जो

गाली सुनकर चाँटा मारे वह काय की विकृति है। जो गाली सुनकर गाली देवे वह वचन की विकृति है। जो गाली सुनकर मन में खेद लावे वह मन की विकृति है।

64 भोजन छोड़ेंगे लेकिन अशुभ विचार नही छोड़ेंगे तो क्षमा धर्म नहीं आएगा।

65 हर कार्य के लिए मुहूर्त देखते हो, लेकिन क्रोध के लिए नहीं इसलिए अनिष्ट होता है।

66 जब क्रोध में हो तो दस बार सोचो, जब अधिक क्रोध में हो तो हज़ार बार सोचो।

67 क्रोध ज्ञानी के हृदय में झाँक सकता है पर निवास तो मूर्खों के हृदय में रहता है।

68 मोक्षमार्ग पर चलने वाले को कर्म बन्ध से बचना पढ़ता है।

69 कुत्ते को लाठी मारो तो लाठी चबाता है, उसे मूल शत्रु की पहचान नहीं, बन्दर को चिढ़ाओ तो वह भी चिढ़ाता है, उसी प्रकार यदि हम पर कोई क्रोध करे और हम भी करें, तो हम पशु से भी गये-बीते हुए।

70 साधु पुरूषों के प्रति शिष्टाचार का परित्याग कभी नहीं करना चाहिए।

71 रामचंद्र जी वन में क्रोध नहीं सकारात्मक विचार करते हैं कि कैकई माता धन्य हैं जिसके निमित्त से अनेक तीर्थों के और अनेक साधुओं के दर्शन हुए।

72 खाली कुंए से वाल्टी खाली आती है, उसी प्रकार आत्मा कषाय से खाली हो तो भेजी हुई गाली व्यर्थ जायेगी।

73 काम और क्रोध को छोड़े विना कोई भी रिद्धि-सिद्धि को प्राप्त नहीं होता है।

74 जो लोक में पुण्यवान हैं जिनके दोनों लोक सुधरना है उन्हीं को क्षमा गुण प्रकट होता है।

क्षमाधर्म दोहावली-

75 आदमी देवता न बने कोई गम नहीं,
आदमी दानव न बने यह भी कम नहीं।
न जिये दूसरों के लिए कोई गम नहीं,
दूसरों को जीने दे यह भी कम नहीं ॥ 1 ॥
सत्सङ्ग सर्वोत्तम न मिला हो कोई गम नहीं,
खराब सङ्गत से दूर रहें यह भी कम नहीं।
न बन सके सहारा दूसरों का कोई गम नहीं,
दूसरों का जबरन सहारा न छीनें यह भी कम नहीं ॥ 2 ॥
गिरे को न उठायें, कोई गम नहीं,
दूसरों को न गिरायें यह भी कम नहीं ॥ 3 ॥

76 निन्दक नियरे राखिये आँगन कुटी छवाय।
बिन पानी साबुन विना निर्मल करें सुभाव ॥ 4 ॥

77 **खोद-खाद धरती सहे, काट कूट वनराय।**
कुटिल वचन साधु सहे, और से सहा न जाय ॥ 5 ॥

78 गाली सुन मन खेद न आनो, गुण को औगुण कहे अयानो।

79 **काले भुजङ्ग मन के सदृश जब क्रोध का हो अवतरण,**
तो जीभ में टाँके लगा मैं मौन की लेलूँ शरण।
मुझ पर चलाये जो दनादन क्रोध रञ्जित गोलियाँ,
उत्तम क्षमा से नाथ मैं भरदूँ उसकी झोलियाँ ॥ 6 ॥

80 **जो तुझको काँटा बोये, ताहि बोये तू फूल।**
क्षमावान सज्जन पुरूष, कभी न बोयें शूल ॥ 7 ॥

81 **एक व्यक्ति के क्रोध से कभी न झगड़ा होय।**
आपस में जब दो भिड़ें तब निश्चित झगड़ा होय ॥ 8 ॥

82 **मारना है गर किसी को मार दो अहसान से,**
क्या मिलेगा गर किसी को मार दोगे जान से।
जान से मारा गया बापस कभी आता नहीं,
एहसान का मारा गया फिर सर उठा सकता नहीं ॥ 9 ॥

83 **क्षमा शोभती उस भुजङ्ग को जिसके पास गरल है।**
न कि उसे जो दन्त हीन, विषहीन, विनीत सरल है ॥ 10 ॥

84 **दुर्जन क्रूर कुमार्ग रतों पर क्षोभ नहीं मुझको आवे।**
साम्य भाव रक्खूँ में उन पर ऐसी परिणति हो जावे ॥ 11 ॥

85 **क्रोध तुल्य रिपु कौन जो, कर दे सर्व विनाश।**
हर्ष तथा आनन्द का, वह है यम का पाश ॥ 12 ॥

86 **इच्छायें उसकी सभी, फलें सदा भरपूर।**
जिसने अपने चित्त से, कोप किया अति दूर ॥ 13 ॥

87 **बैर की भावनाओं का संहार कर, मित्रता के लिये मित्रवत व्यवहारकर।**
चाहता है अगर तू सरल जिन्दगी, तो सरल से सरल अपना व्यवहार कर ॥ 14 ॥

88 **तुम्हारी शान घट जाती कि रूतबा घट गया होता।**
जो गुस्से में कहा तुमने, वो हँसकर के कहा होता॥ 15॥

संस्कृत श्लोक गाथा-

89 **क्षमा शस्त्र करे यस्य, दुर्जनः किं करिष्यति।**
अतृणे पतिता वह्निः, स्वयमेवोपशाम्यति॥ 1॥
जिसके हाथ मे क्षमा रूपी शस्त्र है, उसका दुर्जन क्या करेगा क्योंकि तृणहीन स्थान में गिरी अग्नि स्वयं शान्त हो जाएगी।

90 **करोतु न चिरं घोरं तपः क्लेशासहो भवान्।**
चित्तसाध्यान् कषायारीन् न जयेत् तदज्ञता॥ 2॥
शरीर मे सामर्थ्य न होने से चिरकाल तक तपश्चरण नहीं कर सकते तो कोई बात नहीं, किन्तु मन से वश में करने योग्य जो कषाय रूपी शत्रु हैं, अगर उन्हे वश मे नहीं करते हो तो ये तुम्हारी अज्ञानता है।

91 **सिलपुढविभेदधूलि, जलराई समाणओ हवे कोहो।**
णारयतिरियणरामर, गईसु उप्पाईओ कमसो॥ 3॥
पत्थर के टूटने पर जिस प्रकार फिर नहीं जुड़ता है, उसी प्रकार जिसका बैर(क्रोध) संख्यात, असंख्यात व अनन्त भव तक रहता है वह नरक गति में जाता है, पृथ्वी की दरार के समान जिसका बैर(क्रोध) है अर्थात् छह माह से अधिक बैर रहता है वह पशु गति मे जाता है, धूल पर बनी रेखा के समान जिसका बैर(क्रोध) होता है अर्थात् पन्द्रह दिन मे जिसका बैर मिट जाता है, वह मनुष्य गति को प्राप्त होता है और जल पर फेरी हुई रेखा के समान अन्तर्मुहूर्त जिसका क्रोध होता है वह देव गति में जाता है।

92 **मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थ्यानि च सत्त्व गुणाधिक क्लिश्यमानाविनेयेषु।।(त.सू.)**
प्राणी मात्र के प्रति मित्रता, जो गुणों मे अधिक उनके प्रति प्रमोद भाव, दुःखी जीवों के प्रति करुणा भाव और उद्दण्ड लोगों के प्रति माध्यस्थ भाव होना चाहिए।

93 **अन्नेन गात्रं नयनेन वक्त्रं, न्यायेन राज्यं लवणेन भोज्यं।**
धर्मेण हीनं वत् जीवितव्यं, न राजते चन्द्रमसः निशीथं॥ 4॥
जिस प्रकार अन्न के विना शरीर, नेत्र के विना चेहरा, न्याय के विना राज्य, नमक के विना भोजन और चन्द्रमा के विना रात्रि की शोभा नहीं होती है, उसी प्रकार धर्म के विना जीवन की

शोभा नहीं होती है।

94 **अचेतनमिदं दृश्य, मदृश्यं चेतनं ततः।**
क्व रुष्यामि क्व तुष्यामि, मध्यस्थोऽहम् भवाम्यतः॥5॥
दिखाई देने वाला अचेतन है, और जो चेतन है वह दिखता नहीं है, अतः किसी से राग-द्वेष न करके मैं मध्यस्थ होता हूँ।

95 **नरस्याभरणं रूपं, रूपस्याभरणं गुणः।**
गुणस्याभरणं ज्ञानं, ज्ञानस्याभरणं क्षमा॥6॥
मनुष्य का आभूषण रूप है, रूप का आभूषण गुण है,
गुणों का आभूषण ज्ञान है और ज्ञान का आभूषण क्षमा है।

96 **क्रोधस्त्वया यदि विभो ! प्रथमं निरस्तो, ध्वस्तास्तदा वद कथं किल कर्मचैराः।**
प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिरापि लोके, नीलद्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी॥7॥
हे भगवन ! आपने क्रोध को नौवे गुणस्थान में नष्ट कर दिया तब घातिया कर्मों को विना क्रोध के कैसे नष्ट किया अथवा समझ में आ गया क्या ठण्डी तुषार हरे भरे वनों को नष्ट नहीं कर देती है ?

97 **शरीरस्थितिहेतुमार्गणार्थं परकुलान्युपगच्छतो भिक्षोः दुष्टजनाक्रोश प्रहसनाव-ज्ञाताड़नशरीरव्यापादनादीनां सन्निधानेऽपि कलुष्यानुपत्तिः क्षमा।**(रा.वा.)
शरीर की स्थिति के लिए साधु श्रावक के यहाँ आहार लेने जाते हैं, दुष्टजन उन पर क्रोध करते हैं, हँसते हैं, प्रताड़ित करते हैं फिर भी उनके मन में कलुषता उत्पन्न नहीं होती है उसे क्षमा कहते हैं।

98 **वत्थु सहावो धम्मो, खमादिभावो य दसविहो धम्मो।**
रयणत्तयं च धम्मो, जीवाणं रक्खणो धम्मो॥8॥
वस्तु का स्वभाव धर्म है, क्षमादि दस भेद धर्म हैं, रत्नत्रय धर्म है और जीवों की रक्षा करना भी धर्म है।

99 **नास्ति क्रोध समं पापं, नास्ति क्रोध समं रिपुः।**
क्रोधो मूलमनर्थानां, तस्मात् क्रोधं विवर्जयेत्॥9॥
क्रोध के समान पाप व शत्रु दूसरा नहीं है, क्रोध समस्त अनर्थों का मूल है इसलिए छोड़ देना चाहिये।

100 **दग्धं दग्धं त्यजति न पुनः, काञ्चनं दिव्यवर्णं।**
घृष्टं घृष्टं त्यजति न पुनः, चन्दनं चारुगन्धं॥ 10॥
खण्डं खण्डं त्यजति न पुनः, स्वादुतामिक्षुदण्डं।
प्राणान्तेऽपि प्रकृति विकृति, र्जायते नोत्तमानां॥ 11॥
बार-बार तपाये जाने पर भी सोना अपने दिव्य वर्ण को नहीं छोड़ता, बार-बार घिसे जाने पर भी चन्दन अपनी सुगन्ध नहीं छोड़ता, टुकड़े-टुकड़े किए जाने पर भी गन्ना अपनी मिठास नहीं छोड़ता उसी प्रकार प्राणान्त होने पर भी उत्तम पुरुष अपने क्षमा स्वभाव को नहीं छोड़ते हैं।

101 **यः शमः प्राक् समभ्यस्तो, विवेकज्ञानपूर्वकः।**
तस्मै तेऽद्य परीक्षार्थम्, प्रत्यनीकाः सुमुत्थिताः॥ 12॥
यदि प्रशम मर्यादां भित्वा रुष्यामि शत्रवे।
उपयोगः कदास्य स्यात्, तदा मे ज्ञानचक्षुषा॥ 13॥
मैंने पहले विवेक पूर्वक जिस समता का अभ्यास किया है उसकी परीक्षा के लिए ये विरोधी आज उपस्थित हुये हैं, अगर समता की मर्यादा का उल्लङ्घन करके शत्रु पर क्रोध करता हूँ तो मेरे ज्ञान रूपी नेत्र का उपयोग कब होगा ?

102 **प्राणात्ययेऽपि सम्पन्ने, प्रत्यनीक प्रतिक्रिया।**
मता सदभिः स्व सिद्ध्यर्थम्, क्षमैका स्वस्थ चेतसां॥ 14॥
प्राणान्त उपस्थित होने पर भी आत्महित के लिए ज्ञानीजनों ने उसका क्षमा ही प्रतिकार बतलाया है।

103 **वासी चन्दनतुल्यान्त, र्वृत्तिमालम्ब्य केवलं।**
आरब्ध सिद्धिमानीतं, प्राचीनैः मुनि सत्तमैः॥ 15॥
कुल्हाड़ी और चन्दन में समता रखकर के ही प्राचीन मुनियों ने सिद्धि प्राप्त की है।

104 **यः श्वभ्रान्मां समाकृष्य, क्षिपत्यात्मानमस्तधीः।**
वधबन्धनिमित्तेऽपि, कस्तस्मै विप्रियं चरेत्॥ 16॥
जो नरक से मुझको निकालकर स्वयं अपने को नरक में डाल रहा है तो कौन बुद्धिमान उपसर्ग आदि का प्रतिकार करेगा ?

105 **अपकुर्वति कोपश्चेत्, किं न कोपाय कुप्यति।**
त्रिवर्गस्यापवर्गस्य, जीवितस्य च नाशने॥ 17॥

जीव के धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, और जीवन को नष्ट करने वाले अपकारी क्रोध के ऊपर ही क्रोध करना चाहिए।

106 **स्वयंकृतं कर्म यदात्माना पुरा, फलं तदीयं लभते शुभाशुभं।**
परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटम्, स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा॥18॥
पूर्व जन्म में स्वयं के द्वारा किए हुये शुभ-अशुभ कर्मों का फल ही जीव भोगता है, अगर दूसरे के द्वारा दिए हुये कर्मों का फल जीव भोगे तो उसके किए हुये कर्मों का फल व्यर्थ हो जाएगा।

107 **यद् यद् कुरुते कोऽपि, मांस्वस्थं कर्म पीड़ितं।**
चिकित्सित्वा स्फुटं दोषम्, स एवाकृत्रिमः सुहृत्॥19॥
कर्म से पीड़ित मुझको कोई मेरे दोषों की चिकित्सा करके मुझे स्वस्थ करता है वह मेरा सच्चा मित्र है, उससे शत्रुता कैसी ?

108 **हत्वा स्वपुण्यसन्तानं, मद्दोषं यो निकृन्तति।**
तस्मै यदिह रुष्यामि, मदन्यः कोऽधमस्तदा॥20॥
अपने पुण्य को नष्ट करके अगर कोई मेरे दोषों को नष्ट करता है उस पर भी मैं अगर क्रोध करूँ तो मेरे से अधम और कौन होगा ?

109 **किसान का प्रतिशोध-** किसान अपनी पत्नि को पीटना चाहता था, लेकिन वह बहुत चतुर थी, उसने अपने जीवन में ऐसा काम नहीं किया जिससे उसको कोई पीट सके, किसान ने एक दिन उसको पीटने के उद्देश्य से खेत में हल चलाते समय पत्नि को आते देख कर हल में बैल उल्टे नह दिये, उसने सोचा ऐसा देखकर पत्नि कुछ कहेगी तभी मैं उसको पीट दूँगा, लेकिन पत्नि ने चुप-चाप नास्ता दिया और घर की ओर चली गई, पूँछने पर बोली कि चाहे आप उल्टा नहो या सीधा खेत जोतना आपको है मेरा काम नास्ता देना है, पति देखता रह गया।

110 **दुकानदार की क्षमा-** शैतान लड़के ने दुकानदार से साड़ी की कीमत पूँछी, सौ रुपए बताया, साड़ी को बीच में से फाड़ दिया और पूछा आधी साड़ी कितने की ? दुकानदार ने कहा पचास रुपये की, इस प्रकार साड़ी के टुकड़े-टुकड़े कर कहा यह साड़ी हमारे काम की नहीं है और साड़ी की कीमत दिये विना जाने लगा तो दुकानदार ने कहा साड़ी तो पुनः बन सकती है, किन्तु जीवन बिगड़ गया तो फिर नहीं बनेगा तो उसने चरणों में गिरकर क्षमा मांगी।

111 **चिरोञ्जाबाई का क्रोध-** चिरोञ्जाबाई की ननद से कोई गलती हो गई, यह देखकर बाईजी को बहुत गुस्सा आया, उन्होंने उनका शिर पकड़ कर दीवाल से दे मारा लेकिन पीछे हाथ लगा

लिया कहीं शिर में चोट न लग जाए।

112 **महावीरस्वामी पर उपसर्ग-** महावीर भगवान् दीक्षा के बाद विहार करते हुये उज्जयिनी नगरी पँहुचे और वृक्ष के नीचे बैठकर तप करने लगे, वहाँ के लोगों ने समझा कि ये यहाँ की भूमि पर अधिकार करने आयें है, इसलिये लोगों ने उन पर घोर उपसर्ग किया, लेकिन उन्होंने अपने क्षमा भाव को नहीं त्यागा और केवलज्ञान को प्राप्त किया।

113 **गाँधी जी को गाली**-एक अंग्रेज गाँधी जी से बहुत चिढ़ता था, उसने एक कागज में गाँधी जी के लिए गालियाँ लिखीं और गाँधी जी की टेबल पर रखकर चला गया, गाँधी जी ने जब खोला तो गुस्सा न करके, उसका पिन निकाल कर डिब्बे में रख लिया, और कागज को रद्दी की टोकरी में डाल दिया।

114 बनारसीदास जी ने रास्ते में पेशाब करदी चौकीदार ने दो-तीन थप्पड़ मार दिये अगले दिन उन्होंने नौकर की ईमानदारी की प्रशंसा करके उसका वेतन बढ़वा दिया।

115 **पार्श्वनाथ जी-** कमठ का जीव पूर्व अवस्था में पार्श्वनाथ का भाई था, लेकिन क्षमा के अभाव में दस भव तक घोर उपसर्ग करता रहा, किन्तु पार्श्वनाथ जी ने क्षमा को नहीं छोड़ा और केवलज्ञान को प्राप्त किया था।

116 **बिच्छू का आतङ्क-** नदी किनारे पर बैठे हुये एक साधु ने देखा कि नदी के तीव्र प्रवाह में एक बिच्छू बहता जा रहा है, उसे देखते ही हृदय में अनुकम्पा का प्रवाह हुआ तत्काल नदी में उतर गये, बिच्छू को हाथ में उठा लिया, उसने हाथ में डङ्क मार दिया, पीड़ा के कारण बिच्छू हाथ से छूट गया, पुनः उठाया पुनः उसने हाथ में डङ्क मार दिया, लोगों ने कहा जब वह आपको बार-बार डङ्क मार रहा है तो उसको बहने दो, साधक ने इस बात को सुनकर उत्तर दिया, जब वह अपना स्वभाव नहीं छोड़ रहा है तब हम उसे बचाने का स्वभाव कैसे छोड़ें ?

117 **ईसामसीह को शूली-** जब निरपराध ईसामसीह को लोगों ने शूली पर चढ़ाया तब उन्होंने कहा कि हे भगवन् ! ये अज्ञानि प्राणी नहीं समझते कि हम क्या कर रहे हैं और इसका फल क्या होगा? हे भगवन् ! इनका अपराध क्षमा हो।

118 **सौ बार गङ्गा स्नान-** एक व्यक्ति का प्रतिदिन गङ्गा स्नान करने का नियम था, उसके क्षमा भाव और त्यागादि की बहुत चर्चा थी, उस नगर के पहलवान ने उस व्यक्ति की परीक्षा लेनी चाही, पहलवान का घर गङ्गा के रास्ते में था, व्यक्ति गङ्गा स्नान करके लौट रहा था, तब पहलवान ने उसके ऊपर पान का पीक थूक दिया, व्यक्ति विना कुछ कहे गङ्गा स्नान करने चला गया, पुन

स्नान करके लौटा तो फिर थूक दिया, यह क्रम सौ बार चला, एक सौ एक वी बार व्यक्ति स्नान करके लौटा तब पहलवान उसके चरणों में गिरकर रोने लगा, अपनी गलती की क्षमा माँगी, व्यक्ति ने कहा ! भाई मैं तो आपका उपकार मानता हूँ, कि प्रतिदिन एक बार स्नान करता था आज आपकी वजह से एक सौ एक बार स्नान का अवसर मिला, अभी तक तन धोया था अब क्रोध न आने से मन भी धुल गया है।

119 **उद्दण्ड बालक पर क्षमा**-एक सेठ ने पाठशाला खुलवाई, उसमें एक बालक बहुत उद्दण्ड था, प्रतिदिन विद्यालय में कुछ न कुछ तोड़-फोड़ करता रहता था, शिक्षक ने सेठ जी से कहा, कि मैं इस बालक को नहीं पढ़ाऊँगा, सेठजी उस बालक को घरले गये, वह ऊधम करता सेठजी शान्ति से सहन कर लेते, काँच, प्लास्टिक मिट्टी आदि के बर्तनों को तोड़ता सेठजी कुछ न कहते, एक दिन सेठजी की घड़ी फोड़ दी तब भी सेठजी ने कुछ नहीं कहा, अबकी बार बालक को स्वयं पश्चात्ताप हुआ सेठजी से क्षमा माँगी आगे चलकर वह बहुत बड़ा विद्वान बन गया था।

120 **पण्डित टोडरमल जी की क्षमा**- किसी शरारती ने पण्डितजी के पास एक पागल व्यक्ति लाकर खड़ा कर दिया और कहा कि ये आपके साढू भाई आये हैं, पण्डितजी उसे देखकर कुपित नहीं हुये बल्कि उन्होंने स्वीकार कर लिया, अपने पास रख लिया एक दिन उस व्यक्ति ने देखा कि पण्डितजी उसकी अच्छी सेवाकर रहे हैं वास्तव में ये इनके साढू हैं क्या ? पण्डितजी से पूछा तो उन्होंने कहा कि हाँ, एक माँ की दो बेटियां थीं एक साता और दूसरी असाता उनमें से हमारी शादी साता से हो गई और इनकी शादी असाता से हो गई इसलिएये हमारे साढू ही तो हैं।

121 **अभी तक गरजती थी**-पण्डित गोपालदास जी की धर्मपत्नी ने उनका अनेक बार अपमान किया किन्तु पं. जी ने समता नहीं त्यागी, एक रात्रि को पण्डितजी घर आये, पत्नी ने दरवाजे नहीं खोले, कुछ देर बाद गुस्से में उठी और जनवरी माह की ठण्ड में छत से ही एक घड़ा ठण्डा पानी पण्डितजी के ऊपर डाल दिया, पण्डितजी बोले, हे देवि अभी तक तो तू गरजती थी, पर बरसी आज ही है।

122 **सर्प की क्षमा**-एक सर्प ने मुनिराज से नियम ले लिया कि अब हम किसी को नहीं काटेगें, लोग उसको सताने लगे, वह महाराज के पास नियम वापिस करने गया तब महाराज ने कहा तुम्हे काटना छुड़ाया है फुङ्कारना नहीं।

123 **द्रोपदि की क्षमा**- महाभारत के समय द्रोपदि के पाँचों बेटों को अश्वत्थामा ने मार डाला

द्रोपदि शोक सागर में मग्न थी तभी अर्जुन अश्वत्थामा को युद्ध से पकड़ कर द्रोपदि के सामने खड़े कर देते हैं, भीम बोले इसके टुकड़े-टुकड़े करके कौओं को खिला दो तब द्रोपदि ने कहा इसकी माँ को भी इतना ही कष्ट होगा जितना मुझे हो रहा है, इसलिए इसको छोड़ दो।

124 **गुरूजी ने कौरव**-पाण्डव को क्रोध त्याग का पाठ याद करने को दिया, सबने याद करके सुना दिया युधिष्ठिर को याद नहीं हुआ, चार-पाँच दिन बाद गुरुजी ने पूँछा पाठ याद हो गया ? युधिष्ठिर ने कहा नहीं, गुरुजी ने पिटाई कर दी, जब क्रोध नहीं आया तब बोले अब याद हो गया, युधिष्ठिर ने सोचा यह पाठ आचरण में लाने का है, रटने का नहीं है।

125 **सूक्ष्मदर्शीदूरदर्शी यन्त्र**- (सोच की वजह से एक को लाभ दूसरे को हानि)दो मित्र मेले से सूक्ष्मदर्शी और दूरदर्शी यन्त्र लेकर आते है, एक मित्र तो सूक्ष्म दर्शी यन्त्र से सोने-चाँदी का मेल देखकर खरीदता जिससे व्यापार में कई गुना लाभ होने लगा एवं जब व्यापार से थक कर घर में आता और दूरदर्शी यन्त्र से दूरवर्ती बाग बगीचों को देखकर मनोरञ्जन करता और मौज मनाता, दूसरा मित्र रोटी के छोटे चिट्ठों को सूक्ष्मदर्शी यन्त्र से देखता वे बड़े दिखाई देते तो पत्नी को डाँटता, इसी प्रकार घर के सूक्ष्म कचरे को देखता ज्यादा दिखाई देता तो नौकरों को डाँटता और दुःखी रहने लगा, वस्तु के सदुपयोग की कला न आने से व्यक्ति दुःखी होता है और सोच सही होने से सुखी होता है।

126 **मेरा देश महान, सौ में से सौ भगवान**- एक बार द्रोणाचार्य ने धर्मराज युधिष्टिर से सूची देकर कहा ! जाओ नगर में कितने दुर्जन हैं देखकर आओ और इसी प्रकार दुर्योधन को सूची देकर कहा ! जाओ नगर में कितने सज्जन हैं देखकर आओ, दोनों खाली सूची लेकर आ गये, धर्मराज बोले हमें एक भी दुर्जन नहीं मिला, और दुर्योधन बोले कि हमें एक भी सज्जन नहीं मिला, बस यही सकारात्मक और नकारात्मक दृष्टि-कोण में अन्तर होता है।

127 **अभिनन्दन आदि पाँच सौ मुनियों की क्षमा**- दण्डक राजा ने कारण जाने विना रानी के कहने से मुनियों को पाखण्डी जानकर घानी में पेल दिया, लेकिन मुनियों ने क्षमा भाव धारण कर आत्म कल्याण किया था।

128 **देवरानी जिठानी को पन्द्रह लड्डुओं ने शमशान तक भेज दिया**- एक बार देवरानी जिठानी ने पन्द्रह लड्डू बनाये, उनमे से एक को सात एक को आठ मिल रहे थे, उनमे से कोई सात लड्डू लेने को तैयार नहीं था तब निर्णय लिया, कि कल जो सुबह पहले उठकर मौन खोलेगा वह सात लड्डू लेगा दूसरे दिन दोनो नहीं उठीं, लोगों ने सोचा की दोनों मर गई, तब एक ही अर्थी पर दोनों

को शमशान ले गये, जैसे ही आग लगाने को तैयार हुए तब एक बोली 'तू आठ खा लेना हम सात खा लेंगे' जो लोग जलाने ले गये थे वे भी पन्द्रह लोग थे, लोगों ने समझा की दोनों मरकर डाकिनी-शाकिनी बन गयी हैं अतः हम लोगों को खाने को कह रहीं हैं, इसलिए लोग भागे, पीछे-पीछे दोनों भाग रहीं थीं, सारे नगर में अशान्ति फ़ैल गयी, लोगों को वास्तविकता का पता चलने पर दोनों बहुत शर्मिन्दा हुई।

129 **सुकुमाल स्वामी**- सियारनी के द्वारा उपसर्ग को सहन कर देव हुये।

130 **सुकोशल स्वामी**-('जा सुत विरह मरी हुई बाघिन, ता सुत देह विदारी')माता सहदेवी पुत्रवियोग में मर कर व्याघ्री हुई उसी के द्वारा अपने प्रिय पुत्र का भक्षण किये जाने पर भी उपसर्ग समता से सहन किया और सर्वार्थसिद्धि गये।

131 **रामचन्द्रजी ने आभार**- जब रामचन्द्रजी दिग्विजय करके अयोध्या को वापस आये तब उन्होंने सब सहयोगियों के लिये कृतज्ञता ज्ञापित की, जब हनुमानजी का क्रम आया, तब रामचन्द्रजी ने कहा-हे हनुमन्त ! तुमने जो आज तक उपकार किया है उसके लिये मैं आभारी हूँ लेकिन मैं चाहता हूँ आपका उपकार न करूँ, इस वाक्य को सुनकर लोग आश्चर्य चकित हुये, किन्तु हनुमान जी बहुत प्रसन्न हुये, तब लोगों ने हनुमान जी से पूँछा आप लोगों की भाषा हम लोगों के समझ में नहीं आयी कृपया कर समाधान करें, तब हनुमान जी ने कहा कि रामचन्द्र जी यह कह रहे हैं कि आपको कभी कष्ट ही न आये।

132 **तुंकारी की क्षमा**- राजा की लड़की को कोई तू करके नहीं बोल सकता था, उसका घर में तो निर्वाह हो गया, लेकिन उसकी ऐसी तीव्र कषाय देखकर कोई शादी करने को तैयार नहीं होता था, बड़ी मुश्किल से एक राजकुमार को तैयार किया कि आप मेरी लड़की से कभी तू करके नहीं पुकारना, शादी हो गयी। अचानक एक दिन उस लड़के ने भूल से तू बोल दिया वह इतनी कुपित हुयी कि घर छोड़कर चली गयी। जङ्गल में अकेली जा रही थी भीलों ने उसे पकड़ लिया बहुत कष्ट दिया, शील से गिराने की कोशिश की लेकिन वह अपने में अडिग रहीं, अन्त में भीलों ने उसे एक कपड़ा रङ्गने वाले को बेच दी, वहाँ भी भयङ्कर कष्ट उठाने पड़े वह तुंकारी के माथे से खून निकालता और कपड़े रङ्गता था लेकिन थोड़ी देरमें जड़ी बूटी लगाकर घाव भर देता था। ऐसे कष्टों को सहन करने से अब जीवन में क्षमा गुण आ गया। एक नगर में श्मशान घाट पर मुनि तप कर रहे थे, एक तन्त्र वादी वहाँ आया और उसने मुर्दे इकट्ठे किये चूल्हा बनाया, उसे ये नजर नहीं आया कि ये मुनिराज ध्यान मग्न हैं, उसने आग लगाकर कढ़ाही रखी

मुनि सहन करते रहे, लेकिन बीचमें शरीर वेदना से हिल गया, कढ़ाही गिर गई उसने सोचा यहाँ कोई भूत आ गया, डर कर भाग गया। मुनि वहीं पड़े रहे, प्रातः काल एक सेठ उस ओर अपने कार्य से आया मुनि की ऐसी अवस्था देख घबराया, अपने घर ले गया इलाज किया, वैद्य ने लाक्षादि तैल लगाने को कहा और वह तुङ्कारी के यहाँ मिलेगा लेने गया भाग्य से सात घड़े तैल के सेठ से फूट गये लेकिन उसने क्रोध नहीं किया, सेठ ने उससे इसका राज पूँछा तब तुङ्कारी ने अपनी सारी कहानी बतायी।

133 **आचार्य शान्तिसागर जी पर उपसर्ग**– एक बार धौलपुर नगर में आचार्य श्री का सङ्घ आया तो आचार्य श्री को भावी दुर्घटना का पूर्वाभास हो गया था, अतः उन्होंने पूरे सङ्घ को अन्दर सामायिक करने का आदेश दिया, उपसर्ग करने वाले आये और बाहर ही घेर कर बैठ गये, जैन बन्धुओं ने राजा से शिकायत की तो राजा ने दुष्टों को गिरफ्तार करके कहा की आचार्य महाराज जो सजा कहेंगे वही सजा इन्हें दी जाएगी, महाराज ने तीन बार वचन लिया कि 'जो हम कहेंगे वही सजा दोगे'? राजा ने कहा कि जो आप कहेंगे वही सजा दी जाएगी, तब आचार्य श्री ने कहा कि इन्हें छोड़ दो, तब वे उपसर्ग करने वाले महाराज के चरणों में गिर कर क्षमा माँगने लगे, महाराज ने कहा हम अपराधी को नहीं अपराध को समाप्त करते हैं, अपराधियों ने प्रण किया कि ऐसी गलती अब हम कभी नहीं करेंगे।

134 **दुर्जन, क्रूर, कुमार्ग रतों पर-दुर्जन**– जयद्रथ ने कषाय के वश पाण्डवों को लोह मयी गर्म आभूषण पहनाये पर पाण्डवों ने क्षमा धारण की और तीन पाण्डव मोक्ष पधारे और दो सर्वार्थसिद्धि गये।

क्रूर– स्यालनी ने सुकोशल मुनि को खाया मुनि ने क्षमा धारण की और सर्वार्थसिद्धि गये।

कुमार्गरत– भगवान् आदिनाथ के समय चार हजार मुनि भ्रष्ट हो गये, पर आदिनाथ भगवान् ने मौन नहीं तोड़ा और समता रस के स्वादी बने रहे।

135 **झगड़े का कारण**– अपने बेटे को बड़ा गन्ना, भाई के बेटे को छोटा गन्ना देने से भाई-भाई में झगड़ा प्रारम्भ हो जाता है।

136 क्रोधी व्यक्ति कमठ के मठ में पहुँचता है और बैर का विकास करता है, संसार की लम्बी यात्रा करता है और क्षमावान पार्श्वनाथ के पार्श्व में विराजता है चिर, विश्राम और अपूर्व आनन्द पाता है।

इति क्षमाधर्म समाप्त

★★★

द्वितीय सोपान-मार्दव धर्म

अहं का विसर्जन अर्हं का सर्जन

मानी की हानि ही हानि-

प्रतिकूलता में क्रोध और अनूकूलता में मान आता है।

कर्तृत्व बुद्धि, भोक्तृत्वबुद्धि और स्वामित्वबुद्धि- अज्ञानी अपने को पर पदार्थ का कर्ता मानता है। जैसे कुत्ता गाड़ी के नीचे चलता है तो मानता है कि 'मैं गाड़ी चला रहा हूँ', पर उसे नहीं मालूम कि गाड़ी चलाने वाला कोई दूसरा है यही कर्तृत्व बुद्धि कहलाती है। इसी प्रकार पर पदार्थ का अपने को भोक्ता मानता है, मकान, दुकान आदि का अपने को स्वामी मानता है, जैसा की छः ढाला में कहा है 'मैं सुखी-दुःखी मैं रङ्क राव, मेरे धन गृह गोधन प्रभाव' इत्यादि।

1 **सेलट्ठीकट्ठ वेत्ते, णियभेयेणणुहरन्तओ माणो।**
णारय तिरिय णरामर, गईसु उप्पाइओ कमसो।।

मान कषाय को चार गति का कारण कहा है- पत्थर की तरह मान नरकगतिका कारण है, हड्डी की तरह मान तिर्यंचगति का कारण है, लकड़ी की तरह मान मनुष्यगति का कारण है और हरे वेंत की तरह मान देवगति का कारण है।

2 **बल का मान कियो रावण ने, सोने की लंका नशानी।**
तन का मान किया दुर्योधन ने, मिट्टी में मिल गई जवानी।।
तप का मान कमठ ने कीना, नरक की राह दिखानी।
ज्ञान का मान किया गौतम ने, झुकने पड़ो ऋषिज्ञानी।।
दान का मान कियो बलि राजा, पीठ पड़ी नपवानी।
काहु को मान रहो न पुजारी, काहे करे लघु प्राणी।।

3 **आज्ञा भङ्गो नरेन्द्राणां, पूज्यानामवमानता।**
पृथक् शय्या च नारीणा,-मशस्त्रवध उच्यते।।

राजा की आज्ञा का भङ्ग करना, पूज्य पुरुषों का अपमान करना और स्त्रियों की पृथक् शैय्या करना विना शस्त्र का वध माना जाता है।

4 क्रोधी क्रोध के निमित्त को हटाना चाहता है, पर मानी मान के निमित्तों को रखना चाहता है। क्रोधी कहता है गोली से उड़ा दो, पर मानी कहता है मारो मत, दबा के रखो।

5 जिनका शारीरिक स्वास्थ्य कमजोर होता है, उन्हे ठण्डी हवा से जुकाम और गरम हवा से लू लग जाती है। उसी प्रकार निन्दा की गर्म हवा से क्रोध की लू व प्रशंसा की ठण्डी हवा से मान का जुकाम हो जाता है।

6 अकड़ मुर्दे की खास पहचान है, जो जितना अकड़ता है, यमराज उसे उतने ही जल्दी पकड़ता है।

7 कभी मूँछ का तो कभी पूँछ का झगड़ा बना ही रहता है, अर्थात् कभी कहता है कि मेरी इज्जत का सवाल है, कभी कहता है मुझे पूँछा ही नहीं।

8 फुटबाल में जब तक हवा रहती तब तक लोग लात मारते हैं, और जब हवा निकल जाती है तो हाथ में उठा लेते हैं, अतः अकड़ ही संसार भ्रमण का कारण है।

9 मान मानी को लोगो की दृष्टि में अप्रिय बनाता है और अन्दर से मानी को अयोग्य बनता है।

10 मान मानव की मानवता नष्ट करके दानव बना देता है।

11 दूसरों को नीचा दिखाना और अपने को ऊँचा दिखाना मानी का काम है।

12 अभिमानी के निरपराधी होने पर भी अनेक बैरी होते हैं, निन्दा होती है, सब उसका पतन चाहते हैंतथा हृदय में कोमलता न आने का कारण अहङ्कार है।

13 जिससे स्वार्थ सधता है उसको भगवान मानते हैं, जिससे स्वार्थ नहीं सधता है तो भाई भी शत्रु लगता है।

14 पुण्योदय का अहङ्कार करने वाले अन्त में बड़े-बड़े कष्ट पाते हैं।

15 अभिमान और दीनता दोनों में अकड़ है, मानी पीछे को और दीन आगे को झुकता है, सीधे दोनों नहीं होते हैं।

16 मानी ऐसा चलता है जैसे वह चौड़ा हो और बाजार सकरा हो और दीन ऐसे चलता है जैसे भारी बोझ से दबा जा रहा हो।

17 क्रोध कड़वा व मान मीठा जहर है दोनों प्राण नाशक है।

18 मान संसार का बढ़ाने वाला और मार्दव संसार का घटाने वाला है, अभिमानी निर्दयी और विनम्र दयालु होता है, अभिमानी का व्रत तप स्वाध्याय सब निष्फल है।

19 दूसरों की प्रशंसा व उन्नति न देख पाना ईर्ष्या व असहिष्णुता का द्योतक है।

20 बाहुबली का जरा सा मान केवलज्ञान होने में बाधक बना रहा।

21 भ्रष्ट हुये चार हजार मुनि पुनः मुनि बन गये पर अहङ्कारी मारीच पुनः मुनि नहीं बन सका।

22 अहङ्कारी की सोच छिपकली की तरह होती है, छत पर चिपक कर सोचती है, 'मेरी बदोलत छत टिकी है'।

23 मुर्गा कहता है मैं बाङ्ग देता हूँ, तब सुबह होती है, इसी प्रकार संसारी प्राणी को भ्रम होता है कि वह पर का कर्ता है।

24 भूल व्यक्ति को चूल पर पहुँचा देती है सचेत न होने पर धूल में मिला देती है।

25 जो भूत और भविष्य की सोचता है उसका वर्तमान का सुख चला जाता है।

26 दही बड़ा- पहले मैं दही के चरणों में पड़ा तभी तो बना दहीबड़ा, बड़ा ने बहुत परीक्षायें दी हैं तभी बड़ा बना है, जो फूलता है वह पिटता है जैसे दाल रात भर फूलती है तो घुटाई होती है।

वहाँ मौत है

27 जङ्गल में तप कर रहे साधु से पथिक ने रास्ता पूँछा, साधु ने उत्तर दिया इस रास्ते में मत जाओ, वहाँ मौत है। मानी पथिक नहीं माने, चले गये। आगे चलकर जङ्गल में उनकों स्वर्ण मुद्राओं का ढेर मिला, वे प्रसन्न हो गयें। चारों ने मुद्राएँ बाँट लीं एवं एक को मिठाई लेने भेजा। उसके मन में आया कि, 'मिठाई में जहर मिला देते हैं, वे तीनों खाकर मर जायेंगे और मुझे सारी मुद्राएँ मिल जायेंगी'। वहाँ उन तीनों ने सोचा कि 'जैसे ही वह मिठाई लेकर आयेगा और हम लोग उसको मार डालेंगे, जिससे कि चार नहीं तीन हिस्से करने पड़ेंगे'। जैसे ही वह मिठाई लेकर आया और तीनों ने उसे मार डाला और मिठाई खाकर स्वयं भी मर गये, इस प्रकार अहङ्कारी लोग गुरुजनों की बात को ठुकरा कर दुर्दशा को प्राप्त होते हैं।

28 रूप का मद सनत चक्रवर्ती ने किया था तो शरीर में कुष्ट रोग हो गया था।

29 **जिसने अपने को कुछ माना सो पिटा-** एक राजभवन में शिष्यों सहित साधु का आगमन हुआ, गुरू जी ने समझाया कि आज यहाँ विश्राम करना है, कोई आये तो कुछ बोलना नहीं, गुरूजी ध्यान में लीन हो गये, उसी वक्त राजा की सवारी आयी, राजा ने शिष्यों को पूँछा-तुम कौन हो ? उत्तर आया-साधु हैं, राजा ने उनको बाहर कर दिया, अन्त में गुरू के पास गये तो वे मौन हो गये कुछ बोले नहीं, राजा ने उनको कुछ नहीं कहा और चला गया।

30 **भरत चक्रवर्ती की प्रशस्ति-** दिग्विजय के बाद भरत चक्रवर्ती अपने प्रथम चक्रवर्ती होने की प्रशस्ति लिखने के लिए वृषभाचल पर्वत के पास जब गये, तो वहाँ उन्होंने देखा कि पूरा पर्वत

पूर्व चक्रवर्तियों की प्रशस्तियों से भरा हुआ है, 'मुझे अपना नाम लिखने को तिल मात्र भी खाली स्थान नहीं है' तो उनका सारा अभिमान चूर हो गया और एक चक्रवर्ती का नाम मिटाया तब अपना नाम अङ्कित कर पाए, किसी का भी नाम अमर नहीं रहता है।

विनय से लाभ-

1 जीवन के विकास के लिये अहं का विसर्जन अनिवार्य है, यदि अहं करना है तो अपने स्वरूप का करो, तो अहं से अर्हं बन जाओगे, अहं के साथ कार जुड़ा तो दु:खी रहोगे एवं उत्तम मार्दव धर्म को पालने वाला व्यक्ति महान होता है।

2 लोक में उन्हीं का धन आदि पाना सार्थक है जिनके पास मार्दव गुण हैं।

3 मद नष्ट होने से विनय, मिष्ट वचन, पूज्यों का सत्कार, दान, सम्मान आदिगुण प्राप्त होते हैं।

4 धर्म सबसे पहले झुकने का पाठ सिखाता हैं, फल से लदे वृक्ष की तरह गुणवान व्यक्ति नम्र होता है।

5 मान भङ्ग होने पर मूर्ख आत्म घात कर लेता है और ज्ञानी वैराग्य धारण कर लेता है।

6 नम्रता का प्रभाव दूर तक जाता है और कुछ खर्च भी नहीं होता है।

7 **महानता के तीन कारण-** अभिप्राय में उदारता, कार्य सम्पादन में मानवता, सफलता में संयम।

8 विनम्रता से सम्यग्दर्शन उज्ज्वल होता है व यश बढ़ता है और बैर का अभाव होता है।

9 मार्दव भावना से युक्त शिष्य पर गुरुओं की कृपा रहती है, साधु भी उसे साधु मानते हैं, जिससे वह सम्यग्ज्ञान आदि का पात्र होता है, सम्यग्ज्ञान आदि का पात्र होने से स्वर्ग और मोक्ष रुपी फल की प्राप्ति होती है।

10 अहङ्कार से अनेक कुबुद्धियाँ उत्पन्न होती हैं और मार्दव से अनेक विद्यायें प्राप्त होती हैं।

11 अभिमानी पिता से पुत्र, पुत्र से पिता, गुरू से शिष्य, शिष्य से गुरू, स्वामी से सेवक, सेवक से स्वामी दूर हो जाते हैं, एवं विनयवान, पुत्र, शिष्य और सेवक को देख कर पिता, गुरू और स्वामी प्रसन्न होते हैं, जिनके मस्तक पर गुरु का हाथ होता है वे धन्य होते हैं।

12 श्रमणों के पास आने में श्रम तो करना पड़ता है, किन्तु भ्रम दूर हो जाता है।

अहङ्कार को जीतने के उपाय-

1 जो कोमल होता है वह स्थायी होता है जैसे जीभ, और जो कठोर होता है वह जल्दी नष्ट हो

जाता है जैसे दाँत।

2 भक्त को मूर्ति में पत्थर नहीं दिखता, अहङ्कारी को भगवान् नहीं दिखते हैं।

3 कलिकाल में कामदेव का साम्राज्य रहता है, कब कहाँ किसका मन विकृत होकर ब्रह्मचर्य को दूषित कर दे इसका कोई ठिकाना नहीं है, अतः जाति कुल का अभिमान व्यर्थ है।

4 ऊँट को अपनी ऊँचाई का भान पहाड़ के नीचे आने पर होता है, अहङ्कारी को अपने से बड़े के पास आने पर अपनी औकात का भान होता है।

5 **कोयल मेंढक-** कोयल आम्र मञ्जरी का आस्वादन करके भी घमण्ड नहीं करती, मेंढक कीचड़ के पानी को पीकर भी टर्राने लगता है।

6 सारी दुनिया को पानी पिलाने वाला भी प्यासा मर सकता है (जैसे श्री कृष्ण जी) फिर अहङ्कार किस बात का ?

7 **विनय गुण-** जैसे व्यक्ति अपनी सम्पत्ति को छाती से लगाकर रखता है, उसी प्रकार विनीत पुरुष त्रियोग से आत्मा में विनय गुण को छाती से लगाकर रखता है, विनय को अपनी मूल सम्पत्ति समझकर गुरूजनों के प्रति आदर करता है।

8 मान पत्र को सब हर्ष से लेते हैं और क्रोध पत्र को कोई नहीं लेना चाहता है जबकि दोनों कषायों के भेद ही हैं।

9 प्राणी कर्मो से कम कषायों से ज्यादा दुःखी होता है, अतः सुखी होने के लिए कषाय नहीं करनी चाहिए।

10 जिस मस्तक को पैसों में तो क्या फ्री में भी कोई अपने घर में नहीं रखना चाहता है, वह मस्तक अगर पूज्य जनों के चरणों में झुक जाए तो क्या कम होने वाला है।

11 कुएँ में जब बर्तन झुकता है, तब पानी भरता है अन्यथा नहीं, अतः कुछ पाने के लिए झुकना आवश्यक है।

12 छोटे-बड़े का भाव मान है और समानता का भाव मार्दव है।

13 जीवन का विकास आसन से नहीं आचरण से होता है, आसन-शासन दोनों अस्थायी होते हैं।

14 विनय के विमान में बैठोगे तो कल्याण होगा और अहङ्कार की कार में बैठोगे तो अधो गमन होगा।

15 स्वयं के शरीर व इन्द्रियों को उनके प्रतिकूल परिणमा नहीं सकता, तो भी पर का कर्ता बनना

चाहता है।

16 मानी असफलता में क्रोध व सफलता में मान करता है, असफलता में दूसरों को दोष देता है, और सफलता में स्वयं श्रेय लेता तथा घमण्ड करता है।

17 ज्ञान, पूजा, कुल, जाति, बल, ऋद्धि, तप और रूप इन आठों चीजों से सम्पन्न व्यक्तियों को भी मान हो सकता है, एवं आठों से रहित को भी मान हो सकता है।

18 उत्तम पुरूष बालक में, वृद्ध में, निर्धन में और जाति, कुल आदि से हीन में भी यथायोग्य, प्रियवचन, आदर, सत्कार, स्थान दानादि देने में कभी नहीं चूकते हैं।

19 उत्तम पुरूष अहङ्कार पूर्ण वस्त्र आभरणादि नहीं पहनते दूसरों के अपमान का कारण लेन-देन विवाह आदि व्यवहार भी नहीं करते हैं।

20 उत्तम पुरुष अहङ्कार युक्त होकर चलना, बोलना, बैठना, झाँकना आदि कार्य नहीं करते हैं।

21 अभिमान द्रव्य का नहीं पर्याय का होता है, किन्तु पर्याय तो नश्वर होती है।

22 माईक वाले ने कहा हम माईक न लगाते तो सभा न होती, पर उसे ध्यान नहीं कि मेरे अलावा परोक्ष में कितने लोगो का हाथ है, जैसे बिजली, पॉवर हाउस एवं जहाँ पर बिजली बनती है इत्यादि, इसी प्रकार वह अन्य कार्यों के बारे में भी नहीं सोचता है।

23 दृष्टि द्रव्य की तरफ हो, तो पर्याय का अहङ्कार नहीं होता है।

24 दो हाथ, दो पैर, सिर, सीना, पीठ, पुट्ठा, इन आठों अङ्गों को पाने की सार्थकता मृदुता से हो सकती है, अन्याय से नहीं।

25 कठोर वृक्ष नदी की बाढ़ में उखड़ जाते हैं, किन्तु कोमल बेंत झुक जाते हैं और पुनः लहराने लगते हैं, इसीप्रकार अहङ्कारी नष्ट हो जाते हैं और विनम्र व्यक्ति उन्नति करते हैं।

26 गिरते पेड़ के पत्ते से भी हम पुण्य क्षीण होने पर अपने पतन की शिक्षा ले सकते हैं।

27 समस्त शक्तियों में मन्त्र शक्ति और समस्त बलों में पूर्वापार्जित पुण्य प्रबल होता है।

28 छहों द्रव्य परस्पर उपकार करते हैं किन्तु अहङ्कारी अपने को पर का कर्ता मानता है।

29 पद में राजी होने वाला भूत पूर्व बन जाता है, और प्रभु मे राजी होने वाला अभूतपूर्व बन जाता है।

30 गामा पहलवान एक हाथ से भरी बस रोक देता था, पर अन्त समय में चेहरे की मक्खी भी उड़ाने में असमर्थ था।

31 जब देव मरकर एकेंद्रिय और चक्रवर्ती मरकर सप्तम नरक का नारकी हो सकता है, तब

किसका गर्व किया जाए।

32 शब्द ज्ञान टण्की के पानी एवं आत्म ज्ञान कुंए के जल के स्त्रोत के समान है, जिसका अन्त नहीं होता है।

33 ज्ञान, दर्शन, चारित्र और उपचार के भेद से विनय के चार भेद हैं।

34 जहाँ नम्रता से कार्य निकल आये, वहाँ उग्रता नहीं दिखानी चाहिए।

35 अहङ्कार का अर्थ- योग्यता से अधिक प्रशंसा चाहना है।
अभिमान का अर्थ- योग्यता के अभाव में प्रशंसा चाहना है।
स्वाभिमान का अर्थ- जितनी योग्यता उतनी प्रशंसा चाहना है।
निरभिमान का अर्थ- अपमान होने पर भी विकल्प नहीं करना है।

मृदु दोहावली-

36 **भाव विशुद्ध हुये विना कैसा त्याग विराग। मान करो मत त्याग का, करो मान का त्याग।**

37 **समझाने में है नहीं, है समझे में सार। समझाने वाले कई, पड़े बीच मझधार।।**

38 **नानक नन्हे बने रहो, जैसे नन्ही दूब। बड़े झाड़ कट जात हैं, बनी रहत है दूब।।**

39 **कञ्चन तजना सहज है, सहज त्रिया का नेह। मान बढ़ाई ईर्ष्या दुर्लभ तजनी जेह।।**

40 **जो रहा किसी दिन बादशाह वह पथ का आज भिखारी है,**
जो रोटी को मुँहताज रहा वह बना राज दरबारी है।
जिनकी पैदाइश की खुशियाँ प्रातः आकाश गुञ्जाती थीं,
कुछ देर बाद देखा मैंने वे हा हा कार मचाती थीं।।

41 **लघुता से प्रभुता मिले, प्रभुता से प्रभु दूर,**
चीटीं ले शक्कर चले हाथी के शिर धूर।
लघुता से प्रभूता मिले, प्रभूता से प्रभु दूर,
जो प्रभु होना चाहते, लघुता धार जरूर।।

42 **जो आज एक अनाथ है, नरनाथ कल होता वही।**
जो आज उत्सव मग्न है, कल शोक कर रोता वही।

43 **मत रूप निहारो दर्पण में दर्पण गंदला हो जायेगा।**
निज रूप निहारो अन्तर में, अन्तर उजला हो जायेगा।।

44 **जो मानता स्वयं को सबसे बड़ा है। वह धर्म से बहुत दूर अभी खड़ा है।।**

45 **इक लख पूत सवा लख नाती। ता रावण घर दिया न वाति।।**

46 **अप्रसिद्धि में बड़ा ही आराम है, अपनी ही सुबह अपनी ही शाम है।**
प्रसिद्धि में मिलता नहीं आराम है, होती कहीं सुबह और होती कहीं शाम है।।

47 **जब तलक दम था, झुके न आसमाँ से हम। जब दम निकल गया, तो जमीं ने दबा दिया।**

48 **कारज धीरे होत है, काहे होत अधीर। समय पाय तरुवर फलें, केतेक सीचों नीर।।**

49 **आदमी की जात की बस यही औकात है। चार दिना की चाँदनी फिर अन्धेरी रात है।।**

50 **पत्थर अहम् का क्या करें गलता नहीं है,**
सब दिये जलते मगर दिल का दिया जलता नहीं है।
खोजते-खोजते ढ़ल जाती है जीवन की शाम,
सबका पता मिलता मगर खुद का पता मिलता नहीं है।।

मृदु श्लोक गाथा-

51 **विद्या विवादाय धनं मदाय, शक्ति परेषां परिपीड़नाय।**
खलस्य साधोः विपरीतमेतत्, ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय।।
दुर्जन की विद्या विवाद के लिए होती है, सज्जन की विद्या अज्ञान दूर करने के लिए होती है, दुर्जन का धन अहङ्कार के लिए होता है, सज्जन का धन दान के लिए होता है, दुर्जन की शक्ति दूसरों को परेशान करने के लिए होती है, सज्जन की शक्ति जीवों की रक्षा के लिए होती है।

52 **विद्या ददाति विनयं, विनयाद्याति पात्रतां।**
पात्रत्वाद्धनमाप्नोति, धनाद्धर्मं ततः सुखं।।
विद्या विनय को देती है, विनय से पात्रता आती है, पात्रता से धन प्राप्त होता है, धन से धर्म होता है और धर्म से सुख होता है।

53 **गुरुभक्तो भवाद् भीतो, विनीतो धार्मिकः सुधीः।**
शान्तः स्वान्तो ह्यतन्द्रालुः, शिष्टः शिष्योऽयमिष्यते।।
जो गुरू का भक्त हो, संसार से भयभीत हो, विनम्र हो, धार्मिक हो, अच्छी बुद्धि वाला हो, शान्त मन वाला हो, आलस्य रहित हो और सभ्य हो वह शिष्य माना जाता है।

54 **ज्ञानं मद दर्पहरं, माद्यति यः तेन तस्य को वैद्यः।**
अमृतं यद् विषं जातं, तस्य चिकित्सा कथं क्रियते।।
'ज्ञान' मद और दर्प (अक्खड़पन) को हरने वाला है और जो ज्ञान का ही मद करता है, उसके लिए कल्याण का दूसरा साधन और क्या हो सकता है ? क्योंकि अमृत ही जब विष हो जाए तब चिकित्सा किससे हो सकती है ?

55 **यदा किंचिज्ञोऽहं द्विप इव मदान्धा सम्भवं, तदा सर्वज्ञोऽस्मीत्यभवदवलिप्तं मम मनः।**
यदा किञ्चित् किञ्चित् बुधजन सकसादवगतं, तदा मूर्खोऽस्मीति ज्वर इव मदो मे व्यपगतः।।
जब मैं थोड़ा जानकार हुआ तो हाथी की तरह मद से अन्धा हो गया और अपने आप को सर्वज्ञ समझने लगा, किन्तु जब मैंने ज्ञानी जनों की थोड़ी-थोड़ी सङ्गति की तो लगा कि मैं मूर्ख हूँ और तब मेरा अहङ्कार रूपी ज्वर शीघ्र ही उतर गया।

56 **स्वामिन् ! सुदूरमवनम्य समुत्पतन्तो, मन्ये वदन्ति शुचयः सुरचामरौघः।**
येऽस्मै नतिं विदधते मुनिपुङ्गवाय, ते नून मूर्ध्वगतयः खलु शुद्धभावाः।।
हे भगवन् ! आपके लिए ढुराये जाने वाले चामर झुककर ऊपर जाते हुये मानो ऐसा कहते है, की जो भगवान् को नमस्कार करता है, उसकी चामरों की तरह ऊर्ध्व गति होती है।

57 **श्रूयतां धर्म सर्वस्वं, श्रुत्वा चाप्यवधार्यतां।**
आत्मनः प्रतिकूलानि, परेषां न समाचरेत्।।
धर्म का सार सुनो और जीवन में उतारो, जो व्यवहार आपके लिए अच्छा नहीं लगता वैसा व्यवहार दूसरों के साथ भी कभी मत करो।

58 **ज्ञानं पूजां कुलं जातिं, बलमृद्धिं तपो वपुः।**
अष्टावाश्रित्य मानित्वम्, स्मयमाहुर्गतस्मयाः।।
ज्ञान, पूजा, कुल, जाति, बल, ऋद्धि, तप और शरीर को माध्यम बनाकर अहङ्कार करने को जिनेन्द्र भगवान मद कहते हैं।

59 **नमन्ति फलिनो वृक्षाः, नमन्ति गुणिनो जनाः।**
शुष्क काष्ठाश्च मूर्खाश्च, न नमन्ति कदाचन्।।
फलवान वृक्ष नम्र होते हैं, गुणवान मनुष्य नम्र होते हैं, सूखे वृक्ष और मूर्ख कभी नहीं झुकते हैं।

60 महापुरुष विनम्र एवं दयालु होते हैं इसीलिए पार्श्वनाथ भगवान् ने दयार्द्र होकर नाग नागिनी को महामन्त्र सुनाया था।

मृदु कथानक-

61 ज्ञान मद- बनारस से पढ़कर आया युवक नाव पर सवार होकर स्वगृह की ओर जाते हुये नाविक से पूँछने लगा 'आपने इंग्लिश पढ़ी है'? नाविक ने कहा 'नहीं', युवक ने कहा 'तब तुम्हारी पच्चीस प्रतिशत जिन्दगी बेकार' है, युवक ने पुनः पूँछा 'आपने संस्कृत पढ़ी है ?' नाविक ने कहा 'नहीं', युवक बोला 'तब तो तुम्हारी पचास प्रतिशत जिन्दगी बेकार' है, नाव आगे बढ़ी तूफान आया, नाविक ने पूँछा 'आप तैरना जानते हो ?', युवक ने कहा 'नहीं', नाविक बोला 'तब तो आपकी सौ प्रतिशत जिन्दगी बेकार है', इसलिये किसी भी विद्या का अहङ्कार नहीं करना चाहिए।

62 **अहङ्कार रुपी लङ्गर नही खोला-** भूले भटके शराबी रात भर नाव खेते रहे किन्तु सुबह देखा तो वहीं थे, नाविक ने कहा नाव का लङ्गर नहीं खोला, अतः आगे नहीं बढ़े, इसी तरह मानव ने अहङ्कार रूपी लङ्गर नहीं खोला, इसलिए संसार में ही भटक रहा है।

63 **मन्दिर बनाने का मान नहीं-** हस्तिनापुर में एक सेठ ने मन्दिर बनवाया, जब मन्दिर पूरा बन गया एवं कुछ काम और शेष था, तब सेठजी ने समाज की एक बैठक बुलाई और समाज से कहा कि अब इस मन्दिर का काम पूरी समाज को पूर्ण करना है, आगे मेरी शक्ति नहीं है, पूरा मन्दिर बनवाने के बाद विनाअहम् के मन्दिर समाज को सौंप दिया उस मन्दिर में सेठजी का कहीं पर नाम भी नहीं है, यह मान कषाय के मर्दन करने का तरीका है।

64 **रुपमद-** लक्ष्मीमती नामक एक कन्या रूप गुण का मानों भण्डार ही थी उसने मुनिराज के मलिन शरीर को देखकर भक्ति तो नहीं की किन्तु निन्दा करने लगी, इतना ही नहीं रूप के घमण्ड वश मुनिराज के शरीर पर थूँक भी दिया। इस घोर पाप के फल से उसके शरीर में सात दिन के बाद उदुम्बर कुष्ट हो गया, उसके घृणित शरीर में कीड़े पड़ गये, आर्तध्यान से मरण कर तिर्यञ्चयोनी को प्राप्त हुयी। कई भवों के बाद वह दरिद्रा नाम की एक कन्या हुयी, पाप के उदय से उसके शरीर से बदबू आती थी, उसको कोई अपने पास रखने को तैयार नहीं था, तब नगर के बाहर एक नदी के पास छोड़ दिया, वहाँ से मुनिराज का विहार हुआ उनके दर्शन करके अपने दुःखों के अन्त होने का उपाय पूँछा, महाराज ने धर्मोपदेश दिया पूर्व भवों के दुष्कृत का वर्णन किया, जिसे सुनकर उसे पश्चात्ताप हुआ, एवं अहिंसादि व्रतों के पालन करने का नियम लिया, जिसके फल से अगले भव में श्रीकृष्ण की पटरानी रुक्मणी हुई।

65 **हमारे हाथ अर्थी के बाहर कर देना-** बड़े-बड़े राजा महाराजाओं को भी धर्म की शरण लेना

पड़ती है। जब सम्राट सिकन्दर दक्षिण भारत की यात्रा पर आने लगा, तब अपनी माँ से आशीर्वाद लेकर निकला और माँ से कहता है, हे माता श्री ! आपकी कोई इच्छा तो नहीं है ? माँ ने कहा बेटा अपने देश में दिगम्बर साधुओं के दर्शन दुर्लभ हैं, इसलिये तुम भारत से दिगम्बर साधु को जरूर लाना। सिकन्दरअपनी यात्रा पूर्ण होने के बाद जब स्वदेश को लौटने लगा तो माँ की बात याद आयी, तब सिकन्दर ने अपने डेरे से एक दूत को दिगम्बर साधु के पास भेजा। दूत ने कहा महाराज हमारे सम्राट ने आपको बुलाया है, मुनि ने कहा हे पथिक ! ये बताओ प्यासा कुंए के पास जाता है या कुंआ प्यासे के पास जाता है ? मुनिराज के वचन सुनकर दूत सिकन्दर के पास वापस जाता है, और समाचार सिकन्दर को देता है। सिकन्दर शर्मिन्दा होता हुआ मुनि के पास जाकर सविनय निवेदन करता है, हे भगवन् ! आप हमारे राज्य को पवित्र करने का कष्ट करें। मुनि ने चलने का मानस बना लिया, किन्तु मुनिराज ने निमित्त ज्ञान से ये जान लिया कि सिकन्दर का जीवन मात्र अन्तर्मुहूर्त का है। सिकन्दर अपने जीवन का अन्त समय सुनकर दुःखी होकर बोला भगवन् ! मुझे बचा लिजिये। महाराज ने कहा हे राजन ! मणी मन्त्र तन्त्र बहु होई मरते न बचावे कोई। सिकन्दर ने मन्त्री से कहा चाहे मेरा कोई आधा राज्य लेले, पर मुझे बचाले, बहुत ही प्रयास किया लेकिन जब कोई नहीं मिला, तो सिकन्दर कहता है जब मेरी अर्थी निकाली जाय, तब मेरे दोनों हाथ अर्थी के बाहर निकाल देना, ताकि लोगों को ये पता चल सके, कि जिस सिकन्दर ने सारी उम्र बहुत धन लूटा पर अन्तिम समय हाँथ खाली थे। सभी सङ्ग में दौलत, सभी हाली हवाली थे। सिकन्दर जब गया दुनिया से, दोनों हाथ खाली थे।।

66 **जुआँरी, पुजारी, कमाऊ, अंधा चार पूत**-एक सेठ के चार लड़के थे, उनमें बड़ा लड़का कमाऊ पूत था, दूसरा ज्वारी, तीसरा पुजारी और चौथा अंधा था, बड़े लड़के की पत्नि ने पति को भड़काया आप कमाते हो सब खाते हैं, हम लोग सभी अलग हो जाते हैं। यह बात पिताजी से कही, पिताजी ने कहा बेटा अलग होने के पहले हम लोग तीर्थ यात्रा कर लेते हैं, सब मिलकर तीर्थ को जाते हैं, पहुँचकर पिताजी ने क्रम-क्रम से बच्चों को दस-दस रुपये देकर रसोई की सामग्री लेने भेजा, बड़ा लड़का व्यापार करके दस के पन्द्रह कर लेता है, और सामग्री ले आता है, जुआरी जुआ खेल कर भाग्य से दस के बीस कर लेता है, और सामग्री ले आता है, तीसरा बेटा दस रूपए का दीपक लेता है और भगवान् की आरती करके कहता है आपको ही हमारी व्यवस्था बनाना है, तो वहाँ का रक्षक देव सोचता है धर्म के प्रति इतनी आस्था है यदि

इसकी व्यवस्था नहीं बनायेंगे तो लोगो की धर्म के प्रति आस्था नहीं रहेगी, और वह देव गाड़ी भर सामान भेज देता है, सब बच्चे अपने-अपने पुरूषार्थ से रसोई का सामान लाते हैं, सबके भाग्य की परीक्षा आज होती है, तो बड़े लड़के का अहङ्कार चूर हो जाता है, कि सबसे बड़ा अभागा तो मैं ही हूँ।

67 **विद्या गुरु को ऊपर बैठाना-** एक बार एक भील की स्त्री को दोहला हुआ कि मुझे आम खाने को मिल जाय, लेकिन उस समय आम का मौसम नहीं था, फिर भी तीव्र इच्छा हुयी भील से अपनी भावना व्यक्त की, भील ने सारे जङ्गल को खोज डाला लेकिन कहीं पर भी आम नहीं मिला, भील को मालूम हुआ, कि राजा श्रेणिक के बगीचे में इस समय आम उपलब्ध हैं। वह अन्तर्धान नामक विद्या के माध्यम से बगीचे से आम ले आया, रोज आम लाता लेकिन पहरेदार पकड़ नहीं पाते, एक दिन भील पकड़ा गया, राजा के सामने उपस्थित किया, राजा उसकी विद्या पर प्रसन्न हुआ, और राजा ने कहा कि तू अपनी विद्या हमें सिखा दे तो मैं तुझे छोड़ दूँगा। भील तैयार हो गया। बहुत देर तक विद्या सिखाता रहा लेकिन राजा सफल नहीं हुआ, तभी अभय कुमार निकले उन्होंने कहा, राजन ! गुरू को ऊपर विठाओ और आप नीचे बैठों तब विद्या सिद्ध होगी।

68 **जिनेन्द्रवर्णी जी** आचार्यश्री विद्यासागर जी के दर्शन करने के लिए रामटेक आये और पीछे बैठ गये, आचार्यश्री ने पहले कभी उनको देखा नहीं था, सभा के बाद उनका परिचय कराया, तब वर्णीजी आचार्यश्री के चरणो में लोट गये, आचार्यश्री ने कहा थोड़ा आप बोलो तब वर्णीजी ने कहा ''मैं छोटा सा कीड़ा आपके सामने कैसे बोलूँ''ये उनकी विनम्रता थी।

69 **जिनेन्द्र वर्णी विनय की मूर्ति** - जिनेन्द्रवर्णीजी आचार्यश्री के पास जब सल्लेखना लेने के लिए ईसरी सन् 1983 में आये, उस समय आचार्यश्री स्वाध्याय करा रहे थे, किसी विषय का अर्थ अस्पष्ट था, तब क्षमासागरजी ने वर्णी जी से कहा कि आपके पास इसका समाधान है ?, वर्णीजी ने कहा! हाँ, क्षमा सागर जी बोले ! फिर आप इतनी देर से मौन क्यों हैं ? तब वर्णी जी बोले कि इतने बड़े आचार्य के सामने मैं नगण्य कैसे बोलता।

70 **बेर और किशमिश-** बेर की मृदुता ऊपर रहती और किसमिस की मृदुता भीतर बाहर एक सी होती है इसी तरह सज्जन भीतर बाहर से मृदु होते हैं, और दुर्जन बाहर से मृदु और अन्दर से कठोर होते हैं।

71 **खुदा से खुद की पहचान**-एक व्यसनी को पत्नि शिक्षा देती है कि तुम व्यसन छोड़ो भगवान् से नाता जोड़ो। एक बार वह बाहर जा रहा था, तब पत्नि ने एक भगवान् की मूर्ति दी और कहा अपने को जानों, वह रोज पूजा करता द्रव्य चढ़ाता था, चूहा द्रव्य को खा जाता था तो वह चूहे की पूजा करने लगा, एक दिन बिल्ली चूहे पर झपटी तो वह बिल्ली की पूजा करने लगा, एक दिन कुत्ता बिल्ली पर झपटा तो वह कुत्ते की पूजा करने लगा, एक दिन पत्नी ने कुत्ते को लाठी मारी तो वह पत्नी की पूजा करने लगा एक दिन उसे गुस्सा आया तो उसने पत्नी को मारा तो उसे लगा कि अरे श्रेष्ठ तो मैं ही हूँ, तब से उसे अपने आत्म तत्त्व की श्रेष्ठता मालूम हुई।

72 **जैसे को तैसा**-एक राजा लङ्गड़ा था, और अहङ्कारी भी था, एक बार राज दरवार में सूरदास जी भजन सुनाने आये, राजा ने पूँछा तुम्हारा नाम क्या है ? उसने उत्तर दिया- दौलत ! राजा ने व्यङ्ग किया- क्या दौलत भी अन्धी होती है ? सूरदास जी ने कहा यदि अन्धी नहीं होती तो लङ्गड़े के पास क्यों आती, राजा का अहङ्कार चूर-चूर हो गया, अतः किसी को अपने से छोटा नहीं समझना चाहिए

73 **पिता पुत्र यात्रा पर निकले** प्यासे बेटे से एक कदम भी चला नहीं जा रहा था, पिता ने धैर्य बँधाया बेटा सामने हवेली दिख रही है, वहाँ पानी अवश्य मिलेगा, किसी तरह वहाँ पहुँचे, पर प्याऊ पर कोई पानी पिलाने वाला नहीं था, बच्चा पानी-पानी चिल्ला रहा था, सेठ जी मस्ती से गद्दी पर बैठे हुए थे, पिता ने साहस करके सेठ जी से कहा सेठ जी पानी पिला दीजिये, सेठ जी ने कहा थोडा इन्तजार करो, पिता ने दुबारा निवेदन किया तो सेठ जी ने कहा अभी आदमी नहीं है, तब पिता ने कहा थोड़ी देर के लिए आप ही आदमी बन जाइए, संसार में सब कुछ है पर आदमियत (इंसानियत) की कमी है, अतः आदमी को पहले आदमियत प्राप्त करना चाहिए बाद में दूसरी चीजें।

इति मार्दव धर्म समाप्त

★★★

तृतीय सोपान-उत्तम आर्जव धर्म

"कपट पटकता नरक"

1 **जो चिन्तेई ण बंकम्, ण कुव्वदि बंकं ण जम्पदे बंकम्।**
ण य गोवदि णिय दोसम्, अज्जव धम्मं हवे तस्स।।

जो वक्रता पूर्ण चिन्तन नहीं करता, वक्रता पूर्ण चेष्टा नहीं करता और वक्रता पूर्ण वचन नहीं बोलता तथा अपने दोषों को नहीं छुपाता है उसके 'आर्जव धर्म' होता है।

2 **'मन में होए सो वचन उचरिये, वचन होए सो तन सो करिये'**

यह कथन महा मुनियों की अपेक्षा है जिनके मन में हमेशा प्राणी मात्र के प्रति दया का भाव रहता है, वे अपने मन के भाव वचन से कहते हैं तो प्राणियों का भला होता है, और शरीर से करते हैं, तो प्राणी मात्र का कल्याण होता है, अन्य प्राणियों के लिए इस तरह से है, कि मन में होए सो मन मे रखिये, वचन होए तन सो न करिए, अगर वे अपने मन की बात कहेंगे तो अन्य का अहित होगा, क्योंकि उनके मन में प्रायः दुर्भाव रहता है और करेंगे तो अनेकों का सत्यानाश होगा, दूसरी बात एकेन्द्रियादि के मन के विना भी मायाचारी होती है एवं ध्यान में लीन मुनिराज के आर्जव धर्म होता है तथा तीनों योगों से रहित सिद्धों के भी आर्जव धर्म होता है, अतः आंतरिक वक्रता का नाम माया एवं सरलता का नाम आर्जव धर्म है, मन वचन काय पौद्गलिक हैं और आर्जव धर्म आत्मिक गुण है।

मायाचारी के प्रकार-

1 मित्र अधिक पढ़कर ज्यादा नम्बर न ले आये, इसलिये सिनेमा के लिए निमन्त्रण देना।

2 घर पर आये पड़ोसी के पुत्र को मिठाई, खिलौना आदि देना, जिससे उसकी माँ समझे कि इनका मेरे परिवार पर बड़ा स्नेह है।

3 मालिक की दुकान पर मेहनत इसलिए करना कि मेरी चोरी न पकड़ में आ जाय।

4 भोगों में रस लेते हुए भी ऊपर से विरक्ति दिखाना, मुझे तो शान्ति चाहिए, शरीर आत्मा भिन्न-भिन्न है, भोग तो बहुत भोगे इत्यादि।

5 स्वर ताल से भक्ति करता है, ताकि लोग धर्मात्मा समझें और पुत्र का रिश्ता बड़े घर से हो जाय।

6 लालच के कारण प्रतिमा स्थापित कराना, मन्दिर बनवाना, आहार दान देना, ताकि अधिक धन का लाभ हो।

7 दान इसलिए कि प्रतिष्ठा प्राप्त हो, लोग धनिक समझें, दुआ प्राप्त हो जाय, भोगभूमि या स्वर्ग

सुख मिले।

8 सत्य बोलता है, ताकि लोग सत्यवादी समझ कर सम्मान करें। तुम्हारे लिए वस्तु लाये हैं, ऐसा कहकर बेचना, चाहे वह वस्तु उसके काम में आये या नहीं।

9 दुर्बलता बताते हुए प्रायश्चित्त लेना किसी दोष का प्रायश्चित्त पूँछ लेना और चुप चाप ले लेना। प्रकट दोषों का प्रायश्चित लेना, प्रतिष्ठा के लोभ में निर्दोष होकर भी प्रायश्चित लेना।

10 नमक का त्याग हलुआ पुड़ी के लोभ से करना, अन्न का त्याग फल मेवा के लोभ से करना।

11 महाराज को आहार देना है, तो छः वर्ष के बेटे को आठ वर्ष का बताते हैं, ट्रेन में सफ़र करना हो तो आठ वर्ष के बच्चे को चार वर्ष का बताते हैं।

12 **तुम आदमी की नहीं गधे की बात मानते हों**- एक दिन पड़ोसी गधा माँगने आया तो बोल दिया गधा जङ्गल चरने गया है, इतने में अन्दर से रेंकने की आबाज आई, पड़ोसी ने कहा कि गधा अन्दर है! तो बोलता है तुम आदमी का नहीं गधे का विश्वास करते हो।

13 **गुमची**- कुछ लोग गुमची की तरह होते हैं देखने में सुन्दर लेकिन दूसरी ओर काले होते हैं।

14 बाण सीधा है पर घाव करता है, तमूरा टेड़ा है पर मिष्टवादी है, अतः मनुष्य को आकृति से नहीं, उसके कामों से उसे महत्त्व देना चाहिए।

15 **एक ठगिया**-एक परिवार को प्रेत की बाधा थी, एक ठगिया ने प्रेत को भगाने के बहाने एक टङ्की बुलवायी उसमें घर का सारा सोना, चाँदी, रूपया आदि भरकर ले गया, उस समय परिवार के लोगों को बाहर निकाल दिया था, परिवार दो दिन बाद घर में आया देखा तो सब कुछ लुट गया था।

16 **बैरिस्टर चितरञ्जनदास मुखर्जी** ट्रेन से यात्रा कर रहे थे, पूरा कम्पार्टमेंट खाली था, वे पेपर पढ़ रहे थे, वहाँ एक युवती आई और बोली मैं यहाँ बैठ जाँऊ ? बैरिस्टरजी ने मौन स्वीकृति दे दी, थोड़ी देर अपनी विपत्ति बताई और गाड़ी ने जैसे ही स्पीड पकड़ी तो बोली हमें हजार रुपये दे दो नहीं तो मैं चिल्ला दूंगी कि एकान्त में ये मेरे साथ बदतमीजी कर रहे थे। बैरिस्टरजी ने इशारा किया न मैं बोल सकता हूँ और न ही सुन सकता हूँ। एक कागज में लिखकर दो उसने वही बात लिख दी। बैरिस्टरजी ने अच्छे ढंग से पढ़ा और जेब में रख लिया और गाल पर एक चाँटा मारा और कहा अब चिल्लाओ कितना चिल्लाती हो। वह चुप रह गयी और अपनी ही चाल में फँस गयी, उन्होंने उसे गिरफ्तार करवा दिया।

17 **मुझे बड़ी शान्ति मिलेगी**-एक व्यक्ति बहुत कुटिल था, वह जब मरने लगा तब अपने बेटों से

बोला कि मैं जब मर जाऊँ तो मेरे हाथ पैर काटकर पड़ोसी के यहाँ फेक देना मुझे बड़ी शान्ति मिलेगी।

18 **हमने पानी नहीं बेंचा**-एक किसान के खेत में कुंआ था, उसने खेत बेच दिया कुछ दिन बाद वह खरीदने वाले को परेशान करने लगा कि हमने खेत और कुंआ बेचा है पानी नहीं बेचा, उसने परेशान होकर कहा कि आपका पानी हमारे कुंऐ में रहा, अब तुम किराया दो और अपना पानी ले जाओ, और हमारे खेत में एक बून्द भी पानी गिरना नही चाहिए, तब उसने क्षमा माँगी।

19 **श्री कृष्णजी का नेमिनाथजी के साथ छल**- श्री कृष्णजी को यह चिन्ता थी, कि कहीं नेमिनाथजी हमारा राज न लेलें, इसलिए छल पूर्वक शादी रचवायी और पशुओं का बन्धन कराया जिसे देखकर श्री नेमिनाथजी ने वैराग्य धारण कर लिया था।

20 **रानी ने जहर पिलाया**- राजा यशोधर की रानी अमृतमति कुबड़े नौकर पर मोहित थी, जब राजा को मालूम हुआ तो उसे वैराग्य हो गया। रानी रोने का स्वांग करने लगी, रानी ने कहा आप दीक्षा के पहले एक बार मेरे हाथ का भोजन कर लो, भोजन में जहर मिला दिया, राजा मर गया।

21 **सेठ मरकर मेढक बना**- सेठ ने संकल्प किया कि, जब तक दीपक जलेगा तब तक सामयिक करेंगे, सेठ को प्यास की बाधा हुयी, इसी बीच सेठानी ने दीपक में पुनः तैल डाल दिया, सेठ आर्तध्यान से मरण कर मेंढक बना।

22 **इञ्जीनियर की सलाह**- रिटायर्ड इञ्जीनियर से अनुभव पूँछे, उसने कहा जिस पुल का निर्माण करो उस पर अपना वाहन न चलाओ जिस छत को बनाओ उसके नीचे कभी मत सोओ।

23 **ओवर ड्यूटी**-यदि दो दिन ड्यूटी पर नहीं जाता तो सरकार से पैसा कम नहीं लेता, यदि दो घण्टा ओवर ड्यूटी करता है तो उसका पैसा लेता है।

24 माया नचाती है, यदि माया से बचना है तो प्रभु कीर्तन करो, कीर्तन का उल्टा नर्तकी होता है।

25 **कुटिलता का स्वभाव**-एक किसान ने खेत की मेड़ पर आम, नीबू, नीम के तीन वृक्ष लगाये धूप, पानी, खाद सबको एक जैसा मिला फिर भी वह खट्टा, मीठा, कड़वा बना, किसी ने भी अपना स्वभाव नहीं छोड़ा।

माया से हानि-

1 **वेणुव मूलोरब्भय, सिंगे गोमुत्तए य खोरप्पे।**
सरसी माया णारय, तिरिय णरामर गईसु खिवदि जियं।।

बाँस की जड़ की तरह वक्रता(टेढ़ापन) जीव को नरकगति में, भेड़ के सींग की तरह वक्रता जीव को पशुगति में, बैल की पैशाब की तरह वक्रता मनुष्यगति में और खुरपी की तरह वक्रता जीव को देवगति में ले जाती है।

2 **चार प्रकार के लोग**-1.किशमिश की तरह बाहर भीतर से कोमल जीव देवगति को प्राप्त होते हैं। 2.नारियल की तरह बाहर से कठोर अन्दर से कोमल जीव मनुष्यगति को प्राप्त होते हैं। 3.बेर की तरह बाहर से कोमल अन्दर से कठोर जीव तिर्यंचगति को प्राप्त होते हैं। 4.छुहारे की तरह बाहर भीतर से कठोर जीव नरकगति को प्राप्त होते हैं।

3 **मनस्येकं वचस्येकं, कर्मण्येकं महात्मनां।**
मनस्यन्यत् वचस्यन्यत्, कर्मण्यन्यत् दुरात्मनां।।
सज्जनों के मन वचन काय में एकता होती है, और दुर्जनों के मन में कुछ वचन में कुछ और काय में कुछ होता है।

4 **पश्य लक्ष्मण ! पम्पायां वकः परम धार्मिकः।**
शनैः शनैः पदं धत्ते, जीवानां वधशङ्कया।।
वकः किं स्तूयते राम ! येनाहं निष्कुली कृता।
सह वासी हि जानाति, सहवासी विचेष्टितं।।
वनविहार में रामचन्द्र जी लक्ष्मण से कहते हैं ! सरोवर में बगुले को देखो कितना धार्मिक है, जीव मर न जाए इसलिए धीरे-धीरे पैर रख रहा है, मछली कहती है- हे राम ! बगुले की प्रशंसा क्यों करते हो, इसने तो हमारे वंश का ही विनाश कर दिया है, आप नहीं जानते सहवासी की चेष्टा को सहवासी ही जनता है।

5 **उपाध्याये नटे धूर्ते, कुट्टिन्यां तथैव च।**
माया तत्र न कर्तव्या, माया तैरेव निर्मिता।।
उपाध्याय, बहुरूपिया, धूर्त और वेश्या इनसे मायाचारी नहीं करना चाहिए क्योंकि माया को इन्होंने ही बनाया है।

6 **कास्ताः दृशो यासु न सन्ति दोषाः, कास्ताः दिशो यासु न दुःख दाहः।**
कास्ताः प्रजा यासु न भङ्गुरत्वं, कास्ताः क्रियाः यासु न नाम माया।।
ऐसी कौनसी दृष्टि है जिसमें दोष नहीं है ? ऐसी कौन सी दिशा है जिसमें दुःख नहीं है ? ऐसी कौनसी प्रजा है जहाँ भेद-भाव नहीं है ? और ऐसी कौनसी क्रिया है जिसमें मायाचारी नहीं है ?

अर्थात् लोक व्यवहार में प्रायः मायाचारी होती है।

7 **जन्मभूमिरविद्याना, मकीर्ते र्वासमन्दिरम्।**
पाप पङ्क महागर्तो, निकृतिः कीर्तिता बुधैः।।
मायाचारी समस्त अविद्याओं की जन्मभूमि है, अपयश का घर है और पाप रूपी गड्ढे में गिराने वाली है ऐसा ज्ञानीजनों ने कहा है।

अमृत सूक्ति-

8 माया में ढोंग से और सरलता में ढंग से जिया जाता है।

9 हम समझते हैं कि हमारे छल को किसी ने नहीं देखा, लेकिन सामने वाला व्यक्ति जान लेता है।

10 सर्प जमीन पर भले ही टेडा-मेडा चले पर बिल में प्रवेश करने के लिए सीधा होना ही पड़ता है, उसी प्रकार संसारी प्राणी भले ही मायाचारी करे पर आत्म स्वरूप में आने के लिए सीधा ही होना पड़ता है।

11 मायावी का चेहरा धर्मात्मा जैसा लगता है, पर हृदय पापी का होता है, मायावी मन्दिर में कुछ और, बाहर कुछ और करते हैं, देखने वालों को मायावियों का आचार अच्छा लगता है, पर उनके विचार कौनसे नरक लेकर जायेंगे भगवान् ही जाने।

12 क्रोधी सुधर सकता है, मानी भी सुधर सकता है, मायावी का चेहरा धर्मात्मा का दिखता है, पर हृदय पापी के समान होता है, अतः उसके सुधारने मे कठिनाई होती है।

13 सीधी तलवार म्यान में प्रवेश नहीं करती, इसी प्रकार वक्र हृदय में धर्म प्रवेश नहीं करता है।

14 छल करना पाप है, पर छला जाना पाप नहीं है, जो छल करता है, वह हमेशा चिन्तित ही रहता है, कि कहीं मेरी मायाचारी पकड़ में न आ जाए।

15 असली वस्तु में नकली वस्तु के मिलाने से नीच गोत्र और अशुभ नाम कर्म का बन्ध होता है।

16 मायावी का व्रत, तप सब निष्फल है।

17 मायाचारी ज्ञात होने पर स्नेह भङ्ग हो जाता है, माँ भी प्रेम नहीं करती है।

18 जिसके मन में मायाचारी भरी हो, वह प्रभावशाली व्यक्तित्व किस काम का ?

19 आँखों से गिरा आंसु और नजरों से गिरा व्यक्ति कभी उठ नहीं पाता है अतःमायाचारी करके किसी की नजरों से गिरना नहीं चाहिए।

20 'माया तैर्यग्योनस्य' 'निःशल्यो व्रती' सुअर, कुत्ता आदि कोई नहीं बनना चाहता, पर मायाचारी नहीं छोड़ेंगे तो बाद में पशुगति की बासठ लाख योनियों में जन्म लेना ही पड़ेगा।

21 व्रती मायाचारी मिथ्यात्व एवं निदान शल्य से रहित होता है।

22 **नहीं लहे लक्ष्मी अधिक छल कर कर्म बन्ध विशेषता-** मायाचारी से अधिक लक्ष्मी की प्राप्ति नहीं होती वल्कि कर्म बन्ध अधिक होता है।

23 सरल स्वभावी होय ताके घर बहु सम्पदा- जो सरल होता है उसके पास बहुत धन होता है।

सरल दोहावली

24 **दगा किसी का सगा नहीं, न मानो तो कर देखो।**
जिसने किया किसी के साथ, बिगड़ा उसका घर देखो।।

25 **कपट छिपाये न छिपे, छिपे न मोटा भाग। दावी दूवी न रहे, रुई लपेटी आग।।**

26 **लाख छिपाओ छिप न सकेगा, राज ये कितना गहरा।**
दिल की बात बता देता है, असली नकली चेहरा।।

27 **मुनाफा चौगुना लेकर दिया ऊपर से ताना है,**
इसीलिये दे दिया सस्ता कि तु ग्राहक पुराना है।
इसी बीच में आकर, किसी ने कह दिया उनसे,
सज्जन तुम झूठ मत बोलो, खुदा के पास जाना है।।

28 **कौन कहता है हम किस्मत के लिए रोते हैं। अब तो रिश्ते भी जरूरत के लिये होते हैं।**

29 **चिन्तन कुछ फिर सम्भाषण कुछ। क्रिया कुछ की कुछ होती है।।**

30 **मन मलिन तन सुन्दर ऐसे। विष से भरा कनक घट जैसे।।**

31 **हमने जिसे सिखाया अङ्गुली पकड़-पकड़ के। वे आज चल रहे हैं तेवर बदल-बदल के।।**

33 **उसे सब दुष्ट कहते हैं प्रकट जो पाप करते हैं। अधम से भी अधम वे हैं जो पर्दो में बिगड़ते हैं।।**

34 **नमन-नमन में फेर है, अधिक नमे बेईमान। दगाबाज दूना नमे, चीता-चोर-कमान।**

प्राञ्जल कथानक-

35 **दूसरों को खाई, अपने लिए कुँआ**-एक दयालु सेठ गरीबों को रोज भोजन देता था, लेकिन सेठानी इस पक्ष में नहीं थी, वह कहती थी, कि मैं भोजन बनाकर परेशान होती हूँ, ये बनाया हुआ भोजन बाँट देते हैं। एक दिन सेठजी व्यापार हेतु किसी गाँव गये और सेठानी से बोल गये कि गरीबों को भोजन दे देना। सेठानी ने अवसर पाकर विषाक्त भोजन बना दिया। उस दिन सिर्फ एक ही गरीब भोजन लेने आया, वह भोजन को अपने घर ले जा रहा था रास्ते में भूख से पीड़ित सेठजी मिल गये, उसने वह भोजन सेठ को दे दिया उसका सेवन करके सेठ की मृत्यु हो गयी मायाचारी का फल तुरन्त मिल गया।

36 जो व्यक्ति परीक्षा के विना किसी पर विश्वास करेगा वह आपत्तियों का घर बनेगा।

37 **मायाचार से मृदुमति मुनि त्रिलोकमण्डन हाथी बने**- नगर के बाहर एक मुनिराज ने चार माह के उपवास किये और विना आहार किये विहार कर गये, उस स्थान पर अन्य मुनिराज आकर विराज मान हो गये, लोगों को मालूम नहीं था कि उपवास वाले ये ही मुनि हैं या नहीं, और मासोपवासी जानकर पूजा की, मुनिराज ने बताया नहीं की हम मासोपवासी नहीं है, इस माया के कारण वे मृदुमति मुनिराज मरकर पहले छठवें स्वर्ग में गये बाद में त्रिलोकमण्डन हाथी बने।

38 **माया का फल स्वयं ने पाया**- एक ठाकुर था वह एक व्यापारी से द्वेष करता था, एक दिन व्यापारी उस गाँव में अपनी वसूली करने के लिए गया, तो उस ठाकुर ने अपने एक नौकर को नियुक्त किया कि इस रास्ते से व्यापारी आये तो तुम उसको मार डालना, भाग्य की बात व्यपारी दूसरे रास्ते से अपने घर चला गया। बहुत देर तक जब नौकर नहीं आया तो ठाकुर ने अपने लड़के को भेजा। जैसे ही नौकर को लड़का आता दिखा उसने गोली मार दी, उसने समझा यही व्यापारी है। माया का फल स्वयं को भोगना पड़ा।

39 **गड़रिया ने लोगों को ठगा, अन्त में प्राण गये**- एक बालक भेड़ों को चराने नदी के उस पार ले जाता था और रोज चिल्लाता 'शेर आया-शेर आया' लोग उसको बचाने के लिए दौड़कर आते वह हँसने लगता, एक दिन वास्तव में शेर आ गया उसने चिल्लाया पर कोई उसे बचाने नहीं आया और शेर उसे खा गया।

40 **विद्यार्थी ने छल किया**-एक लड़के ने चोरी की, गुरूजी ने बच्चों को लकड़ी दी और कहा कि जिस बच्चे ने चोरी की है, उस की लकड़ी दो इञ्च बड़ी हो जाएगी। जिसने चोरी की थी उसने अपनी लकड़ी दो इञ्च तोड़ दी, और वह पकड़ा गया।

41 **घुड़सवार से अपेक्षा**- एक बुढ़िया ने जङ्गल में एक घुड़सवार से अपनी पोटली गाँव तक ले जाने को कहा उसने मना कर दिया। बाद में घुड़सवार के मन में आया की इसकी पोटली ले लेता हूँ और भाग जाता हूँ, ठीक यही विचार बुढ़िया के भी मन में आया कि अगर इसको पोटली दे देती और ये लेकर भाग गया होता तो ? बाद में घुड़सवार पोटली लेने आया तो, बुढ़िया ने कहा जो तेरे दिमाग में आया वही मेरे दिमाग में आया।

43 **दो चेहरे**- एक ही चेहरा समय-समय पर पापी और धर्मात्मा का बनता है, महाराज जयसिंह ने एक बिल्ली पाल रखी थी, वह बिलकुल शान्त बन गयी, राजा के साथ नित्य रहती थी, राजा

उसके माथे पर दीपक रखकर पुराण पढ़ते थे, राजा उसकी खूब प्रशंसा करते थे, बिल्ली की परीक्षा करने के लिए मन्त्री ने एक चूहा छोड़ा तो बिल्ली के कान खड़े हो गये, दूसरा छोड़ा तो बिल्ली के रोंगटे खड़े हो गये, तीसरा छोड़ा तो बिल्ली ने छपट्टा मारा, दीपक गिर गया, तैल फैल गया और पुराण गन्दा हो गया, इसी प्रकार दुनिया में एक व्यक्ति के दो चेहरे होते हैं।

44 **मयूर और कछुए की मित्रता**-एक दिन मयूर को शिकारी ने पकड़ लिया और बोला राजा बदले में हमें रूपये देगा, कछुए ने पानी में से लाकर हीरा दिया, शिकारी बोला एक और लाकर दो तब छोडेंगे, कछुए ने कहा मित्र को छोड़ो और हीरा दो इसी नाप का लाकर देते हैं, मित्र को छूटा हुआ देखा तब बोला-तुम जैसे लोभी, धोके बाज को हीरा नहीं दण्ड मिलना चाहिए, ऐसा बोल कर पानी में चला गया।

आर्जव धर्म से लाभ-

1 धम्मो सुद्धस्स चेट्ठई- धर्म शुद्ध हृदय में ठहरता है।

2 आर्जव धर्म पापों का खण्डन कर सुख उत्पन्न करने वाला है, योगों की सरलता से पुण्य बन्ध और पाप की निर्जरा होती है।

3 आर्जव धर्म संसार सागर से पार होने के लिए जहाज के समान है।

4 सरल व्यक्ति की बैरी भी प्रशंसा करते हैं, उसको यश, धर्म, प्रीति की प्राप्ति होती है और दोनों लोकों में सफलता मिलती है।

5 माया से संसार, और सरलता से मोक्ष मिलता है, वृक्ष यदि टेड़ा है तो कोयला बनता है सीधा है तो सिंहासन, जिस पर सन्त बैठते हैं।

6 **गणेशप्रसाद वर्णी जी** जब पढ़ते थे, तो एक दिन एक भङ्गेड़ी के चक्कर में पड़ गये, उसने कहा कि भाँग खाने से शिवजी दिखते हैं, वर्णी जी ने सोचा हमें भी अरहन्त भगवान् दिख जायेंगे, तो उन्होंने भाँग खाली, उसका नशा चढ़ गया, और अपने गुरु अम्बादास जी की अविनय कर दी, गुरू ने नशा उतरने पर पूँछा, भाँग खाई थी ? तो सही बता दिया, कि अर्हन्त भगवान् के दर्शन के लोभ में खाई थी, अब ऐसी गलती नहीं करेंगे कपट हीन होने पर शिष्य की मूर्खता भी गुरु का हृदय जीत लेती है।

7 विशुद्ध भावना से किया गया कठोर आचरण भी सरलता की श्रेणी में आता है, जैसे माता-पिता या शिक्षक की डाँट।

8 कार्य की सिद्धि माया से नहीं पूर्व पुण्य से होती है।

9 गन्ना सीधा है उसकी मिठास स्वभाविक है, जलेबी टेड़ी है उसकी मिठास कृत्रिम है।

10 **माया तो ठगनी भई, ठगत फिरत संसार।**
जा ठग ने ठगनी ठगी, ता ठग को नमस्कार।।

11 **ज्ञानी आप ठगाइये और न ठगिये कोय।**
आप ठगे सुख ऊपजे, और ठगे दुःख होय।।

12 **बनारसीदास जी ने चोर की पोटली उठा दी-** बनारसी दास जी के घर में चोरी करने आये चोरों ने सारा माल बाँधकर तैयार कर लिया, सब चोरों ने एक दूसरे को पोटली उठा दी, अन्त में एक चोर को पण्डित जी ने स्वयं पोटली उठवा दी, चोर घर पर गये, उनकी माँ ने पूँछा कि आज कहाँ पर डांका डाला, पता चला कि बनारसी दास के घर में डांका डाला है, तो माँ ने कहा की सरल स्वाभावी पण्डित जी का माल अपन को नहीं पचेगा, अतः सारा माल वापस करवा दिया।

13 **डाकू खड़गसिंह ने बाबाभारती** का घोड़ा अपाहिज का भेष धारण कर मदद के बहाने छुड़ा लिया, बाबाभारती ने डाकू खड़गसिंह से कहा कि तूने अपाहिज का वेश बनाकर घोड़ा लिया है, ये छल है ऐसा किसी से मत कहना नहीं तो कोई भी गरीब अनाथ अपाहिज लोगों पर विश्वास नहीं करेगा। यह बात सुनकर रात भर डाकू को नींद नहीं आई, और सुबह आकर उसने घोड़ा वापिस कर दिया।

14 **धन की नहीं साफ़ नियत की कमी है-** एक किसान बहुत ईमानदार था, इसलिए नगर में उसकी बहुत इज्जत थी, दैवयोग से उसका देहावसान हो गया, उसका लड़का पिताजी की तेरहवी के लिए सेठ जी के यहाँ उधार पैसे लेने गया, सेठ जी ने पिताजी की छवि के कारण पैसे दे दिए, पैसे लेकर उसके मन में आया की यदि मैं सेठ जी के पैसे नहीं दूँगा तो क्या कर लेंगे, और आकर रास्ते में वृक्ष के नीचे सो गया, पैसे टोपी में रक्खे थे वह हवा चलने से उड़ गयी और भेंस ने उसके ऊपर गोबर कर दिया, जब सो कर उठा तो टोपी नहीं मिली तो वह घबरा गया, इधर-उधर ढूँढने लगा, जब नहीं मिली तो परेशान हो गया, निराश हो कर सेठ जी के पास पुनः गया, तो सेठ जी को उसकी हालत देखकर दया आ गयी, और उसको फिर से पैसे दे दिए, तब उसके मन में आया की मैं सेठ के बारे में कितना गलत सोच रहा था, सेठ जी कितने दयालु है, विना कुछ लिए दुबारा पैसे दे दिए, अब मैं सेठ जी का बिलकुल कर्ज नहीं रखूँगा, और कुछ दिन बाद किसी काम से उसी स्थान पर गया जहाँ उसके पैसे गुम हुए थे, वर्षा के कारण गोबर

बह गया था जिससे उसकी टोपी मिल गयी, आकर उसने अपनी माँ को सारी बात बताई, तो माँ ने कहा बेटा धन की कमी नहीं साफ़ नियत की कमी है।

त्रिया चरित्र माया का कुफल

15 मगध देश के राजगृह नगर में राजा सङ्ग्रामशूर राज्य करते थे, उनकी रानी का नाम कनकमाला था, उसी नगर में सेठ वृषभदास रहता था, जो महान सम्यग्दृष्टि था, पञ्चगुणों से सहित था, परम धार्मिक था और सम्पूर्ण लक्षणों से सहित था, जैसा कि कहा है

''पात्रे त्यागी गुणे रागी, भोगे परिजनैः सह।
शास्त्रे बोद्धा रणे योद्धा, पुरुषः पञ्च लक्षणः।।''

16 जो योग्य पात्र में त्याग करने वाला हो, 2.गुणों में राग करने वाला हो, 3.भोग में परिजनों के साथ रहता हो, 4.शास्त्रों का ज्ञाता हो और 5.युद्ध में योद्धा हो वही पाँच गुणों को धारण करने वाला पुरुष कहलाता है।

उस सेठ की स्त्री का नाम जिनदत्ता था, वह जिनदत्ता भी परम धार्मिक, सम्यक्त्वादि गुणों से सहित, दक्षता आदि गुणों के समूह से मूर्तिमान, लक्ष्मी के समान तथा समस्त लक्षणों से युक्त थी, जैसा कि कहा है-

आज्ञा विधायिनी तुष्टा, दक्षा साध्वी विचक्षणा।
एभिरैव गुणैर्युक्ता, श्रीरेव स्त्रीर्न संशयः।।

1.जो आज्ञा कारिणी हो, 2.सन्तुष्ट हो, 3.दक्ष हो, 4.साध्वी हो, 5.पतिव्रता हो तथा 6.विदुषी हो इन गुणों से युक्त स्त्री लक्ष्मी ही है इसमें संशय नहीं है।

जिनदत्ता यद्यपि इस प्रकार के गुणों से विशिष्ट थी, परन्तु बन्ध्यात्व नामक दोष से युक्त थी, किसी भी उपाय से उसको पुत्र नहीं हुआ था, एक दिन अवसर पाकर उसने अपने पति से कहा ! पुत्र के विना कुल सुशोभित नहीं होता है, तथा वंश का विच्छेद भी हो जायगा, इसलिए सन्तान की वृद्धि के लिए आप दूसरा विवाह करने योग्य हैं, जैसा कि कहा है-

तारुणं लावणं पिय, पिम्मं भूसणाई सम्भारो।
सव्वो पलाल सरिसो, एक्कं ण विणा सुपुत्तेण।।

जवानी, लावण्य, प्रेम, आभूषण इत्यादि सभी सुपुत्र के विना भूसा के सामान है।

नागो भाति मदेन कं जलरुहैः, पूर्णेन्दुना शर्वरी,
वाणी व्याकरणेन हँसमिथुनै, र्नद्यः सभा पण्डितैः।

शीलेन प्रमदा जवेन तुरगो, नित्योत्सवै र्मंदिरं,
सत्पुत्रेण कुलं नृपेण वसुधा, लोकत्रयं धार्मिकैः।।

1.हाथी की शोभा मदजल से है, 2.पानी की शोभा कमलों से, 3.रात्रि की शोभा पूर्ण चन्द्रमा से, 4.वाणी की शोभा व्याकरण से, 5.नदी की शोभा हँस युगल से, 6.सभा की शोभा विद्वानों से, 7.स्त्री की शोभा ब्रह्मचर्य से, 8.घोड़े की शोभा वेग से, 9.मन्दिर की शोभा नित्य होने वाले उत्सवों से, 10.कुल की शोभा सुपुत्र से, 11.पृथ्वी की शोभा राजा से और 12.तीनों लोकों की शोभा धर्मात्माओं से होती है।

जैसा कि कहा है-

संसारश्रान्त जीवानां, तिस्त्रो विश्राम भूमयः।
अपत्यं च कलत्रं च, सतां सङ्गतिरेव च।।

संसार से थके हुए जीवों के लिए सन्तान, स्त्री और सज्जनों की सङ्गति ये तीन विश्राम की भूमियाँ हैं।

सेठ ने कहा ! यह शरीर और सभी वस्तुओं को अनित्य देखकर जो भोगों का अनुभव करता है, वह अविवेकी है। सत्तर वर्ष की उम्र में विवाह करना महा मोह का परिचायक है, हँसी होगी और लोकविरुद्ध होगा, स्त्री ने कहा- हे स्वामिन् ! यदि भोगों के राग के वशीभूत हो ऐसा अपराध किया जाता है तो वह हँसी का कारण होता है, परन्तु सन्तान की वृद्धि के लिए ऐसा करना दोष नहीं है, इस प्रकार स्त्री के कहने पर सेठ ने बड़ी कठिनाई से दूसरा विवाह करना स्वीकृत कर लिया, उसी नगर में रहने वाले चाचा जिनदत्त, चाची बन्धुश्री की पुत्री कनकश्री से सेठानी ने अपनी सपत्नी बनाने के लिए याचना की, परन्तु दोनों ने कह दिया कि सौत के ऊपर पुत्री नहीं दी जाती है, जिनदत्ता ने कहा ! भोजन का समय छोड़कर मैं कनकश्री के घर नहीं आऊँगी, '**जिन मन्दिर में ही रहूँगी**' ऐसी शपथ कर उसने कनकश्री की याचना की, उसके माता-पिता ने उसे दे दिया, तदनन्तर जिनदत्ता सेठानी धीरे-धीरे घर का सब भार सपत्नी के हाथ में सौंप कर दिन-रात धर्म में तत्पर रहने लगी, वह घर की कुछ भी चिन्ता नहीं करती थी, कालक्रम से कनकश्री के पुत्र हो गया, इस प्रकार जिनदत्ता जिनमन्दिर में और दम्पत्ति अपने घर में सुख से रहने लगे, एक दिन कनकश्री अपनी माता के घर गयी, माता ने उससे पूँछा कि हे पुत्री ! अपने पति के साथ सुख का अनुभव करती हो या नहीं ? पुत्री ने कहा हे मातः ! मेरा पति मेरे साथ वार्तालाप भी नहीं करता, काम-भोग की तो बात ही क्या ? दूसरी बात यह है कि मुझे सपत्नी के ऊपर विवाह कर सुख की बात क्यों पूँछती हो, सिर का मुण्डन कराकर पीछे नक्षत्र और पानी पी कर जाति पूँछने के सामान सौत के ऊपर देकर सुख पूँछती हो, कनकश्री ने मायाचार पूर्वक कहा ! मुझे

रञ्च मात्र भी सुख नहीं है, जिनदत्ता ने मेरे पति को सब प्रकार से वश में कर रक्खा है, वे दोनों दम्पत्ति सदा जिन मदिर में रहते हैं, वहीं सुख का अनुभव करते हैं, मध्यान्ह काल भोजन करने के लिए आते हैं, मैं अकेली दुर्बल-शरीर होकर रात्रि में भाग्य की निन्दा करती रहती हूँ, यह सब मिथ्या समाचार कनकश्री ने मायाचार से अपनी माता से कहा, तदनन्तर बन्धुश्री ने कहा रतितुल्य मेरी पुत्री को छोड़कर वृद्धा के साथ मन्दिर में विषय सेवन करता है, काम को धिक्कार हो, और जिनदत्ता से बैर बाँध लिया, एक बार 'जो अनेक अवधूतों से सहित था, हड्डियों के आभूषण, त्रिशूल, डमरु, नूपुर युक्त विचित्र कापालिक देख',अपनी कार्य की सिद्धि इसके द्वारा जानकर, उसे जलेबी युक्त भिक्षा दी, ठीक ही कहा है **'जब तक दान दिया जाता है तभी तक कीर्ति होती है'** अनेक दिन भिक्षा प्राप्त कर योगी ने सोचा! यह माता है, इसका कुछ उपकार करना चाहिए क्योंकि पाँच माताएं एवं पाँच पिता माने गये है-

जनकश्चोपनेता च, यस्तु विद्यां प्रयच्छति।
अन्नदाता भयत्राता, पञ्चैते पितरः स्मृताः।।

1.जन्मदाता, 2.यज्ञोपवीत(दीक्षा प्रदाता) संस्कार करने वाला, 3.विद्या देने वाला, 4.अन्न देने वाला और 5.भय से रक्षा करने वाला ये पाँच पिता माने गये हैं।

राजपत्नी गुरोः पत्नी, मित्रपत्नी तथैव च।
पत्नीमाता स्वमाता च, पञ्चैता मातरः स्मृताः।।

1.राजपत्नी, 2.गुरु पत्नी, 3.मित्र पत्नी, 4.पत्नी की माता एवं 5.स्वयं की माता ये पाँच मातायें मानी गयीं हैं।

कार्यार्थं भजते लोको, न कश्चित् कस्यचित्प्रियः।
वत्सः क्षीरक्षयं दृष्ट्वा, स्वयं त्यजति मातरं।।

संसार में कार्य के लिए कोई किसी की सेवा करता है परमार्थ से कोई किसी का प्रिय नहीं है, दूध का क्षय देखकर बछड़ा स्वयं ही माता को छोड़ देता है।

योगी के पूँछने पर बन्धुश्री ने सारा हाल सुना दिया। योगी आश्वासन देकर चला गया, कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को पूजा की सामग्री लेकर श्मशान में गया, मुर्दे के हाथ में तलवार बाँधकर पूजा की, मन्त्र जापकर बेताली विद्या की आराधना की, मन्त्र के प्रभाव से योगी की आज्ञानुसार बेताली जिनदत्ता को मारने गयी, जिनदत्ता प्रोषधव्रत लिए सम्यक्त्व की भावना युक्त कार्योत्सर्ग से खड़ी थी, शक्तिशाली बेताली ने तीन बार में भी कुछ नहीं कर पाया, तब योगी ने अपनी मृत्यु के डर से कहा दोनों में जो अपराधनी हो उसे मार डालो, सम्यक्त्व, तप और शील आदि गुणों से देव, गुरू, शास्त्र की भक्त जिनदत्ता को मारने में असमर्थ हो उसने कनकश्री को मार डाला, प्रातः बन्धुश्री ने देखा तो राजा के पास

गयी, राजा ने दम्पत्ति को पकड़ने सैनिकों को भेजा, पुण्यदेवी ने कील दिया, दर्शनार्थियों से समाचार जानकर जिनदत्ता ने सोचा पूर्वजन्म का किया अन्यथा नहीं हो सकता, उपसर्ग निवारणार्थ शासन देवी के निमित्त फिर से कायोत्सर्ग किया, जीवन शेष रहेगा तो भोजन करेंगे अन्यथा आजीवन त्याग ऐसा सन्यास लेकर खड़ी हो गयी, कार्योत्सर्ग से प्रभावित हो कर शासनदेवी ने आकर कहा निश्चिन्त रहो विघ्न दूर हो जायेगा, उधर शासन देवी के द्वारा प्रेरित योगी नगर के मध्य कह रहा था, कि हे नगर के लोगों ! बन्धुश्री ने आग्रह कर मेरे द्वारा प्रेरित बेताली विद्या से अपनी पुत्री को मरवा डाला है, कनकश्री मात्सर्य युक्त दुष्ट अभिप्राय वाली थी, शासनदेवी एवं योगी के वचन सुन राजा ने जिनदत्ता का सम्मान किया, शासनदेवी ने पञ्चाश्चर्य किये, राजा ने कहा बन्धुश्री दुष्ट अभिप्राय वाली है इसे गधे पर चढ़ाकर नगर से निकाल देना चाहिए, उसने कहा मैंने अज्ञान से ऐसा किया है मुझे प्रायश्चित दिलाया जाए, राजा ने कहा !

मित्रद्रुहः कृतघ्नस्य, स्त्रीघ्नस्य पिशुनस्य च।
चतुर्णां वयमेतेषाम्, निष्कृतिं नैव शुश्रुमः।।

1.मित्रद्रोही, 2.कृतघ्नी, 3.स्त्री की हत्या करने वाला और 4.चुगलखोर-'निन्दा' करने वाला इन चारों का प्रायश्चित्त हमने नहीं सुना है।

इस प्रकार बन्धुश्री निकाल दी गयी। अत्यधिक पुण्य और पाप का फल इसी लोक में शीघ्र ही दिख जाता है, उसके पाप का फल तुरन्त मिल गया।

भोगे रोगभयं सुखे क्षयभयं वित्तेऽग्निभूभृद्भयं,
दासे स्वामिभयं जये रिपुभयं वंशे कुयोषिद्भयं।
माने म्लान्भयं गुणे खलभयं काये कृतान्ताद्भयं,
सर्वं नाम भयं भवेदिदमहो वैराग्यमेवाभयं।।

1.भोग में रोग का भय है, 2.सुख में क्षय का भय है, 3.धन में अग्नि और राजा का भय है, 4.दास में स्वामी का भय है, 5.विजय में शत्रु का भय है, 6.कुल में कुलटा स्त्री का भय है, 7.प्रतिष्ठा में अपयश का भय है, 8.गुणों में दुर्जन का भय है और 9.शरीर में यमराज का भय है, इस प्रकार सभी वस्तुओं में भय है, परन्तु 10.आश्चर्य है कि वैराग्य भय से रहित है। **'ऐसा विचार कर राजा संग्रामशूर और रानी कनकमाला एवं वृषभदास सेठ और जिनदत्ता सेठानी, एवं मन्त्री आदि सभी ने जिन दीक्षा धारण कर ली'।**

इति आर्जव धर्म समाप्त

★★★

चतुर्थ सोपान- उत्तम शौच धर्म
"लोभ मचाता क्षोभ"

लोभ के प्रकार-

1 सब अपने लिये रोते हैं।

2 जैनों में भी ऐसे लोग हैं, जो न महावीर को न राम को सिर्फ, दौलत राम को मानते हैं।

3 जो साधु वैराग्य को धारण कर लेते हैं उन्हे शौच धर्म होता है।

लोभ से हानि-

1 अग्नि की सङ्गति से लोहा पिटता है और लोभ की सङ्गति से आत्मा पिटती है।

2 लोभी हमेशा भविष्य की चिन्ता में खोया रहता है।

3 सोने को देख कर मन तो भर सकता है, पर पेट नहीं।

4 तृष्णा की खाई खूब भरी, पर रिक्त रही वह रिक्त रही।

5 चीटा-चीटी का इतना तीव्र लोभ होता है, कि उनकी गर्दन अलग हो जाये पर त्वचा नहीं छोड़ते हैं।

6 जिनको पचास वर्ष शास्त्र सुनते हो गये हैं, फिर भी उन्हे धर्म का ज्ञान नहीं हुआ, यह सब अन्याय का धन और अभक्ष्य भक्षण का फल है।

7 गुरू द्रोही, धर्म द्रोही, मित्र द्रोही, कृतघ्नी, विश्वासघाती ये सदा मलिन रहते हैं।

8 कौरवों के मन में उमड़ी सत्ता और साम्राज्य की लालसा महाभारत का कारण बनी।

9 अतीत में जितने झगड़े हुये थे, वे सब लोभ के कारण हुए थे, जैसे कौरव-पाण्डवों का युद्ध, **''नहीं रहे वे लोभी कौरव जूँझ मरे रण में''।**

10 गरीबी नहीं, तृष्णा दुष्कर्मों की जननी है।

11 नीतिकारों के अनुसार राम स्वर्ण मृग के पीछे गये तो सीता हरण हो गया, उसी प्रकार हमारा आत्माराम भी लोभ लिप्साओं के स्वर्ण मृग के पीछे लगा है, अतः सुख शान्ति रूपी सीता खो गयी है।

शौच धर्म से लाभ-

1 **दुनिया में दो ही बड़े, दामोदर अरू दाम। दामोदर बैठे रहें, दाम करे सब काम।।**

2 **पैदा हुये व्यापार सीखा, धन कमा बूढ़े हुये। बन्धुजन को छोड़कर धन, इस जगत से चल दिये।।**

3 **समसंतोसजलेण य, जो धोवदि तिव्वलोहमलपुंजं।**
भोयणगिद्धि विहीणो, तस्स सउच्चं हवे विमलं।।

सन्तोष रूपी जल से जो लोभ रूपी मल को धोता है और भोजन में लालसा रहित होता है, वह शौचधर्म को प्राप्त होता है।

4 **गुणाधिकतया मन्ये, स योगी गुणिनां गुरु।**
तन्निमित्तेऽपि निक्षिप्तं, क्रोधाद्यैर्यस्य मानसं।।
निमित्त मिलने पर भी जो क्रोधादि नहीं करता है, वह गुणों में अधिक होने से गुणियों का भी गुरू है।

लोभ को जीतने के उपाय-

1 **जो दस बीस पचास भये, शत लक्ष करोड़ की चाह लगेगी,**
अरब खरब लो उदय भये तो, धरापति होने की आश लगेगी।
उदय अस्त तक राज्य भयो, पर तृष्णा और ही ओर बढ़ेगी,
सुन्दर एक सन्तोष विना नर, तेरी तो भूख कबहुँ न मिटेगी।।

2 जीवन की विसङ्गति को नियंत्रित करना चाहते हो तो लोभ को नियन्त्रित करो।

3 सन्तोष ही उन्नत धन है।

4 सम्पत्ति की मित्रता पुण्य से है, व्यक्ति से नहीं।

5 पेट भर सकता है, पेटी नहीं।

6 लाभ के बाद लोभ होता हैं, इसलिए सन्तोष रुपी अमृत का पान करना चाहिए।

7 राम के भाई भरत ने खड़ाऊ रखकर राज्य किया था।

8 समय से पहले किस्मत से ज्यादा किसी को नहीं मिलता हैं।

9 जर, जोरू, और जमीन झगड़े की जड़ तीन।

10 यदि सम्मान घटा कर आय बढ़ती है तो उस धन से निर्धनता ही श्रेयस्कर है।

11 जैसे तुषारपात से कमल मुरझा जाते हैं वैसे ही लोभ कषाय के उदय में सम्यग्दर्शनादि गुण नष्ट हो जाते हैं।

12 राग-द्वेष खून-मांस से भी अपवित्र है, क्योंकि खून-मांस के रहते केवलज्ञान हो जाता है, पर राग-द्वेष के रहते नहीं हो सकता है।

13 सनतचक्रवर्ती के पास देव जब उनकी सुन्दरता के दर्शनार्थ आये थे तब उतना शौच धर्म नही था, जितना मुनि अवस्था में कोढ़ हो जाने पर था।

14 बहिरात्मा देह की उज्ज्वलता, स्नानादि को शौच धर्म कहते हैं, शौच धर्म आत्मा को उज्ज्वल

करने से होता है।

15 इन्द्रिय विषय का त्याग, तप का धारण, ब्रह्मचर्य का पालन, मद का त्याग, श्रुत का अभ्यास, मिथ्यात्व और कषाय के त्याग से शौच धर्म होता है।

16 गुणों की प्रशंसा, निरन्तर तत्त्वों का चिन्तन और पापों से भय होना शौच धर्म है।

17 हिंसक, परधनहर्ता, परस्त्री गामी व्यक्ति यदि करोड़ों तीर्थों में स्नान, करे करोड़ों तीर्थ वन्दना करें, करोड़ों का दान करें, करोड़ों वर्ष तप करे, शास्त्रों का अध्ययन करे तो भी शौच धर्म नहीं हो सकता है।

18 साफ़ और स्वच्छ दर्पण में उभरने वाला प्रतिबिम्ब स्वच्छ होता है, उसी प्रकार स्वच्छ हृदय में धर्म अवतरित होता है।

19 बाहर की नहीं मन की सफाई सबसे बड़ी है, अतः मन को साफ करने का नाम शौच धर्म है।

20 शरीर को सजाने का प्रयत्न तो मल भरे मटके को फूलों से सजाने का प्रयत्न जैसा है।

21 लोगों को समझाते हैं, धन नश्वर है, पर खुद के लिये धन ही ईश्वर है।

22 लोभ की तासीर आशाओं के बढ़ाने की होती है।

23 मन आकाङ्क्षाओं में जीता है, तन आवश्यकताओं में जीता है।

24 ये शरीर कितना अपवित्र है, कितना भी **'नहाओ, इत्र लगाओ'** कुछ घण्टों में ज्यों का त्यों मैला और बदबूदार हो जाता है, लोग फिर भी शरीर से राग करते हैं।

25 मनुष्य जन्म बड़ी दुर्लभता से मिलता है और लोग सुलभता से नष्ट कर देते हैं।

26 यश की इच्छा से दान या खाने-खिलाने वालों को लोग निर्लोभी समझ लेते हैं पर यश, रूप, नाम, काम की इच्छा भी लोभ है।

27 लोभी को मक्खी चूसने में ग्लानि नहीं और रक्त बहाने में दया नहीं आती है।

28 पैसों की कीमत गाय के सामने घास के बराबर भी नहीं है, पर मनुष्य पैसों के लिए लड़ता-मरता है क्योंकि उससे यश रूप तथा पाँच इन्द्रियों के विषय मिलते हैं।

29 नाम के लोभी कहते हैं एक दिन मरना है, कुछ करके जाओ तो नाम अमर रहेगा, आत्मा को विनाशीक और नाम को अमर समझता है, जबकि एक नाम के अनेक लोग होते हैं।

शुचि दोहावली-

30 **पूत सपूत तो का धन सञ्चय, क्षण में लाख कमा लेगा।**
पूत कपूत तो का धन सञ्चय, क्षण में लाख गँवा देगा।।

31 काया तो बूढ़ी भई, तृष्णा भयी जवान। ऐसे में कैसे बने, निज आतम कल्याण।।

32 कनक-कनक तै सौ गुनी, मादकता अधिकाय। यही खाए बोरात नर, वही पाय बोराय।।

33 लोभ पाप का बाप है, क्रोध क्रूर यमराज। माया विष की वेलरी, मान विषम गिरिराज।।

34 तीन थान सन्तोष कर, धन भोजन अरु दार। तीन तोष न कीजिये, दान पठन तपाचार।।

35 प्रभु जी इतना दीजिये, जामे कुटुम्ब समाय। मैं भी भूखा न रहूँ, साधु न भूखा जाय।।

36 कर्म कमण्डलु कर गहे, ज्ञानी मन पछताय। वापी-कूप-तडाग में, बूँद न अधिक समाय।।

37 आतम को हित है सुख, सो सुख आकुलता विन कहिये।
विषयभोग धन बिन नहीं याते, धन ही धन उपजइये।।

38 जिसके श्रृङ्गारों में मेरा यह महँगा जीवन घुल जाता।
अत्यन्त अशुचि जड़ काया से इस चेतन का कैसा नाता।।

39 केशर चन्दन पुष्प सुगन्धित वस्तु देख सारी। देह परसतें होए अपावन निश दिन मल जारी।।

40 धर हिरदय सन्तोष करहु तपस्या देह सो। शौच सदा निर्दोष, धरम बड़ो संसार में।।

41 जब अपना मन पवित्र होता है, हर चेहरे पर अपना चित्र होता है।
फिर दुनिया में कहीं भी चले जाओ, जो भी मिलता है अपना मित्र होता है।।

42 गोधन गजधन बाजधन, और रतन धन-धान। जब आवे सन्तोष धन, सब धन धूलि समान।।

43 चाह गयी चिन्ता गयी, मनुआ बेपरवाह। जिन्हें कछु नहीं चाहिये, वे शाहन के शाह।।

44 छोटी सी जिन्दगी बड़े-बड़े अरमान। पूरे न हो पायेंगे निकल जायेगें प्राण।।

45 अगनि, चोर, भूपति, विपति, डरत रहै धनवान। निर्धन नींद निशङ्क ले, माने का की हानि।।

46 दिन कब बीते हैं, सिर्फ हम बीत जाते हैं। घड़े फूटे भरे हों तो, खुदरीत जाते हैं।।

47 जो अपनी जिन्दगी को, अपनी मीत बना लेते हैं।
वे जन्म को तो छोड़िये, मौत को भी जीत बना लेते हैं।।

शुचि संस्कृत श्लोक पाठ-

48 कर्मबध्नाति यज्जीवो, धनाशाकश्मलीकृतः।
तस्य शान्ति र्यदिक्लेशाद्, बहुभिर्जन्म कोटिभिः।।

धन की आशा से मलिन चित्त जीव जो कर्म बांधता है, उसकी शान्ति करोड़ों जन्म की तपस्या से होती है।

49 **आशागर्तः प्रतिप्राणी, यस्मिन् विश्वमणूपमं।**
कस्य किं कियदायाति, वृथा वो विषयेशिता।।
प्रत्येक प्राणी के हृदय में तृष्णा रूपी गड्ढा इतना बड़ा है, कि तीन लोक की सम्पत्ति एक प्राणी के गड्ढे में डाल दी जाए तो वह परमाणु के बराबर दिखेगी तब किसको क्या और कितना मिलेगा अतः विषयों की आशा व्यर्थ है।

50 **परिभोगोपभोगत्वं, जीवितेन्द्रिय भेदतः।**
चतुर्विधस्य लोभस्य, निर्वृतिः शौचमुच्यते।।
परिभोग, उपभोग, जीवन और इन्द्रिय विषय इन चार प्रकार के लोभ के त्याग से शौच धर्म होता है।

51 **आत्मा नदी संयमतोयपूर्णा, सत्यावहाः शील तटाः दयोर्मिः।**
तत्रावगाहं कुरू पाण्डुपुत्र !, न वारिणा शुद्धयति चान्तारात्मा।।
महाभारत के उपरान्त, पाण्डवों ने स्नान करके शुद्ध होने की भावना व्यक्त की, तब श्री कृष्णजी उपदेश देते हैं, कि आत्मा नदी हो, संयम का जल हो, सत्य का प्रवाह हो, ब्रह्मचर्य का तट हों, दया की लहरें हों, ऐसी नदी में हे पाण्डु पुत्रों ! अवगाहन करो तो अन्तर आत्मा शुद्ध होगी, जल के स्नान से आत्मा शुद्ध नहीं हो सकती है।

52 **मा धाव मा धाव विनैव दैवं, नो धावनं साधनमस्ति लक्ष्म्यः।**
चेद्धावनं साधनमस्ति लक्ष्म्यः ,श्वा धावमानोऽपि लभेत् लक्ष्मीं।।
विना भाग्य के मत दौड़ो, मत दौड़ो, दौड़ना लक्ष्मी प्राप्ति का साधन नहीं है, यदि दौड़ने से लक्ष्मी मिलती तो फिर दौड़ने वाले कुत्ते को भी लक्ष्मी मिलना चाहिए।

53 **किमिराय चक्क तणुमल, हरिद्वराएण सरसओ लोहो।**
णारय तिरिय णरामर, देवेसुप्पायओ कमसो।।
पक्के रङ्ग की तरह जिसका लोभ होता है वह नरक गति में जाता है, रथ के चक्र के मल की तरह जिसका लोभ होता है वह पशुगति में जाता है, शरीर के मेल की तरह जिसका लोभ होता है वह मनुष्य गति में जाता है और हल्दी के रङ्ग की तरह जिसका लोभ होता है वह देवगति में उत्पन्न होता है।

54 **अणथोवं वणथोवं, अग्गि थोवं कसायथोवं च।**
णहु ये बीससियव्वं, थोबं पि हुतं बहुहोई।।

कर्ज, घाव, अग्नि और कषाय इनको कभी थोड़ा नहीं समझना चाहिए क्योंकि ये बढ़ते-बढ़ते बहुत हो जाते हैं।

55 **कोहो पीइं पणासेइ, माणो विणय नासणो।**
माया मित्ताणि नासेइ, लोहो सव्वं विणासणो।।
क्रोध प्रीति का, मान विनय का, माया मित्रता का और लोभ सबका विनाश कर देता है।

56 **विहाय ये निर्वृतिमव्यापायां, बहुव्यापायां वृणुते विभूतिं।**
हित्वा हिमं ते शुचि चन्दनाम्भः, पिबन्त्यपः मूढ़धियः सपङ्काः।।
आनन्द दायक मोक्ष को छोड़कर कष्टकारी सांसारिक विभूति को जो स्वीकार करते हैं, वे चन्दन युक्त जल को छोड़कर कीचड़ युक्त जल को पीते हैं।

57 **अङ्गं गलितं पलितं मुण्डं, दशनविहीनं जातं तुण्डं।**
वृद्धो याति गृहीत्वा दण्डं, तदपि न मुञ्चति आशा पिण्डं।।
शरीर शिथिल हो गया है, बाल सफेद हो गए हैं, सारे दाँत गिर गए हैं, वृद्धावस्था आ गई है, हाथ में डण्डा ले रखा है फिर भी तृष्णा पीछा नहीं छोड़ती है।

58 **सङ्गात्का मस्ततः कोधस्, तस्मात् हिंसा तथाशुभं।**
तेन श्वाभ्रीगतिस्तस्यां, दुःखं वाचामगोचरं।।
परिग्रह से विषयों की इच्छा, उससे क्रोध, क्रोध से हिंसा, हिंसा से पाप, पाप से नरक, नरक में वचनातीत कष्ट प्राप्त होते हैं।

59 **तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णा, कालो न यातो वयमेव याताः।**
भोगा न भुक्ताः वयमेव भुक्ताः, तपो न तप्तं वयमेव तप्ताः।।
तृष्णा जीर्ण नहीं हुई हम ही जीर्ण हो गए, काल बीता नहीं हम ही बीत गए, भोग नहीं भोगे हम ही भुक्त हो गए, तप नहीं तपा हम ही सन्तप्त हुये।

60 **अर्थार्थी जीवलोऽकोयं, श्मशानमपि सेवते।**
करोति च महानर्थान्, येन प्राप्नोति दुर्गतिं।।
धन के इच्छुक प्राणी श्मशान में भी सेवा करते हैं और अनेकों अनर्थों को करते हैं जिससे दुर्गति को प्राप्त होते हैं।

शुचि कथानक-

61 **कड़ा के लोभ में जान गवायी-** एक व्याघ्र ने एक राहगीर से कहा कि मेरे पास एक सोने का

कड़ा है, वह तुम्हे देना चाहता हूँ। पथिक ने कहा तुम्हारा हमे विश्वास नहीं, तब उसने कहा कि मेरे दाँत टूट गये हैं, नख गिर गये हैं, मैं बूढ़ा हो गया हूँ, अब इस कड़ा को दान देकर मुक्ति चाहता हूँ, पथिक उसके माया जाल में फँस गया, बेचारा जैसे ही निकट आया व्याघ्र ने उसे मार डाला।

62 **दो कदम पहले सूर्य अस्त-** राजा ने एक गरीब को वरदान दिया कि जितनी दूर तुम दौड़ सको उतनी जमीन तुम्हारी होगी, लेकिन जहाँ से दौड़ शुरू करते हो, सूर्य अस्त के पहले लौट कर वहीं आना है, लौट के आया लेकिन दो कदम पहले ही जीवन का सूर्य अस्त हो गया।

63 **राजा नीड़ासन ने देवी से वरदान माँगा**, कि मैं जिसको छू लूँ वह सोने का हो जाय, वह जिसे छूता था वह सोने का हो जाता था, यहाँ तक स्थिति हो गयी कि खाने की सामग्री भी सोने की हो गयी, तब वह घबराया कि क्या खाएँ, अन्त में उसे वरदान बापस देना पड़ा तब शान्ति हुई।

64 **लोभी भाई ने भाई की आँखें फोड़ी-** दो सगे भाई थे, लेकिन गरीब थे, जङ्गल से लकड़ी लाते और बेच कर उदर पूर्ति करते थे, बड़ा भाई ईमानदार था, सरल था उसकी लकड़ी अच्छे दामों में जल्दी बिक जाती थी, लेकिन छोटे भाई को इससे बडा दुःख होता था, एक दिन उसने सोचा कि बड़े भाई को मार डाला जाय, तो फिर मेरी लकड़ी अच्छे दामों में बिकेगी। दूसरे दिन जङ्गल गये, भीषण गर्मी थी छोटे भाई ने कहा भैया पहले आपकी तूमड़ी का पानी खर्च कर लेते हैं, बाद में हम पिलाते रहेंगे। भैया तो भोला था, वह कुछ समझा नहीं और वैसा ही किया लकड़ी इकट्ठी करने के बाद भाई को प्यास लगी, पानी माँगा तो उसने कहा कि हम पहले आपकी एक आँख फोड़ेंगे तब पानी देंगे, बड़े भाई ने तो सोचा भी नहीं था कि ये ऐसा पाप भी कर सकता है, वह आँखें फोड़ कर चला गया, जिससे बड़े भाई को दिखना बन्द हो गया, अन्धा भाई जङ्गल में भटकते-भटकते मर गया।

65 **विप्र का श्रीफल-** एक ब्राह्मण को श्रीफल खरीदना था, दुकानदार ने उसका पाँच रुपया बताया, उसने पूँछा इससे कम में नहीं दोगे ? दुकानदार ने आगे की दूकान में भेजा, वहाँ पर भी और कम में माँगने लगा, उसने कहा आप श्रीफल के बगीचे में चले जाये, वहाँ निःशुल्क मिल जायेगा, वह श्रीफल से लटक गया, ऊँट वाले से कहा ! भैया हम तुम्हें पचास रूपये देगें हमें उतार लो, ऊँट खड़ा किया, उसको पकड़ा इतने में ऊँट आगे बढ़ गया। इसी तरह घोड़ा वाला आया, तो दोनों ने कहा हम दोनों पचास-पचास रुपये देंगे, हम लोगों को उतार लो, और वह भी लटक गया, अब दोनों ने विप्र से कहा, तुम अच्छे से पकड़े रहना, हम दोनों पाँच-पाँच सौ

रूपये देंगे, अब विप्र नोटों की खुशी में भूल गया, और हाथ छूट गये तीनों गिरे और, काल के गाल में समा गये।

66 **लोभ पाप का बाप बखाना-** एक विप्र बनारस से पढ़कर आया, पत्नि ने प्रश्न किया कि **'पाप का बाप कौन है'** ? उसने कहा सब कुछ पढ़ा, लेकिन ये पढ़ा ही नहीं, पत्नि ने कहा फिर से जाओ और पढ़कर आओ, रास्ते में वेश्या से पूँछा, उसने कहा मैं इसका उत्तर जानती हूँ मेरे घर चलो, उसने कहा पहले में आपका आतिथ्य करना चाहती हूँ आप भोजन कर लें, विप्र बोला मैं आपके यहाँ भोजन नहीं कर सकता, वेश्या ने कहा मैं आपको सौ रुपए दूँगी आप भोजन सामग्री ले लें, विप्र तैयार हो गया, तब उसने कहा मैं भोजन बना देती हूँ दो सौ रुपए ले लेना, विप्र तैयार हो गया, अन्त में उसने कहा एक ग्रास मेरे हाथ से खा लो पाँच सौ रूपए ले लेना मेरे जीवन के सारे पाप धुल जायेंगे, विप्र ने सोचा इसने बनाया तो है ही अब इसके हाथ से एक ग्रास खाने में क्या जाता है, यहाँ कोई देख भी नहीं रहा है, पैसों के लोभ से विप्र उसके हाँथ से भोजन करने के लिए तैयार हुआ तो वेश्या ने एक चाँटा मारा और कहा यही लोभ, पाप का बाप है।

67 मृत्यु शय्या पर पड़े पिता को देखकर बेटे सोचते हैं, कब इनके प्राण निकलें और हम सारी सम्पत्ति बटोर लें, और पिता सोचता है कि जब तक मैं जिन्दा हूँ तब तक कोई मेरी सम्पत्ति को छू नहीं सकता, दोनों तरफ लोभ है।

68 **धूर्त ने कञ्जूस को ठगा-** धूर्त ने कञ्जूस सेठ से कहा कि हमारे यहाँ मेहमान आये हैं, बर्तन दे दो, सेठ ने बर्तन दे दिये, धूर्त बर्तन वापस करने आया तो दस के स्थान पर बीस बर्तन ले आया, सेठ ने पूँछा ये कहाँ से आये, उसने कहा ये सब बर्तन गर्भवान थे हमारे यहाँ जाकर इन ने बच्चे दे दिये, सेठ प्रसन्न हुआ और सभी बर्तन रख लिये कुछ समय बाद सोने-चाँदी के बर्तन लेने आया सेठ ने दे दिये, अब कुछ दिन बाद सिर मुड़ाकर आया और बोला सारे बर्तन मर गये, हमने उनका संस्कार किया एक हजार रूपये खर्च हुये। सेठ ने कहा बर्तन मरते हैं क्या ? उसने कहा जब बर्तन बच्चे देते हैं तो मरते भी हैं। धूर्त ने सभी सोने-चाँदी के वर्तन भी रख लिए और पञ्चायत बैठाकर एक हजार रूपये भी ले गया।

69 **सोने का बैल चाहिये-** एक व्यक्ति के पास समस्त जानवरों के सोने की जोड़ी थी, पर सोने का बैल केवल एक ही था, अतः ठण्ड की परवाह न करता हुआ नदी में लकड़ी पकड़ रहा था, ताकि लकड़ी बेंचकर सोने का बैल बनवा सके, रानी ने महल से देखा इतना गरीब भी हमारे

राज्य में है, राजा ने उसे बुलाया और पूँछा क्या चाहते हो, उसने कहा एक बैल, राजा ने कहा जाओ हमारे बैलों में से जो बैल पसन्द हो वह ले लो, वह गया पर कोई भी बैल पसन्द नहीं आया, उसको सोने का बैल चाहिये था, ये है तीव्र लोभ।

70 **बालक का पवित्र हृदय-** कौशाम्बी नगरी के राजा जयपाल के राज्य में समुद्रदत्त सेठ और समुद्रदत्ता सेठानी रहती थी, उनका सागरदत्त नाम का एक सुन्दर बालक था, पास में गोपायन दरिद्री पड़ोसी था, उसका सोमक नाम का एक पुत्र था, जो सागरदत्त के साथ हमेशा खेला करता था, एक दिन स्वर्णाभूषणों से युक्त सागरदत्त को देखकर गोपायन ने सागरदत्त को मारकर घर में गाड़ दिया, सेठ सेठानी पुत्र वियोग से बड़े दुःखी हुए, एक दिन सेठानी ने सोमक से पूँछा ! बेटा तुम्हारा मित्र सागरदत्त कहाँ है, उसने कहा ! हमारे घर में गड़ा है, सेठानी सुनकर मूर्च्छित हो गयी, जाकर देखा तो सागरदत्त का शव मिला, तब गोपायन को मृत्यु दण्ड मिला। मरकर नरक गया।

71 **एक लाख का नाम सुनते ही डॉक्टर को अटैक-** एक नगर में धनी सेठ को बीमार देखकर डॉक्टर ने सोचा पैसा निकालने का मौका अच्छा है। डॉक्टर ने कहा सेठ जी यहाँ ठीक नहीं हो सकते, लड़के ने पचास हजार रूपये दिए, डॉक्टर ने कहा इतने में काम नहीं होगा तो उसने पचास हजार और दिये, एक लाख आते देख डॉक्टर को अटैक आ गया, डॉक्टर मर गया सेठ ठीक हो गया।

72 **जवानी का लोभ-** लड़का गड्ढे में गिर गया, निकलते नहीं बन रहा था, एक बुड्ढे से कहा कि इस गड्ढे का बड़ा चमत्कार है, जो यहाँ आता है वह जवान हो जाता है, बुड्ढा कूद गया, लड़का उसके कन्धे पर बैठकर बाहर आ गया और बोला आप जवान होते रहिए, इसी तरह ज्ञानी संसार की दशा देखकर निकलता है और अज्ञानी संसार रूपी गड्ढे में पड़ जाता है।

73 **भोपाल के चाचा भतीजे-** सुन्दर का भतीजा पवन था, जिसकी दुकान अच्छी चलती थी, जिससे दुःखी होकर उसने किराये के गुण्डों से भतीजे को मारवा डाला, और स्वयं जेल में सड़-सड़ कर मर गया।

74 **ईमानदारी की मिसाल-** एक व्यक्ति घर बेंचकर अन्य स्थान पर रहने के लिए चला गया, जिसने घर खरीदा था उसे उसी घर में धन मिला, लौटाने आया तो उस व्यक्ति ने कहाअब हमने घर बेंच दिया, हमारे भाग्य में होता, तो हम इतने बरस से यहाँ रह रहे थे, पहले क्यों नहीं मिला, राजा के पास न्याय गया, उसी समय सिकन्दर आया था, वह देखकर सोचने लगा अरे भारत में

इतने ईमानदार लोग रहते हैं ?

75 **एक व्यापारी ने रायचन्द्र जी से हीरा-** जवाहरात का सौदा तय किया, तब भाव गिर गया, व्यापारी अत्यन्त दु:खी होकर मरने लगा तब रायचन्द्र जी ने लोभ छोड़कर व्यापारी को बचाया, और उसका बयाना वापस कर दिया।

76 **साधु का उपदेश-** राजा के आग्रह से साधु ने उपदेश देने महल में आने को कह दिया। साधु महल में गये, राजा ने बढ़िया खीर आदि तैयार की, साधु के कटोरे में धूल थी, राजा ने कटोरे में खीर नहीं दी, साधु जङ्गल जाने लगे तब राजा ने कहा कि ! आपने न उपदेश दिया न आहार किया, तब साधु बोला कि ! राजन आपने कटोरे में खीर क्यों नहीं दी, राजा ने कहा ! उसमें धूल थी कैसे देता, साधु ने कहा ! इसी तरह तुम्हारी आत्मा में कषाय रूपी धूल है, तो उपदेश कैसे दूँ, **'पच्चीस कषाय राग-द्वेष में गर्भित हो जाती है'** वे आपके अन्दर हैं।

77 **एक सेठ अपनी सम्पत्ति का लेखा जोखा कर रहा था,** तो सातपीड़ी तक के लिए सम्पत्ति थी, पर आठवीं पीढ़ी की चिन्ता में सेठ मूर्छित हो गया, मूर्छा समाप्त होने पर किसी ने कहा कि अपने गाँव के ब्राह्मण को भोजन सामग्री दे आओ, तो तुम्हारी आठवीं पीड़ी की चिन्ता समाप्त हो जायेगी, वह भोजन सामग्री देने गया, तो ब्राह्मण बोला की आज के लिए तो मेरे पास भोजन है, तो सेठ बोला कल के लिए काम आएगा, साधु ने कहा ! कल पीठ पीछे है, कल के लिए सङ्ग्रह करना पाप है। तब सेठ की आँखें खुली, ये तो कल की चिन्ता नहीं करता और मैं आठवीं पीड़ी की चिन्ता कर रहा हूँ।

78 **आगे-आगे पति जा रहा था और पीछे-पीछे उसकी पत्नी,** रास्ते में सोने की मोहरें मिलीं, पति ने उस पर धूल डाल दी, ताकि पत्नी का मन न बिगड़ जाये, पीछे से आ रही पत्नी ने कहा क्या कर रहे हो, क्यों मिट्टी पर मिट्टी डाल रहे हो, अर्थात् पत्नी पति से ज्यादा निरीह थी क्योंकि उसकी दृष्टि में सोने और मिट्टी में भेद नहीं था।

79 **कडार पिङ्ग-** कडार पिङ्ग चोरी की हुई सोने की शलाकाएँ खरीदता था, एक दिन वह अपनी लड़की के यहाँ गया और लड़के से बोल गया कि शलाकाएँ ले लेना, लड़के ने चोरी की जानकर नहीं ली। पिता लड़की के यहाँ से वापस आया शलाकाएँ न देख कर अपने पैर काट लिये और मरकर अपने ही खजाने में सर्प बनकर रक्षा करने लगा, लडके ने देखा तो उस सर्प को मार डाला, सर्प मरकर नरक में चला गया।

80 लोभी अपमान सहन करता है, कुछ मिलने की आशा हो तो गालियां भी सुनता है, वास्तव में

सन्तोषी ही धनी है।

81 पञ्चेन्द्रिय के चेतन विषय का राग और अचेतन पदार्थ के राग को लोभ कहा जाता है, शुभ राग को उदात्त प्रेम या वात्सल्य आदि नाम देते हैं।

82 लोभ अन्त में नष्ट होता है, अतः सभी कषायों के अभाव में शौच धर्म होता है।

83 अस्नान व्रती को शौच धर्म होता है, नहाने वालों को नहीं।

84 **'प्राणी सदा शुचि शील जप तप ज्ञान ध्यान प्रभावते'** प्राणी ब्रह्मचर्य, जप, तप, ज्ञान-ध्यान आदि से शुद्ध होता है, न की मात्र नहाने से।

इति शौच धर्म समाप्त

★★★

5 वाँ सोपान-सत्यधर्म
"वाणी को बाण नहीं वीणा बनायें"

सत्य और असत्य का स्वरूप-

1 भारतीय परम्परा में सत्य को नारायण कहते है, '**सच्चं खु भयवं**' सत्य ही भगवान है।

2 मन, वाणी और व्यवहार में सत्य को स्थापित करना ही सत्य नारायण कहा जाता है।

3 सत्य भावना, सत्यवाणी, और सत्यव्यवहार की त्रिवेणी ही सत्याचरण है।

4 सत्य धर्म शब्दों से नहीं कहा जाता, सत्य तो सागर से गहरा और आकाश से भी बड़ा है।

5 सत्याणुव्रत- स्थूल झूठ का त्याग, सत्यमहाव्रत- स्थूल व सूक्ष्म दोनों झूठ का त्याग, भाषासमिति- हित-मित-प्रिय वचन जिसमें बोले जाते हैं उसे भाषा समिति कहते हैं, '**जग सुहित कर सब अहित हर श्रुति सुखद सब संशय हरें**'।

6 शान्ति है अभिप्राय जिनका ऐसे भगवान् के निर्दोष वचन जितने शीतल होते हैं, उतना शीतल न चन्द्रमा होता है, न चन्दन, न गङ्गा का जल और न ही स्फटिक का हार शीतल होता है।

7 भाषण जिव्हा की खुजलाहट और बौद्धिक व्यापार है और प्रवचन जीवन का निचोड़ है, प्रवचन में विद्वत्ता नहीं हार्दिकता होती है।

8 व्यक्ति के होते हुए भी मना करना यह प्रथम असत्य है, (जैसे देवदत्त के होते हुए भी मना करना कि यहाँ नहीं है।)

वस्तु के नहीं होते हुए भी हाँ कहना दूसरा असत्य है, (जैसे घड़े के नहीं होते हुए भी हाँ कहना।)

वस्तु का अन्यथा कथन करना ये तीसरा असत्य है, (जैसे घोड़े को गधा कहना।)

9 **पैशून्य हास गर्भं, कर्कशमसमञ्जसं प्रलपितं च।**
अन्यदपि यदुत्सूत्रं, तत्सर्वं गर्हितं गदितं।।

चुगली, निन्दा, हास्य, कठोर, झूठ, प्रलापरूप तथा और भी शास्त्र विरुद्ध वचन निंद्य कहलाते हैं। **हास्यगर्भ-** एक अप्रैल को लोग झूट बोलकर हँसी उड़ाते हैं अथवा जिन वचनों से किसी की हँसी उड़ाई जा रही हो। **कर्कश-** पवनञ्जय ने अञ्जना से कहा मरजा, मुख न दिखा ये कर्कश वचन कहलाते हैं। **प्रलपित-** असीमित बोलना। उत्सूत्र-बच्चों को गाली देना, आगम विरुद्ध बोलना। **सावद्य-** नाक कान आदि के छेदन के वचन कहना। मारण- बच्चों आदि को मारना। **वाणिज्य-** पाप वर्धक व्यापार के वचन बोलना, जैसे साबुन, माचिस आदि के बेचने

को कहना।

10 **छेदन भेदन मारण, कर्षण वाणिज्य चौर्य वचनादि।**
तत्सावद्यं यास्मात्, प्राणी वधाद्याः प्रवर्तन्ते।।
जो छेदन, भेदन, मारण, शोषणयुक्त व्यापार या चोरी आदि के वचन हैं वे सब पाप युक्त वचन हैं।

11 **अरतिकरं भीतिकरं, खेदकरं वैर शोक कलहकरं।**
यदपरमपि तापकरं, परस्य तत्सर्वमप्रियं ज्ञेयं।।
जो वचन दूसरे जीवों को अप्रीति, भय, खेद, वैर, शोक तथा कलह कारक एवं अन्य भी सन्ताप कारक हों वे सभी अप्रिय वचन जानना चाहिए।
ये सभी प्रकार के वचन असत्य के अन्तर्गत आते हैं इन वचनों को नहीं बोलना चाहिए-

असत्य का व्यापार-जीवन की हार-

1 **पाँच प्रकार की परीक्षा-** 1.अग्नि में प्रवेश करना, 2.तराजू पर तुलना, 3.काल कूट जहर खाना, 4.जल में डूबना, 5.गर्म लोहे का गोला हाथ में लेना, ये सत्यता की परीक्षा के लिए होती हैं।

2 सात मील चलने के बराबर एकघण्टे बोलने में शक्ति का व्यय होता है।

3 **मौन रहो तो मूरख कहते, बोलो तो वाचाल।**
नहीं बोलो तो गूँगा कहते, ये दुनिया का हाल।।

4 जन्म के साथ जीभ तो मिल जाती है पर जीवन बीत जाने पर भी उसका सदुपयोग करने की कला नहीं आ पाती है।

5 हम लाख अपने भावों को दबाने का प्रयास करें, पर वे किसी न किसी वातायन से बाहर झांक ही लेते हैं।

6 हमारी आखों के तेज को हमारे बुरे विचारों की हवा हर लेती हैं।

7 मर्म घातक एक वाक्य ही सारे उपकार को नष्ट कर देता है।

8 जैसे जल रहित नदी अशोभनीय लगती है, उसी तरह सत्य रहित व्यक्ति भी अशोभनीय लगता है।

9 अन्धों के अन्धे होते हैं, इतना बोलने से महाभारत हो गया, अतः हर शब्द सोच कर बोलना चाहिए।

10 एक बार का असत्य अनेक बार के सत्य को झूठ कर देता है, फिर लोग विश्वास नहीं करते हैं।

11 झूठ का दुराग्रह करने वालों को दीर्घकाल तक अपयश और दुर्गति ये दो चीजें सुलभ हैं।

12 कर्तृत्व बुद्धि से कुटुम्ब आदि के कारण झूठ बोलता है, असत्य के दो कारण हैं कषाय और अज्ञान।

13 असत्य बोलने से मुख सम्बन्धी रोग, गूँगा, तोतला, दुःस्वर, तथा वाणी सम्बन्धी दुर्गुण एवं एकेन्द्रियादि में जन्म होता है।

14 जीभ पर लगी चोट सबसे जल्दी ठीक होती है पर जीभ से लगी चोट मुश्किल से ठीक होती है।

15 असत्य के पैर नहीं होते हैं और अनीति की जड़ नहीं होती हैं।

सत्य संस्कृत श्लोक पाठ-

16 **प्राप्नुवन्त्यति घोरेषु, रोरवादिषु सम्भवं।**
तिर्यक्ष्वथ निगोदेषु, मृषा वाक्येन देहिनः।।
झूठ बोलने से प्राणी नरकों के पशुगति के और निगोद अवस्था के अत्यन्त दुःख पाते हैं।

17 **अपि दावानलप्लुष्टं, शाड्वलः जायते वनं।**
न लोका सुचिरेणापि, जिह्वानल कदर्थितः।।
अग्नि से जला हरा भरा वन तो पुनः हरा भरा हो जाता है, किन्तु जिह्वा रूपी अग्नि से जला चिरकाल तक हरा भरा नहीं होता है।

18 **नृ जन्मन्यपि यः, सत्य प्रतिज्ञा च्युतोऽधमः।**
स केन कर्मणा पश्चात्, जन्म पङ्क्तरिष्यति।।
जो अज्ञानी मनुष्यगति में सत्य को छोड़ दे, वह बाद में कौन से कर्म से संसार सागर को पार करेगा ?

19 **श्वापाकोलूक मार्जार, वृक गोमायुमण्डलाः।**
स्वीक्रियन्ते क्व चिल्लोके, न सत्य च्युत चेतसा।।
लोक में चाण्डाल, उल्लू, बिल्ली, भेड़िया, सियार और कुत्ता को तो लोग पसन्द करते हैं पर झूठ बोलने वाले को कोई पसन्द नहीं करता है।

20 **पर परिभव परिवादा, दात्मोत्कर्षाच्च वध्यते कर्म।**
नीचैर्गोत्रं प्रतिभव, मनेक भव कोटि र्दुर्मोचं।।
पर का अनादर व निन्दा और अपनी प्रशंसा से जो नीच गोत्र कर्म का बन्ध होता है, वह अनेक करोड़ों जन्मों मे नष्ट करना दुष्कर है।

21 **ज्ञान हीनोऽविवेकी च लोके मूढो निगद्यते।**
योऽपृष्टोऽपि स्वयं ब्रूते, स तु मूढ़ शिरोमणिः।।
लोक में ज्ञान और विवेक रहित मनुष्य मूर्ख माना जाता है, किन्तु जो विना पूँछे बोलता है वह मूर्ख शिरोमणि माना जाता है।

22 **सर्वलोके प्रिये तथ्ये, प्रसन्ने ललिताक्षरे।**
वाक्ये सत्यपि किं ब्रूते, निकृष्टः परुषं वचः।।
सारे लोक में प्रिय, सार्थक, निर्मल और मनोहारी वाक्यों के होते हुए भी अज्ञानी पुरुष कठोर वचन क्यों बोलता है ?

23 **एकतः सकलं पापं, असत्योत्थं ततोऽन्यतः।**
साम्यमेव वदन्त्यार्यास्, तुलायां धृतयोस्तयोः।।
तराजू के एक पलड़े पर चार पापों को रखा जाये और दूसरे पलड़े पर असत्य पाप को रखा जाए तो आचार्य दोनों को बराबर कहते हैं।

24 **मूकता मतिवैकल्यं, मूर्खता बोध विच्युतिः।**
बाधिर्यं मुख रोगित्वं, असत्यादेव देहिनां।।
असत्य से प्राणी अगले जन्म में अल्पज्ञानी, मूर्ख, ज्ञान रहित, बहरा व मुख के अनेक रोगों वाला होता है।

25 **मैं जो बन्धन में पड़ा, इसका दोषी कौन।**
यह वाणी का दोष है सबसे बेहतर मौन।।

26 **बिन स्वारथ कैसे सहे, कोई कड़वे बैन।**
लात खाय पुचकारिये, होय दुधारू धेनु।

27 **बहुत पढ़े तो क्या पढ़े, बोलें नहिं विचार।**
हने पराई आत्मा, जीभ बहे तलवार।।

28 **सत्य, अहिंसा, प्रेम का हमसे कितना नाता है।**
दीवालों पर लिख देते हैं, दीवाली पर पुत जाता है।।

सत्य कथानक-

29 **शेर को गधा कहा-** एक लकड़हारा जङ्गल में लकड़ियाँ लेने गया, वहाँ एक शेर को दयनीय स्थिति में देखा, तो डरते-डरते शेर के पास गया, शेर को काँटा लगा था जिससे वह चल नहीं पा

रहा था, लकड़हारे ने साहस करके शेर का काँटा निकाल दिया, शेर ने कृतज्ञता व्यक्त करते हुए कहा, आप मेरे ऊपर लकड़ी रखकर ले जाया करो, शेर के ऊपर लकड़ी लाने से वह थोड़े ही समय में धनवान बन गया, पड़ोसी ने पूँछा आपकी सम्पन्नता का राज क्या है, लकड़हारे ने कहा मुझे एक गधा मिल गया है, उस पर लकड़ी रखकर लाता हूँ, जिससे मुझे बहुत लाभ हुआ है, ये शब्द शेर ने सुन लिए, दूसरे दिन जब लकड़ी लेने जङ्गल गया, तो शेर ने कहा ! आपने मुझसे कल गधा कहा था, अब या तो आप मेरे गले पर कुल्हाड़ी मार दो नहीं तो मैं तुम्हे खा जाऊँगा, लकड़हारे ने अपनी जान बचाने के लिए शेर के गले पर कुल्हाड़ी मार दी जिससे शेर मर गया, शेर कुल्हाड़ी की मार सहन कर गया पर गधा शब्द सहन नहीं कर सका। अतः हमें सोच समझ कर बोलना चाहिए।

30 **बोले तो फँसे-** कलाकार ने कला से मौत को जीत लिया, एक जैसे सात पुतले बनाये, खुद बीच में बैठ गया, मौत हैरान हो गई, बोली ! '**और तो सब ठीक है लेकिन**' कलाकार बोला क्या कमी रह गयी है ? मौत ने कहा बस तुम बीच में बोल गये, यही कमी रह गयी है।

31 **वर्ष में एक झूठ-** एक सेठ को एक नौकर मिल गया जिसका वेतन था, भोजन, वस्त्र एवं एक वर्ष में एक झूठ बोलना। वर्ष पूर्ण होने पर वेतन की तिथि निश्चित कर दी गयी। सेठानी से नौकर ने कहा कि आप के सुन्दर और सुशील होने पर भी सेठ कहाँ जाते हैं पता नहीं ? मैं दिन भर दुकान चलाता हूँ। सेठानी ने कहा क्याँ करें तब नौकर ने कहा सेठ की एक मूँछ निकाल दो, इससे चेहरे की सुन्दरता समाप्त हो जायेगी, जब सेठ जी रात्रि में सो जायें, तब आप छुरी से मूँछ निकाल देना, उधर सेठ से कहा कि आप दिन भर दुकान में रहते हो, सेठानी दिन भर ताला डाल कर पता नहीं कहाँ जाती हैं, आज जब आप सो जाओगे तब वह आपका गला काटेगी, सावधान रहना, सेठ दुकान से आकर चुप चाप सोने का बहाना करने लगे, तभी सेठानी छुरा लेकर आयी, और जैसे ही मुख से वस्त्र हटाया तो सेठ ने उसके हाथ का छुरा छीन कर उसी को मारने तैयार हो गये, तब नौकर ने कहा हुजूर सुनिये, ऐसा मत करिये हमने अपना वेतन लिया है, यानि एक झूठ बोला है। '**जब एक झूठ से प्राणों पर खतरा आ सकताहै तो अनेक बार झूठ बोलने पर क्या होगा**'।

32 **वसु झूठ सेति नरक पहुँचा-** राजा वसु, नारद ब्राह्मण और क्षीरकदम्ब ब्राह्मण का पुत्र पर्वत ये तीनों छीरकदम्ब ब्राह्मण के पास पढ़ते थे, एक दिन क्षीरकदम्ब अपने शिष्यों के साथ वन में गये, वहाँ चारण ऋद्धिधारी मुनिराज अपने शिष्यों के साथ विराजमान थे, क्षीरकदम्ब ने उनको

नमस्कार किया, तब उन मुनिराज ने कहा की इनमें गुरु और एक शिष्य सद्बुद्धि हैं, और दो शिष्य कुबुद्धि हैं, ये शब्द सुनकर क्षीरकदम्ब संसार से डर गये, शिष्यों को वापस भेजा और स्वयं ने मुनि दीक्षा ले ली, ब्राह्मण की पत्नी को बहुत दुःख हुआ, उसने बहुत विलाप किया, नारद ने उसे समझाया, एक दिन नारद और पर्वत में चर्चा चल रही थी, नारद ने कहा कि मुनियों ने '**अजैर्यष्टव्यं**' का अर्थ '**जिसमें अङ्कुर शक्ति नहीं है ऐसे शालिधान**' हैं, उसी से यज्ञ, विवाह आदि क्रियाओं में होम करना चाहिए। यह कहा है, पर पर्वत ने कहा कि अज का अर्थ '**बकरा**' होता है, उसने झूठ कहा कि पिताजी ने यही कहा था, दोनों में विवाद बढ़ गया, और वसु के पास न्याय करने के लिए कहा, क्योंकि वह भी क्षीरकदम्ब के पास पढ़ता था, राजा वसु के सिंहासन के पाये स्फटिक के थे, जिससे सब यही समझते थे, कि उसका सिंहासन सत्य के प्रभाव से आकाश में उठा हुआ है, पर्वत ने एक दिन पहले सारा वृत्तान्त अपनी माँ को सुनाया, माँ को पता था कि पर्वत झूठ बोल रहा है, फिर भी पुत्र मोह में आकर वह राजा के पास गयी, अपनी गुरुमाँ को आता देखकर राजा ने बहुत सम्मान से बैठाया, माँ ने आने का कारण बताया और झूठ को सत्य कहने के लिए कहा, राजा ने दक्षिणा के वचन को याद किया और हाँ कह दिया, दूसरे दिन सभा लगी तो राजा ने पर्वत को सत्य ठहराया, झूठ के प्रभाव से उसके सिंहासन के पाये टूट गये, नारद ने समझाया की राजन् ! झूठ के प्रभाव से पाये टूट गये अब भी सच बोल दो, पर राजा ने पर्वत का ही पक्ष लिया, और सिंहासन के नीचे की पृथ्वी फट पड़ी और राजा झूठ के प्रभाव से मरकर '**सातवे नरक**' चला गया।

33 **सत्यघोष का असत्य जगत प्रसिद्ध-** सत्यघोष ने जनेऊ में एक चाकू बाँध रखा था और कहता था कि मैं जरा सा भी झूठ बोलूँगा तो अपनी जीभ काट लूँगा, वह किसी की धरोहर वापस देता था किसी की नहीं, कोई-कोई राजा के पास जाकर उसकी शिकायत भी करते थे, लेकिन सत्यघोष के प्रभाव के कारण राजा भी किसी की नहीं सुनता था, एक दिन दूसरे गाँव का समुद्रदत्त व्यापारी रत्नद्वीप में व्यापार करने के लिए गया, उसने सत्यघोष के पास पाँच रत्न जमा कर दिए, लौटते समय जहाज डूबने से सारा धन समुद्र में डूब गया, वह सत्यघोष के पास गया, और अपने पाँचों रत्न वापिस माँगे, तो सत्य घोष उसे पागल कहकर भगाने लगा, राजा के पास भी न्याय न मिलने से वह दिन-रात सबसे यही कहता फिरता था की '**सत्य घोष मेरे पाँच रत्न नहीं देता है**' रानी ने यह सुना तो राजा से न्याय करने के लिये कहा, रानी ने सत्यघोष और समुद्रदत्त दोनों की परीक्षा ली, और न्याय किया, राजा ने सत्य घोष को तीन सजा बताई उनमें

से एक चुनने को कहा, पहला तीन थाली गोबर खाना, दूसरा पहलवान के बत्तीस मुक्के खाना, तीसरा अपना सारा धन राजा को देना, तीनों सजा में सफल नहीं हुआ, अन्त में मरकर राजा के खजाने में सर्प हुआ, और वहाँ से मरकर नरक चला गया।

34 **वाणी से व्यक्ति की पहचान-** एक बार जङ्गल में राजा, मन्त्री, कोतवाल, और सिपाही ये चारों भटक गये, उन्हें रास्ते में एक अन्धा व्यक्ति दिखा, राजा ने उससे पूँछा क्यों सूरदास जी क्या यहाँ से हमारे मन्त्री, कोतवाल, सिपाही निकले हैं ? सूरदास ने कहा नहीं राजन्। थोड़ी देर में वहाँ से मन्त्री निकला, तो उसने पूँछा, क्यों सूरदास क्या यहाँ से हमारे राजा निकले हैं ? सूरदास ने कहा हाँ मन्त्री जी। थोड़ी देर में कोतवाल निकला, तो वह भी अन्धे से पूँछता है, क्यों रे सूरदास क्या यहाँ से हमारे राजा, मन्त्री निकले हैं ? उसने कहा हाँ कोतवाल जी। थोड़ी देर में वहाँ से सिपाही निकला, उसने भी अन्धे से पूँछा क्यों वे अन्धे क्या यहाँ से हमारे राजा निकले हैं? उसने कहा हाँ सिपाही। अन्धें ने वाणी से राजा, मन्त्री, कोतवाल, सिपाही को जाना।

35 एक व्यक्ति बोला कि मैं जुआ नहीं खेलता, शराब नहीं पीता, पाप नहीं करता, कषाय नहीं करता, मेरे में कोई अवगुण नहीं है, मात्र यही अवगुण है कि में सत्य नहीं बोलता, इस एक दुर्गुण ने ही उसके सारे गुणों को बर्बाद कर दिया, क्योंकि वह जो कुछ बोल रहा है सब झूठ है।

सत्य का वर्धन, अलीक का विसर्जन-

1 जिसका मन सत्य शीलता में निमग्न है वह तपस्वी से और दानी से भी श्रेष्ठ है।

2 वाचनिक उपकार के कारण णमोकार मन्त्र में सिद्धों से पहले अरिहन्त पद को रखा है।

3 जिस महात्मा ने प्रसन्नमुख होकर एक बार प्रेम से बात की उसने क्या-क्या उपकार नहीं किया? व क्या-क्या नहीं दिया ?

4 सत्य से व्यक्ति परेशान हो सकता हैं पर परास्त नहीं होता है।

5 सूली पर चढ़ने के बाद भी सत्य सत्य ही रहता हैं, सिंहासन पर भी झूठ झूठ ही रहता है।

6 अनेकान्त में शान्ति, एकान्त में अशान्ति व विवाद होता है, **'अस्वत्थामा हतो नरो वा कुञ्जरो वा'** यह धर्मराज युधिष्ठिर का स्याद्वादी सिद्धान्त था।

7 समय पर दिया गया धन्यवाद करोड़ों रुपयों से भी कीमती होता हैं।

8 मौन पूर्वक दुर्व्यवहार सहने से विरोधी का हृदय परिवर्तित हो जाता हैं।

9 जब तक घी में छाछ है तब तक कड़-कड़ की आवाज आती है, शुद्ध होने पर शान्त हो जाता है, उसी प्रकार जब तक जीव के अन्दर कषाय रहती है, तभी तक अशान्त रहता है, कषाय निकल

जाने पर शान्त हो जाता हैं।

10 मुनि तो सत्य बोलते ही हैं क्योंकि मुनियों के द्वारा समस्त विद्याएँ निर्मित हैं, किन्तु सत्य को धारण करने वाले म्लेच्छों को भी विद्याएँ सिद्ध हो जाती हैं।

11 सत्य सब धर्मों में प्रधान है, संसार सागर से पार होने के लिए सत्य पुल के समान है।

12 सत्य वचन बोलना ही जिनवाणी की पूजा है।

13 सत्य बोलने से सुस्वर एवं वाणी सम्बन्धी गुण प्राप्त होते हैं।

14 सत्यवादी में हजार हाथियों का बल होता है।

15 स्याद्वाद में विवाद नहीं होता, विवाद दुराग्रह में है व सत्यवादी अधिक नहीं बोलता है।

16 जैसे मयूर पङ्ख में धूलि नहीं लगती, कमल को कीचड़ नहीं छूता, वैसे ही उत्तम वक्ता की जिव्हा को अपशब्द नहीं छूता है।

17 प्रतिपद उदार भावों से युक्त, चमत्कार गर्भित और भाव प्रेषण में निपुण वाणी सैकड़ो में किसी एक को ही प्राप्त होती है।

18 **सत्येन शुद्धयते वाणी, मनो ज्ञानेन शुद्धयति।**
गुरु सुश्रुषया काया, शुद्धिरेष सनातनः।।
सत्य से वाणी शुद्ध होती है, ज्ञान से मन शुद्ध होता है, गुरु सेवा से शरीर शुद्ध होता है, ये शुद्धियाँ शाश्वत मानी गई हैं।

19 **खण्डितानां विरूपाणां, दुर्विधानां च रोगिनां।**
कुलजात्यादि हीनानां, सत्यमेकं विभूषणं।।
जो लङ्गड़े-लूले, कुरूप, भाग्यहीन, रोगी और कुल-जाति आदि से हीन हैं उनका भी सत्य ही एक आभूषण है।

20 **अजल्पन्तो गुणान् वाण्या, जल्पन्त श्चेष्टया पुनः।**
भवन्ति पुरुषाः पुंसां, गुणिनामुपरि स्फुटं।।
जो वचनों से न कह कर चेष्टा से अपने गुणों का बखान करता है वह गुणवानों में भी श्रेष्ठ माना जाता है।

21 **सत्येन धार्यते पृथ्वी, सत्येन तपते रविः।**
सत्येन वाति वायुश्च, सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितं।।
सत्य के कारण पृथ्वी टिकी है, सूर्य तपता है, वायु बहती है सब कुछ सत्य पर ही प्रतिष्ठित है।

22 **सति सन्ति व्रतान्येव, सुनृते वचसि स्थिते।**
भवत्याराधिता सद्भि, र्जगत्पूज्या च भारती।।
सत्य वचन के होने पर ही शेष व्रत होते हैं और जगत्पूज्य जिनवाणी की आराधना होती है।

23 **धर्मनाशे क्रियाध्वंसे, सुसिद्धान्तार्थ विप्लवे।**
अपृष्टैरपि वक्तव्यं, तत्स्वरूप प्रकाशने।।
धर्म एवं क्रिया का नाश होता हो, सम्यक् सिद्धान्त का अभाव होता हो तो उसके स्वरूप के प्रकाशन के लिए विना पूँछे भी बोलना चाहिए।

24 **केयूरा न विभूषयन्ति पुरुषं, हाराः न चन्द्रोज्ज्वलाः,**
न स्नानं न विलेपनं न कुसुमं, नालंकृता मूर्धजाः।
वाण्येका समलङ्करोति पुरुषं, या संस्कृता धार्यते,
क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं, वाग्भूषणं भूषणं।।
उचित वाणी जिस प्रकार मनुष्य को अलंकृत करती है, उस प्रकार चन्द्रमा के समान उज्ज्वल बाजूबन्ध, स्नान, लेप, फूल और सजाए हुए बाल अलंकृत नहीं करते, आभूषण तो नष्ट हो जाते हैं पर वाणी जीवन्त रहती है।

25 **न तथा चन्दनं चन्द्रः, मणयो मालती स्त्रजः।**
कुर्वन्ति निर्वृतिं पुसां, यथा वाणी श्रुति प्रिया।।
चन्दन, चन्द्रमा और चन्द्रकान्त मणि की माला उस प्रकार सन्तुष्ट नहीं करती, जिस प्रकार कर्णप्रिय वाणी मनुष्य को सन्तुष्ट करती है।

26 **कुलप्रसूतस्य न पाणीपद्मं, न जारजातस्य शिरो विषाणं।**
यदा यदा मुञ्चति वाक्यवाणं, तदा तदा जाति कुलप्रमाणं।।
उच्च कुल के मनुष्य के हाथ में कमल का चिन्ह नहीं होता एवं व्यभिचारी की सन्तान के सिर में सींग नहीं होते किन्तु जब वाणी का प्रयोग करता है तो जाति कुल का प्रमाण अपने आप हो जाता है।

27 **शतेषु जायते शूरा, सहस्त्रेषु च पण्डिता।**
वक्ता दशसहस्त्रेषु, दाता स्यात् वा भवेत न वा।।
सौ लोगों में एक पहलवान होता है, हजार लोगों में एक पण्डित होता है, दस हजार में एक वक्ता होता है और इनमें दाता हो भी सकता है और नहीं भी।

28 **साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।**
जाके हृदय साँच है, ताके हृदय प्रभु आप।।

29 **कोयल काको देत है, कौआ काको लेत।**
मीठी वाणी बोल के मन सबका हर लेत।।

30 **सेठ की सत्यता-** व्यापार हेतु एक सेठ जङ्गल से गुजर रहा था। डांकुओं ने उसे पकड़ लिया सब धन छीन लेने के बाद भी पाँचसौ स्वर्ण मुद्राओं को और माँगा, सेठ ने पत्र लिखा और कहा कि आप इस पत्र को ले जाओ हमारे बेटे से पाँच सौ स्वर्ण मुद्रायें ले आओ। एक व्यक्ति पत्र लेकर गया। उसके बेटे ने पाँचसौ स्वर्ण मुद्रायें दे दी। सभी डांकू प्रसन्न थे लेकिन सेठ उदासीन था, मेरे बेटे ने नकली मुद्रायें दे दी हैं, सेठ पुनः पत्र लिख कर देता है, और डाकुओं से कहता है! असली मुद्रायें ले आओ नहीं तो हमारे ऊपर से विश्वास उठ जायेगा। सेठ की सत्य निष्ठासे डांकुओं का जीवन परिवर्तित हो गया।

31 **गाँधी जी के सत्य के प्रयोग-** गाँधीजी अफ्रीका में चोरी की पैरवी कर रहे थे, उन्हे पता चला कि ये व्यक्ति झूठ बोल रहा है, गाँधीजी ने उस केस को केंसल कर दिया, उसने गाँधीजी को मनाया तब गाँधीजी ने कहा तुम सत्य बोलो उसने सत्य बोला, मजिस्ट्रेट ने सत्य से प्रसन्न होकर दूना जुर्माना करके छोड़ दिया।

32 **जब से खड़ा हूँ तब से कोई नहीं निकला-** जङ्गल में साधु ध्यान कर रहे थे, तभी एक हिरन दौड़ता हुआ निकला, साधु का ध्यान बटा, उन्होंने देखा कि यह तो सताया हुआ है, अगर शिकारी ने आकर पूँछा तो क्या होगा, ऐसा सोच ही रहे थे कि शिकारी आ गया, साधु तत्काल खड़े हो गये जैसे ही शिकारी ने पूँछा कि यहाँ से कोई हिरन निकला है ? तो साधु ने कहा जब से मैं खडा हूँ, तब से कोई नहीं निकला। जब हिरण निकला था तब साधु बैठे हुये थे, अर्थात् युक्ति पूर्वक जीव की रक्षा की और अपने सत्यधर्म की रक्षा की।

33 शिकारी ने हाथ में जिंदा चिड़िया लेकर साधु से पूछा ये मरी है या जिन्दा? साधु ने कहा मरी है, वहाँ साधु का अभिप्राय झूठ बोलने का नहीं था चिड़िया के प्राण बचाने का था इसलिए झूठ होते हुए भी सत्य है।

34 **मैं चोर हूँ-** एक चोर ने झूठ बोलने का त्याग किया, राजमहल में चोरी करने गया पहरेदार ने पूँछा ! कौन हो ? कहा ! चोर हूँ, किसी ने विश्वास नहीं किया, सोचा कोई राजपुरुष होगा, जब वह चोरी करके ले जा रहा था तब पूँछा क्या ले जा रहे हो ? तो उसने कहा चोरी करके ले जा

रहा हूँ, तब भी किसी ने कुछ नहीं कहा, चोर स्वयं विरक्त हो गया, कि एक पाप के त्याग से इतना लाभ हुआ, तब सारे पापों का त्याग करेंगे तो कितना लाभ होगा ?

35 **वचन चातुर्य**-चार महिलायें एक साधु से बात करने के बहाने आती हैं, और पहली ने कहा विचारणीय बाबा ! पानी दे दो, दूसरी ने कहा बाबा अग्नि दे दो, तीसरी ने कहा बाबा गोद में ले लो, चौथी महिला ने कहा बाबा आपके खेत में पशु घुस गये हैं, साधु चारों का एक ही उत्तर देते हैं कि '**वारि नहीं है**', पानी को भी वारि कहते हैं, अग्नि वारी नहीं, वारी मतलब छोटी सी नहीं है, खेती वारी नहीं है।

36 **सत्य और सुन्दर**- एक काना राजा था, उसने कई बड़े-बड़े चित्रकारों को बुलावाया, और आदेश दिया कि जो भी राजा का ऐसा चित्र बनाए जो सुन्दर भी हो और सत्य भी, तो कई चित्रकारों ने अपनी कला दिखाई, राजा ने एक चित्र देखा जिसमें एक आँख नहीं थी, राजा बोला ये सत्य है पर सुन्दर नहीं, दूसरे चित्र में दोनों आँखे थी, राजा बोला ये सुन्दर है पर सत्य नहीं, तीसरा चित्र दिखाया गया, जिसमें राजा धनुष से बाण को खींचता है, और एक आँख बन्द है, जैसे निशाना साध रहा हो, राजा देखकर प्रसन्न हो गया बोला यह सुन्दर भी है और सत्य भी, अतः वाणी ऐसी बोलो जो सत्य भी हो और सुन्दर भी।

शनि का सौदा

37 एक बार एक राजा ने इस शर्त पर बाजार लगवाया कि जिसका जो भी सामान नहीं बिकेगा वह मैं खरीद लूँगा, सब दुकान दारों का सामान बिक गया, पर एक मूर्ति बेचने वाले की शनि देव की मूर्ति नहीं बिकी, तब वह राजा ने खरीद ली, एक रात राजा ने देखा कि, मेरे महल से लक्ष्मी, यश, सुख आदि अच्छे-अच्छे गुण जा रहे हैं, साथ में सत्य भी जा रहा है, तो राजा ने पूँछा आप लोग कहाँ जा रहे हैं ? उन सभी ने कहा आपके यहाँ शनि देव आ गये हैं इसलिए हम लोग नहीं रहेंगे, तब राजा ने सत्य से कहा कि मैंने आपकी रक्षा के लिए ही शनि देव को खरीदा है, इसलिए आप नहीं जा सकते, तो सत्य लौट आया, और सत्य को वापस आया हुआ देखकर, बाकी के गुण भी वापस आ गये, कहने का तात्पर्य यह है कि जहाँ पर सत्य होता है, वहाँ पर सभी गुण होते है।

कम बोलो, काम का बोलो-

1 'अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहीं कोई मुख से कहा करे'।

2 **बोल उठे अवसर विना, ता को रहे न मान।**
जैसे कार्तिक बरसते, निन्दे सकल जहान।।

3 **बहु सुनवो कम बोलवो, यो है चतुर सुजान।**
इसीलिये विधि ने रची, एक जीभ दो कान।।

4 वाणी से ही गधे पर बैठाया जाता है, वाणी से ही हाथी पर बैठाया जाता है।

5 एक वचनकला ही पूर्ण कला है, अन्य कलाओं से क्या प्रयोजन है, हजारों वृद्ध गायों से एक कामधेनु का होना अच्छा है।

6 कम बुद्धिमान ज्यादा बोलता है, ज्यादा बुद्धिमान कम बोलता है।

7 तुम मत बोलो काम को बोलने दो, प्रभावपूर्ण बोलना ज्यादा महत्त्वपूर्ण है।

8 'क्यों रे', 'तू क्या कर रहा है', इत्यादि ग्रामीण भाषा बोलने वाले व्यक्ति के वचन असत्य की कोटी में आते हैं।

9 घड़े और नारियल की कीमत आवाज से होती है, अतः अच्छे शब्द बोलने में दरिद्रता नहीं होना चाहिए।

10 एक हीरा सैकड़ों काँच के टुकड़ों को मात कर देता है, उसी प्रकार कठोर शब्द काँच हैं और मीठे शब्द हीरे हैं।

11 अनुभवी फालतु बात नहीं हित की बात करता है।

12 जिसका मन वश में होगा उसका वचन भी वश में होगा, अतः वचन को वश में करने के लिए मन को वश में करना चाहिए।

13 मूर्ख गप्पों से, विद्वान सत्य से, अहङ्कारी प्रणाम से प्रभावित होता है।

14 असत्य से इस लोक में अपमान और परलोक में दुर्गति व सत्य से इस लोक में सम्मान और परलोक में सद्गति की प्राप्ति होती है।

15 जिसका हृदय कोमल है, उसकी वाणी कड़वी कैसे हो सकती है, पर जिसकी वाणी मीठी हो उसका हृदय निर्मल हो यह जरूरी नहीं है।

16 **मौन**- आत्म हित की साधना में मौन सहायक है वार्तालाप नहीं, असत्य बोलने की तरह असत्य सुनने से भी पाप होता है अतः यत्न पूर्वक बचन बोलना चाहिए।

17 वाणी के संस्कार में अन्तर-ये मेरे बाप की लुगाई है, ये मेरी जननी/माँ हैं।

18 बाँसुरी की विशेषता-विना बुलाये नहीं बोलती, जब भी बोलती है तो मीठा बोलती है, भीतर

बाहर से गाँठ रहित होती है।

19 राजा दशरथ ने सत्य को निभाया, राम ने सत्य वचन का पालन किया विभीषण ने सत्य को पकड़ा, रावण ने सत्य को छोड़ा था।

20 वाणी को अश्व की तरह बाँध कर रखना चाहिए, अन्यथा किसी भी विपत्ति रुपी गड्ढे में गिरा देती है।

21 वाणी बोलकर अपने को, और सुनकर श्रोता को आनन्द की प्राप्ति नहीं हुयी तो बोलने का श्रम व्यर्थ है।

22 बोलने के लिए सिर्फ वाणी की जरूरत होती है, किन्तु चुप रहने के लिये वाणी और विवेक दोनों की जरूरत पड़ती है।

23 मन्त्र के शब्दों से सर्प, बिच्छु आदि के जहर तक उतर जाते हैं।

24 अपमान के वचन से भूख-प्यास ख़त्म हो जाती है और सम्मान पूर्ण वचन से भूख खुल जाती है।

25 जो मूर्च्छा में जीता है वह मूर्ख है और जो होश में जीता है वह होशियार है।

26 आपके सम्बोधन अच्छे होंगे तो आपके सम्बन्ध अच्छे होंगे।

27 सम्यग्दृष्टि उपगूहन अङ्ग का पालन करता है, पैशून्य (चुगली या निन्दा) नहीं करता है।

28 **सत्य व्रत की पाँच भावना-** क्रोध-लोभ-भीरुत्व-हास्यप्रत्याख्यानान्यनुवीचि-भाषणं-च- पञ्च क्रोध, लोभ, भय हास्य का त्याग एवं आगम के अनुसार कथन ये सत्य व्रत की पाँच भावनाएं हैं।

29 **यदीच्छसि वशी कर्तुं, जगदेकेन कर्मणा।**
परापवाद शश्येभ्यो:, गां चरन्तीं निवारय।।
अगर मात्र एक उपाय से जगत को अपने बस मे करना चाहते हो तो अपनी वाणी रूपी गाय को पर की निन्दा रूपी धान मत चरने दो।

30 **सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयान्, मा ब्रूयात् सत्यमप्रियं।**
प्रियं च नानृतं ब्रूया, देष धर्मः सनातनः।।
सत्य बोलो, प्रिय बोलो, अप्रिय सत्य न बोलो और प्रिय असत्य भी न बोलो यह शाश्वत धर्म है।

31 **प्रियवाक्यप्रदानेन, सर्वे तुष्यन्ति जन्तवः।**
तस्माद् तदेव वक्तव्यं, वचने का दरिद्रता।।

प्रिय वचन बोलने से सभी प्राणी सन्तुष्ट होते हैं, इसलिए प्रिय वचन ही बोलना चाहिए। अतः वचनों में दरिद्रता नहीं होना चाहिए।

32 **मौनमेव हितं पुंसां, शश्वत् सर्वार्थसिद्धये।**
वचो वाणी प्रियन्तथ्यं, सर्व सत्वोपकारियत्।।
प्रिय और सार्थक, प्राणीमात्र की हितकारी वाणी बोलनी चाहिए तथा शाश्वत् धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष की सिद्धि के लिए मौन रहना चाहिए।

33 **लक्ष्मी वसति जिव्हाग्रे, जिव्हाग्रे मित्र बान्धवाः।**
बन्धनं चैव जिव्हाग्रे, जिव्हाग्रे मरणं ध्रुवं।।
लक्ष्मी, मित्र, बान्धव, बन्धन और मरण सभी जिव्हा के अग्र भाग में बसते हैं, जिस तरह जिव्हा का उपयोग करोगे वैसा ही फल मिलेगा।

34 **वाणी ऐसी बोलिए, मन का आपा खोय।**
औरों को शीतल करे, आपहु शीतल होय।।

35 **पर की निन्दा सरल है, कठिन स्वयं की जान।**
जो अपनी निन्दा करे, जग में वही महान।।

36 **अन्धे को अन्धा कहो, तुरतई पड़ है टूट।**
धीरे-धीरे पूँछ लो, कैसे गयी है फूट।।

37 **तुम बोलो या न बोलो इस बात का गम नहीं है।**
तुम मुस्कुराकर देख लो, यह भी बोलने से कम नहीं है।।

38 **गाली आवत एक है, जावत होत अनेक।**
जो गाली फेरे नहीं, रहे एक की एक।।

39 **वचन में चतुराई-** राजा ने हाथी की रक्षा महावत को सौंपी और कहा कि हाथी को कोई कष्ट नहीं होना चाहिए। जो व्यक्ति राजा को हाथी की मृत्यु का समाचार देगा, उसको मृत्यु दण्ड होगा, कुछ दिन बाद हाथी मर गया, अब कौन राजा से कहे, सब सङ्कट में थे, एक वृद्ध ने जाकर कहा राजन ! आज हाथी की विलक्षण दशा है, भोजन बन्द, स्पन्दन बन्द है, स्वर्गवास हो गया, राजा ने कहा हाथी मर गया ? वृद्ध ने कहा ! हमने मरना कहाँ कहा।

40 **मैं परधन कभी नहीं लेता-** रिक्सा में सेठ का पैसों का थैला छूट गया, वह सेठ को लौटाने के लिये होटल में आया, सेठ ने उसे पाँच हजार रुपये पुरस्कार में देना चाहे पर उसने नहीं लिये

और कह दिया मैंने टेक्सी का किराया ले लिया है, विना मेहनत के पराई कमाई नहीं लेता हूँ, ये सत्य व्यवहार है।

41 **बालक वर्धमान ने स्याद्वाद सिद्ध किया-** बच्चों ने माँ त्रिशला से पूँछा वर्धमान कहाँ पर हैं? माँ ने कहा ऊपर हैं, बच्चे दौड़कर तीसरी मञ्जिल में गये, वहाँ पिता सिद्धार्थ विराजमान थे, बच्चों ने पिताजी से पूँछा कि वर्धमान कहाँ पर हैं, पिताजी बोले नीचे हैं, बच्चे दूसरी मञ्जिल पर गये, वर्धमान से कहा आपके माता-पिता झूठे हैं, वर्धमान ने कहा नहीं, दोनों सही हैं, माँ की अपेक्षा ऊपर हैं, और पिता की अपेक्षा नीचे हैं, यही स्याद्वाद कहलाता है।

42 **कर्तृत्व बुद्धि-** पड़ोसी राजा ने चढ़ाई कर दी, राजा सामना करने में असमर्थ था, अतः रानी को घोड़े पर बैठा कर भाग गया, रानी गर्भवती थी, उसने रास्ते में बच्ची को जन्म दिया, सम्भाल न सकने से बच्ची को झाड़ी में फेक दिया, झाड़ी के ऊपर मधुमक्खी का छत्ता था, जिसका शहद उसके मुँह में गिरता रहा, जिससे वह सात दिन तक जीवित रही, राजा ने लौटते समय उसे बापस उठा लिया, आगे चलकर भारत सम्राट जहाँगीर की पत्नि नूरजहाँ बनी सोचो किसने किया उसका पालन ? बालिका के पुण्य ने।

43 **रक्षक कौन-** अञ्जना को उसकी सास ने घर से निकाल दिया था, जिससे वह भटकती-भटकती एक गुफा में अपनी दासी के साथ पहुँची, उसी गुफा में हनुमान जी का जन्म हुआ था, वहाँ से आकाश में जाते हुए प्रतिसूर्य विद्याधर ने गुफा में देखा, तो वह नीचे गुफा की ओर आया, और उसे अपनी बहन बनाकर अपने साथ ले जाने लगा, अञ्जना को विमान में बैठाया, हनुमान माँ की गोद में थे, अचानक माँ की गोद से नीचे गिर गये, नीचे घना जङ्गल था, सब लोग घबराए और विमान को जङ्गल में उतारा गया, सब लोग रोते हुए हनुमान की खोज करने लगे, माँ को हनुमान की आवाज आई, सुनकर पास गयी, वहाँ हनुमान एक चट्टान पर पड़े थे, जिस चट्टान पर गिरे थे उस चट्टान के टुकड़े-टुकड़े हो गये थे, और हनुमान हँस-खेल रहे थे, इतनी ऊँचाई से गिरने पर भी उनको चोट तक नहीं लगी, किसने की हनुमान की रक्षा ? हनुमान के पुण्य ने।

44 **अभिमानी पिता** के अनेक उपाय करने पर भी मैनासुन्दरी का भाग्य, किसने बनाया- एक बार मैनासुन्दरी ने पिता से कह दिया कि मैं अपने भाग्य का खाती हूँ, पिता ने गुस्से में आकर कुष्ट रोगी राजकुमार से मैनासुन्दरी का विवाह कर दिया, उसने सिद्धचक्र महामण्डल विधान में सिद्धों की आराधना करके गन्धोदक अपने पति को लगाया जिससे पति सहित सात सौ लोगों

का कुष्टरोग ठीक हो गया था।

45 **स्वारथ का संसार**- बड़ा लड़का जङ्गल में निकलने वालों को लूटकर धन लाता था और घर चलाता था, एक दिन किसी बाबा को लूटने लगा, बाबा ने कहा संसार स्वार्थी है, क्यों मोह के वश हो पाप कमाकर दुर्गति में जाते हो, वह बोला हमारा सारा परिवार हमसे बहुत प्यार करता है, मेरा जहाँ पसीना गिरता है वहाँ सभी लोग खून बहाने को तैयार रहते हैं, बाबा ने कहा एक बार उनके सच्चे प्यार की परीक्षा कर लो, बाबा के कहे अनुसार घर जाकर बहाना बना कर लेट गया और जोर-जोर से कराहने लगा, बाबा वैद्य का भेष धारण करके आया और बोला मेरे पास मरे को जिन्दा करने की दवा है, लेकिन जो इसे पियेगा वो मर जायेगा और यह जिन्दा हो जायेगा, अभी तक जो विना उसके जीवित रहने को तैयार नहीं थे, रो रहे थे, अब वे सभी कहने लगे, हम स्वयं कमा कर खायेंगे, यहाँ तक कि माँ ने भी कह दिया कि हम समझ लेंगे कि हमारे छह ही बेटे हैं, वैद्य ने कहा इस दवा को हम पी लें ? सबने कहा बड़ी कृपा होगी, स्वार्थी संसार देखकर उसको संसार से वैराग्य हो गया, सोचने लगा स्वार्थियों के लिये पाप करके हम दुर्गति में क्यों जायें और वह आत्म कल्याण के मार्ग पर आगे बढ़ गया।

46 **स्वामित्व बुद्धि**- यह संस्था, परिवार, समाज, देश मेरे विना नहीं चलेगा, ऐसा कहते हुये कई चले गये, संस्था वहीं खड़ी हैं, ज्यों की त्यों चल रहीं हैं, उनकी रक्षा कौन करता है ?

'जीवन जीना मौन से, ना कि लोन से'

1 **आवश्यके मलक्षेपे, पापकार्ये च वान्तिवत्।**
मौनं कुर्वीत् शश्वद्वा, भूयो वाग् दोष विच्छिदे।।
आवश्यकों का पालन करते समय, मलमूत्र का विसर्जन करते समय, पाप कार्य में, वमन के समय अथवा वाणी सम्बन्धी दोष से बचने के लिए हमेशा मौन रहना चाहिये।

2 **अभिमानवने गृद्धि, रोधात् वर्धते तपः।**
मौनं तनोति श्रेयश्च, श्रुतप्रश्रयतायनात्।।
भोजन में लालसा रोकने से स्वाभिमान की रक्षा होती है, भोजन के समय मौन रहने से तप बढ़ता है और श्रुत की विनय होने से कल्याण होता है।

3 **गृद्धयै हुङ्कारादि संज्ञा, सङ्क्लेशं च पुरोऽनु च।**
मुञ्चन् मौनमदन कुर्यात्, तपः संयम वृङ्हणं।।

भोजन में लालसा के कारण हुङ्कार आदि सङ्केत नहीं करना, भोजन के आगे-पीछे संक्लेश नहीं करना, मौन पूर्वक भोजन करने से तप और संयम की वृद्धि होती है।

4 **हुङ्काराङ्गुलि खात्कार, भ्रू मूर्ध चलनादिभिः।**
मौनं विदधता संज्ञा, विधातव्यः न गृद्धये।।

मौन धारण करने वाले को भोजन सम्बन्धी लालसा के लिये हुङ्कार, अङ्गुलि दिखाना, खांसी, भोंह चलाना, सिर हिलाना आदि से सङ्केत नहीं करना चाहिए।

5 **सन्तोषः भाव्यते तेन, वैराग्यं तेन दर्श्यते।**
संयमः पोष्यते तेन, मौनं येन विधीयते।।

जिसके द्वारा मौन धारण किया जाता है, उसके द्वारा सन्तोष धारण किया जाता है, वैराग्य प्रदर्शित किया जाता है और संयम पुष्ट किया जाता है।

6 **लौल्य त्यागात् तपो वृद्धि, रभिमानस्य रक्षणं।**
उतश्च समवाप्नोति, मनः सिद्धि जगत्त्रये।।
श्रुतस्य प्रश्रयात् श्रेयः, समृद्धेः स्यात् समाश्रयः।
ततो मनुजलोकस्य, प्रसीदति सरस्वतिः।।

भोजन में लालसा के त्याग से तप की वृद्धि होती है, स्वाभिमान की रक्षा होती है और तीनों लोकों में मन की सिद्धि होती है।

''श्रुत की विनय होने से कल्याण की प्राप्ति होती है, समृद्धि की प्राप्ति होती है और मनुष्य लोक को प्रसन्न करने वाली जिनवाणी की प्राप्ति होती है''।

7 **वाणी मनोरमा तस्य, शास्त्रसन्दर्भगर्भिता।**
आदेया जायते येन, क्रियते मौनमुज्वलं।।

जिसके द्वारा निर्दोष मौन का पालन किया जाता है उसकी वाणी शास्त्र से सम्बन्धित, मनोरम एवं ग्रहण करने योग्य होती है।

8 **पदानि यानि विद्यन्ते, वन्दनीयानि कोविदैः।**
सर्वाणि तानि लभ्यन्ते, प्राणिना मौन कारिणा।।

लोक में जितने भी विद्वानों के द्वारा वन्दनीय पद हैं, वे सभी मौन धारण करने वाले प्राणी के द्वारा प्राप्त किये जाते हैं।

9 **शुद्धमौनान्मनः सिद्धया, शुक्लध्यानाय कल्पते।**
वाक् सिद्धया युगपत्, साधुस्त्रैलोक्य अनुग्रहाय च।।
शुद्ध मौन धारण करने से मन की सिद्धि पूर्वक शुक्लध्यान की प्राप्ति होती है, वचन ऋद्धि के साथ तीनों लोकों का उपकार करने वाली दिव्यध्वनी खिरती है।

10 **उद्योतनं महेनेकं, घण्टादानं जिनालये।**
असार्वकालिके मौनं, निर्वाहः सार्वकालिके।।
मौन का नियम पूरा हो जाने पर एक महोत्सव करना चाहिए, जिनालय में एक घण्टा दान करना चाहिए और आजीवन मौन का निर्दोष पालन करना चाहिए।

11 **मूकः परापवादेषु, परदारा निरीक्षणेऽप्यन्धः।**
पङ्गुः परधनहरणे, जयति लोकत्रये पुरुषः।।
जो पर दोष कहने में मूक रहता है, पर स्त्री के देखने में अन्धा रहता है, पर के धन हरण करने में लङ्गड़ा रहता है वह पुरुष तीनों लोकों में विजय प्राप्त करता है।

12 **नापृष्टः कस्यचिद् ब्रूयान्, न चान्येनापृच्छतः।**
जानन्नपि हि मेधावी, जड़वल्लोकमाचरेत्।।
विना पूँछे न बोलें, दूसरे के द्वारा पूँछे जाने पर भी न बोलें, बुद्धिमान आत्म शान्ति के लिए जानते हुए भी मूर्ख की तरह आचरण करे।

13 **यदि स्वयमशान्तोऽसि, मा ब्रूहि त्वं कदापि वै।**
अशान्तस्य वचः श्रुत्वा, सभायां किं भविष्यति।।
यदि स्वयं अशान्त हो तो कभी मत बोलो क्योंकि अशान्त व्यक्ति के वचन सुनकर सभा में अशान्ति होगी।

14 **श्रोतृणां यः सभामध्ये, कालं खादति दुर्जनः।**
किं नाबलम्बते मौनं, तेन मूर्खेण तत्र चेत्।।
जो दुष्ट सभा में श्रोताओं का समय बर्बाद करता है, वह मूर्ख मौन का आलम्बन क्यों नहीं लेता है?

15 जहाँ नदी गहरी होती है वहाँ जल प्रवाह शान्त तथा गम्भीर होता है, इसी प्रकार गम्भीर व्यक्ति शान्त होता है।

16 महापुरूष बोलकर कम, मौन से अधिक उपदेश देते हैं।

पिता से प्रश्न

17 बादशाह ने सोचा जब बीरबल इतना चतुर है तो बीरबल के पिता कितने चतुर होगें ? बीरबल से कहा कि कल तुम अपने पिता को सभा में लाना। सभा में गये, बादशाह ने प्रश्न किया- दो लोगों में झगड़ा हो गया हो तो क्या करना चाहिये ? वे मौन रहे, दो दिन बाद बीरबल सभा में आये, तब बादशाह ने कहा तुम्हारे पिता जी बड़े मूर्ख हैं, बीरबल ने कहा हमारे पिताजी ने भी यही कहा था, कि तुम्हारे बादशाह बड़े मूर्ख हैं, हमने उनके प्रश्न का उत्तर दिया, लेकिन वो समझे नहीं, दो लोगों में झगड़ा हो तो मौन रहना चाहिए, बादशाह बीरबल की बात को सुनकर शर्मिन्दा हो गये।

18 **अपनी सुरक्षा-** अमेरिका का एक व्यापारी हेनरी फोर्ड हीरे-जवाहरात लेकर दूसरे देश जा रहा था। रास्ते में गाड़ी खराब हो गयी, तो ट्रेन से गया, तब टी.टी. ने टिकिट पूँछा तो मौन रहे, टी.टी. ने उनको पुलिस के हवाले कर दिया, सुबह अधिकारी को टिकिट बता दिया, अधिकारी ने पूँछा कि आपने रात को टी.टी. के लिए टिकट क्यों नहीं बताया, तब हेनरी बोले कि रात को मेरी सुरक्षा हो गयी, अन्यथा में अपना माल कहाँ सुरक्षित रखता, इसी प्रकार आत्मा की सुरक्षा मौन से होती है।

19 मौन के वृक्ष पर शान्ति के फल लगते हैं, मौन निद्रा के समान है यह ज्ञान में नई स्फूर्ति पैदा करता है।

20 चुप रहो तो ऐसे जैसे सामयिक कर रहे हो और खाओं तो ऐसे जैसे दवा खा रहे हो।

21 मौनं सर्वार्थ साधनं- सात मील चलने में जितनी शक्ति क्षीण होती है, उतनी एक घण्टे बोलने में क्षीण हो जाती है।

22 मौन में शब्दों की अपेक्षा अधिक शक्ति होती है, मौन रहो और अपनी सुरक्षा करो।

23 मौन को ही अज्ञानता का ढक्कन बताया है इसमें और भी अनेक गुण हैं।

24 मौन अभिमान का रक्षक है, ज्ञान का साधन है, पुण्य को करने वाला है, पाप को हरने वाला है, देवादि को वश में करने वाला है, क्रोध को हरने वाला है, मन की शुद्धि और सुख को करने वाला है।

25 मौन रखने से संसार का आधा सम्बन्ध छूट जाता है।

26 मौन और एकान्त ये दो आत्मा के सर्वोत्तम मित्र हैं, मौन से आत्म साधना में बल मिलता है।

27 मौन आत्म प्रशंसा व पर निन्दा से बचाता है, मौन से आन्तरिक शान्ति एवं एकाग्रता प्राप्त

होती है।

28 विना मौन के साथ की गई साधना से मौन के साथ की गई साधना कई गुणी फलदायी होती है।

29 मौन अन्तर विकारों को जीतने का प्रमुख साधन है, शान्ति व एकाग्रता के क्षणों में अपरिमित शक्ति प्रकट होती है।

30 मौन से आन्तरिक क्लेशों का विनाश होता है, एवं विवेक प्राप्त होता है व चुप रहने से पछताना नहीं पड़ता है।

31 मौन द्वारा क्रोध के क्षणों को टालकर शान्ति के क्षणों में समस्या का सही समाधान खोजा जा सकता है।

32 परिषह जय भी मौन की साधना से ही शोभा पाता है।

33 मौन का स्वास्थ्य एवं आध्यात्मिक पक्ष तो सबल एवं सामर्थ्यवान है ही, बल्कि पारिवारिक, सामाजिक, राजनैतिक, पर्यावरणीय सौन्दर्य एवं नैतिक सम्बन्धों में भी मौन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है।

34 मौन आने वाले विघ्नों को हरने वाला है, मित्रता को करने वाला है, विवाद को हरने वाला है, रत्नत्रय का संरक्षण करने वाला है और समय पर अज्ञान का नाश करने वाला भी है।

35 विद्वान् को अर्थपति, खजाञ्ची, राजा, अपने से अधिक विद्वान्, अधिक तपस्वी, बहुसङ्ख्या में उपस्थित मूर्ख, शत्रु तथा गुरुओं को उत्तर नहीं देना चाहिए अर्थात् उनकी डाँट को चुपचाप सहन कर लेना चाहिए।

36 ज्यादा बोलना लघुता उत्पन्न करता है और मौन उन्नति का कारण है, आबाज के कारण पायल को पैरों में रखा जाता है और चुप रहने से हार गले में सुशोभित होता है।

37 मौनव्रत के फल से नर-नारी इस जन्म में सुखी होते हैं और नर परभव में मोक्ष को तथा स्त्री पुरुषत्व को प्राप्त होती है।

38 माता, पिता, स्त्री, भाई, बहिन, पुत्र, बालक, बीमार, आचार्य, अतिथि, तपस्वी, वृद्ध, वैद्य, हिस्सेदार, सेवक, आश्रित रहने वाले सम्बन्धी तथा मित्रों के साथ सदा वचन कलह न करने वाला मनुष्य तीनों जगत को जीत सकता है।

39 हँस की सभा में बगुला और कोयल की सभा में कौआ जब तक मौन रहता है तब तक सम्मान

पाता है।

40 बोलना कला है, मौन रहना उससे भी ऊँची कला है, ज्ञानियों की सभा में मौन अज्ञानियों का आभूषण है।

41 चींटी से अच्छा उपदेश कोई नहीं देता, वह सदा मौन रहती है, अपना काम करती है।

42 भय से उत्पन्न मौन भीरुता और संयम से उत्पन्न मौन साधुता उत्पन्न करता है।

43 मौन पवित्रतम विचारों का देवालय है।

44 मौन निद्रा की तरह चैन देता है, मौन तुम्हारे साथ कभी विश्वास घात नहीं करता है।

45 साधु, चोर, पापी, पुण्यवान, ईमानदार, बेईमान, धनी, निर्धनी, अनपढ़, गुणवान, भ्रष्ट, शीलवान, मूर्ख, ज्ञानी ''मौन'' कोई भी रह सकता है, सभी के काम, क्रोध, निन्दा कम होकर नियन्त्रित होते हैं।

इति सत्य धर्म समाप्त

★★★

6 वाँ सोपान- संयम धर्म

"संयम धारण-भवदुःख वारण"

संयम धर्म का स्वरूप

1 **वदसमिदि कसायाणं, दण्डाण तह इंदियाण पचण्हं।**
धारण पालण णिग्गह, चागजयो संजमो भणियो।।
व्रतों का धारण करना, समितियों का पालन करना, कषायों का निग्रह करना, मन-वचन-काय की कुचेष्टा का त्याग और इन्द्रियों का जीतना संयम कहलाता है।

2 जिससे यह आत्मा क्षणभर में अनन्त सुख से सहित हो जाती है, उस पवित्र चारित्र को बार-बार नमस्कार हो, चारित्र से बढ़कर उत्तम सुख को उत्पन्न करने वाला दूसरा नहीं है, "**निर्दोष क्रिया चारित्र का मूल है**", मैं निरन्तर अपना चित्त चारित्र में लगाता हूँ, हे चारित्र ! तुम पूर्णता को प्राप्त होओ।

3 **वत्थु सहावो धम्मो, खमादि भावो य दसविहो धम्मो।**
चारित्तं खलु धम्मो, जीवाणं रक्खणं धम्मो।।
वस्तु का स्वभाव धर्म है, क्षमादि भाव धर्म है, चारित्र धर्म है और जीवों की रक्षा करना धर्म है।

4 **प्राणिपञ्चेन्द्रिया ज्ञेयाः, सत्त्वाः साधारणाह्वयाः।**
प्रत्येकधातवो भूताः, जीवास्तु विकलेन्द्रियाः।।
पञ्चेन्द्रिय को प्राणी, साधारण वनस्पति को सत्त्व, पृथ्वी-जल-अग्नि-वायु को भूत एवं विकलेन्द्रियों को जीव कहते हैं।

5 **पाषाणेषु यथा हेम, दुग्धमध्ये यथा घृतं।**
तिलमध्ये यथा तैलं, देहमध्ये तथा शिवः।।
जिस प्रकार पाषाण में सोना, दूध में घी, तिल में तैल है उसी प्रकार शरीर में आत्मा है।

6 पाँच इन्द्रिय और मन को वश में करना इन्द्रिय संयम कहलाता है और पाँच स्थावर और त्रस जीवों की रक्षा करना प्राणी संयम कहलाता है।

7 संयम ब्रेक, लगाम, अङ्कुश या नकेल के समान है।

8 घर को छोड़ना व्यवहार चारित्र है, स्व में रमना निश्चय चारित्र है।

9 परिणामों की निर्मलता ही चारित्र है, घर को छोड़ने के साथ कषाय छोड़ने से कल्याण होता है। कषाय नहीं छूटी तो जहाँ जायेंगे वहीं घर बस जायेगा।

10 यदि बाह्य हिंसा का त्याग एवं इन्द्रियों के विषयों में मात्र प्रवृत्ति न होने का नाम संयम है, तो फिर देव गति में भी संयम होना चाहिए, क्योंकि सर्वार्थ सिद्धि में तेतीस सागर तक विषय सेवन का विकल्प भी नहीं आता, रसना इन्द्रिय के विषय में भी उन्हे तैंतीस सागर तक जिव्हा जूठी नहीं करनी पड़ती, अतः सङ्कल्प पूर्वक त्याग करने का नाम ही संयम है।

11 **''अन्तरङ्ग में कषाय से आत्मा को मलिन नहीं होने देना, बहिरङ्ग में यत्नाचार पूर्वक प्रवृति करना संयम हैं।''**

12 जिस प्रकार गंगा का जल सेव्य है, गंदा जल असेव्य है, नल का जल सेव्य है, नाली का जल असेव्य है, उसी प्रकार संयम सेव्य है और असंयम असेव्य है।

संयम से लाभ-

1 फल से उदर पूर्ति सम्भव है, फूल से तृष्णा की प्यास बढ़ती है, संसारिक सुख फूल की गंध के समान तृष्णा बढ़ाता है और मोक्ष का सुख फल की तरह तृप्ति कारक है।

2 यद्यपि इन्द्रिय विजय कटुक है तत्काल में दुःखदायक मालूम होता है, तथापि नित्य सुख की इच्छा करने वाले सत्पुरुषों के द्वारा वह औषध के समान सेवन किया जाता है।

3 दृष्टि को अन्तर्मुखी करने का मतलब अपनी बुराईयों को देखना और दूर करना है।

4 लता को बन्धन देते है तो ऊँचाइयों को प्राप्त होती है उसी प्रकार संयम का बन्धन आत्मा को ऊँचाई प्राप्त कराता हैं।

5 व्रत रहित दयालु पुरुष को देवगति सुलभ होती है और दया रहित व्रती पुरुष को नरकगति सुलभ होती है, निर्दय मनुष्य चिरकाल तक तपस्या करे, खूब व्रत करे, दान देवे किन्तु उस तप, व्रत और दान के फल से वह दरिद्र ही रहता है, उसे उनका किञ्चित भी फल प्राप्त नहीं होता और केवल दया को पालने वाला उसके फल से पुष्ट होता है, हे मोक्ष के इच्छुक ! यदि तेरा मन दया से भरा है, तो उपवास आदि के द्वारा व्यर्थ ही कष्ट उठाता है, तुझे दयाभाव से ही सिद्धि मिल जायेगी, यदि तेरा मन दया से शून्य है, तो तु मुक्ति के लिए व्यर्थ ही क्लेश उठाता है क्योंकि कोरे कायक्लेश से मुक्ति नहीं मिलती, जैसे मठा से सींचे गये प्रदेश में घास नहीं उगती वैसे ही दयालुपुरुष पर किसी असहिष्णु व्यक्ति के द्वारा लगाया गया हिंसा-चोरी आदि का दोष न उसकी अपकीर्ति का कारण होता है न दुर्गति का, बल्कि उल्टे गुणों को ही लाने में कारण होता है।

संयम संस्कृत सदन

6 **हीने संहनने जीवा, यश्चारित्रं समाचरेत्।**
उत्कृष्टापेक्षया तस्य, सहस्त्र गुणितं फलं।। (सु.र.)
जो जीव हीन संहनन के होने पर भी चारित्र का पालन करता है उसे उत्कृष्ट संहनन की अपेक्षा हजार गुणा ज्यादा फल मिलता है।

7 **प्राप्ते रत्नत्रये सर्वं, प्राप्तं जगती वैभवं।**
गते रत्नत्रये लोके, हारितो रत्नसंग्रहः।।
रत्नत्रय के प्राप्त होने पर जगत में सब वैभव प्राप्त हो जाता है, इसके विपरीत यदि रत्नत्रय नष्ट हो गया है तो लोक के सब रत्नों का सङ्ग्रह नष्ट हो गया है, ऐसा समझना चाहिए।

8 **लब्धं जन्मफलं तेन, सार्थकं तस्य जीवितं।**
येनावाप्तमिदं पूतं, रत्नत्रयमनिन्दितं।।
उसी ने जन्म का फल व जीवन की सार्थकता को प्राप्त किया है, जिसने इस प्रशंसनीय पवित्र रत्नत्रय को प्राप्त किया है।

9 **णवि सिज्झई वत्थधरो, जईवि होई जिणसासणे तित्थयरो।**
णग्गो हि मोक्खमग्गो, शेषे उम्मग्गया सव्वे।।
जिन शासन मे तीर्थङ्कर भी क्यों न हो, वस्त्रधारी सिद्ध नहीं होते, नग्नता ही मोक्ष का मार्ग है, शेष सभी उन्मार्ग हैं।

10 **बन्धाय विषयासक्तं, मुक्तये निर्विषयं मनः।**
मन एव मनुष्याणाम्, कारणं बन्धमोक्षयोः।।
विषयासक्त मन कर्म बन्ध का कारण है, विषय विरक्त मन मोक्ष के लिए कारण है, अतः मनुष्य का मन ही बन्ध और मोक्ष का कारण है, एक मन नर से नारायण और एक मन नर से नारकी बना देता है, राम-रावण की तरह।

11 **अज्जवि तिरयण शुद्धा, अप्पाणं झाइऊण लहई इन्दत्तं।**
लोयन्तिय देवत्वं, तत्थ चुआ णिव्वुदिं जन्ति।।
इस दुःखमा काल में भी रत्नत्रय से शुद्ध होकर आत्मा का ध्यान करके लौकान्तिक देव एवं इन्द्र बनकर वहाँ से च्युत होकर मोक्ष प्राप्त करते हैं।

12 **कर्त्तव्यमेव कर्त्तव्यं, प्राणैः कण्ठगतैरपि।**
अकर्त्तव्यं नैव कर्त्तव्यं, प्राणैः कण्ठगतैरपि।।

करने योग्य कार्य करना ही चाहिये भले ही प्राण कण्ठगत हो जाएँ, और नहीं करने योग्य कार्य को नहीं करना चाहिये भले ही प्राण कण्ठगत हो जाएं।

13 **हिंसैव नरकं घोरं, हिंसैव गहनं तमः।**
वरमेकाक्षरं ग्राह्यं, सर्वसत्त्वानुकम्पनं।।
हिंसा ही नरक का घोर द्वार है, हिंसा ही गहन अन्धकार है इसलिये समस्त प्राणियों की दया से युक्त एक अक्षर का ज्ञान भी अच्छा है।

14 **आहारनिद्राभयमैथुनञ्च, सामान्यमेतद् पशुभिर्नराणां।**
ज्ञानं हि तेषामधिकं विशिष्टं, ज्ञानेन हीनाः पशुभिः समानाः।।
आहार, निद्रा, भय, मैथुन, मनुष्य और पशु में समान होते हैं, किन्तु मनुष्य में ज्ञान विशेष होता है इसलिए ज्ञान से हीन मनुष्य को पशु के समान कहा है।

15 **वरं व्रतै र्पदं दैवं, नाव्रतैर्वत् नारकं।**
छायातपस्थयो र्भेदः, प्रतिपालयतोर्महान्।।
अव्रती रहकर नरक में जाने की अपेक्षा व्रती बनकर स्वर्ग में जाना अच्छा है, क्योंकि जैसे छाया और धूप में प्रतीक्षा करने वालों में बहुत अन्तर होता हैं वैसे ही नरक व स्वर्ग में रहकर मोक्ष की प्रतीक्षा करने वालों में बहुत अंतर होता है।

16 **लक्ष्यमेकं तु निश्चित्य, तत्रैकाग्रं मनः कुरु।**
संयमेन कृतोऽभ्यासः, शीघ्रं सिद्धिं प्रयच्छति।।
एक लक्ष्य निश्चित करके उसमें मन को एकाग्र करना चाहिये, क्योंकि संयम पूर्वक किया गया अभ्यास शीघ्र ही सिद्धि को देता है।

17 **एग णिगोद सरीरे, जीवा दव्वप्पमाणदो दिट्ठा।**
सिद्धेहिं अणन्तगुणा, सव्वेण वितीद कालेण।।
एक निगोदिया जीव के शरीर में द्रव्य प्रमाण की अपेक्षा सिद्धों से अनन्तगुणे और सम्पूर्ण भूतकाल के जितने समय होंगे उतने जीव होते हैं।

18 **अत्थि अणन्ता जीवा, जेहिं ण पत्तो तसाण परिणामो।**
भावकलङ्क सुपउरा, णिगोदवासं ण मुञ्चन्ति।।
ऐसे अनन्त जीव हैं, जिन्होंने आज तक त्रस पर्याय को प्राप्त नहीं किया, भावों की कलुषता के कारण वे निगोदवास को नहीं छोड़ते हैं।

19 चरणों की पूजा होती है, मस्तक की नहीं, क्योंकि आचरण प्रधान है।

20 संयम के साथ ज्ञान भी मूल्यवान होता है।

21 परमार्थ से संयम वही है जहाँ दयाधर्म है।

22 संयमधर्म संसार के बन्धनों को काटकर प्राणियों को मुक्ति प्रदान करता है।

23 अनावश्यक कार्य छोड़ना आवश्यक कार्य ग्रहण करना मुक्ति का कारण है।

24 सिर मुण्डन की अपेक्षा मन मुण्डन कठिन है, स्वर्ण को जितना तपाओ, उतना खरा उतरेगा, उसी प्रकार जितना संयम है उतना मोक्ष के निकट है।

25 अठ्ठाईस इन्द्रिय विषयों के विरोधी, अठ्ठाईस मूलगुण संसार के बन्धन को छेदकर मुक्ति दिलाते हैं।

26 यदि इन्द्रिय सम्बन्धी विषयों का दमन कर लिया है, तो पुरुषों की शूरता, गम्भीरता, उदारता, ध्यान, अध्ययन और तप सभी सार्थक होते हैं।

27 **महावीर की कहानी**- पुरूरवा भील ने मद्य, मांस, मधु के त्याग से प्रारम्भ की, और बढ़ते-बढ़ते तीर्थङ्कर महावीर बन गया।

व्याघ्री ने तन खाया

28 व्याघ्री ने सुकौशल स्वामी को खाया और कीर्तिधर मुनि का उपदेश सुनकर प्रायश्चित्त से रो-रो कर भीग गयी और संयम धारण कर स्वर्ग गयी, मुनि भक्षी व्याघ्री भी संयम के प्रभाव से स्वर्ग चली गयी तथा असंयम से क्षायिक सम्यदृष्टि श्रेणिक नरक गया था।

29 संयम आचरण के चारों ओर लगायी जाने वाली बाड़ी है।

30 संयम के साथ थोड़ा भी ज्ञान मूल्यवान है पर संयमी विद्याध्ययन करें।

31 अव्यवस्थित मन किसी व्यवस्था को जन्म नहीं देता है, सङ्कल्प लेने से विकल्प मिट जाता है।

32 मोक्ष मार्ग शरीर आश्रित नहीं आत्म आश्रित है, एवं सङ्कल्प में शक्ति होती है।

33 सत्पुरूष प्राण जाने पर भी अपनी प्रतिज्ञा से विचलित नहीं होते हैं।

34 आज तक आयु और नोकर्म की निर्जरा की है, पर कर्म निर्जरा का लक्ष्य होना चाहिए।

35 संसारिक सुख पर पदार्थ के आलम्बन से होता है, पर आनन्द स्वाधीनता में है।

36 बचपने में मुनिपना चल सकता है पर मुनिपने में बचपना नहीं चल सकता है।

37 जिसका वर्तमान उज्ज्वल होता है उसका भविष्य नियम से उज्ज्वल होता है।

38 साधारण व्यक्ति से राजा, राजा से व्यन्तर, व्यन्तर से ज्योतिषी, ज्योतिषी से भवनवासी,

भवनवासी से वैमानिक, वैमानिक से ग्रैवेयक, ग्रैवेयक से अनुदिश वासी, अनुदिश वासी से अनुत्तर वासी, अनुत्तर वासी से सर्वार्थसिद्धि और सर्वार्थसिद्धि के देवों से अनन्तानन्त गुणा सुख सिद्धों को एक समय में होता हैं।

39 जिसकी दृष्टि निर्जरा पर होती है, वह हर प्रसङ्ग हँस कर निकाल देता है।

40 पाश्चात्य संस्कृति कहती हैं विश्व एक व्यापार है, सिर्फ मनुष्य को जीने का अधिकार है, भारतीय संस्कृति कहती है विश्व एक परिवार है सबको जीने का अधिकार है।

41 साधक साधना में जितने कठोर, भावना में उतने ही कोमल होते हैं।

42 सुकमाल स्वामी को असंयमी दशा में राई का दाना चुभता था, वैराग्य होने पर स्यालनी के दाँत नहीं चुभ रहे थे, क्योंकि वैराग्य से सहनशीलता आती है।

43 **त्याग के विना राग मिट नहीं सकता, जल के विना मल छूट नहीं सकता।**
तप संयम के विना भगवान् बनने वालों, साधु हुये विना मोक्ष मिल नहीं सकता।।

44 चरित्र रूपी औषधि से लोभ रूप सर्प का जहर दूर हो जाता है।

पेड़ आम का

45 आचार्य श्री शान्तिसागर जी से एक व्यक्ति ने कहा पञ्चम काल में मोक्ष प्राप्त नहीं होता है, तब आप कष्ट क्यों सह रहे हैं, आचार्यश्री ने कहा यह पेड़ किसका है ? व्यक्ति ने कहा- आम का, आचार्यश्री ने कहा- तो फल तोड़ लाओ, व्यक्ति बोला- मौसम में मिलेगा, आचार्यश्री ने कहा- इसी तरह मोक्ष का फल भी इसी मुनि मुद्रा में लगेगा। वे व्यक्ति आगे चलकर मुनि पायसागर बने।

46 **शुभचन्द्र और भर्तृहरि**-राजा सिंहल के शुभचन्द्र और भर्तृहरि दो पुत्र हुए, 'राज समाज महा अघ कारण बैर बढावन हारा' अर्थात् राज और समाज को बैर एवं पाप का कारण जानकार दोनों विरक्त हो गये, एवं शुभचन्द्र जी ने वन में जाकर एक मुनिराज के निकट मुनि दीक्षा ले ली एवं घोर तप करना प्रारम्भ कर दिया, एवं भर्तृहरि पञ्चाग्नि तप करने वाले तापस का चेला बन गया, बारह वर्ष रहकर भर्तृहरि बहुत सी विद्या, तन्त्र, मन्त्र, यन्त्र, सीखकर जब जाने लगा, तब योगी ने एक सतविद्या और रसतुम्बी दी जिससे ताम्बा स्वर्ण बन जाता था, कुछ दिनों में भर्तृहरि के सैकड़ों शिष्य हो गये, और तन-मन से सेवा करने लगे, एक दिन उन्हें अपने भाई शुभचन्द्र की याद आई, वे कहाँ रहते हैं, और किस प्रकार हैं, और पता लगाने एक शिष्य को भेजा, जाकर देखा तो न कोई खाने की व्यवस्था है, न तन पर एक लङ्गोटी, सुन कर भर्तृहरि को बहुत

दु:ख हुआ, और शिष्य के हाँथ आधा तुम्बी रस भेजा, शुभचन्द्र जी ने कहा की पत्थर पर डाल दो, यह सुनकर भर्तृहरि को बहुत दु:ख हुआ, और स्वयं आधा तुम्बी रस लेकर भाई से मिलने चले गये, प्रणाम करके रस तुम्बी भेंट की, शुभचन्द्र जी ने उसे पत्थर पर फेंक दिया, देख कर भर्तृहरि को दु:ख हुआ, और कहा की आपने मेरी बारह वर्ष की कमाई नष्ट कर दी, आपने अभी तक क्या प्राप्त किया है ? दिखाइये, तब शुभचन्द्र जी ने पैर के नीचे की थोड़ी सी धूल उठा कर शिला पर डाल दी, तो शिला स्वर्णमय हो गयी, भर्तृहरि अवाक् हो गए और चरणों में गिरकर दीक्षा की प्रार्थना की, तब शुभचन्द्र जी ने विस्तृत धर्मोपदेश देकर उनके हृदय के कपाट खोल दिए, भर्तृहरि को दीक्षित करके योग का अध्ययन कराने के लिए ज्ञानार्णव ग्रन्थ की रचना की।

47 सन्त लेटे-लेटे आतेहैं, और बैठे-बैठे जाते हैं, और श्रावक लेटे-लेटे आते हैं, और लेटे-लेटे ही जाते हैं, उनकी अर्थी कफन से इसलिए ढकी होती है, कि उन्होंने जीवन में संयम नहीं पाला इसलिए मुँह दिखाने लायक नही हैं, सन्त की अर्थी खुली होती है और वे बैठे-बैठे जाते हैं।

48 **वज्रदन्त चक्रवर्ती**-वज्रदन्त चक्रवर्ती को माली ने सहस्त्रदल कमल भेंट किया, उसके अन्दर भौरा मरा पड़ा था, देखकर सोचने लगे ओ हो ! घ्राण इन्द्रिय के वशीभूत होकर मर गया। इससे चक्रवर्ती को वैराग्य हो गया, बड़े बेटे से कहा कि राज सम्भालो हम दीक्षा लेंगे, बेटा कहता है पिताजी राज अच्छा है या बुरा यदि अच्छा है तो आप क्यों छोड़ रहे हो, बुरा है तो प्यारे बेटे को क्यों दे रहे हो, हजार बेटों में से किसी ने भी राज नही लिया। गर्भस्थ शिशु को राज देकर सभी ने दीक्षा ले ली।

लोहा महँगा

49 साधु ने एक व्यक्ति को पारस मणि चार माह के लिए दिया, जितना सोना बनाना चाहो बना लो, वह बाजार में लोहा खरीदने गया, आज महँगा हैं कल खरीदेंगे, यह कहते कहते चार माह में लोहा नहीं खरीद सका, साधु ने अपना मणि वापस ले लिया, हमें भी नर भव रूपी मणि मिला, संयम का पालन कल करेंगे, ऐसा सोचकर सारा जीवन खो देते हैं।

50 **प्रद्युम्न का वैराग्य**- द्वारकाधीश कृष्णजी ने नेमिनाथ भगवान् से पूँछा, भगवन् ! ये द्वारका नगरी क्या हमेशा ऐसी ही हरी-भरी बनी रहेगी ? भगवान् ने कहा हे कृष्ण ! बारह वर्ष के बाद इस नगरी का द्वीपायन के द्वारा विनाश हो जायेगा, सुनकर बहुत लोगों ने दीक्षा ले ली, प्रद्युम्नजी को भी वैराग्य हो गया, प्रद्युम्नजी वसुदेव से आज्ञा लेने जाते हैं, वे कहते है बेटा ! अभी तुम्हारे

भोग भोगने के दिन हैं न कि वैराग्य धारण करने के, प्रद्युम्नजी ने कहा आप तो संसार के स्तम्भ बने रहो, मैं तो दीक्षा लेता हूँ, स्त्री से कहा प्रिय ! मैं दीक्षा लेने जाता हूँ, स्त्री कहती है वैरागी ने प्रिय सम्बोधन कैसे किया ? आप लो या न लो मैं तो दीक्षा लेने जाती हूँ, और प्रद्युम्न से पहले उनकी पत्नी दीक्षित हो गयी।

51 **यमपाल का संयम-** राजा ने अष्टान्हिक में सभी को हिंसा न करने का आदेश दिया, राजकुमार ने राजाज्ञा का उल्लङ्घन करके एक भेड़ को मारकर खा लिया, राजा को पता चला, तो राजा ने राजकुमार को फाँसी की सजा देने का आदेश दिया, चाण्डाल ने चतुर्दशी के दिन हिंसा का त्याग किया था जिसके कारण फाँसी देने से मना कर दिया, राजा ने दोनों को बाँधकर तालाब में फैकने का आदेश दिया, चाण्डाल के चतुर्दशी को हिंसा के त्याग के नियम के प्रभाव से, देवों ने सिंहासन की रचना की एवं राज कुमार को जल जन्तु खा गये।

52 पिता ने बेटों को बीज दिये और कहा सम्भाल के रखना, एक लड़के ने बेंच दिये, दूसरे ने तिजोरी में रख दिए, तीसरे ने खेत में बो कर सैकड़ों बोरा अनाज बना दिया, कुछ वर्षों बाद पिता ने बेटों से बीज माँगे, तो पहला बाजार दौड़ा, दूसरा तिजोरी में देखने गया तो सड़ गए थे, तीसरे ने खेत में से लाकर पिता का मन जीत लिया, इसी तरह धर्म रूपी बीज को संयम रूपी खेत में बो दो तो अनन्त गुना फलता है।

53 **धन्वन्तरि और विश्वानुलोम-**

धन्वन्तरि और विश्वानुलोम दोनों मित्र थे, एक जैन और एक जैनेत्तर, विश्वानुलोम ने सुन रखा था कि हाथी कुचल दे तो भी जैन मन्दिर मे नहीं जाना चाहिए, जबकि जैनेत्तर शास्त्र में जन मन्दिर पाठ था, जिसका अर्थ 'वेश्यालय अथवा मदिरालय' होता है, बाद में लोगों ने ईर्ष्या द्वेष के वश 'ज' के ऊपर दो मात्राएँ चढ़ा दीं, जिसका अर्थ जैन मन्दिर हो गया, जिससे लोग वेश्यालय और मदिरालय से तो परहेज करते नहीं हैं, जैन मन्दिर से परहेज करते हैं, इसलिए जब भी वह जैन मन्दिर के सामने से निकलता तब कानों में अङ्गुलि लगा लेता जिससे कोई शब्द कान मे न पढ़ जाए, एक बार उसे पैर में ठोकर लग गई जिससे उसके कान की अङ्गुलियाँ निकल गईं, तो 'देवों कि परछाईं नहीं होती' यह शब्द कान मे पढ़ गया, उसकी पत्नी को कोई अदृश्य होकर परेशान करता था, उसने देखा तो उसकी परछाईं थी, इसलिए उसने घर मे धुआँ करके उसके आँखों का अञ्जन दूर कर दिया और अपराधी को राजा के लिए सौंप दिया, वह विपत्ति से छूट गया, तब से उसका जैन मन्दिर के प्रति द्वेष दूर हो गया और वह मन्दिर जाकर दर्शन करने लगा और प्रवचन सुनने लगा, प्रवचन के बाद सबने नियम लिया तो उसने

भी नियम लिया 'विना सात कदम पीछे हटे गलत काम नहीं करेंगे'। एक बार रात को बारह बजे जुआ खेलकर लौटा तो देखता है कि मेरी पत्नि किसी पुरुष के साथ सो रही है, तुरन्त तलवार निकाल कर मारने के लिए तैयार हुआ तो तुरन्त उसे याद आया कि 'सात कदम पीछे हटने के बाद ही गलत काम करना है' जैसे ही पीछे हुआ कि वहाँ से आबाज आई माँ पीछे खिसको गर्मी लग रही है, समीप आकर देखा तो वे सास बहु थीं, उस रात वे नाटक दिखाने गईं थीं और वेश-भूषा बदले विना ही सो गई थीं, उसकी पत्नी गर्भवती थी, अतः तीन प्राणियों कि रक्षा हो गई जिससे उसकी श्रद्धा और बढ़ गई। दूसरे दिन प्रवचन के बाद अनजान फल न खाने का नियम लिया। जुआ खेल रहा था सिपाहियों ने पीछा किया तो सभी जुआरी जङ्गल मे भाग गए, भूख लगने पर सभी एक वृक्ष के फल खाने को तैयार हुए तो विश्वानुलोम ने फल का नाम पूँछा नाम ज्ञात न होने पर उसने फल नहीं खाए, शेष लोग विष फल खाकर मर गए, जिससे उसकी दिगम्बर मुनि पर श्रद्धा और बढ़ गई। तीसरे दिन प्रवचन के बाद देवता को समर्पित द्रव्य नहीं खाने का नियम लिया। एक बार पुनः जुआ मे पकड़े जाने के भय से सभी जुआरी भागे, भूख लगने पर एक मन्दिर में चढ़े लड्डू-पेड़े खाकर शेष जुआरी मर गए क्योंकि उस पर एक जहरीला सर्प जहर छोड़ गया था, उसके बच जाने से उसकी श्रद्धा और बढ़ गई। आगे चलकर उसने दीक्षा लेकर आत्म कल्याण किया।

असंयम का होना, भव-भव में रोना-

1 **आरम्भे णत्थि दया, महिलासंगेण णासए बम्भं।**
संकाए सम्मतं, पव्वज्जा अत्थ गहणेण।।
आरम्भ में दया नहीं होती, स्त्री की सङ्गति से ब्रह्मचर्य नष्ट हो जाता है, शङ्का से सम्यक्त्व एवं धनग्रहण करने से दीक्षा नष्ट हो जाती है।

2 **इह जाहि वाहिया वि य, जीवा पावन्ति दारुणं दुक्खं।**
सेवंता वि य उभये, ताओ चत्तारि सण्णाओ।।
इस लोक में 'आहार, भय, मैथुन और परिग्रह' संज्ञाओं से बाधित होकर जीव तीव्र दुःख पाता है और उनका सेवन करता है तो दोनों लोकों में दुःख पाता है।

3 **मणुआ सुरामरिंदा, अहिद्दुदा इंदिएहिं सहजेहिं।**
असहंता तं दुःखं, रमन्ति विषयेषु रम्येषु।।
चक्रवर्ती, असुरेन्द्र और सुरेन्द्र स्वाभाविक इन्द्रियों से पीड़ित होते हुए, उस दुःख को सहन न कर सकने से रम्य विषयों में रमण करते हैं।

4 **जेसिं विसएसु रदी, तेसिं दुक्खं वियाण सब्भावं।**
जई तं णहि सब्भावं, वावारो णत्थि विसयत्थं।।
जिन्हें विषयों में रति है उन्हें दु:ख स्वाभाविक जानो, क्योंकि यदि वह दु:ख स्वाभाविक न हो तो विषयों में व्यापार न हो।

5 **यावज्जीवं सुखं जीवेत्, ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।**
भस्मी भूतस्य देहस्य, पुनरागमनं कुतो भवेत्।।
नास्तिक मानता है कि जब तक जीवन है तब तक सुख से जियो अगर धन न हो तो कर्ज लेकर घी पियो क्योंकि शरीर के जल जाने पर पुन: कहाँ से मिलेगा।

6 **करिष्यामि करिष्यामि, करिष्यामीति चिन्त्यते।**
मरिष्यामि मरिष्यामि, मरिष्यामीति विस्मृतं।।
आलसी सोचता है कर लेंगे कर लेंगे कर लेंगे, इस चिन्ता में मर जाएंगे, मर जाएंगे, मर जाएंगे यह भूल ही जाता हैं।

7 **न तदस्तीन्द्रीयार्थेषु, यत्क्षेमङ्करमात्मन:।**
तथापि रमते वाला:, तत्रैवाज्ञान भावनात्।।
इन्द्रिय विषयों मे आत्म हितकारी कुछ भी नहीं है फिर भी जीव अज्ञान के कारण उन्हीं विषयों में रमता है।

8 **कृत्वा धर्म विघातं, विषय सुखान्यनुभवन्ति ये मोहात्।**
आच्छिद्य तरुन् मूलात्, फलानि गृह्णन्ति ते पापा:।।
जो मोही धर्म का विघात करके विषय सुख का अनुभव करते हैं वे पापी वृक्ष को जड़ से काटकर फल पाना चाहते हैं।

9 **रात्रिर्गमष्यिति भविष्यति सुप्रभातं, भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पङ्कजश्री।**
एवं विचिन्त्यति कोषगते द्विरेफ़े, हा हन्त हन्त नलनि गज उज्जहार।।
पराग को पीते-पीते कमल बन्द हो गया, भौंरा विचार करता है, रात्रि व्यतीत होगी सूर्य उदित होगा, कमल खिल जाएगा हम उड़ जाएंगे, इतने में हाथी आकर के कमलनि सहित उसे खा जाता है, इसी प्रकार संसारी प्राणी योजनाएँ बनाता रहता है और सोचता है कि इसके बाद आत्म कल्याण कर लेंगे बीच में ही यमराज रूपी हाथी खा जाता है।

10 **अन्धादयं महानन्धो, विषयान्धी कृतेक्षणः।**
चक्षुषान्धो न जानाति, विषयान्धो न केनचित्।।
विषयान्ध व्यक्ति अन्धे से भी बड़ा अन्धा है क्योंकि अन्धे को केवल आँखों से नहीं दिखता विषयान्ध की एक भी इन्द्रिय काम नहीं करती हैं।

11 **जो खलु संसारत्थो, जीवो तत्तो दु होदि परिणामो।**
परिणामादो कम्मं, कम्मादो होदि गदिसु गदी।।
गदिमधिगदस्स देहो, देहादो इंदियाणि जायंते।
तेहिं दु विसयग्गहणं, तत्तो रागो व दोसो वा।।
जायदि जीवस्सेवं, भावो संसारचक्क वालम्मि।
इदि जिणवरेहिं भणिदो, अणादिणिधणो सणिधणो वा।।
जो यह संसारी जीव है उसके यह राग-द्वेष आदि अशुद्ध भाव होते हैं, उनसे ज्ञानावरणादि आठ कर्मों का बन्ध होता है, कर्मों से एक गति से दूसरी गति को प्राप्त होता है, गति को प्राप्त हुए जीव के औदारिकादि शरीर होता है, शरीर में इन्द्रियाँ उत्पन्न होती हैं, इन्द्रियों से विषय ग्रहण होता है और उससे राग तथा द्वेष उत्पन्न होते हैं, संसार रुपी चक्र में भ्रमण करने वाले जीव के ऐसे अशुद्ध भाव अभव्य के अनादि-अनन्त और भव्य के अनादि-सान्त होते हैं, ऐसा श्री जिनेन्द्रदेव ने कहा है।

12 दुर्लभ मनुष्य पर्याय को विषय भोगों में लगाना प्याज की खेती में कपूर की बाड़ी लगाने के सामान है।

संयम दोहावली-

13 **ज्यों मतिहीन विवेक विना नर, पाय मतङ्गज ईंधन ढ़ोवे,**
कञ्चन भाजन धूल भरे सठ, मूढ़ सुधारस सों पग धोवे।
वाहत काग उड़ावन कारण, डार महामणि मूरख रोवे,
त्यों यह दुर्लभ देह बनारसी, पाय अज्ञान अकारण खोवे।।

''घड़ी घड़ी में बदलती घड़ी''

14 **घड़ी न राव को जाने, घड़ी न रङ्क गिनती है। घड़ी के सामने चलती किसी की भी न विनती है।**
करोडों में नहीं चूके, घड़ी का वो निशाना है। घड़ी तो हर घड़ी बदले, घड़ी का क्या ठिकाना है।

15 **बीतने वाली घड़ी को कौन लौटा पायेगा, इस धरा का इस धरा पर सब धरा रह जायेगा।**

जिन्दगी भर का कमाया साथ में क्या जायेगा, यह सुअवसर खो दिया तो अन्त में पछतायेगा।।

कविता

16 **काका घड़ी न खोइए गई घड़ी नही आय, यह सोने की है घड़ी सोने में नहीं जाय।**
सोने में नहीं जाय घड़ी का नहीं ठिकाना, घड़ी-घड़ी में घड़ी बदलती किसने जाना।
कह काका समझाए घड़ी मत छोड़ो खाली, घड़ी-घड़ी में घड़ी आ रही जाने वाली।।
घड़ी नहीं ठहरात घड़ी मत व्यर्थ निकारो, घड़ी-घड़ी में घड़ी आ रही ये ही विचारो।
कह काका कवि जैन घड़ी का सही निशाना, किसकी कब आ जाए घड़ी का कौन ठिकाना।।

17 **अन्तर विषय वासना वर्ते, बाहर लोक लाज भयकारी।**
ताते परम दिगम्बर मुद्रा, धर न सके दीन संसारी।।

18 **ऊँचे गिरि से जो गिरे, मरे एक ही बार।**
जो संयम गिरि से गिरे, बिगड़े जन्म हजार।

19 **बालपने में ज्ञान न लह्यो, तरुण समय तरुणी रत रह्यो।**
अर्ध मृतक सम बूढ़ा पनो, कैसे रूप लखे आपनो।।

20 **बालपने में ज्ञान जो लहे, तरुण समय संयम रत रह्यो।**
जब आवे बूढ़ा पनो, तब रूप लखो आपनो।।

21 **ओला घोर बड़ा निशिभोजन बहुबीजा बैंगन सन्धान,**
बड़ पीपर ऊमर कठऊमर पाकर फल जो होय अजान।
कन्दमूल माटी विष आमिष मधुमाखन अरु मदिरापान,
फल अतितुच्छ तुषार चलितरस ये बाईस अभक्ष्य बखान।।

22 **एक बार खाय सो योगी, दो बार खाय सो भोगी।**
तीन बार खाय सो रोगी, चार बार खाए तो जल्दी मृत्यु होगी।।

23 **मनुज जन्म दुर्लभ यह, होय न दूजी बार।**
पक्का फल जो गिर गया, फेर न लागे डाल।।

संयम सीख, मोती मिला सीप-

24 रेशम के वस्त्र, क्रीम, लिपिस्टिक, चमड़े के जूते आदि स्पर्शन इन्द्रिय के असंयम हैं।

25 सुन्दर-सुन्दर भोजन, पान-मसाला, कोकोकोला, चाट-पकोड़ी गाली-हँसी आदि रसना इन्द्रिय के असंयम हैं।

26 हड़बड़ी में अधूरी सांस लेना, खुशबू लेना, तास खेलने के लिए समय हैं शुभ कार्य के लिए समय नहीं हैं यह घ्राण इन्द्रिय का असंयम है।

27 ऐसे देखो जैसे माँ बेटे को, भाई बहन को, गाय बछड़े को देखती है, कुत्ता बिल्ली की तरह देखना आँख का अंसयम है।

28 मन्त्र, भजन, प्रवचन सुनना संयम है, गाली, निन्दा एवं अश्लील कथाएँ सुनना कर्ण इन्द्रिय का असंयम है।

29 स्पर्शन में हाथी, रसना में मछली, घ्राण में भौंरा, चक्षु में पतङ्गा, कर्ण में हिरण ये पाँचों जीव एक-एक इन्द्रिय के विषय में आसक्त होकर अपने प्राणों को खो देते हैं, फिर जो पाँचों इन्द्रियों के विषयों में आसक्त हैं उनका क्या होगा ?

30 फुटवाल जिसके पास जाती है वही लात मारता है, इसी प्रकार जीव सुख की आशा से जिस के पास जाता है वही ठुकरा देता है।

31 यदि खेत में वाड़ी न हो तो लहलहाते खेत चौपट हो जाते हैं, इसी प्रकार संयम वाड़ी है संयम न हो तो शेष गुण भी स्थायी नहीं रहते हैं।

32 संयमी को देखकर आनन्द नहीं आना, असंयम है।

33 घर में भाई का जूठा नहीं खायेगें होटल में और वफर में जूठा खायेंगे, घर में वासी वस्तु नहीं खायेगें होटल में कई दिन पुरानी मेंदा इत्यादि की वस्तुयें खायेंगें।

34 डरना है तो पाप से डरो संयम से नहीं। मदिरालय की ओर जाने वाले हजारों कदम हैं, मन्दिर की ओर जाने वाले कम हैं।

35 कोई पदार्थ पहली बार दिखने पर दृष्टि विरागी होती हैं, वही पदार्थ दूसरी बार देखने पर राग होता है, और उसी पदार्थ को तीसरी बार देखने पर प्रायः विवेक नहीं रहता है।

36 तीन गति तेरासी लाख, निन्यानवे हजार, नौ सौ निन्यानवे योनियों में संयम नहीं होता है।

37 जैसे 'मृगमरीचिका' को जल समझ कर मृग मरुस्थल में जल के लिये दौड़ लगाते हैं उसी प्रकार संसारी प्राणी पंचेन्द्रिय के विषयोंसे सुख प्राप्त करने के लिये दौड़ लगाते हैं और अन्त में प्राण गवां देते हैं।

38 सम्यक् चारित्र का धारक मनुष्य धनहीन होकर भी मोक्ष का स्वामी हो जाता है और सम्यक् चारित्र से रहित चक्रवर्ती भी दुःखों की सन्तति को प्राप्त होता है।

39 नट के समान दुरात्मा मनुष्य को बहुत अध्ययन करने से क्या लाभ है, अध्ययन करना और

शास्त्र का सुनना तो उसी का सार्थक है जो चारित्र का पालन करता है।

40 दुर्जेय इन्द्रियों द्वारा ठगाया गया जो दीन पुरुष जिह्वा को जीतने में असमर्थ रहता है, वह कामादिक उद्दण्ड शत्रुओं को कैसे नष्ट कर सकता है।

41 जो सबको भक्षण करने वाली शाकिनी रूप जिह्वा को वश में नहीं कर सकता है, वह दीक्षा लेकर तप करता हुआ लज्जित क्यों नहीं होता है।

42 जो जिह्वालोभी मूर्ख मनुष्य भक्ष्य-अभक्ष्य का विचार नहीं करता है, वह दुर्बुद्धि अभक्ष्य खाकर दुर्गति को प्राप्त होता है।

43 मनुष्यों का गृहस्थ रहना अच्छा है परन्तु इन्द्रिय, आहारदोष और रागद्वेषादिक के द्वारा कलङ्कित मुनि पद अच्छा नहीं है।

44 यथायोग्य निर्दोष आहार करना अच्छा है, परन्तु मासोपवास आदि की पारणा में सदोष आहार करना अच्छा नहीं है।

45 एक बार ही प्राणों का नाश करने वाला हालाहल विष खा लेना अच्छा है, परन्तु सदोष आहार लेना अच्छा नहीं है, क्योंकि वह संसार सागर में गिराने वाला है।

46 जिस असंयम से आज तक सुख नहीं मिला, अज्ञानी वहीं सुख खोज रहा है।

47 तम्बाकु के सेवन से प्रति वर्ष साठ लाख मौतें होती हैं।

48 रुद्र मुनि ग्यारहवें गुणस्थान से गिरकर विषयासक्त होकर सप्तम नरक तक में चले जाते हैं।

49 वैज्ञानिकों के अनुसार अनछने पानी की एक बूँद में 'छत्तीस हजार चार सौ पचास' जीव पाये जाते हैं किन्तु जैनाचार्यो के अनुसार असंख्यात जीव होते हैं ।

50 गृहस्थ की निर्जरा गजस्नान या मथानी की रस्सी की तरह है, एक ओर से निर्जरा होती है और दूसरी ओर असंयम से पुनः कर्म बँध जाते हैं।

मुर्गा हनन बच्चों का मरण

51 पंजाब में एक मुस्लिम भाई रोज मुर्गी लाकर घर में काटता था, उनकी पीड़ा पर उसको आनन्द आता था, उसके तीन बच्चे थे, एक बच्चे ने छोटे भाई पर छुरी चलाई, वह चिल्ला कर मर रहा था, यह आनन्द ले रहा था, माँ के डर से वह छत से गिर कर मर गया, माँ छोटे बच्चे को टब में नहला रही थी, उसको छोड़कर ऊपर तक गई तब तक छोटा बच्चा टब में गिरा और डूबकर मर गया। इस प्रकार उसे हिंसा का फल उसी जन्म में मिल गया।

52 **आचार्यों ने लिखा है-** अगर तू इन्द्रियों का दमन नहीं कर पाया तो फिर परमार्थ की दुकान

क्यों लगा रखी है। बाहर से धुला हुआ है और अन्दर से मलिन है ऐसे में तेरे हाथ में कुछ भी नहीं लगेगा।

53 मुठ्ठी में पत्थर बन्द कर उसे न छोड़ने की इच्छा रखने वाले पुरूष के हाथ में हीरा कहाँ से आ सकता है, कुछ पाना है तो कुछ छोड़ना अनिवार्य हैं।

54 लोग गड़न्त तो छोड़ते है पर मनगड़न्त नहीं छोड़ते हैं।

55 घर को छोड़ देने पर भी अगर उसका विकल्प नहीं छूटता है तो आत्मा में स्थिरता नहीं आती है।

56 उपकरण बदले पर लक्ष्य एवं क्रिया कलाप नहीं बदले इसलिए संसार में ही रुल रहे हैं।

57 कषाय जितनी तीव्र होती है व्यक्ति उतने जल्दी विचलित होता है।

58 विषय वासना का चक्कर सबके लिए अहितकारी है, चाहे वे तीर्थङ्कर भी क्यों न हों।

59 गम्भीरता के विना तपश्चरण का अनन्द नहीं आता है।

60 सांसारिक सुख तीन प्रकार का है पहला विषय सुख शहद लपेटी तलवार के सामान, दूसरा देवों का दिव्य सुख जलते हुए चन्दन की लकड़ी के सामान, तीसरा चक्रवर्ती का सुख विष मिश्रित अन्न के समान और सिद्धों का सुख आकुलता रहित होता है।

61 जो स्वयं पर अनुशासन नहीं कर सकता वह दूसरों पर क्या अनुशासन करेगा।

62 आग, वज्र, विष और सर्प से एक भव बर्बाद होता है किन्तु भोगों से अनन्त भव बर्बाद हो जाते हैं।

63 विषयासक्ति से देव भी एकेन्द्रियों में जन्म ले लेता है और नारकियों को वहाँ की सामग्री में राग न होने से पञ्चेन्द्रियों में ही उत्पन्न होते हैं।

64 **सर्प पिटारे** में रहता है तो देवता नजर आता है, घर में निकल आता है तो काल नजर आता है, मिर्च की धूनी और लाठियों से पीटा जाता हैं, उसी प्रकार मनुष्य का मन संयम के पिटारे में रहता है तो धरती पर पूजा जाता है, संयम के अभाव में रावण व कंस की तरह मारा जाता है।

65 इन्द्रिय जन्य ज्ञान व सुख आत्मानुभव में बाधक है अतः हेय है।

66 पेट को नगर पालिका का कचरा घर या कब्रिस्तान नहीं बनाना चाहिए।

67 जिसका खान-पान शुद्ध नहीं होता है उसका खानदान शुद्ध नहीं होता है।

68 लाख पति भी क्षण भर में खाक पति बन जाता है, महलों में रहने वाला भी सुरक्षा हीन हो जाता है।

69 षट्काय में स्वयं भी आते हैं, विषय कषाय से स्वयं का घात हो रहा है इस और ध्यान ही नहीं है।

70 मुखाग्नि बेटा देता है, लेकिन सिगरेट पीने वाले अपने हाथ से ही अपने मुँह में मुखाग्नि देते हैं।

71 जब माल होता है, तो दोस्त साथ देते हैं और जब मार पड़ती है, तो दोस्त किनारे हो जाते हैं।

72 **मासोपवासी मुनि कंस बना**- राजा उग्रसेन धर्मात्मा पुरूष थे, एक दिन उनके नगर में एक मासोपवासी मुनिराज का आगमन हुआ, राजा ने नगर में घोषणा करा दी कि मुनि का आहार राज महल में होगा, कोई साधु का पड़गाहन न करे, जब साधु चर्या को आये तब राजा के यहाँ पहली बार दासी का उपद्रव हो गया, साधु वापस चले गये और एक माह का पुनः उपवास ले लिया, पुनः साधु आये तो राजा ने वही घोषणा करायी, दूसरी बार नगर में हाथी का उपद्रव हो गया, पड़गाहन नहीं हो सका, साधु ने पुनः एक माह का उपवास किया, तीसरी बार साधु आये, तो उस समय नगर में आग लग गयी, इस प्रकार चार माह के उपवास हो गये। साधु बगीचे में ध्यान कर रहे थे, वहाँ से लोग निकले और चर्चा करने लगे कि ये राजा कितना दुष्ट है न स्वयं आहार देता है और न ही दूसरों को देने देता है। ये शब्द सुनकर साधु की कषाय भड़क गयी, निदान कर लिया कि अगले भव में मैं इसका बेटा बनूँ, मुनिराज संक्लेश परिणामों से मरे और उसी राजा की रानी के गर्भ में आये, तब रानी को ये भाव हुआ कि राजा के पेट को चीर कर खून पी लूँ, वे मुनि कंस बने और पिता को कारागार में डालकर यातनाएँ दीं।

73 **भूल वश नींद की गोली खाई**- जगदलपुर के डॉ. जगदीशचन्द्रमिश्र का बेटा उस दिन स्कूल जाने से मना कर रहा था, माँ ने कहा बेटा आज अन्तिम दिन है, कल से छुट्टियाँ होना है, स्कूल चले जाओ, टेबल पर तुम्हारी गोली रखी है उसको खालो, बेटा ने अपनी गोली के स्थान पर नींद की गोली खाई और स्कूल चला गया, वहाँ उसको नींद आने लगी तो वह क्लास से स्टोर रूम में जाकर सो गया, छुट्टी हो गयी, चपरासी ताला लगा करके चला गया, बच्चा वहीं सोता रहा, जब नींद खुली तो रो-रो कर भूख-प्यास के कारण स्वयं का मूत्र तक पिया और पुस्तकें तक फाड़ कर खालीं और मर गया, पन्द्रह दिन बाद पता चला, माँ की भूल से बच्चे की मौत हो गई।

74 **पाँच मिनिट सेज पर सोने में ये सजा**- एक दासी ने राजा की सेज लगाई और सोचा थोड़ी देर सोकर देखूँ, इतने में राजा आ गया, उसने कोड़े लगाये वह हँसती रही, राजा के पूँछने पर उसने कहा कि पाँच मिनट की इतनी सजा तो आप को कितनी सजा मिलेगी।

संस्कृत सदन संयम प्राप्ति का यतन-

1 **भिक्खं चर वस रण्ये, थोवं जीवय मा बभूव जंपय।**
दुक्खं सह जिय णिद्दा, मैत्ती भावेण सुट्ठु बैरग्गं।।

भिक्षा से भोजन करो, जङ्गल मे निवास करो, भोजन थोड़ा करो, ज्यादा मत बोलो, दुःख सहन करो, निद्रा जीतो, और प्राणी मात्र के प्रति मित्रता रखो एवं वैराग्य धारण करो।

2 **भोगी च रोगमाप्नोति, रोगी भवति शोकवान।**
शोकवान् क्लेशमाप्नोति, तस्माद् योगी भवेत् बुधः।।
भोगी रोग को प्राप्त होता है, रोगी शोक को प्राप्त होता है, शोकवान क्लेश को प्राप्त होता है इसलिए समझदार को योगी अवस्था धारण करना चाहिये।

3 **जने जने न वैराग्यं, गृहे गृहे न सज्जनः।**
भवे भवे न सद्दृष्टिः, काले काले न शुद्ध धीः।।
जन-जन में वैराग्य नहीं होता, घर-घर में सज्जन नहीं होते, भव-भव में सम्यग्दर्शन नहीं होता और हमेशा बुद्धि शुद्ध नहीं होती है।

4 वाहन में ब्रेक, घोड़े में लगाम, नदी में तटों का बन्धन जनोपयोगी बनकर सुरक्षित गन्तव्य पर पहुँचाकर सागर सा विराट रूप दिलाता है।

5 **अक्खाणं रसणी, कम्माणं मोहणी तह वयाणं बम्भवयं।**
गुत्तीण य मणगुत्ति, चउरो दुक्खेण जीयन्ते।।
इन्द्रियों मे रसना, कर्मों मे मोहनीय, व्रतों मे ब्रह्मचर्य और गुप्तियों में मनोगुप्ति, ये चारों कठिनाई से जीते जाते हैं।

6 **अंतो णत्थि सुइणं, कालो थोवो वयं च दुम्मेहा।**
तण्णवरि सिक्खीदव्वं, जं जर मरणं खयं कुणई।।
शास्त्र का पार नहीं है, आयु थोड़ी है एवं हम सब दुर्बुद्धि हैं, इसलिए वह सीख लेना चाहियें जिससे जन्म-मरण का क्षय हो जाए।

7 **अवश्यं यदि नश्यन्ति, स्थित्वापि विषयाश्चिरं।**
स्वयं त्याज्या स्तथाहि स्यान्, मुक्ति संसृतिरन्यथा।।
चिर काल तक स्थिर रह कर भी विषय अवश्य ही नष्ट हो जाते हैं, यदि उन्हें स्वयं छोड़ दिया जाए तो मोक्ष प्राप्त होता है, यदि वे छूटते हैं तो संसार प्राप्त होता हैं।

8 **मनो यस्य वशं तस्य, भवेत् सर्वं जगत् वशे।**
मनसस्तु वशं योऽस्ति, स सर्व जगतो वशे।।

जिसका मन वश में है सारा जगत उसके वश में होता है और जो मन के वश में होता है वह सारे जगत के वश में होता है।

9 **कधं चरे कधं चिट्ठे, कधमासे कधं सए। कधं भुंजेज्ज भासेज्ज कधं पावं ण वज्झई।।**
जदं चरे जदं चिट्ठे जदमासे जदं सए। जदं भुंजेज्ज भासेज्ज एवं पावं ण वज्झई।।
कैसे चलें, कैसे बैठें, कैसे खड़े हों, कैसे सोयें, कैसे खाएं जिससे कि पाप का बन्ध न हो ? देख कर चलें, यत्नाचार पूर्वक बैठें, यत्नाचार पूर्वक खड़े हों, यत्नाचार पूर्वक सोयें, यत्नाचार पूर्वक खाएं अर्थात् प्रत्येक कार्य में जीव रक्षा का ध्यान रखें। इससे पाप का बन्ध नहीं होगा।

10 **समीक्ष्य व्रतमादेय, मात्तं पाल्यं प्रयत्नतः।**
छिन्नं दर्पात् प्रमादाद्वा, प्रत्यवस्थाप्यमञ्जसा।।
सोच विचार कर व्रत लेना चाहिये, लेकर प्रयत्न पूर्वक पालन करना चाहिये, अहंकार या प्रमाद से दोष लग जाने पर प्रायश्चित्त लेकर शुद्ध कर लेना चाहिये।

11 **तवयरणं वयधरणं, संजमसरणं च जीव दया करणं।**
अन्ते समाहि मरणं, चउविह दुक्खं णिवारेई।।
तप करना, व्रत धारण करना, संयम धारण करना, जीव दया करना और अन्त में समाधि मरण करने से चारों गति सम्बन्धी दुःखों का निवारण हो जाता है।

12 **रविवारात्तु लवणं, हरितं च गुड़ं घृतं।**
दुग्धं दधि तैलमेव, त्यजेदेकैक वासरे।।
रविवार को नमक, सोमवार को हरी, मङ्गलवार को मीठा, बुधवार को घी, गुरूवार को दूध, शुक्रवार को दही, शनिवार को तैल का त्याग करना चाहिए।

13 **न्यायोपात्त धनो यजन् गुणगुरून् सदगीस्त्रिवर्ग भजन्,**
अन्योन्यानुगुणं तदर्ह गृहणी स्थानालयो ह्री मयः।
युक्ताहार विहार आर्य समिति प्राज्ञः कृतज्ञो वशी,
श्रृण्वन् धर्म कथां दयालु रघभी सागार धर्म चरेत्।।
न्याय पूर्वक आजीविका हो, नव देवता की पूजा करने वाला हो, प्रशस्त वचन बोलने वाला हो, धर्म, अर्थ, काम पुरुषार्थ का एक-दूसरे की क्षति करने वाला न हो, गृहस्थ धर्म के योग्य स्त्री हो, सत्सङ्गति वाला स्थान हो, अयोग्य कार्य के करने में लज्जा वाला हो, योग्य आहार-विहार करने वाला हो, गुणवानों की सङ्गति करने वाला हो, बुद्धिमान हो, इन्द्रिय जेता हो, धर्म कथा

सुनने वाला हो, कृतज्ञ हो, दयालु हो, पाप भीरु हो वह श्रावक कहलाता है।

14 **यावत् स्वस्थमिदं शरीरमरुजं, यावज्जरा दूरतो,**
यावच्चेन्द्रिय शक्तिरप्रतिहतः, यावत् क्षयो नायुषः।
आत्म श्रेयसि तावदेव विदुषः, कार्यः प्रयत्नो महान्,
सन्दीप्ते भवनं तु कूप खननं, प्रत्युद्यमः कीदृशः।।

जिस प्रकार घर में आग लगने पर कुँआ खोदने का प्रयत्न करना व्यर्थ है, उसी प्रकार जब तक शरीर स्वस्थ है, जब तक वृद्धावस्था दूर है, जब तक इन्द्रियों में क्षमता है और जब तक आयु क्षय नहीं हुई है, तब तक बुद्धि मान को आत्म कल्याण के लिए महान प्रयत्न कर लेना चाहिए।

15 **विपति धैर्यमथाभ्युदयेक्षमा, सदसि वाक्पटुता युधिविक्रमः।**
यशसि चाभिरुचि र्व्यसनं श्रुतौ, प्रकृति सिद्धमिदं हि महात्मनः।।

विपत्ति में धैर्य, अभ्युदय में क्षमाभाव, सभा में वाक्पटुता, युद्ध में पौरुष, यश में अभिरुचि, स्वाध्याय का व्यसन इतने गुण महात्माओं में स्वभाव से होते हैं।

16 **ज्ञानं यत्र पुरस्सरं सहचरी लज्जा तपः सम्बलं,**
चारित्रं शिविका निवेशन भुवः स्वर्गा गुणा रक्षकाः।
पन्थाश्च प्रगुणः शमाम्बु बहलश् छायादया भावना,
यानं तं मुनिमापयेदभिमतं स्थानं विना विप्लवैः।।

जहाँ पर ज्ञान आगे है, लज्जा साथी है, तप का सम्बल है, चारित्र की पालकी है, ठहरने का स्थान स्वर्ग है, गुण रक्षक हैं, सरलता रुपी मार्ग है, समता रुपी घनी शीतल छाया है और दया की भावना है उस वाहन पर यात्रा करने वाले मुनि विना विघ्न के मोक्ष प्राप्त करते हैं।

17 **दुःखे णज्जइ अप्पा, अप्पा णाऊण भावना दुःखं।**
भाविय सहाव पुरुषो, विषयेषु विरज्जए दुःखं।।

आत्मा बड़ी कठिनाई से जानी जाती है, जान लेने के बाद भावना भाना कठिन होता है, आत्मा की भावना भाने वाले पुरुषों को भी विषयों से विरक्त होना कठिन होता है।

18 **दया दम त्याग समाधिसन्ततेः, पथि प्रयाहि प्रगुणं प्रयत्नवान्।**
नयत्यवस्यं वचसामगोचरं, विकल्प दूरं परमं किमप्यसौ।।

दया, इन्द्रिय दमन, त्याग, ध्यान की परम्परा के मार्ग में सरलता के साथ प्रयत्न पूर्वक गमन करो, यह मार्ग अवश्य ही विकल्पों से रहित वचनातीत सुखों वाले स्थान में ले जाता है।

19 नाटक के पहले महीनों अभ्यास करते हैं तब थोड़ी देर के लिए रंगमंच पर सफल होते हैं, उसी प्रकार इन्द्रिय और कषाय को जीतने का अभ्यास कई भवों में करना पड़ता है तब सफलता(मुक्ति) मिलती है।

20 प्रतिदिन बोधि दुर्लभ भावना का चिन्तन करना चाहिए, 'दुर्लभ है निगोद से थावर' इत्यादि।

21 मूर्ति बनाते समय शिल्पी पहले मोटे-मोटे पत्थर को अलग करता है, बाद में छोटी हथौड़ी से छोटे-छोटे पत्थर अलग करता है, उसी प्रकार पहले मोटे-मोटे अशुभराग को त्यागना चाहिए फिर सूक्ष्म अशुभराग का त्याग करना चाहिए।

22 पाँचमार्ग हैं- 1.मोक्ष मार्ग, 2.नरकमार्ग, 3.तिर्यञ्चमार्ग, 4.मनुष्यमार्ग, 5.देवमार्ग।मनुष्य पर्याय जंक्शन हैं, यहाँ से चौरासी लाख योनियों के द्वार खुलते हैं।

23 सोना-चाँदी की मिली हुई अवस्था की तरह शरीर और आत्मा की अवस्था है।

24 विदेश में गाँधीजी को सूट पहनने को, मांस सेवन को, शराब पीने को लोगों ने बहुत आग्रह किया, लेकिन गाँधीजी ने अपने नियम को नही तोड़ा।

25 लक्ष्य एक साथ बनाया जाता है प्राप्त क्रम से किया जाता है।

26 अष्टमी चतुर्दशी आदि पर्व हरी भक्षण के नहीं हरि भजन के दिन हैं।

27 छोटा सा नाला भी जब विना घाट के पार नहीं कर सकते, तब संसार-सागर पार करने के लिए मनुष्य जन्म रूपी घाट व जैन धर्म रूपी नौका आवश्यक है।

28 संयम की वृद्धि स्वाध्याय एवं वैराग्य से होती है।

29 सम्यग्दर्शन चारों गतियों में हो सकता है पर मुनि दीक्षा मनुष्य पर्याय में ही होती है।

30 संसार की सभी वस्तुएँ नश्वर हैं।

31 इन्द्रियाँ धोखेबाज हैं साधक को साधना के मार्ग में सदा सावधान रहना चाहिए।

32 दूसरों को हमारे माध्यम से व्यवधान न हो यह भावना भी अहिंसा है।

33 आज का पुरूषार्थ कल भाग्य बन जाता है।

34 जिव्हा किसी को नहीं रखती, सरस को भीतर नीरस को बाहर कर देती है।

35 आसक्ति रहित होकर भोजन करना ही गृहस्थ की भोजन शुद्धि है।

36 छब्बीस दिन डनलप के गद्दे पर तो चार दिन चटाई पर भी सोने का अभ्यास करो।

37 **श्रावक के सत्रह नियम**-1. कुगुरू, 2. कुदेव, 3. कुधर्म की सेवा, 4. अनर्थदण्ड, 5. पापयुक्त व्यापार, 6. जुआ, 7. मांस, 8. शहद, 9. वेश्या, 10. चोरी, 11. परस्त्री, 12.हिंसा के उपकरणों

का दान, 13. शिकार, 14. स्थूल-त्रस की हिंसा, 15. असत्य वचन, 16.विना छना जल, 17. रात्रिभोजन, इन सत्रह चीजों का जीवन पर्यन्त के लिए त्याग करना चाहिए।

38 मनुष्य पर्याय को धर्मरूपी भूमि में बोना आम चूसकर गुठली खेत में गाड़ देने जैसा है और मनुष्य पर्याय को भोगों में खोना गुठली सेक कर खा लेने जैसा है।

39 **पिता की अन्तिम सीख-** लोगों ने कहा पण्डितजी आपका बेटा बिगड़ रहा है, पण्डितजी ने कोशिश की लेकिन सुधार नहीं हुआ अन्त में पिताजी ने कहा बेटा अब हम जा रहे हैं, आप यदि व्यसन नहीं छोड़ते तो विपरीत क्रम से सेवन करें, वेश्या सेवन प्रातः करने जाय, दारू काउन्टर के पीछे से खरीदें, जुआ जब सज्जन कहे तब खेलें, अन्त में अनुभव आने पर बेटा सुधर गया।

रनवास से वनवास

40 एक नगर में राजा बनने के पाँच साल बाद राजा को जङ्गल में छोड़ दिया जाता था, इसलिए कोई राजा नहीं बनना चाहता था, एक राजा ने उस जङ्गल में नगर बसा लिया और अपने अनुकूल सारी व्यवस्था बना ली। इसी तरह मनुष्य पर्याय रुपी राजा बनकर मोक्ष नगर बसायें अन्यथा चौरासी लाख योनि के वन में जाने से कोई नहीं रोक सकता है।

41 **पाप त्याग के बाद भी अल्प रहे संस्कार।**
झालर बजना बन्द हो, फिर भी हो झङ्कार।।

42 **विषय बड़ा विष है सुनो विष सेवन से मौत।**
विषय कषाय विसार दे आत्म सिद्धि का योग।।

''असंयम का परिहार पालकी पर सवार संयम की जय जयकार''

1 **नरकाया को सुरपति तरसे-** भगवान् के दीक्षा कल्याणक के समय पालकी उठाने में जब मनुष्यों को पहले अवसर मिलता है तो इन्द्र कहता है, कि हमारी पूरी इन्द्रपुरी कोई ले ले और कुछ समय के लिए नर पर्याय दे दे, उस समय उसे इन्द्रपुरी से भी मनुष्य पर्याय का मूल्य अधिक लगता है।

2 **आचार्यश्री से किसी** ने पूँछा आपने गृहस्थी नहीं बसाई, संसार का सुख नहीं देखा और घर छोड़ दिया, तो आपको कैसे पता कि संसार असार है ? आचार्यश्री ने कहा कि गृहस्थी वालों के संकट ग्रस्त और उदासीन चेहरे देखकर समझ लिया, कि संसार में सुख नहीं है।

3 विषम परिस्थिति में भी आचार्यश्री के मुख से समयसार निसृत होता है-छिज्जदु वा भिज्जदु वा, णिज्जदु वा अहव जादु विप्पलयं। जम्हा तम्हा गच्छदु, तहवि हु ण परिग्गहो मज्झ। ज्ञानी

जीव ऐसा विचार करता है, कि शरीर आदि पर द्रव्य छिद जावे, भिद जावे, इसे कोई ले जावे, विनाश को प्राप्त हो जावे अथवा जिस-तिस तरह चली जावे तो भी परिग्रह मेरा नहीं है।

4 **ससुर का तो जन्म ही नहीं हुआ-** बहु ने मुनिवर से पूँछा आप इतनी जल्दी कैसे आ गये ? मुनिवर ने कहा समय का क्या भरोसा, मुनिवर ने पूँछा तुम्हारी उम्र कितनी है ? बहु ने कहा मेरी उम्र तीन वर्ष, पति की एक वर्ष, सासु की छः माह और ससुर का अभी जन्म ही नहीं हुआ, ससुर को सुनकर गुस्सा आया और बोला कि मेरे विना तेरा पति कहाँ से आया ? और मुनि महाराज से इसका समाधान पाने के लिए गया, मुनि महाराज ने कहा जिसके जीवन में जब धर्म उतरता है तभी से उसका जन्म होता है इस अपेक्षा बहु ने ऐसा उत्तर दिया है।

5 **पार होने के लिए घाट चाहिये**-जिस प्रकार छोटी सी नदी पार करने के लिए घाट की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार संसार समुद्र को पार करने के लिए द्वादशांग के घाट की आवष्यकता होती है।

6 **यह आँख खुली का वह आँख बन्द का**-राजा का इकलौता बेटा मर गया, राजा की आँख खुली तो हँसने लगा, रानी के पूँछने पर बोला अभी-अभी स्वप्न में आठ आज्ञाकारी पुत्रों को देख रहा था, पर आँख खुलने पर वे गायव हो गये अब मैं सोच रहा हूँ, कि उसके खोने के लिए रोऊँ या इसके लिए रोऊँ, मन मे आता है कि वो बन्द आँख का स्वप्न था और ये खुली आँख का स्वप्न है, दोनों झूठे है अतः रोना व्यर्थ है और राजा आत्म कल्याण में लग गया था।

7 **अभय दान प्रदाता मृगसेन धीवर-**

अवन्ती देश के अन्तर्गत शिरीष नामक ग्राम में मृगसेन नाम का धीवर रहता था। क्षिप्रा नदी में मछली मारने जाते समय यशोधर मुनिराज से जाल में आई प्रथम मछली न मारने का नियम लिया, एक बड़ी मछली पाँच बार जाल में आई पर उसने नहीं पकड़ा, खाली हाथ आता देख कर उसकी पत्नी 'घण्टा' ने नाराज होकर दरवाजा बन्द कर लिया। धीवर घर के बाहर पुराने काष्ठ पर 'णमोकार मन्त्र'पढ़कर सो गया, रात में सर्प के काटने से मर गया, पत्नी भी अगले जन्म में ये ही मेरे पति हों ऐसा निदान कर, साथ में उसी चिता में जलकर मर गयी। विशाला नगरी में राजा विश्वम्भर राज करते थे, रानी का नाम विश्वगुण था। वहीं गुणपाल सेठ एवं धनश्री सेठानी पुत्री के साथ रहते थे। धनश्री के गर्भ में मृगसेन धीवर का जीव आया। राजा से नर्मभर्म मन्त्री ने अपने पुत्र नर्मधर्म के लिए गुणपाल की पुत्री से विवाह करवाने के लिए कहा, सेठ अपनी स्त्री को अपने मित्र श्रीदत्त के पास छोड़कर पुत्री एवं कुछ धन लेकर कौशाम्बी में रहने लगा। आहार को आये शिवगुप्त व मुनिगुप्त में से छोटे मुनि ने धनश्री को

देखकर शिवगुप्त मुनि से कहा ''इसके गर्भ में कोई अभागा आया है'', शिवगुप्त मुनि बोले ''तुम्हारा अनुमान गलत है, इसके गर्भ में धर्मात्मा पुत्र आया है और उसका विवाह राजपुत्री से होगा'', श्रीदत्त ने सुनकर ईर्ष्या वश पुत्र को मारने का विचार किया। प्रसव के समय धनश्री मूर्छित हो गयी। श्रीदत्त ने चाण्डाल को पुत्र देकर मारने को कहा, वह सुरक्षित स्थान पर छोड़ कर चला गया। श्रीदत्त का बहनोई इन्द्रदत्त माल बेचने आया, ग्वालों से सुनकर पुत्र को ले गया। श्रीदत्त को पता चला तो वह मायाचारी से बहन व भाञ्जे को लाकर पुनः चाण्डाल को लोभ देकर मारने को दिया, उसने दयावश नदी के किनारे गुफा में छोड़ दिया, वहाँ से ग्वालों का मुखिया गोविन्द ले गया। एक दिन श्रीदत्त घी खरीदने आया और सन्देश देने के बहाने धनकीर्ति को घर भेजा और पत्र में लिख दिया कि 'पत्र वाहक को विष देकर मार देना'। धीवर का जीव 'धनकीर्ति' पत्र गले में बाँधकर चला, रास्ते में थकान दूर करने एक वृक्ष के नीचे सो गया, फूल तोड़ने आई 'मछली का जीव' अनङ्गसेना वेश्या ने वह पत्र पढ़ा और आँख के काजल से उन शब्दों को बदल दिया, कि 'प्रिय यदि तुम अपना स्वामी समझती हो और पुत्र महाबल तुम मुझे अपना पिता समझते हो तो पत्र वाहक के साथ पुत्रि श्रीमती का विवाह कर देना। नींद खुलते ही उसने जाकर पत्र दिया, शुभमुहूर्त में श्रीमती के साथ उसका विवाह हो गया। श्रीदत्त को पता चला तो उसने गाँव के बाहर पार्वती के मन्दिर में उसको मारने के लिए व्यक्ति नियुक्त किया। आकर दामाद को पूजा की सामग्री देकर भेजा, रास्ते में साले 'महाबल' ने सामग्री लेली और मन्दिर गया तो महाबल मारा गया। हताश होकर पत्नी से दामाद धनकीर्ति को मारने को कहा, पत्नी ने साफ़ लड्डू विष मिश्रित व मैले लड्डू सादे बनाये और पुत्री से साफ़ लड्डू दामाद को व मैले लड्डू पिता को परोसने को कहकर नदी नहाने को चली गयी। पुत्री ने लज्जा वश मैले लड्डू पति को व साफ़ लड्डू पिता को परोस दिए, श्रीदत्त का मरण जान उसकी पत्नी ने भी विषैले लड्डू खाकर मरण किया। राजा ने धन कीर्ति के गुण व ब्रह्मचर्य की प्रशंसा सुनकर अपनी पुत्री की शादी कर व दहेज़ देकर राज श्रेष्ठी के पद पर नियुक्त किया। गुणपाल पिता अपने पुत्र के भाग्योदय को सुनकर पुत्र से मिला, कुछ दिन बाद सपरिवार यशोधर मुनि की वन्दना कर धनकीर्ति के पूर्व भव की कथा सुनी। धनकीर्ति पूर्व भव में धीवर था, घण्टा स्त्री इस भव में श्रीदत्त कि पुत्री श्रीमति वनी, मछली अनङ्गसेना वेश्या वनी, धनकीर्ति ने दीक्षा लेली। श्रीमति और अनङ्गसेना ने भी दीक्षा लेली, धनकीर्ति सन्यास पूर्वक प्राण त्याग कर सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र हुआ और आगे केवली हो मोक्ष प्राप्त करेगें। श्रीमति और अनङ्गसेना भी स्वर्ग गयीं। सच है दया धर्म रुपी कल्पवृक्ष से मनोवाञ्छित फल मिलता है।

इति संयमधर्म समाप्त

★★★

7 वाँ सोपान-तप धर्म

"द्वादश विध तप, भावों से किया कब"

तपधर्म का स्वरूप-

1 तप का अर्थ है तपना, कर्मों का क्षय करने के लिये जो तप किया जाता है वह तप धर्म है।

2 उदर में भोजन विना जठराग्नि के नहीं पचता है। रोटी विना तवा तपे नहीं बनती है। मौसम तपे विना वर्षा ऋतु नहीं आती है। वृक्ष विना धूप के तपे फलता नहीं है। दूध तपे विना मावा बनता नही है। पेट्रोल वाष्प बने विनागाड़ी नहीं चलती है। सोलह ताप विना स्वर्ण शुद्ध नहीं होता है। उसी प्रकार तपे विना आत्मा शुद्ध नहीं होती है।

3 संयम की सिद्धि, राग का अभाव, कर्मों का नाश, ध्यान और आगम की प्राप्ति के लिए तप धारण किया जाता है।

4 जैसे वात-पित्त आदि का प्रकोप न हो, रोग की वृद्धि न हो, शरीर रत्नत्रय का सहकारी बना रहे, अपना संहनन बल वीर्य देख, देश काल आहार की योग्यता देख, तप में उत्साह देख परिणामों की उज्ज्वलता बढ़ती जाय वैसा तप करना चाहिए, इच्छा निरोध कर विषयों में रागघटाना तप है।

5 **दो तरह के मार्ग-** एक साधनों का मार्ग और एक साधना का मार्ग, साधनों का मार्ग सुख-सुविधा का एवं साधना का मार्ग स्वाधीन तपश्चर्या का मार्ग है, अतः भारतीय संस्कृति ने धर्म के लिए साधन सम्पन्न नहीं, साधना सम्पन्न निरूपित किया है, यहाँ भोग को नहीं योग को, राग को नहीं त्याग को स्थान मिला है, सारा संसार विषयासक्त है, यहाँ विषय विरक्ति और आत्मानुरक्ति बड़ी दुर्लभ है, पर शुद्धि और सिद्धि का मार्ग एक तपश्चरण ही है, बुद्ध और महावीर की चिन्तन धारा का फर्क यही है कि बुद्ध ने कहा कि मन में उठे विकल्पों की पूर्ति करके मन को विश्राम भी देना चाहिए, इसलिए उन्होंने न अति भोग न अति त्याग, उन्होंने मध्यम मार्ग अपनाया, किन्तु भगवान् महावीर ने कहा, कि तृप्ति इच्छा की पूर्ति में नहीं त्याग में है। आत्मशान्ति के लिए त्याग और तप के मार्ग को अपनाना चाहिए। एक विचारक ने तो यहाँ तक लिखा कि जो लोग बीमार होने तक खूब खाते हैं, उन्हे ठीक होने तक उपवास और लङ्घन करने पढ़ते हैं, इन सभी विचार धाराओं में मन की कामनाओं पर नियन्त्रण बहुत जरूरी है, साकाङ्क्ष साधना खोखली मानी जाती है, सम्यक् तप आत्म शोधन में परम रसायन माना जाता है।

6 **अनशन**-आहार त्याग का नाम उपवास नहीं किन्तु आहार सम्बन्धी आशा का त्याग उपवास है।

7 भूख से मरने वालों की संख्या कम और खाकर मरने वालों की संख्या ज्यादा है।

8 उपवास के विना मनुष्य काम का मर्दन करने में समर्थ नहीं हो सकता है, क्योंकि सिंहों के द्वारा ही मदोन्मत्त हाथी विदीर्ण किये जाते हैं।

9 **तीन प्रकार के भूखे**- एक व्यक्ति की प्रतिज्ञा है, कि पूजा के विना भोजन नहीं करूँगा, वह पूजा में लीन है। एक व्यक्ति साधन सम्पन्न है, किन्तु रोगी है खा नहीं सकता। एक व्यक्ति इतना गरीब है कि उसके पास खाने को नहीं है, तीनों में अन्तर है।

10 नाश्ता नहीं किया तो कमजोरी लगी, उपवास किया तब कुछ नहीं हुआ, क्योंकि मन ने उपवास करना स्वीकार कर लिया था।

11 उपवास तीव्र व जीर्ण रोगों में प्रभाव शाली प्रक्रिया है, ऐसी दशा में जल उपवास प्रशंसनीय है।

12 उत्तम परिणाम की प्राप्ति हेतु दस जल उपवास रोग मुक्ति हेतु त्रैलोक्य चिन्तामणि है।

13 उपवास के दिन जल ले लेने से उपवास का आठवा हिस्सा कम लाभ होता है। (प्र.श्रा.)

14 **अवमौदर्य**- अवमौदर्य से भोजन की गृद्धता का अभाव, वात, पित, कफ का शमन, रोग का शमन, निद्रा विजय, स्वाध्याय, सामयिक एवं ध्यान में खेद नहीं होता गर्मी-सर्दी की बाधा नहीं होती है।

15 **वृतिपरिसंख्यान**- वृतिपरिसंख्यान में गृहस्थ भी प्रतिज्ञा लेता है कि जिनधर्म पाया है, अतः दर्शन, ज्ञान, चरित्र नष्ट न हो जाय, इसलिए जिसमें पाप अधिक हों ऐसे व्यापार नहीं करता है, भोगोपभोग का परिमाण करता है, माँगकर नहीं खाऊँगा यह प्रतिज्ञा करता है, कोई कहेगा तो भोजन करूँगा इत्यादि प्रतिज्ञा करता है।

16 धर्मसागरजी ने सागर में भुट्टा से कोई पड़गाहे तो आहार लेंगे ऐसी विधि ली थी, 4 दिन बाद विधि मिली।

घड़ी की अकड़ी

17 आचार्य शान्तिसागर जी घड़ी पहने हुए लोगों से आहार नहीं लेते थे, लेकिन सन् 1928 में कटनी चतुर्मास के दौरान नियम लिया कि जो हाथ में घड़ी लेकर पड़गाहन करेगा तब आहार लेंगे, आचार्य श्री पण्डित जगन्मोहनलाल जी के सामने से निकल गये थे, पण्डितजी ने सोचा कि अब पड़गाहन नहीं मिलेगा इसलिए उतारी हुई घडी पुनः हाथ में ले ली, आचार्य श्री लौट कर आये और घड़ी देखकर पड़गाहन हो गया, एक बार नियम लिया कि बैल के सींग में गुड़

लगा हो तब आहार लेंगे और विधि मिल गयी थी। बम्बई में हीरे जवाहरात से पड़गाहन होगा तो आहार लेंगे ऐसा नियम लिया था और वहाँ भी विधि मिली थी, राखी बाँधते हुए कोई दिखेगा तो आहार लेंगे और विधि मिली थी।

18 द्वितीय पाण्डव भीमसेन मुनि ने भाले से आहार लेने का नियम लिया था।

19 **रसपरित्याग-** दूध, घी, आदि षट् रस में से कोई रस का त्याग करना साधु और गृहस्थ दोनों रस परित्याग करते हैं।

20 विविक्तशय्यासन- शून्यगृह, एकान्त स्थान, विकलत्रय, स्त्री-असंयमी पुरूषों के आवागमन से रहित वन खण्ड में ध्यान, अध्ययन करना, पाप से भयभीत श्रावक भी गृह धन्धो से विरक्त होकर जिनालय आदि में साधर्मी के साथ तत्त्व चर्चा, जाप, चिन्तन आदि में समय व्यतीत करता है।

21 कायक्लेश-एकाशन से बैठना, एक करवट से सोना, मौन रहना, ग्रीष्म काल में पर्वत पर रहना।

22 जिन्हें मोक्ष की उत्कृष्ट भावना है वे द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव का विचार कर उग्रकाय क्लेश तप करें।

23 जैसे अपने आय-व्यय का विचार न करने वाला व्यापारी अन्त में पछताता है, उसी तरह जो साधु अपने दोषों का परिमार्जन नहीं करता, वह भी व्यापारी की तरह कष्ट उठाता है।

24 विनय-'विलयं नयति कर्म मलं इति विनयः' जो कर्म मल का नाश करती है उसे विनय कहते हैं।

25 विनय ऐसी तलवार है, कि अपने माथे पर चलाता है और शत्रु की गर्दन कटती है।

26 विनय भी आभ्यन्तर तप है, विनयी शिष्य की गुरू भी प्रशंसा करते हैं।

27 **शिष्य की परीक्षा-** एक शिष्य जिससे गुरु को बड़ा लगाव था, एक दिन गुरु की पत्नी ने कहा कि आपको इस शिष्य से कुछ ज्यादा ही लगाव है, बाकी अन्य शिष्यों से इतना लगाव क्यों नहीं रखते, तब गुरु ने अपनी पत्नी को बताने के लिए शिष्य की परीक्षा की और एक आम को पैर में बाँधकर फोड़ा जैसा बनाया और सब शिष्यों से कहा की यह फोड़ा चूसने पर ही ठीक होगा, ऐसा वैद्य ने कहा है, यह सुनकर बहाना बनाकर सभी शिष्य चले गये, तब वही शिष्य आया और गुरु के फोड़े को चूसने लगा, तब गुरु की पत्नी उस शिष्य को देखकर हैरान हो गयी, वह आम था, यह जानकार सारे शिष्य को बड़ी शर्मिन्दगी हुई और शिष्य की परीक्षा हो गयी कि वास्तव में उसके पास श्रद्धा, भक्ति, विनय, सेवा भाव एवं कृतज्ञता थी।

28 **वैयावृत्त्य**- निश दिन वैयावृत्य करैया सो निश्चय भव नीर तरैया।

29 जो साधु वैयावृत्ति में कुशल, विनयी, सर्वसङ्घ का पालक, वैरागी और जितेन्द्रिय होता है उसे प्रज्ञाश्रमण कहा जाता है।

30 सूत सहित सुई गुमने पर शीघ्र मिल जाती है, उसी प्रकार सूत्र अर्थात् आगम (ज्ञान) सहित आत्मा चार गति चौरासी लाख योनियों में भटकती नहीं है।

31 स्व-पर का कथन और चार अनुयोग का अभ्यास करना-कराना व धर्म ध्यान सहित काल व्यतीत करना तप है।

32 'स्वाध्यायः परमं तपः'- स्वाध्याय परम तप है। 'तपसा निर्जरा च' - तप से संवर के साथ निर्जरा भी होती है।

33 **स्वाध्याय-''ताश का विश्वास मोक्षमार्ग का''**-पन्द्रह मिनट के स्वाध्याय ने जीवन बदल दिया। एक जुआरी ने साधु के दर्शन से दो नियम लिए, पहला देव दर्शन, दूसरा पन्द्रह मिनट का स्वाध्याय और पाँच मिनट का चिन्तन, एक दिन वह मन्दिर देरी से गया, भगवान् के दर्शन खिड़की से हो गये, लेकिन स्वाध्याय को शास्त्र जी नहीं मिला, जेब से ताश के पत्ते निकाल कर चिन्तन शुरू किया। पहला पत्ता इक्का पर विचार करता है-

अहमिक्को खलु सुद्धो, दंसण णाण मईयो सदाऽरूवी।
णवि अत्थि मज्झ किंचिवि, अण्णं परमाणु मित्तं पि।।

निश्चय से मैं एक हूँ, शुद्ध हूँ, दर्शन-ज्ञान मय हूँ, सदा अरूपी हूँ, परमाणु मात्र भी अन्य द्रव्य मेरा कुछ नहीं है।

2 नं. के पत्ते पर विचार- जिस प्रकार दो छोर वाली रस्सी से मथानी मटकी में भ्रमण करती है उसी प्रकार राग-द्वेष रुपी दो छोरों के माध्यम से यह जीव संसार रुपी मटकी में भ्रमण करता है। 3 नं. पर विचार- मिथ्यादर्शन-ज्ञान-चारित्र ये तीनसंसार के कारण हैं एवं सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र ये तीन मोक्ष के कारण हैं। 4 नं. पर विचार **चार** कषाय से चार गति में भ्रमण होता है। **पाँच** पापों से पञ्च परावर्तन होता है। **छह** लेश्याओं में तीन शुभ और तीन अशुभ होती हैं। **सप्त** व्यसनों के सेवन से सातों नरकों में भ्रमण होता है। **अष्ट मद** एवं अष्ट शंकादि दोष त्यागे नहीं तथा अष्ट मूलगुण धारण नहीं किये। **नौ पथार्थों** को जाना नहीं। **दस धर्म धारण** नहीं किये। **ग्यारह प्रतिमा** पाली नहीं। **बारह** तपों को तपा नहीं। ''इस प्रकार बारह भावनाओं का चिन्तन करने से वैराग्य हो गया'', तब **तेरह** प्रकार का चारित्र पालन करेंगेऔर मोक्ष प्राप्त करेंगे। **सीधे**

क्रम से चिन्तन करता है कि आदमी अकेला आया है, अकेला ही जायेगा, पुनः शरीर धारण नहीं करना पड़ेगा, यदि रत्नत्रय को धारण किया है, चार अनुयोगों का अध्ययन किया है,पाँच महाव्रतों को धारण किया हैं, छः आवश्यकों का पालन किया है, सातत्त्वों का चिन्तन किया है, आठ कर्मों से छूटेंगे, नव देवताओं में नम्बर आ जायेगा, दस धर्मों का उदय होगा, अब मन का गुलाम नहीं बनना पड़ेगा, इन्द्रियाँ बेगम नहीं बनेगी, आत्मा बादशाह होगी। यदि आत्म कल्याण नहीं किया तो उल्टे क्रम से चिंतन शुरू हो जायेगा-बादशाह बनने की योग्यता थी, किन्तु बेगम के चक्कर में रत्नत्रय धारण नहीं किया, बेगम का गुलाम बन गया, दस बजे काम पर जाना है, नौ बजे वापस आना है, आठों पहर टेंशन है,सात फेरों के चक्कर में, षडावश्यक भूल गये, पाँच पाप में लग गये, चार कषायों का चक्कर पड़ गया, तीन काल में रत्नत्रय धारण नहीं कर सका, दुबारा जन्म लेना ही पड़ेगा, अकेले को संसार में पिसना पड़ेगा।

34 **व्युत्सर्ग**-निश्चित समय के लिए समस्त प्रवृत्ति का एवं शरीर से ममत्व का त्याग करना व्युत्सर्ग तप कहलाता हैं।

35 **सेठ को मुक्ति चाहिए**- एक सेठ भगवान् की प्रतिदिन भक्ति करता एवं भगवान् के कान में निवेदन करता, कि भगवन् मुझे मुक्ति चाहिए, एक दिन एक देव ने आकर उसकी परीक्षा की, और कहा कि हम आपको आज से दसवे दिन मोक्ष ले चलेंगे, सेठ ने कहा दसवे दिन क्यों? देव ने कहा दस दिन में आपके दस लड़कों का एवं दस कारखानों का वियोग होगा, आप हलके हो जायेंगे, तब हम आपको मोक्ष ले जायेंगे, सेठ ने कहा यह तो टेड़ी खीर है, हमारे गले में नहीं उतरेगी, कोई दूसरी किस्म का मोक्ष हो तो आप आना, अन्यथा कष्ट नहीं करना।

36 **ध्यान के भेद**- दुर्ध्यान, स्वार्थ ध्यान, परार्थ ध्यान, विशुद्ध ध्यान। !!प्रवचन कार इनकी व्याख्या करें!!

37 आर्त और रौद्र ध्यान नरक और तिर्यञ्च, कुदेव और कुमनुष्यों में उत्पन्न कराते हैं, धर्म और शुक्लध्यान सुदेव, सुमनुष्य और मुक्ति प्रदान कराते हैं।

38 आत्मध्यान से बढ़कर सुख नहीं है, आत्मध्यान से बढ़कर तप नहीं है और आत्मध्यान से बढ़कर कहीं कोई मोक्ष का मार्ग नहीं है।

39 पिण्डस्थ, पदस्थ, रूपस्थ और रूपातीत के भेद से धर्म्यध्यान के चार भेद हैं, 1.शरीर में स्थित स्वात्मा का चिन्तन करना पिण्डस्थध्यान है, 2.मन्त्र तथा आगम के वाक्यों का चिन्तन करना पदस्थध्यान है, 3.समवसरण में स्थित चैतन्यरूप अरहन्त परमेष्ठी का ध्यान करना

रूपस्थध्यान है, 4.द्रव्यकर्म-भावकर्म-नोकर्म से रहित सिद्ध परमेष्ठी का ध्यान करना रूपातीत ध्यान है।

40 64 वर्णों में ईकाई 4, दहाई 6 को गुणा करने पर 24 तीर्थङ्कर हो जाते हैं, इनका चिन्तन करना रूपस्थ ध्यान कहलाता है।

41 ध्यान में शास्त्रों के विषय का, तीर्थों की प्रतिमाओं का, मन्त्र के माहात्म्य का, आचार्यों के नाम व आचरण का चिन्तन करना चाहिए।

42 जिस प्रकार राग-द्वेष मोह और ज्ञान, दर्शन मय आत्मा भिन्न-भिन्न हो जाय वैसा करना तप है।

43 पाँच समितियों का पालना, मन-वचन-काय को चलायमान नहीं होने देना, रागद्वेष रहित आत्मानुभव करना तप है।

44 **वैराग्यं तत्त्वविज्ञानं, निर्ग्रन्थं वशचित्तता।**
जितपरीषहत्वञ्च, पञ्चैते ध्यानहेतवः।।
वैराग्य, तत्त्वज्ञान, निर्ग्रन्थ अवस्था, एकाग्रता और परीषह विजय के होने पर ध्यान होता है।

45 **सङ्गत्यागः कषायाणां, निग्रहो व्रतधारणं।**
मनोऽक्षाणां जयश्चेति, सामग्री ध्यान जन्मने।।
परिग्रह का त्याग, कषायों का निग्रह, व्रतों का धारण, मन और इन्द्रियों की विजय, ध्यान की उत्पत्ति में निमित्त होते हैं।

46 **मा मुज्झह मा रज्जह, मा दुस्सह इट्ठणिट्ठ अत्थेसु।**
थिर मिच्छह जइ चित्तं, विचित्त झाणप्पसिद्धीए।।
उत्कृष्ट ध्यान की सिद्धि के लिए इष्ट-अनिष्ट पदार्थों में राग-द्वेष मोह मत करो।

47 **यो न वेत्ति परं देहा, देवमात्मानमव्ययं।**
लभते स न निर्वाणं, तप्त्वापि परमं तपः।।
जो शरीर से भिन्न अविनाशी आत्मा को नहीं जनता है और घोर तपस्या करता है, तो भी उसे मोक्ष नहीं मिलता है।

48 **सर्वेषां जीवानां, हिंसायाः विरतिस्तपः।**
शान्त्या हि सर्वदुखानां, सहनं तप इष्यते।।
सब जीवों की हिंसा का त्याग करना तप है और शान्तिपूर्वक सब दुःखों का सहना भी तप है।

49 **वनेऽपि दोषाः प्रभवन्ति रागीणां, गृहेऽपि पञ्चेन्द्रिय निग्रहस्तपः।**
अवद्य मुक्ते पथि गच्छतो भवेत्, विमुक्त रागस्य गृहं तपोवनं।।

रागी वन में रहकर के भी पाप करता है और घर में भी पञ्चेन्द्रियों के निग्रह से तप होता है। रागरहित (राम के भाई भरत की तरह) निष्पाप मार्ग में चलने वाले के लिए घर ही तपोवन होता है।

50 **कषायविषयाहारो, त्यागो यत्र विधीयते।**
उपवासः स विज्ञेयः शेषं लङ्घनकं विदुः।।
जहाँ पर कषाय और विषय के साथ आहार का त्याग किया जाता है, उसे उपवास जानना चाहिए, शेष को भूखा रहना समझना चाहिए।

51 **यदज्ञानेन जीवेन, कृतं पापं सुदारुणं।**
उपवासेन तत्सर्वं, दहत्यग्निरिवेन्धनं।।
जीव ने अज्ञान पूर्वक जो दुःखदायी कर्म बाँधे हैं, जैसे अग्नि ईंधन को जला देती है, उसी तरह उपवास उन सब पापों को जला देता है।

52 **जलेन जनितः पङ्कः, जलेनैव शुद्धयति।**
चित्तेन जनितं कर्म, चित्तेन परिशुद्धयति।।
जल से उत्पन्न हुआ कीचड़ जल से ही शुद्ध होता है और मन से उत्पन्न हुआ पाप मन से पश्चाताप करने से ही शुद्ध हो जाता है और शरीर से किया हुआ पाप शरीर से तप करने पर ही शुद्ध होता है।

53 **बारसविधम्हि वि तवे, सब्भन्तर बाहिरे कुसलदिट्ठे।**
णवि अत्थि णविय होहिदि, सज्झायसमो तवो कम्मं।। (मू.आ.)
बारह प्रकार के तपों में स्वाध्याय के समान कल्याणकारी तप न है और न होगा।

54 **दो पथ पन्थी चले न पन्था, दो मुख सुई सिले न कन्था।**
दोऊ काम नहीं होय सयाने, विषय भोग अरु मोक्ष हु जाने।।

55 **चिन्तन से चिन्ता मिटे, मिटे ध्यान से पाप।**
चिन्तन चिन्ता जब मिटे, प्रभु बनेंगे आप।।

धर्म से लाभ-

1 मोह का शमन होते ही आत्मा की शक्तियाँ प्रकट होने लगती हैं।

2 अग्नि में तपकर मिट्टी मङ्गल कलश नाम पाती है।

3 **तप करते यौवन गयो, द्रव्यगयो मुनि दान।**
प्राण गये सन्यास में, तीनो गये न जान।।

4 **येनैव देहेन विवेक हीनाः, संसार बीजं परिशेचयन्ति।**
तेनैव देहेन विवेक भाजाः, संसार बीजं परिशोषयन्ति।।
विवेकहीन जीव जिस देह से संसार बीज का सिञ्चन करते हैं, विवेकी जीव उसी देह से संसार बीज को सुखा देते हैं।

तप तन से, भले विचार मन से -

1 जैसे चलनी में डाला गया जल सर्व प्रयत्न करने पर भी नष्ट हो जाता है, उसी तरह चञ्चल चित्त से धारण किया गया व्रत-तप नष्ट हो जाता है।

2 **भोगों को इतना भोगा कि खुद को ही भोग बना डाला।**
साध्य और साधन का अन्तर, मैंने आज मिटा डाला।।

3 **यमराज का पत्र-** सेठ ने यमराज से दोस्ती की और कहा आने के पूर्व पत्र देना, उसने वादा किया, पहला पत्र- सफेद बाल किये पर सेठ ने हेयर डाय करा लिया, दूसरा पत्र दाँत गिराये तो बत्तीसी लगवा ली, तीसरा पत्र आँख कान खराब किये, तो चश्मा और मशीन लगवा ली, चौथा पत्र अटैक आया तो बायपास सर्जरी करवा ली, जब यमराज लेने आया तो सेठ ने कहा आपने धोका किया, यमराज ने कहा हमने चार पत्र दिये थे पर आपने आत्म कल्याण के लिए प्रयत्न नहीं किया।

4 **मनुष्य की उम्र चालीस वर्ष (बाल कहानी)-** ब्रह्माजी ने मनुष्य, कुत्ता, गधा और उल्लू इनको चालीस-चालीस वर्ष की उम्र दी, मनुष्य ने अपना काम पूछा, कि हमे क्या करना है? ब्रह्माजी ने बताया तो मनुष्य ने कहा, बहुत कम उम्र है, गधे ने कहा हम कब तक भार ढ़ोते रहेंगे। कुत्ते ने कहा हम कब तक द्वारे-द्वारे जाकर अपमानित होकर टुकड़े खाते रहेंगे, उल्लू ने कहा हम कब तक अन्धे बनकर जियेंगे, तब इन जीवों की आधी-आधी उम्र लेकर मनुष्य को दे दी, इसलिए मनुष्य चालीस वर्ष के बाद गधे की तरह भार ढ़ोता रहता है, साठ वर्ष के बाद कुत्ते की तरह द्वार पर बैठा रहता है और अस्सी के बाद उल्लू की तरह अन्धा बनकर बैठा रहता है।

5 **तीनों अवस्था व्यर्थ खो दीं-** एकगरीब व्यक्ति पर प्रसन्न होकर राजा ने उसे तीन घण्टे के लिए रत्नों के कोठे में प्रवेश दे दिया, इतने समय में तुम जितने रत्न ले जाना चाहो ले जाओ, इसके बाद उस कोठे से एक भी रत्न नहीं ले सकते, उस मूढ़ ने रत्नमयी गोरख धन्धे का खिलौना

देखा, हाँथ लगाते ही वह बिखर गया, द्वारपाल ने कहा इसको ठीक करो, तभी आगे जा सकते हो, उसने उसे ठीक करने में ही सारा समय निकाल दिया, एक भी रत्न नहीं ले पाया, द्वारपाल ने पकड़कर बाहर कर दिया। कृपालु राजा ने दुबारा उसे तीनघण्टे के लिए सोने, चाँदी, के कोठे में भेजा वहाँ पर स्त्रियाँ स्वागत के लिए खड़ीं थी, उनके स्वागत में वह भूल गया और सोने-चाँदी का कुछ भी सामान नहीं ले पाया, अन्त में राजा ने पीतल-ताम्बे के कोठे में भेजा, वहाँ पर भोजन-पानी रखा था, वह खा पीकर सो गया और सारा समय खत्म कर दिया और खाली हाथ घर गया, इसी तरह मानव बाल अवस्था खेल-खिलोनों में, जवानी भोगों में, बुढापा खा-पी कर सोने में गुजार देता है और मानव पर्याय में कुछ भी आत्महित नहीं करता है।

6 **जल तरणी विद्या-** एक शिष्य ने बारह वर्ष में जल तरणी विद्या सिद्ध की, और उत्सुकता पूर्वक गुरु को बताया, तो गुरु ने कहा अरे दस रुपए की विद्या के लिए तुमने बारह वर्ष नष्ट कर दिए, नाविक को दस रुपए देकर पार हो जाते दस वर्ष क्यों गंवा दिए, यदि भव तरणी विद्या सीखी होती तो संसार से पार उतर गए होते।

तप की प्रेरणा-

1 जीवन का उपभोग नहीं तपस्या करके श्रेष्ठतम उपयोग करो।

2 जग के सारे पदार्थ यदि हमारी इच्छानुसार परिणमन करें तो हमें सुख हो पर ऐसा नहीं हो सकता, अपने शरीर तक को अपने अनूकूल नहीं परिणमा सकते तो पर को अपने अनुकूल कैसे परिणमा सकते हैं ?

3 **यह राग आग दहे सदा, तातें समामृत सेइए,**
चिर भजे विषय कषाय, अब तो त्याग निज पद बेइए।
दाव मत चूको यह- ये महत्त्वपूर्ण वाक्य है, मौका मिला है तो आत्म हित कर लेना चाहिए, जैसे राजगृही में लिफ्ट लगी है, वह चलती रहती है, जो साहस करके बैठ गया तो ऊपर पहुँच जाता है, वरना इसी मौके के लिए प्रतीक्षा करना पड़ती है।

4 रोटी के दोनों पहलू अच्छी तरह सिक जाते हैं तब वह सिकी कहलाती है, उसीप्रकार जो दोनों तप को तपता है वही तपस्वी कहलाता है।

5 **आहार ग्रहण का उद्देश्य-** भूख की वेदना शमन के लिए, संयम की सिद्धि के लिए, अपनी तथा दूसरों की सेवा के लिए, प्राण धारण करने के लिए तथा मुनि के छह आवश्यक कर्तव्य, ज्ञान, ध्यान आदि के लिए मुनि को आहार ग्रहण करना चाहिए।

6 **भोजन छोड़ने का उद्देश्य-** अचानक कोई मारणान्तिक पीड़ा होने पर, देव आदि के द्वारा उपसर्ग किये जाने पर, ब्रह्मचर्य को निर्मल करने के लिए, शरीर को कृश करने के लिए, तप के लिए और प्रणियों पर दया तथा समाधिमरण आदि के लिए साधु को भोजन नहीं करना चाहिए।

7 सब शुद्धियों में तप की शुद्धि प्रशंसनीय है, देव तप शुद्धि से शुद्ध मनुष्यों के सेवक होते हैं।

8 जो सज्जन विषयों को विष के समान देखकर तपश्चरण करते हैं, वे पुण्यशाली हैं, महोत्साही हैं और वे परम उत्कृष्ट ज्ञान को प्राप्त होते हैं।

9 अष्टमी अष्ट कर्मों का अन्त करने वाली है, चतुर्दशी सिद्धि प्राप्त कराने वाली है और पञ्चमी केवलज्ञान प्राप्त कराती है, अतः इन तीनों पर्वों के दिन उपवास करना चाहिए।

10 निकाचित कर्म तब तक भस्म नहीं होते जब तक जिनागम में कथित तपरूपी अग्नि प्रज्वलित नहीं होती है।

11 भय, उदारता, कीर्ति, लज्जा और आशा इन पाँच कारणों से पञ्चम काल में जैन धर्म चल रहा है।

12 पागल, आलसी, मदहोश, थका हुआ, क्रुद्ध, क्षुधातुर, लोभी, भीरु, उतावली करने वाला और कामी पुरुष धर्म को नहीं जानता है।

13 मनुष्य रोते हुए जन्मता है, अपेक्षाओं में जीता है और निराश होकर मरता है, ऐसे में साधना और धर्म का मार्ग ही कल्याणकारी है।

14 व्यक्ति साधना के बारे में बहुत सोचता है, वासना के बारे में विना सोचे पुरूषार्थ करता है।

15 सुख साधनों से नहीं साधना से मिलता है।

16 संसारी व्यक्ति ज्योतिष के चक्कर में पढ़ता है, आध्यात्मिक व्यक्ति मन की गति पकड़ता है, हस्त रेखाएं नहीं भुजाएँ देखो 'अर्थात् पुरुषार्थ करो'।

17 अमीर बनने के लिए पाँच साल की साधना चाहिए, विद्वान् बनने के लिए दस साल, डॉ. बनने के लिए पन्द्रह साल, वैज्ञानिक बनने के लिए बीस साल तथा मन को जीतकर भगवान् महावीर और बाहुबली बनने के लिए जन्म जन्मान्तरों की साधना चाहिए।

18 **'तपः सर्वार्थसाधनं'-** तप समस्त पुरुषार्थों की सिद्धि करने वाला है।

19 **तन मिला तुम तप करो, करो कर्म का नाश। रवि शशी से भी अधिक है तुम में दिव्य प्रकाश।।**

20 **तप चाहे सुरराय, करम शिखर को वज्र है। द्वादश विधि सुख दाय, क्यों न करे निज सकति सम।।**

21 **राचन जोग स्वरुप न याको विरचन जोग सही है। यह तन पाय महा तप कीजे यामे सार यही है।।**

22 **काना पोंडा पड़ा हाथ यह चूसे तो रोवे। फले अनन्त जु धर्मध्यान की भूमि विषै बोवे।।**

23 **आप हर मञ्जिल को मुश्किल समझते हैं, हम हर मुश्किल को मञ्जिल समझते हैं।**
बड़ा फर्क है हमारे और आपके नजरिये में, आप दिल को दर्द और हम दर्द को दिल समझते हैं।।

24 जो तप तपे खपे अभिलाषा, चूरे कर्म शिखर गुरु भाषा।

25 उत्तम तप निर्वांछित पाले सो नर करम शत्रु को टाले।

26 **यज्जीवस्योपकाराय तद्देहस्यापकारकं।**
यद्देहस्योपकाराय, तज्जीवस्यापकारकं।।
जो जीव के लिए उपकारी है, वो शरीर के लिए अपकारी है और जो शरीर के लिए उपकारी है, वो जीव के लिए अपकारी है।

27 **अपत्य वित्तोतर लोक तृष्णया, तपस्विनः केचन कर्म कुर्वते।**
भवान् पुनर्जन्म जराजिहासया, त्रयीं प्रवृत्तिं समधीरवारुणत्।।
कोई तपस्वी सन्तान, धन, स्वर्गादिक की तृष्णा से तपस्या करते हैं किन्तु हे शीतलनाथ भगवन्! आपने जन्म, जरा और मरण के नाश के लिए मन, वचन, काय को स्थिर करके ध्यान किया।

28 **करोतु न चिरं घोरं, तपः क्लेशासहो भवान्।**
चित्त साध्यान् कषायारीन्, न जयेत् तदज्ञता।। (आ.शा.)
शरीर में क्षमता न होने के कारण चिरकाल तक तपस्या नहीं कर सकते तो कोई बात नहीं, किन्तु मन से वश में करने योग्य कषाय रूपी शत्रुओं को नहीं जीता तो यह तुम्हारी अज्ञानता है।

29 **धम्मो मंगलमुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो।**
देवावि तस्स पणमन्ति, जस्स धम्मे सया मणो।।
'अहिंसा, संयम व तप रुपी धर्म' मङ्गल और उत्कृष्ट कहा गया है, जिसके मन में सदा धर्म रहता है उसे देवता भी नमस्कार करते हैं।

30 **तत्तपोऽभिमतं बाह्यं, मनो येन न दुष्यति।**
योगा येन न हीयन्ते येन श्रद्धा प्रवर्तते।।
वह बाह्य तप माना जाता है जिससे मन दूषित न हो, योगों में हानि न हो तथा श्रद्धा बनी रहे।

31 **किं काहदि वणवासो, कायक्लेसो विचित्तउववासो।**
अज्झयणमोणपहुदि, समदा रहिदस्स समणस्स।।
वन में वास, कायक्लेश, मासोपवास, अध्ययन, मौन इत्यादि समता से रहित श्रमणों का क्या कर लेंगे ? अर्थात् समता के विना ये सभी मोक्ष प्राप्त नहीं करा सकते।

32 **इंदियकसायसण्णा, णिग्गहिदा जेहिं सुष्ठु मग्गम्हि।**

जावत्तावत्तेहिं य, पिहियं पावासवच्छिद्दं।।

मोक्षमार्ग में जिसने जितने अंशों में अथवा जितने समय तक इन्द्रिय, कषाय और संज्ञा को वश में किया है उसने उतने अंशों में अथवा उतने समय तक पाप आस्रव को रोका है।

33 **जो विसहदि दुव्वयणं, साहम्मि हीलणञ्च उवसग्गं।**
जिणिऊण कसाय रिऊं, तस्स हवे णिज्जरा विउला।।

जो व्यक्ति कषाय रूपी शत्रुओं को जीतता है, दूसरों के दुर्वचन सहन करता है, अन्य साधर्मी के द्वारा किये गये अनादर और देव आदि द्वारा किये गये उपसर्गों को सहता है उसकी बहुत निर्जरा होती है।

34 **चरिया पमादबहुला, कालुस्सं लोलदा य विसयेसु।**
परपरितावपवादो, पावस्स य आसवं कुणदि।।

प्रमाद से भरी हुई प्रवृत्ति, कलुषता (कषाय की तीव्रता), विषयों की लोलुपता, दूसरों को पीड़ा देना और पर की निन्दा करना ये सब पाप आस्रव के कारण हैं।

35 **मणुवगईए वि तवो, मणुवगईए महव्वयं सयलं।**
मणुव गदीए झाणं, मणुव गईए विणिव्वाणं।।

तप, महाव्रत, ध्यान और निर्वाण मनुष्य गति में ही प्राप्त किया जा सकता है।

36 **यदि क्रोधादयस्क्षीणस्तदा किं खिद्यते वृथा।**
तपोभिश्च हि तिष्ठन्ति, तपस्तथाप्यपार्थकं।।

अगर क्रोधादिक क्षीण हो गए हैं, तो तपस्या के द्वारा खेदखिन्न होने की आवश्यकता नहीं है और अगर क्रोधादिक हैं तो केवल तपस्या से कल्याण नहींहोगा।

37 **पाषाण से प्रतिमा-** प्रतिमा की पूजा देख पाषाण खण्ड बोला, बहिन लोग बड़े पक्षपाती हैं तुम्हारा और हमारा अंश और वंश एक है, लोग तुम्हे पूजते हैं, और हमसे टिककर बैठते हैं, प्रतिमा ने कहा तुमने हमारी साधना और समर्पण नहीं देखा, हमारी छाती पर बैठकर छैनी-हथौड़ा से अनावश्यक कलेवर निकाला गया है, तब आज हमारी पूजा हो रही है, पूज्य बनने के लिए साधना आवश्यक है।

38 विद्यार्थी सोलह से बीस वर्ष तक अध्ययन की कठोर साधना करता है तब सर्विस मिलती हैं, स्त्री नौ माह गर्भ सम्भालती है, तब पुत्र का मुख देखने को मिलता है, किसान चार माह तप करता है तब फसल मिलती है, दुकान दार दुकान पर बैठकर दिन भर मेहनत करता है तब पेटी भरती है, इसी प्रकार साधक वर्षों वीतरागता की साधना करते हैं तब परमात्मा बनते हैं।

इति तपोधर्म समाप्त

★★★

8 वाँ सोपान-त्याग धर्म
"त्याग से बुझाओ, राग की आग"

त्याग का स्वरूप-

1 त्याग अपने को रिक्त नहीं पूर्ण करने के लिए होता है।

2 किसान जब बीज त्यागता है तब फल की प्राप्ति होती है, इसी प्रकार कुंआ पानी देता है तो और आता है, वृक्ष पुराने पत्ते त्यागता है तो नये पत्ते आ जाते हैं, गाय दूध त्यागती है तो स्वस्थता महसूस करती है एवं पुन: दूध आ जाता है। इसी प्रकार त्याग से आत्म वैभव प्राप्त होता है।

3 दवा दो प्रकार की होती है पहली ऊपर से लेप करने वाली और दूसरी पीने वाली, दान लेप की तरह होता है, त्याग पीने वाली औषधि की तरह होता है।

4 दान वृक्ष की पत्ति तोड़ने के समान है, त्याग वृक्ष को जड़ से उखाड़ने के समान है। राग की नहीं त्याग की पूजा होती है। आहार लेते समय साधु के भी हाथ नीचे होते हैं, श्रावक का ऊँचा होता है, दानी स्वर्ग पाता, त्यागी मोक्ष पाता है।

5 दान प्रशंसनीय है त्याग पूज्यनीय है, स्वयं की भलाई के लिये रसादि का त्याग और परोपकार के लिये रसादि का दान होता है, दानी गद्दी पर, त्यागी सिंहासन पर बैठता है।

6 त्याग निश्चय धर्म है, दान व्यवहार धर्म है तथा त्याग धर्म है, दान पुण्य है, बुरी व अच्छी दोनों वस्तुओं का त्याग होता है, दान अच्छी वस्तु का होता है, दान में परोपकार, त्याग में स्वोपकार होता है।

7 मेघ जल त्यागते हैं इसलिये ऊपर हैं, समुद्र ग्रहण करता है इसलिये नीचे होता हैं, मेघ जल ग्रहण करते हैं तो काले हो जाते हैं, त्यागने के बाद सफेद हो जाते हैं, मेघ जल त्यागता है इसलिए उसका जल मीठा है, समुद्र ग्रहण करता रहता हैं, इसलिए उसका जल खारा है।

8 **जिनालये च तद्बिम्बे, पूजोद्धारादि हेतवे।**
सिद्धान्त-लेखनं चापि, धनं देयं शुभाय वै।।
जिनालय के लिए, जिन बिम्ब के लिए, पूजा विधान के लिए, जीर्णोद्धार के लिए और शास्त्रों के प्रकाशन के लिए कल्याणार्थ धन देना चाहिए।

9 **दान के सात क्षेत्र हैं,** 1.चतुर्विधसङ्घ, 2.मन्दिर, 3.प्रतिमा, 4.जीर्णोद्धार, 5.रथयात्रा, 6.तीर्थयात्रा, 7.शास्त्र प्रकाशन।

10 जो चैत्यालय, चैत्य, दान, प्रतिष्ठादि महोत्सव और समीचीन यात्रा के करने में तत्पर हैं, नाना

शास्त्रों के ज्ञाता हैं, परीषह सहन करते हैं, दूसरों के कार्य में रत हैं, परिग्रह रहित हैं और तपस्वी भी हैं, ऐसे बहुत मनुष्य हैं परन्तु जो राग-द्वेष-मोह के त्याग में तत्पर हों, आत्मतत्त्व में लीन हों वे तपस्वी दुर्लभ हैं, त्याग तपस्या दूसरे के बल से नहीं आत्म बल से होती है।

11 गृहस्थों को देश, समय, आगम, सम्पत्ति और पात्र के अनुसार दान देना चाहिए।

12 यदि न्यायोपार्जित थोड़ा भी पदार्थ दिया गया है तो वह कल्याण के लिए होता है, इसके विपरीत अन्यायोपार्जित प्रचुर पदार्थ भी दिया गया हो तो वह निष्फल होता है।

13 ग्रीष्मकाल में जल, शीतकाल में शीत निवारक पदार्थ, वर्षाकाल में आवास देना चाहिए और भोजन सदा देना चाहिए।

14 भक्ति पूर्वक दान देने से भोग सहित लक्ष्मी और अनादरपूर्वक दान देने से लक्ष्मी तो प्राप्त होती है पर स्वयं भोग नहीं कर पाता है।

15 जहाँ कहीं से पात्र को आता हुआ देख कर दाता, "**जिनेन्द्र के समान**" उन्हें पड़गाहन करता है वह प्रतिग्रह कहलाता है।

16 आदिनाथजी ने अपने बेटे को दान का उपदेश दिया होता एवं फल बताया होता तो तेरह माह क्यों भटकना पड़ता, चार हजार मुनि क्यों भ्रष्ट होते ?

17 झूमर, छत्र, चामर, ध्वजा और दर्पण आदि से जिनमन्दिर को सुशोभित करने वाला मनुष्य आश्चर्यकारी 'लक्ष्मी' को प्राप्त होता है।

18 स्वयं का पेट भरने से नहीं, दान देने से राजा और रङ्क का भेद जाना जाता है।

19 जो श्री जिनेन्द्रदेव के मन्दिर में घण्टा दान करते हैं, वे घण्टा आदि से सहित वाहन पर आरूढ़ होकर गमन करते हैं।

20 जो मनुष्य सुन्दर जिनमन्दिर में चँदोवा देता है, वह पुण्योदय से एकच्छत्र(अखण्ड) विशाल राज्य को प्राप्त होता है।

21 मुनियों को आवास दान देने से रत्ननिर्मित विस्तृत और चन्द्रमा की किरणों के समान उज्ज्वल आवास प्राप्त होता है।

22 समाज के कार्यों से अशान्ति का अनुभव होता है।

23 आशा गर्त को भरने का एक ही उपाय 'त्याग' है।

24 दो व्यक्ति स्वर्ग में भी ऊँचा स्थान पाते हैं, पहला वह जो निर्धन होने पर भी दान करता है, दूसरा वह जो समर्थ होने पर भी क्षमा करता है।

25 जो भी कार्य करो पहले दृढ़ सङ्कल्पी बनो, साधनों का संग्रह करो, बाधक कारणों का परित्याग करो।

26 शान्तिपाठ से शान्ति नहीं, अशान्ति के कारणों को दूर करने पर शान्ति होती है, बाह्य भेष से पर को ठगना स्वयं को दुःख का कारण है।

27 कञ्जूस की अपेक्षा कौआ अच्छा है, साथियों को बुला कर खाता है।

28 सत्पुरूषों का दान कल्पवृक्ष की शोभा की तरह है, लोभी का दान शव के विमान की शोभा की तरह है।

29 जन और जिन में इतना ही अन्तर है कि जन वैभव को अपने शिर पर बैठाये है और जिन वैभव के सिर पर बैठे हैं।

30 **द्रव्य भाव शुद्धि-** द्रव्य से शुद्ध भोजन भी भाव के अशुद्ध होने से अशुद्ध हो जाता है, क्योंकि अशुद्ध भाव बन्ध के लिए और शुद्ध भाव मोक्ष के लिए है, नव कोटि से विशुद्ध दान बहुत फल दायक होता है, दाता की विशुद्धता देय-भोज्य को और पात्र को पवित्र करती है, देय की शुद्धता दाता और पात्र को पवित्र करती है और पात्र की शुद्धि दाता और देय को पवित्र करती है।

31 **गणेश प्रसाद वर्णीजी ने एक गरीब को** ठण्ड में अपना गद्दा दे दिया था, तब से गद्दा छोड़ दिया था, बरुआ सागर से आ रहे थे, रास्ते में एक गरीब को चादर दे दिया था, एक बार गरीब को पानी पिलाया, लोगों ने कहा, तुमने लोटा खराब कर दिया, तो लोटा भी उसी गरीब को दे दिया था।

32 **औषधि दान-** जो औषध दान करने वाले का फल वचनों से कहता है, वह मानों अञ्जुलि के द्वारा समुद्र के जल को नापता है।

33 कृष्णजी ने मुनिराज के रोग को दूर करने का निश्चय किया, वैद्य की सलाह से औषधि के लड्डू पूरे नगर के चौकों में भेजे, साधु स्वस्थ हो गये इसके फल स्वरूप कृष्ण जी ने तीर्थङ्कर प्रकृति का बन्ध किया था।

34 **सोला-सोलह प्रकार का-**

द्रव्यशुद्धि- 1. अन्न 'सड़ा, घुना न हो', 2.जल शुद्ध हो 3. ईंधन शुद्ध हो, 4. भोजन बनाने वाला शुद्ध हो।

क्षेत्र शुद्धि- 1. प्रकाश हो, 2.वायु हो, 3.दुर्गन्ध न हो, 4.चौके में शौचालय न हो।

काल शुद्धि- 1.ग्रहण न हो, 2.शोक न हो, 3.रात्रि न हो, 4.जिस काल में प्रभावना हो उस

काल में दान देना।

भाव शुद्धि- 1.दान देने का भाव हो, 2.करुणा सहित हो, 3.वात्सल्य सहित हो, 4.विनय सहित हो।

35 **पानी से वाणी बने, मन को रचता अन्न।**
खाना पीना शुद्ध यदि, आतम सदा प्रसन्न॥

36 सप्त धातुओं से भरा यह शरीर तीर्थङ्कर मुनियों को आहार देने का पात्र है, देवों का शरीर नहीं।

37 **अभय दान-** मनुष्य यदि अभयदान देने वाला है तो अन्य दान हो या न हो, क्योंकि अभयदान ही सब दानों में उत्तम दान है।

38 जिस प्रकार तप के विना लोगों का शरीर व्यर्थ है, उसी प्रकार अभय दान के विना शेष दान व्यर्थ हैं।

39 जो अभयदान देता है उसी ने समस्त श्रुत पढ़ा है, उसी ने परम तप तपा है और उसी ने समस्त दान दिए हैं।

40 **अभयदान से क्षणभर में विद्वानों से प्रशंसनीय एवं आपत्ति से रहित तीर्थङ्कर व चक्रवर्ती की सम्पदाएँ प्राप्त की जाती हैं।**

41 **''हजार जिह्वा वाले किसी भी व्यक्ति के द्वारा कल्पकाल तक अभयदान का फल नहीं कहा जा सकता है।''**

42 आर्यिका, ऐलक, क्षुल्लक, क्षुल्लिका तथा ब्रह्मचारी को वस्त्र देने से उज्ज्वल वस्त्र तथा शुक्ल ध्यान की प्राप्ति होती है।

43 **अनङ्गसरा से विशल्या-** वज्रनाभि चक्रवर्ती की बेटी अनङ्गसरा को एक विद्याधर हरण करके ले गया, पत्नि के भय से जङ्गल में छोड़ गया, अनङ्गसरा तीन हजार वर्ष तक जङ्गल में रही, स्थान का परिमाण कर सल्लेखना ले ली थी, एक अजगर ने उसको निगल लिया, तभी पिता को मालूम हुआ, तब वे जङ्गल में लेने गये, सर्प को मारने की सोची, बेटी ने रोका और अभय दान दिलाया, जिसके फल से विशल्या हुयी, उसके स्नान का पानी औषधि के समान था, जब लक्ष्मण जी को शक्ति लगी थी तो विशल्या के आते ही वह निकल कर भाग गयी थी।

44 **धोबी और नाई दोनों** मित्र थे, दोनों ने मिलकर धर्मशाला बनवाई धोबी ने लाकर मुनि महाराज को ठहरा दिया, नाई उन्हें भगाने लगा, दोनों आपस में लड़कर मरे धोबी सूकर एवं नाई शेर बना, मुनि महाराज गुफा में ध्यान कर रहे थे, शेर मुनि महाराज को खाना चाहता था एवं सूकर

बचाना चाहता था, दोनों आपस में लड़कर के मरे सूकर अभय दान के प्रभाव से स्वर्ग गया, और शेर मारने के भाव से नरक गया।

45 मुनियों के 28 मूलगुणों का पालन अभयदान के लिए है।

46 **ज्ञान दान**-शास्त्रदान से शास्त्ररूपी सागर का पारगामी, अज्ञान अन्धकार को भेदने वाला तथा रागादि की सन्तति को मिटाने वाला होता है।

47 **दान की महिमा**- आहारदान से भोगभूमि, ज्ञानदान से केवलज्ञान, आवासदान से स्वर्ग, औषधिदान से कामदेव के पद की प्राप्ति होती है।

48 कोण्डेश ग्वाला ने शास्त्रका दान दिया जिससे वह महान आचार्य कुन्दकुन्द महाराज बना।

49 **अकलङ्क और निकलङ्क**-मान्यखेट के राजा शुभतुङ्ग के मन्त्री का नाम पुरुषोत्तम पत्नी का नाम पद्मावती इनके दो पुत्र थे अकलङ्क और निकलङ्क। एक वार अष्टान्हिक पर्व में मन्त्री और उनकी पत्नी ने आठ दिन का ब्रह्मचर्य व्रत लिया, साथ ही दोनों पुत्रों को भी व्रत दिला दिया। युवावस्था में जब पिताजी ने दोनों से विवाह करने को कहा, तो दोनों ने मना कर दिया। पिताजी ने उनको खूब समझाया कि व्रत की अवधि तो केवल आठ दिन की थी, अब विवाह करने में कोई परेशानी नहीं है। परन्तु दोनों ने कहा व्रत की अवधि आठ दिन थी, पर हमारे लिए आठ दिन की अवधि नहीं थी। यह बोलकर दोनों ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया और धार्मिक अध्ययन में तत्पर हो गये। दोनों बौद्ध धर्माचार्य के पास पढ़ने लगे, एक दिन बौद्धगुरु पढ़ाते-पढ़ाते किसी विषय को समझा नहीं सके और वे चिन्तित होकर बाहर चले गये। प्रकरण सप्तभङ्गी का था, अकलङ्क ने समय पाकर उसे हल कर दिया। बौद्ध गुरु ने उसे देखा, तो सोचने लगे की यहाँ कोई जैन विद्यार्थी है, जो भेष बदलकर पढ़ रहा है। उसकी खोज करने के लिए रात को सिपाहियों को भेजा और दोनों को पहचानकर जेल में बन्द करा दिया। समय पाकर दोनों जेल से भाग निकले तो किसी ने देख लिया और सैनिकों को उनके पीछे भेज दिया। दोनों भागते-भागते एक तालाब के पास पहुँचे वहाँ निकलङ्क ने भाई अकलङ्क से कहा कि आप यहाँ छिप जाइये आप एक पाठी हैं, आप सुरक्षित रहोगे तो जैन धर्म आगे चलता रहेगा। बहुत मनाने के बाद अकलङ्क वहाँ छिप गये, निकलङ्क आगे भाग गये। एक स्थान पर एक धोबी ने पूँछा की आप क्यों भाग रहे हो? तो उन्होंने बताया की मेरे पीछे सैनिक पकड़ने के लिए आ रहे हैं, तो डर कर वह धोबी भी साथ में भागने लगा। जब वे थक गये तो सैनिकों ने दोनों को अकलङ्क-निकलङ्क समझ कर मार डाला। जब अकलङ्क को यह पता चला तो बहुत

दुखी हुए। उन्होंने बाद में मुनि दीक्षा लेली और तत्त्वार्थ राजवर्तिक सभाष्य, अष्टशती लघीयस्त्रय सविवृत्ति, न्याय विनिश्चय सविवृत्ति, सिद्धि विनिश्चय, प्रमाण सङ्ग्रह, स्वरूप सम्बोधन बृहत्त्रयम्, न्याय चूलिका, अकलङ्क स्तोत्र इत्यादि ग्रन्थों की रचना की। जिनशासन की प्रभावना के लिए आचार्य अकलङ्क देव ने अपने भाई निकलङ्क का महान त्याग किया था।

त्याग धर्म संस्कृत श्लोक

50 **पदमायान्निधिं कुर्यात्, पादं वित्ताय खट्वयेत्।**
धर्मोपभोगयोः पादं, पादं भर्त्तव्य पोषणे।।

कमाई का पच्चीस प्रतिशत बचा कर रखना चाहिए, पच्चीस प्रतिशत व्यापार में लगाना चाहिए, पच्चीस प्रतिशत धर्म और भोगोपभोग में लगाना चाहिए, पच्चीस प्रतिशत परिवार के भरण पोषण में लगाना चाहिए।

51 **मोहादिना निषिद्धे, श्रोतुः मन्द मतेरपि।**
सति प्राज्ञे विनीतेऽस्मिन्, यो व्याख्याति नराधमाः।।
भिन्न रत्नत्रयीयान, पात्रोऽसौ भूरिगौरवात्।
विधूत बोधि संसार, वारिराशौ निमज्जति।।

जो अहङ्कारी अधम पुरुष मोह के कारण विनम्र एवं बुद्धिमान श्रोता के रहते हुए निषिद्ध मन्दबुद्धि श्रोता को व्याख्यान करता है, उसका रत्नत्रय रुपी जहाज भग्न हो जाता है और बोधि से रहित होकर संसार समुद्र में डूब जाता है।

52 **णिव्वेग तियं भावई, मोहं चइऊण सव्व दव्वेसु।**
जो तस्य हवे चागो, इदि भणिदं जिणवरिन्देहिं।।

संसार शरीर भोगों से विरक्त हो समस्त पदार्थों में मोह को छोड़ने से त्याग धर्म होता है ऐसा जिनेन्द्र भगवान् ने कहा है।

53 **हंहो ! गुणधर जलधर, ह्यनन्य शरणं विहाय सारङ्गं।**
वर्षसि भूधर शिखरे, पयोधि पूरे च किं नित्यं।।

हे गुणवान् मेघ ! तुम अशरण चातक पक्षी को छोड़कर पर्वत पर एवं समुद्र में क्यों बरसते हो ? अर्थात् मेघान्योक्ति के द्वारा कहा गया है की हे धनवानों ! जिन्हें पैसों की आवश्यकता है उन्हें छोड़कर तुम धनवानों के लिए धन क्यों लुटाते हो ?

54 **किमिति कठोरं गर्जसि, वर्षसि सलिलस्य शीकरं वै।**
मा-मा बर्षाम्भोधर, त्यजतु कठोरं तु गर्जनं सद्यः।।
हे मेघ ! तू कठोर क्यों गरजता है, बरसता तो कुछ ही बून्दे है, मत बरस-मत बरस किन्तु कठोर गर्जना तो शीघ्र छोड़ दे 'यहाँ पर भी मेघान्योक्ति के माध्यम से कहा गया है कि' हे धनवान् ! तू याचकों को देता तो थोड़ा है और डांटता बहुत है, तू भले ही दान मत दे, पर डाँटना तो शीघ्र छोड़ दे।

55 **हं हो मलयज ! मूले, सदा निषण्णान् भुजङ्गमान् वारय।**
येन तव सुरभिसारं, भोक्तुं शक्नोति जगदेतत्।।
हे चन्दन के वृक्ष ! तू अपने समीप बैठे साँपों को दूर कर, जिससे कि ये जगत तेरी श्रेष्ठ सुगन्धी को ले सकें, यहाँ भी चन्दनपादपान्योक्ति के माध्यम से कहा गया है कि हे धनवान ! तू अपने समीप बैठे साँपों के सामान इन दान में अन्तराय डालने वाले लोगों को हटा, जिससे कि तेरे धन का सदुपयोग हो सके।

56 **मा कुरु मा कुरु शोकं, रत्न समूहेन हे रोहण !।**
झगिति पयोधर रावो, दास्यति रत्नानि ते बहुशः।।
हे रोहण पर्वत ! तेरे रत्नों को लोग ले गये हैं, तो तू शोक मत कर, शीघ्र ही बादलों की ध्वनि से तुझे बहुत सारे रत्नों की प्राप्ति हो जायगी, यहाँ रोहणगिरी अन्योक्ति के माध्यम से कहा गया है, कि हे धनवान ! तू दान देकर पश्चाताप मत कर तुझे पुण्य के उदय से बाद में अनन्त गुना धन प्राप्त होगा।

57 **तृष्णा दानव पीड़ित, विपद्यमानं नरं पुरो दृष्ट्वा।**
जलधे र्चपल तरङ्गैः, र्विनर्तमानो न लज्जसे कस्मात्।।
प्यास रुपी दानव से पीड़ित विपत्ति को प्राप्त मनुष्य को देखकर चञ्चल लहरों के बहाने नृत्य करते हुए हे समुद्र ! तू लज्जित क्यों नहीं होता है, यहाँ पर समुद्र अन्योक्ति के माध्यम से कहा गया है, कि हे धनवान ! दरिद्रता रुपी दानव से पीड़ित मनुष्य को देखकर अपने धन का अनाप-शनाप दुरुपयोग करते हुए तुझे लज्जा क्यों नहीं आती है ?

58 **रे खर्जूरानोकह !, किमेवमुत्तुङ्गमानमुदवहसि।**
छायापि ते न भोग्या, पान्थानां किं फलैरेभिः।।
हे खजूर के वृक्ष ! तू अपने ऊँचे होने का अहङ्कार क्यों करता है, फल तो दूर तेरी छाया भी तो

राहगीरों के काम नहीं आती है, यहाँ खर्जूर अन्योक्ति के माध्यम से कहा गया है, कि हे धनवान ! तू अपने सम्पन्न होने का अहङ्कार क्यों करता है क्योंकि, धन की तो बात दूर तेरा तन भी तो किसी के काम नहीं आता है।

59 **अत्यल्पता निमित्ताच्छाले शाखिन् ! नु खिद्यते कस्मात्।**
जीविज्जगज्जनोच्च, त्वमेव धन्यः समस्त भूभागे।।

हे धान के पौधे ! मैं छोटा हूँ ऐसा मानकर तू खेद-खिन्न क्यों होता है ? सारा जगत तेरी बदौलत ही जीवित है इसलिए समस्त भू-भाग पर तू ही धन्य है, यहाँ पर धान्य के पौधे के माध्यम से अल्प धनवान को समझाया गया है कि हे भाई मेरे पास कम धन है ऐसा मानकर तू क्यों दुःखी होता है ? क्योंकि जितना भी है तेरा धन दूसरों के काम तो आता है, इसलिए पृथ्वी पर तू धन्य है, अर्थात् जिनका तन-मन-धन किसी के काम नहीं आता उनसे तो तू अच्छा है।

60 **साक्षात् मनो-वचन-काय विशुद्धि शुद्धः, पात्राय यच्छति जनो ननु भुक्ति मात्रं।**
यस्तस्य संसृति समुत्तरणैक बीजे, पुण्ये हरि र्भवति सोऽपि कृताभिलाषा।।

जो मनुष्य मन-वचन-काय की विशुद्धि से शुद्ध होकर पात्र के लिए आहार मात्र देता है, जो कि संसार समुद्र से तैरने के लिये बीज के सामान है, उसके पुण्य के लिए इन्द्र भी अभिलाषा करता है।

61 **ऐहिक फलानपेक्षा, क्षान्ति र्निष्कपटतानसूयत्वं।**
अविषादित्व मुदित्वे, निरहङ्कारित्वमिति दातृगुणाः।।

इस लोक सम्बन्धी फल की अपेक्षा से रहित, क्षमा, निष्कपटता, ईर्ष्या रहित, खेद रहित, प्रसन्नता सहित और अहङ्कार रहित होना ये आहार दाता के सात गुण हैं।

62 **सङ्ग्रहमुच्चस्थानं, पादोदकमर्चनं प्रणामं च।**
वाक्कायमनः शुद्धि, रेषण शुद्धिश्च विधिमाहुः।।

पड़गाहन करना, उच्चासन देना, पाद प्रक्षालन, पूजन, नमोस्तु, मन-वचन-काय की शुद्धि एवं आहारजल की शुद्धि ये नवधा भक्ति मानी गई है।

63 **रागद्वेषासंयम, मद दुःख भयादिकं न यद् कुरुते।**
द्रव्यं तदेव देयं, सुतपः स्वाध्याय वृद्धिकरं।।

साधु को वही आहार देना चाहिए जिससे राग, द्वेष, असंयम, मद, दुःख, भय आदि उत्पन्न न हो एवं स्वाध्याय और तप की वृद्धि हो।

64 **उत्कृष्टपात्रमनगारमणुव्रताढ्यं, मध्यं व्रतेन रहितं सुदृशं जघन्यं।**
निर्दर्शनं व्रतनिकाययुतं कुपात्रं, युग्मोज्झितं नरमपात्र मिदं च विद्धि।।
मुनि उत्कृष्ट पात्र हैं, अणुव्रती मध्यम पात्र है, अविरत सम्यग्दृष्टि जघन्य पात्र है, सम्यग्दर्शन रहित और व्रत सहित कुपात्र है सम्यग्दर्शन और व्रत दोनों से रहित अपात्र हैं।

65 **क्षितिगतमिववटबीजं, पात्रगतं दानमल्पमपि काले।**
फलतिच्छाया विभवं, बहुफलमिष्टं शरीरभृतां।।
पात्र को दिया हुआ थोड़ा भी दान, समय पाकर प्राणियों को वट वृक्ष की तरह बहुत फल देने वाला होता है।

66 **अन्नदानसमं दानं, समतासदृशं तपः।**
वीतरागसमो देवो, नास्ति धर्मो दयासमः।।
अन्नदान के समान कोई दान नहीं, समता के समान कोई तप नहीं, वीतरागता के समान कोई देव नहीं और दया के समान कोई धर्म नहीं है।

67 **भुक्ति मात्र प्रदाने तु, का परीक्षा तपस्विनां।**
ते सन्तः सन्त्वसन्तो वा, गृही दानेन शुद्धयति।।
आहार मात्र देने के लिए साधु की परीक्षा नहीं करना चाहिए, वे भावलिंगी हो या न हो गृहस्थ तो दान देने से शुद्ध होता है।

68 **काले कलौ चले चित्ते, देहे चान्नादि कीटके।**
एतच्चित्रं यदद्यापि, जिनलिंग धरा नराः।।
अहो! बड़े आश्चर्य की बात है कि कलिकाल के होने पर और चित्त की चंचलता होने पर और शरीर अन्न का कीड़ा होने पर भी आज जिन लिंग के धारी जीवों का दर्शन हो रह है।

69 **भोज्यं भोजनशक्तिश्च, रतिशक्ति वरस्त्रियः।**
विभवो दान शक्तिश्च, स्वयं दान कृते फलं।।
भोगने योग्य पदार्थ, भोजन, शक्ति, रतिशक्ति, श्रेष्ठ स्त्रियाँ, वैभव, दान देने की शक्ति, ये सब स्वयं दान देने से प्राप्त होते हैं।

70 **आत्म वित्त परित्यागात्, परैर्धर्म विद्यापने।**
अवश्यमेव प्राप्नोति, पर भोगाय तत् फलं।।
जो अपने धन का स्वयं दान न करके दूसरों से करवाता है, वह भोगों को अवश्य प्राप्त होता है पर उसका भोग दूसरे करते हैं।

71 **चोरी करे निहाई की, सुई का देवे दान।**
महलों पर चढ़ देखते, कितनी दूर विमान।।

72 **बिन माँगे दे दूध बराबर, माँगे दे सो पानी।**
वह देना है खून बराबर, जिस में खींचा तानी।।

73 धन की तीन गति होती हैं दान, भोग और नाश।

74 **सच्चा दान वही है, जिसमें छिपी नहीं है फल की चाह।**
सच्चा धर्म वही है जिसमें रहे निरन्तर एक प्रवाह।।

75 **तन से सेवा कीजिए, मन से भले विचार।**
धन से इस संसार में, कीजे पर उपकार।।

76 **भीम ने नगाड़ा पीटा-** एक याचक ने धर्मराज से कुछ याचना की, धर्मराज ने कल के लिये कहा भीम ने सुना भैया ने काल को जीत लिया,तो नगाड़ा पीट दिया, इसलिये अच्छे कार्य आज ही करना चाहिये।

77 आदिनाथ जी ने विद्यादान नारी को दिया, जिससे कि ये सन्तान को शिक्षित कर सके, औरबेटों को तलवार सिखाई और छःखण्ड का अधिपति बनाया।

78 **पण्डित दौलतराम जी गरीब थे,** छहढाला की रचना कर रहे थे, तभी बेटी ने आकर भोजन मांगा, तब उनके मुख से निकलता है, 'आतम को हित है सुख सो सुख आकुलता बिन कहिये, आकुलता शिव माहीं न तातें शिव मग लाग्यो चहिए' आत्मार्थी को हर परिस्थिति में मोक्ष मार्ग ही दिखाई देता है।

79 **वर्णी जी का श्रोता-** गणेशप्रसाद वर्णी जी के प्रवचन सुनने एक साहुजी आते थे, एक दिन वह देर से आये, लोगों ने बहुत कहा महाराज प्रवचन करो, वर्णी जी ने कहा श्रोता आ जाय, जब साहुजी आये तब वर्णीजी ने प्रवचन शुरू किया, वर्णीजी ने पूँछा 'भैया आज लेट काय हो गये' उनने कहा आज पत्नि से झगड़ा हो गया, कारण ? कि आज रात में चोर आये थे, उन्होंने चारों कोने छाने पर कुछ नहीं मिला, हम करवट से लेटे थे, उन्होंने हमारी घड़ी, अङ्गूठी उतार ली, करवट बदला कि ये सोने का कड़ा भी उतार ले लेकिन वे विना कड़ा उतारे भाग गये, पत्नि ने कहा तुमने करवट काय बदली बेचारे विना कड़ा लिये भाग गये,ये है निरीह वृति।

80 **वृक्ष की उदारता-** धरती ने वृक्ष से कहा मैं तुम्हे रस प्रदान करती हूँ, तुम यूँ ही बर्बाद कर देते हो, किसी को दिया मत करो, अपने पास रखो, वृक्ष बोला नहीं माँ मैं देता हूँ तभी फलता हूँ, देने

में मुझे शान्ति मिलती है।वृक्ष ने फूल दिये, फल दिये, पत्ते दिये, पक्षियों को आवास दिया, पथिकों को छाया दी, धरती उससे रूठ गयी, सारे पत्तें सूख कर झड़ गये, शोभा समाप्त हो गयी। धरती ने कहा अब देना बन्द करो, उसने कहा मैं चाहता हूँअन्तिम श्वास तक दूसरों के काम आऊँ, वृक्ष की उदारता से धरती प्रसन्न हुई, बसन्त आया वृक्ष फिर हरा-भरा हो गया।

81 मुनि को दान देकर जो भोजन करता है वह उत्तम श्रावक है, जो मुनि के आहार को देखकर भोजन करता है वह मध्यम श्रावक है और जो मुनि के आहार की बेला टालकर भोजन करता है वह जघन्य श्रावक माना जाता है और जो मुनि के आहार के पहले भोजन करता है, वह जघन्य से भी जघन्य श्रावक माना जाता है।

82 आध्यात्मिक आनन्द की खोज भारतीय साधना का मूल है, अतः वैभव सम्पन्न लोग साधना सम्पन्न साधको के चरणों में झुकते हैं।

संसार कूप से निकलने का उपाय-

1 राजा के बेटे के भाग्य में काला घोड़ा और पाँच रुपये थे, उसने दान देना प्रारम्भ किया तो भाग्य बदल गया और वह राजा बन गया।

2 सुपात्र दान के फल से उत्तम कुल, रूप, सुलक्षण, बुद्धि, शिक्षा, स्वभाव, गुण, चरित्र तथा सकल सुखों का अनुभव प्राप्त होता है।

3 गृहस्थों को दान के आलम्बन के विना अन्य कोई सुदृढ़ साधन संसार कूप से निकालने वाला नहीं है।

4 जो उत्तम पात्र विशेष के लिए उत्तमभक्ति से एक दिन भी दान देता है, उसका वह दान उसे इन्द्र का उत्तम सुख देता है। (कार्तिकेयानुप्रेक्षा)

5 दान और जीवरक्षण के बीच दान की अपेक्षा जीव रक्षण श्रेष्ठ है क्योंकि दान से मनुष्य स्वर्ग को प्राप्त होता है और जीवरक्षण से अविनाशी मोक्षपद को प्राप्त होता है।

6 लोक में भोजन कराने से कौन मनुष्य वश में नहीं होता? क्योंकि आटे के लेप से मृदङ्ग भी मधुर शब्द करता है।

7 **गृहकर्मणापि निचितं, कर्मविमार्ष्टि खलु गृहविमुक्तानां।**
अतिथीनां प्रतिपूजा, रुधिरमलं धावते वारि।।
गृहत्यागी साधुओं को दिया हुआ दान घर के कार्यों से संचित पापों को उस तरह धो देता है, जैसे पानी खून को धो देता है।

त्याग धर्म काटे कर्म-

1 मयूरपिच्छि देने वाला सपरिवार दीर्घायु होता है और कमण्डलु देने से निर्मल शरीर तथा निर्दोष व्रत का धारक होता है।

2 **हिंसा और अहिंसा-** व्रतादि के अनुष्ठान रूप निष्ठा से हीन भी व्यक्ति द्रव्य और भाव हिंसा के त्याग से निष्ठाशाली होता है और उत्कृष्ट निष्ठावाला भी व्यक्ति हिंसा करने से चाण्डाल से भी नीच होता है।

3 वर्तमान में जितना मिला वह पूर्व दान का ही फल है।

4 **व्याजेन द्विगुणं द्रव्यं व्यवसायेन चतुर्गुणं।**
भूम्यां शतगुणं प्रोक्तं पात्रेऽनन्तगुणं भवेत्।।
व्याज से कुछ समय में धन दूना हो जाता है, व्यापार से चौगुना, भूमि में बोने से सौ गुना एवं पात्र को दान देने से अनन्त गुना फल प्राप्त होता है।

5 **दाता नीचोऽपि सेव्यः स्यान्, निष्फलो न महानपि।**
जलार्थी वारिधिं त्यक्त्वा, पश्य कूपं निषेवते।।
दाता निम्न कुल में भी हो तो भी लोग उसके पास जाते हैं, कञ्जूस उच्च कुल वाला भी हो तो भी लोग उसके पास नहीं जाते जैसे समुद्र के पास कोई नहीं जाता और कुंए के पास सब लोग जाते हैं।

6 **नामापि यः स्मरति मोक्षपथस्य साधो, राशुक्षयं व्रजति तद्दुरितं समस्तं।**
यो भक्तभेषजमठादि कृतोपकारः, संसारमुत्तरति सोऽत्र नरो न चित्रं।।
जो मोक्षमार्गी साधु का नाम मात्र लेता है, उसके सारे पाप नष्ट हो जाते हैं तब जो भोजन, औषध और आश्रय आदि देकर उपकार करता है वह मनुष्य संसार समुद्र से पार हो जाता है इसमें कोई आश्चर्य नहीं है।

7 **देवः सः किं भवति यत्र विकारभावो, धर्मः सः किं न करुणाङ्गिषु यत्र मुख्या।**
तत् किं तपो गुरुरथास्ति न यत्र बोधः, स किं विभूतिरिह यत्र न पात्र दानं।।
वह देव कैसा जो रागी द्वेषी हो, वह धर्म कैसा जहाँ दया न हो, भारी तप कैसा जहाँ ज्ञान न हो और वह विभूति किस काम की जो पात्र दान के काम न आए ?

8 **दानाय यस्य न धनं वपुर्व्रताय, नैवं श्रुतं च परमोपशमाय नित्यं।**
तज्जन्म केवलमलं मरणाय भूरिः, संसार दुःख मृति जाति निबन्धनाय।।

जिसका धन दान के लिए, शरीर व्रतों के पालन के लिए और शास्त्र अध्ययन परम शान्ति के लिए नहीं है, उसका जन्म केवल जन्म-मरण की परम्परा के लिए ही है।

9 **सद्यागते किल विपक्ष जनेऽपि सन्तः, कुर्वन्ति मानमतुलं वचनासनाद्यैः।**
यत्तत्र चारुगुणरत्न निधान भूते, पात्रे मुदावहति किं क्रियते न शिष्टैः।।
घर पर शत्रु के आने पर भी सज्जन लोग मिष्ट वचन आसन आदि के द्वारा सम्मान करते हैं, फिर गुणों के भण्डार साधु के आने पर सज्जन लोग क्या नहीं करते हैं ?

10 **मिथ्यादृशोऽपि रुचिरेव मुनीन्द्र दाने, दद्यात् पशोरपि हि जन्म सुभोग भूमौ।**
कल्पाङ्घ्रिपाः ददति यत्र सदेप्सीतानि, सर्वाणि तत्र विदधाति न किं सुदृष्टेः।।
मिथ्यादृष्टि की भी आहार दान में रुचि होती है दान की अनुमोदना से पशु भी भोगभूमि में जाता है, वहाँ पर कल्पवृक्ष सदा मनोरथों को पूर्ण करते हैं, फिर सम्यग्दृष्टि के कौन से मनोरथ पूर्ण नहीं होंगे अर्थात् सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं ?

11 **सेठ की सम्पत्ति बीस हजार-** धनी सेठ से साधु ने पूँछा तुम्हारी कितनी सम्पति है सेठ ने कहा बीस हजार क्योंकि हमने इतना ही दान दिया है, बाकी की सम्पत्ति परिवार की है, अर्थात् जितना दान देते हैं उतना ही अपना मानना चाहिए।

12 **आहार का दाता-** इस अवसर्पिणी में दान तीर्थ के कर्ता राजा श्रेयाँस हुये, जिनकी यश चन्द्रिका लोक में फैली है, तीर्थङ्कर या ऋद्धिधारी मुनि को आहार देने से पञ्चाश्चर्य होते हैं, तीर्थङ्कर का प्रथम आहारदाता तद्भव मोक्षगामी होता है, राजा श्रेयाँस का दस भव पूर्व का संस्कार था, भरत चक्रवर्ती राजा श्रेयाँस के दर्शनार्थ आये, छेवले के वृक्ष के नीचे राजा श्रेयाँस का सम्मान किया था, उसी दिन से अक्षय तृतीया पर्व प्रारम्भ हुआ था।

13 अतिथि को खिलाकर खाओंगे तो वह भोजन भी पूजन बन जायेगी, अर्जन के साथ विसर्जन जरूरी है।

14 दान तो हजार गुणा होकर लौटता है, इतना दान भी मत करो कि किराये के मकान में रहना पड़े और इतना सङ्ग्रह भी मत करो कि नरक जाना पड़े।

15 **त्याग से नदी पार-** एक साधु को नदी पार करना थी, नाविक ने पाँच रुपये माँगे, साधु ने कहा नहीं हैं, तभी एक व्यक्ति आया, उसने सोचा इनको भी पार करा देते हैं, नदी के बीच में साधु से व्यक्ति ने कहा, आप त्याग का बहुत उपदेश देते हो, अब मत देना, साधु ने कहा भैया जब पाँच रुपये का त्याग किया तभी तो नदी पार हुये, उसी प्रकार जब तक सम्पूर्ण त्याग नहीं करेंगे, तब

तक संसार सागर से पार नहीं हो सकते हैं।

'दान'

16 **मन में नवधा भक्ति लेकर, तू जो दान करेगा।**
ऊपर वाला तेरा खजाना, रातों रात भरेगा।।
जञ्जीरों में बँधी चन्दना, दान नहीं बँध पाये,
इक्षु रस देकर श्रेयाँस भी दान तीर्थ कहलाये,
अञ्जुलि भर देने वाले, दरिया(समुद्र) भरके मिलेगा।।ऊपरवाला।।
पुण्य कोश तेरा रिक्त हो रहा, कुछ तो सञ्चय कर ले,
नादानी को छोड़ रे मानी, दान को अक्षय करले।
पद रज श्री चरणों की ले ले, शिवपद तुझको मिलेगा।।ऊपरवाला।।
जिसने दिया उसी ने पाया, जो जोड़े सो छोड़े,
खाता-वही सही रख पगले, कलम काहे को तोड़े,
कैसे मिलेगा वक्त पड़े जब, जमा ही कुछ न करेगा।।ऊपरवाला।।

17 **गरीब का बेटा बीमार हो गया,** पैसा पास में नहीं था, कर्जा करके पैसा लगाया, पच्चीस रुपये शुल्क थी, डॉ. को लाया तब तक बेटा मर गया, डॉ. को पच्चीस रुपये दिये उसने लेने से मना कर दिया, डॉ. ने तीन रुपये रिक्शे वाले को दिये उसने भी मना कर दिया यह भी त्याग है।

18 पूरी दुनिया को आहार कराने का पुण्य एक तरफ और एक मुनि को आहार कराने का पुण्य एक तरफ।

19 त्याग धर्म वहाँ होता है जहाँ त्यागने के लिए कुछ नहीं बचता है।

20 हजार मिथ्यादृष्टि के बराबर एक जैनी, हजार जैनी के बराबर एक सम्यग्दृष्टि, हजार सम्यग्दृष्टि के बराबर एक व्रती ब्रह्मचारी, हजार व्रती ब्रह्मचारी के बराबर एक क्षुल्लक जी, हजार क्षुल्लक जी के बराबर एक आर्यिका, हजार आर्यिका के बराबर एक मुनि हजार मुनियों के बराबर एक ऋद्धिधारी मुनि, हजार ऋद्धिधारी मुनियों के बराबर एक तीर्थङ्कर को आहार देने में उत्तरोत्तर ज्यादा पुण्य होता है।

21 **राजा भोज बहुत दानी थे,** मन्त्रियों को चिन्ता हुई कि राज्य का सञ्चालन कैसे होगा, अतः उन्होंने राजा से कहा, **'आपदार्थे धनं रक्षेत्'** आपत्ति काल के लिए धन की रक्षा करना चाहिए, राजा भोज ने कहा, **'श्रीमतां कुत आपदा'** भाग्यवानों को विपत्ति कहाँ से आ सकती है, मन्त्रियों ने कहा, **'दैवात् क्व चित् समायाति'** दुर्भाग्य से कहीं से आ गयी तो, राजा ने कहा,

'सञ्चितोऽपि विनश्यति' पाप के उदय से सञ्चित धन भी नष्ट हो जाता है।

धनार्जन में कष्ट विसर्जन में कष्ट-

1 जो जीर्णोद्धार, प्रतिष्ठा, जिनपूजा और तीर्थ यात्रा के अवशिष्ट धन निर्माल्य को भोगता है, वह बाद में नरक के दुःख भोगता है।

2 सज्जन को पुत्र मरण का इतना शोक नहीं होता, जितना आहारदान से रहित दिन का शोक होता है।

3 यौवन में भोग भोगना और बुढ़ापे में त्याग करना, आम चूस कर बाद में, गुठली का दान करने जैसा है।

4 त्यागी हुई वस्तु ग्रहण करना वमन ग्रहण करने के तुल्य है।

5 जैसे विल में सर्प अकेला ही जाता है, वह घर भी विल के सामान है जहाँ अतिथि नहीं आते हैं, रोटी, कपड़ा और मकान से मनुष्य पर्याय की सार्थकता नहीं होती है।

6 दान करने वालों को दवा नहीं खाना पड़ती, जो दान नहीं करता उसका धन दवाखाने में जाता है।

7 पहले लोग सोचते थे कोई आवे तो हम खावें, अब सोचते हैं ये जावें तो हम खावें, यही संस्कृति में विकृति है।

8 **पलितैक दर्शनादपि, सरति सतश्चित्तमाशु वैराग्यं।**
प्रतिदिनमितरस्य पुनः, सह जरया वर्धते तृष्णा।।
सिर के एक सफ़ेद बाल को देखकर सज्जनों को शीघ्र ही वैराग्य हो जाता है किन्तु दुर्जनों की जैसे-जैसे वृद्धावस्था आती है वैसे-वैसे तृष्णा बढ़ती जाती है।

9 **कृपणेन समो दाता, न भूतो न भविष्यति।**
अस्पृशन्नेव वित्तानि, यः परेभ्यः प्रयच्छति।।
कञ्जूस के समान दाता न हुआ है न होगा, क्योकि वह धन को छुए विना ही दूसरों को दे देता है, अर्थात् स्वयं दान व भोग न करके पूरा छोड़ करके चला जाता है।

10 **कुण्डनी पेषणी चुल्ली उद्कुम्भ प्रमार्जनी।**
पञ्चशूना गृहस्थस्य तेन मोक्षं न गच्छति।।
उखली, चक्की, चूल्हा, जल का घड़ा, झाड़ू इनके कारण गृहस्थ को मोक्ष नहीं होता है।

11 **रत्तो बंधदि कम्मं, मुंचदि जीवो विरागसम्पण्णो।**
एसो जिणोवदेसो, तम्हा कम्मेसु मा रज्झ।।

रागी जीव कर्मों से बँधता है, वैरागी जीव कर्मों से छूटता है, ऐसा जिनेन्द्र भगवान् का उपदेश है, इसलिए किसी भी पदार्थ में राग मत करो।

12 **रामचन्द्रजी सीता और लक्ष्मण के साथ** वन-वन भटकते हुए एक ऐसे महा एकान्त वन में आये, जहाँ कोई भी मनुष्य नहीं था, वहाँ राम-लक्ष्मण और सीता ने स्नान पूर्वक शुद्धि से भोजन तैयार किया और पड़गाहन के लिए बाहर खड़े हुए, तो सीता ने आकाश मार्ग से चारण ऋद्धिधारी दो मुनि गुप्ती और सुगुप्ती आते हुए देखे, वह एक महीने के उपवासी थे, राम-सीता ने उनका पड़गाहन कर नवधाभक्ति पूर्वक निरन्तराय आहारदान दिया, जिस समय आहार चर्या चल रही थी, वहाँ एक वृक्ष पर गिद्ध पक्षी (जटायु) बैठा था, आहार चर्या देख उसको जातिस्मरण हो गया और अपने पूर्व भवों को देखा, और अपने आप को धिक्कारने लगा और महामुनि के दर्शनार्थ वृक्ष से नीचे आया, मुनियों के गन्धोदक के प्रभाव से उसका शरीर महाकान्ति से युक्त हो गया और भक्ति करता हुआ मुनि के आगे नाचने लगा तथा पाप से डरकर श्रावक के व्रत ग्रहण किये और व्रती बना।

13 **सेठ ने धीवर को एक रुपये का दान दिया,** उसने जाल खरीद कर मछली मारना शुरू कर दिया, सेठ कङ्गाल हो गया, मुनि से पूँछा तो उन्होंने कहा, तुमने धीवर को दान दिया है, जिससे ऐसा हुआ।

14 **दान से अच्छा कोई धर्म नहीं-** कञ्जूस सेठ धर्म कर्म से दूर रहता था, पत्नि धार्मिक थी, एक बार नगर में सन्त आये, दान पर प्रभावी प्रवचन हुआ, सेठजी भी प्रवचन सुनने गये थे, पत्नि ने पूँछा प्रवचन अच्छा लगा ? सेठ ने कहा आज के प्रवचन का सार यह है कि दान से अच्छा कोई धर्म नहीं, इसलिये कल से दान माँगने का कार्य प्रारम्भ करूँगा।

15 **राजकुमार के खजाने में साँप रहता था,** कोषाध्यक्ष और मन्त्री को देखकर फुङ्कार मारता था, लेकिन राजकुमार को देखकर हट जाता था, वह राजकुमार के पिता का जीव था, राजा परिग्रह आसक्ति के कारण अपने ही भण्डार में मरकर सर्प बना था, मुनिराज के मुख से पिता के पूर्व भव सुनकर राजकुमार को वैराग्य हो गया।

16 **लोग माल उड़ाकर भी बुरा कहते हैं-** एक सेठ के चार बेटे थे, उसने पाँच-पाँच लाख रुपए सबको बराबर बाँट दिये, बेटों ने सोचा समाज का मुख मीठा कर दो, छोटे बेटे ने अच्छी नमकीन-मिठाईयाँ खिलाई, खा-पीकर लोग चर्चा करने लगे, बाप का धन तो इसी ने उड़ाया है, तभी तो इतना खर्च कर रहा है, लोग माल भी उड़ा रहे थे और बुराई भी कर रहे थे, दूसरे बेटे

ने केवल मिठाई बनायी, खा-पीकर लोग बोले ये तो बदमाश है, तीसरे ने पूड़ी-साग खिलाई तो लोगों ने कहा कञ्जूस है, चौथे ने दाल-रोटी खिलाई तो लोग बोले कि मख्खीचूस है, इसलिए इस जगत में प्रशंसा की दृष्टि से खर्च करना व्यर्थ है क्योंकि महावीर भगवान् की भी सब प्रशंसा नहीं करते हैं।

17 **प्रशंसा के लोभी इस तरह लुट जाते हैं-** चार धूर्तों ने प्रशंसा के लोभी कञ्जूस राजा को लूटने का उपाय सोचा और स्यारों के बोलने के समय राजा के पास आये, राजा ने पूँछा स्यार क्यों रो रहे हैं ? धूर्तों ने कहा हुजूर ! आपके राज्य में सभी प्रजा सुखी है केवल इन बेचारों के आवास की व्यवस्था नहीं है राजा ने प्रशंसा सुन कर बीस लाख रुपये दे दिये। चारों ने ले जाकर आपस में बाँट लिये। कुछ दिन बाद आये तो राजा ने पूछा अब क्यों रो रहे हैं ? धूर्तों ने कहा इनके पास कपड़ों की व्यवस्था नहीं है, राजा ने पुनः बीस लाख रुपये दे दिये। धूर्तों ने ले जाकर आपस में बाँट लिये। कुछ दिन बाद फिर आये राजा ने पूछा अब क्यों रो रहे हैं ? धूर्तों ने कहा ! इनके पास अभी भोजन की व्यवस्था नहीं है, राजा ने पुनः बीस लाख रुपये दे दिये। धूर्तों ने पुनः ले जाकर बाँट लिये। चौथी वार राजा ने पूछा अब क्यों रो रहे हैं ? धूर्तों ने कहा हुजूर ! इनके रोने और गाने की आवाज एक जैसी ही है अतः अब ये रो नहीं रहे आपका गुणगान कर रहे हैं, राजा लुट कर के भी खुश हो गया।

18 त्याग तो किया पर रागादि कितना घटा ? अलमारी साफ की पर ऐसे ढङ्ग से की, कि पानी अन्दर चला गया, पुस्तकें गल गयी, ऐसी सफाई ठीक नहीं, इसी तरह त्याग किया पर राग-द्वेष कम नहीं हुए तो ये वास्तविक त्याग नहीं है।

त्याग कि प्रेरणा-

1 यदि लक्ष्मी को स्वयं उत्पन्न किया है तो वह पुत्री है, यदि पिता के द्वारा उत्पन्न की गई है तो बहिन है और यदि अन्य मनुष्यों की है तो परस्त्री है, ऐसा विचार कर बुद्धिमान मनुष्य उस लक्ष्मी का त्याग करने में तत्पर रहते हैं।

2 **गोदुग्धं वाटिका पुष्पं, विद्याकूपोदकं धनं।**
दानाद् विवर्धते नित्य, मदानात् विनश्यति।।
गाय का दूध, बगिया के पुष्प, विद्या, कुंए का जल और धन नित्य देते रहने से बढ़ते हैं और नहीं देने से घट जाते हैं।

3 भावों से रिश्ते का त्याग ही सच्चा त्याग है।

4 नींव का पत्थर अदृश्य रहकर दृश्य को कायम रखता है, कभी बोलता नहीं, कर्तव्य निभाता है, उसका अभिशाप है कि नींव के पत्थर को न माल्यार्पण, न शॉल सम्मान, केवल निःस्वार्थ स्वान्त सुख है।

5 धर्म की इमारत त्याग की नींव पर खड़ी है, माँगो उसी से, जो दे खुशी से, कहे न किसी से।

6 समय पर दिया दान, भूखे को भोजन, प्यासे को पानी, रोगी को औषधि, मूर्खों को ज्ञान ये सबसे अमूल्य दान है।

7 लक्ष्मी का वाहन उल्लू जो दिन में अन्धा होता है, उसी प्रकार लक्ष्मीवान भी प्रायः अन्धे होते हैं।

8 भोजन करें और मल विसर्जन न करें, तो पीड़ा होगी, श्वांस लें और बाहर न निकालें तो घुटन होगी, लेना जितना जरूरी है, उसे छोड़ना भी उतना ही अनिवार्य है।

9 अर्जन और विसर्जन, ग्रहण और त्याग, प्रकृति का शाश्वत नियम है।

10 विना दिये कभी सोना नहीं, देकर कभी रोना नहीं, धर गये सो खो गये, दे गये सो ले गये।

11 प्रकृति का नियम है कि आज का दिया हुआ कल हजार गुणा होकर लौटता है।

12 बाँध के अभाव में नदी का जल ठहरता नहीं, बाँध के द्वारा जल को रोकने के बाद यदि उसे छोड़ा न जाय तो खतरनाक स्थिति निर्मित होती है, जो जोड़ते गये, बे डूबते गये, जो छोड़ते गये, वे पूज्य हो गये।

13 सुरा और सुन्दरी में धन को बहाने वाले बहुत हैं, किन्तु मानव सेवा, धर्म, संस्कृति, देश उत्थान में खर्च करने वाले विरले ही हैं।

14 सम्पदा को वेश्या और कीर्ति को कुँवारी कहा है, क्योंकि सम्पदा किसी एक पति के पास नहीं रहती वह रोज बदलती है, कीर्ति उन्हें चाहती है, जो कीर्ति को नहीं चाहते और जो कीर्ति को चाहते हैं उसे कीर्ति नहीं चाहती है इसलिये वह आज तक कुँवारी है।

15 लक्ष्मी की मूर्ति प्रायः खड़ी दिखाई देती है कहीं बैठी नहीं देखी होगी इससे सिद्ध है कि वह हरदम जाने को तैयार है।

16 छोड़ने और छूटने में कितना अन्तर है, जितना शौच और उल्टी में हैं, शौच के बाद ताजगी, उल्टी में जी मचलता है।

17 **कोई मर कर के देता है, कोई देकर के मरता है,**
जरा से फर्क से बनते ज्ञानी और अज्ञानी।
धन की रक्षा है मञ्जूर, तो धन वालों बनो दानी,
कुंए से गर नहीं निकला, तो सड़ जायेगा पानी।।

18 **पानी बाढ़े नाव में, घर में बाढ़े दाम।**
दोनों हाथ उलीचिये यही सयानो काम।।

19 **याचका: नैव याचन्ते, प्रतिबोधन्ति गृहे-गृहे।**
दीयतां दीयतां लोका:, अदानात् फलमीदृशं।।
भिखारी भीख नहीं माँगते है घर-घर जाकर शिक्षा देते हैं कि हे लोगों ! दान दो-दान दो मैंने पहले दान नहीं दिया था इसी कारण मुझे आज भीख माँगनी पड़ रही है।

20 राजा अरिञ्जय ने दो चारणऋद्धि धारी मुनियों को आहारदान दिया, पञ्चाश्यचर्य हुये, सोलहकारण भावना भायी, तीर्थङ्कर प्रकृति का बन्ध किया, वे 16वें तीर्थङ्कर शान्तिनाथजी बने।

21 **दानवीर की चेरी-** दानवीर सेठ की लक्ष्मी रोज सेवा करती थी, किसी ने इसका रहस्य समझना चाहा, लक्ष्मी ने कहा मेरा पति वह है जो मेरा सदुपयोग करता है मैं उसकी चरण चेरी बन जाती हूँ, जो सञ्चित करता है उसके लिये खञ्जर बन जाती हूँ।

धन्यकुमार चरित्र दान का श्रेष्ठतम फल

सर्वप्रथम चौबीस तीर्थकर, विद्यमान बीस तीर्थकर, पञ्चपरमेष्ठी एवं गणधरदेव को नमस्कार किया है, अपने कार्य की निर्विघ्न सिद्धि की प्रार्थना की है, अनन्तर धन्यकुमार चरित्र के लिखने का सङ्कल्प किया है। जम्बुद्वीप के मध्य सुमेरू पर्वत है, उसके दक्षिण में धनुषाकार भरत क्षेत्र है, उसके ठीक बीच में आर्यखण्ड है, उसमें जग उपकारक साधु व केवली बिहार करते हैं ऐसा अवन्ति देश है। इसी देश के बीच में उज्ज्यनी पुरी है, जहाँ श्रावक प्रात: शैय्या से उठकर निरन्तर सामायिक तथा ध्यानादि से पुण्य कमाते हैं। उसमें अवनिपाल राजा, धनपाल वैश्य प्रभावती भार्या उनके देवदत्त आदि सात पुत्र थे। किसी दिन प्रभावती ने रात्रि के पिछले पहर में अपने गृह द्वार में प्रवेश करते हुए उन्नत 1.वृषभ, 2.कल्पवृक्ष तथा 3.कान्तिशालि चन्द्रादि शुभ ग्रहों को देखा। पति से पुत्र रत्न की उपलब्धि जान दोनों प्रसन्न हुये, नव माह पश्चात् शुभ मुहूर्त में शुभ लक्षण मण्डित पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्र पुण्य शाली था, अत: उसकी नाल गाड़ने के लिए जब पृथ्वी खोदी गयी तब धन से भरी बड़ी भारी कढ़ाई निकली। तथा इसी तरह जब उसके मञ्जन के लिए खोदा गया, तब भी धन से भरा हुआ बर्तन निकला। धनपाल इस आश्चर्य को देखकर उसी समय राजा के पास पुत्र एवं धन की प्राप्ति का समाचार देने गया, राजा ने कहा जिस पुत्र के पुण्य से वह धन मिला है वही उसका मालिक है मुझे धन की अभिलाषा नहीं। राजा की निष्पृहता से धनपाल को बहुत सन्तोष हुआ एवं घर आकर विघ्नहारी

भगवान् की पूजा की तथा दानादि देकर परिवार को तथा याचक जनों को सन्तुष्ट किया। इसी प्रकार दसवे दिन किया, बन्धु लोगों ने विचारा कि अहो ! इस कुलदीपक पुत्र के उत्पन्न होने का ही तो फल है जो हम आज धन्य तथा कृतार्थ हुए हैं, इसी विचार से उन्होने पुत्र का नाम भी धन्यकुमार रखा। पश्चात् बालक अलङ्कारों से अलङ्कृत देवकुमारों के समान बढ़ने लगा। अनन्तर धन्यकुमार को विद्या प्राप्ति के लिए महोत्सव पूर्वक उपाध्याय के पास बैठाया। बुद्धिमान धन्यकुमार भी थोड़े ही समय में उत्तम बुद्धि रूपी नौका के द्वारा शास्त्र समुद्र को पार हो गया। युवावस्था में भी प्रमादी न होकर निरन्तर धर्म सम्पादन के लिए 'प्रचुर धन लगाकर देव-शास्त्र-गुरू की पूजा करता था और शुभ भावों से दीन-अनाथ लोगों के लिए दया बुद्धि से दान भी दिया करता था 'एवं सुखजनक भोगों का अनुभव करते हुए बहुत दिन बीते। उसके भाई ये सब सहन न कर सके और माँ से कहा हम सब व्यापार करते हैं और धन्यकुमार कुछ व्यापार नहीं करता। पिता ने शुभमुहूर्त में सौ दीनार दीं, धन्यकुमार ने पहले लकड़ी की गाड़ी खरीदी, पुनः गाड़ी के बदले गाय खरीद ली, उसके बाद में भेड़ मोल ले लिया, भेड़ के बदले में चार खाट के पाये खरीद लिये, बाद में अपने घर पर आ गया। देखकर माता प्रसन्न हुयी, भाईयों ने देखकर सोचा यह आज ही सौ दीनार खोकर आ गया, फिर भी माँ प्रसन्न है और हम लोग धन कमाकर लाते हैं फिर भी प्रसन्न नहीं होती। माँ ने सुन लिया फिर भी धन्यकुमार को भोजन कराकर स्वयं भोजन कर लिया। पश्चात् पाये धोये तो रत्न गिरने लगे और एक व्यवस्था पत्र भी निकला, 'ये रत्न और पत्र कहाँ से आये तो इसका उत्तर,' पहले इसी नगरी में पुण्यशाली वसुमित्र राजश्रेष्ठी था, उसके भोगोपभोग देने वाली नवनिधियाँ पैदा हुयी थी, एक दिन वसुमित्र ने अवधिज्ञानी मुनि से पूँछा कि आगे कौन पुण्यात्मा इन निधियों का स्वामी होगा ? अवधिज्ञानी महाराज ने कहा ! राजा अवनिपाल की राजधानी में धनपाल वैश्य का धन्यकुमार नामक पुत्र होगा। वसुमित्र ने घर आकर पत्र लिखा कि 'धन्यकुमार मेरे इस घर में आकर नवनिधियों को स्वीकार कर सुख पूर्वक यहीं पर रहें', उन्हें खाट के पायों में बन्दकर सुख पूर्वक रहने लगा। पश्चात् आयु के अवसान में सल्लेखना पूर्वक मरण कर स्वर्ग गया। घर के शेष लोग भी मरण कर कर्मों के अनुसार गति को प्राप्त हुए। सबसे बाद में जो मरा उसे जलाने के लिए खाट सहित शमशान में ले गये, उन्हीं खाट के पायों को शुभ कर्मोदय से धन्यकुमार ने चाण्डाल के हाथ से खरीदे। धन्यकुमार पत्रपढ़ कर स्थानादि ठीक समझकर, राजा की आज्ञा लेकर घर में गया और निधियों को देखकर खुश हुआ, उन निधियों को अपने अधिकार में कर, पूजा, सत्पात्र

दान, दया दान में धन का उपयोग कर, राज्य मान्ययश का पात्र बन गया। इसलिए **''सुख अभिलाषी मनुष्य पवित्राचरण से पुण्य सम्पादन करें''**। कई लोग उसके पिता से धन्यकुमार की शादी के विषय में कहने लगे। इस प्रकार बढ़ते हुए अभ्युदय को उसके भाई सहन न कर ईर्ष्या करने लगे और जान से मारने का सङ्कल्प किया। भाईयों के दुष्टाभिप्राय को वह न जान सका। उपवन की वापी में जल क्रीड़ा के लिए ले गये और धोके से बावड़ी में गिरा दिया, ऊपर से पत्थर पटके। **'गिरते ही उसे णमोकार मन्त्र याद आया'** तथा उसे मरा हुआ जान वे लोग वापस आ गये। 'संसार में ऐसा कौन सा बुरा काम है जिसे पापी लोग न करते हों अर्थात् नियम से करते हैं'। धन्यकुमार के पुण्योदय एवं मन्त्र के प्रभाव से जल देवता ने जल निकलने के द्वार से उसे बाहर निकाल दिया। 'यह बात ठीक है कि जिन लोगों ने पहले पुण्य संचय किया है उनके अधीन देवता स्वयं हो जाते हैं और आये हुए उपद्रवों को नाशकर उपकार करते हैं।' **''इसी महा मन्त्र का ध्यान करने से जो शुभकर्म का बन्ध होता है उससे दुष्टों द्वारा किये घोर उपद्रवों का भी नाश हो जाता है''**। इसके बाद धन्यकुमार जल से निर्विघ्न बाहर निकलकर अपने नगर की ओर चला, 'ईर्ष्यालु भाईयों की सङ्गति बुरी है' ऐसा विचार कर दूसरे देश की ओर चल दिया। रास्ते में किसान को हल हाकते देखकर सोचा 'मैंने सब विद्यायें सीखीं पर यह कोई अपूर्व विद्या है' ऐसा सोचकर पास से देखने लगा। कृषक अलङ्कारों से अलङ्कृत धन्यकुमार से बोला हे स्वामिन् ! मैं गृहस्थी वाला हूँ कुछ शुद्ध दही-भात लाया हूँ, मुझ पर अनुग्रह कर भोजन करें। किसान पत्तों का दोना लेने गया, धन्यकुमार ने कौतुहल वश हल चलाया तो सोने से भरा ताँबे का घड़ा दिखा। सोचा उस पुण्य शाली के पुण्य से निकला है किसान भी भाईयों की तरह व्यवहार न करे इसलिए मिट्टी से ढक दिया। कृषक का दही-भात खाकर, राजगृह का मार्ग पूँछकर चल दिया। कृषक ने हल चलाया, वही घड़ा दिखा, सोचा ! ये मेरे योग्य नहीं हैं **''जो मूर्ख दूसरे का धन लेते हैं वे पाप के उदय से अपनी लक्ष्मी का भी नाशकर जन्म-जन्म में दरिद्री होते हैं''**, ऐसा विचार कर धन्यकुमार को बुलाकर देने लगा। उसने कहा मैं साथ में कुछ नहीं लाया था। किसान ने कहा मेरे पिता ने भी हल चलाया था, किन्तु नहीं निकला यह तुम्हारे पुण्योदय से निकला है। तब उसने कहा! तुम्ही पुण्योपार्जन तथा सुख के लिए उपभोग करो। कृषक ने प्रणाम किया और कहा मेरे लायक कोई सेवा हो तो बताना। धन्यकुमार आगे चला तो अवधिज्ञानी मुनि के दर्शन कर आनन्दित हुआ और श्रावक धर्म का उपदेश सुना। पुनः हाथ जोड़कर धन्यकुमार ने पूँछा भगवन् ! क्या कारण है कि मेरे भाई मुझसे

ईर्ष्या करते हैं और किस पुण्य से माता प्रेम करती है तथा पग-पग पर मुझे लक्ष्मी मिलती है ? मुनिराज धन्यकुमार के पूर्व भव की कथा सुनाने लगे, भारत वर्ष में मगधदेश के अन्तर्गत भोगावती नगरी, राजा कामवृष्टि रानी मृष्टादाना थी, उसके घर में सुकृतपुण्य नामक एक नौकर था, मृष्टादाना गर्भवती हुयी पर उस पुत्र के पापोदय से राजा मर गया। गर्भ जैसे-जैसे बड़ा वैसे-वैसे सब लोग धराशायी हो गये, पुत्र का जन्म होते ही मृष्टादाना की माता भी मर गयी, पुण्य के साथ धन-धान्य भी नष्ट हो गया, सच है अभागा कुपुत्र गर्भ में आता है, तब कुटुम्ब, धन, सुख और पुण्य सभी नष्ट हो जाते हैं। **''जितनी भी वस्तुएँ दुःख का कारण होती हैं वह सब पाप का फल है, इस अनिष्ट का कारण पाप को प्राण जाने पर भी नहीं करना चाहिए''**। उस अभागे ने कभी पुण्य नहीं किया था, इसलिए उसका नाम अकृतपुण्य रखा। बिचारी मृष्टादाना को पेट भरना तक मुष्किल हो गया, तब लाचार हो दूसरों का अनाज पीसकर बहुत दुःख से अभागे पुत्र का पालन पोषण करने लगी। उधर कामवृष्टि के मर जाने के बाद पुण्योदय से उसका नौकर सुकृतपुण्य भोगावती का मालिक बन गया। धन्यकुमार ने मुनि महाराज से पूँछा ! बालक ने ऐसा कौनसा पाप किया था जिससे उसे ऐसी दशा देखना पड़ी? मुनि ने कहा इसी देश में भूमितिलक नगर में महाधनी वैश्य रहता था, एक दिन उसने सोचा **''लक्ष्मी पुण्य से आती है और पुण्य पात्रदान से होता है, और साधु को केवल आहारदान दिया जा सकता है, इसलिए जिनालय वनवाकर लक्ष्मी का सदुपयोग करना चाहिए, क्योंकि मन्दिर में सारे पवित्र कार्य होते हैं, हजारों वर्ष तक प्रतिमाएँ पूजी जाती हैं''**। मन्दिर की रत्नमयी प्रतिमाओं की प्रसिद्धि सुनकर किसी चोर ने ब्रह्मचारी का वेश बनाया और भूमितिलक नगर में आ पहुँचा। लोगों के मुख से ब्रह्मचारी के तप की प्रशंसा सुन धनपति अपने जिनालय में ले आया, ब्रह्मचारी ने सेठ को व्यापारार्थ गया जानकार जिनालय के सारे उपकरण चुरा लिये। किन्तु पाप के उदय से ब्रह्मचारी के सारे शरीर में कोढ़ हो गया, सारा शरीर दुर्गन्धमय हो गया, उससे बड़ा दुःखी रहने लगा। **''सच है अधिक पाप का अथवा अधिक पुण्य का उदय उसी वक्त हो जाता है, पूजा करने वाले स्वर्ग में जाते हैं, निर्माल्य खाने वाले नरक में जाते हैं, विष खा लेना अच्छा परन्तु निर्माल्य खाना अच्छा नहीं है'', कारण- इसके द्वारा अनन्त भव बिगड़ जाते हैं।** ब्रह्मचारी के अङ्ग-अङ्ग से कोड़ वह रहा था, देखने में घृणा होती थी, भयानक आकृति हो गयी थी, हर वक्त रौद्रध्यान बना रहता था एवं दुःख के समुद्र में डूबा था। एक दिन धनपति को आया देख ब्रह्मचारी को क्रोध आया और मुँह से आह निकली 'मरा नहीं वापस आ गया'। इस रौद्रध्यान से वेदना और बढ़ गयी और बड़े कष्ट से मरकर निर्माल्य भक्षण के कारण

सप्तम नरक गया और वचनातीत कष्ट भोगकर स्वयम्भूरमण समुद्र में महामत्स्य हुआ, वहाँ भी जीवों का भक्षण कर फिर सप्तम नरक गया, वहाँ से निकलकर दु:खों के कारण त्रस-स्थावर योनियों में चिरकाल तक भ्रमण कर यही अकृतपुण्य हुआ है। एक दिन दरिद्र और दीन अकृतपुण्य सुकृतपुण्य के चने के खेत पर चला गया और नौकरी की याचना करने लगा। सुकृतपुण्य ने सोचा पाप कर्मों को धिक्कार हो किसी दिन मैं इसके पिता के यहाँ नौकरी करता था, आज यह मुझसे याचना कर रहा है, इसके पिता के प्रसाद से मैं गाँव का स्वामी हुआ हूँ, ऐसा सोचकर उसने उसी वक्त कितने ही घड़े स्वर्णमयी दिये। किन्तु अकृतपुण्य के पाप के उदय से वे उसे अङ्गार की तरह जलाने लगे। अकृतपुण्य बोला तू सबके लिए चने दे रहा है और मेरे लिए अङ्गार क्यों ? उसने कहा भाई मेरे अङ्गार मुझे दे दे और जितने चने तू ले जा सकता है खेत से ले जा, चने देखकर उसकी माँ ने पूँछा ये चने तू कहाँ से लाया ? उसने कहा सुकृतपुण्य के खेत से। माँ बहुत दु:खी हुयी, सोचा मेरा लड़का नौकर का नौकर बन गया कहीं अन्यत्र जाना चाहिए, नास्ता बनाया पुत्र को लिया और अवन्तिदेश के शीशवाक ग्राम में पहुँची। गाँव के मुखिया बलभद्र ने स्थिति जान माँ को भोजन बनाने और लड़के को बछड़े चराने के लिए रख लिया। बाजू में झोपडी बनादी। बलभद्र के सातों पुत्रों को प्रतिदिन नास्तें में खीर बनती थी, अकृतपुण्य माँगता तो माँ कहती पुण्य के विना उत्तम भोजन वस्त्रादि नहीं मिलते, तूने न पिछले भव में पुण्य किया न अब किया। फिर भी न माना रोने लगा। एक दिन बलभद्र के पुत्रों ने इतना मारा कि उसके गाल सूज गये, बलभद्र ने देखकर उसकी माँ से पूँछकर दया वश खीर का सामान दिया। माँ ने पुत्र से कहा बेटा आज जङ्गल से जल्दी आ जाना, पहले मुनि महाराज को देंगे फिर अपन खावेंगे। पुत्र आ गया, माँ ने कहा कोई महाराज निकलें तो रोक लेना। मैं पानी भरकर लाती हूँ। इतने में मासोपवासी सुव्रतमुनि आहारार्थ आये। अकृतपुण्य ने कहा पूज्य ! माँ ने बहुत अच्छी खीर बनाई है वह आपको दी जायेगी, मेरी प्रार्थना है कि आप यहीं ठहर जावें जब तक मेरी माँ आती है। मुनि ने समझाया यह हमारा मार्ग नहीं है, रास्तें में धीरे-धीरे चलने लगे। इतने में वह भी उनके आगे जोर-जोर से बोलने लगा, तात ! मेरे ऊपर दया कर थोड़ी देर ठहरो और यहाँ से न जाओ, बड़ी अच्छी खीर बनी है, कहो तो, तुम्हारा क्या बिगड़ता है। इतनी प्रार्थना करने पर भी जब वे न ठहरे, तो अकृतपुण्य पाँव पकड़ कर बोला ! देखो अब तो मैंने अपने हाथों से आपके पैर खूब ही जोर से पकड़ लिए हैं देखूँ कैसे जा सकोगे, महाराज आप बड़े ही दुर्लभ हैं। दयालु मुनि मौन पूर्वक खड़े रहे। इतने में माँ ने आकर पड़गाहन कर

नवधाभक्ति कर अद्भुत पुण्य उपार्जन किया और खीर का आहार दिया। अकृतपुण्य ने अत्यन्त हर्षित होकर बहुत पुण्य उपार्जन किया। मुनि के अक्षीण महानस ऋद्धि धारक होने से भोजन अक्षीण हो गया। चक्रवर्ती का कटक(सेना) खाये तो भी खत्म न हो। माँ-पुत्र ने खाया बलभद्र के सारे परिवार को खिलाया यश फैला। **''दान दुर्गति का नाशक है, हित करने वाला है, अत: दान में आलस नहीं करना चाहिए, दान के द्वारा ही गृहस्थी गुणवती मानी गयी है, बुद्धिमानों का प्रयत्न दान के लिए हुआ करता है, दान को छोड़कर कोई उत्तम सुख का देने वाला नहीं है, समझदार ही दान देते हैं, दान ही पात्र के मन को अपनी ओर खींचता है, अत: यही कहना है, कि सब लोग दान जरूर दिया करें''**। दूसरे दिन बची हुई खीर को खाकर अकृतपुण्य जङ्गल गया और वृक्ष के नीचे सो गया, बछड़े घर आ गये, अकृतपुण्य को न देख दु:खी माँ ने बलभद्र को ढूढ़ने भेजा। अकृतपुण्य जाग कर घर आ रहा था, बलभद्र को देखकर डर कर जङ्गल में भाग गया। बलभद्र लौट आया, अकृतपुण्य गुफा के बाहर खड़ा हो गया। उसी गुफा में उन्हीं सुव्रतमुनि की वन्दना के लिये आये श्रावकों को सम्यग्दर्शन व व्रत का स्वरूप, भेद तथा फल सुना रहे थे, जिससे उन्हे धर्म का लाभ हो सके। उसने व्रतादिक की भावना के साथ श्रद्धा से गुफा के बाहर बैठकर सारा उपदेश सुना, अपने लिए जन्म-जन्म में व्रत के लाभ की भावना भाई व्रतादि की भावना रूप उत्तम परिणामों के द्वारा जो शुभकर्म का बन्ध हुआ उसे स्वर्ग का साधन समझना चाहिए। **''णमो अरहन्ताणं इत्यादि मन्त्र का स्मरण करता हुआ आ रहा था, पाप के उदय से भूखे व्याघ्र ने खा लिया, मन्त्र के प्रभाव से समाधिमरण कर सौधर्म स्वर्ग में महा ऋद्धिधारी देव हुआ''**, उसकी माँ बलभद्र को लेकर जङ्गल गयी, मृत शरीर देख रोने लगी, **''अकृतपुण्य ने अवधिज्ञान से स्वर्ग का कारण पात्रदान व्रतादि की भावना को जाना''**। प्रथम ही पूजा करने गया, पूजा से आकर स्वर्ग का वैभव स्वीकार किया एवं विभूति के साथ माता को समझाने आया स्वर्ग के वैभव का वर्णन किया माँ को व्रत की प्रेरणा दी। मृष्टादाना ने शोक हटाया और जैनेश्वरी दीक्षा ली। लेकिन अज्ञान से निदान बन्ध कर लिया कि जन्मान्तर में यही प्रेम का पात्र पुत्र हो। शक्ति अनुसार तप कर समाधिमरण कर उसी स्वर्ग में देवी हुयी, बलभद्र ने भी धर्म के माहात्म्य को देख कुटुम्ब को छोड़ दीक्षित हो समाधि पूर्वक मरण कर उसी जगह देव हुआ। मुनिराज ने कहा कुमार ! वही बलभद्र तुम्हारे पिता धनपाल बने, मृष्टादाना तुम्हारी माता बनी, इसलिए तुमसे अधिक प्रेम करती है और अकृतपुण्य का जीव तुम स्वयं धन्यकुमार हो। स्वर्ग में तुमने पूजनादि शुभ कर्म किये थे, यही कारण है कि यहाँ भी तुम्हे वही अपूर्व सुख है और जो बलभद्र के दुष्ट सात पुत्र थे ये

वे ही देवदत्त आदि सात पुत्र तुम्हारे भाई हैं। सो पूर्व बैर के सम्बन्ध से तुमसे ईर्ष्या करते हैं, तुम्हें मारना चाहते हैं और पग-पग पर तुम्हे खजाने मिलते हैं और विघ्न नष्ट होते हैं यह सब पात्रदान का फल है, बस यही तुम्हारी जीवनी का सार है। अतः **''सुपात्र दान णमोकार स्मरण आदि उत्तम भावना भाओ''**, धन्यकुमार मुनि महाराज को नमन कर राजगृह को रवाना हुआ। रास्ते में सूखा बगीचा मिला, बाग के मालिक कुसुमदत्त नेअवधिज्ञानी मुनि से बाग के हरे भरे न होने के विषय में पूँछा तो मुनि ने कहा ! किसी विदेशी के प्रवेश करते ही फल-फूल जायेगा। धन्यकुमार के प्रवेश करते ही सरोवर भर गये, वृक्ष फल गये, कुसुमदत्त ने ले जाकर पत्नि से कहा ! यह मेरी बहन का पुत्र है। उसकी पत्नि ने भावी जमाई समझकर भोजन कराया। कुसुमदत्त की पुत्री पुष्पावति ने परीक्षा लेने फूल और धागा दिया, उसने सुन्दर माला बना दी। उन दिनों श्रेणिक महाराज राजगृह के स्वामी थे, उनकी पत्नी चेलना की पुत्री गुणवती के लिए पुष्पावति माला ले जाती थी। उस दिन धन्यकुमार की बनी माला ले गयी, राजकुमारी के पूँछने पर पुष्पावती ने कहा पिताजी की बहिन का लड़का आया है, उसकी सेवा के कारण नहीं आ सकी। माला देखकर गुणवती बोली तू भाग्य शालिनी है तुझे उत्तम वर मिलेगा। एक दिन धन्यकुमार बाजार में जा रहा था, चलते-चलते अपनी इच्छा से किसी सेठ की दुकान पर बैठ गया सेठ को व्यापार में लाभ हुआ, उसने भी इसका कारण धन्यकुमार को जानकर अपनी पुत्री की शादी कर दी, दूसरे दिन शालीभद्र की दुकान पर गया। उसे भी व्यापार में लाभ हुआ उसने भी इसका कारण धन्यकुमार को जान अपनी सुभद्रा बहिन की लड़की की शादी कर दी। वहीं एक राज श्रेष्ठी श्रीकीर्ति रहता था, उसने ढिण्ढोरा पिटवाया कि जो वैश्य पुत्र दमड़ी(सवा पैसा) के द्वारा एक ही दिन में एक हजार दीनार पैदा करके मुझे देगा उसके साथ अपनी धनवती पुत्री का विवाह कर दूँगा। धन्यकुमार ने दमड़ी ले ली, उसके द्वारा उसने माला लटकाने के तृण खरीदे और उन्हे माली लोगों को देकर बदले मैं उनसे कई रङ्गों के फूल उनसे ले लिये। सुन्दर माला बनाकर वन जाते हुए राजकुमारों को दिखाई, उनके मूल्य पूँछने पर एक हजार दीनार में दी। धन्यकुमार ने दीनार ले जाकर सेठ को दे दी, सेठ ने वचन पूरा कर अपनी कन्या का विवाह कर दिया। श्रेणिक की पुत्री गुणवती धन्यकुमार पर मुग्ध हो गयी और चिन्ता में सूखने लगी। एक दिन धन्यकुमार मन्त्री आदि बड़े-बड़े लोगों के साथ खेल रहा था, अनायास उन लोगों को अभिमान रहित कर दिया। श्रेणिक का पुत्र अभयकुमार अपने को चतुर मानता था, धन्यकुमार के बाण के द्वारा लक्ष्य वेधने के लिए झगड़ा करने लगा, बाद में चन्द्रक यन्त्र

वेधना निश्चित किया। धन्यकुमार ने लक्ष्य वेध दिया, तो वह ईर्ष्या वश धन्यकुमार को मारने की सोचने लगा। धन्यकुमार सरल हृदय था अतः उसको मालूम नहीं था। श्रेणिक ने धन्यकुमार के साथ अपनी पुत्री का विवाह करने को कहा, अभयकुमार ने मनाकर दिया। श्रेणिक ने पुत्री की इच्छा बतायी, अभयकुमार ने कहा जब तक वह जीता रहेगा तब तक वह कामाग्नि से जलती रहेगी। श्रेणिक ने कहा निरपराध को कैसे मारूँ ? अभयकुमार ने कहा ! मैं उपाय सोचता हूँ। उसने ढिण्ढोरा पिटवाया शहर के बाहर राक्षसों के स्थान पर जो जावेगा उसे आधा राज्य व पुत्री दी जावेगी। धन्यकुमार निर्भय राक्षस भवन में चला गया। धन्यकुमार को देखकर राक्षस शान्त हो गया, आसन देकर विनय पूर्वक बोला हे मालिक ! मुझे अपना दास समझें, मैंने मुनीम बन कर इतने भारी धन मकान की रक्षा की अब आप सम्भालिये, जब आप याद करेंगे तो मैं हाजिर रहूँगा, ऐसा बोलकर अदृश्य हो गया। धन्यकुमार ने धर्मध्यान पूर्वक रात्रि बिताई। इधर कन्याओं ने प्रतिज्ञा की जो गति धन्यकुमार की होगी वही हमें मञ्जूर है, प्रातः सामायिक कर बाहर आया। राजा अभयकुमार आदि लेने आये और उज्जयिनि का वैश्य पुत्र जान गुणवति आदि सोलह कन्याओं की शादी कर दी, आधा राज्य दिया, देव-मनुष्य सब मानने लगे, कुछ दिनों बाद एक नगर बसाया, वहाँ का राजा खुद बना। बड़े-बड़े राजपुत्र सेवा करते थे, समय-समय पर प्रभावना करता था, किन्तु वहाँ उसके माता-पिता वियोग की अग्नि में जल रहे थे। जब धन्यकुमार अपने घर से चला, उसी दिन घर के रक्षक देवताओं ने उसके माता-पिता भाईयों को घर से निकाल दिया था। वे सब पुराने घर में रहने लगे। उनके हालात दावाग्नि से जले वृक्ष के समान थे, शोक से पीड़ित दुःख के मारे विमूढ़ थे। लोग कहते थे ये बड़े निर्दयी हैं, पुत्र के चले जाने पर भी जीवित हैं अथवा दुःखी जीवों के पास मौत भी नहीं आती है। उन लोगों के **''अन्याय करने से थोड़े ही दिनों में जितना पुराना और नवीन धन था सब नष्ट हो गया''**। कुपुत्रों को पेट भरने की मुश्किल पड़ गयी, तब धनपाल किसी काम के बहाने राजगृह अपनी बहिन के लड़के शालिभद्र जो धनी था उसके पास गया। वहाँ जाकर धन्यकुमार के मकान के नीचे बैठकर शालिभद्र का मकान पूँछने लगा। मकान के ऊपर बैठे धन्यकुमार ने पहचान लिया कि ये मेरे पिताजी है, नीचे आकर चरणों में गिर गया, फटे वस्त्र धारी के चरणों में धन्यकुमार को देखकर नगरवासी आश्चर्य चकित थे। धनपाल बोला तुम राजा हो मुझे तुम्हें प्रणाम करना चाहिए। धन्यकुमार बोला आप मेरे पिता हो, तब धनपाल ने गले लगाया। राजमहल में गये, पुत्रों की दयनीय स्थिति बतलाई, धन्यकुमार ने सबको ससम्मान बुलाया,

प्रभावती माता ने आशीर्वाद दिया, उसके भाई देखकर शर्मिन्दा हुए, धन्यकुमार बोला आपकी दया से राज्य मिला है। आप लोग निःशल्य हों कर्म के उदय से अच्छा बुरा तो होता ही है। उसकी सरलता से भाई प्रशंसा करने लगे और क्षमा माँगने लगे। धन्यकुमार ने रत्न वाहनादि भेंट किये। **''पुण्य से राज वैभव आदि मिलता है, देवता मुख्य जान सत्कार करते हैं, अतः पुण्य करना चाहिए। धन्यकुमार ने धन सफल करने के लिए जिनालय बनवाये। प्रतिदिन पूजा करता था, द्वाराप्रेक्षण (आहार की बेला में अतिथि का इन्तज़ार) करता था, मुनि सेवा कर धर्म श्रवण करता था, अष्टमी चतुर्दशी निर्दोष उपवास, सामायिक करता था, सम्यग्दर्शन निर्मल कर श्रावक के व्रत पालता था, धर्म का मनन कर हर एक के लिए धर्म का उपदेश करता था''**, इस प्रकार सुख पूर्वक बहुत समय व्यतीत हो गया, एक दिन पत्नी सुभद्रा के मलिन मुख को देखकर शोक का कारण पूँछा, उसने कहा मेरा भाई शालिभद्र दीक्षा लेने वाला है, उसने कहा शोक छोड़ो मैं जाकर समझाता हूँ और जाकर वैराग्य उत्पन्न करा दिया और घर आकर अपने बड़े पुत्र धनपाल को राज्य सौंपा और धन्यकुमार श्रेणिक, माता-पिता, भाई-बन्धुओं से क्षमा करा कर शालिभद्र तथा और भी अनेक लोगों के साथ वर्धमान भगवान् के समवसरण में गया स्तुति की, रत्नत्रय की याचना की, बाद में भगवान के कहे अनुसार धन्यकुमार, शालिभद्र आदि ने जिनदीक्षा ले ली, तथा बारह तप करते बाईस परीषह सहते अठ्ठाईस मूलगूणों का पालन करते हुए अन्त में धन्यकुमार महा मुनि ने चार प्रकार के आहार तथा शरीरादि में मोह छोड़ अकेले ही निर्जन वन में पर्वत की तरह निश्चल खड़े होकर विधि पूर्वक सल्लेखना स्वीकार कर ली, घोर तपश्चरण कर नौ महिने तक सल्लेखना का पालन किया और अन्त में प्रायोपगमन द्वारा ध्यान और समाधि पूर्वक प्राण छोड़ कर तप तथा धर्म के प्रभाव से सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र हो गये (वहाँ के सुखों का वर्णन), वहाँ से आकर राज कुल में जन्म लेकर मोक्ष जायेंगे, शालिभद्रादि सौधर्म को आदि लेकर सर्वार्थसिद्धि तक उत्पन्न हुये उपसंहार- **''देखों दुःखी और दरिद्र अकृतपुण्य केवल दान की भावना से तथा थोड़े से दान के फल से धन्यकुमार हुआ फिर तपकर सर्वार्थसिद्धि गया अतः गृहस्थों को दान की शिक्षा लेना चाहिए।''**

इति त्यागधर्म समाप्त

★★★

9 वाँ सोपान-उत्तम आकिञ्चन्य धर्म

"आकिञ्चन्य धर्म जहाँ-तन मन धन फिर नहीं वहाँ"

आकिञ्चन्य धर्म का स्वरूप-

1 त्याग झाड़ू लगाने के समान है आकिञ्चन्य पोंछा लगाने के समान है।

2 अकिञ्चन जगत का स्वामी कैसे हो सकता है ? अतः कहते हैं कि सन्त पुरुषों का चरित्र अलौकिक होता है, हे भव्य ! आकिञ्चन्य रूप सुसिद्ध मन्त्र का निरन्तर अभ्यास कर, जो मन्त्र गुरु के उपदेश के अनन्तर तत्काल अपना काम करता है उस मन्त्र को सुसिद्ध मन्त्र कहते हैं, जो काल पाकर सिद्ध होता है वह सिद्धमन्त्र है, जो जप-होम आदि से साधा जाता है वह साध्यमन्त्र है और जो तत्क्षण ही शत्रु को मूल से नष्ट कर देता है वह सुसिद्ध मन्त्र है, ऐसा ही आकिञ्चन्य रूपी सुसिद्ध मन्त्र मोह को तत्काल नष्ट करने वाला है, चारित्र की रक्षा और मोक्ष की प्राप्ति के लिए अन्तरङ्ग चौदह प्रकार के और बाह्य दस प्रकार के परिग्रहों को छोड़ना चाहिए।

3 शरीर के दुर्गुण और आत्मा की महिमा का चिन्तन करें, वो नहीं रहे अर्थात् वो कोई और था, ऐसा भेद विज्ञान जीवित अवस्था में होना चाहिए।

4 रुपयोंके लिए सभी कहते हैं कि ये हमारे हैं पर रुपये किसी से नहीं कहते कि तुम हमारे हो या हम तुम्हारे हैं।

5 **जीवन शैली के चार भेद-** 1. कुछ लोग अकेले में रहते हैं, अकेले में जीते हैं, 2.कुछ लोग अकेले में रहते हैं पर भीड़ में जीते हैं, 3.कुछ लोग भीड़ में रहते हैं पर अकेले में जीते हें, 4.कुछ लोग भीड़ में रहते हैं और भीड़ में ही जीते हैं।

6 **चार तरह के लोग-** 1.मेरा सो मेरा, तेरा सो तेरा, 2.तेरा सो तेरा, मेरा भी तेरा, 3.मेरा सो मेरा, तेरा भी मेरा,4.तेरा न मेरा, चिड़िया रैन बसेरा,झूठा है झमेला।

7 मुनि अपने घर में रहते हैं और गृहस्थ बाहर भटकते हैं, पर कहते उल्टा हैं कि मुनि गृहत्यागी हैं, गृहस्थ घर में रहते हैं।

8 भूकम्प आया तो लोग अपने घर को भागे, मुनि आँखें बन्द करके बैठ गए, श्रावक ने पूँछा ! आप क्यों नहीं भागे ? मुनि ने कहा हम भी अपने आत्मा रूपी घर की ओर भागे। अर्थात् तुम बाहर की ओर भागे और हम भीतर की ओर भागे।

9 आकिञ्चन्य धर्म आत्मा की उस दशा का नाम है, जहाँ पर बाहरी सब कुछ छूट जाता है और अन्तरङ्ग में भी सङ्कल्प-विकल्प की परिणति को विश्राम मिल जाता है।

10 शिल्पी ने मूर्ति नहीं बनाई, आवरण हटाया है, मूर्ति तो पत्थर में पहले से ही थी, उसी प्रकार आत्मा के ऊपर का आवरण हटते ही भगवान् आत्मा प्रकट हो जाती है।

11 यदि दुनिया की सबसे मूल्यवान सम्पत्ति चाहते हो, तो बाहर भटकने की जरूरत नहीं वह तुम्हारे भीतर है।

12 प्रत्येक अवस्था में सुख का अनुभव कर सकते हैं, केवल वैराग्य होना चाहिए।

13 संसार शोकमय है, जीवन भोगमय है, सम्बन्ध वियोगमय है, मात्र साधना ही उपयोग मय है।

14 सम्बन्ध तीन प्रकार के-सांसारिक सम्बन्ध- माँ बाप का या जन्म से मरण तक चलने वाला सांसारिक सम्बन्ध है। सम्पादित सम्बन्ध- धन, पैसा, प्रतिष्ठा आदि का सम्पादित सम्बन्ध है। 3. शाश्वत् सम्बन्ध- आत्मा का ज्ञान, दर्शन आदि से शाश्वत् सम्बन्ध है, पूर्व के दो सम्बन्ध छूट जाते हैं अतः हेय हैं।

15 ज्ञान-दर्शन ही मात्र मेरा है अन्य कुछ भी नहीं ऐसा अनुभव करना आकिञ्चन्य धर्म है।

दोहावली

16 **जहाँ देह अपनी नहीं, तहाँ न अपना कोय।**
घर सम्पत्ति पर प्रगट ये पर हैं परिजन लोय।।

17 **मैं हूँ कौन कहाँ से आया, किस दर पर है जाना।**
इस दुनिया में क्या है मेरा, साथ किसे ले जाना।।
क्या खोया क्या पाया अब तक, क्या मुझको है पाना।
कैसा है मम रूप सलोना, कब शिवपुर है जाना।।

18 **धरती पर सोता हूँ आसमान ओढ़ता हूँ, देह की माटी से अमृत निचोड़ता हूँ।**
दुनिया की दौलत से कीमती ये फकीरी है, इसलिये वैभव से नहीं विराग से नाता जोड़ता हूँ।।

19 **बाह्य ग्रन्थ विहीनाः, दरिद्र मनुजाः स्व पापतःसन्ति।**
यः पुनरन्तः सङ्ग, त्यागी लोके सः दुर्लभः साधुः।।
दरिद्र मनुष्य पाप के उदय से बाह्य परिग्रह से रहित होते हैं किन्तु अन्तरङ्ग परिग्रह के त्यागी साधु लोक में दुर्लभ हैं।

20 **अकिञ्चिनोऽहमित्यास्व, त्रैलोक्याधिपति र्भवेत्।**
योगी गम्यं तव प्रोक्तं, रहस्यं परमात्मनः।।
'मेरा कुछ भी नहीं है' ऐसा सोचकर बैठ जाओ तीन लोक के अधिपति हो जाओगे किन्तु यह योगियों के बस की बात है, मैंने तुम्हें परमात्मा बनने का रहस्य बताया है।

21 **दिग्देशेभ्यः खगा एत्य, संवसन्ति नगे नगे।**
स्व स्व कार्य वशाद्यान्ति, देशे दिक्षु प्रगे प्रगे।।
पक्षी नाना देशों और दिशाओं से आकर वृक्षों पर रैन बसेरा करते हैं और प्रातः काल अपने-अपने कार्य के वश नाना देशों और दिशाओं मे चले जाते हैं, वैसे ही परिवार के लोग अनेक गतियों से आकर के एक घर में रहते हैं और अपने-अपने कर्मों के अनुसार नाना गतियों में चले जाते हैं।

22 **यान्ति न्याय प्रवृत्तस्य, तिर्यञ्चोऽपि सहायतां।**
अपन्थानं तु गच्छन्तं, सोदरोऽपि विमुञ्चति।।
न्यायवान की पशु भी सहायता करता है, कुमार्ग पर चलने वाले को सगा भाई भी छोड़ देता है। रावण के भाई विभीषण की तरह।

23 **उत्तमा स्वात्म चिन्ता स्यात्, देह चिन्ता च मध्यमा।**
अधमा काम चिन्ता स्यात्, पर चिन्ता धमाधमा।।
आत्मकल्याण की चिन्ता होना उत्तम हैं, शरीर की चिन्ता होना मध्यम हैं, भोगों की चिन्ता होना जघन्य हैं और पर की चिन्ता होना अधम से भी अधम हैं।

24 **एकाकी निष्पृहः शान्तः, पाणिपात्रो दिगम्बरः।**
कदाहं सम्भविष्यामि, कर्म निर्मूलनक्षमः।।
एकाकी पर पदार्थों की इच्छा से रहित, शान्त, हाथ में भोजन करने वाला, दिगम्बर, कर्मों को नष्ट करने में समर्थ कब होऊँगा ऐसी जैनेतर ऋषि भी भावना भाते हैं।

25 **दिगम्बराः हि जायन्ते, म्रियन्तेऽपि दिगम्बराः।**
मध्यकाले यथा जाता, नरा अत्यन्त दुर्लभाः।।
प्राणी दिगम्बर ही जन्म लेता है, और दिगम्बर ही मरता है मध्यावस्था में दिगम्बर होने वाले मनुष्य दुर्लभ हैं।

26 **यतो न किञ्चित्ततो न किञ्चित्, यतो यतो यामि ततो न किञ्चित्।**
विचार्य पश्यामि जगन्न किञ्चित्, स्वत्मावबोधादधिकं न किञ्चित्।।
यहाँ कुछ नहीं हैं, वहाँ कुछ नहीं हैं, जहाँ-जहाँ जाता हूँ, वहाँ भी कुछ नहीं हैं, विचार करके पाता हूँ कि आत्मज्ञान से बढ़कर और कुछ भी नहीं हैं।

27 **अहमेदं एदमहं अहमेदस्सेव होमि मम एदं।**
अण्णं जं परदव्वं सचित्ताचित्त मिस्सं वा।।
आसि मम पुव्वमेदं अहमेदं चावि पुव्वकालम्हि।
होहिदि पुणोवि मज्झं अहमेदं चावि होस्सामि।।
एयं तु असम्भूदं आदवियप्पं करेदि संमूढो।
भूदत्थं जाणंतो ण करेदि दु तं असंमूढो।।
ज्ञानी और अज्ञानी का लक्षण- जो पुरुष अपने से अन्य पर द्रव्य, सचित्त स्त्री पुत्रादिक, अचित्त धन धन्यादिक अथवा मिश्र ग्राम नगरादिक हैं उन्हें यह समझता है कि मैं यह हूँ, यह द्रव्य मुझ स्वरुप है, मैं इसका हूँ, यह मेरा है, यह मेरा पहले था, इसका मैं भी पहले था, यह मेरा भविष्य में होगा, मैं भी इसका भविष्य में होऊँगा, ऐसा झूठा आत्म विकल्प करता है वह मूढ़ है, मोही है, अज्ञानी है, और जो पुरुष परमार्थ वस्तुस्वरुप को जानता हुआ वैसा झूठा विकल्प नहीं करता वह मूढ़ नहीं ज्ञानी है।

28 **एगो मे सासदो आदा णाणदंसणलक्खणो।**
सेसा मे बाहिरा भावा सव्वे सञ्जोग लक्खणा।।
मेरी आत्मा शाश्वत् है, ज्ञान-दर्शन लक्षण वाली है, शेष सभी मुझसे बाह्य है और संयोग से मिलने वाले हैं।

29 **नाहं रामो न मे वाञ्छा, भोगेष्वपि न मे मनः।**
शान्तिमास्थातुमिच्छामि, स्वात्मन्येव जिनो यथा।।
रामचन्द्रजी विचार करतें हैं, कि मैं राम नहीं हूँ और न हि भोगों की मेरी इच्छा है, मैं तो जिनेंद्र भगवान् की तरह आत्मा में शान्ति से स्थिर रहना चाहता हूँ।

30 **सुदपरिचिदाणुभूया, सव्वस्स वि कामभोगबन्धकहा।**
एयत्तस्सुवलम्भो, णवरि ण सुलहो विहत्तस्य।।
सभी कामभोग और बन्ध की कथाएँ श्रुत परिचित एवं अनुभूत हैं किन्तु एकत्व विभक्त आत्मा की उपलब्धि दुर्लभ है।

31 **एक्को जीवो जायदि, एक्को गब्भम्हि गिण्हदे देहं।**
इक्को वाल जुवाणो, एक्को बुड्ढो जरा गहियो।।
जीव अकेला जन्म लेता है, अकेला गर्भ में निवास करता है, अकेला ही बाल, युवा एवं वृद्ध

अवस्था को प्राप्त होता है।

32 **अभ्यस्यान्तरदृशं किमु लोकभक्तया, मोहं कृषी कुरुत किं वपुषा कृषेन।**
एतद्वूवयं यदि न किं बहुभिर्नियोगैः, क्लेशैश्च किं किमपरैः प्रचुरैस्तपोभिः।।
अन्तर दृष्टि का अभ्यास करो, लौकिक ख्याति से क्या होगा ? मोह कृष करो, शरीर कृष करने से क्या होगा, ये दोनों अगर नहीं हैं तो बहुत सारे आवश्यकों का पालन करने से एवं प्रचुर काय क्लेश करने से क्या होगा ?

33 **अकिञ्चनस्य दान्तस्य, शान्तस्य समचेतसः।**
सदा सन्तुष्टमनश्च, सर्वासुखमया दिशः।।
जिसके पास कुछ भी नहीं है, जितेन्द्रिय है, शान्त है, समता धारी है, सदा सन्तुष्ट रहता है उसके लिए सभी दिशाएं सुखकारी हैं।

34 **यस्य मोक्षेऽपि नाकाङ्क्षा, स मोक्षमधिगच्छति।**
इत्युक्तत्वाद् स्वहितान्वेषी, काङ्क्षां क्वापि न योजयेत्।।
जिसकी मोक्ष में भी इच्छा नहीं वह मोक्ष पाता है ऐसा कहा गया है इसलिए आत्मार्थी किसी भी पदार्थ की इच्छा न करें।

35 **अनाथपने का बोध-** वन में घूमते हुये श्रेणिक ने मुनिराज को शिलातल पर विराजे हुये देखकर कहा, आपका कोई संरक्षक नहीं है, अनाथ हो तो मेरे राज में चलो? मुनिराज ने कहा राजन् ! एक बार मैं बीमार पड़गया था, मेरा दुःख कोई बटा नहीं सका, अतः स्वयं का नाथ बनने आया हूँ, तब राजा को अपने अनाथपने का बोध हुआ था और अहङ्कार चूर हो गया था।

36 **निज की ओर वापसी-** एक नगर का राजा मर गया, राजा किसको बनाया जाए ? मन्त्रियों ने विचार किया कि प्रातः काल गेट खोलने पर जिसका प्रथम दर्शन होगा उसे राजा बनायेंगे, प्रातः काल गेट खोला तो एक लङ्गोटी वाले संयासी दिखे, उनसे कहा तुम्हे राजा बनना है, उसने मना कर दिया, लोग नहीं माने, उन्हें लाकर राजसी वेश पहना कर राजा बना दिया, पर उन्होंने अपनी लङ्गोटी सुरक्षित रखी, दो वर्ष बाद एक राजा ने चढ़ाई कर दी, राजा के पास बैठकर मन्त्रियों ने सलाह की, क्या करना चाहिए ? संयासी ने अपना सन्दूक बुलवाया लङ्गोटी पहनी, जङ्गल की ओर चले गये, 'तेरा तुझको सौंपते क्या लागे है मोर' इसी तरह गृहस्थी में जीवन व्यतीत करना चाहिए, जिसने जो माँगा दे दिया।

37 **साधु ने सेठ से कहा !** ये कोठी नही धर्मशाला है, सेठ कहता है महाराज ये तो कोठी है

धर्मशाला आपको छुड़वा देते हैं, साधु ने कहा इसको किसने बनवाया ? पिताजी ने, कितने दिन रहे ? पाँच वर्ष, वो छोड़कर चले गये तुम भी छोड़कर जाओगे तब धर्मषाला नहीं तो क्या है।

38 **रत्न आते ही भाव बिगड़े-** अहिदेव और महिदेव दोनों भाइयों ने विदेश में बहुत धन सञ्चित किया, जब घर आने लगे तो एक रत्न खरीद लिया, वह जिस भाई के पास रहता था, उसके भाव खराब हो जाते थे, घर आकर माता को दिया, उसके भाव भी बेटों को मारने के हो गये, सुबह मुनिराज के दर्शन प्रवचन को गयी, वहाँ भाव परिवर्तन हो गये, घर आकर माँ ने वह रत्न बेटों को देकर कहा यह रत्न समुद्र में फेक आओं, उसके बाद शान्ति से रहने लगे, यदि शान्ति चाहिए तो आकिञ्चन्य धर्म को अपनाना पड़ेगा।

39 **चाणक्य के पैर में काँटा लगा,** चाणक्य ने काँटे को जड़ से उखाड़कर उसकी जड़ में मट्ठा डाल दिया, जिससे दोबारा न उगे, इसी तरह काम-क्रोध आदि अन्तरङ्ग शत्रुओं को जड़ से उखाड़ देना चाहिए।

40 पण्डित पन्नालालजी साहित्याचार्य सागर वालों का बेटा इन्दौर अस्पताल में भर्ती था, पण्डित जी बहुत दुःखी थे, एक सज्जन उन्हें देखने आये, उन्होंने कहा चलो अस्पताल घूम कर आते हैं, अस्पताल में किसी का हाँथ टूटा है, किसी का पैर टूटा है, किसी का आग से पूरा शरीर जल गया है, सज्जन ने पण्डितजी से कहा, इन्हें देखकर अपन को दुःख नहीं हो रहा है, इसी तरह दुनिया में रोज हजारों लोग मरते हैं, जेलों में हजारों बन्द होते है, हजारों पेट भरने के लिये रोते हैं, लाखों एक-एक रुपये को मुहताज हैं, उनको देखकर हमें कुछ नहीं होता, तथा हमारा बेटा बीमार हो जाये तो हमें कष्ट होता है, यह राग या ममत्व भाव का परिणाम है।

41 **सेठ का चार साल का बच्चा गुम गया,** सेठ ने बहुत ढूँढा पर कही नहीं मिला, तब एक नौकर को रख लिया, उससे रात दिन काम लेते थे, एक दिन नौकर बीमार हो गया सेठानी ने आवाज दी, उसने नहीं सुना, गुस्से में जाकर सेठानी ने उसका चादर खींचा और कहा चल काम कर, तभी उसके हाँथ में गुदा हुआ नाम देखा, पढ़ा तो सोचा यही नाम तो हमारे बेटे का था, पन्द्रह वर्ष हो गये अभी तक वापस नहीं आया, बच्चे से पूँछा, तो उसने कहा ! मैं अपने माँ बाप को नहीं जानता, मैं पन्द्रह साल पहले खो गया था, बाद में माता-पिता नहीं मिले, यही मेरा पुत्र है ऐसा समझ कर सेठ-सेठानी खुशी से उछल पड़े, अब मेरा बेटा मिल गया और उसे छाती से लगा लिया, पहले उससे शक्ति से ज्यादा काम लेते थे पर अब उसे ज़रा भी कष्ट नहीं देना चाहते थे, मोही जीव अपने और पराये से ऐसा व्यवहार करते हैं।

42 भगवन् माल छूट जाय और अन्त समय में भी माला हाथ में रहे।

43 बारह भावनाओं के चिन्तन से आकिञ्चन्य धर्म आ जाता है।

आकिञ्चन्य से लाभ-

1 स्नेह रहित मनुष्य निर्वाण को प्राप्त होता है तथा स्नेह अनर्थ का कारण है, यह रहस्य स्नेह (तैल) रहित दीपक ने प्रकट किया है, भावार्थ- जब तक दीपक में तैल रुपी स्नेह रहता है तब तक उसे जलना पड़ता है और जब तैल रुपी स्नेह समाप्त हो जाता है तब वह निर्वाण को प्राप्त हो जाता है (बुझ जाता है), इसी प्रकार संसारी प्राणी स्नेह-प्रीति के कारण निरन्तर आकुलता में पड़कर दुःखी रहते हैं और प्रीति का त्याग करने वाले मुनिराज निर्वाण को प्राप्त होते हैं।

2 अर्थ की ओर दृष्टि लगाने वाले एक दिन अर्थी पर आ जाते हैं, जीवन को व्यर्थ कर दुर्गति के गर्त में चले जाते हैं, दूसरी ओर आत्मा की ओर दृष्टि लगाने वाले एक दिन परमात्मा बन जाते हैं, जीवन को पावन बना लेते हैं और संसार से पार हो जाते हैं।

3 बहु धन बुरा हु भला कहिए, लीन पर उपकार सो।

4 **पण्डित जगन्मोहनलाल जी मूर्ति खरीदने जयपुर गये**, कृष्ण, राम, हनुमान आदि की मूर्ति चार हजार रुपये की थी, एवं महावीर भगवान् की चालीस हजार रुपये की थी, पण्डितजी ने कहा कि जैनियों को लूटते हो, शिल्पी ने कहा अन्य मूर्तियों के दोष को हम रङ्ग में ढँक देते हैं, पर वीतराग मूर्ति के दोष को कहाँ ढँकें, जैनियों की मूर्ति दस-बीस पत्थरों में एक बनती है उसकी प्रकार आकिञ्चन्य धर्म में दोषों को स्थान नहीं होता है।

5 **परमात्मा के दर्शन-** शिष्य ने गुरू से कहा 'गुरू चरणों में रहते वर्षों बीत गये किन्तु परमात्मा के दर्शन नहीं हुए' गुरू ने कहा! चलो आज उस पहाड़ी पर इन पत्थरों को लेकर परमात्मा का दर्शन करायेगें।गुरू पहाड़ी पर पहुँच गये, किन्तु पत्थर के बोझ से शिष्य पीछे रह गया, बोझ से थक कर एक-एक पत्थर फेकना शुरू कर दिया, पहाड़ तक जाते-जाते सारे पत्थर फेंक दिये, ऊपर जाकर जब गुरू से मिले तब गुरु ने पूँछा, पत्थर कहाँ हैं ? शिष्य ने कहा पत्थर के बोझ से चल नहीं पा रहे थे, इसलिये फेंक दिये, तब गुरू ने कहा बाहरी बोझ की अपेक्षा अन्दर का बोझ कम करो, अर्थात् क्रोध, मानादि पत्थरों को जिस दिन फेंक दोगे उस दिन परमात्मा के दर्शन हो जायेंगे।

6 सुकुमाल मुनि को घर में राई का दाना चुभता था पर अब स्यालिनी के दाँत नहीं चुभ रहे थे, यही राग और वैराग्य में अन्तर है।

7 **अज्ञान-** किसी ने कहा तुम्हारी पत्नि विधवा हो गयी, वह रोने लगा, तीसरे ने सुना तो कहा आप जीवित हैं तो आपकी पत्नी विधवा कैसे हुई ? इसी तरह जब तक मेरे पन तेरे पन की बुद्धि है, तब तक अज्ञान है।

8 **भ्रान्ति टूटी-** किसी व्यक्ति ने स्वप्न में देखा, मकान में आग लग गयी, दरवाजे, परदे आदि जलने लगे हैं, उस व्यक्ति के मकान को बुझाने के लिये कितने बाल्टी पानी की आवश्यकता है ? अर्थात् एक बूँद की भी नहीं, मात्र उसे जगाने की आवश्यकता है, उसके जागते ही आग अपने आप बुझ जायेगी, वस्तुतः आग लगी ही कहाँ थी, भ्रान्ति टूटने की आवश्यकता थी उसी प्रकार, ये जगत भी एक सपना है, मात्र सजग होने की आवश्यकता है।

परिग्रह से हानि-

1 गृह आदि में ममत्व भाव रूप मूर्छा के निमित्त से आगत और उनके रक्षण आदि से सञ्चित पापकर्म की निर्जरा बड़ी कठिनता से होती है।

2 **पर द्रव्य-** 'सीता' के संयोग से राम भी दुःखी हुये, रावण की दुर्गति हुयी, कुटुम्ब परिवार का सम्बन्ध शरीर से है, आत्मा से नहीं।

3 ग्रहों में शनि ग्रह खतरनाक है, किन्तु उससे भी अधिक दुष्ट ग्रह परिग्रह है, यह दसवां ग्रह सब ओर से पकड़ता है।

4 एक लङ्गोटी का परिग्रह भी सोलहवें स्वर्ग से ऊपर नहीं जाने देता एवं जितना ज्यादा सङ्ग्रह होता है उतनी ज्यादा व्यग्रता होती है।

5 लाखों शत्रुओं से उतनी हानि नहीं होती, जितनी रागादि परिणामों से होती है।

6 अन्याय का धन एवं इन्द्रिय विषय ये सुमार्ग के बाधक तत्त्व हैं।

7 बाहरी त्याग के बाद भी मन में 'मैं' और 'मेरे पन' का भाव निरन्तर चलता रहता है, इसलिए आत्म शान्ति नहीं मिलती है।

8 मनुष्य पर्याय दुर्लभता से प्राप्त हुयी है, लेकिन अज्ञानी जन सुलभता से नष्ट कर देते हैं।

9 पेट की भूख से अधिक खतरनाक पैसे की भूख होती है, पेट की भूख व्यक्ति को मजबूर बनाती है, किन्तु पैसे की भूख मुनष्य को अतिक्रूर बनाती है।

10 प्रशंसा की इच्छा से कोई भी कार्य शुरू करना अपने-आप को पतित करने की कला है।

11 अणुमात्र भी परिग्रह से मोह की गाँठ दृढ़ होती है, उससे ऐसी तृष्णा बढ़ती है, जिससे संसार की समस्त भोग सामग्री भी शान्ति के लिए नहीं होती है।

12 शय्या के लिए तृण का ग्रहण करना भी मुनियों के लिए निन्द्य कहा है, फिर जो धनादिक को ग्रहण करता है वह क्या जिनागम में निन्द्य नहीं कहा जायेगा ?

13 विद्वानों ने परिग्रह को काम रूपी साँप की बामी, रागादि शत्रुओं का घर तथा अविद्याओं का क्रीड़ा स्थल कहा है।

14 दूध और पानी को नींबू अलग कर देता है, आत्मीय सम्बन्धों को पैसा अलग कर देता है, अतः पैसे से सोच समझकर कर प्रीति करना चाहिए।

15 विवेक की दृष्टि खोना आँख की दृष्टि खोने से अधिक खराब है।

16 मकड़ी स्वयं जाल पूरती है और स्वयं उसी में बैठकर मूर्छा के कारण प्राण खो देती है।

17 हमारे साथ कभी मनुष्यों की, कभी काम क्रोधादि विकारों की भीड़ हमेशा रहती है।

कुये का पानी गंदा क्यों

18 एक व्यक्ति मुनि महाराज के पास गया और बोला हमारे कुंए का पानी गन्दा हो गया आप कोई मन्त्र दे दीजिये, पन्द्रह दिन जाप करने के बाद देखा तो कुंए का पानी और ज्यादा गन्दा था, महाराज को उलाहना देने के लिए आया, तो महाराज ने पूँछा, आपके कुंए का पानी गन्दा कैसे हुआ है ? तब उसने कहा एक दिन चार कुत्ते लड़ते हुए आये और कुंए में गिर कर मर गये, महाराज ने कहा कुत्तों को बाहर निकाला कि नहीं ? उसने कहा नहीं, तो फिर आपके कुंए का पानी स्वच्छ कैसे होगा ? उसी प्रकार अनादिकाल से आत्मा रूपी कुँए में पड़े हुए चार कषाय रूपी कुत्ते यदि नहीं निकाले तो आत्मा रूपी कुंआ साफ नहीं हो सकता है।

19 **मैं एकाकी एकत्व लिये, एकत्व लिये सब ही आते,**
तन धन को साथी समझा था पर वे भी छोड़ चले जाते।
मेरे न हुये ये मैं इनसे अति भिन्न अखण्ड निराला हूँ,
निज में पर से अन्यत्व लिए मैं सम रस पीने वाला हूँ।

20 **छाया माया एक सी, घटत बढ़त दिन रैन।**
जो याका शरणा गहे, सो न पावे चैन।।

21 **किसी आम के वृक्ष तले दो व्यक्ति कहीं से आये थे,**
एक लगा पत्तों को गिनने, दूजे ने फल खाये थे।
खाने वाला चतुर मात्र, गिनने वाला मूरख जानों,
इसी तरह से ज्ञानी और अनुभवी भी पहिचानो।।

22 **आँख खुली तो सपना गया, जब आँख मिची तो अपना गया।**
नश्वर है संसार यह जब आँख फिरी तो दफना गया।।

23 आगाह (अनिश्चित) अपनी मौत का, कोई वसर(ठिकाना) नहीं, सामान सौ बरस का पल की खबर नहीं।

24 तृष्णा की खाई खूब भरी, पर रिक्त रही वह रिक्त रही।

25 **कादाचित्को बन्धः, क्रोधादेः कर्मणः सदा सङ्गत्।**
नातः क्वापि कदाचित् परिग्रहवतां सिद्धिः।।
क्रोधादि से तो कभी-कभी कर्म बन्ध होता है, परन्तु परिग्रह से तो हमेशा पाप का बन्ध होता है, अतः परिग्रह धारियों को कभी मोक्ष नहीं होता है।

26 **शुद्धै र्धनै र्विवर्धन्ते, सतामपि न सम्पदः।**
न हि स्वच्छाम्बुभिः पूर्णाः, कदाचिदपि सिन्धवः।।
ईमानदारी के धन से सज्जनों की भी सम्पत्ति नहीं बढ़ती है, जिस प्रकार स्वच्छ जल से समुद्र नहीं भरता है।

27 **अन्यायोपार्जितं द्रव्यं, दस वर्षाणि तिष्ठति।**
प्राप्तेत्वेकादशे वर्षे, समूलं च विनष्यति।।
अन्याय से उपार्जित धन दस वर्ष तक रहता और ग्यारहवें वर्ष में स्वयं का धन भी लेकर चला जाता हैं।

28 **ममत्व भाव से दुःख-** सेठजी की वेश कीमती घड़ी नौकर के हाथ से फूट गयी, सेठ ने बहुत डाँटा, रात में नींद भी नहीं आयी और न ही भूख लगी, किन्तु नौकर भोजन करके निश्चिन्त सोया, दूसरे दिन सेठ ने नौकर से कहा कोई बात नहीं, फूट जाने दो, दुःख इस बात का है वह घड़ी तुम्हे देना थी, अब रात में सेठ चैन से सोया और नौकर को न तो भूख लगी और नींद भी नहीं आई, वास्तव में ममत्व भाव ही दुःख का कारण है।

29 **अपनेपन से दुःख-** सेठजी ने बहुत बढ़िया मकान शहर के बीच में बनाया, अचानक आग लग गयी, धूँ-धूँ कर मकान जल रहा था, सेठ सीना पीट-पीट कर रो रहा था, कि इतने में बड़ा लड़का आया और बोला ! पिताजी क्यों रो रहे हो ? यह मकान कल बिक गया था बयाना हो गया है, अब भी मकान जल रहा था, पर अब सेठ दर्शक के समान देख रहा था, छोटा लड़का आया और बोला पिताजी ! खड़े-खड़े क्या देख रहे हो, आग बुझाओ पिताजी ने कहा, चिन्ता

नहीं करो मकान बिक गया है, बेटा बोला सौदा केंसल हो गया है अब सेठ का पुनः रोना-धोना चालू हो गया, वास्तव में अपना पन ही दुःख का कारण है।

30 **नींद हराम**-एक व्यक्ति ने मन्त्र जाप किया, विद्या सिद्ध हो गयी, विद्या ने कहा जो चाहो सो माँग लो, तो उसने कहा कल माँगेगे, घर जाकर रात भर सोचता रहा घर, नौकर धन, या स्वयं तहसील दार, कलेक्टर, मुख्यमन्त्री या प्रधान मन्त्री क्या माँगे ? रात भर सोचता रहा सो नहीं सका, सुबह विद्या से कहा कि अभी धन हमारे पास आया नहीं, तब नींद उड़ गयी, आने पर क्या होगा, इसलिए उसने कहा हमें कुछ नहीं चाहिए।

31 **छाछ पीकर घी जोड़ा**- श्मश्रु नवनीत ने पहले धनार्जन किया, चोरों ने लूट लिया, गरीब हो गया, तो ग्वालों के यहाँ रहने लगा, वहाँ से मठा लाता था पीकर दिन निकालता, मूँछों में जो नवनीत लग जाता उसको निकाल कर इकट्ठा कर लेता था, कुछ महिनों में एक मटकी भरली और आशा के महल बनाने लगा, कि व्यापार करते-करते राजा चक्रवर्ती आदि बनूंगा, रानियाँ पैर दबायेंगी तो मैं कहूँगा तुमसे पैर दबाते नहीं बनता, और पैर छुड़ा लूँगा, उसने सपने में पैर झटकारा जैसे ही पैर मटकी में लगा, नवनीत अग्नि में गिरा, आग भड़की घास की झोपड़ी जल गयी और वह जल कर मर गया।

32 **सिक्का राजा को दिया**- एक साधु जङ्गल में विराजे थे, उनको कोई दर्शनार्थी सिक्का चढ़ा गया, साधु ने सोचा यह सिक्का किस गरीब को देना चाहिए, इतने में राजा किसी पर चढ़ाई करने के लिये निकल रहा था, सन्त ने सोचा, इससे ज्यादा गरीब कोई नहीं, इसलिये साधु ने सिक्का राजा की पालकी पर फेंक दिया, तव राजा ने साधु से पूँछा आपने यह सिक्का यहाँ क्यों फेका ? साधु ने कहा दूसरों को लूटने जा रहे हो इसलिये भिखारी हो अतः मैंने आपको भीख दी है।

मुट्ठी बना, पकड़े चना

33 बन्दर मुठठी बाँध कर घड़े से चने निकालता है, जब हाँथ नहीं निकलता, तो कहता है इस घड़े ने पकड़ लिया, वास्तव में तो उसने घड़े को पकड़ रखा है, इसी प्रकार संसारी प्राणी ने स्वयं गृहस्थी को पकड़ रखा है और कहता है परिवार के लोग नहीं छोड़ते हैं।

34 सम्पति के कमाने में कलुषता और व्यय करने में दुरभिमान होता है, इस तरह जहाँ कषाय का ही सम्राज्य है, वहाँ शान्ति कैसे मिल सकती है ?

35 **हमारी बारह भावना-**

राजा राणा छत्रपति हाथिन के असवार। पैसा हेतु घर छोड़कर भ्रमत जीव संसार।।

दलबल देवी-देवता मात-पिता परिवार। बिन पैसे के जीव को कोई न राखन हार।।
दाम विना निर्धन दुःखी तृष्णा वश धनवान। बीस लाख की लॉटरी, खोल देहु भगवान।।
आप अकेला अवतरे मरे अकेला होय। पत्नी बिन संसार में, और न दूजो कोय।।
जहाँ देह अपनी नहीं तहाँ न अपना कोय। पैसे के प्रभाव से, पर जन अपना होय।।
दिपे चाम चादर मणि हाड़ पींजड़ा देह। तैल पाउडर पोत के, दुनिया वस कर लेय।।
मोह नींद के जोर जगवासी घूमे सदा। पैसा धरे बटोर के, खबर नहीं भगवान की।।
सतगुरु देय जगाय मोहनींद जब उपशमे। पैसा इन्हें दिखाय, चिन्ता करे दुकान की।।
ज्ञान दीप तप तैल भर घर शोधे भ्रम छोर। माल रखाते रात भर, ले न जावे चोर।।
पञ्च महाव्रत सञ्चरण समिति पञ्च परकार। इन्हें त्याग कर नित करे पञ्च पाप से प्यार।।
चौदह राजू उतङ्ग नभ लोक पुरुष सण्ठान। मैं सबका स्वामी बनूं, कृपा करो भगवान्।।
धन कन कञ्चन राजसुख सबही सुलभ कर जान। दुर्लभ है कञ्जूस घर, मिल जाए जल पान।।
जाँचे सुर तरु देय सुख चिन्तत चिन्ता रैन। बिन जाए इस जगत में, पत्नी ही सुख देन।।
आप अकेला अवतरे मरे अकेला होय। माया चारी के विना, लखपति कैसे होय।।

मोह को जीतने का उपाय-

1 मोह के भेदों को अपना व अपने रूप मानता है, इसलिए परिग्रह बन जाता है, पहले उसे उल्टा कर दें, जैसे पारसनाथ आदि के प्रति विशेष भक्ति रख अनायतन से बचना चाहिये, अनन्तर वस्तुस्वरुप का यथार्थ श्रद्धान कर मिथ्यात्व से बचना चाहिए, संसारी प्राणी कहता है, तुमने मेरे क्रोध को नहीं देखा, अर्थात् अज्ञान से क्रोध को अपना मानता है, पहले क्रोध पर क्रोध करना एवं ''क्षमा से क्रोध को जीतना चाहिए'', इसी तरह मान के उदय से कहता है, कि तुम मेरे को क्या समझते हो ? जबकि पुण्य के उदय से कुछ शक्ति धन ज्ञानादि मिला है, अतः जैनत्व का स्वाभिमान रखकर आत्म कल्याण के विषय में सोचना चाहिए एवं ''विनय से मान को जीतना चाहिए'', इसी तरह दूसरे को ठग कर अपने आप को बुद्धिमान समझता है और कहता है मुझे किसी ने नहीं पकड़ पाया, पहले पाप से बचने के लिए मायाचारी करना चाहिए, और मायाचारी को तिर्यञ्चआयु का कारण समझकर ''सरलता से माया को जीतना चाहिए'', लोभ कषाय के उदय से पर पदार्थ को अपनाना चाहता है, जबकि लोभ को पाप का बाप कहा है, अतः पहले स्वर्ग और मोक्ष प्राप्ति का लोभ होना चाहिए, व ''सन्तोष से लोभ को जीतना चाहिए'', अज्ञानी प्राणी दूसरों की कमजोरियों की हँसी उड़ाता है, उसे ''स्वयं की कमियों पर हँसना चाहिए'', इसी प्रकार पहले ''पञ्च परमेष्ठी से रति होना चाहिए'' और विषयों से विरक्ति होना चाहिए, ''पाप के स्थानों से अरति होना चाहिए'', अपने द्वारा किये हुए ''पापों

का शोक होना चाहिए'', नरक आदि ''दुर्गतियों में जाने का भय होना चाहिए'', अपने ''दोषों के प्रति जुगुप्सा (ग्लानि) होना चाहिए'', मुक्ति स्त्री की कामना रखते हुए, ''स्त्री मात्र से विरक्ति होना चाहिए'', ''गलत कार्य करने के विषय में नपुंसक बन जाना चाहिए'' एवं ''अपने को पुरुष अर्थात् आत्मा मानकर मोक्ष का पुरुषार्थ करना चाहिए'' और ''कषाय मात्र का त्याग करना चाहिए''।

2 छिपकली, कुत्ता, बिल्ली, चूहा, जिन घरों में रहते हैं वे उसे अपना मानते हैं, और जमादार (मेहतर) भी जितने घरों की सफाई करता है, उन्हें अपने कहता है और हम भी उसे अपना घर मानते हैं, तो हमारी सोच भी कुत्ते आदि की तरह हुई, तथा शर्माजी का कुत्ता वर्माजी के कुत्ते से बोला कि मैं गाड़ी खींच रहा हूँ, पर उसे नहीं मालूम की गाड़ी खींचने वाला कोई और है, इसी प्रकार अज्ञानी प्राणी घर, परिवार आदि का कर्ता अपने को मानता है, पर उसे नहीं मालूम कि सबका अपना-अपना भाग्य और पुरुषार्थ होता है।

3 मोक्ष के इच्छुक को सदा बारह भावनाओं का चिन्तन करना चाहिए, इससे मोक्षमार्ग में आने वाले विघ्न दूर होते हैं, मन को शान्ति मिलती है और सांसारिकता से आसक्ति हटती है, बारह भावना आसक्ति नष्ट करने का अमोघास्त्र है।

4 **जो दिन कटे सोई, आयु में अवश घटे। बूँद बूँद बीते जैसे, अञ्जुलि को जल है।**
देह नित छीन होत, नैन तेज हीन होत। जोवन मलीन होत, छीन होत बल है।।
आवे जरा नेरी तवे, आतङ्क अहेरी आवे। परभव नजीक जात, नरभव विफल है।
मिल के मिलापी जन, पूँछत कुशल मेरी। ऐसी दशा माहीं मित्र, काहे की कुशल है।।

5 बेटियों को जमाई, बेटों को बहुएँ और शरीर को मौत ले जायेगी, तब सोचो आपके पास क्या बचेगा ?

6 जब परिस्थिति गम्भीर हो, तब भौतिक शक्ति उतनी काम नहीं आती, जितनी समझ और सहन शक्ति काम आती है।

7 घर में खुलापन रहने से सुविधा अधिक होती है, इसी तरह हृदय में खुलापन रहने से प्रसन्नता अधिक होती है।

8 इंसान स्वास्थ्य की बली देकर पैसा कमाता है और पैसे की बलि देकर स्वास्थ्य पाने में जीवन गमाता है, पर गया हुआ स्वास्थ्य पुनः प्राप्त नहीं होता है।

9 सब कुछ खोने से खराब उस उम्मीद को खोना है, जिसके बल पर सब कुछ पुनः प्राप्त किया जा सकता है।

10 स्वयं पर अनुशासन करके किसी भी विपत्ति में विकल्प की खोज कर शान्ति पाने का प्रयास करना चाहिये एवं तनाव वाली स्थिति से दूर रहकर ही जीवन का आनन्द ले सकते हैं।

11 सोना गर्मी पाकर आभूषण बनता है और पाषाण चोट खाकर भव्य मूर्ति बनता है, उसी तरह जीवन में जितने सङ्घर्ष आते हैं, आदमी उतना ही अधिक अनुभवी एवं मूल्यवान बनता है।

पुत्र के नाम पिता का पत्र

चि. बसन्त,

यह जो लिखता हूँ उसे बड़े होकर और बूढ़े होकर भी पढ़ना,

अपने अनुभव की बात करता हूँ, संसार में मनुष्य जन्म दुर्लभ है, यह बात सच है और मनुष्य जन्म पाकर जिसने शरीर का दुरुपयोग किया वह पशु है, तुम्हारे पास धन है, अच्छे साधन हैं, उनका सेवा के लिये उपयोग किया तब तो साधन सम्भव हैं अन्यथा वे शैतान के औजार हैं,

तुम इतनी बातों का ध्यान रखना:-

1. धन को मौज़-शौक में कभी उपयोग न करना, रावण ने मौज-शौक किया था जनक ने सेवा की थी, धन सदा रहेगा भी नहीं, इसलिये जितने दिन पास में हैं उसका उपयोग सेवा के लिये करो, अपने ऊपर कम खर्च करो, बाकी दु:खियों के दु:ख दूर करने में व्यय करना।
2. **धन शक्ति है,** इस शक्ति के नशे में किसी के साथ अनर्थ हो जाना सम्भव है, इसका ध्यान रखना।
3. अपनी सन्तान के लिये यही उपदेश छोड़कर जाओ, यदि बच्चे एश आराम वाले होंगे, तो पाप करेंगे और व्यापार को चौपट करेंगे ऐसे नालायकों को धन कभी न देना, हम भाइयों ने व्यापार को बढ़ाया तो यह समझकर कि वे लोग धन का सदुपयोग करेंगे।
4. सदा यह ध्यान रखना कि तुम्हारा यह धन जनता की धरोहर है, तुम उसे अपने स्वार्थ के लिए उपयोग नहीं करना।
5. भगवान् को कभी मत भूलना, वह हमें अच्छी बुद्धि देता है।
6. इन्द्रियों को काबू में रखना वरना ये तुम्हें संसार सागर में डुबो देंगी।
7. नित्य नियम संयम का पालन करते हुए व्यवसाय करना।
8. भोजन को दवा समझकर खाना जो स्वाद के वश में होकर खाते हैं, वे काम नहीं कर पाते हैं और जल्दी मर जाते हैं।

-घनश्यामदास बिड़ला

इति अकिञ्चन्यधर्म समाप्त

★★★

10 वाँ सोपान- उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म

"ब्रह्मचर्य की साधना, वासना की विराधना"

आत्म सिद्धि की रामवाण औषधि, ब्रह्मचर्य का स्वरूप-

1 मात्र विवाह नहीं करना ब्रह्मचर्य नहीं है, किन्तु मैथुन का त्याग कर आत्मोपलब्धि का प्रयत्न ब्रह्मचर्य है।

2 संसार में लौकिक कला और लौकिक ज्ञान की अनेक चीजें हैं, पर ब्रह्मचर्य में विरले ही निपुण हैं।

3 गुरु की साक्षी पूर्वक लिए हुए समस्त व्रतों का पालन करना, संसार रूप शत्रु से भयभीत मनुष्य का ब्रह्मचर्य कहलाता है।

4 **मलबीजं मलयोनिं, गलन्मलं पूति गन्धि वीभत्सं।**
पश्यन्नङ्गमनङ्गात्, विरमति यो ब्रह्मचारी सः।।
शरीर रज-वीर्य रूपी मल से उत्पन्न हुआ है और मल को ही उत्पन्न करता है, मल को ही झराने वाला है, दुर्गंधित है, ग्लानि उत्पन्न करने वाला है, इस प्रकार शरीर को देखते हुए जो काम से विरक्त होता है, वह ब्रह्मचारी कहलाता है।

5 **अङ्कस्थाने भवेच्छीलं, शून्याकारं व्रतादिकं।**
अङ्कस्थाने पुनर्नष्टे, सर्व शून्यं व्रतादिकं।।
ब्रह्मचर्य अङ्क के तुल्य है, व्रतादिक शून्य के तुल्य हैं, ब्रह्मचर्य के नष्ट हो जाने पर व्रतादिक शून्य तुल्य हो जाते हैं।

6 **यः परदारेषु मातृवत्, परद्रव्येषु लोष्टवत्।**
आत्मवत् सर्वभूतेषु, यः पश्यति स पण्डितः।।
जो पर स्त्री में माता की तरह, परधन मे मिट्टी के ढेले की तरह और प्राणी मात्र में अपने समान व्यवहार करता है वह पण्डित है।

7 **शुचिः भूमिगतं तोयं, शुचिः नारी पतिव्रता।**
शुचिःधर्म परो राजा, ब्रह्मचारी सदाशुचिः।।
भूमि में गया हुआ जल पवित्र होता है, पतिव्रता नारी पवित्र होती है, धर्मपरायण राजा पवित्र होता है एवं ब्रह्मचारी सदा पवित्र होता है।

ब्रह्मचर्य से लाभ-

1 मित्र को निष्कपट व्यवहार से, शत्रु को नीतिबल से, लोभी को धन से, राजा को आज्ञा पालन

से, ब्राह्मण को आदर से, युवति को अत्यधिक प्रशंसा से, भाई को शान्तवृत्ति से, गुरु को नमस्कार से, मूर्ख को कथाओं से, विद्वान् को विद्याओं से, रसिक को रस से और **''सभी को ब्रह्मचर्य से वश में करना चाहिए।''**

2 जिसकी रसना वश में है, उसे ब्रह्मचर्य से कोई नहीं डिगा सकता है।

3 **ऐश्वर्यस्य विभूषणं सुजनता शौर्यस्य वाक्संयमो,**
ज्ञानस्योपशमः कुलस्य विनयो वित्तस्य पात्रे व्ययः।
आक्रोशः तपसः क्षमा बलवतां धर्मस्य निर्व्याजता,
सर्वेषामपि सर्वकारणमिदं शीलं परं भूषणं।।

ऐश्वर्य का आभूषण सज्जनता है, शौर्य का आभूषण वाणी संयम है, ज्ञान का आभूषण शान्ति है, कुल का आभूषण विनय है, धन का आभूषण सुपात्र में व्यय (दान) करना है, तप का आभूषण क्रोध नहीं करना है, बल का आभूषण क्षमा है, धर्म का आभूषण माया का अभाव है और इन **''सबका आभूषण ब्रह्मचर्य है''**।

4 **शीलेन ही त्रयो लोकाः, जेतुं शक्याः न संशयः।**
न हि किंचिदसाध्यं वै, लोके शीलवतां भवेत्।।
''ब्रह्मचर्य के द्वारा निःसन्देह तीनों लोको को वश में किया जा सकता है एवं शीलवानों के लिए कुछ भी असाध्य नहीं है।''

5 **विजय का ब्रह्मचर्य**- विजय जब पाठशाला पढ़ता था, तब शुक्लपक्ष में ब्रह्मचर्य से रहने का नियम ले लिया और विजया भी जब पाठशाला पढ़ती थी, तभी कृष्णपक्ष में ब्रह्मचर्य से रहने का नियम ले लिया था, आगे चलकर उन दोनों की शादी हो गयी, उन्होंने पूरे जीवन भर भाई बहन का व्यवहार किया। किसी गृहस्थ से जीवानी गिर गई थी, प्रायश्चित्त के रूप मे मुनि महाराज ने शीलव्रत धारी दम्पत्ति को भोजन कराने को कहा, अगर ऊपर का काला चँदोवा सफेद हो जाए, तो समझ लेना मेरा प्रायश्चित्त पूरा हो गया, विजय-विजया दम्पत्ति को भोजन कराने से काला चँदोवा सफेद हो गया था।

6 **ब्रह्मचारी के दर्शन से आँख ठीक हुई**-एक जन्मान्ध ने मुनिराज से पूछा हमारी आँखे कब ठीक होगीं ? तब मुनिराज ने कहा कि विवाह से बारह वर्ष तक जिसने ब्रह्मचर्य पाला हो उसके दर्शन से ठीक होंगी।

कुशील से हानि-

1 **गिरि से गिर परवो भलो, भलो पकड़वो नाग।**
अग्नि में जलवो भलो, बुरो शील को दाग।।

2 कामिनी के कटाक्ष का निरीक्षण करने में तत्पर मनुष्य के अनेक भव युक्तायुक्त के विचार से शून्य हो जाते हैं, स्त्री की गन्ध मात्र भी, उसका देखना, स्पर्शन और वचन मात्र भी मुनि की सानन्द वीतराग चित्त वृत्ति को तत्काल ही व्यर्थ कर देती है, मुनि को वार्तालाप तो दूर उनके शब्द श्रवण से भी बचना चाहिए क्यों कि उनका नाम भी भूत की तरह भयानक होता है।

3 जिस नारी को अवैध गर्भ हुआ हो और वह बार-बार गिराने की भावना करे तो लब्ध्यपर्याप्तक जीवों में उत्पन्न होती है।

4 धन और स्त्री का राग मन रहित वृक्षों को भी नहीं छोड़ता फिर मनुष्यों की तो बात ही क्या है, जहाँ धन गड़ा हो वहाँ वृक्ष की जड़ें चली जाती हैं और स्त्रियों के पैर मारने आदि से वृक्ष खिल उठते हैं।

5 **शील की नौ बाढ़-** 1.गरिष्ट आहार, 2. भड़कीली भेषभूषा, 3. कुसङ्गति, 4. स्त्री आसन, 5. स्त्री कथा, 6. आङ्गोपाङ्ग निरीक्षण, 7. पूर्वभोग स्मरण, 8. स्त्री नृत्य,गीत, 9. स्त्री सह सम्भाषण ये सभी नहीं करना शील की नौ बाढ़ें हैं।

6 भोगों का चिन्तन ही व्यक्ति को रोगी, कमजोर, पागल तक कर देता है और मृत्यु भी हो जाती है।

7 योगी नहीं भोगी बूढ़ा होता है, भोग बुरे भव रोग बढावे''।

8 **ब्रह्मचर्य व्रत के पाँच अतिचार-** 1. दूसरों के विवाह कराना, 2. विवाहित व्यभिचारिणी स्त्री से सम्बन्ध करना, 3. अविवाहित व्यभिचारिणी स्त्री से सम्बन्ध करना, 4. मैथुन सेवन के अङ्गों को छोड़कर भिन्न अङ्गों से मैथुन सेवन करना, 5. मैथुन सेवन में आसक्ति होना।

9 इन्द्रिय भोग और इन्द्रिय ज्ञान दोनों ब्रह्मचर्य में बाधक हैं, ब्रह्मचर्य का पालन करने के लिये स्वप्न में भी सावधान रहना पड़ता है, सौन्दर्य प्रदर्शन ब्रह्मचर्य का अपमान है।

10 आज दहेज़ रूपी दानव के कारण कितनी कन्याओं की माँग सूनी हो गयी है तथा हँसती खिलखिलाती जिन्दगी नरक के समान हो गयी है।

11 एक बार का विषय भोग उपजाऊ जमीन में बट के बीज की तरह फलता है, वह अपना फल जरूर देता है।

12 जगत की प्रत्येक घटना शिक्षा देती है, किन्तु विषय वासनाओं के कोलाहल में हमें सुनाई नहीं देती है।

13 मनुष्यों का जीवन असंयमित होने के कारण प्रकृति विरूद्ध हो गयी है, जैसे अतिवृष्टि-अनावृष्टि, अकाल, भूकम्प आदि।

14 शोध के अनुसार नौ लाख जीवों की हिंसा एक बार के मैथुन में होती है और आगम में असंख्यात जीवों की हिंसा बतलायी हैं।

15 भड़कीला परिधान, बालक बालिकाओं की सह-शिक्षा, अधिक उम्र में शादी, इत्यादि बलात्कार के कारण हैं।

16 ब्रह्मचर्य के अभाव में अल्पायु में ही बाल सफेद हो जाते हैं, स्मरण शक्ति नष्ट हो जाती है, आँखें कमजोर हो जाती हैं, चेहरे का तेज नष्ट हो जाता है, कानों से सुनाई नहीं देता है, दाँत गिर जाते हैं, जिव्हा लड़खड़ाने लगती है, छोटी सी विपत्ति में, मेहनत में, चलने में ही थकान हो जाती है, शरीर में झुर्रियाँ पड़ जाती हैं एवं अल्पायु में ही मरण हो जाता है।

17 ग्लानि, मूर्च्छा, भ्रान्ति, कम्पन, श्रम, पसीना, अङ्गो में विकार तथा क्षय रोगादिक दोष प्राणियों में मैथुन से उत्पन्न होते हैं।

18 'कं' अर्थात् खोटा 'दर्प' अर्थात् अहङ्कार उत्पन्न करता है, वह कन्दर्प कहलाता है।

19 अति कामना उत्पन्न करके दुःख उत्पन्न करता है, इसलिए वह काम कहलाता है, अनेक मनुष्य और तिर्यञ्च लड़-लड़ कर मर जाते हैं, इसलिये भी काम कहलाता है।

20 एक स्त्री के कारण पुरूषों को आरम्भ परिग्रह में फँसना पड़ता है, फिर वहाँ से निकलना मुश्किल होता है।

21 कामभोग में एकक्षण का सुख, बहुकाल दुःख, सीमित सुख, असीमित दुःख, काम भोग मुक्ति के विरोधी व अनर्थों के मूल हैं।

22 सूर्पनखा की नाक लक्ष्मण ने नहीं काटी थी, एक विवाहिता होकर भी पर पुरुष की इच्छा की थी इसलिए कट गयी थी।

23 व्यभिचारी को घृणा, पाप, भ्रम, और कलङ्क इन चारों से छुटकारा नहीं मिलता है।

24 चाहे तीर्थ पर जाओ, या एक पैर से खड़े रहो, या जल में डूबो, या पर्वत के शिखर से कूदो, जैसे शिला पर बीज फलता नहीं उसी प्रकार ब्रह्मचर्य से रहित मनुष्य भी सिद्धि को प्राप्त नहीं होता है।

25 जिसके कोष में ब्रह्मचर्य नहीं है उसके पास कुछ भी नहीं है।

26 झगड़े और दुःख भी फ्री में नहीं आते, इन को भी संसारी प्राणी पैसे देकर खरीदता है, जैसे टी.वी. पर अलग-अलग चैनल देखने के लिए बच्चे झगड़ते हैं, मोबाइल की वजह से शान्ति से नहीं बैठ पाते, प्रत्येक बच्चे को अलग-अलग गाड़ी चाहिए एवं गाड़ी रखने की समस्या आदि।

27 प्रदर्शन की भावना विकार के अस्तित्त्व को सूचित करती है।

28 विषय सुख खाज खुजाने के समान दुःख दायी हैं, जिसके अनन्तर पीड़ा बढ़ जाती है।

29 तेतीस करोड़ साठ लाख की अल्पसंख्या वाले देश अमेरिका में प्रतिदिन लगभग चौदह सौ चालीस तलाक दिये जाते हैं।

30 **हावो मुख विकारः स्याद्, भावः चित्तोत्थ उच्यते।**
विलासो नेत्रजो ज्ञेयो, विभ्रमो भ्रूःयुगान्तयोः।।
स्त्रियों के मुख के विकार को 'हाव' कहते हैं, मन में उत्पन्न विकल्पों को 'भाव' कहतें हैं, नेत्रों के चलाने को 'विलास' कहते हैं और दोनों भोहों के चलाने को 'विभ्रम' कहते हैं।

31 **सुरेन्द्रप्रतिमाधीरा, अप्यचिन्त्यपराक्रमाः।**
दशग्रीवादयो यातः, स्त्रीणां कृते रसातलं।।
इन्द्र के समान धीर-वीर अचिन्त्य पराक्रम के धारी रावण आदि स्त्रियों के कारण नरक में चले गए हैं।

32 **तपस्वी व्रती मौनी, संवृतात्मा जितेन्द्रियः।**
कलङ्कयति निश्शङ्कं, स्त्री सखा सोऽपि संयमं।।
जो तपस्वी, व्रती, मौनी और जितेंद्रिय हैं अगर वह भी स्त्री की सङ्गति करें तो अपने संयम को कलङ्कित कर लेते हैं।

33 **मासे मासे व्यतिक्रान्ते, यः पिबत्यम्बु केवलं।**
विमुह्यति नरः सोऽपि, सङ्गमासाद्य सुभ्रुवः।।
जो एक माह के अन्तराल से केवल पानी लेता है, ऐसा साधु भी स्त्री की सङ्गति पाकर मोहित हो जाता है, फिर जो षट् रस भोजन करते हैं उनको कितनी काम की बाधा होगी ?
घास फूँस तृण जे भखें, तिन्हे सतावे काम।
षट् रस भोजन जे करे, उनकी जाने राम।।

34 **माता स्वसा दुहित्रा वा, न विविक्तासनो भवेत्।**
बलवान् इन्द्रियग्रामो, विद्वान् समपकर्षति।।
माता, बहिन और पुत्री के साथ भी एकान्त में नहीं बैठना चाहिये क्योंकि इन्द्रियाँ विद्वान् को भी पतित कर देती हैं।

35 **तिल तैलमैवमिष्टम्, येन न दृष्टं घृतं क्वापि।**
अविदित परमानन्दो, वदति स एव विषय रमणीयः।।
जिन्होंने कभी घी नहीं देखा, वे ही तिली के तैल को मीठा कहते हैं, उसी प्रकार जिन्हें परमानन्द प्राप्त नहीं हुआ वे ही विषयों को मनोहर कहते हैं।

36 **विषयासक्त चित्तानां, गुणः को वा न नश्यति।**
न मानुष्यं न वैदुष्यं, नाभिजात्यं च सत्यवाक्।।
विषयासक्त मनुष्य के मनुष्यता, विद्वत्ता, कुलीनता एवं सत्यवचन आदि कौन से गुण नष्ट नहीं हो जाते हैं?

37 **पाकं त्यागं विवेकं च, वैभवं मानितामपि।**
कामार्त्तः खलु मुञ्चन्ति, किमन्यैः स्वञ्च जीवितं।।
कामी मनुष्य भोजन, संयम, विवेक, वैभव, स्वाभिमान यहाँ तक कि अपना जीवन भी नष्ट कर देता है।

38 **आयु तेजो बलं वीर्यं, प्रज्ञा श्रीश्च महद्यशः।**
पुण्यं च प्रीतिमत्वं च, हन्यतेऽब्रह्मचर्यतः।।
कुशील से आयु, तेज, बल, वीर्य, बुद्धि, लक्ष्मी, विशाल यश, पुण्य एवं प्रीति सब कुछ नष्ट हो जाता है।

39 **वपुर्गृहं धनं दाराः, पुत्राः मित्राणि शत्रवः।**
सर्वथान्यस्वाभावानि, मूढः स्वानि प्रपद्यते।।
शरीर, घर, धन, स्त्री, पुत्र, मित्र और शत्रु सभी भिन्न स्वभाव वाले हैं फिर भी अज्ञानी मोही इन्हें अपने मानता है।

40 **आद्यं शरीरसंस्कारो, द्वितीयं वृष्यसेवनं। तौर्यत्रिकं तृतीयं स्यात्, संसर्गस्तुर्यमिष्यते।।**
योषिद्विषयसङ्कल्पं, पञ्चमं परिकीर्तितं। दङ्गवीक्षणं षष्ठं, संस्कारः सप्तमं मतं।।

पूर्वानुभोग सम्भोगं, स्मरणं स्यात् तदष्टमं। नवमी भाविनी चिन्ता, दशमं वस्तिमोक्षणं।।

ब्रह्मचर्य के दोष- 1.शरीर संस्कार, 2.गरिष्ठ भोजन, 3.गाना-बजाना-नाचना, 4.स्त्री सङ्गति, 5.स्त्री के विषय में सङ्कल्प करना, 6.अङ्गोपांग निरीक्षण, 7.स्त्री का सम्मान करना, 8.पूर्व के भोगों का स्मरण करना, 9.भविष्य में भोगों की चिन्ता होना, 10.वीर्यक्षरण होना।

41 **मैथुनाचरणे मूढ़: म्रियन्ते जन्तुकोट्य: ।**
योनिरन्ध्र समुत्पन्ना: लिङ्ग सङ्घट्ट पीड़िता: ।।

हे मूर्ख ! मैथुन के सेवन से योनी में उत्पन्न होने वाले करोड़ों जीव (पञ्चेन्द्रिय लब्धि अपर्याप्तक मनुष्य) लिंग के घर्षण से मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। माह में चार पर्वों में भी ब्रह्मचर्य पालने से करोड़ों जीवों को अभयदान मिल जाता है।

42 **अपिहितमहाघोरद्वारं न किं नरकापदा, मुपकृतवतो भूय: किं तेन न चेदमपाकरोत्।।**
कुशलविलयज्वाला जाले कलत्र कलेवरे। कथमिव भवानत्र प्रीत: पृथग्जनदुर्लभे।।

स्त्री नरक की घोर आपत्तियों का खुला दरवाजा है, तूने कितनी बार उनका उपकार किया है पर उन्होंने अपकार ही किया है, पुण्य को जलाने के लिए अग्नि स्वरूप स्त्री के शरीर में आप क्यों राग करते हो, यह स्त्री शरीर तो मूर्खों के लिए दुर्लभ लगता है।

43 **सत्यं शौचं श्रुतं वित्तं, सौख्यं लोकेषु पूज्यता।**
नश्यन्त्येतानि सर्वाणि, पुंसां स्त्रीणां प्रसङ्गत: ।।

स्त्री की सङ्गति से सत्य, सन्तोष, ज्ञान, धन, सुख और लोकमान्यता सभी नष्ट हो जाते हैं।

44 **सत्वं रेतश्छलात् पुंसाम्, घृतवद् द्रुवति द्रुतं।**
विवेक: सूतवत् क्वापि, याति योषिताग्नि योगत: ।।

स्त्री रुपी अग्नि की सङ्गति से पुरुषों का धैर्य (वीर्य) के बहाने घी की तरह शीघ्र ही पिघल जाता है और विवेक कपूर की भाँति कहीं चला जाता है।

45 **नारी जने के भक्त जन, के दाता के शूर।**
नहीं तो बाँझ रहवों भलो, व्यर्थ गमावे नूर।।

46 **वह मार्ग जरूर मनोरम है, पर कण्टक कीरण दुर्गम है।**
गुजरे जितने जन इस मग से, परिहास हुआ सबका सम है।
मत जा मन उस ओर अरे, वह स्वप्न मृगाम्बु तथा भ्रम है।।

47 **परनारी पैनी छुरी तीन ठोर से खाये।**
धन छीने यौवन हरे मरे नरक ले जाए।।

48 **परनारी पैनी छुरी मति लगाओ अङ्ग।**
रावण के दस शीश गये परनारी के सङ्ग।।

49 द्रोपती में आसक्त होकर कीचक ने अपने प्राण गमाये, चारुदत्त ने वेश्या में आसक्त होकर बत्तीस करोड़ स्वर्ण मुद्राएँ बर्बाद की थीं।

50 **आराम यदि चाहो, तो आ राम के पास।**
फँदे में फँसना चाहो तो, जा काम के पास।।

51 **भोग बुरे भव रोग बढ़ावे बैरी है जग जीके।**
बेरस होय विपाक समय अति सेवत लागे नीके।।
वज्र अग्नि विष से विषधर से ये अधिके दुःख दायी।
धर्म रतन के चोर चपल अति दुर्गति पन्थ सहाई।।

52 दूल्हा जब घोड़े पर बैठे तब भी यही कहना, अभी भी वक्त है, पत्नि नहीं राम नाम सत्य है।

53 **सदा सुहागन री सखी, निज रोटी अर दार।**
दाम चौगुने अरु दुखद, पूरी अर परनार।।

54 शादी के पहले साल वाह-वाह, दूसरे साल आह-आह, तीसरे साल तबाह इसे कहते है विवाह।

55 पहली साल पति बोलता है और पत्नि सुनती है, दूसरे साल पत्नि बोलती है और पति सुनता है, तीसरी साल दोनों बोलते हैं और पड़ोसी सुनता है, ये हैं विवाह के हाल।

56 अत्यन्त तीव्र काम से भी जो वेदना होती है वह अल्पकाल के लिए होती है, परन्तु ब्रह्मचर्य का खण्डन करने से करोड़ों भवों में वेदना प्राप्त होती है।

57 जिस प्रकार स्वास्थ्य के प्रतिकूल भोजन सेवन करने वाले मनुष्यों का दबा हुआ रोग समूह जागृत हो जाता है, उसी प्रकार स्त्रियों के सङ्ग से पुरुषों का भीतर सोया हुआ भी काम जागृत हो जाता है, स्त्रियों के समस्त अङ्ग कोमल होते हैं पर मन पाषाण के समान कठोर होता है।

58 स्त्रियों के चेहरे लगते बड़े भोले है पर सच मानों ये बारूद के गोलें हैं।

59 जो कुल, जाति और गुण से भ्रष्ट हैं, निकृष्ट हैं, दुष्ट चेष्टा वाले हैं, छूने योग्य नहीं हैं तथा नीच हैं, ऐसे पुरुष प्रायः स्त्रियों को प्रिय होते हैं।'ज्ञानार्णव आ.श्री शुभचन्द्र जी'

60 स्त्रियाँ अञ्जन, तन्त्र, मन्त्र और विनय के विना ही बुद्धिमान मनुष्य को भी क्षणभर में ठग लेती है।

61 भोगी लोग चित्त और चेतना को विषयों की आग में झोक देते हैं।

62 **स्वप्न में गृहस्थी-** एक सन्यासी पानी पीकर कुंए के पत्थर पर सो गया, उसने स्वप्न में देखा कि मैं अपनी स्त्री बच्चों के साथ सो रहा हूँ, इतने में स्त्री ने कहा थोड़ा खिसको गर्मी लग रही है, थोड़ी देर में पत्नी ने पुनः कहा थोड़ा और खिसको बच्चा पसीना-पसीना हो रहा है, जैसे ही सन्यासी खिसका तो कुंए में गिर गया, चिल्लाया तो किसान दौड़ कर आया और सन्यासी को बाहर निकाला, पूँछा आप कुंए में कैसे गिर गये थे ? सन्यासी ने कहा स्वप्न में थोड़ी देर के लिये स्त्री के साथ सोया तो कुंए में गिर गया, जो लोग जीवन भर स्त्री के साथ सोते हैं तो क्या वे नरक रुपी कुंए में नहीं गिरेंगे ?

63 ध्यान के लिये वीर्य शुद्धि और ब्रह्मचर्य बहुत आवश्यक है, दूध, घी, आदि रसों का अधिक मात्रा में सेवन करने से वीर्य पर्याप्त मात्रा में बढ़ता है, घी सर्वाधिक वीर्य वर्धक वस्तु है उसका सेवन काम वासना उत्तेजित करता है, चञ्चलता बनी रहती है, यदि वीर्य सञ्चित होता है तो चञ्चलता बढ़ती है और वीर्य का विसर्जन होता है जिससे दुर्बलता आती है, दुर्बलता से मन सन्तुलित नहीं हो पाता, अतः ध्यान की कल्पना भी नहीं हो सकती है, इसलिए रसों का प्रचुर मात्रा में सेवन करना ध्यानाभ्यासी के लिये हितकर नहीं है।

64 **कालेज की लड़की-** सागर जिला में एक लड़की बस से रोज कॉलेज जाती थी, कण्डक्टर से परिचय हो गया, दोनों प्रेम की डोर में बन्ध गये, दोनों के माँ-बाप ने रोका, नहीं माने और शादी कर ली, जब वधू घर पहुँची, तब लड़के के माँ-बाप ने स्वीकार नहीं किया, पिता ने कहा हमारे घर भर के लोगों का थूक पियो तो स्वीकार करेंगे, लड़की ने स्वीकार कर लिया, गिलास में परिवार के लोगों ने थूका, लड़की को दिया, उसने पी लिया, कुछ दिन बाद पति-पत्नी में अनबन हो गयी, मारना-पीटना शुरू हुआ, बहुत दुःखी हुयी और बाद में तलाक हो गया।

65 **राजा ने रानी को अमृत फल दिया** ताकि रानी हमेशा सुन्दर बनी रहे, रानी ने कोतवाल को दिया, उसने वेश्या को दिया, वेश्या ने राजा को दिया, राजा फल को देखकर चिन्तन करने लगा।

''यां चिन्त्यामि सततं मयि सा विरक्ता, साप्यन्न मिच्छति जनं स जनोऽन्य सक्तः।
अस्मत् कृते च परितुष्यति काचिदन्या, धिक् तां च तं च मदनं च इमां च मां च।।''

मैं जिस रानी का निरन्तर चिन्तन करता हूँ, वह रानी मुझसे विरक्त है और वह कोतवाल को चाहती है कोतवाल वेश्या को चाहता है वेश्या मुझे चाहती है, इसीलिए उस रानी को धिक्कार

हो, कोतवाल को धिक्कार हो, काम को धिक्कार हो, वेश्या को धिक्कार हो और मुझको धिक्कार हो।

66 शादी में सात फेरे लगाये जाते हैं, अर्थात् सात प्रकार का संसार परिभ्रमण करना पड़ता है, एकेन्द्रिय के सूक्ष्म, बादर दो-तीन-चार इन्द्रिय, असंज्ञी और संज्ञी के भेद से सात भेद होते हैं या तो संसार के चक्कर काटो अथवा मुनि बनकर कर्म काटो।

67 रोड पर लाल बत्ती खतरा सूचित करती है, इसी तरह लाल साड़ी के रुप में वधू सूचित करती है कि गृहस्थ जीवन रूपी मार्ग में खतरा है, समय है सम्भल जाओ।

68 वधू वर से माँग भरवाती हुयी मौन मुद्रा में मानो कहती है ! अब जीवन भर हमारी माँगे पूरी करना, लड़का वासना के वश होकर स्वीकार कर लेता है।

69 चारों ओर आग लगी हो उससे डरकर कोई विष्टा के गड्ढे में गिरकर सुख मान मरण को प्राप्त होता है, वैसे ही विषय सुख में रति मानता है, तो दुर्गति को प्राप्त होता है।

70 लोग मन्दिर में दीप-धूप नहीं जलाते पर घरों में दहेज के लिए बहुओं को जला देते है।

71 भ्रूण हत्या भी कत्लखाना है, प्रति वर्ष बावन लाख शिशुओं को मारा जाता है।

72 बेटियों को लक्ष्मी कहने वाले लोग लक्ष्मी के कारण बेटियों का गर्भपात करवा देते हैं।

73 दो लाख से अधिक स्त्रियों का प्रतिवर्ष मरण गर्भपात से होता है, अस्सी लाख बीमार रहती हैं एवं पाँच लाख गैर कानूनी गर्भपात से उत्पन्न हुयी समस्या से मर जाती हैं।

74 जीवन भर माँस खाने वाली बाघिन और नागिन पाँचवे नरक तक जाती है, लेकिन स्त्री छठवें नरक तक जाती है।

75 गर्भपात कराने वाली महिला, गर्भपात की सलाह देने वाली महिला, अनुमोदना करने वाले, अस्पताल जाकर कराने वाले पुरूष को भी छः महीने तक पूजा, आहारदान, वैयावृत्ति, जिनवाणी का स्पर्श, पढ़ना और धार्मिक अनुष्ठान नहीं करना चाहिए, क्योंकि असहाय मनुष्य की हत्या करने बाला महापापी है।

76 **माँ नहीं राक्षसी-** जब सङ्क्शन पम्प (यन्त्र) भ्रूण के पास पहुँचता है तब बालक की प्रतिमिनट एक सौ चालीस बार होने वाली हृदय की धड़कन बढ़कर दो सौ बार प्रति मिनिट हो जाती है, अपने जीवन रूपी दीपक को बुझाने के लिये आ रहे औजारों से बचने के लिये भ्रूण पीछे हटता है, परन्तु उसका आवरण यन्त्रों से छिद कर बाहर निकलने लगता है, बालक के मस्तक और धड़ को झटके से अलग कर दिया जाता है, तब वेदना से चीख उठता है, यह है गूँगी चीख, फिर

फोरसेप यन्त्र से दबाकर कठिन खोपड़ी को चूर कर दिया जाता है, अपने हाथ से अपनी सन्तान का गला घोटने वाली माँ, माँ नहीं राक्षसी है, कसाई बकरे को एक झटके में मार डालता है, लेकिल गर्भपात में कोमल अङ्गों को तीक्ष्ण औजारों से टुकड़े-टुकड़े करके मारा जाता है।

77 **गर्भ में ही स्वर्ग की आयु-** गर्भस्थ शिशु जो अभी कुछ घण्टों का है वह तीसरे-चौथे स्वर्ग की आयु बाँध सकता है, जो कुछ दिनों का है तो वह पाँचवे-छटवे स्वर्ग तक की आयु बाँध सकता है, तीन माह से लेकर सात-आठ माह का नौवे से बारह वे स्वर्ग तक की आयु बाँध सकता है, जब अविकसित दशा में देवायु का बन्ध कर सकता है, तो विकसित अवस्था में क्या मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता ?

78 **ध.पु.सप्तम्-** भवनत्रिक के देव तथा सौधर्म-ईशान स्वर्ग के देव मरकर मनुष्य या तिर्यञ्च के गर्भ में आकर अन्तर्मुहूर्त पश्चात् वहीं उत्पन्न हो सकते हैं, तीसरे-चौथे स्वर्ग के देव पृथक्त्व (तीन से नौ तक की संख्या को पृथक्त्व कहते हैं) मुहूर्त पश्चात तीसरे-चौथे स्वर्ग में उत्पन्न हो सकते हैं, पाँचवे से आठवें स्वर्ग के देव पक्ष पृथक्त्व में वहीं उत्पन्न हो सकते हैं, नौवें से बारहवें स्वर्ग के देव मास पृथक्त्व में वहीं उत्पन्न हो सकते हैं, तेरहवे से सोलहवे स्वर्ग के देव तथा ग्रैवेयक, अनुदिश, अनुत्तर स्वर्ग के देव मनुष्य स्त्री के गर्भ में आकर वर्ष पृथक्त्व पश्चात् उन्हीं स्वर्गो में उत्पन्न् हो सकते हैं।

79 **उपवास से ब्रह्मचर्य पाला-** एक महिला की शादी के कुछ दिन बाद पति मर गया, कुछ समय बाद सास भी मर गयी, ससुर ने सोचा बहु को खराब न लगे इसलिये श्रृङ्गार का सामान और अच्छा भोजन बहु के लिये उपलब्ध कराया, गरिष्ट भोजन से बहु के परिणाम बिगड़ गये, उसने ससुर से कहा कि हमसे अकेले नहीं रहा जाता, ससुर को चिन्ता हुई, सोचा गलती हमने की है, कि बहु के आहार का ध्यान नहीं रखा, ससुर ने उपवास करना शुरू किये, बहु ने भी उपवास किये, कुछ समय बाद जब इन्द्रियाँ शिथिल हुयी, तो ब्रम्हचर्य का पालन होने लगा।

80 **रानी अमृता का छल-** अष्टावक्र महावत के मधुर गान पर आसक्त होकर विषय सेवन करने लगी, रहस्य खुलने को हुआ तो यशोधर राजा को जहर दे दिया, वैद्यों को बुलाया, आने के पहले रानी छल से बोली, राजा को दृष्टिविष उत्पन्न हुआ, बाल बिखेर कर रोने लगी और राजा की छाती पर गिर पड़ी, चुपके से गला दबा दिया, राजा मर गया, अष्टावक्र के साथ खूब भोग भोगने लगी, अन्त में गलित कुष्ट हुआ, मरकर नरक गयी, मधुर स्वर के श्रवण से वासना जाग्रत होती है, इसलिये नहीं सुनना चाहिए।

81 **दाह पड़ना-** गर्मी की दाह को छाता रोक देता है, सूर्य चर्म को ही तपाता है, किन्तु काम के प्रबल ताप के प्रतिबन्ध का कोई साधन नहीं है, सूर्य दिन में तपाता है, काम रात-दिन तपाता है।

82 जैसे लोभी धन प्राप्ति के लिये प्राणों को त्याग देता है, उसी प्रकार कामी काम वासना के लिये प्राणों को सङ्कट में डाल देता है।

83 कामी अपने मनोरथ सफल होते न देख मरण को प्राप्त होता है, वासना के वश सैकडों कन्याएँ व युवक रेल से कटकर, कुंए में गिरकर, सल्फास खाकर, फाँसी लगाकर आत्म हत्यायें कर रहे हैं।

84 **मैथुन से शरीरिक हानि-** शरीर में वीर्य शक्ति ही श्रेष्ठ है, वह शरीर का राजा है, जिस प्रकार राजा के विना राज्य में अन्याय-भ्रष्टाचार होने से राज्य निर्धन हो जाता है, उसी प्रकार वीर्य शक्ति के विना शरीर निस्तेज एवं निस्सार हो जाता है।

85 चालीस किलोग्राम भोजन से एक तौला वीर्य बनता है, अधिक काम सेवन से टी.वी., कुष्टरोग व नपुंसकता आदि भयंकर रोग हो जाते हैं।

86 अति स्त्री संसर्ग से बचना चाहिए वरना शूल, खाँसी, बुखार, श्वास, रोग, दुबलापन, पाण्डुरोग, क्षय व ऐठन आदि रोग हो जाते हैं।

87 **रोगों का राजा एड्स-** जो भौतिकवादी, विलासप्रिय अमेरिका आदि देश ब्रह्मचर्य का मखोल उड़ाते थे, वे अब ब्रह्मचर्य को महत्त्व देने लगे हैं, यह रोग वेश्यागमन से होता है, यह अजीब किस्म का वायरस यानि विषाणु है, यह वायरस इतना छोटा है कि इसका व्यास 100 नेनोमीटर या 0.1 माइक्रो मीटर से नापा गया है, ऐसे सूक्ष्माति सूक्ष्म जीव ने आज लगभग एक सौ तेतीस देशों में एड्स का असाध्य रोग फैला दिया है, इसका शोध 1983 में पेरिस के डॉ. तुक मोटारनीन ने और 1984 में अमेरिका के डॉ. रावर्ट गैली ने किया था।

88 एक बार पूरे खून में एड्स परमाणु फैल जायें, तो कुछ महिनों में मौत अपने पञ्जे में दबोच लेती है।

89 अफरीकी देश में बीस लाख से अधिक स्त्री पुरुषों में एड्स के वायरस पल रहे हैं।

90 सारी दुनिया में पचास लाख से एक करोड़ लोग इस घातक वायरस के जीते-जागते नमूने हैं, इनमें से पन्द्रह लाख केवल अमेरिका में हैं।

91 **वीर्यवास-** रज और वीर्य सर्वाङ्ग में रहते हैं, जैसे तिल में तैल, फूल में गन्ध, इसी तरह शरीर के कण-कण में वीर्य व्याप्त है।

92 वीर्य की बूँद निकालना याने शरीर को नीबू की भाँति निचोड़ना है, जैसे मथानी से दूध के परमाणु से मक्खन खींचा जाता है, उसी प्रकार हस्तमैथुन आदि से शरीर के सभी परमाणुओं से वीर्य खींचा जाता है नस-नस हिल जाती है जब तक दीपक में तैल ऊपर चढ़ता है तो दीपक प्रकाश करता है, जैसे ही तैल का नाश होता है दीपक मन्द होकर बुझ जाता है, उसी प्रकार जब तक शरीर में वीर्य ऊपर चढ़ता है तो शरीर में चमक, दमक, आनन्द बल दिखाई देता है।

93 **वीर्य रक्षा के उपाय-** पवित्र सङ्कल्प, मातृभाव, दृष्टि को सम्भालना, सादा रहन सहन, सत्सङ्गति, योगासन, जिनेन्द्रभक्ति, सत्साहित्य का पठन-पाठन, व्यसन मुक्ति, उपवास, दृढ़ प्रतिज्ञा, प्राणायाम आदि।

94 डॉ. सुरेश जैन ने सूक्ष्म दर्शी यन्त्र से वीर्य में चलते फिरते जीव देखें हैं, जीव का आकार मनुष्य जैसा होता है।

95 परस्त्री या वेश्या सेवन करने वाला भगवान् के चरण स्पर्श के अयोग्य होता है।

96 **मैथुन से सामाजिक हानि-** स्त्री आसक्त व्यक्ति समाज की दृष्टि में अच्छा नहीं माना जाता है, राजा भी व्यसनी हो तो प्रजा उसे हटा देती है, वेश्या सेवी सातों व्यसन करता है एवं दुराचारी का समाज बहिष्कार करती है।

97 **आर्थिक हानि-** मैथुन से उत्पन्न बीमारी में पैसा बर्बाद होता है, शरीर में दुर्बलता के कारण व्यवसाय नहीं कर पाता, बच्चे भूखे मरते हैं, पैसों के अभाव में अच्छा खान, पान, दान, पहिनना आदि नहीं हो पाता है।

98 **माँ का कलेजा-** वेश्यागामी की परीक्षा लेने के लिए, एक लड़की ने कहा कि आप अपनी माँ का कलेजा ले आओ, तो मैं तुम्हे पति बना लूँगी, कामासक्त रात में माँ को मारकर कलेजा ले आता है और लड़की के पास जाता है, लड़की ने मनाकर दिया, और कहा ! जो अपनी माँ का नहीं हुआ, वह हमारा क्या होगा ?

99 **स्त्री के भाव-** मनुष्य के शरीर में जितने रोम हैं, स्त्रियों के मन में उतने विकारी भाव होते हैं, जैसे वायु, उल्का, जल के बुलबुले, विद्युत आदि ये पदार्थ एक स्थान में ज्यादा देर तक नहीं ठहरते हैं, वैसे ही स्त्रियाँ एक पुरूष में ज्यादा समय तक प्रीति नहीं करती हैं, परमाणु पकड़ना सम्भव है पर स्त्रियों के भावों को पकड़ना असम्भव होता है।

100 **माया का अजायब(चिड़िया) घर-** एक थानेदार एक स्त्री में आसक्त हो गया, अत्यधिक प्रेम करने लगा, उसका ट्रांसफर हो गया, तो उसने स्त्री से कहा ! तू हमारे साथ चल, उसने मना

कर दिया, थानेदार को मना करने का बड़ा खेद हुआ, एक महिला ने थानेदार को दुःखी देखकर, कारण पूँछा तो उसने अपनी प्रेमिका का हाल बता दिया, उस महिला ने थानेदार को परदे के भीतर खड़ा करके उस महिला से पूछा तूने अभी तक कितने लोगों से प्रेम किया है ? उसने लिस्ट बताई साठ-पैंसठ लोगों के नाम बताये, थानेदार का नाम नहीं आया, पूँछा तुम भूली तो नहीं हो ? चार-पाँच नाम फिर बताए तब भी नाम नही आया, पुनः पूँछा दो-तीन नाम बताये तब भी थानेदार का नाम नहीं आया, वह सब सुन रहा था, थानेदार को उससे विरक्ति हो गयी।

101 बाघ, सर्प, पिशाच आदि के साथ रहना श्रेष्ठ है पर स्त्रियों के साथ रहना श्रेष्ठ नहीं है।

102 निर्दयता, अनार्यता, मूर्खता, अतिचञ्चलता, वाचालता और कुशीलता इतने दोष प्राय स्त्रियों में स्वभाविक होते हैं।

103 **तिलोयपण्णत्ति-** सौधर्मेन्द्र विक्रिया से इक्यावन करोड़, बाईस लाख, अठ्ठासी हजार, तेरह देवाङ्गनाओं के साथ क्रीड़ा करता है, लोकपाल साढ़े तीन करोड़, प्रतीन्द्र, सामानिक, तथा त्रायस्त्रिंश, देव भी इन्हीं के समान देवाङ्गनाओं के साथ क्रीड़ा करते हैं, ये सभी देव देवाङ्गनाओं के साथ मनुष्यों के समान प्रवीचार करते हैं, फिर भी वासना शान्त नहीं होती है।

कुशील से बचने के उपाय-

1 **ब्रह्मचर्य व्रत की पाँच भावनायें-** 1.स्त्रियों में राग बढ़ाने वाली कथा सुनना, 2.स्त्रियों के अङ्गोपाङ्ग देखना, 3.पूर्व में भोगे हुए भोगों का स्मरण करना, 4.काम की उदीरणा करने वाले रसों का सेवन करना, 5.दूसरों को आकर्षित करने के लिए अपने शरीर को सजाना इन पाँचों का त्याग करना चाहिए।

2 युवा पीड़ी यदि ब्रह्मचर्य के स्वरूप को समझ लेगी तो जीवन में संयम और चेहरे पर तेज आ जायेगा।

3 राम के भाई भरत पूर्व भव में अचल चक्रवर्ती के पुत्र थे, अभिराम नाम था, तीन हजार रानियों के बीच रहकर चौसठ हजार वर्ष तक असिधारा ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया था।

4 **यह राग आग दहे सदा-** शक्कर के पहाड़ की चीटी ने नमक के पहाड़ की चीटी का निमन्त्रण किया, मुँह में नमक की डली दबाकर शक्कर के पहाड़ पर आई, इसलिए उसे शक्कर का आनन्द नहीं आ रहा था, इसी तरह वैराग्य में राग रूपी नमक हो तो वैराग्य का आनन्द नहीं आता है, ये विषय सम्बन्धी रागादि काले नाग की तरह हैं, जैसे कमरे में सर्प हो तो नींद नहीं

आती है, उसी तरह राग की आग दहे तो नींद नहीं आती है।

5 सुखद विवाह का रहस्य सही व्यक्ति पाने में नहीं, बल्कि खुद सही बन जाने में है।

6 हे मूढ़ ! यदि तूने नर जन्म पाया है, तो ऐसा काम कर जिससे काम-वासना हमेशा के लिए नष्ट हो जाय।

7 पेट और पाप से दुनिया परेशान है, हर वस्तु पर 'कर' है, पर पेट और पाप पर कोई 'कर' नहीं है, यदि 'कर' लगने लगे, तो स्वास्थ और अर्थ व्यवस्था स्वयं सुधर जायेगी।

8 शील की रक्षा हेतु प्राणों की आहूति करना पड़े तो भी कोई हानि नहीं है।

9 स्त्री का राग हटा, कि परिग्रह स्वयमेव घट जाता है।

10 हे भव्य ! स्त्री सुख में रागी मन रूपी मदोन्मत हाथी को वैराग्य भावना से रोककर रखो।

11 उसी पत्थर से चक्की बनती है, तो पेट भरता है, मूर्ति बनती है तो पूजा होती है और यदि संस्कारित न हो तो उसी पत्थर से सिर भी फूटता है, उसी प्रकार यदि आत्मा ब्रह्मचर्य से संस्कारित हो, तो पूज्य होती है, अन्यथा दुर्गति में भटकती है।

12 शरीर के चिकित्सक बहुत हैं पर आत्मा की चिकित्सा करने वाले दुर्लभ हैं।

13 कुत्ता हड्डी को चबाता है और सोचता है हड्डी से खून आ रहा है, उसी प्रकार अज्ञानी प्राणी समझता है, कि भोगों से आनन्द आ रहा है, पर आनन्द तो आत्मा का स्वभाव है जड़ का नहीं।

14 यदि मनुष्य दो साल पर्यन्त सादा भोजन और अल्प आहार करे तो उसकी कुबुद्धि नष्ट होकर एक विशेष प्रकार का तेज प्रकट होने लगेगा।

15 कुत्सित साहित्य, फ़िल्मी संसार और भड़कीले तथा अमर्यादित फैशन परिधान से बचना ब्रह्मचर्य के लिए अत्यावश्यक है।

16 विवाह केवल मनुष्यगति में असीमित इच्छाओं को एक पर केन्द्रित करने के लिए होता है।

17 अनावश्यक खान-पान से बचना एवं समय पर मल-मूत्र का विसर्जन करना ब्रह्मचर्य की बहुत बढ़ी शर्त है।

18 सद् गृहस्थ भूख को दूर करने के लिए भोजन और रोग को दूर करने के लिए दवा के समान विषय सेवन करते हैं।

19 **मत्तेभकुम्भदलने भुवि सन्ति शूराः, केचित् प्रचण्डमृगराज वधेऽपि दक्षाः।**
किन्तु ब्रवीमि बलिनां पुरतः प्रसह्य, कन्दर्पदर्पदलने विरलाः मनुष्याः।।

पृथ्वी पर कुछ लोग हाथी का गण्डस्थल विदीर्ण करने में समर्थ हैं, कुछ सिंह का वध करने में

भी समर्थ हैं, किन्तु मैं बलवानों के सामने कहता हूँ कि काम के मद का मर्दन करने वाले मनुष्य बिरले ही हैं।

20 **नाहं जानामि केयूरे, नाहं जानामि कुण्डले।**
नूपुरे तु अभिजानामि, नित्यं पादाभिवन्दनात्।।
सीता हरण के बाद रामचन्द्रजी लक्ष्मण से पूँछते हैं, क्या ये जमीन में पड़े हुए बाजूबन्द, कुण्डल आदि आभूषण सीता के हैं ? लक्ष्मण जी कहते है मैंने केवल नित्य चरणों का वन्दन किया है, इसलिए बिछिया मात्र पहचानता हूँ अन्य आभूषण नहीं, पहले के लोग कितनी मर्यादा पालते थे।

21 **जह णाम को वि पुरिसो, पर दव्व मिणन्ति जाणिदुं चयदि।**
तह सव्वे पर भावे, णाऊण विमुंचदे णाणी।।
जैसे लोक में कोई पुरुष पर वस्तु को 'यह पर वस्तु है' ऐसा जानकर छोड़ देता है, उसी प्रकार ज्ञानी पुरुष समस्त परद्रव्यों के भावों को परभाव जानकार छोड़ देता है।

22 **एदम्हि रदो णिच्चं, सन्तुट्ठो होदि णिच्चमेदम्हि।**
एदेण होदि तित्तो, होहदि तुह उत्तमं सोक्खं।।
हे श्रमण ! तुम इसी (ज्ञायक स्वरूप) में नित्य रमण करो, इसी में नित्य सन्तुष्ट रहो, इसी से तृप्ति होगी, इसी विधि से तुम्हें उत्तम सुख की प्राप्ति होगी।

23 **काजल की कोठरी में कैसो हु सयानो जाय-** उन जम्बूस्वामी का ध्यान करना चाहिये, जिनने माँ के आदेश से शादी की लेकिन सुहागरात की बात थी, तो एक तरफ से राग का जाल डाला जा रहा था, दूसरी तरफ से विराग की छुरी उस जाल को छेदती जा रही थी, विद्युच्चर चोर चोरी करने आया था, वह सङ्गोष्ठी सुनता रहा, सुबह जम्बूस्वामी के साथ दीक्षित हो गया, इसी तरह गजकुमार का भी विचार करना चाहिए।

24 एक पत्नि व्रत का पालन करने वाले सेठ सुदर्शन ने अपने मन को अडिग रखा, रानी सारी रात विषयों की मारी तड़पती रही, पुरोहिता, वेश्या आदि के अनेक उपसर्ग सहे, ब्रह्मचर्य का पालन किया और मुनि बनकर पटना गुलजार बाग से मोक्ष गये।

25 **देशभूषण कुलभूषण-** उस समय बच्चों की शिक्षा गुरुकुल में हुआ करती थी, पाँच वर्ष की उम्र में कुलभूषण देशभूषण राजपुत्रों के माता-पिता ने पुत्रों को गुरू के पास भेज दिया, विद्याध्ययन करके वापस आये, नगर प्रवेश के समय स्वागत हुआ, झरोखे में बैठी सुन्दर कन्या को देख कर शादी का भाव हुआ, एक दूसरे में द्वन्द हो गया, अन्त में मालूम हुआ ये उनकी ही

बहिन है, घर में प्रवेश किये विना दीक्षा ग्रहण कर ली, रामचन्द्र जी ने उपसर्ग निवारण किया, केवली हुये, दिव्यध्वनि खिरी, कुन्थलगिरी से मोक्ष को प्राप्त हुए थे।

26 **बुढ़िया को तो हमने वहीं छोड़ दिया**- एक बार ब्रह्मचारीजी यात्रा कर रहे थे, रास्ते में नदी पार करने लगे, तभी ब्रह्मचारीजी की दृष्टि एक बुढ़िया पर गयी जो असाहय थी, उसने कहा ! महात्माजी अपने साथ हमें भी नदी पार करा दो, नहीं तो रात भर यहीं रहना पड़ेगा, ब्रह्मचारीजी को दया आगयी, अपने कन्धे पर उसे बैठाकर नदी पार करा दिया, कुछ लोगों ने उनके गुरु से कहा, कि इन्होने स्त्री को छुआ है, ब्रह्मचारीजी ने कहा ! हम तो स्त्री को वहीं छोड़ आये, आप लोग तो यहाँ तक ले आये हैं।

27 **वेष भूषा**- इंस्पेक्टर की लड़की भड़कीले वस्त्रादि पहनकर निकल रही थी, एक लड़के ने छेड़ दिया, उसने अपने पिताजी को घटना की जानकारी दी, रिपोर्ट की गई। उस बच्चे को बन्दी बना लिया, केस चला, जज ने लड़के से पूँछा इसके साथ छेड़खानी की है? उसने कहा नहीं, यदि ये उसी वेषभूषा में आये तो मैं पहचान सकता हूँ, जज ने लड़की को उस दिन के वेष में बुलाया, लड़के ने कहा मैंने इसको वेश्या समझा था, इंस्पेक्टर शर्म से नतमस्तक हो गया, अतः हमारी वेषभूषा साधारण होना चाहिए।

28 **बनारसी साड़ी**- गणेश प्रसाद वर्णी जी के विद्यागुरू पण्डित ठाकुरदासजी की सर्विस बनारस में लग गयी थी, वे छः माह बाद जब घर आये, तो पत्नि के लिए पाँच रुपये की बनारसी साड़ी लेकर आये, जब पत्नि को दिखाई तो पण्डित जी ने सोचा कि पत्नि प्रसन्न होगी, लेकिन पत्नि उदासीन होकर कहती है कि जब मैं ये साधारण साड़ियाँ पहनती हूँ तब भी आप बनारस से यहाँ दौड़े आये, अब इस बनारसी साड़ी को पहनकर मैं किसको रिझाऊँ ? पण्डित जी चुप हो गये, उनकी पत्नी ने पाँच रुपये की साड़ी साढ़े चार रुपये में पड़ोसी को बेच दी, लेकिन उन्होंने वह भड़कीली साड़ी नहीं पहनी।

29 **पत्नि ने पति को पिताजी कहा**- पण्डित ठाकुरदास जी की पत्नि भोगों से उदासीन हो गयी, बार-बार कहती थी, कि अब ब्रह्मचर्य व्रत ले लेवें, लेकिन पण्डित जी टाल देते थे, एक दिन पण्डित जी की गोद में बैठकर बोलीं 'पिताजी अब मुझे क्षमा कर दो, मैं व्रत पालना चाहती हूँ', पण्डित जी ने आँखों में आँसु भरकर कहा बेटी आज से अपन अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करेंगे, तुमने मुझे वह शिक्षा दे दी जो अनेक शास्त्र भी नहीं दे सके।

30 **जब राम बनता हूँ**- रावण और मन्दोदरी सीता को रिझाने में असफल रहे तो मन्दोदरी ने कहा

तुम राम का रूप क्यों नहीं बना लेते, तब रावण ने कहा जब मैं राम का रूप बनाता हूँ तो सीता के साथ भोग भोगने का भाव समाप्त हो जाता है, वेश मात्र से भाव परिवर्तित हो जाते हैं।

31 **मैं आपका पुत्र हूँ-** पन्ना नरेश राजा छत्रसाल से एकयुवती प्रभावित होकर बोली महाराज आप दुखियों के दुःख दूर करते हैं, मेरे कोई सन्तान नहीं है, आप जैसा पुत्र चाहिए, राजा ने कहा इसके लिए पाप करने की क्या जरूरत है ? मैं ही आपका पुत्र बन जाता हूँ चरणों में बैठ कर कहते हैं माँ आपका पुत्र आपकी जीवन भर सेवा करेगा, बोलिए क्या आज्ञा है ? नारी अवाक् रह गयी।

32 **सात दिन का जीवन-** राजा ने साधु से पूँछा कि आप स्त्रियों के बीच में रहते हो, मालपुआ खाते हो, इससे तुम्हारा मन चञ्चल नहीं होता है ? मुनि ने कहा इसका जबाव बाद में देंगे, कुछ समय बाद राजा को बुलाया, कहा आपका जीवन सात दिन का है, इन दिनों में खूब भोग भोग लो अन्यथा भोग कहाँ मिलेंगे, राजा घर गया चिन्ता में भोजन भी भूल गया, सात वे दिन सब लोग रोने लगे, लोगों का तांता लग गया, राजा मरा नहीं, आठवे दिन मुनि के पास गया, साधु ने कहा कि इन दिनों खूब भोग भोगे होंगे ?राजा ने कहा भोग नहीं भोगे रोते रहे, साधू ने कहा इसी प्रकार मृत्यु पर दृष्टि होने पर भोग रुचते नहीं हैं।

33 **भीष्म का ब्रह्मचर्य-** भीष्म पिता ने पिता की प्रतिज्ञा में हानि न हो इसलिये पिता को धीवर की पुत्री में आसक्त जान आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन किया था।

34 **आत्मा की बात दुर्लभ-** भोगों की बातों को सिखाने वाले जगह-जगह टी.वी., कम्प्यूटर आदि साधन मिल जाते हैं, किन्तु आत्मा की बात सिखाने वाले दुर्लभ हैं, अतः आत्मा की बात सिखाने वालों की सङ्गति करना चाहिए।

35 धोबी के यहाँ से वस्त्र बदले हुए जानकर तुरन्त छोड़ देता है, उसी प्रकार ज्ञानी काम क्रोधादि को विभाव जानकार छोड़ देता है।

36 **ज्ञानी हँसता है-** मिट्टी का खिलौना फूटने पर बच्चा रोता है, माँ-बाप हँसते हैं, उसी प्रकार सांसारिक वस्तु की हानि होने पर अज्ञानी रोता है, और ज्ञानी पाप का उदय समझकर कर्म निर्ज़रा के लिए हँसता है।

37 **विवाह बाँध है-** बाँध के चारों ओर सुदृढ़ दीवाल बनाई जाती है, और उसमें आपात कालीन गेट होता है उसी प्रकार विवाह भी चारो ओर से वासना रूपी जल को रोकने के लिये बाँध है, उसमें स्वदार सन्तोष रूप एक आपातकालीन गेट है, विवाह वासना का निमन्त्रण नहीं

नियन्त्रण है।

38 आज कल नव दम्पति के विवाह के कुछ समय पश्चात् ही विवाद पैदा होने की नौबत आने लगी है। इस विवाद की परिणति कभी-कभी पति या पत्नि द्वारा आत्महत्या करने में होती है, इसे बचाया जा सकता है यदि लड़के और लड़की शादी के पूर्व जरूरी बातों पर चर्चा कर लें।

★ **लड़की की उम्र**- लड़की की उम्र प्रायः कम बताई जाती है, उम्र सही बताइये, आपके गुणों को देखते हुए उम्र का थोड़ा बहुत अन्तर लड़का स्वीकार कर लेगा।

★ **शैक्षणिक योग्यता**- अभिभावक प्रायः कहते हुए पाये जाते हैं साहब हमारा पुत्र या पुत्री ग्रेजुएट है बी.ए. और बी.ई., दोनों ग्रेजुएट हैं पर दोनों में काफी अन्तर है, अतः शिक्षा की सही-सही जानकारी देना आवश्यक है।

★ **रुचियाँ व अन्य योग्यताएँ**- सिलाई, कढ़ाई, जैसी रूचियां प्रायः बनावटी या थोपी हुई होती हैं, इस विषय में खुलकर बात करें, किसी विशिष्ट पाठ्य क्रम योग्यता में आपने अच्छा स्थान बनाया हो तो स्पष्ट बता दें कि आप विवाहोपरान्त सम्बन्धित गतिविधियों से जुड़े रहेंगे या नहीं?

★ **आय**- प्रायः अभिभावक होने वाले दामाद की आय ऐसे बताते हैं, कि साहब बिटिया 'रानी' बनकर रहेगी, मुख्य व्यवसाय के अलावा दूनी ऊपरी कमाई हो जाती है, अतः वास्तविक आय के आधार पर ही विवाह का निर्णय कीजिए।

★ **शारीरिक स्वास्थ्य**- शारीरिक स्वास्थ्य चश्मादि लगता हो तो छिपायें न।

-अपने व्यक्तित्व के चुनन्दा सकारात्मक व नकारात्मक पहलुओं से लड़के को अवगत करा दें व उससे भी पूँछ लें।

★ **अपने खानपान**, मांसाहार-शाकाहार की जानकारी कर लें, विवाहोपरान्त यह भोजन बनाना खाना पसन्द करेंगे या नहीं ?

-अभिभावक आज कल लड़की के दिमाग में भर देते हैं कि एकाकी परिवार ही सर्वोत्तम है, तुम्हारा सम्बन्ध संयुक्त परिवार में जुड़े तो जाकर तोड़ देना, यही तुम्हारे हित में होगा, इसे भी पूँछ लें।

इति ब्रह्मचर्यधर्म समाप्त

★★★

"क्षमावाणी-जन जन की कल्याणी"

1 क्षमा का अर्थ है भूलों पर ध्यान न देना।

2 क्षमा का अर्थ है गुणों की ओर दृष्टि रखना एवं सबकी आत्मा को समान समझना।

3 भटके हुए को शाम तक इष्टमार्ग पर लौटने का अवसर ही क्षमा है।

4 अन्तः करण की उदारता का नाम क्षमा है।

5 **सामाजिक क्षमा**- समाज के दबाव वश अपराधी को क्षमा करना।

6 **पारिवारिक क्षमा**- परिवार में सन्तुलन और शान्ति बनाने के लिए अपराध को क्षमा करना।

7 **कौटुम्बिक क्षमा**- पारिवारिक सम्बन्ध बिगड़ न जाए, अतः सम्बन्ध कायम रखने के लिए क्षमा करना।

8 **राष्ट्रीय क्षमा**- देश के उत्थान के लिए महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों के अपराध क्षमा करना।

9 **व्यवहारिक क्षमा**- लोक व्यवहार के लिए क्षमा करना, जैसे किसी ने आपको धक्का मार दिया, आपने कहा दिखता नहीं, उसने क्षमा माँग ली, आप चुप हो गये, यह व्यवहारिक क्षमा है।

10 किसी ने निमन्त्रण दिया आप नही पहुँचे, वह मिला थोड़ा क्रोध का अभिनय किया, क्षमा मांग ली।

11 धर्म किसी व्यक्ति विशेष का नहीं होता, जो पाले उसका होता है।

12 आत्मा आँखों से दिखाई नहीं देती, अनुभव से जानी जाती है, जैसे हवा दिखाई नहीं देती, पर अनुभव से जानी जाती है।

13 **खम्मामि सव्व जीवाणं सव्वे जीवा खमन्तु मे।**
मैत्ती मे सव्वभूदेषु, वैरं मज्झं ण केणवि।।
मैं सब जीवों को क्षमा करता हूँ, सभी जीव मुझे क्षमा करें, मेरी सभी से मित्रता है किसी से भी बैर नहीं है।

क्षमावाणी-हृदयग्राही कहानी-

1 **अन्धे के हाथ में लेम्प**- किसी ने अन्धे को धक्का मार दिया, उसका घड़ा फूट गया, फिर भी उसी को डाँटते हैं, क्यों अन्धे हो दिखता नहीं ? अन्धे ने जबाब दिया जी नहीं दिखता, दूसरे दिन अन्धा हाथ में लेम्प लेकर पानी भरने जा रहा था, वही व्यक्ति उसको फिर मिला, पूछा ! आप कल कह रहे थे, हम अन्धे हैं फिर आपने लेम्प क्यों ले रखा है ? उसने जबाव दिया आप जैसे

आँखों वालों को राह दिखाने के लिये, सज्जन पुरूषों का कितना भी नुकसान हो जाये वे क्रोधित नहीं होते हैं।

2 बेटे ने पिता जी से पूँछा, आज क्या है? पिताजी बोले क्षमावाणी है, पिता जी यह क्या होता है ? बेटा ! जो क्रोध करता है, वह नरक जाता है। बेटे ने पापा की जेब से चुपके से पाँच रूपये निकाल लिये। पिता क्रोधित होकर पूँछने लगे, किसने निकाले ? बेटा ने कहा पापा आपकी क्षमावाणी बड़ी सस्ती है, पाँच रुपये में बिक गयी। ''हम को सीख लेना चाहिए कि पैसों की नहीं धर्म की कीमत है।''

3 **राजा मधु की क्षमा-** शत्रुघ्न को मथुरा का राज लेने के लिये राजामधु से घमासान युद्ध करना पड़ा, जब मधु का शरीर वाणों से जर-जर हो गया, तो हाथी पर बैठे-बैठे सब परिग्रह का त्याग कर मुनि बन गए, शत्रुघ्न को मालूम हुआ तो क्षमा माँगी, नमस्कार किया, राजा ने कृतज्ञता ज्ञापित की कि आपने बहुत उपकार किया कल्याण का अवसर दिया।

4 **नाम अशान्ति सागर-** एक व्यक्ति अपनी स्त्री से बार-बार कहता है मैं दीक्षा ले लूँगा, लेकिन लोग उसे लौटा लाते, इस बार किसी ने नहीं रोका, दीक्षा ले ली, नाम शान्तिसागर हो गया, किसी लड़के ने नाम पूँछा, बता दिया, दो-तीन बार पूँछने आया तो गुस्से में बोले अब नहीं आना, नहीं तो पीटूँगा, उसने नाम बदल दिया शान्ति नहीं अशान्ति सागर हैं आप।

5 एक सज्जन ने स्वाध्याय का नियम ले लिया, दीवाली की सफाई में चौका, लेम्प, शास्त्र कहीं रख कर भूल गया, नहीं मिलने पर, डण्डा उठाकर सबको पीटना शुरू कर दिया, अतः स्वाध्याय ऐसा करें कि शास्त्र कहीं शस्त्र न बनें।

6 **बज्रकर्ण का नियम-** एक बार वज्रकर्ण ने मुनि महाराज से नियम लिया कि मैं देव-शास्त्र-गुरु के अलावा किसी को नमस्कार नहीं करूँगा, जब वह अपने स्वामी सिंहोदर के सामने जाता था तो अपनी अङ्गूठी में मुनिसुव्रतनाथ भगवान् के चित्र को नमस्कार करता था, एक बार किसी ने सिंहोदर राजा से शिकायत कर दी, कि वज्रकर्ण आपको नमस्कार नहीं करता है, तो सिंहोदर ने आदेश दे दिया कि ! वज्रकर्ण का सर्वस्व हरण करके बन्दी बना लो, इसी समय राम-लक्ष्मण-सीता वहाँ पहुँचते हैं, लक्ष्मण को भोजन के लिए आया जानकर वज्रकर्ण ने तीनों को स्वादिष्ट भोजन कराया, रामचन्द्रजी लक्ष्मण से कहते हैं !'ऐसा भोजन तो कोई अपने जमाई को भी नहीं करायेगा', अतः इस धर्मात्मा की विपत्ति दूर करना चाहिए, लक्ष्मण जाकर सिंहोदर को बन्दी बना लाते हैं, वज्रकर्ण से पूँछते हैं कि इसको क्या सजा दी जाय ? तब

वज्रकर्ण कहता है की ये हमारे स्वामी हैं, इनको क्षमा कर दीजिये, सिंहोदर ने क्षमा से प्रभावित होकर आधा राज्य वज्रकर्ण को दे दिया।

7 बाली ने रावण को गृहस्थ अवस्था में क्षमा किया और मुनि अवस्था में कैलाश पर्वत पर भी क्षमा किया था।

8 **धवल सेठ** ने श्रीपाल जी को समुद्र में गिरा दिया, उनकी पत्नी रयणमञ्जूषा से बलात्कार करना चाहा, श्रीपाल जी को भाण्ड़ सिद्ध करने की भी कोशिश की, फाँसी लगने की नौवत आ गयी, इसके बाद भी राजा से कहा कि ये हमारे धर्म पिता हैं, इन्हें फाँसी पर न चढ़ाया जाये और धर्मात्मा श्रीपाल जी ने पाँच सौ लोगों के साथ धवलसेठ का निमन्त्रण किया, अपने हाथ से पङ्खा झुलाते हुए खीर-पुड़ी का भोजन कराने लगे, सेठ को अत्यधिक पश्चात्ताप व आत्मग्लानी हुयी और हृदयाघात से मरण को प्राप्त हो गया था।

9 दस लक्षण पर्व के तत्काल बाद मनाया जाने वाला क्षमावाणी पर्व एक ऐसा महापर्व है जिसमें हम बैरभाव को छोड़कर एक दूसरे से क्षमा याचना करते हैं, इसे क्षमापना भी कहते हैं, मन के मैल को धो डालने वाला यह पर्व आज मात्र शिष्टाचार बन कर रह गया है, यह बात नहीं कि इसे हम बड़े उत्साह से न मनाते हों, आज न हम इससे उदास हुये हैं तथा मात्र उत्साह से ही नही, अति उत्साह से मनाते हैं, इस अवसर पर सारे भारत वर्ष में लाखों रूपयों के कार्ड छपाये जाते हैं, उन्हें चित्रित सुन्दर लिफाफों में रखकर हम इष्ट मित्रों को भेजते हैं, लोगों से गले लगकर मिलते हैं, क्षमा याचना भी करते हैं, पर यह सब यन्त्रवत् चलता है, हमारे चेहरे पर मुस्कान भी होती है पर बनावटी, हमारी असलियत न मालूम कहाँ खो गयी है ?

विमान परिचारिकाओं की तरह हम भी नकली मुस्कुराने में परिपक्व हो गये हैं, हम माँफी माँगते हैं पर उनसे नहीं जिनसे हमें माँगना चाहिए, जिनके प्रति हमने अपराध किये हैं, हमें पता भी है उनका, अनजाने में ही नहीं जान बूझकर, फिर भी हम उनसे क्षमा नहीं माँगते हैं, हम क्षमावाणी कार्ड भी भेजते हैं, पर उन्हें नहीं जिन्हे भेजना चाहिए, चुन-चुनकर उन्हें भेजतें हैं, जिनके प्रति न तो हमने कोई अपराध किये हैं और न जिन्होंने हमारे प्रति कोई अपराध किया है, आज क्षमा भी उन्हीं से माँगी जाती है, जिससे हमारे मित्रता के सम्बन्ध हैं, जिनके प्रति अपराध बोध भी हमें कभी नहीं हुआ है, बतायें जरा ! वास्तविक शत्रुओं से कौन क्षमा माँगता है ? उन्हें कौन क्षमावाणी कार्ड भेजते हैं ? क्षमा करने-कराने के वास्तविक अधिकारी तो वो ही हैं, पर उन्हें कौन पूँछता है, बड़े कहलाने वाले बहुधन्धी लोगों की स्थिति तो और भी विचित्र हो गयी है, उनके यहाँ एक लिस्ट तैयार रहती है, जिसके

अनुसार शादी के निमन्त्रण कार्ड भेजे जाते हैं, उसी लिस्ट के अनुसार कर्मचारी गण क्षमावाणी का कार्ड भी भेज दिया करते हैं, भेजने वालों को पता ही नहीं रहता कि हमने किस-किस से क्षमा याचना की है, यही हाल उनका भी रहता है जिनके पास वे कार्ड पहुँचते हैं, उनके कर्मचारी प्राप्त कर लेते हैं, यदि कभी समय हुआ तो वे एक निगाह डाल लेते हैं कि किन-किन के क्षमावाणी कार्ड आये हैं, उनमें क्या-क्या लिखा है यह पड़ने का प्रयत्न भी नहीं करते, करें भी तो क्यों ? क्या कार्ड डालने वालों को भी पता है कि उसमें क्या लिखा है ? क्या उसने भी कार्ड पढ़ा है ? लिखने की बात बहुत दूर है, बाजार से बना बनाया ड्राफ्ट और छपा-छपाया कार्ड लाया गया है, पते अवश्य लिखने पढ़े हैं, यदि वे भी किसी प्रकार से छपे-छपाये मिल जाते तो उन्हें भी लिखने का कष्ट कौन करता, कदाचित् प्रेस की गलती से गालियाँ भी छप जावें तो भी कोई चिन्ता की बात नहीं है, चिन्ता तो तब हो जब उसे कोई पढ़े, सब उसका कागज, प्रिंटिङ्ग, गेटअप ही देखेंगे, फिर चिन्ता किस बात की करें, करें भी क्या ? आज का आदमी इतना व्यस्त हो गया है कि यह सब करने का समय ही कहाँ है, स्वयं पत्र लिखें भी तो कितनों को, व्यवहार भी तो इतना बड़ गया है कि जिसका कोई हिसाब नहीं, बस सब कुछ यूँ ही चल रहा है, क्षमा याचना जो कि बिल्कुल व्यक्तिगत चीज थी, वह आज बजारू बन गयी है, क्षमा याचना एक महान कार्य है इतना पवित्र धर्म है कि जो जीव का जीवन बदल सकता है, सही रूप से क्षमा माँगने और करने वाले का जीवन बदल जाता है, न मालूम आज का मनुष्य कैसा चिकना घड़ा हो गया है, कि इस पर पानी ठहरता ही नहीं, इसकी काली चादर पर दूसरा रङ्ग चढ़ता ही नहीं, बड़े-बड़े महापर्व आते हैं, बड़े-बड़े महान सन्त भी आते हैं और वे भी चले जाते हैं, उनका इस पर कोई असर नहीं पड़ता, यह बराबर अपनी जगह जमा रहता है, इसने बीसों क्षमावाणी मना डाली फिर भी अभी बीस-बीस वर्ष पुरानी शत्रुता वैसी की वैसी कायम है, धन्य है इसकी वीरता को, कहता है '**क्षमा वीरस्य भूषणम्**' अभी भी ताल ठोक कर लड़ने के लिए तैयार है, क्षमा माँगते-माँगते लड़ सकता है, क्षमा नहीं माँगने पर भी लड़ सकता है, बलात् क्षमा माँगने को बाध्य भी कर सकता है, इसमें न मालूम कैसा विचित्र सामर्थ्य पैदा हो गया है कि क्षमा माँगकर भी अकड़ा रह सकता है, माफ करके भी माफ़ नहीं कर सकता है, कभी-कभी तो माफी भी अकड़कर माँगता है और माफी माँगने का रोब भी दिखाता है, इस तरह बात करता है कि जैसे उसने माफी माँगकर बड़ा भारी अहसान किया है, उस अहसान का आपको अहसानमन्द होना चाहिए, जिनसे झगड़ा हुआ हो, एक तो हम लोग उनसे क्षमा माँगते नही, कदाचित् हमारे इष्ट मित्र उससे सद्भाव बनाने के लिए क्षमा माँगने या क्षमा करने की प्रेरणा देते हैं तो हम अनेक शर्तें रख देते हैं, कहते हैं उससे भी तो पूँछो कि वह क्षमा माँगने या क्षमा करने तैयार है या नहीं ? यदि

वह भी तैयार हो जाता है तो फिर इस बात पर बात अटक जाती है कि पहले क्षमा कौन माँगे ? इसका भी कोई रास्ता निकाल लिया जाय तो फिर इस बात पर बात अटक जाती है कि क्षमा मौखिक माँगी जाय या लिखित ? यह मसला भी किसी प्रकार हल कर लिया जावे तो फिर क्षमा माँगने की भाषा तय करना कोई आसान काम नहीं है, क्षमा माँगने वाला इस भाषा में क्षमा माँगेगा कि मैंने कोई गलती तो की नहीं है, फिर भी आप लोग नहीं मानते हैं तो मैं क्षमा माँगने तैयार हूँ 'लेकिन' कहकर कोई शर्त जोड़ देता है, इस पर क्षमा दान करने वाला अकड़ जाता है, कहता है पहले अपराध स्वीकार करो बाद में माफ करूँगा, इस प्रकार लोग कभी न किये गये अपराध के लिए क्षमा माँगेंगे और क्षमा करने वाला अस्वीकृत अपराध को क्षमा करने के लिए तैयार न होगा, यदि कदाचित् भाषा के महापण्डित मिल जुल कर कोई ऐसा ड्राफ्ट बना लावें कि सर्प भी भाग जाय और लाठी भी न टूटे तो फिर इस बात पर झगड़ा हो सकता है कि क्षमा आदान-प्रदान का स्थान कौन सा हो ? इन सब बातों को निपटाकर यदि क्षमावाणी समारोह सानन्द सम्पन्न हो भी जाय तो भी क्या भरोसा कि यह क्षमा भाव कब तक कायम रहेगा ? कायम रहने का प्रश्न ही कहाँ उठता है, जब हृदय में क्षमा भाव आया ही नहीं, सब कुछ कागज में या वाणी में ही रह गया है, इस प्रकार की क्षमावाणी क्या निहाल करेगी ? 'क्षमा करना-क्षमा करना' रटते लोग पग-पग पर मिल जायेगें, किन्तु हृदय से क्षमा माँगने वाले एवं करने वालों के दर्शन आज दुर्लभ हैं, क्षमावाणी का रूप तो यह होना चाहिए कि अपनी गलतियों का उल्लेख करते हुए विनय पूर्वक आमने-सामने या पत्र द्वारा शुद्ध हृदय से क्षमा याचना करें एवं पवित्र भाव से दूसरों को क्षमा करें अर्थात् क्षमा भाव धारण करें, क्षमावाणी का वास्तविक भाव तो यह था कि दश धर्मो की आराधना से हमारा हृदय क्षमा भाव से आकण्ठ आपूरित हो उठना चाहिए और जिस प्रकार घड़ा जब आकण्ठ आपूरित हो जाता है तो फिर छलकने लगता है, उसी प्रकार जब हमारा हृदय घट क्षमा भावादि जल से आपूरित हो जाता है तब वाणी में भी छलकने लगता है, तब वस्तुतः क्षमावाणी होती है, पर आज हमारी क्षमा याचना कृत्रिम हो गयी है, उसमें वह वास्तविकता नहीं रह गयी है जो होना चाहिए, ऊपर से हम बड़े मिष्टवादी हो गये हैं, हृदय में द्वेष कायम रखकर छल से ऊपर से क्षमा याचना करने लगे हैं, मायावी के क्रोध, मान वैसे प्रगट नहीं होते जैसे सरल स्वभावी के हो जाते है, प्रकट होने पर उसका बहिष्कार परिष्कार सम्भव है, पर अप्रकट की कौन जाने ? अतःक्षमा धारक को शान्त और निरभिमानी होने के साथ-साथ सरल भी होना चाहिए, कुटिल व्यक्ति क्रोध-मान को छुपा सकता है पर अभाव करना उसके वश की बात नहीं है, क्रोध-मान को हटाना क्षमा है दबाना नहीं, क्षमा याचना मान कषाय के अभाव में होने वाली प्रवृत्ति है, अतः इसे मार्दव वाणी क्यों नहीं कहा गया, पर सभी

क्षमावाणी ही कहते हैं, एक प्रश्न यह भी हो सकता है कि दशलक्षण पर्व के बाद मनाया जाने वाला यह पर्व प्रति वर्ष क्षमा दिवस के रूप में ही क्यों मनाया जाता है ? एक वर्ष क्षमा दिवस, दूसरे वर्ष मार्दव दिवस आदि के रूप में क्यों नहीं मनाया जाता ? क्योंकि धर्म तो दशों ही एक समान हैं, क्षमा को ही इतना महत्त्व क्यों दिया गया है ? भाई यह प्रश्न तो तब उठाया जा सकता है जबकि क्षमावाणी का अर्थ मात्र क्षमावाणी हो, जबकि उसका अर्थ तो क्षमादिवाणी है, दस धर्मों से उत्पन्न समग्र पवित्र भाव का वाणी में प्रकटी करण ही वास्तविक क्षमावाणी है, जब तक भूमिकानुसार दसों धर्म परिणति में नहीं प्रकटेंगे तब तक क्षमावाणी का वास्तविक लाभ हमें नहीं होगा, दसलक्षण पर्व के समान यह भी वर्ष में तीन बार मनाया जाना चाहिए, वर्ष में तीन बार क्षमावाणी आने का कारण भी यह है कि अप्रत्याख्यान कषाय का संस्कार छः माह से अधिक नहीं रहता, यदि अधिक रहे तो अनन्तानुबन्धी है, जो अनन्त संसार का कारण है, अतःयदि क्षमावाणी छः माह के भीतर ही क्रोध मानादि कषाय भावों को धो डाले तो बहुत अच्छा है, यहाँ एक प्रश्न सम्भव है कि जब कोई जीव हमसे क्षमा माँगे ही नहीं, तो हम उसे कैसे क्षमा करें तथा हम उससे क्या क्षमा माँगे ? जो हमारी बात ही नहीं समझ सकता वह हमें क्या क्षमा करेगा, कैसे क्षमा करेगा ? इस प्रकार एकेन्द्रियादि जीवों से क्षमा माँगना और उन्हें क्षमा करना कैसे सम्भव है ? क्षमा याचना या क्षमा करना दो प्राणियों की सम्मिलित क्रिया नहीं है, यह एकदम व्यक्तिगत चीज है, स्वाधीन क्रिया है, क्षमावाणी एक धार्मिक परिणति है, आध्यात्मिक क्रिया है, क्षमावाणी के लिए पर के सहयोग या स्वीकृति की आवश्यकता नहीं होती, यदि हम क्षमा भाव धारण करना चाहते हैं, तो उसके लिए कोई आवश्यक नहीं कि जब कोई हमसे क्षमा याचना करे तभी हम क्षमा कर सकें, यदि ऐसा होता तो फिर क्षमा धारण करना भी पराधीन हो जाता, यदि किसी ने हमसे क्षमा याचना नहीं की, तो उसने स्वयं की मान कषाय का त्याग नहीं किया और यदि हमने उससे क्षमा याचना किये विना ही क्षमा कर दिया तो हमने क्रोध का त्याग कर उसका नहीं अपना ही भला किया है, इसी प्रकार हमारे द्वारा क्षमा याचना करने पर भी यदि कोई नहीं करता है, तो क्रोध का त्याग नहीं करने से उसका ही बुरा होगा, हमने तो क्षमा याचना द्वारा मान का त्याग कर अपने में मार्दव धर्म प्रकट कर ही लिया, उसके द्वारा क्षमा नहीं करने से, क्षमा माँगने से होने वाले लाभ से वञ्चित नहीं रह सकते, यही कारण है कि जैनाचार्यों ने अन्य जीवों द्वारा क्षमा याचना नहीं करने पर भी अपनी ओर से क्षमा करके तथा कोई क्षमा करेगा या नहीं इस विकल्प के विना ही सबसे क्षमा याचना करके अपने उत्तम क्षमा मार्दव आदि धर्मों को धारण किया, इस प्रकार उनकी दृष्टि में कोई शत्रु नहीं रहा और वे भी किसी के शत्रु नहीं रहे, जगत उन्हें शत्रु माने तो मानो, दूसरे की मान्यता पर किसी का क्या अधिकार है ?

क्षमावाणी का सही स्वरूप नहीं समझ पाने के कारण उसके प्रस्तुतिकरण में भी अनेक विकृतियाँ उत्पन्न हो गयी हैं, एक चित्र प्रतियोगिता में चित्र के माध्यम से क्षमावाणी को प्रस्तुत करना था, सर्वोत्तम पुरस्कार प्राप्त चित्र का जब पौराणिक महापुरूष द्वारा एक अपराधी का वध चित्रित था, उक्त महापुरूष ने सौ अपराध क्षमाकर दिये पर जब उसने एक सौ एकवां अपराध किया तो उसका सिर धड़ से अलग कर दिया, क्षमा के चित्रण में हत्या के प्रदर्शन का भी औचित्य सिद्ध करते हुए कहा जा रहा था, यदि वे एक सौ एक वे अपराध के बाद भी उसको नहीं मारते तो फिर वे कायर समझे जाते, कायर की क्षमा कोई क्षमा नहीं है, क्योंकि क्षमा तो वीर का आभूषण है, सौ अपराधों को क्षमा करने से तो क्षमा सिद्ध हुयी और मार डालने से वीरता, इस प्रकार यह क्षमावीरस्य भूषणं का सर्वोत्कृष्ट प्रस्तुतिकरण है, यही कारण कि इन्हें क्षमावाणी के अवसर पर तदर्थ प्रथम पुरस्कार दिया जा रहा है, क्षमा के साथ हिंसा की सङ्गति ही नहीं है, पौराणिक आख्यान को क्षमा का रूप देने वालों ने इस तथ्य की ओर ध्यान नहीं दिया कि उनकी क्षमा क्रोधादि कषायों के अभाव रूप नहीं थी, वरन वे सौ अपराधों को क्षमा करने के लिए वचनबद्ध थे, उनकी वचन पालन की दृढ़ता और तत-सम्बन्धी धैर्य तो प्रशंसनीय है, परन्तु उसे उत्तम क्षमा का प्रतीक नहीं माना जा सकता, दूसरी बात यह भी तो है कि क्या सच्चे क्षमा धारक की दृष्टि में कोई दूसरा अपराध भी हो सकता है ? जब उसने प्रथम अपराध क्षमा ही कर दिया तब अगला अपराध दूसरा कैसे हो सकता है ? यदि उसे दूसरा कहें तो पहले को वह भूला ही नहीं, जब भूला नहीं तो क्षमा ही क्या किया ? जिस अपराध के लिए क्षमा याचना की गयी यदि वही अपराध हम निरन्तर दोहराते रहे तो उस क्षमा याचना से भी क्या लाभ, अपराध दुबारा न हो इसके लिए निरन्तर प्रयत्न शील रहना चाहिए, अन्यथा यह सब गजस्नानवत् निष्फल ही रहेगा, क्षमा याचना और क्षमा दान ये दोनों वृत्तियाँ हृदय को हल्का करने वाली उदात्त वृत्तियाँ हैं, बैर भाव को मिटा कर परम शान्ति प्रदान करने वाली हैं अर्थात् अन्तर में प्रकट शान्ति का प्रति फलन है, सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और विशेष ध्यान देने की बात यह है कि इस अज्ञानी आत्मा ने दूसरों से तो अनेक बार क्षमा याचना की है, दूसरों को भी अनेकों बार क्षमा प्रदान की है, पर आज तक न स्वयं से क्षमा याचना की है और न स्वयं को विषय-कषाय से बचाकर क्षमा ही किया है, इसीलिए अनन्तदु:खी है।

इति दसधर्म सोपान समाप्त

★★★

"निश्चय-व्यवहार की महिमा"

1 **जे णय दिट्ठि विहीणा, तेसिं ण होई वत्थु रूव उवलद्धि।**
वत्थु सहाव विहीणा सम्माइट्ठि कहा हुंति।। (लघुनयचक्र.)
जो नयदृष्टि से विहीन है उन्हें वस्तु स्वरूप की उपलब्धि नहीं होती और वस्तुस्वभाव से विहीन सम्यग्दृष्टि ही कहाँ होता है ?

2 **जई जिणमयं पवज्जह, ता मा ववहार निश्चये मुयह।**
एकेण विणा छिज्जइ, तित्थं अण्णेण पुण तच्चं।।
यदि जैन धर्म का प्रवर्तन चाहते हो तो निश्चय और व्यवहार दोनों को नहीं छोड़ो, यदि व्यवहार को छोड़ोगे तो तीर्थ का उच्छेद हो जाएगा और निश्चय को छोड़ोगे तो आत्म तत्त्व की उपलब्धि नहीं होगी।

3 **एकेनाकर्षन्ती, श्लथयन्ति वस्तु तत्त्वमितरेण।**
अन्तेन जयति जैनी, नीतिर्मन्थाननेत्रमिवगोपी।।
जिस प्रकार दही को बिलोवने वाली ग्वालिनी मथानी की रस्सी को एक हाथ से खींचती है, दूसरे से ढीला कर देती है और दोनों की क्रिया से दही से मक्खन बनाने की सिद्धि करती है, उसी प्रकार जिनवाणी रूप ग्वालिनी सम्यग्दर्शन से तत्त्वस्वरूप को अपनी ओर खींचती है, सम्यग्ज्ञान से पदार्थ के भाव को ग्रहण करती है और दर्शन ज्ञान की आचरण रूप क्रिया से अर्थात् सम्यक्चारित्र से परमात्म पद प्राप्ति की सिद्धि करती है, द्रव्यार्थिक व पर्यायार्थिक दोनों नयों से वस्तुस्वरुप की सिद्धि करती है।

4 उपचरित असद्भूत व्यवहार नय से एक निगोदया जीव की दो सौ पचास आवलि प्रमाण आयु होती है, पौन सेकेण्ड में चार हजार चार सौ सैतालिस आवलियाँ होती हैं, पोन सेकेन्ड का एक श्वाँस होता है, उसमें निगोदिया जीव अट्ठारह बार जन्म और मरण करता है, स्वस्थ पुरूष की एक मिनिट में अठत्तर बार श्वाँस चलती है।

5 निश्चय-व्यवहार दोनों पक्के मित्र हैं लेकिन कार्य के समय दोनों शत्रु हैं, जैसे दो मित्र शतरञ्ज खेलते हैं, खेल के समय दोनों शत्रु हैं, शेष समय मित्र हैं।

6 मञ्जिल पाने के लिये ट्रेन को पकड़ना भी पड़ेगा और छोड़ना भी पड़ेगा, उसी तरह मोक्ष को पाने के लिए व्यवहार को पकड़ना भी पड़ेगा और छोड़ना भी पड़ेगा।

7 नाव से नदी पार होते हैं, नाव में बैठने से कि नाव को छोड़ने से ? यदि छोड़ते हैं तो बीच में छोड़

दें तो भी नदी पार नहीं होगी, जब छोड़ना है तो बैठना क्यों ? बैठना भी पड़ेगा और उस पार पहुँचने पर छोड़ना भी पड़ेगा।

8 **निश्चय व्यवहार शरण**- अरहन्तादि व्यवहार शरण हैं आत्मा निश्चय शरण है, जैसे लड़की को पिता का घर व्यवहार शरण होता है, पति का घर निश्चय शरण होता है।

9 व्यवहार की महिमा बोलने में है, और निश्चय की महिमा मौन में हैं।

10 निश्चय मोक्षमार्ग के पिछत्तर पर्यायवाची नाम है। (बृ.द्र.सं. पृ.255)

11 जब तक स्वरूप की प्राप्ति न हो तब तक दोनों नयों को पकड़कर रखना चाहिए।

12 व्यक्ति अपने घर दोनों पैरों से जाता है उसी प्रकार आत्मा रुपी घर में जाने के लिए दोनों नयों की आवश्यकता होती है।

13 ध्रुव बन्धी प्रकृतियों की अपेक्षा शुद्धोपयोगी को भी पाप प्रकृति का बन्ध होता है और अशुभोपयोगी को भी पुण्य प्रकृति का बन्ध होता है।

14 सन्तान किसी एक की नहीं होती, उसी प्रकार रागादि एक से नहीं बल्कि आत्मा और कर्मोदय दोनों से होते हैं।

15 निश्चय में एक का कल्याण होता है, व्यवहार में अनेकों का कल्याण होता है।

16 वस्त्र को स्वभाव से गन्दा मान लेंगे, तो साफ करने का भाव नहीं होगा, इसी तरह अपने आप को शुद्ध मान लेंगे, तो शुद्ध करने का भाव नहीं होगा।

17 **निश्चय व्यहवहार**- रोटी को पहले तवे पर रखा जाता है बाद में आग पर रखा जाता है तब रोटी सिकती है, उसी प्रकार व्यवहार के आलम्बन पूर्वक निश्चय प्राप्त होता है।

18 रोटी अग्नि सेंकती या तवा ? सीधे अग्नि में नहीं ड़ालते हैं, ठण्डे तवे पर भी नहीं ड़ालते हैं, जिस तवे रूप व्यवहार में अग्नि रूप निश्चय ने प्रवेश कर लिया, उस पर रोटी ड़ालते हैं, जब रोटी तवे पर कुछ कड़ी हो जाती है तो फिर अग्नि में ड़ाल देते हैं, इसी प्रकार प्रारम्भ में व्यवहार का आलम्बन लिया जाता है, बाद में निश्चय प्राप्त होता है।

फूल लाल या सफेद

19 हनुमान जी ने रामचन्द्र जी से कहा ! अशोक वाटिका मुझे सबसे अच्छी लगी उसमें लाल फूल खिले थे, तभी बीच में सीता बोल पड़ी मैं उसमें बहुत दिन रही हूँ उसमें सफेद फूल खिले थे, हनुमान जी और सीताजी में लाल-सफेद रङ्ग पर बहस छिड़ी थी, तभी रामचन्द्रजी ने कहा आप दोनों सत्य बोल रहे हैं, तब हनुमानजी ने कहा सत्य तो एक ही होगा, रामचन्द्रजी ने कहा

हनुमानजी जब आप अशोक वाटिका में थे तब क्रोध में थे, इसलिए लाल फूल दिखे, सीताजी उस समय आँसुओं से युक्त थी, इसलिए उसे सफेद फूल दिखे, अतः अपेक्षा से दोनों कथन सही हैं इसी प्रकार प्रत्येक विषय में समझना चाहिए।

20 आँख निश्चनय और पैर व्यवहारनय के समान है जैसे आँख नहीं खोलेंगे तो वस्तु स्वरूप नहीं दिखेगा और चलेंगे नहीं तो मंजिल पर नहीं पहुँचेंगे।

21 **व्यवहार-** कृष्ण जी शान्तिदूत बनकर दुर्योधन के पास गये, कहा पाण्डव पाँच गाँव में सन्तुष्ट हैं, युद्ध न करो, दुर्योधन ने कृष्णजी को फटकारते हुये बन्दी बनाने का आदेश दिया, तब कृष्णजी ने विराट रूप बनाकर दुर्योधन से कहा तू कौन सी मूली की जड़ है ? देखते-देखते उखाड़ कर फेक दूँगा, इस प्रकार व्यवहार नय से समझाया था।

22 **निश्चय-** अर्जुन ने युद्ध क्षेत्र में कृष्णजी से पूँछा, किस-किस के साथ युद्ध करना है ? कृष्णजी ने बताया भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य, दुर्योधन आदि के साथ, अर्जुन ने कहा रथ वापस ले चलो, जिनकी गोद में खेले, उनसे युद्ध कैसे करेंगे ? तब कृष्ण जी ने निश्चय का सहारा लेकर समझाया था- **नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि, नैनं दहति पावकः।**
नैव क्लेदयन्त्यापः, नैव शोषति मारुतः।।

अर्थात्- आत्मा शस्त्र से छिदती नहीं है, आग से जलती नहीं है, पानी से भीगती नहीं है और वायु से सूखती नहीं है, इसलिए हे अर्जुन ! युद्ध करो।

23 एक पैर से चलना और एक से सम्भलना होता है, उसी तरह व्यवहार-निश्चय नय को समझना चाहिए।

24 पक्षी दो पङ्ख के बिना उड़ नहीं सकता, गाड़ी दो पहियों के बिना चल नहीं सकती।

25 ज्ञान के समय व्यवहार, ध्यान के समय निश्चय काम में आता है।

26 ऊपर की सीढ़ी चढ़ने पर नीचे की सीढ़ी अपने आप छूट जाती है, उसी प्रकार निश्चय प्राप्त होने पर व्यवहार अपने आप छूट जाता है।

27 जब मकान, दुकान, भोजन, स्नान छोड़ दो, तब पूजा छोड़ देना इसके पहले नहीं छोड़ना, पूजा ग्रहस्थी में बंधे पापों को धोने के लिए साबुन के समान है।

28 साबुन लगाना भी पड़ेगा और धोना भी पड़ेगा, साबुन नहीं लगाएंगे तो मैल नहीं निकलेगा और धोएँगे नहीं तो साबुन नहीं छूटेगी।

29 नये कपडे मिलेंगे तो पहनेंगे अन्यथा नहीं तो ठण्ड सहनी पड़ेगी, इसी तरह अभी शुद्धपयोग

होता नहीं, शुभोपयोग से पुण्य का बन्ध भी होता है, इसलिए स्वीकारेंगे नहीं तो अशुभोपयोग से पाप का ही बन्ध करेंगे।

काँटे से काँटा निकलता

30 शुभोपयोग से कर्म बन्धता भी है निर्जरा भी होती है, जैसे काँटे से काँटा निकलता है, उसी सीढ़ी से चढ़ना भी होता है उतरना भी होता है, पानी से मकान गिरता भी है बनता भी है, फसल पानी से उगती भी है और नष्ट भी होती है, हँसने और रोने की आँखे एक ही होती हैं, दवाई मुख्य है, पर साधन के रूप में इञ्जेक्शन भी महत्त्व पूर्ण होता है।

31 **स्वचतुष्टय और परचतुष्टय**- पेसेञ्जर का टिकट, पेसेञ्जर के द्रव्य की अपेक्षा है स्लीपर के द्रव्य की अपेक्षा नहीं है, कलकत्ता से दिल्ली के क्षेत्र की अपेक्षा टिकट है अन्य क्षेत्र की अपेक्षा नहीं है, निश्चित तारीक के काल की अपेक्षा टिकट है अन्य काल की अपेक्षा नहीं है, सेकेण्ड क्लास के भाव की अपेक्षा टिकट है फस्ट क्लास के भाव की अपेक्षा नहीं है।

32 जैसे मन्दिर के सामने की फोटो मन्दिर नहीं है बल्कि भीतर-बाहर, आजू-बाजू सभी दीवालों की फोटो मिलाने से मन्दिर कहलाता है, उसी प्रकार वस्तु स्वरूप को समझना चाहिए।

33 एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कर्ता नहीं है तो इसका यह अर्थ नहीं कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य के लिये निमित्त भी नहीं है।

34 **क्षेत्र**- आज का बच्चा कहता है मन्दिर क्यों जाऊँ ? आत्मा या भगवान् का ध्यान घर में बैठकर भी कर सकते हैं, इसका उत्तर हमें उसी की भाषा में देना होगा कि जिस प्रकार एक घर में रसोई अलग, स्नानघर अलग, पखाना अलग, शयन कक्ष अलग-अलग होते हैं, उसी प्रकार परमात्मा का ध्यान करने के लिये मन्दिर हैं, यदि पखाना खाने के स्थान पर और खाना पखाने के स्थान पर हो तो आपको कोई आपत्ति तो नहीं ? यदि यह अयोग्य है, तो मन्दिर का कार्य मन्दिर मे होना चाहिये, घर का कार्य घर में होना चाहिये, मन्दिर की वेदी पर कोई भोजन की थाली रखकर नहीं खाता तथा आपरेशन थियेटर पर ही आपरेशन होता है रसोईघर या दुकान पर नहीं उत्तर सुनते ही बच्चे को समझ में आ जायेगा।

35 **भाव समवाय**- मन की महत्त्वाकाङ्क्षा पर रोक लगाना, कर्म-नोकर्म मिलने पर राग-द्वेष नहीं होना भाव समवाय प्रत्यय है, जब तक भावों में निर्मलता नहीं होगी तब तक द्रव्य, क्षेत्र, काल और भव रूप चार प्रत्यय मिलने पर भी कार्य की सिद्धि नहीं होगी।

36 **निमित्त और उपादान**-राधा ने कृष्ण जी से कहा मुझे बाँसुरी सुनाओ, सुनने की तीव्र इच्छा थी,

दुनिया का ये स्वाभाव है कि जिसको जो कला आती है, उसे करने को कहो तो वह पहले फूलता है, कृष्णजी ने कहा आज हमारा सुनाने का मन नहीं है, किसी को अपने पक्ष में करना है तो उसकी प्रशंसा कर दो, तब राधा ने कहा, 'अर्थ तो है तुम्हारी श्वाँस का, वरना ये टुकड़ा है बाँस का' असंख्यात जीव भगवान् के चरणों में बैठते हैं, तो भी क्षायिक सम्यक्त्व सबको नहीं होता, निमित्त तो सबके लिए बराबर है पर उपादान नहीं है, इसलिए जरूरी नहीं कि निमित्त है तो उपादान जाग ही जाए, कृष्णजी प्रशंसा सुनकर बजाने बैठ गए, घण्टों निकल गये, अब राधा को भूख लगी यदि काम बन्द कराना है तो निन्दा कर दो, राधा ने कहा- 'अर्थ क्या है तुम्हारी श्वाँस का, गर न होता ये टुकड़ा बाँस का', कृष्ण जी ने बाँसुरी बजाना बन्द कर दिया, बताओं दोनों में कौन मुख्य है ? वस्तुतः यदि श्वाँस में जुकाम हो जाए तब कितनी अच्छी बाँसुरी हो स्वर नहीं आयेगा, श्वाँस अच्छी है और बाँसुरी फटी है तो भी सुर नहीं आता, अतः निमित्त उपादान की बहुत बड़ी महिमा है, बाँसुरी की उतनी ही कीमत जितनी श्वाँस की।

37 देह से भिन्न आत्मा को पर पदार्थ का कर्ता, भोक्ता, एकत्व, ममत्व मानना एवं माता-पिता, देश, मकान, स्त्री-पुत्रादि, पञ्चपरमेष्ठी- ये सब उपचरित असदभूत व्यवहारनय से मेरे हैं।

38 उपचार आसानी से बदल जाता है, जैसे मकान मेरा है पर बिकने पर दूसरे का हो जाता है।

39 द्रव्यार्थिक नय एक्सरे की तरह है, पर्यायार्थिक नय कैमरे की तरह है।

40 नय सम्यग्ज्ञान के अंश हैं, मिथ्याज्ञान में मिथ्या नय होते हैं।

41 रामचन्द्रजी सम्यग्दृष्टि थे तो भी कहते थे कि मैं सीता और लक्ष्मण के विना जीवित नहीं रह सकता, सीता की दीक्षा के बाद और लक्ष्मण की मृत्यु के बाद भी राम जीवित रहे, जैसे भारतीय रेल को अपनी सम्पत्ति कहता है लेकिन मानता नहीं, माता-पिता को अपने कहता है पर मानता नहीं, यदि कोई अपने या पड़ोसी के मां-बाप को मार डाले तो भी धारा 302 का केस बनता है।

42 मैं रोटी खाता हूँ, मैं उपदेश करता हूँ आदि सब कथन उपचरित असद्भूत व्यवहारनय का है।

★★★

"अथ तत्त्वार्थसूत्र-प्रथम अध्याय"

1 जो तत्त्वार्थ सूत्र का पाठ करता है उसे एक उपवास का फल मिलता है और जो अर्थ का विचार करता है उसे अनन्त उपवास का फल मिलता है।

2 **जो बिन ज्ञान क्रिया अवगाहे, जो बिन क्रिया मोक्ष फल चाहे।**
जो बिन मोक्ष कहे मैं सुखिया, सो अजान मूढ़न में मुखिया।।

3 जिसमें अक्षर अल्प हों और अर्थ बहुत हो उसे सूत्र कहते हैं।

4 तत्त्वार्थसूत्र में चकार की संख्या- पहले अध्याय में 2, आगे के अध्यायों में क्रमशः 11, 7, 10, 9, 6, 3, 5, 4, 3 कुल 60 चकार आये हैं।

5 तत् शब्द की संख्या क्रमशः 6, 3, 7, 2, 2, 4, 4, 2, 3, 1 कुल 34 तत् शब्द आये हैं।

6 सूत्रों की संख्या क्रमशः 33, 53, 39, 42, 42, 27, 39, 26, 47, 9 कुल 357 सूत्र आये हैं।

7 छोटे सूत्रों की संख्या क्रमशः 4, 14, 3, 7, 9, 2, 6, 5, 10, 1, कुल 61 छोटे सूत्र आये हैं।

8 बड़े सूत्रों की संख्या क्रमशः 2, 4, 8, 2, 1, 3, 6, 3, 3, 2 कुल 34 बड़े सूत्र आए हैं।

9 श्वेताम्बर तत्त्वार्थसूत्र में क्रमशः 35, 52, 18, 53, 44, 26, 38, 26, 49, 7 कुल 344 मानते हैं, तीसरे अध्याय में 1 से 11 वे सूत्र तक और 33 से 39 वे सूत्र तक कुल 18 सूत्र मानते हैं।

10 सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र तीनों की एकता मोक्ष का मार्ग है जैसे अजवाइन का फूल, कपूर, पिपरमेंट की एकता अमृतधारा है।

11 जिन भक्ति सम्यक्त्व का कारण है, श्रुत भक्ति ज्ञान का कारण है और गुरु भक्ति चारित्र का कारण है।

12 रत्नत्रय देव, नरक और तिर्यञ्च गति में नहीं है, उस रत्नत्रय को मानव पर्याय में हाँसिल कर लेना बुद्धिमानी है।

13 रत्नत्रय- साईकिल में बैलेंस बनाना श्रद्धा है, सामने देखना ज्ञान है और पैडल मारना चारित्र है।

14 दीपक में तैल श्रद्धा है, बाति ज्ञान है, अग्नि चारित्र है।

15 मोक्ष मार्ग लक्ष्य है, दर्शन-ज्ञान-चरित्र आत्मभूत लक्षण हैं, लक्षणाभास नहीं हैं।

16 चरित्रहीन व्यक्ति का विपुल शास्त्र ज्ञान प्राप्त करना ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं है, जैसे नेत्रहीन व्यक्ति के सामने लाखों दीपक जलाना बेकार है।

17 जैसे वात-पित्त-कफ की हानि-वृद्धि होती है तो शरीर में विकार हो जाता है उसी प्रकार दर्शन-ज्ञान-चरित्र की हानि होने पर आत्मा में विकार हो जाता है।

18 **अन्धा-** मिथ्यादर्शन, पङ्गु- मिथ्याज्ञान, आलसी- मिथ्याचारित्र है, इसके विपरीत तीनों की एकता रत्नत्रय है।

19 जिस प्रकार बारात में वधू का स्वामी वर होता है, उसी प्रकार सम्यक्त्वी जीव सातिशय पुण्य व मोक्ष का अधिकारी होता है।

20 **बीस प्रकार की भूलें-** तीन गृहीत मिथ्यादर्शन-ज्ञान-चारित्र, तीन अगृहीत मिथ्यादर्शन-ज्ञान-चारित्र, सात गृहीत तत्त्व, सात अगृहीत तत्त्व सम्बन्धी भूल।

21 इन्द्रभूति गौतम को मानस्तम्भ देखते ही निसर्गज सम्यग्दर्शन हुआ था, शेर को उपदेश से अधिगमज सम्यग्दर्शन हुआ था।

22 काँटे का पैनापन निसर्गज है, बाण का पैनापन अधिगमज है, क्रोध की ललाई अधिगमज है, क्षमाभाव निसर्गज है, निज आत्मा को निज में लगाना निसर्गज है।

23 मोटर अजीब तत्त्व है, सवारी जीव तत्त्व है, एक-एक का चढ़ना आस्रव है, सीट पर बैठना बन्ध है, सवारी का आना बन्द हो जाना संवर है, एक-एक करके उतर जाना निर्जरा है, सम्पूर्ण सवारी का उतर जाना मोक्ष है, इसी प्रकार सभा, नाव, रोटी आदि में घटाना एवं दार्ष्टान्त के रूप में आत्मा में घटाना चाहिए।

24 **नाम निक्षेप-** नाम है अशोक और दिन भर शोक करता रहता है।

25 **जीव द्रव्य का ज्ञान-**जीव को प्रदेशों की संख्या की मुख्यता से अस्तिकाय में ग्रहण किया है, उत्पाद व्यय ध्रौव्य की मुख्यता से द्रव्यों में ग्रहण किया है, ज्ञायक भाव की मुख्यता से तत्त्व में ग्रहण किया है एवं काल की मुख्यता से पदार्थों में ग्रहण किया है।

26 **अपना परिचय-** नाम क्या है- जीव द्रव्य, कहाँ रहते हो- असंख्यात प्रदेश में, उम्र- अनाद्यनन्त, भाव- जानना देखना।

27 नाम निक्षेप से लोगों द्वारा जैन साहब कहना, स्थापना निक्षेप से अष्ट मूलगुण धारी होना, द्रव्य निक्षेप से तत्त्वाभ्यासी होना, भाव निक्षेप से सम्यग्दर्शनादि से सहित होना।

28 नय की अपेक्षा हलुआ में आटा, घी, शक्कर, बादाम आदि हैं, किन्तु प्रमाणकी अपेक्षा एक शब्द में हलुआ कहा जाता है।

29 रसना से हलुआ चखा तो सिर्फ रस का ज्ञान हुआ, उसे नय कहते हैं।

30 प्रमाण को षड्दर्शन वाले मानते हैं, लेकिन नय को मात्र जैन सिद्धान्त ही स्वीकार करता है।

31 प्रमाण और नय विशेष के विषय हैं जैसे-पाँच ज्ञान हैं वे प्रमाण हैं, प्रमाण से महासत्ता और अवान्तरसत्ता, दोनों भिन्न हैं, महासत्ता दर्शन का विषय है, अवान्तरसत्ता प्रमाण और नय का

विषय है।

32 सत् आदि आठ अनुयोगों में प्रथम-प्रथम के ग्रहण करने पर द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव बनते हैं, जैसे सत् से द्रव्य, क्षेत्र से क्षेत्र, काल से काल, भाव से भाव, निक्षेप में भी द्रव्याादि बनते हैं, जैसे विद्यार्थी का नाम द्रव्य, उसका निवास क्षेत्र, उसकी उम्र काल, उसकी योग्यता भाव निक्षेप है।

33 **जीवविपाकी**= भाव है, पुद्गलविपाकी= द्रव्य है, क्षेत्रविपाकी= क्षेत्र है, भवविपाकी= काल है।

34 **सभा है-**सत्, कितने लोग हैं-संख्या, कहाँ पर हैं-क्षेत्र, कहाँ से आये, कहाँ जायेंगे-स्पर्शन, कितने बजे तक सभा होगी-काल, इसके बाद सभा कब होगी-अन्तर, क्षायोपशमिक आदि-भाव, स्त्री अधिक पुरुष कम इत्यादि-अल्पबहुत्व।

35 असंज्ञीजीव के अवग्रह, ईहा आदि ज्ञान होते हैं।

36 अर्थस्य से यहाँ तक अर्थावग्रह का वर्णन हुआ।

37 गणधरदेव को मनःपर्यय ज्ञान होने से आहारक पुतला नहीं निकलता है।

38 ''तदनन्तभागेमनःपर्ययस्य'' इस सूत्र के विषय में दो मत हैं, एक मत के अनुसार सर्वावधि ज्ञान परमाणु को जानता है, इस मत के अनुसार मनःपर्ययज्ञान परमाणु के अनन्तवे भाग को जानता है, दूसरे मत के अनुसार सर्वावधिज्ञान कार्मण द्रव्य को जानता है, इस मत के अनुसार मनःपर्ययज्ञान कार्मण द्रव्य के अनन्तवे भाग को जानता है।

39 विदेह आदि क्षेत्रों में जो अवधिज्ञान साथ जाये उसे क्षेत्रानुगामी अवधिज्ञान कहते हैं।

40 मनःपर्ययज्ञानी मन में स्थित पदार्थ को जानते हैं, यदि मुट्टी में हैं तो नहीं जानेगे, लेकिन मुट्टी की वस्तु मन में हो तो जान लेंगे।

41 अनुमान मतिज्ञान का भेद है और निमित्तज्ञान श्रुतज्ञान का भेद है, नारद और पर्वत जङ्गल में जा रहे थे, एक ने कहा यहाँ हाथी गया है, पैरों के चिन्हों से जाना, आगे जाकर कहता है, हथिनी गई है, वह एक आँख से कानी है, उस पर रानी बैठी है, वह गर्भवती है, उसको पुत्र होगा, ये सब अनुमान से जाना, बड़े पैर से हाथी का ज्ञान, लघुशङ्का से हथिनी का ज्ञान, एक तरफ की डालियाँ खाने से कानी हथिनी का ज्ञान, उतरते समय वजन पड़ा, इसलिए गर्भवती का ज्ञान, दाईं ओर से उतरी इसलिए लड़के का ज्ञान हुआ।

42 प्यासे दो मित्र पानी की खोज में थे, देखा यहाँ से ठण्डी हवा आ रही है, पक्षी उड़ रहे हैं, हरे भरे वृक्ष हैं, महिलाएँ पानी ला रही हैं, अन्त में तालाब पर पहुँच गए, ये अनुमान ज्ञान है।

43 हीयमान अवधिज्ञान जैसे भुज्यमान आयु सदा घटती जाती है, वर्धमान अवधिज्ञान जैसे तृष्णा

बढ़ती जाती है, अवस्थित ज्ञान जैसे शरीर का तिल आदि, अनवस्थित ज्ञान जैसे चन्द्रमा की कलाएं इत्यादि।

44 किसी जीव में चार ज्ञान होने पर भी उपयोग एक का ही होगा जैसे एक पेन में पाँच रिफिल हैं लेकिन एक समय में एक का ही उपयोग होगा।

45 ब्राह्मण से तत्त्वार्थसूत्र जी के पहले अध्याय के 'एकादीनि भाज्यानि युगपदे कस्मिन्नाचतुर्भ्यः' सूत्र का अर्थ पूँछा तो इस प्रकार का अर्थ किया-'एक को लेकर सबको मारो और चारों दिशाओं में जहाँ रास्ता मिले भाग जाओ', इसलिये 'सूत्रेष्वदृष्टं पदं सूत्रान्तरादनुवर्तनीयं सर्वत्र' अर्थात् सूत्रों में नहीं दिखाई देने वाले पद की आगे-पीछे से अनुवृत्ति कर लेना चाहिए।

46 **मिथ्यादृष्टि-** जैसे पित्त् रोगी, बहिन को माता और माता को बहिन कहता है उसी प्रकार मिथ्यादृष्टि का तत्त्वों के विषय में अनिश्चय रहता है।

47 तत्त्वार्थसूत्र में कहीं भी 'दग्धाक्षर' झगड़े वाला 'झ' का प्रयोग नहीं हुआ है।

48 सासादन गुणस्थान में मनुष्यों की संख्या बावन करोड़, अन्य गति के जीवों की संख्या पल्य के असंख्यातवे भाग है।

49 **अङ्गबाह्य-** आरातीय आचार्यों के द्वारा जो रचना हुयी, अर्थात् आज के श्रुत को अङ्गबाह्य कहते हैं।

50 **अङ्गप्रविष्ट-** गणधर या अङ्ग श्रुत के धारियों के द्वारा जो रचा गया है, उसे अङ्गप्रविष्ट कहते हैं।

51 कुन्दकुद स्वामी ने सर्व विशुद्ध अधिकार लिखा, सर्वाधिकारों को सुरक्षित (पेटेंट) नहीं लिखा है।

''इति प्रथम अध्याय''

★★★

"अथ द्वितीय अध्याय"

1 **भाव-** बरसात में मेरे कपड़े गीले न हो जायें, मैं घर पहुँच जाऊँ इसके बाद खूब पानी गिरे, फिर चाहे गरीब का आटा गीला हो जाये। ट्रेन लेट हो जाये जिससे हमें मिल जाये, चाहे उसमें बैठे हजार लोग भूखे तड़फ रहे हों। इसकी कोई चिन्ता नहीं रहती। ट्रेन पर बैठे, सीट मिल गयी तो स्वयं लेट जाते हैं, चाहे दूसरे खड़े हों। हमें माल खरीदना है तो सस्ता हो जाए, और बेचना है तो महँगा हो जाए, चाहे दूसरे को कितना भी नुकसान हो जाए। हमें आवश्यकता है तो पानी बरस जाए अन्यथा नहीं बरसे भले ही दूसरे की खेती सूख जाए, वकील और डॉक्टर कभी ये भावना

नहीं भा सकते कि सभी जीव सुखी रहें, अन्यथा उनकी दुकानदारी बन्द हो जाएगी। लोग भगवान् से प्रार्थना भी अपने स्वार्थ के अनुसार करते हैं ये सब भावों के भेद हैं।

2 मन्दिर जाने के परिणाम और मन्दिर से घर जाने के परिणाम में महान अन्तर है, मन्दिर जाते समय मृत्यु हो तो अलग फल, घर जाते समय अगर मृत्यु हो तो अलग फल इसी प्रकार भोजन के प्रथम ग्रास और अन्तिम ग्रास के राग में अन्तर होता है।

3 **गजब का तमाशा-** रामकृष्णपरमहँस जी का इन्दौर में प्रवचन था, प्रवचन के प्रारम्भ में उन्होंने दो-तीन बार कहा ! आज हमने गजब का तमाशा देखा, श्रोताओं को सुनने की उत्कण्ठा हुई, उन्होंने कहा ! एक महिला दो-तीन बच्चों के साथ धान कूट रही थी, वह बीच-बीच में बच्चों से बातें भी करती जाती थी, और फटाफट मूसल भी पटकती जाती थी, लेकिन एक भी मूसल उसके हाथ में नहीं लगा, उसी प्रकार ज्ञानी भी घर में रहता है, घर के सारे काम करता है, पर पाप कर्म से अपने को हमेशा बचाता रहता है।

4 **भावों का प्रभाव-** राजा भटक गया, जङ्गल में बुढ़िया की कुटिया पर गया पानी माँगा, बुढ़िया ने कहा बेटा लू लग जायेगी, बगीचा से एक अनार का लौटा भर रस लाकर राजा को पिलाया, राजा ने सोचा इतना सुन्दर बगीचा मेरे राज्य में आता है या नहीं ? मन्त्री से पता करवाया, अपना है तो 'कर' लगाना है, अगली बार राजा फिर भटक कर, बुढ़िया के यहाँ गया, जूस माँगा, अब बुढ़िया ने पचास अनारों को निचोड़ा फिर आधा लोटा जूस निकला, वह भी बेस्वाद था, राजा ने पूँछा आज क्या हो गया, बुढ़िया ने कहा ! राजा का भाव बिगड़ गया है, भावों का प्रभाव पड़ता है।

5 जल तें भिन्न कमल है, नगरनारी को प्यार यथा कादे में हेम अमल है' जैसे धाय पुत्र को अपना नहीं मानती है, मुनीम धन को अपना नहीं मानता, इसी प्रकार सम्यग्दृष्टि पर पदार्थ को अपना नहीं मानता है।

6 **उवसम सुहमाहारे, वेग्गुव्वियमिस्स णरअपज्जत्ते।**
सासणसम्मे मिस्से, सान्तरगा मग्गणा अट्ठ।।
उपशमसम्यकत्व, सूक्ष्मसाम्परायसंयम, आहारककाययोग, आहारकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, लब्ध्यपर्याप्तक- मनुष्य, सासादनसम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये आठ सान्तर मार्गणाएँ हैं।

7 **सत्त दिणा छम्मासा, वासपुधत्तं च बारस मुहुत्ता।**
पल्लासंखं तिण्हं वरमवरं एग समयो दु।।

उक्त आठ अन्तर मार्गणाओं का उत्कृष्ट काल क्रम से सात दिन, छः महिना, पृथक्त्व वर्ष, पृथक्त्व वर्ष, बारह मुहूर्त और अन्त की तीनमार्गणाओं का काल पल्य के असंख्यातवें भाग है और जघन्य काल सबका एक समय है।

8 अनन्तकाल से संसारी थे, कोई देव या नारकी बना, कोई क्रोधी, कोई सज्जन, कोई हिंसक, कोई अहिंसक, कोई समतावान, कोइ विषमतावान ये सब भावों का खेल हैं।

9 कोई तीर्थों को जाता है तो कहते हैं पेटी, थैला, रुपया, बच्चों को सम्भाल कर रखना, लेकिन कोई ये नहीं कहता कि भावों को सम्भालकर रखना क्योंकि भावों का सम्भालना ही महत्त्वपूर्ण है।

10 जब राम ने सीता को जङ्गल में छोड़ा तो सीता ने अपने भावों को सम्भाला और श्रीराम को सन्देश भेजा धर्म को नहीं छोड़ना।

11 साधु को अन्तराय आय तो भावों को सम्भालते हैं, श्रावक को विपत्ति आये तो भावों को बिगाड़ते हैं।

12 एक मूर्ख कुंए में पैर लटका के बैठा था, लोगों ने उससे पागल कहा, वह बोला यहाँ पर किस ने बताया कि मुझे लोग पागल कहते हैं, चेष्टा देखकर भावों का पता चल जाता है बताने की आवश्यकता नहीं होती है।

13 ये रागद्वेष आदि औदयिक भाव हैं, अवग्रहादि क्षायोपशमिक भाव हैं।

14 मिट्टी पर पानी पड़ने से आर्द्र हो जाती है, उसी प्रकार जिनवाणी माँ के श्रवण से भाव आर्द्र होते हैं।जैसे हल्दी और चूना को मिलाते ही रंग बदल जाता है उसी प्रकार जिनवाणी माँ के शब्द कान में पड़ते ही अंतरंग बदल जाता है।

15 सबसे कम भाव सिद्धों में और सबसे ज्यादा भाव संसारी जीवों में पाये जाते हैं।

16 **लेश्या-** एक मिथ्यादृष्टि मुनि पर आरा चला रहा है और एक मिथ्यादृष्टि मुनिव्रत पालन कर आरा के कष्ट को सह रहा है, दोनों का गुणस्थान एक है, पर लेश्या भिन्न है।

17 **मन के हारे हार है-** जापान का सेनापति तेगूलाङ्ग बड़ा चतुर था, अपनी सेना के मनोबल को कम देखकर उसने कहा कि देवी ने प्रसन्न होकर ये सिक्का दिया है, यदि दो बार उछालने पर चित्त आये तो अपनी जीत होगी सिक्का उछाला दोनो बार चित्त आया क्योंकि उसमें पट्ट था ही नहीं, सेना का हौसला बढ़ गया और कम सेना भी विशाल सेना से जीत गयी।

18 उपशम सम्यक्त्व, क्षयोपशम सम्यक्त्व, अनन्तानुबन्धी की विसंयोजना और देशसंयम, ये चारों असंख्यात बार भी होकर छूट सकते हैं।

19 आदि के तीन और अन्त के तीन गुणस्थानों में औपशमिक भाव नहीं होता है।

20 द्वितीय अध्याय में मोहनीय कर्म की अठ्ठाईस प्रकृतियों का वर्णन है, आनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान क्रोध मान माया लोभ, मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये चौदह सर्वघाती प्रकृतियाँ हैं, सञ्ज्वलन क्रोध मान माया लोभ, हास्य आदि नौ और सम्यग्प्रकृति ये चौदह देशघाती प्रकृतियाँ हैं।

21 **उदयाभावी क्षय-** सर्वघाती स्पर्धकों का अनुभाग अनन्त गुणा क्षीण होकर देशघाती रूप से उदय में आता है, सर्वघाती रूप से उदय का अभाव है, अतः उन सर्वघाती स्पर्धकों की उदयाभावी क्षय संज्ञा है।

22 भाँग के नशे का नीबू का रस लेने से अनन्त गुणा हीन स्थिति अनुभाग वाला होकर उदयावली में आना उदयाभावी क्षय कहलाता है।

23 **अग्नि में चार कषाय-** क्रोध के कारण जला देती है, मान के कारण ऊपर जाती है, माया के कारण राख में छिपी रहती है, लोभ के कारण ईधन से तृप्त नहीं होती है।

24 जो असंख्यात भव के बाद मोक्ष जायेंगे उनको भी निकट भव्य कहते हैं।

25 जो भव्य ज्यादा से ज्यादा पन्द्रह भव में मोक्ष जाते हैं, उन्हें भव्य पुण्डरीक कहते हैं।

26 **आसन्न भव्य**-जो पृथक्त्व(3से लेकर 9के बीच) भव में मोक्ष चला जाता है, दूर भव्य अर्ध पुद्गल परावर्तन में, दूरानुदूर भव्य हमेशा नित्यनिगोद में रहते हैं उनको मोक्ष के निमित्त ही नहीं मिलते हैं, अभव्य तो चारों गतियों में घूमते हैं।

27 उनतीस अङ्क प्रमाण पर्याप्तक मनुष्यों में दो या तीन अभव्य होंगे, देवों में पाँच-छः अभव्य होंगे, नारकियों में तीन-चार अभव्य होंगे, बाकी एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय में अभव्य पाए जाते हैं।

28 उपयोग के माध्यम से मिली चीज का भी अनुभव कर सकते हैं, जैसे दाल में नमक, रोटी में घी आदि उसी प्रकार शरीर में आत्मा का अनुभव कर सकते हैं।

29 'उपयोग' दो जगह आया है, 'उपयोगो लक्षणम्', 'लब्युपयोगौ भावेन्द्रियम् एक में ज्ञान दर्शन लेना, दूसरी जगह क्षयोपशम लेना है, लब्धि के निमित्त से जो परिणमन होता है उसे उपयोग कहते हैं।

30 विसंयोजना का उदाहरण- किरायेदार मकान छोड़ के गया, अपना कुछ सामान पड़ोसी को दे गया यदि वह पुनः वहाँ आता है तो फिर अपना सामान ले लेता है।

31 **द्रव्यपरावर्तन-** लवणसमुद्र का विस्तार दो लाख योजन है, उसमें पूर्व दिशा से जुँआरी और पश्चिम से सेल डाला जाए, लहराते-लहराते जब सेल जुँआरी के छेद में घुस जाये, उतने काल को द्रव्य परावर्तन कहते हैं।

32 वृक्ष की राख उड़ जाये, पुनः उसी स्थान पर वृक्ष बनने में जितना समय लगे, वह एक द्रव्यपरावर्तन कहलाता है।

33 नित्य निगोदिया जीव के पञ्च परावर्तन नहीं होते हैं क्योंकि 66,336 बार जन्म-मरण नहीं होते हैं।

34 संसारी जीव राशि अक्षय अनन्त है, छः माह आठ समय में छः सौ आठ जीव मोक्ष जाते हैं, सिद्धों की वृद्धि तथा संसार की हानि होने पर भी कभी संसार खाली नहीं होगा, जैसे लवणसमुद्र का पानी एक तृण में एक बूँद लेकर कालोदधि में डालने से, कालोदधि की वृद्धि हुयी, और लवणसमुद्र एक बूँद खाली हुआ।

35 **संसारिणो मुक्ताश्च-** बहुवचन का मतलब है मुक्त जीव दो भेद वाले हैं, जीवन मुक्त (केवली भगवान), शरीर मुक्त (सिद्ध भगवान), संसारी जीव भी एकेन्द्रियादि के भेद से अनेक प्रकार के हैं।

36 जीवकाण्ड की बीस प्ररूपणाएँ तत्त्वार्थसूत्र के दूसरे अध्याय में इस प्रकार से निकलती हैं जैसे-

1 गति मार्गणा- औदयिक भाव के 'गतिकषाय.... ' इत्यादि सूत्र से।

2 इन्द्रिय मार्गणा-'पञ्चेन्द्रियाणि, द्विविधानि' सूत्र से।

3 काय मार्गणा- 'संसारिणस्त्रसस्थावराः' सूत्र से।

4 योग मार्गणा- 'विग्रहगतौ कर्मयोगः' सूत्र से।

5 वेद मार्गणा- 'गतिकषायलिङ्ग....50-51-52 आदि सूत्र से।

6 कषाय मार्गणा-'गतिकषायलिङ्ग...' सूत्र से।

7 ज्ञान मार्गणा- 'ज्ञानाज्ञानदर्शन...' इत्यादि 4-5-7 वें सूत्र से।

8 संयम मार्गणा- '5 वे 6' वें सूत्र से।

9 दर्शन मार्गणा- 'ज्ञानाज्ञानदर्शन....' आदि चौथेसूत्र से।

10 लेश्या मार्गणा- '6' वें सूत्र में औदायिक भाव से।

11 भव्य मार्गणा- 'जीवभव्याभाव्यत्वानि च' सूत्र से।

12 सम्यक्त्व मार्गणा-'1-6-7' वें सूत्र से।

13 संज्ञी मार्गणा- ' समनस्कामनस्काः '11 वें सूत्र से।

14 आहार मार्गणा- 'एकं द्वौ त्री न्वानाहारकाः' सूत्र से।

15 गुणस्थान प्ररूपणा- '1-5-6-7' वे सूत्र से।

16 जीव समास प्ररूपणा-'पृथिव्यप्ते..,द्वीन्द्रियादय..' आदि सूत्र से।

17 प्राण प्ररूपणा- 'पञ्चेन्द्रियाणि' सूत्र से।

18 संज्ञा प्ररूपणा- 'एकं द्वौ त्रीन्वानाहारकः' सूत्र से।

19 पर्याप्ति प्ररूपणा- 'पञ्चेन्द्रियाणि' सूत्र से।

20 उपयोग प्ररूपणा- 'उपयोगोलक्षणं' सूत्र से।

37 जैसे पुराणों में कथा चालू होती है, उसी प्रकार दूसरे अध्याय के बारहवें सूत्र से संसारी जीव की कथा चालू होती है।

38 **पुढवी आदि चउण्हं केवलि आहार देव णिरयंगा।**
अपदिट्ठिदा णिगोदेहिं, पदिट्ठिदंगा हवे सेसा।।
पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, केवली, आहारकशरीर, देव और नारकियों के शरीर में निगोदिया जीव नहीं होते हैं, शेष सभी जीवों के शरीर में निगोदिया जीव होते हैं।

39 लिफाफा को टिकिट ले जाता है या टिकिट को लिफाफा, कर्म जीव को विग्रह गति में ले जाता है उसे अनुश्रेणि गति कहते हैं।

40 गर्भ जन्म वालों को ही रत्नत्रय की प्राप्ति होती है, अन्य जन्म वालों को नहीं।

41 सूक्ष्म निगोदिया मनुष्य पर्याय धारण कर देशव्रती बन सकता है, पर अग्निकाय, वायुकाय जीव तिर्यञ्च ही बनते हैं।

42 पृथ्वी जलादि को कायिक कहते है निगोद को कायिक नहीं जीव कहते हैं।

43 अग्निकाय, वायुकाय के चार शरीर राजवार्तिकार मानते हैं- औदारिक, तैजस, कार्मण और वैक्रियक।

44 **जह भारवहो पुरिसो, वहइ भरं गेहिऊण कावलियं।**
एमेव वहइ जीवो, कम्मभरं कायकावलियं।।
जिस प्रकार भार ढोने वाला पुरुष कांवर के द्वारा भार ढोता है, उसी प्रकार संसारी जीव शरीर रूपी कांवर के द्वारा कर्मों के भार को ढोता है।

45 आभ्यन्तर निवृत्ति में आत्मा के प्रदेश जो इन्द्रियाकार हुये हैं, वे प्रदेश स्थिर रहते हैं। (स.सि.)

46 कामदेव का रूप किशोर अवस्था में सुन्दर होता है किन्तु तीर्थङ्कर का रूप वृद्धावस्था में भी सुन्दर होता है।

47 जैसे मिट्टी में अनाज का दाना हो तो अङ्कुर उत्पन्न होता है, उसी प्रकार विकलत्रय की संवृत योनी जानना चाहिए, कुछ अनाज जो ठण्ड में होते हैं उनकी शीत योनी होती है और जो गर्मी में होते हैं उनकी ऊष्ण योनी होती है, मनुष्य मिश्र योनिवाले होते हैं, इस प्रकार योनियों के चौरासी लाख भेद होते हैं।

48 **शरीर उत्पति का क्रम-** माता के उदर में वीर्य प्रवेश के बाद रज-वीर्य के संयोग रूप दस दिन तक कलल दशा में, फिर दस दिन कालिमा दशा में, दस दिन स्थिर होता है, तांबा और चाँदी का रस मिलने पर जो दशा होती है, वही रज और वीर्य के संयोग से होती है, एक माह तक स्थिर अवस्था होती है, दो माह में बुलबुले जैसा होता है, तीसरे माह में घट के आकार होता है, चार माह में मांस के पिण्ड रूप होता है, पाँच माह में उस आकार में पाँच अङ्कुर होते हैं, जिनसे दो हाथ, दो पैर और सिर बनता है, छः माह में आँख, कान, नाक आदि उपाङ्गों की रचना होती है, सातवें माह में चर्म-रोम, हाथ-पैर के नख उत्पन्न होते हैं, आठवें माह में हलन-चलन होता है, नौ या दस माह में गर्भ से बाहर आता है।

49 **सप्त धातु की मात्रा-** मनुष्य के शरीर में दुर्गन्ध मज्जा से भरी तीन सौ हड्डियाँ होती हैं, सम्पूर्ण शरीर में तीन सौ सन्धि, नौ सौ स्नायु, सात सौ शिराएं, पाँच सौ मांसपेशियाँ, चार शिराओं के जाल, सोलह रक्त से पूर्ण 'महाशिराएँ', छः शिराओं के मूल हैं, दो माँस रज्जू जो एक पीठ और एक पेट के आश्रित हैं, सातत्वचाएँ, सातकालेचक, '**अस्सीलाख करोड़ रोम**', पक्वाशय और आमाशय में सोलह आँते, दुर्गन्धित मल के सात आशय, तीनस्थूण, एक सौ सात मर्म स्थान, नौमल द्वार जिनसे नित्य मल बहता है, स्वयं के एक अञ्जुलि प्रमाण मस्तक, एक अञ्जुलि प्रमाण मेद, एक अञ्जुलि प्रमाण वीर्य, एकअञ्जुलि प्रमाण ओज (शुक्र), तीन अञ्जुलि प्रमाण बसा, छः अञ्जुलि प्रमाण पित्त, छः अञ्जुलि प्रमाण कफ, आधा आठक प्रमाण खून, एकआठक प्रमाण मूत्र, छः प्रस्थ प्रमाण विष्ठा, बीस नख, बत्तीस दाँत, जैसे घाव में कीड़े भरे रहते हैं वैसे ही शरीर बहुत से कीड़ों से भरा है इस प्रकार शरीर के सभी अवयव अशुभ पुद्गल रुप हैं एक भी अवयव ऐसा नहीं है जो पवित्र और सुन्दर हो।

50 तीर्थङ्कर उत्पन्न होते ही परिवार में वासना उत्पन्न नहीं होतीं है, सभी संयमी हो जाते हैं।

51 शरीर में तेज, तापमान और भोजन पचाना तैजस शरीर के ये तीन कार्य होते हैं।

52 अनन्तानुबन्धी की विसंयोजना का काल छ्यासठ सागर है, दो छ्यासठ सागर भी सम्भव है जितना क्षयोपशम सम्यग्दर्शन का है, अन्तर्मुहूर्त के लिये तीसरे गुणस्थान में आकर पुनः ऊपर जा सकता है, प्रथमोपशम सम्यक्त्व वाला भी विसंयोजना करता है।

53 एकेन्द्रिय जीव के सूक्ष्म बादर ये दो भेद होते हैं, सूक्ष्म का अर्थ साधारण नहीं है, पृथ्वीकायिक से वायु कायिक तक प्रत्येक ही होते हैं।

54 कहीं ऐसा भी मिलता है कि भरत-ऐरावत क्षेत्र का प्रथम चक्रवर्ती ही वृषभाचल पर प्रशस्ति लिखता है अन्य चक्रवर्ती नहीं।

55 एक करोड़ वर्ष में एक समय अधिक है तो अकाल मरण नहीं होगा, यदि एक समय कम है तो अकाल मरण हो सकता है।

''इति द्वितीय अध्याय''

★★★

''अथ तृतीय अध्याय''

1 **तीन वात वलय-** जैसे साईकल में तीन वलय होते हैं ट्यूब, टायर, रिङ्ग इन तीनों का समान अनुपात होता है, तो साईकल वजन खींच ले जाती है, उसी प्रकार इन तीन वातवलयों के ऊपर ही तीन लोक का भार है, इस प्रकार मनुष्य, के शरीर में भी तीन वात वलय हैं, वात, पित्त, कफ इन तीनों के आधार से शरीर चलता है।

2 प्रथम पृथ्वी, एक लाख अस्सी हजार योजन मोटी है, उनमें खर भाग सोलह हजार योजन, पङ्कभाग चौरासी हजार योजन, अब्बहुल भाग अस्सी हजार योजन मोटा है।

द्वितीय पृथ्वी बत्तीस हजार योजन, तृतीय पृथ्वी अठ्ठाईस हजार योजन, चतुर्थ पृथ्वी चौबीस हजार योजन, पञ्चम पृथ्वी बीस हजार योजन, षष्टम पृथ्वी सोलह हजार योजन, सप्तम पृथ्वी आठ हजार योजन, इनके सब ओर बीस-बीस हजार योजन मोटे वातवलय हैं।

3 श्रेणिबद्ध, पुष्पप्रकीर्णक, इन्द्रकबिल सभी पृथ्वियों के बिलों की संख्या कुल चौरासी लाख है।

4 व्यक्ति अपराध बाहर करता है, भोगता जेल में है, उसी प्रकार अपराध यहाँ करता भोगता नरक में है।

5 देव और नारकी दोनों का उपपाद जन्म होता है पर देवों का सुखकर है, नारकियों का दुःखकर है, नरक में कोई दुःख की कथा सुनने वाला नहीं, जिसकों सुनावें वही भाला बनकर दुःख देता है, यहाँ चींटी आदि को तो सुख है, किन्तु वहाँ क्षण मात्र भी सुख नहीं है, वहाँ का शोरगुल

सुनलें, तो मनुष्य का हार्ट फेल हो जाये।

6 नरक में आठ प्रकार के दुःख- 1.पृथ्वी, 2.नदी, 3.वृक्ष, 4.गर्मी, 5.ठण्डी, 6.परस्पर में लड़ने का दुःख, 7.भूख, 8.प्यास।

7 ''परिणाम'' स्पर्श- हजार बिच्छू काटें उससे अधिक पृथ्वी के स्पर्श का कष्ट है। रस- हलाहल जहर के समान रस का कष्ट है। गन्ध- सप्तम नरक की मिट्टी का चने के बराबर दाना मध्यलोक में आ जाये, तो 'साड़े चौबीस' कोस के पञ्चेन्द्रिय जीव उसकी दुर्गन्ध से मर जायेंगे। रूप- नारकियों का रूप देखने मात्र से हार्टफैल हो जाये। देह- नारकियों का शरीर समस्त रोगों से ग्रसित होता है एवं नरक में कोई औषधि नहीं मिलती है।

8 नरक में ऊपर के बिलों में ऊष्ण वेदना और नीचे के बिलों में शीतवेदना होती है, तथा वहाँ अपृथक् विक्रिया होती है जो भी विक्रिया करते हैं स्वयं के शरीर में ही होती है।

9 जैसे पानी में डण्डा मारें तो पानी उचटता है और फिर उसी में मिल जाता है, उसी प्रकार नारकियों का शरीर तिल-तिल बराबर टुकड़े होने पर फिर से मिल जाता है मरते नहीं हैं पर पीड़ा अत्यधिक होती है।

10 जैसे उल्लू को रात्रि में स्पष्ट दिखता है उसी प्रकार नरक में अन्धकार होने पर भी नारकियों को स्पष्ट दिखाई देता है।

11 अम्बावरीष जाति के असुर अगर लड़ाई कराना बन्द कर दें, तो तीसरे नरक तक आधा दुःख कम हो जायेगा।

12 **मध्यलोक का वर्णन-** पहले सुषमासुषमा काल में शरीर की अवगाहना तीन कोष, दूसरे सुषमा काल में दो कोष, तीसरे काल में एक कोष की अवगाहना, चौथे काल में पाँच सौ धनुष, आयु भी इसी क्रम से तीन पल्य, दो पल्य व एक पल्य, एक कोटि वर्ष पूर्व उत्कृष्ट आयु होती है।

13 जम्बूद्वीप को आदि लेकर स्वयम्भूरमण तक एक नाम वाले असंख्यात द्वीप समुद्र हैं, क्योंकि शब्द संख्यात हैं और द्वीप-समुद्र असंख्यात हैं।

14 नन्दीश्वर का विस्तार एक अरब, त्रेसठ करोड़, चौरासी लाख योजन है, एक दिशा में तेरह जिनालय हैं, चारों दिशाओं में बावन जिनालय हैं।

15 **तित्थयरा तप्पियरा, हलहर चक्कीय अद्ध चक्कीय।**
देवाय भोयभूमा, आहारो अत्थि णत्थि णीहारो।।
तीर्थङ्कर उनके माता-पिता, बलभद्र, चक्रवर्ती, अर्धचक्रवर्ती, देव और भोगभूमि के जीवों का

आहार होता है पर नीहार नहीं होता है।

16 देव-नारकी, भोगभूमि के जीव, चक्रवर्ती, तीर्थङ्कर, नारायण, बलभद्र एवं कामदेव इनकी दाड़ी-मूँछ नहीं होती है।

17 महाविदेह में एक-एक क्षेत्र के आश्रित छियानवे करोड़ गाँव होते हैं, नगर, मटम्ब, पत्तन आदि सब इसी में गर्भित हैं।

18 एक-एक विजयार्द्ध पर एक सौ दस-एक सौ दसविद्याधरों की नगरियाँ हैं, एक-एक नगरी के अश्रित एक-एक करोड़ नगर हैं, इस तरह ढाईद्वीप में एक सौ सत्तर विजयार्द्ध हैं और अठारह हजार सात सौ कुल उनकी नगरियाँ हैं, पाँच अरब कुल जनसंख्या है।

19 मध्यलोक में सबसे ज्यादा जिनधर्म हैं और उससे कम जिनबिम्ब हैं, कृत्रिम जिनबिम्ब अधिक हैं अकृत्रिम कम हैं। मध्यलोक में 458 चैत्यालयों की प्रसिद्धि है किन्तु असंख्यात द्वीपों में असंख्यात अकृत्रिम चैत्यालय है। जैसे नन्दीश्वर भक्ति में लिखा है ''अगणित द्वीपों में अगणित हैं अगणित गुण गण मण्डित हैं''।

20 सीमन्धर स्वामी विदेहक्षेत्र की कच्छा नगरी में विराजमान हैं।

21 समवसरण में देव विक्रिया से जिनबिम्ब बनाकर पधराते है, किन्तु श्लोक वार्तिक में लिखा है अकृत्रिम जिनबिम्ब स्वर्ग से लाकर पधराते हैं।

22 सोलह अङ्क प्रमाण जीव राशि में एक अङ्कको अनन्त के बराबर जानना चाहिए, तीन अङ्क मध्यम अनन्तानन्त प्रमाण सिद्ध हैं और तेरह अङ्क प्रमाण सभी जीव जानना, किन्तु बारहअङ्क प्रमाण अनाद्यनन्त निगोदिया और एक अङ्क में बहु भाग निगोदिया हैं और शेष में चारों गतियों के जीव हैं, देव राशि भी मध्यम अंसख्यात है।(उनतीस अङ्क मनुष्यों का प्रमाण कहा है, वह सामान्य है)।

23 वर्तमान में भरत क्षेत्र में आर्त-रौद्रध्यानी, नष्ट, दुष्ट, दुःखी, पापी और अशुभ लेश्या वाले जीव अधिक है, पर धर्मध्यान आज भी हैं।

24 नरकों में तीर्थङ्कर प्रकृति की सत्ता वाले जीव के छह माह पूर्व साता का उदय आता है तब परकोटा बन जाता है, अर्थात् सुरक्षा हो जाती है।

25 सत्तर लाख छप्पन हजार वर्षों का एक पूर्व होता है। (स.सि.)

26 चक्रवर्ती के पुत्र-पुत्रियों की संख्या तिलोयपणत्ति में लिखी है, इससे सिद्ध है कि शान्ति, कुन्थु, अरनाथ तीर्थङ्करों के भी पुत्रियाँ हुयी हैं।

27 सिद्धक्षेत्र, सिद्धशिला, प्रथमस्वर्ग का ऋजुविमान, ढाईद्वीप, प्रथम नरक का पहला पटल ये पाँच पैतालीस लाख योजन के हैं।

28 नाभिराय और मरूदेवी का विवाह इन्द्र ने किया था। (आ.पु.12) तेरहवें कुलकर से पुत्र-पुत्री का अलग अलग जन्म हुआ था।

29 पञ्चम काल में प्रथम तीन हजार वर्ष में चौसठ जीव विदेह क्षेत्र जाकर नौ वर्ष में दीक्षा ले कर अलग-अलग केवल ज्ञान प्राप्त कर, नौ वर्ष कम एक करोड़ पूर्व काल तक विहार कर मुक्त होंगे, अगले तीन हजार वर्ष में बत्तीस, इसके अगले तीन हजार वर्ष में सोलह, आठ, चार, दो, एक, क्रमशः इक्कीस हजार वर्ष में एक भवावतारी होंगे।(सि.सा.स.)

30 तीर्थङ्करों के कुल में कोई नरक नहीं जाता हैकृष्ण जी गए हैं।

31 चक्रवर्ती और तीर्थङ्कर की जठराग्नि ज्वाला मुखी के समान तीव्र होती है।

32 भरत-बाहुबली ने बन्दर और नेबला की पर्याय में दान की अनुमोदना की थी, उसके बाद उन्होंने कभी दान नहीं दिया, अतः इनको जाति स्मरण नहीं हुआ, राजा श्रेयाँस ने श्रीमति (वज्रजङ्घ की पत्नी) की पर्याय में आहार दान दिया था, इसलिये उनको जाति स्मरण हो गया था।

33 महाविदेहों में हमेशा चौथा काल, उत्तमादि भोग भूमि में क्रम से पहला, दूसरा, तीसरा काल रहता है।

34 पाँच विदेह क्षेत्रों में एक सौ सत्तर विद्याधरों की नगरियों में एवं आठ सौ पचास म्लेच्छ खण्डों में हमेशा चौथा काल ही होता है।

35 तृतीय काल के प्रारम्भ से अन्त तक एवं असंख्यातद्वीप समुद्रों में हमेशा तीसरा काल ही रहता है अर्थात् जघन्य भोग भूमि रहती है।

36 नरकों में सदा छठवा काल 'दुषमा-दुषमा' ही होता है।

37 चौरासी लाख बिलों में चौरासी लाख स्थाई वैतरणी नदियाँ होती हैं।

38 विदेह क्षेत्र में बत्तीस नगरियाँ हैं, एक-एक नगरी में एक तीर्थङ्कर हो सकते हैं, छः खण्ड होते हैं, हमेशा चौथा काल होता है, सामान्य केवली हमेशा रहते हैं, आचार्य, उपाध्याय, साधु परमेष्ठी भी हमेशा रहते हैं, एक नगरी के तीर्थङ्कर दूसरी नगरी में नहीं जाते हैं।

39 लवण समुद्र में राक्षस द्वीप के विचित्री कूट पर्वत पर पचास योजन लम्बी-चौड़ी लङ्का है।

40 सुमेरु पर्वत को चिड़िया चोंच से घिसकर जाय, सौ-सौ वर्ष बाद पुनः आवे, जितने समय में

पूरा सुमेरु पर्वत घिस जाय उतना बड़ा एक सागर कहलाता है।

41 दुषमादुषमा काल के अन्त में ज्येष्ठ कृष्ण पञ्चमी से आषाण शुक्ल पूर्णिमा तक कुवृष्टि होती है तथा सुषमासुषमा काल के प्रारम्भ में श्रावण कृष्ण प्रतिपदा से भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी तक शुभ वर्षा होती है।

42 सात राजू में एक लाख चालीस हजार योजन(मध्यलोक का प्रमाण) कम करने पर ऊर्ध्व लोक का प्रमाण होता है और अधोलोक सात राजू प्रमाण है।

43 जिनसेनाचार्य के मत से एक सौ अड़तालीस कल्पकाल के बाद हुण्डावसर्पिणी काल आता है, अन्य आचार्यों के मत से असंख्यात कल्पकाल के बाद हुण्डावसर्पिणी काल आता है।

44 हुण्डावसर्पिणी काल के दोष से चौथे काल में अठ्ठावन शलाका पुरुष, तीर्थङ्कर की पुत्रियाँ, चक्रवर्ती की हार, तीसरे काल में आदिनाथ जी का मोक्ष इत्यादि अनहोनी हुई हैं।

45 भोगभूमि में सात दिन तक उत्तानाशय (पीट के सहारे लेटना), सात दिन तक अङ्गूठा चूसना, सात दिन तक रेंगना, सात दिन तक लड़खड़ाकर चलना, सात दिन तक स्थिर चलना, सात दिन में कलाएँ प्राप्त करना, सात दिन में गुणों की प्राप्ति करना, इस प्रकार जघन्य भोगभूमि में मनुष्य उनञ्चास दिन में जवान, मध्यम भोगभूमि में पैंतीस दिन में और उत्तम भोगभूमि में इक्कीस दिन में जवान हो जाते हैं।

46 भोग भूमि में खाने को है पर भूख नहीं है और नरकों में भूख है पर खाने को नहीं है।

47 भोगभूमि में भाई-बहिन ही पति-पत्नि बन जाते हैं और उनको सम्यक्त्व हो जाता है और वे स्वर्ग ही जाते हैं, यदि कर्मभूमि में ऐसा हो तो वे भाई-बहन नरक चले जायेंगे।

48 **भोगभूमि का वैभव-** भूमि निर्मल दर्पणवत् साफ-स्वच्छ, कीड़ों से रहित, पाँच वर्ण की चार अङ्गुल प्रमाण मधुर सुगन्धित घास। जल जन्तु रहित वापिकाएँ। औषधि युक्त अमृत तुल्य निर्मल जल। अनेक प्रकार के अनुपम आसनो से युक्त मृदु शय्याओं वाले प्रासाद, स्वर्ण एवं रत्न मयी पर्वत, नदियों के दोनों तटों पर रत्नों से युक्त सीढ़ियाँ। विकलत्रय असंज्ञी जीवों से रहित जल, रोग-कलह-ईर्ष्या का अभाव। रात-दिन एवं सर्दी-गर्मी-अन्धकार के भेद से रहित मौसम। पापों से रहित, पति पत्नी के अलावा परिवार-ग्राम-नगरादि से रहित। एक पुरुष में नौ हाथियों का बल। प्रशस्त बत्तीस लक्षणों से युक्त कवलाहारी होकर भी नीहार से रहित। दस प्रकारके कल्पवृक्ष, बत्तीस प्रकार के पेय पदार्थ, नाना प्रकार के वादित्र, सोलह प्रकार के आहार। सत्रह प्रकार के व्यञ्जन, चौदह प्रकार के छाल, एक सौ आठ प्रकार के खाद्य पदार्थ, तीन सौ त्रेसठ प्रकार के (मिष्टान्न) स्वाद्य पदार्थ। त्रेसठ प्रकार के रस, सोलह हजार प्रकार की

फूल मालाएं, सोलह प्रकार के भवन-स्वस्तिक-नन्द्यावर्त, **''चक्रवर्ती के भोग से अनन्तगुणे भोग''**, विक्रिया द्वारा अनेक प्रकार के शरीर, भोग सामग्री, पुरूष के सोलह प्रकार व स्त्री के चौदह प्रकार के आभूषण, चौसठ कलाओं से युक्त कला गुण, वज्रवृषभनाराच संहनन, सम चतुरस्र संस्थान युक्त शरीर। पुरुष का छींक से व स्त्री का जम्भाई से कष्ट रहित मरण होता है एवं स्वर्ग ही जाते हैं।

जम्बू द्वीप में क्षेत्र, पर्वत, नदियों का वर्णन

49 इस जम्बूद्वीप में सात क्षेत्र, एक मेरू, दो कुरू(देवकुरु उत्तरकुरु), जम्बू और शाल्मलि दो वृक्ष, छह कुलाचल, कुलाचलों पर स्थित छह महा सरोवर, चौदह महानदियाँ, बारह विभङ्गा नदियाँ, सोलह वक्षारगिरि, चार गजदन्त, चौतीस नगरियाँ, चौतीस रजतगिरी, चौतीस वृषभाचल, अड़सठ गुफाएँ, चार गोलाकार नाभिगिरि एवं सैंतीस सौ चवालीस विद्याधर राजाओं के नगर हैं, इन सभी से यह जम्बूद्वीप अत्यधिक सुशोभित है। इस से दूने धातकीखण्ड में और पुष्करार्ध में हैं। लक्ष्मणजी के समान कृष्णजी ने भी कोटि शिला उठाई प्रतिनारायण जरासन्ध को मारने का निश्चय किया।

''विजयार्द्ध का माप''

जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र के विजयार्ध की ऊँचाई पच्चीस योजन है, सवा छः योजन पृथ्वी के नीचे स्थित है, पचास योजन चौड़ा है और चाँदी के समान सफेद वर्ण वाला है।

''समुद्रों के जल का स्वाद''

लवण समुद्र के जल का स्वाद नमक के समान है। वारुणीवर समुद्र के जल का स्वाद शराब के समान है, घृतवर का जल घी और क्षीरवर का जल दूध के समान है। कालोदधि और अन्तिम स्वंयम्भूरमण समुद्र का जल पानी के समान है। पुष्करवर समुद्र का मधु और पानी के समान तथा बाकी समस्त समुद्र इक्षु रस के समान स्वाद वाले हैं।

''समुद्रों में मत्स्यों की अवगाहना''

लवण समुद्र के तीर पर सम्मूर्च्छन जन्म से उत्पन्न हुये महामत्स्य नौ योजन लम्बे तथा समुद्र के मध्य में अठारह योजन लम्बे हैं, गर्भ जन्म से उत्पन्न होने वाले मत्स्यों की लम्बाई सम्मूर्च्छन मत्स्यों की लम्बाई से आधी होती है। स्वयम्भूरमण समुद्र के तीर पर मत्स्यों की लम्बाई पाँचसौ योजन की, समुद्र के मध्य में एक हजार योजन लम्बे, पाँच सौ योजन चौड़े, ढ़ाई सौ योजन ऊँचे मत्स्य हैं, राघवमत्स्य का घनफल साढ़े बारह करोड़ योजन से ज्यादा निकलता है। लवणसमुद्र में नौ योजन, कालोदधि में अठारह योजन और स्वयम्भूरमण में एक हजार योजन इन तीन

समुद्रों के सिवाय अन्य समुद्रों में मत्स्यादि जलचर जीव नहीं होते हैं।

कुलकर वंश और भवन

50 प्रथम कुलकर प्रतिश्रुति महाप्रभाव से सम्पन्न एवं अपने पूर्व भव के स्मरण से सहित थे। प्रतिश्रुति कुलकर के स्वर्गस्थ होने पर उन्हीं का पुत्र सन्मति द्वितीय कुलकर हुआ इसी प्रकार सभी कुलकर एक ही वंश के थे। उस समय भरत क्षेत्र में कल्पवृक्ष रूप प्रासाद अन्यत्र नष्ट हो गये थे परन्तु राजा नाभिराय का जो कल्पवृक्ष रूप प्रासाद था वही पृथ्वी निर्मित बन गया था, राजा नाभिराय के उस प्रासाद का नाम सर्वतोभद्र था, उसके खम्भे स्वर्ण मय थे, दीवालें नाना प्रकार के मणियों से निर्मित थीं वह पुखराज तथा मोती आदि की मालाओं से सुशोभित था, इक्यासीखण्ड से युक्त था और कोट, वापिका तथा बाग-बगीचों से अलङ्कृत था। वह अधिष्ठाता नाभिराय के प्रभाव से अकेला ही अनेक कल्पवृक्षों से आवृत था तथा पृथ्वी के मध्य अपने स्थान पर अधिष्ठित था।

51 आदिनाथ भगवान् का माता के गर्भ में वैसा ही निवास था जैसा कि जल में सूर्य प्रतिबिम्बित होता है।

राजा श्रेयांस-आहारदान

52 राजा श्रेयाँस के जीव श्रीमति और आदिनाथ जी के जीव वज्रजङ्घ ने दस भव पूर्व चारण ऋद्धि के धारक अपने ही दो पुत्रों के लिए जिस विधि से दान दिया था, वह सब विधि भगवान् के दर्शन करते ही श्रेयाँस की स्मृति में आ गयी, आहार के बाद ऋषभ देव तप की वृद्धि के लिए वन को गये तब देवों ने अभिषेक पूर्वक दान तीर्थङ्कर राजा श्रेयाँस की पूजा की थी। दान, पूजा, तप और शील यह गृहस्थ का चार प्रकार का धर्म शरीर से करने योग्य है।

सेनापति जय कुमार की दीक्षा

53 भरत चक्रवर्ती के सेनापति जयकुमार के साथ एक सौ आठ राजाओं ने दीक्षा धारण की और उनकी पत्नी सुलोचना ने अनेक सपत्नियों के साथ ब्राह्मी और सुन्दरी आर्यिका के पास दीक्षा ली। दीक्षोपरान्त जयकुमार शीघ्र ही द्वादशाङ्ग के पाठी होकर भगवान् के गणधर हो गये और आर्यिका सुलोचना ग्यारह अङ्गों की धारक हो गयी एवं नमि-विनमि भी छिहत्तर-सतत्तर वें गणधर हुये थे।

54 श्रीकृष्ण के पिता वसुदेव के बैरी सूर्पक नामक देव ने वसुदेव का हरण किया, उन्होंने मुक्कों से उसकी पिटाई की तो छूटकर गङ्गा नदी में गिरे, वहाँ से निकलकर जङ्गल में घूमने लगे वहाँ

म्लेच्छों के राजा ने उन्हे देखा जिससे म्लेच्छराज की जरा नामक कन्या को व्याहकर वहीं रहने लगे और उस कन्या से जरत्कुमार नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। नेमिनाथ भगवान् जब गर्भ में आये तब प्रतिदिन, दिन में तीन बार साढ़े तीन करोड़ रत्नों की वर्षा होती थी, चौदह रत्नों की एक-एक हजार देव रक्षा करते थे।

कौन-सी निधि क्या-क्या देती

55 **नव निधियाँ**-1.कालनिधि- में ज्योतिष्शास्त्र, निमित्तशास्त्र, न्यायशास्त्र कलाशास्त्र, व्याकरणशास्त्र पुराण आदि का सद्भाव होता है। **2.महाकालनिधि-** में विद्वानों के द्वारा निर्णय करने योग्य पञ्च लोह आदि नाना प्रकार के लोहों का सद्भाव होता है। **3.पाण्डुकनिधि-** में शालि, ब्रीही, जौं आदि समस्त प्रकार के धान्य तथा कड़वे-चरपरे आदि पदार्थों का सद्भाव होता है। **4.माणवकनिधि-**में कवच, ढाल, तलवार, बाण, शक्ति, तोमर, चक्रादि नाना प्रकार के दिव्य शस्त्रों का सद्भाव होता है। **5.सर्पनिधि-** में शय्या, आसन आदि नाना प्रकार की वस्तुओं तथा घर के उपयोग में आने वाले नाना प्रकार के बर्तनों का सद्भाव होता है। **6.सर्वरत्ननिधि-** इन्द्रनीलमणि, महानीलमणि, वज्रमणिआदि बड़ी-बड़ी दो शिखा के धारक उत्तमोत्तम रत्नों का सद्भाव होता है। **7.शङ्खनिधि-**भेरी, शङ्ख, नगाड़े, वीणा, छल्लरी और मृदङ्ग आदि आघात से तथा फूँककर बजाने योग्य नाना प्रकार के बाजों का सद्भाव होता है। **8.पद्मनिधि-** पाटाम्बर, चीन, महानेत्र, दुकूल, उत्तम कम्बल तथा नाना प्रकार के रङ्ग-बिरङ्गे वस्त्रों का सद्भाव होता है। **9.पिङ्गलनिधि-**कड़े कटि सूत्र आदि स्त्री-पुरूषों के आभूषण और हाथी-घोड़ा आदि के आभूषणों का सद्भाव होता है। ये नवनिधियां कामवृष्टि नामक गृहपति के अधीन होती हैं और सदा चक्रवर्ती के मनोरथों को पूर्ण करती हैं।

56 **श्वेताम्बर मान्यता-** नन्दीश्वरद्वीप तक विद्याधर जा सकते हैं, और ऋद्विधारी मुनि तेरहवे रुचकगिरि द्वीप तक जा सकते हैं।

57 **इस अध्याय में वर्णनीय विषय-** 1. जम्बूद्वीप का वर्णन नक्शा द्वारा, 2. सुमेरुपर्वत का वर्णन एवं उसकी गणना, कौन सा वन कहाँ है, कितनी ऊँचाई पर है 3. नन्दीश्वर द्वीप का वर्णन, सभी द्वीप और समुद्रों को दूना करके एक सौ त्रेसठ करोड़ चौरासी लाख योजन प्रमाण निकलता है, 4. छियानवे अन्तर्द्वीप का वर्णन, 5. पैतालीस लाख योजन प्रमाण ढाईद्वीप का नक्शा द्वारा वर्णन करना चाहिए, 6. मध्यलोक के चार सौ अठ्ठावन जिनालय का वर्णन, 7. पाँच भरत, पाँच ऐरावत के त्रिकाल सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस तीर्थङ्करों का वर्णन करना चाहिए।

58 **मध्यलोक के चार सौ अट्ठावन अकृत्रिम जिनालय-** ढाईद्वीप में पञ्चमेरु के अस्सी,

कुलाचलों के तीस, विजयार्द्ध के एक सौ सत्तर, गजदन्त के बीस, वक्षारगिरि के अस्सी, शाल्मलि वृक्ष के पाँच, जम्बूवृक्ष के पाँच, नन्दीश्वर द्वीप के बावन, इष्वाकार पर्वत के चार, मानुषोत्तर के चार, कुण्डलगिरि के चार, रुचकगिरि के चार, कुल चार सौ अट्ठावन जिनालय होते हैं।

59 पाण्डुक वन में चारों दिशाओं में चार स्वर्ण शिलायें हैं, जम्बूद्वीप से धातकीखण्ड का क्षेत्रफल एक सौ चवालीस गुना है, जम्बूद्वीप से कालोदधि का क्षेत्रफल छः सौ बहत्तर गुना है, जम्बूद्वीप से पुष्करार्द्ध का क्षेत्रफल ग्यारह सौ गुना है।

60 अवसर्पिणी में समुद्र नीचे जाता है, उत्सर्पिणी में समुद्र ऊपर बढ़ता है, इससे सिद्ध है कि क्षेत्र की भी हानि वृद्धि होती है।

61 पञ्चमकाल के तीन वर्ष, साढ़े आठ माह शेष रहने पर कार्तिक वदी अमावस्या को प्रातः स्वाति नक्षत्र में मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका चारों एक साथ स्वर्ग जायेंगे। (त्रि.सा.860)

62 भरत-ऐरावत में उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी का विधान है, विजायार्द्ध पर्वत और म्लेच्छखण्ड में नहीं, अतःपञ्चम काल के अन्त में कुवृष्टि के समय विद्याधर और देव विजायार्द्ध की गुफाओं में मनुष्यों को छिपा देते हैं।

63 **एक सौ उनहत्तर महापुरुष-** चौबीस तीर्थङ्कर, अड़तालीस माता-पिता, चौबीस कामदेव, बारह चक्रवर्ती, नौ नारायण, नौ प्रतिनारायण, नौ बलभद्र, चौदह कुलकर, ग्यारह रूद्र, नौ नारद।

64 मिथ्यादृष्टि देव भी नन्दीश्वर की वन्दना करने जाते हैं तभी तो लिखा है ''वयन नहीं कहे, लखि होत सम्यक धरम''।

''इति तृतीय अध्याय''

★★★

''अथ चतुर्थ अध्याय''

1 **आज्ञा-** राष्ट्रपति भवन में राष्ट्रपति का पूरा परिवार रहता है, किन्तु आज्ञा राष्ट्रपति की चलती है, इसी प्रकार स्वर्गों में आज्ञा इन्द्र की ही चलती है।

2 सौधर्मेन्द्र अपनी सभा को सम्बोधित करते हुये ऐसे भाव विभोर हो जाते हैं, कि देखों हमारे पास रत्नत्रय धारण करने की योग्यता ही नहीं है, देव कहते हैं कि हे सुरेश्वर ! मनुष्य बनकर रत्नत्रय धारण कर सकते हैं, तब इन्द्र ने कहा जो मनुष्य बन जाता है, उनको कल्याण करने की

भावना ही नहीं होती है, पृथ्वी पर ब्रह्मलोक से गये रामचन्द्रजी कैसे राग में फँसे हुये हैं, अभी तक कल्याण की भावना ही नहीं हो रही, उनको राज्य और रानियों से मोह नहीं, किन्तु लक्ष्मण जी से अधिक मोह है, इस बात को सुनकर देव उनके स्नेह की परीक्षा करने आये, लक्ष्मणजी से मिले और कहा रामचन्द्रजी मर गये, यह सुनते ही लक्ष्मण जी की मृत्यु हो गयी।

3 मनुष्य प्रतिदिन आहार करता हुआ भी सङ्कल्प के कारण छठवे-सातवे गुणस्थान वाला हो सकता है, सङ्कल्प के अभाव में इन्द्र प्रतिदिन आहार नहीं करता है तो भी छठवें-सातवें गुणस्थान वाला नहीं होता है।

4 **उपपाद शय्या**- देवों की विवृत योनि होती है, वे अन्तर्मुहूर्त में जवान हो जाते हैं, उनका स्वागत करने देव लोग खड़े रहते हैं, वाद्य यन्त्र बजते हैं, किन्तु नारकियों को इससे विपरीत उत्पन्न होते ही अपार दुःख उत्पन्न होने लगता है।

5 लौकान्तिक देवों की आयु सिद्धान्त सार दीपक में नौ सागर की बतलायी है।

6 चन्द्र इन्द्र की आयु एक पल्य एक लाख वर्ष है, सूर्य प्रतीन्द्र की आयु एक पल्य एक हजार वर्ष है एवं जम्बूद्वीप में छत्तीस ध्रुव तारे हैं।

7 व्यन्तरों और ज्योतिषियों में त्रायस्त्रिंश और लोकपाल नहीं होते क्योंकि त्रायस्त्रिंश और लोकपाल में उत्पन्न होने के लिये विशेष पुण्य की आवश्यकता होती है, किन्तु व्यन्तर और ज्योतिषियों में उत्पन्न होने के लिए इतने पुण्य की आवश्यकता नहीं होती है।

8 बारह इन्द्रों मे छः दक्षिणेन्द्र एक भवावतारी होते हैं।

9 सोलहवें स्वर्ग के देव काम सेवन नहीं करते, किन्तु मन में काम सेवन का विकल्प आते ही तृप्ति हो जाती है।

10 सभी देवियों की पीत लेश्या होती है, सोलहवें स्वर्ग में देवी की पीत व देवों की शुक्ल लेश्या होती है।

11 **देवियों की उत्पत्ति पहले**-दूसरे स्वर्ग में होती है, पहले स्वर्ग की देवियाँ3, 5, 7, 9, 11, 13, 15 वें स्वर्ग में जाती हैं और दूसरे स्वर्ग से 4, 6, 8, 10, 12, 14, 16 वें स्वर्ग में जाती हैं।

12 असंख्यात देव एक समय में मरते भी हैं और जन्मते भी हैं, तिर्यञ्च वहाँ जन्म लेकर देवों की संख्या पूर्ति करते हैं।

13 गति, शरीर, परिग्रह अभिमान दुःख के कारण हैं, और कम गमन-आगमन, शरीर के प्रति कम राग, कम परिग्रह और कम अहङ्कार ये सुख के कारण हैं।

100 इन्द्र

14 भवनवासियों के चालीस, व्यन्तरों के बत्तीस, कल्पवासियों के चौबीस, ज्योतिषियों के सूर्य और चन्द्र, मनुष्यों का इन्द्र चक्रवर्ती एवं पशुओं का इन्द्र सिंह होता है, ये सौ इन्द्र भगवान् को नमस्कार करते हैं।

15 **श्वेताम्बर मत-** सोलहवें स्वर्ग में देवियाँ नहीं जाती, किन्तु देवों को काम की बाधा होती है तो दूसरे स्वर्ग में पहुँच जाते हैं।

16 श्री, ह्री आदि व्यन्तर देवियाँ हैं (उ.पु.), कुछ आचार्य इनको भवनवासिनी देवी मानते हैं।

17 छह सौ छप्पन योजन के क्षेत्र में जितने प्रदेश हैं उतने ज्योतिषी देव हैं।

18 **चन्द्रमा के विमान को सोलह हजार**, सूर्य के विमान को आठ हजार, ग्रह के विमान को चार हजार, नक्षत्र के विमान को दो हजार, प्रकीर्णक के विमान को एक हजार, पूर्व से दक्षिण तक बैल के मुखाकार वाले, दक्षिण से पश्चिम तक सिंह के मुखाकार वाले, पश्चिम से उत्तर तक हाथी के मुखाकार वाले, उत्तर से पूर्व तक घोड़े के मुखाकार वाले देवता हमेशा खींचते हैं।

19 ज्योतिषियों का गमन सुमेरू के **1121** योजन दूर से होता है, शेष ज्योतिषियों का भी इसके अन्दर गमन नहीं होता है।

20 सूर्य की एक सौ चौरासी गलियाँ हैं और चन्द्रमा की पन्द्रह गलियाँ हैं।

21 बाह्य वीथी को कर्क और मध्य वीथी को मकर कहते हैं।

22 चौदह जनवरी को मकर सङ्क्रान्ति, चौदह जुलाई को कर्क सङ्क्रान्ति होती है।

23 एक मिनिट में सूर्य छः लाख कि.मी. चलता है।

24 सौधर्मेन्द्र की आयु जब सोलह अङ्क प्रमाण होती है तब दो सागर होते हैं।

25 **''सारस्वतादित्य''** इस सूत्र में च शब्द से सोलह देवों का और ग्रहण करना, जो एक दिशा में सारस्वत् आदि के बाद दो-दो भेद लेना चाहिए, 407820 कुल लौकान्तिक देव होते हैं।

26 सोलहवें स्वर्ग के देवों की आयु बाईस सागर की है, एवं वहाँ के त्रायस्त्रिंश व आभियोग्य जाति के देवों की आयु दस पल्य है।

27 स्वर्ग में तीर्थङ्कर बनने वाले जीव की एवं अन्य सम्यग्दृष्टि देवों की भी माला नहीं मुरझाती है, किन्तु मिथ्यादृष्टि देवों की मरण के पूर्व माला मुरझाने लगती है।

''इति चतुर्थ अध्याय''

★★★

"अथ पञ्चम् अध्याय"

1 अजीव विशेषण से जीव छूट गया, काय विशेषण से काल द्रव्य छूट गया, अचेतन द्रव्य पाँच, कायवान द्रव्य पाँच, बहु प्रदेशी द्रव्य पाँच, अजीव तथा कायवान चार द्रव्य हैं।

2 क्रिया- लोहे के गोले को खिसकाना क्षेत्रान्तार क्रिया है और पानी को अलग करना प्रदेशान्तर क्रिया है।

3 एक बार नाड़ी चलने पर चार हजार से अधिक आवलियाँ होती हैं।

4 सिद्ध परमेष्ठी का भी लोकान्त के लिए गमन होता है, किन्तु प्रदेशों का हलन-चलन नहीं होता है, क्रियावती शक्ति सिर्फ जीव और पुद्गल में होती है।

5 **सत्यनारायण के छह पुत्र-** ज्ञानचन्द्र, रूपचन्द्र, धर्मचन्द्र, अधर्मचन्द्र, गगनचन्द्र और कालचन्द्र छहों को पिता ने बुलाकर काम सौंपा। ज्ञानचन्द्र ! तुम्हें जानने-देखने का काम है। रूपचन्द्र ! तुम्हे रूप प्रदर्शन करना है। धर्मचन्द्र ! जीव-पुद्गल तुम्हारे दोनों बड़े भैया हैं, उनको चलने में सहायता देना। अधर्मचन्द्र ! जीव-पुद्गल चलकर आयें तो विश्राम देना। गगनचन्द्र ! आवास मन्त्री है, सबको आवास देना। काल ! सबको परिवर्तन करने में सहयोग देना। ज्ञानचन्द्र सबसे बड़े थे अतः मनमानी करने लगे, ज्ञायक स्वभाव से उल्टा राग-द्वेष करने लगे, इससे संसार में दुःख भोगने लगे, दुःखों से बचने के लिए अपने ज्ञायक स्वभाव में आना आवश्यक है।

6 इन्दौर की एक मारूति जङ्गल में पकड़ी जाने वाली थी, उन्होंने देखा खतरा है इसलिये गाड़ी छोड़कर बाहर घूमने लगे, पुलिस ने पूँछा ये गाड़ी किसकी है, उन्होंने कहा हमारी नहीं हैं, तो खतरा से बच गये, इसी प्रकार हाट-हवेली हमारे नहीं हैं ऐसा मानेंगे तो कर्मबन्ध से बच जायेंगे।

7 जीव और पुद्गल की कुश्ती होती रहती है, जीत-हार किसी की भी हो, लेकिन हानि जीव की ही होती है।

8 जीव कहता है, हे भगवन् ! इन कर्म रूपी दुष्टों ने हमें बेहाल कर दिया है, जाँच हुयी तो पुद्गल कहता है, कि भगवन् ! इन्होंने राग-द्वेष से कर्मों का कर्जा लिया है, वो चुका देवें तो हम चले जायेंगे।

9 प्रदेश इतना छोटा होता है कि रेजर से बाल बनाया, रेजर नीचे तक आया की इतने में ऊपर के कटे वालों में असंख्यात प्रदेशों की वृद्धि हो जाती है।

10 पानी में चलती हुई नाव में यदि एक राई का दाना डालें, तो नाव राई के वजन से असंख्यात प्रदेश नीचे दब जाएगी, अल्पज्ञानी को वह सूक्ष्म कार्य समझ में नहीं आता है।

11 **असंख्यात प्रदेश**- जैसे दस मीटर कपड़े को घरी लगा कर रख दो तो भी वह असंख्यात प्रदेशी है, उसी प्रकार जीव चाहे राघवमच्छ के शरीर में हो या चींटी के शरीर में हो वह असंख्यात प्रदेशी ही होता है।

12 **आकाश में जो नीला**-नीला दिखाई देता है वह सूक्ष्म निगोदिया जीवों की कापोत लेश्या है, उनका वह वर्ण दिखाई देता है, किसी का मत है ऋजु विमान पाँच रङ्ग वाला है, उसका नीचे वाला नीला रङ्ग दिखाई दे रहा है।

13 **छह द्रव्य**- ग्रन्थ का पढ़ने वाला जीवद्रव्य, ग्रन्थ अजीवद्रव्य, ग्रन्थ को इधर-उधर ले जाना धर्मद्रव्य, ग्रन्थ विराजमान करना अधर्मद्रव्य, ग्रन्थ का आकार आकाशद्रव्य, ग्रन्थ का जो भी परिणमन होता है वह कालद्रव्य की सहायता से होता है।

14 **मशीन में छह द्रव्य**- सिलने वाला जीवद्रव्य, मशीन अजीवद्रव्य, कपड़ा सिलने में आ रहा है धर्मद्रव्य, टाका लगाते समय ठहरता है अधर्मद्रव्य, धागा अवगाहन पा रहा है आकाशद्रव्य, एवं सब पुर्जों का परिणमन काल द्रव्य की सहायता से होता है।

15 **''सुखदुःखजीवितमरणोपग्रहाश्च''**- मिश्री खाने मिले तो सुख होता है, काँटा लगे तो दुःख होता है, भोजन से शरीर चलता है तो जीवन रहता है, आयु कर्म की उदीरणा से मरण हो जाता है।

16 जो देख रहा है वह जीव है और जो दिख रहा है वह पुद्गल है।

17 जैन सिद्धान्त में उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य माना गया है, किन्तु दूसरे लोग मानते हैं, कि ब्रह्मा-सृष्टिकर्ता, विष्णु-रक्षक, महेश-संहारक हैं, जैसे शरीर में बुखार आया तो ऊष्णता का उत्पाद, ठण्डेपन का व्यय और शरीर ध्रौव्य है।

18 **''गुणसाम्ये सदृशानां''**- जैसे चक्रवर्ती से चक्रवर्ती नहीं मिलते, तीर्थङ्कर से तीर्थङ्कर नहीं मिलते, नारायण से नारायण नहीं मिलते, उसी प्रकार अविभागी प्रतिच्छेदों की समानता होने पर पुद्गलों का बन्ध नहीं होता है, दो अधिक गुण होना आवश्यक है।

19 **'पज्जयमूढ़ा'**- एक धनाढ्य व्यक्ति ने सोने के गणेश और चूहा बनवाये थे, दैव योग से उन्हे बेंचने कि नौवत आ गई, दुकानदारों ने दोनों को एक ही भाव में माँगा, क्योंकि दुकानदारों की दृष्टि मे वह सोना अर्थात् द्रव्य था और बेंचने वाले की दृष्टि में वह मूर्ति अर्थात् पर्याय थी,

इसलिए वह दु:खी हो रहा था।

20 **'पज्जयविजुदं'**- एक व्यक्ति को आभूषण बनवाने के लिए सोना खरीदना था लेकिन वह सोना किसी भी पर्याय मे नहीं चाहता था, पर विना पर्याय के सोना प्राप्त नहीं होता है, द्रव्य-गुण-पर्याय तीनों को ध्यान में रखने से ही तत्त्व का सही निर्णय होता है।

21 अणव: स्कन्धाश्च सूत्र में समास क्यों नहीं किया ? क्योंकि यहाँ भेद रूप कथन किया है। इस सूत्र से पहले जो दो सूत्र कहे हैं, 'स्पर्शरसगन्धवर्णवन्त:पुद्गला:', 'शब्दबन्धसौक्ष्म्य-स्थौल्यसंस्थानभेदतमच्छायातपोद्योतवन्तश्च' के साथ अलग सम्बन्ध बताने के लिये किया है, अणु स्पर्श रस गन्ध वर्ण वाले हैं, किन्तु स्कन्ध शब्द बन्ध एवं स्पर्शादि वाले हैं।

''इति पञ्चम अध्याय''

★★★

"अथ षष्ठम् अध्याय"

1 सामान्य से तीन प्रकार का योग होता है, विशेष की अपेक्षा पन्द्रह प्रकार का योग होता है, चार मनोयोग- सत्य, असत्य, उभय, अनुभय, चार वचनयोग-सत्य, असत्य, उभय, अनुभय, सात काययोग- औदरिक, औदरिकमिश्र, वैक्रियक, वैक्रियकमिश्र, आहारक, आहारकमिश्र, कार्मण काययोग।

2 परमार्थ से यदि काय से पाप हुआ है तो सौ प्रतिशत दण्ड, वचन से हजार प्रतिशत दण्ड, मन से दस हजार प्रतिशत दण्ड भोगना पड़ता है। लोकव्यवहार में मन से पाप हुआ है तो कोई दण्ड नहीं मिलता, वचन से पाप हुआ है तो हजार प्रतिशत दण्ड मिलता है और काय से पाप हुआ है तो दस हजार प्रतिशत दण्ड मिलता है।

3 तन की शक्ति को विकसित करने के लिए मन को ठीक करें, यही मन स्विच बोर्ड है, सारा कनेक्शन यहीं है, सारे सॉफ्टवेयर के तार इसी मन से जुड़े हैं।

4 मन के पार चेतना के स्तर पर जीने का प्रयास करना चाहिए।

5 सारी बीमारी व स्वस्थता सोच पर निर्भर है 'थूबोनजी' क्षेत्र में प्राय: सभी सङ्घ बीमार था, एक बहन भी बीमार हो गयी, उनके लिये आचार्य श्री जी से उपाय पूँछा तो उन्होंने कहा ''नहा दो'' (नहा वनस्पति) यही बात उन बहन से कही तो उन्होंने आस्था वश औषधि की जगह नहा लिया (स्नान) और वे ठीक भी हो गयीं। जबकि नहा नामक दवा देने को कहा था।

6 **वचनों की शक्ति-** गुस्सा आने पर शान्तस्वभावोऽहम्, शान्तस्वभावोऽहम्, शान्तस्वभावोऽहं

ऐसा चिन्तन करने से गुस्सा शान्त हो जाता है।

7 **मनसा जनितं पापं, मनसैव परिमार्ज्येत्।**
जलेन जनितः पङ्कः, जलेनैव परिमार्ज्यते।।
जो पाप मन से होता है वह मन से आलोचना करने से धुल जाता है, जैसे पानी से उत्पन्न कीचड़ पानी से धुल जाता है।

8 जैसी सोच वैसा जीवन मुनि को राज्य परिवार का राग हुआ तो रौद्रध्यान हो गया और सोच बदली तो केवलज्ञान हो गया।

9 **ईर्यापथ आश्रव-** बन्द घर में आये अतिथि तत्काल वापस हो जाते हैं तथा दीवाल पर पत्थर फेंकने से तत्काल नीचे गिर जाता है, उसी प्रकार ईर्यापथ आस्रव में स्थिति बन्ध नहीं होता है।

10 दुकान में आय व्यय होते हैं किन्तु आय अधिक और व्यय कम होता है उसी प्रकार शुभोपयोग में आस्रव-बन्ध कम और संवर-निर्जरा अधिक होते हैं।

11 पच्चीस क्रियाओं में कुछ पुण्यबन्ध का कारण हैं, कुछ पाप बन्ध का कारण हैं, जैसे प्रारम्भ की पाँच क्रियायें पुण्य-पाप दोनों का कारण है, छः से दस तक हिंसा की प्रधानता से हैं, ग्यारह से पन्द्रह तक इन्द्रिय विषयों की प्रधानता से हैं, सोलह से बीस तक धर्माचरण से वञ्चित रखने वाली हैं, इक्कीस से पच्चीस तक उच्च धर्माचरण से गिराने वाली हैं, प्रारम्भ की क्रियाएं क्रमशः सम्यक्त्व और मिथ्यात्व को बढ़ाने वाली हैं।

12 एक स्त्री पुत्रादि का राग, दूसरा पञ्च परमेष्ठी का राग, किसको छोड़ना ? एक बुद्धि पूर्वक छोड़ना, दूसरा छूट जाएगा, एक आग है, दूसरा शीतल छाया है, एक का राग नरक तक ले जा सकता है सुभौम चक्रवर्ती की तरह और दूसरा सर्वार्थसिद्धि तक ले जा सकता है नकुल, सहदेव की तरह।

13 **तन्दुलमच्छ-** एक राजा ने अपने रसोइया से मांस बनवाया, लेकिन खा नहीं पाया, दो-तीन बार ऐसा होता रहा, इतने में राजा की मृत्यु हो गयी, राजा मरकर तन्दुलमच्छ बना, रसोइया राघवमच्छ बना, दोनों मरकर सातवें नरक गये।

14 बड़े-बड़े धनपति मरकर अपने ही गोदामों में चूहा बन जाते हैं, अपने ही सेप्टिक टैंक के कीड़ा बन जाते हैं, अतः परिणमों को सम्भालना चाहिए।

15 **मनुष्यों में पाँच प्रकार के दुःख-** 1.गर्भ, 2.जन्म, 3.बाल, 4.युवा, 5.वृद्ध अवस्था सम्बन्धी।

16 **तिर्यञ्चों में पाँच प्रकार के दुःख-** 1.निगोद, 2.स्थावर, 3.विकलत्रय, 4.असैनीपञ्चेन्द्रिय,

5.सैनीपञ्चेन्द्रिय पर्याय सम्बन्धी।

17 **उपयोग करना अपने अधीन है-** बच्चे को पाँच रुपये दिये चाहे तो खर्च कर सकता है या दान कर सकता है अथवा विभाग करके उपयोग कर सकता है, उसी प्रकार पाँच इन्द्रियाँ मिली हैं, चाहे तो भोग करें अथवा संवर निर्जरा करें।

18 कषाय करने से नरक निगोद के छाले पड़ते हैं, जैसे रेत मथने से मक्खन नहीं निकलता उल्टा हाथों में छाले पड़ते है।

19 अनन्तानन्त जीवों को तो सुखाभास भी नहीं है, जैसे अस्पताल में भर्ती जीव और निगोदिया आदि जीव।

20 तीव्र भाव से संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव सत्तर कोड़ा-कोड़ी सागर की मिथ्यात्व की स्थिति का बन्ध करता है।

21 **अधिकरण-** बालक के हाथ में पिस्तौल आती है, तो वह किसी भी बालक को या माता-पिता, भाई-बहन के सीने में लगाने लगता है, यदि इसके हाथ में माला दे दो, तो वह सीधा अकड़ कर बैठ जाता है और यदि पिच्छी हाथ में आ जाये तो मुनि बनने की चेष्टा करने लगता है, अत: अच्छे उपकरणों को ही अपने पास रखना चाहिए।

22 **जीवाधिकरण के एक सौ आठ भेद-** अशुभ और शुभ दोनों एक सौ आठ-एक सौ आठ भेद वाले होते हैं, यह अधिकरण समरम्भादि सत्ताईस का चार कषाय के साथ गुणा करने से एक सौ आठ भेद होते हैं और अनन्तानुबन्धी आदि सोलह के साथ गुणा करने पर चार सौ बत्तीस भेद हो जाते हैं।

23 **उपकरण संयोग-** दूसरे के वस्त्र, पिच्छी, पेन आदि उपयोग नहीं करना चाहिए।

24 'आओ चोर चोरी कर ले गओ, मोरी मूँदत मुगद फिरे' अर्थात् किसी के घर में चोरी हो गयी, दूसरे दिन उसने घर के पीछे की पानी बहने की मोरी बन्द कर दी, किन्तु खिड़की बन्द की ही नहीं, जहाँ से चोर आ सकता था, उसी प्रकार अज्ञानी प्राणी जिन भावों से कर्मों का बन्ध होता है उन्हें पहचानता ही नहीं है।

25 सामान्य साधु के अवर्णवाद से जब मनुष्य दुर्गति को प्राप्त होते हैं तो केवली के अवर्णवाद से कहाँ जावेंगे ?

26 **फोटो बिगाड़ दी-** फोटोग्राफर ने कहा ! रेडी, तभी नाक पर मक्खी बैठी, उसे उड़ाने के लिये हाथ आगे आ गया, अब कहता तुमने फोटो बिगाड़ दी, इसी तरह आयु कर्म का बन्ध त्रिभाग

(जीवन का दो हिस्सा बीत जाने पर)होता है, कब त्रिभाग पड़े, यह मालूम नहीं इसलिए सावधान रहना चाहिए अन्यथा भव विगड़ जाता है।

27 टी.वी. नहीं है तो 'मिल जाए' इस निमित्त आर्तध्यान होता है और है तो देखने से विषय कषाय की पुष्टि करता है इसलिए रौद्रध्यान होता है।

28 कीचड़ सने झाडू से घर साफ नहीं होता उसी प्रकार कषायों से सनी आत्मा को सुख नहीं मिलता है।

29 एक-डेढ़ वर्ष की बच्ची रेंगते-रेंगते गयी और टी.वी. खोल कर देखने लगी, किसी ने पूँछा कैंसे सीख गयी ? उत्तर मिला ! उसकी मम्मी देखती थी, इसलिए पेट से ही सीख कर आई है।

30 शक्ति से अधिक करने से ख्याति, पूजा, लाभादि की चाह सिद्ध होती है और शक्ति छिपाकर करने से श्रद्धा की न्यूतनता सिद्ध होती है।

31 **जैसे विभीषण राक्षस वंश का** होते हुए भी, राक्षस वंश के विनाश का कारण बना, लकड़ी काटने में कुल्हाड़ी में लगा लकड़ी का बेंत ही कारण है तथा लोहे को लोहा काटता है उसी प्रकार तीर्थङ्कर प्रकृति कर्म के वंश की होते हुए भी कर्मों के वंश को नष्ट करने वाली है।

''इति षष्ठम् अध्याय''

★★★

''अथ सप्तम् अध्याय''

1 चरणानुयोग बाह्य साधनों से अन्तरङ्ग परिणामों को सुधारने का तरीका बतलाता है।

2 '**जगत्कायस्वभावौ वा संवेग वैराग्यार्थम्**'-इन दो में बारह भावनाएँ आ जाती हैं या पूरा भावना अधिकार आ जाता है।

3 **एक व्यक्ति को पुत्र नहीं हो** रहा था, ज्योतिषी ने कहा जब तुम बारह वर्ष का प्रवास करोगे, तो तुम्हें पुत्र रत्न की प्राप्ति हो जायेगी, वह विदेश गया, यहाँ पुत्र भी ग्यारह वर्ष का हो गया, पिता को कभी देखा नहीं था, फोटो देखकर स्टेशन पर लेने गया, बहुत ठण्ड थी वह बालक पिता की प्रतीक्षा में बैठा रहा, ठण्ड में चिल्लाता रहा, अपरिचित होने से अपने रूम से उसको बाहर निकाल दिया, ठण्ड के कारण मर गया, सुबह घर जाकर पता किया बेटा कहाँ है, पत्नी ने कहा ! वह तो आप को लेने गया था, पता चला मेरा ही बेटा था, मैंने ही कमरे से निकाल दिया था, यह जगत का स्वभाव है।

4 भारत में हजारों ट्रेनें चल रही हैं, यदि हमारा त्याग नहीं हैं तो हमें आरम्भ का दोष लग रहा है,

इसलिए आज हम वाहन का प्रयोग नहीं करेंगे, ऐसा नियम कर लेना चाहिये, कपड़ों का, नल के पानी का और गृहस्थी सम्बन्धी अनावश्यक कार्यों का त्याग करने से पाप से बच जाते हैं।

5 **'मूर्च्छा परिग्रहः'**– यह निर्दोष लक्षण है, यदि बहिरङ्ग पदार्थों को परिग्रह का लक्षण बनावेंगे तो पशु निष्परिग्रही हो जायेंगे और तीर्थङ्कर आदि भी परिग्रही हो जायेंगे।

6 अगर कर्म बन्ध से बचना है तो घर को आश्रम बनाकर अतिथि की तरह रहो और कुछ भी अपना मत मानो।

वास्तविक अदत्तादान

7 वर्णीजी चिरोंजाबाई के साथ गोमटेश यात्रा को गये, वहाँ वर्णीजी स्नान करने नदी पर गये, नहाते समय पैसों का पर्स अलग रख दिया, वर्णीजी ने नहाया, कमरे में आ गये, भोजन करने बैठे तब पैसों का पर्स याद आया, जैसे-तैसे भोजन किया, नदी पर गये महिलायें पानी भर कर आ रहीं थीं, पर्स वही पड़ा था, वर्णीजी ने उनसे पूँछा, आपने पर्स को क्यों नहीं उठाया ? उन्होंने जबाव दिया, हम गोमटेश के राज्य में विना दी हुयी वस्तु को कभी नहीं छूते, यह एक आश्चर्यकारी घटना थी।

मिलावट

8 एक व्यक्ति जीवन से परेशान होकर विष लेने बाजार गया, विष लाया खाया और सो गया, सुबह स्वस्थ होकर उठा, वह सोचता है, कि खुदा को मेरी मृत्यु मञ्जूर नही है, अब मजे से जीवन जीते हैं, वह बाजार गया चार पेड़ा लाया, और खाकर सो गया, वह आज तक नहीं उठा, सोचो जहर खा के जी गया, पेड़ा खा के मर गया।

9 **पाँच मार्ग**–''बह्वारम्भ परिग्रहत्वं नारकस्यायुषः''। ''अल्पारम्भ परिग्रहत्वं मानुषस्य''। ''माया तैर्यग्योनस्य''। ''सरागसंयम संयमासंयमाकाम निर्जरा बाल तपांसि दैवस्य''। ''सम्यक्त्वं च''। ''सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः''।

'बहुत आरम्भ और बहुत परिग्रह' 'नरकायु' के आस्रव के कारण हैं। 'अल्प आरम्भ और अल्पपरिग्रह' 'मनुष्यायु' के आस्रव के कारण हैं। 'मायाचारी' 'तिर्यञ्चायु' का कारण है। 'सरागसंयम, संयमासंयम, अकामनिर्जरा, बालतप और सम्यग्दर्शन' 'देवायु' के आस्रव के कारण हैं। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, और सम्यक्चारित्र की एकता ही मोक्ष का मार्ग है।

10 भिखारी राजा बना उसने अपने कपड़े सम्भाल कर रखे, ये हमारा इतिहास है, इसी तरह अपने को भी 'काल अनन्त निगोद मझार' इसको पढ़कर अपना इतिहास याद रखना चाहिए।

11 **लड़की ने जिद की**, कि मैं नए कपड़े पहनूँगी पुराने नहीं, वह ठण्ड में काँप रही थी, उससे पूँछा

क्या हो गया ? उसने बोला पुराने कपड़े पहनना नहीं है नए कपड़े माँ देती नहीं है इसलिए ठण्ड में काँप रही हूँ। इसी प्रकार पञ्चम् काल में शुद्धोपयोग होता नहीं है। शुभोपयोग से संवर-निर्जरा के साथ बन्ध भी होता है, यदि बन्ध के भय से शुभोपयोग को नहीं अपनायेंगे तो अशुभोपयोग ही हाथ लगेगा और उससे दुर्गति में जाना पड़ेगा।

12 **द्रव्य क्षेत्र काल भाव- 1.द्रव्य**-प्लेटफॉर्म का टिकिट/ट्रेन का टिकिट, **2.क्षेत्र**-छोटी लाइन/बड़ी लाइनका टिकिट, **3.काल**-आज का टिकिट कल नहीं चलेगा, **4.भाव**-थर्डक्लास का टिकिट फर्स्टक्लास में नहीं चलता है ।

13 व्रत अङ्गीकार करना, याने आत्मा को हल्का बनाना है।

14 जो व्रत पहली प्रतिमा में एक पैसे के बारबर होते हैं, वे ही व्रत ग्यारहवीं प्रतिमा में निन्यानवें पैसे के समान हो जाते हैं, क्षत्रिय तो महाव्रत लेते हैं, अणुव्रतों को लेना तो बनियों का काम है।

15 **कालसौकरिक कषायी ने हिंसा नहीं की**, उसके पिता ने बहुत समझाया, उसने कहा हिंसा से जो दुःख होगा उसको तुम लोग बटाओगे ? सबने हाँ कह दिया, उसने अपने पैर पर कुल्हाड़ी मार ली, कहा दुःख हो रहा है बटाओ, लोगों ने कहा बेटा दुःख तो तुम को ही भोगना पड़ेगा, हम संवेदना प्रकट कर सकते हैं, कालसौकरिक कषायी की इस घटना से उस सहित पाँच सौ कषायी अहिंसक बन गये थे।

16 ''**आनयनप्रेष्यप्रयोग**''-पाँच इन्द्रिय रूपी टेलीफोन तो अपने पास हमेशा रहते हैं, फिर भी टेलीफोन रखते हैं, जिससे आकुलता कई गुनी बढ़ जाती है।

17 **व्रतों की पाँच-पाँच भावनायें**- बिजली के खम्बे की मजबूती के लिये आजू बाजू में दो तार कस देते हैं ताकि गिरे नहीं इसी प्रकार व्रतों की मजबूती के लिये पाँच-पाँच भावनायें हैं।

18 रत्नकरण्डक श्रावकाचार की वचनिका के अंतिम अध्याय में एक सौ आठ प्रकार की भावनाओं का वर्णन है जो पढ़ने योग्य है।

19 जो ज्यादा वचन बोलता है, उससे अहिंसा का पालन नहीं होता है।

20 ट्यूब में हवा एक सीमा तक भरी जाती है, अधिक होने पर ट्यूब फट जाता है, इसी प्रकार धन की सीमा होना जरूरी है अन्यथा नरक की ही तैयारी होती है।

21 व्रतों को अङ्गीकार करने वालों के अतिचार कहे हैं, लेकिन अव्रती तो सदा अनाचारी ही है।

22 ''स्त्री रागकथाश्रवण तन्मनोहराङ्गनिरीक्षण पूर्वरतानुस्मरण व्रष्येष्टरस स्वशरीरसंस्कारत्यागाः पञ्च''-इस सूत्र से पाँचों इन्द्रियों का संयम हो जाता है।

23 सरकार की चोरी करना एक अरब जनता की चोरी करना है।

24 चरणानुयोग के अनुसार चलना पुरूषार्थ कहलाता है उसी से मोक्ष होता है।

25 **नागश्री ने अणुव्रत पिता की** आज्ञा के विना ले लिये, पिता जी को मालूम चला, तो व्रत वापस करने मुनिराज के पास गये। रास्ते में एक व्यक्ति की पिटाई हो रही थी, कारण पूँछा, बताया कि इसने हिंसा की है इसलिये पीटा जा रहा है। नागश्री ने पिता से कहा कि यही व्रत तो मैंने लिया है इसको छोड़कर शेष वापस कर दो। आगे जिव्हा छेदन, हाँथ काटना, लिङ्ग छेदन, छापा मारी आदि प्रसङ्ग पाकर पाँचों व्रतों की स्वीकृति ले ली, पिता ने सोचा चलो मुनिराज को उलाहना तो दे आयें, विना पूँछे व्रत क्यों दिये ? मुनिराज ने कहा ये मेरी पुत्री है इसलिए व्रत दिये, वह घबरा गया और राजा से शिकायत कर दी, राजा मुनिराज से नम्रता पूर्वक पूँछते हैं, तो मुनिराज ने उन्हे अपने भव एवं पहले के रिश्ते बताये, राजा गद-गद हो गया और पुत्री ने कहा वास्तव में आप मेरे जन्म दाता हैं।

26 **पर निन्दा समं पापं, न भूतो न भविष्यति।**
आत्म निन्दा समं पुण्यं, न भूतो न भविष्यति।।
पर की निन्दा के समान पाप न भूत में हुआ है न भविष्य में होगा और अपनी निन्दा के समान पुण्य न भूत में हुआ है न भविष्य में होगा।

''इति सप्तम् अध्याय''

★★★

''अथ अष्म् अध्याय''

1 हेतुओं का संक्षेप-बन्ध के पाँच कारणों का सङ्क्षेप दो रूप में हो सकता है, मोह और योग।

2 कर्म सूक्ष्म हैं जैसे शब्द बोलते समय दिखते नहीं, पकड़ नहीं सकते, किन्तु टेप पूरा ग्रहण कर लेता है, इसी प्रकार कर्म दिखते नहीं किन्तु फल देते हैं, तब पता चलता है।

3 **तेली और क्षत्रिय का झगड़ा हो गया**, तेली ने क्षत्रिय को पटक कर दबा दिया, जाति पूँछने पर जोश आया, क्षत्रिय ने तेली को क्षणभर मे नीचे दबा दिया, इसी प्रकार आत्मा क्षत्रिय है, कर्म तेली है, लेकिन अभी कर्मों की जाति नहीं जानी इसलिए आत्मा दबी हुई है।

4 इन पाँचों का वर्णन पहले हो चुका है, ''तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्'' इसका प्रतिपक्षी मिथ्यात्व। 'हिंसानृतस्तेयाब्रह्म परिग्रहेभ्योव्रतिर्व्रतं' यहाँ अविरति का। ''प्रमत्तयोगात्प्राण व्यपरोपणंहिंसा'' यहाँ प्रमाद का। 'गतिकषायलिङ्ग' इत्यादि एवं 'इन्द्रिय कषायाव्रतक्रिया'

इत्यादि सूत्र में कषाय का। 'काय वाङ्मनः कर्मयोगः' यहाँ योग का वर्णन हो गया है।

5 **पाँच अङ्क का कर्ज-** 99999 रूपये का कर्ज है, मिथ्यात्व चला जाता है तो एक अङ्क हट जाता है तो नब्बे हजार का कर्ज उतर जाता है, 9999 का कर्ज रह जाता है, जो क्रमशः अविरति, प्रमाद, कषाय और योग के अभाव में उतरता है।

6 लोहे में खिचने की शक्ति है, तांबा, पीतल आदि में नहीं इसलिए चुम्बक लोहे को खींचती है। इसी तरह योग चुम्बक है और कर्म, नौकर्म वर्गणा में खिचने की शक्ति है और कषाय सहित जीव कर्मों को खींचता है।

7 कर्म का फल नोकर्म के विना नहीं मिलता, जैसे लीड और करण्ट के विना माइक आवाज नहीं करता, कर्म और नोकर्म का चेतन के साथ वैभाविक सम्बन्ध है।

8 गरम लोहा पानी को बहुत जल्दी खींचता है, उसी प्रकार तीव्र कषाय से स्थिति, अनुभाग तीव्र होता है।

9 **उभयबन्ध और भावबन्ध-**दूध और पानी की तरह आत्मा और कर्म का संश्लेष सम्बन्ध है, जीव और कर्म का उभयबन्ध कहलाता है। जीव में मिथ्यात्व आदि भाव होना भाव बंध है।

10 स्थिति और अनुभाग का होना द्रव्यबन्ध है तथा कषाय और योग से भावबन्ध होता है।

11 एकेन्द्रिय जीव की मिथ्यात्व की स्थिति एक सागर है और जघन्य स्थिति पल्य का संख्यातवां भाग कम एक सागर होती है।

12 नोकर्म की स्थिति उपभोक्ता के अनुसार होती है, जैसे जिस नक्षत्र में कपड़े पहनना शुरू करोगे, उसके अनुसार कपड़े की स्थिति रहेगी।

13 योगों से हुआ बन्ध तत्काल झड़ जाता है, कषाय से हुआ बन्ध करण परिणामों से झड़ाना पड़ता है।

14 एकेन्द्रिय तेजकाय वायुकाय में उच्च गोत्र का बन्ध नहीं होता वहाँ उसकी उद्वेलना होती है।

15 सातवें नरक का जीव सम्यक्त्व के काल में उच्च गोत्र का बन्ध करता है।

16 प्रकृतिबन्ध को द्रव्य् बन्ध, प्रदेशबन्ध को क्षेत्र बन्ध, स्थितिबन्ध को काल बन्ध, अनुभागबन्ध को भाव बन्ध कहते हैं।

17 पानी की अपेक्षा अमृतधारा की शक्ति अधिक और प्रदेश कम होते हैं।

18 **लालटेन पर कपड़ा-** प्रकाश को आवृत करना प्रकृति है, कपड़े की लम्बाई चौड़ाई प्रदेश है, कपड़ा कब तक पड़ा रहेगा स्थिति है, पतला-मोटा कपड़ा अनुभाग है।

19 संसार वृक्ष पर विचार।

20 **आठ कर्मों का दृष्टान्त-**

'पडपडिहारसिमज्जा हलिचित्त कुलाल भंडयारीणं।
जह एदेसिं भावा, तह विय कम्मा मुणेयव्वा।।'

देवता के मुख पर ढके वस्त्र के समान ज्ञानावरण, द्वारपाल के समान दर्शनावरण, शहद लपेटी तलवार के सामान वेदनीय, मदिरा के समान मोहनीय, बेड़ी के समान आयु, चित्रकार के समान नाम, कुम्भकार के समान गोत्र और भण्डारी के समान अन्तराय कर्म है, जिस प्रकार इनके भाव होते हैं उसी प्रकार ज्ञानावरणादि कर्मों का स्वभाव भी जानना चाहिए।

21 **प्रतिपक्षी की भी प्रसिद्धि होती है-** ज्ञान आत्मा का गुण है, आवरण विरोधी है पौद्गलिक है, फिर भी उसकी प्रसिद्धि है जैसे- राम के साथ रावण की, कृष्ण के साथ कंस की, गाँधी के साथ गोडसे की भी प्रसिद्धि है।

22 स्त्यानगृद्धि निद्रा के उदय में सोता हुआ व्यक्ति उठा, नींद में ही दुकान खोली और कपड़ों को फाड़ कर आ गया, और उसे स्वयं पता नहीं चला कि कपड़ा किसने फाड़ा है।

नींद में नहाना

23 उदयपुर विद्यालय में एक बालक रात को नींद में उठकर नदी में नहाकर आता था, बच्चों ने पूँछा कहा जाते हो ? उसने कहा ! कहीं नहीं, बच्चों ने गुरुजी से कहा, गुरूजी उसके पीछे-पीछे नदी गये, बालक ने नदी में प्रवेश किया, गुरुजी ने आवाज दी, बालक की निद्रा भङ्ग हो गयी, भय के कारण बालक डूब कर मर गया।

24 यथायोग्य उदय- मनुष्य के शरीर में चमड़ी का रङ्ग अलग, आँख की पुतली का अलग, नाखून का अलग, जीभ का अलग इनमें यथायोग्य उदय लगाना, पचरङ्गी फूल के समान, वर्तमान में पचरङ्गी मनुष्य नहीं किन्तु तीर्थङ्कर हुये हैं।

25 मोह राजा है और मोहजन्य भाव आठों कर्मों के बन्ध के कारण हैं।

26 **बलवान-** कर्मों में मोहनीय कर्म, इन्द्रियों में रसना इन्द्रिय, गुप्तियों में मनोगुप्ति, व्रतों में ब्रह्मचर्य व्रत, ज्ञानों में केवलज्ञान, माता-पिता में तीर्थङ्कर के माता-पिता, भ्रमण शील में नारद, चञ्चलों में मन चञ्चल है।

27 **उपयोग-** राम ने शुद्धोपयोग के फल को, सीता ने शुभोपयोग के फल को, लक्ष्मण ने अशुभोपयोग के फल को प्राप्त किया था। रावण ने अशुभोपयोग के फल को, मन्दोदरी ने शुभोपयोग के फल को एवं इन्द्रजीत और मेघनाद ने शुद्धोपयोग के फल को प्राप्त किया था।

28 हाथी की नाक प्रमाण निर्माण से अधिक है।

29 **स्तवुक सङ्क्रमण**- विरोधी राजा ने चढ़ाई की और कहा कोई पुरूष नहीं निकल सकता लेकिन स्त्रियाँ निकल सकती हैं, राजा ने स्त्री का वेश धारण किया और नगर के बाहर चला गया, इसी प्रकार जो प्रकृतियाँ अन्य प्रकृति रूप परिणमन करके उदय में आती हैं उसे स्तवुक सङ्क्रमण कहते हैं।

30 एक समय में होने वाले कार्य को फाली कहते हैं, अन्तर्मुहूर्त में होने वाले कार्य को काण्डक कहते हैं।

31 **दशकरण दृष्टान्त**-

1 **बन्ध**- रविवार को भोजन का निमन्त्रण है उसे स्वीकार करना बन्ध है।

2 **सत्ता**- सोमवार से रविवार के बीच का समय सत्ता है।

3 **उदय**- रविवार को ठीक समय भोजनार्थ आना उदय है।

4 **उपशम**- भोजन में देर होने से थोड़ी देर प्रतीक्षा करना उपशम है।

5 **उदीरणा**- 10 बजे के स्थान में 9:30 पर आना उदीरणा है।

6 **अपकर्षण**- रविवार के स्थान पर शुक्रवार को आना अपकर्षण है।

7 **उत्कर्षण**- रविवार को न आकर मङ्गलवार को आना उत्कर्षण है।

8 **सङ्क्रमण**- जिसको निमन्त्रण दिया उसके बदले में किसी दूसरे को भेजना सङ्क्रमण है।

9 **निधत्ति**- ठीक उसी दिन 10 बजे भोजन में स्वयं आना निधत्ति है।

10 **निकाचित**- रविवार को स्वयं समय पर घर आना, न अगले दिन न पिछले दिन निकाचित है।

11 **उदयाभावी क्षय**- भोजन को आना किन्तु अस्वस्थ होने से भोजन नहीं करना उदयाभावी क्षय है।

12 **देशघाती**- फलाहार लिया, भोजन नहीं किया देशघाती है।

13 **सर्वघाती**- भरपेट भोजन करना सर्वघाती है।

14 **क्षय**- भोजन से पहले स्वर्गवास हो जाना क्षय है।

32 दशकरण के अन्य दृष्टान्त-

1 **बन्ध**- 50 थान कपड़ा गोदाम में रखा है।

2 **उदय**- कुछ माल बिक गया है।

3 **सत्ता**- जितना रखा वह सत्ता है।

4 **उपशम**- भाव गिरने से बेचना बन्द करना।

5 **उदीरणा**- समय से पहले दुकान खोलना।

6 **सङ्क्रमण**- उसके स्थान पर दूसरा माल बेंचना।

7 **अपकर्षण**- भाव बढ़ने से, समय से पहले ही बेंचना।

8 **उत्कर्षण**-भाव घटने से कुछ दिन बाद बेंचना।

9 **निधत्ति**- उसी समय उसी भाव से माल बेंचना।

10 **निकाचित**- समय पर वही माल बेंचना, न आगे, न पीछे।

33 गुणस्थानों के उदाहरण

1 **मिथ्यात्व गुणस्थान**- ज्वर पीड़ित रोगी को मधुर रस भी कटु लगता है, उसी प्रकार मिथ्यादृष्टि को धर्म नहीं रुचता है।

2 **सासादन गुणस्थान**- पर्वत के शिखर से गिरना भूमि के सम्मुख होना।

3 **मिश्र गुणस्थान**- दही-गुड़ के समान मिश्रित स्वभाव होना।

4 **सम्यक्त्व गुणस्थान**- फिटकरी युक्त स्वच्छ जल उपशम, पूर्ण स्वच्छजल क्षायिक, कुछ मलिन जल क्षयोपशम।

5 **देशविरत गुणस्थान**- सङ्कल्पी त्रसहिंसा से विरत तथा आरम्भी-उद्योगी-विरोधी एवं स्थावर की हिंसा से अविरत।

6 **प्रमत्तविरत गुणस्थान**- व्यक्ताव्यक्त प्रमाद, चितकबरे मृगवत्।

7 **अप्रमत्तविरत गुणस्थान**- अधःकरण, मोटी धार वाला आरा, यहाँ स्थिति बन्धापसरण(पाप प्रकृतियों की स्थिति का घटना) होता है।

8 **अपूर्वकरण गुणस्थान**- अपूर्वकरण परिणाम, पैनी धार वाला आरा, स्थिति काण्डक घात(पाप प्रकृतियों की स्थिति का तेजी से घटना) होता है।

9 **अनिवृत्तिकरण गुणस्थान**- तेज धार वाला छोटा आरा, कम समय में अधिक कार्य होता है।

10 **सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान**- हल्दी से रङ्गे हल्के रङ्गीन वस्त्र के समान सूक्ष्म कषाय होती है।

11 **उपशान्तमोह गुणस्थान**- फिटकरी युक्त जल या शरदऋतु के निर्मल जल के समान परिणाम होते हैं।

12 **क्षीणमोह गुणस्थान**- स्फटिक के पात्र में रखे निर्मल जल के समान वीतराग भाव होता है।

13 **सयोगकेवली गुणस्थान**-केवलज्ञान अन्धकार नाशक सूर्य के समान होता है।

14 **अयोग केवली गुणस्थान**-शरद ऋतु की पूर्णमासीके चन्द्रमा की कलाओं के समान, शील के अठारह हजार भेदों का स्वामी एवं शुद्ध स्वर्ण के समान होता है।

''इति अष्टम् अध्याय''

★★★

''अथ नवम् अध्याय''

1 एक समय में जो समय प्रबद्ध बँधता है, उसकी इतनी स्थिति पड़ सकती है कि असंख्यात भवों में भोगना पड़ सकता है, जैसे हाटबाजार के दिन कमाता है, कई दिन बैठ के खाता है, अनेक भवों में कर्म सञ्चित करता है और तपस्या से एक क्षण में नष्ट कर देता है, जैसे वर्षों में धन कमाता है और लड़की की शादी में सब चला जाता है या बीमारी में चला जाता है।

2 ततश्चनिर्जरा-कर्म आता है तो पता नहीं चलता, जब जाता है तो कष्ट होता है, तीर्थङ्कर भी उसके फल से नहीं छूटते हैं।

3 **अदु:खभावितं ज्ञानं, क्षीयते दु:खसन्निधौ।**
तस्माद्यथाबलं दु:खै, रात्मानं भावयेन्मुनि:।।
सुख पूर्वक प्राप्त किया गया ज्ञान, दु:ख आने पर नष्ट हो जाता है, इसलिए मुनि दु:ख पूर्वक आत्मा की भावना करें।

4 **वैराग्यं तत्त्वविज्ञानं, नैर्ग्रन्थ्यं समचित्तता।**
परिषहजयश्चेति, पञ्चैते ध्यानहेतव:।।
वैराग्य, तत्त्वज्ञान, निर्ग्रंथ अवस्था, समता और परीषह जय ये पाँच ध्यान के साधन हैं।

5 **ध्यान करने वाले का लक्षण**- जिनेन्द्र आज्ञा का श्रद्धानी हो, साधु के गुणों का प्रशंसक हो, दान, श्रुत, शील, तप, संयमी, प्रसन्नचित्त, प्रेमी, शुभोपयोगी, शास्त्राभ्यासी, स्थिरचित्त, वैरागी, निरोगी, निर्विषयी, दयालु, शुभगन्ध, अल्प मल-मूत्र वाला होना चाहिए।

6 **ध्यानमेवप्राणा: मुनीश्वराणां**- मुनीश्वरों के प्राण ध्यान ही हैं, ध्यान का प्रयोजन परम वैराग्य भाव है।

7 **मनोगुप्ति**- राग-द्वेष, मोह के त्याग रूप अथवा आगम का विनय पूर्वक अभ्यास और धर्म्य-शुक्लध्यानरूप मनोगुप्ति है, तत्त्वों को जानने वाले के मन का रागादि के साथ नहीं होना मनोगुप्ति है, कालुष्य, मोह, आहारादि संज्ञायें राग-द्वेष आदि अशुभ भावों का परिहार मनोगुप्ति है।

8 **वचनगुप्ति-** पाप के हेतु स्त्री कथा, राज कथा, चोर कथा और भोजन कथा न करना तथा झूठ आदि वचनों से निवृत्ति होना वचनगुप्ति है अथवा मौन रहना वचनगुप्ति है।

9 **कायगुप्ति-** बाँधना, छेदना, मारण, हाथ-पैर का सङ्कोच विस्तार आदि काय क्रिया की निवृत्ति व्यवहार काय गुप्ति है, कायक्रिया निवृत्ति या कायोत्सर्ग कायगुप्ति है।

10 समितियों में भी गुप्ति का सद्भाव है, अतः अणुव्रती महाव्रती दोनों को आवश्यक है, उसके विना व्रती तो हो सकता है पर संयमी नहीं होता है।

11 परिहार विशुद्धि चारित्र वाले साधु प्रश्नकर्ता का सन्देह निवारण हेतु, धर्म कार्य की अनुज्ञा हेतु एवं स्वयं प्रश्न करने हेतु तीन जगह बोलते हैं।

12 जो रत्नत्रय को प्राप्त किये विना साक्षात् ध्यान करने की इच्छा करता है वह मूर्ख आकाश के फूलों से वन्ध्यापुत्र का सेहरा बनाना चाहता है।

13 नेत्रगोचर जीवों को बचाकर गमन करने वाले मुनि के ईर्यासमिति होती है, यह ईर्यासमिति व्रतोंमें शुद्धि करने वाली मानी गयी है।

14 वर्तमान में मुनि जिनालय में निवास करते हैं, जिससे श्रावकों के लिए धर्मोपदेश का दान हो जाता है।(प.पं.)

15 यदि मुनि घुटने तक जल में प्रवेश करें तो उसका प्रायश्चित्त एक कायोत्सर्ग है और घुटने से चार अङ्गुल ऊपर प्रवेश करें तो एक उपवास प्रायश्चित्त होता है, इसके आगे चार-चार अङ्गुल गहरे पानी में प्रवेश करने पर दूना-दूना प्रायश्चित्त होता है।(प्रा.स.चू.)

16 **मान्यं ज्ञानं तपो हीनं, ज्ञान हीनं तपोऽर्हितं।**
द्वयं यस्य स देवः स्याद्, तद्विहीनो गण पूर्णः।।(उपा.अ.)
तप से हीन ज्ञान मान्य है और ज्ञान से हीन तप पूज्य है, जिसके ज्ञान और तप दोनों होते हैं वह देव होता है और जो दोनों से रहित है वह केवल मनुष्य की संख्या पूरी करने वाला है।

17 राजा श्रेणिक की तेतीस सागर की आयु पश्चात्ताप से चौरासी हजार वर्ष सिंधु में बिंदु के समान रह गयी थी।

18 **प्रतिक्रमण-** घर की सफाई प्रति दिन की जाती है फिर भी पक्ष आदि बीतने पर विशेष रूप से सफाई की जाती है वैसे ही प्रतिक्रमण भी प्रतिदिन किया जाता है पर पाक्षिक विशेष रूप से किया जाता है, जो साधु भाव प्रतिक्रमण से युक्त होकर और उसके अर्थ में मन लगाकर सदा प्रतिक्रमण सूत्र को पढ़ता है, वह कर्मों की महान निर्जरा करता है।

19 ऊपरी गुणस्थानों में अर्थात् मुनियों के आत्मध्यान से ही दोषों का परिमार्जन हो जाता है।

20 **प्रतिक्रमण विधान-** आदिनाथ भगवान् व महावीर भगवान् के समय प्रतिदिन प्रतिक्रमण करने का विधान है, शेष बाईस तीर्थङ्करों के समय सब व्रतों में आहार, विहार, दुःस्वप्न, ईर्यापथ आदि में दोष लगें तब प्रतिक्रमण करते थे, मध्यम तीर्थङ्करों के समय शिष्यों के बुद्धिकौशल था, पराक्रम सुदृढ़ था, चित्त एकाग्र और स्वलक्ष्य में दृष्टि रहती थी, किन्तु प्रथम और **''अन्तिम तीर्थङ्कर के समय शिष्य अज्ञानी व चञ्चल चित्त हैं, अपने अपराधों की स्मृति नहीं रहती है, अतः सबका प्रतिक्रमण करते हैं''।**

21 मोक्ष के साधन में अनुपयोगी नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का परमार्थ से सेवन नहीं करना चाहिए, परमार्थ से अर्थात् उपसर्ग आदि के कारण अयोग्य का सेवन होने पर भी प्रत्याख्यान में हानि नहीं होती है, शुद्धोपयोग में सहायक नामादि का सेवन मन को पवित्र करता और **''सदा अपराध की गन्ध से दूर रहने वाला साधु रत्नत्रय का आराधक होता है''**।

22 जिस प्रकार ताला खोलने के लिये चाबी सीधी घुमाई जाती है और लगाने के लिये उल्टी, उसी प्रकार **''जिन रागादि भावों से कर्म आश्रव किया था, अब उनसे विपरीत 'वीतराग' भावों को बनाओ तो संवर निर्जरा होती है''**।

23 पर द्रव्य का ग्रहण स्वात्मोपलब्धि का विरोधी है, **''जिसके प्रमाद का लेश भी नहीं रहता वह साधु अवश्य ही मोक्षमार्ग का आराधक होता है''**।

24 आचार्य शिवसागर जी ने स्वाध्याय किया, पण्डित पन्नालाल जी शास्त्र विराजमान करने गये तो आचार्यश्रीजी पीछे से आये और कहा ! रुको, उन्होंने मार्जन किया, फिर शास्त्र जी विराजमान किया और कहा ! प्रतिष्ठापन समिति हमारी है भैया।

25 हवाई जहाज उड़ने लगता है तो पहिये बन्द हो जाते हैं, उतरने लगता है तो खुल जाते हैं, उसी प्रकार मुनि ध्यान में बैठते हैं तो समिति बन्द होकर, गुप्ति में आ जाते हैं, बाहर आते हैं तो समिति प्रारम्भ हो जाती है।

26 जैसे सूखे सरोवर से हंसों का समूह उड़ जाता है उसी प्रकार वैयावृति से रहित पुरूष के पास व्रतों का समूह नहीं ठहरता है।

''इति नवम् अध्याय''

★★★

"अथ दशम् अध्याय"

1 **कावि अपुव्वादीसई, पुग्गलदव्वस्स एरिसी सत्ति।**
केवलणाणसहावो, जीवस्स विणासदो जेण।।
पुद्गल द्रव्य की कोई अपूर्व शक्ति है, जिसने जीव के केवलज्ञान स्वभाव का नाश कर दिया है।

2 **आत्मायत्तं विषयविरसं, तत्त्वचिन्तावलीनं।**
निर्व्यापारं स्वहितनिरतं, निर्वृतानन्दपूर्णं।।
ज्ञानारूढ़ं शमयमतपो ध्यानलब्धावकाशं।
कृत्वात्मानं कलय सुमते ! दिव्य बोधाधिपत्यं।।
आत्माधीनता, विषयविरक्ति, तत्त्व तल्लीनता, गुप्ति, स्वहित में लीनता, पूर्ण आत्मानन्द, अभीक्ष्णज्ञानोपयोग, समता, आजीवन नियम, तप व ध्यान करना 'केवलज्ञान प्राप्ति के कारण' हैं।

3 गाय मोह से बँधी है रस्सी से नहीं, इसीलिये जङ्गल में बहुत दूर जाकर भी वापस आ जाती है।

4 जब तक तिली में तैल रहता है, तब तक पेली जाती है, गन्ने में जब तक रस रहता है, तब तक पेला जाता है, उसी तरह प्राणी में जब तक स्नेह रहता है तब तक संसार में भटकता है।

5 मुनीम, धाय या तोता की वृत्ति होना चाहिए, ये हमेशा विरक्त रहते हैं।

6 हे आत्मन् ! हमेशा ऐसी भावना हो कि मैं आत्म गुणों की दीवाली मनाना चाहता हूँ, और कर्मों की होली जलाना चाहता हूँ, अर्थात् गुणों को ग्रहण करने की और दोषों को छोड़ने की भावना होना चाहिए।

7 पुरूषार्थ दस प्रतिशत भी नहीं करते हैं और फल सौ प्रतिशत का मोक्ष चाहते हैं।

8 पुण्य-पाप को धूप-छांव की तरह मानकर मध्यस्थ रहना चाहिये।

9 **आठ प्रकार की मुक्ति-** 1.मिथ्यात्व, 2.अंसयम, 3.प्रमाद, 4.स्थूल कषाय, 5.सूक्ष्मकषाय, 6.अज्ञान, 7.योग, 8.शरीर।

10 **दान-पूजा श्रावक के** लिए मुख्य हैं, ध्यान-अध्ययन साधु के लिए मुख्य हैं, दान से सारभूत चक्रवर्ती के भोग प्राप्त होते हैं, पूजा से देवों द्वारा पूज्य तीर्थङ्कर पद की प्राप्ति होती है।

11 **समवसरण में छत्तीस द्वार** होते हैं उसमें एक-एक द्वार पर नौ-नौ निधियाँ होती हैं कुल तीन सौ चौबीस निधियाँ होती हैं।

12 बँधे हुये बछड़े को छूटने का सुख, बच्चों को विद्यालय से छुट्टी का सुख, कैदी को जैल से मुक्ति का सुख और सिद्धों को शरीर से छूटने का सुख प्राप्त होता है।

13 गीले कपड़ों को फ़ैलाने से जल्दी सूखता है उसी प्रकार समुद्घात से कर्मो की निर्जरा शीघ्र होती है।

14 त्रेपन भावों में से मोक्ष में तेतालीस भावों का अभाव एवं दस भावों का सद्भाव रहता है।

15 तीनों कालों के समस्त संसारी जीवों के सुखों से अनन्तगुणा सुख सिद्धों को एक समय में होता है।

16 सिद्ध परमात्मा द्रव्यकर्म भावकर्म नोकर्म मल से बाहर हैं, इस अपेक्षा से बहिरात्मा हैं और संसारी जीव अन्तरात्मा है।

17 छः महीने आठ समय में छः सौ आठ जीव मोक्ष जाते हैं,अतः सुखियों की वृद्धि हो रही है एवं दुखियों की हानि हो रही है।

18 **पवनञ्जय के पास रावण का पत्र आया,** वरूण से युद्ध हो रहा है, पवनञ्जय ने हनुमान से कहा, बेटा तुम राज्य सम्भालो, मैं युद्ध को जा रहा हूँ, हनुमान ने कहा पिता जी, आप घर पर रहो मैं युद्ध को जाऊँगा, पिता ने कहा बेटा, तुमने कभी युद्ध देखा नहीं, तुम मत जाओ, तब हनुमान ने कहा ! पिताजी क्या कोई पहले मोक्ष को देखकर आता है बाद में मोक्ष जाता है ?

19 जहाँ तक पटरी है वहीं तक ट्रेन जाती है, जहाँ तक पानी है वहीं तक मछली जाती है, इसी तरह जहाँ तक 'धर्मास्तिकाय' है वहीं तक सिद्ध परमात्मा जाते हैं।

20 जिस प्रकार बर्तन में पटका पड़ने पर अन्दर से चोट लगाना पड़ती हैं, इसी तरह आत्मविशुद्धि के लिए अन्दर चोट लगाना पड़ती है।

21 अन्य दर्शनकार आत्मा को वट के बीज बराबर मानते हैं, जैन दर्शन मानता है कि जितना शरीर होता है उतनी आत्मा होती है, चाहे चींटी का शरीर हो या हाथी का।

22 तेरहवें गुणस्थान वाले जीव उत्कृष्ट आराधना के स्वामी हैं, ये उसी भव से मोक्ष जाते हैं, मध्यम आराधना वाले सात-आठ भव में मोक्ष जाते हैं, परिषहों से डरने वाले, सङ्क्लेश परिणाम वाले सम्यग्दृष्टि जघन्य आराधना वाले संख्यात-असंख्यात भव में मोक्ष जाते हैं।

23 पुष्पडाल मुनि ने दीक्षा लेकर बारह वर्ष तक साधना की, लेकिन स्त्री का मोह नहीं छूटा, किन्तु वे ही बाद में घोर तप कर जम्बूस्वामी बने, महावैरागी बने और केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष चले गए।

24 वृषभसेन महाराज आठ वर्ष की उम्र में मुनि बन गये, किसी बैरी ने शिला को ऊष्ण कर दिया, महाराज ने नियम लिया था कि इसी शिला पर बैठेंगे, आहार के बाद आये शिला पर पैर रखते ही जलने लगे, ध्यान में लीन हो गये और केवलज्ञान प्राप्त हो गया था।

25 ज्ञान हीन मनुष्य को मोक्ष प्राप्त नहीं होता जैसे पानी के बिलोने से हाथ चिकने नहीं होते हैं।

26 जीवकाण्ड को जानिये, कर्मकाण्ड को खण्डिये, ज्ञानकाण्ड मय अर्थात् सिद्ध भगवान् बनिए।

700 केवली 5 वें काल में मोक्ष गये

27 महावीर भगवान् के समवसरण में सात सौ केवली थे, वे सभी पञ्चमकाल में बासठ वर्ष के भीतर मोक्ष चले गये, तीन अनुबद्ध केवली, महावीर भगवान् के निर्वाण होने के बाद, गौतम स्वामी बारह वर्ष, सुधर्मा स्वामी बारह वर्ष जम्बूस्वामी अड़तीस वर्ष तक विहार करते रहे।

5 श्रुत केवली

28 एक मत के अनुसार जम्बूस्वामी को मिलाकर पाँच केवली हुए हैं जिनमें अन्तिम श्रीधरकेवली हुए हैं। पाँच श्रुतकेवली हुए हैं, 1.विष्णु जी, 2.नन्दिमित्र जी, 3.अपराजित जी, 4.गोवर्धन जी, 5.भद्रबाहु जी, इनके द्वारा सौ वर्ष तक प्रभावना हुयी। इनके बाद ग्यारह अङ्ग चौदह पूर्व के पाठी नहीं हुये। फिर ग्यारह अङ्ग दस पूर्व के पाठी मुनि हुये। फिर ग्यारह अङ्ग के पाठी हुये। फिर दस अङ्ग के पाठी हुये।

29 छः सौ तेरासी वर्ष के बाद एक अङ्ग के भी पाठी नहीं हुये, फिर अंग के अंश के ज्ञाता हुये, उनमें धरसेन जी, पुष्पदन्त जी, भूतबली जी, गुणधर जी, माघनन्दि जी, यतिवृषभ जी, कार्तिकेय जी, जिनचन्द्र जी, समन्तभद्र जी, पूज्यपाद जी, अकलङ्क जी हुये जिनके द्वारा धर्म तीर्थ आज तक सुरक्षित है।

30 **क्षेत्र-** सबसे कम लवण समुद्र से, उससे ज्यादा कालोदधि से उससे ज्यादा जम्बूद्वीप से उससे ज्यादा धातकीखण्ड से और सबसे ज्यादा पुष्करार्द्ध से सिद्ध हुये हैं।

31 **काल-** भरत और ऐरावत में उत्सर्पिणी की अपेक्षा अवसर्पिणी काल में ज्यादा सिद्ध होते हैं।

32 **घीव दूध में रम रहा, व्यापक सब ही ठौर।**
'दादू' वक्ता बहुत हैं, मथ काढ़े ते और।।

4 अभाव

33 1. शुक्रवार में गुरूवार का अभाव- प्रागभाव कहलाता है, 2.शुक्रवार में शनिवार का अभाव- प्रध्वंसाभाव कहलाता है, 3. एक अङ्गुलिका दूसरी अङ्गुलि में, एक फल का दूसरे फल में, एक तन्तु का दूसरे तन्तु में अभाव- अन्योन्याभाव कहलाता है, 4. एक परमाणु का दूसरे परमाणु में और एक जीव का दूसरे जीव में अभाव- अत्यन्ताभाव कहलाता है।

34 बन्धापसरण और बन्धव्युच्छित्ति में अन्तर-बन्धापसरण में संवर नहीं होता है, जैसे एक व्यक्ति

आठ दिन की छुट्टी लेकर गया। बन्धव्युच्छित्ति में संवर हो जाता है, जैसे कोई व्यक्ति रिटायर्ड हो गया।

35 **तीन करण**- मिथ्यात्व पर तीन करण रूपी थप्पड़ पड़े, वह मर गया लेकिन अनन्तानुबन्धी छिप गयी, जैसे ऊधम करने वालों में एक बच्चे पर थप्पड़ पड़ा तो शेष बच्चे भाग गये।

36 प्रायोग्यलब्धि में, चौतीस बन्धापसरणों में, छठवे गुणस्थान में बँधने वाली प्रकृतियों का भी बन्ध रुक जाता है।

मंदिर के कलश में संपदा

37 अनुभवी से समझे विना शास्त्र पढ़ने से कोई सफल नहीं होता, जैसे ज्योतिषी ने कहा ! मन्दिर के कलश में इतनी सम्पत्ति है, वह श्रावण कृष्ण एकम् को मिलेगी, उस नासमझ ने कलश तोड़ डाला, ज्योतिषी को झूठा ठहराया, किसी अनुभवी ने कहा भैया ! इस तिथि को कलश की जहाँ छाया पड़े वहाँ खोदो, भाग्य से मिल मिलती है, कार्य की सिद्धि समझदार की होती है।

38 जब मन्द कषाय होती है तब तत्त्व विचार होता है, तत्त्व चिन्तन में मन न लगे तो तीव्र कषाय समझना चाहिए, तीव्र कषाय के उदय में देशना लब्धि नहीं होती है।

39 **गधों के बीच में शेर का बच्चा** अपने स्वभाव को भूलकर बोझा ढो रहा था, शेर की दहाड़ सुनकर उसे अपने स्वरूप का ज्ञान हो गया, इसी प्रकार संसारी प्राणी संसार में रुल रहा है, जब गुरु रूपी सिंहों कि दहाड़ सुनता है तव अपने स्वरूप का ज्ञान होता है और फिर सिद्धों की श्रेणी मे जाकर मिल जाता है।

40 बारदाने में अपनी सारी पूँजी लगा देंगे तो व्यापार किससे करेंगे, इसी तरह व्याकरण, छन्द, अलङ्कार आदि शास्त्रों में सारी जिन्दगी लगा देंगे, तो कल्याण कब करेंगे ?

41 ट्रेफिक भरे रास्ते से गुजरना है तो धीरे-धीरे हार्न बजाते हुये चले जाते हैं तो रास्ता अपने आप निकल आता है, इसी प्रकार कितना भी तीव्र कर्म का उदय हो, तत्त्वाभ्यास से रास्ता मिल ही जाता है।

42 जो ज्ञानदान के उपकार को भूलता है वह सौ भव तक कुत्ते की योनी में रहता है और दीर्घ काल तक निगोद में रहता है।

43 पचास वर्ष में जितना अकेले पढ़कर सीखोगे, उतना छः माह में ज्ञानियों की सङ्गति से सीख जाओगे।

44 शुद्ध मनुष्य छठवे गुणस्थान से होते हैं, एकेन्द्रिय से असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक शुद्ध तिर्यञ्च होते हैं।

45 गुरु के आशीर्वाद मात्र से विना बीज बोये फसल नहीं मिलती, उसी प्रकार भगवान् ने कहा 'तीसरे भव में मोक्ष होगा' तो भी चुपचाप घर में बैठने से नहीं तपस्या करने से ही मोक्ष होगा।

46 तीर्थङ्कर के विहार में साढ़े बारह करोड़ बाजे बजते हैं और भगवान् चतुर्मुखी दिखते हैं पर चतुर्मुखी होते नहीं, होंगे तो समचतुरस्र संस्थान बिगड़ जायेगा।

47 त्रिलोक प्रज्ञप्ति में पाँच सौ गाथाओं में समवसरण का वर्णन हैं।

48 रामचन्द्र जी का मोह हटा तो लक्ष्मण के मृत शरीर को छोड़ने में देर नहीं लगी, शत्रुघ्न से कहा ! भैया राज्य सम्भालो, शत्रुघ्न ने कहा जो राज का लोभी हो उसे दो, मैं तो मुनि बनूँगा।

49 **बारह प्रकार का समयसार-** 1.समयपाहुड, 2.आत्मख्याति, 3.तात्पर्यवृत्ति, 4.समयसारनाटक, 5.छहढाला, 6.सकलज्ञेयज्ञायक की विनती, 7.मेरीभावना, 8.सहजानन्दी शुद्धस्वरूपी, 9.ध्यानसूत्राणि, 10.हूँ स्वतन्त्र निश्चल निष्काम, 11.सोऽहम्, 12.अहम्। 'यों है सकल संयम चरित, सुनिए स्वरूपाचरण अब' छहढाला में यहाँ से समयसार प्रारम्भ होता है।

50 **छह प्रकार की भूलें सकलज्ञेयज्ञायक विनती में बतायी हैं-** पहले अन्तरङ्ग-बहिरङ्ग स्तुति की, फिर भक्त अपने दुःख रोने लगा 'उचरो निज दुःख जो चिर लहाय' 1. मैं भ्रम्यो, अपन पो बिसरि आप, 2. अपनाये विधि-फल पुण्य-पाप, 3. निज को पर का करता पिछान, 4. पर में अनिष्टता इष्ट ठान, 5. आकुलित भयो अज्ञान धारि, 6. तन परिणति में आपो चितार।

51 भाव सहित सम्मेद शिखरजी की वन्दना करने से दो अरब उपवासों का फल प्राप्त होता है।

52 छाता को देखकर भूले हुये अपने छाते की याद आ जाती है उसी प्रकार सिद्धों के स्वरूप से निज स्वरूप का स्मरण होता है।

-धवला पुस्तक प्रथम-

1 **योग स्थान-** नई गति में उत्पन्न होने के प्रथम समय में उपपाद योग स्थान, अपर्याप्तक अवस्था में एकान्तानुवृद्धि योग स्थान, पर्याप्तक अवस्था से परिणाम योग स्थान होता है।

2 **समुद्घात-** सभी केवली समुद्घात नहीं करते हैं, वर्ष पृथक्त्व में समुद्घात करने वालों की संख्या बीस होती है।

3 **यतिवृषभाचार्य-** सभी केवली समुद्घात करते हैं, शेष अघातिया की स्थिति उसके विना बराबर नहीं होती है।

4 **संसार नाश के कारण-** द्वादशांग का ज्ञान, उसी में तीव्र भक्ति, केवली समुद्घात और

अनिवृत्तिकरण के परिणाम।

5 बारहवें गुणस्थान में श्रुत का पूर्ण क्षयोपशम हो जाता है- (पृ.304)।

6 केवली के द्रव्यमन के सद्भाव में सत्य और अनुभय मनोयोग होता है।

7 क्षायिक सम्यक्त्व, दान व दान की अनुमोदना से भोगभूमि की प्राप्ति होती है (पृ.329)।

8 एक रुद्र की इक्यासी लाख वर्ष पूर्व की आयु थी, सत्ताईस लाख वर्ष पूर्व गृहस्थ अवस्था में रहे, सत्ताईस लाख वर्ष पूर्व भावलिङ्गी मुनी रहे, सत्ताईस लाख पूर्व भ्रष्ट होकर भोग भोगकर, मरकर नरक में गए।

9 अनन्तानुबन्धी का पहले गुणस्थान में बन्ध प्रथम समय से होने लगता है, उदय एक आवली तक नहीं होता है।

10 उदयावली के कर्म की नियम से निर्जरा होती है जैसे टिकिट खरीदने जो रेलिङ्ग में चला गया वह इधर-उधर नहीं होता है।

11 कृत्यकृत्य वेदक के पहले भाग में मरकर देव, दूसरे भाग में मरकर देव-मनुष्य, तीसरे भाग में मरकर देव-मनुष्य-तिर्यञ्च, चौथे भाग में मरकर चारों गतियों में जा सकते हैं।

12 भगवान् की ऊँचाई से बारह गुना अशोक वृक्ष होता है अर्थात् पाँच सौ धनुष की काया वाले भगवान् के छः हजार धनुष ऊँचा वृक्ष होता है।

13 ईर्यापथ आस्रव का समय प्रबद्ध आठ कर्मों के समय प्रबद्ध से असंख्यात गुणा होता है।

14 त्रायस्त्रिंश देव को बृहस्पति कहते हैं।

15 समचतुरस्र संस्थान तीर्थङ्कर के होता है, इसलिये उनकी मूर्ति बनती है, शेष केवली छहों संस्थान वाले हो सकते हैं।

16 चौदहवें गुणस्थान का काल वचनबल ऋद्धि वाले मुनि के उच्चारण से पाँच ह्रस्व अक्षर के बराबर होता है।

17 तीर्थङ्कर के छेदोस्थापना वाला चारित्र नहीं होता, वे वर्धमान चारित्र वाले होते हैं।

18 विना छेद के मोती के समान तीर्थङ्कर का चारित्र होता है एवं यम रूप सामायिक चारित्र होता है।

19 सर्वार्थसिद्धि जाने वाले मुनियों को वर्ष पृथक्त्व संयम के साथ में रहना ही पड़ता है।

20 गर्भज मत्स्य पाँच सौ धनुष की अवगाहना वाला होता है, वह सप्तम नरक नहीं जाता है, सम्मूर्च्छन मत्स्य एक हजार योजन की अवगाहना वाला होता है, वह सप्तम नरक जाता है।

21 भोगभूमि में भी अकाल मरण होता है (ध.15,पृ.299)।

22 श्लोकवार्तिक में नोकर्म द्रव्य परिवर्तन के आधे को अर्द्धपुद्गल परावर्तन माना है।

23 त्रसनाली में उत्पन्न होने वाले जीवों को तीन समय लगते हैं, त्रसनाली के बाहर उत्पन्न होने वाले जीवों को चार समय लगते हैं।

24 न्याय वाक्य-''वादे वादे जायते तत्त्वबोधा:''। शङ्का समाधान से तत्त्व ज्ञान होता है।

इति दशम् अध्याय

★★★

"श्रीपाल जी चरित्र"

(श्रीपाल जी मुनिसुव्रतनाथ जी के काल में हुए हैं)

भूमिका-

प्रथमानुयोगमार्था,-ख्यान चरितं पुराणमपि पुण्यं।
बोधि समाधि निधानं, बोधति बोध: समीचीन:।।

प्रथमानुयोग में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष पुरुषार्थ का, महापुरुषों के चरित्र का, वर्णन होता है, बोधि समाधि का खजाना होता है। जिनवाणी का भवन चार स्तम्भों का मेल है 'प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नम:' इनमें प्रथम स्थान प्रथमानुयोग का है।

जिस प्रकार पठन कला में निष्णात होने के लिये 'अ' अक्षर सीखना अनिवार्य है, उसी प्रकार अति गम्भीर और विस्तृत सागर के समान श्रुत है, उसका पारगामी होने के लिए प्रथमानुयोग का अध्ययन आवश्यक है। वस्तुत: द्वादशाङ्ग में प्रवेश करने के लिये प्रथमानुयोग मुख्य द्वार है। जिन लोगों की ये भ्रान्त धारणा है कि यह कोरा कथा विन्यास है या अतिशयोक्तियों का अखाड़ा है, वे महान भ्रान्त हैं और अज्ञानता के शिकार हैं, प्रथमानुयोग कथा रूपी चासनी से लिपटी हुयी अचूक औषधि है, जो सरलता से बालगोपाल के कण्ठ से उतरकर उदर में पहुँच जाती है और विषय कषाय जन्य भीषण रोगों का शमन कर स्वास्थ्य प्रदान करती है, प्रज्ञा को सजग बनाती है, चिन्तन शक्ति को प्रदीप्त करती है, धारणा शक्ति को ठोस बनाती है, ध्यान को बल प्रदान करती है, संयम त्याग और वैराग्य को ठोस बनाती है।

प्रथमानुयोग का अर्थ है- 'प्रथम' अर्थात् मिथ्यादृष्टि, असंयमी या प्रारम्भिक श्रोता को लक्ष्य करके प्रवृत्त होता है, इसमें तिरेसठ शलाका पुरुषों का वर्णन किया जाता है, इसके पढ़ने से जीवन-

मरण की कला प्राप्त होती है, कुमरण और कुजन्म से बचने का उपाय ज्ञात होता है, पुण्य का अर्जन और पाप से रक्षण एवं उनके फल ज्ञात होते हैं, जिससे संसार शरीर और भोगों से विरक्ति होती है, शुभाशुभ का भेद ज्ञात होता है, क्रमशः अशुभ से शुभ और शुभ से शुद्ध भाव उत्पन्न होता है, आत्मा किस प्रकार परमात्मा, बनता है ये सब प्रथमानुयोग से ज्ञात होता है।

ग्रन्थ में विषय वस्तु-श्रीपाल जी के चरित्र में मुनि एवं श्रावक धर्म और अनेकान्त का विस्तृत वर्णन है, जिनभक्ति और सिद्धभक्ति का अद्वितीय उदाहरण है, संसारी जीव अनेक प्रकार की आधि-व्याधियों का शिकार होकर असहाय मृग के समान भटके हुए त्रस्त जीवों को यह अद्वितीय शरण है, जीवन की बीहड़ कटीली राहों में श्रीपाल जी का धैर्य हमें सम्बल प्रदान करता है।

इसके कथा नायक है 'कोटिभट महाराज श्रीपाल जी' दस परिच्छेदों में चारों पुरूषार्थों का मणिकाञ्चन समन्वय है, श्रावक असि, मषि आदि षट्कर्मों से उपार्जित पाप राशि को किस प्रकार देवपूजा आदि षट् आवश्यकों के द्वारा क्षण भर में नष्ट कर देता है।

प्रथम परिच्छेदः-भगवान महावीर स्वामी का समवसरण विपुलाचल पर-

''**आचार्य सकलकीर्ति जी**'' ने सर्वप्रथम मङ्गलाचरण में 'चौबीस तीर्थङ्करों' को, 'ढाईद्वीपस्थ जिनों' को, जिनके पादमूल में तीर्थङ्कर प्रकृति का बन्ध, क्षायिक सम्यक्त्व, परिहारविशुद्धि चारित्र, और आहारक ऋद्धि होती है, उन्हें नमस्कार किया है। मोहान्धकार को नष्ट करने के लिए सूर्य तुल्य जिनवाणी माँ और साधु समूह की स्तुति की है, सिद्धचक्र व्रत की महिमा प्रकट करने की प्रतिज्ञा की है। जम्बूद्वीपस्थ मगध देश में वन, भवन, जिनभवन, ध्वाजादि शोभायमान थे, मगधदेश के लोग धन-धान्य से सम्पन्न थे, जहाँ आम्र, नारिकेल, खर्जूर आदि के वृक्ष सदा हरे भरे रहते थे, वहाँ के नर-नारी धर्मात्मा, शीलवन्त सदाचारी थे, षट्कर्मो को सदा रुचिपूर्वक करते थे, ''राजगृह नगरी में'' राजा श्रेणिक रानी चेलना थीं, सदा दानशील थीं, सिंहासनारूढ़ राजा श्रेणिक पर चँवर ढुराये जा रहे थे, तभी वनपाल ने आकर षट्ऋतुओं के फल-फूल भेंट करते हुए नमस्कार किया और कहा कि हे राजन् ! विपुलाचल पर्वत पर भगवान महावीर का समवसरण आया है, जहाँ हिंसक प्राणी भी बैर-विरोध छोड़कर एक साथ बैठे हैं, चारों ओर देवों का आगमन एवं जय-जयकार की ध्वनि से विपुलाचल पर ऐसा लगता है मानो स्वर्ग उतर आया हो, यह सुनकर राजा श्रेणिक ने सिंहासन से उठकर सात पग आगे जाकर वीर प्रभु को नमस्कार किया, नगर में भेरी बजवाई इन्द्र के समान वैभव के साथ राजा श्रेणिक समवशरण में गये, तीन परिक्रमा देकर राजा मनुष्यों के कोटे में बैठ गया, (यहाँ अरहन्त भगवान् के छियालीस गुण और समवसरण का वर्णन) फिर राजा श्रेणिक ने भगवान् की स्तुति

की 'जितक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितान्तकः', ''सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि निजानन्द रस लीन'' इत्यादि स्तुति की।''गौतम स्वामी ने आषाढ़ शुक्ला पूर्णिमा को भगवान् महावीर का शिष्यत्व स्वीकार किया, श्रावण कृष्ण प्रतिपदा को दिव्य ध्वनि का खिरना प्रारम्भ हुआ'', जिसमें पाँच अस्तिकाय, छः द्रव्य, सात तत्त्व, नौ पदार्थ, श्रावक के बारह व्रत, छः लेश्या, चौदह गुणस्थान, चौदह मार्गणा, अष्टाङ्ग सम्यग्दर्शन, अष्टाङ्ग सम्यग्ज्ञान, तेरह प्रकार का सम्यग्चारित्र, दस धर्म आदि का उपदेश दिया, श्रेणिक ने अनेक प्रश्न किये जिसमें सिद्धचक्र विधान का लक्षण एवं विधि भी पूँछी, उसके उत्तर स्वरूप यह कथा प्रारम्भ हुयी।

द्वितीय परिच्छेदः-सुरसुंदरी और मदनसुंदरी का अध्ययन-

मध्यलोक में असंख्यात द्वीप समुद्र हैं, इनके ठीक बीच में जम्बूद्वीप है, इसमें जम्बूवृक्ष है, यह पृथ्वीकाय एक लाख परिवार वृक्षों से वेष्टित है, इसकी पूर्वशाखा में अनावृत देव रहता है, जो दस लाख व्यन्तरों का अधिपति है, इस वृक्ष के निमित्त से यह द्वीप जम्बूद्वीप के नाम से प्रसिद्ध हुआ है, इसके ठीक बीच में एक लाख योजन ऊँचा सुमेरू पर्वत है, इस मेरू के दक्षिण में भरत क्षेत्र है, इसमें अवन्ति देश जो रत्नद्वीप गाँव, नगर, आदि से मण्डित है, जिस प्रकार चक्रवर्ती बत्तीस हजार मुकुटबद्ध राजाओं से घिरा होता है उसी प्रकार यह देश घिरा है, उस 'अवन्ती देश में महिमाशालिनी उज्जयिनी नाम की नगरी' है, उन्नत कोट, रत्नमयी तोरण, चार महाद्वार, निर्मल जल युक्त वापी, गगनचुम्बी भवन, ध्वजायें थी तथा सारी प्रजा सुखी थी, रत्नमयी प्रतिमाओं से युक्त मन्दिर थे, सप्ताङ्ग सेना से युक्त 'राजा प्रजापाल, और सौभाग्य सुन्दरी रानी' थी, उनके रूप लावण्य युक्त देवाङ्गना तुल्य 'सुरसुन्दरी' और 'मदनसुन्दरी' (मैनासुन्दरी), नाम की दो पुत्री थीं। 'सुरसुन्दरी ने शिवशर्मा नामक ब्राह्मण' के पास अध्ययन किया था, अतः यज्ञ, याग, वेद, कोकशास्त्र विषयक मिथ्याशास्त्रों में सौपान, बलि, मांसभक्षण करने वाले ग्रन्थों में विश्वास करती थी, 'मदनसुन्दरी(मैनासुन्दरी) ने यमधर मुनिराज के पास' काव्य, छन्द, व्याकरण, धर्मसिद्धान्त का गहन अध्ययन किया था और अष्टमूलगुणों को धारण किया था।

साधूनां सङ्गतिस्सत्यं, फलत्युच्चैस्सदा सुखं।
भव्यानां कल्पवल्लीव, परमानन्ददायिनी।।

साधुओं की सङ्गति ही वास्तविक सङ्गति है वह हमेशा श्रेष्ठ सुखदायी होती है भव्यों के लिए कल्पवृक्ष के समान परमानन्द देने वाली होती है।

दर्शनेन जिनेन्द्राणां, साधूनां वन्दनेन च।
न तिष्ठति चिरं पापं, छिद्रहस्ते यथोदकं।।

जिनेन्द्र भगवान् के दर्शन से और साधुओं को नमस्कार करने से पाप उस प्रकार नहीं ठहरते जिस प्रकार अञ्जुलि का जल ज्यादा देर नहीं ठहरता है। (यहाँ सत्संगति का माहात्म्य बतलाना)

जाड्यन्धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यं, मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं, सत्सङ्गतिः कथय किं न करोति पुंसां।।

सत्सङ्गति अज्ञानता दूर करती है, वचनों में सत्यता लाती है, सम्मान दिलाती है, पाप दूर करती है, मन प्रसन्न करती है, दिशाओं में कीर्ति फैलाती है और ऐसी कौन सी चीज है जो सत्सङ्गति से प्राप्त नहीं होती है ?

सुरसुंदरी को इच्छित वरदान प्रजापाल द्वारा-

राजा प्रजापाल ने यौवन अवस्था प्राप्त सुरसुन्दरी से कहा बेटी इच्छित वर की प्रार्थना करो सुरसुन्दरी ने कहा ! 'अहिक्षेत्र के राजा के पुत्र अरिदमन के साथ मेरा ब्याह करो'। राजा ने शुभ दिन, लग्न, नक्षत्र आदि में बेटी का विवाह अरिदमन के साथ कर दिया। एक दिन मैनासुन्दरी भगवान् की पूजा करके गन्धोदक पिता के लिये लाई, राजा ने आदर से गन्दोदक लिया धर्म वत्सला मैनासुन्दरी को पूर्ण यौवनवती देखकर पिता ने कहा बेटी गुण रूप युक्त वर माँगो, तब कन्या ने कहा कि हे राजन् ! श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न कन्या को इच्छानुसार वर की याचना नहीं करना चाहिये, पिता अपनी कन्या को जिसके लिये देता है वह प्रमाण भूत है, उसके कर्मोदय से जो होना होगा सो होगा, इस युक्ति पूर्ण वाक्य को सुनकर राजा कुपित हो गया, मूर्ख राजा कर्म सिद्धान्त को भूल गया, अहङ्कार वश मन ही मन कहता है मैंने व्यर्थ इतना परिश्रम किया मैं राजा हूँ, मुझे कुछ नहीं समझती है, मात्र भाग्य के गीत गाती है, ये सब राज सामग्री मेरी है और ये समझती है मेरा पुण्य है, अवश्य ही इसे किसी निन्द्य पुरूष को देकर परीक्षा करूँगा। एक बार राजा वन क्रीड़ा को गया जैसे ही वन में प्रवेश किया, सात सौ कोड़ियों के साथ श्रीपाल जी को देखा, मन्त्री से पूँछा राजाओं के समान किन्तु गलित कुष्ठ से पीड़ित यह कौन है ?

तब मन्त्री ने कहा राजन् ! क्षत्रिय वंशी, कुष्ठ रोग से पीड़ित राजा श्रीपाल जी हैं। ये यहाँ आवास चाहते हैं। राजा ने कषाय वश मैनासुन्दरी का विवाह इन्ही के साथ करने का निश्चय किया। राजा श्रीपाल जी को स्थान देकर महल में आ गया। पुत्री से कहा ! तुम्हारे भाग्य से कोढ़ी पति आ गया है। वह पिता से बोली ! आपको जो रुचिकर है वही हमारे लिये कामदेव है, प्रत्येक जीव अपने कर्मों का कर्ता-भोक्ता है। मन्त्री ने राजा को बहुत समझाया कि इससे आपका अपयश होगा, किन्तु राजा नहीं माना, बिलखती हुई माँ को देखकर मैनासुन्दरी ने कहा कि सबको अपने कर्मों का फल भोगना ही पड़ता है, पिता ने भरपूर दहेज भी दिया किन्तु अहम् बुद्धि के कारण लोक निन्दा का ही पात्र बना।

तृतीय परिच्छेदः- मैनासुंदरी ने मन्दिर जी में विराजमान सुगुप्ताचार्य को अपना दुःख सुनाया-

मैनासुन्दरी एक आदर्श धर्मपत्नी के रूप में पति की उत्तम प्रकार से सेवा करती थी, मैनासुन्दरी पति को लेकर मन्दिर गयी, पूजा के बाद वहाँ विराजमान 'सुगुप्ताचार्य' को अपना अशुभ कर्मोदय बताकर दुःख से मुक्ति का उपाय पूँछने लगी, तब मुनिराज ने कहा कि तुम सम्यक्त्व पूर्वक श्री सिद्धचक्र व्रत का पालन करो, तुम्हारा सङ्कट दूर होगा, पति निरोग होकर राज करेंगे। मुनिराज ने धर्मोपदेश में श्रावक के बारह व्रतों का, जलगालन विधि, रात्रि भुक्ति त्यागव्रत, दानविधि, दान का फल, देव के स्वरूप इत्यादि का वर्णन किया। पूज्य, पूजक, पूजा और पूजा का फल, षट्कर्म का पालन, अन्त में सल्लेखना, सिद्धचक्र की महिमा विधि, स्तुति, जाप, व्रत धारण, यथाविधि पालन करके जिनभक्ति परायणा मैनासुन्दरी ने अभीष्ट फल प्राप्त कर लिया, श्रीपाल जी निरोग हो गये इन्द्र अथवा कामदेव के समान पति को देखकर मैनासुन्दरी प्रसन्न हुयी। पुत्र की स्वस्थता के समाचार सुनकर 'श्रीपाल जी की माता कमलावती' अपने पुत्र से मिलने आती है, श्रीपाल जी माता का विशेष स्वागत करते हैं, मैनासुन्दरी सासुजी का स्वागत कर समय पाकर अपने पति का परिचय पूँछती है, तब सासूजी ने कहा कि हे पुत्रि ! तुम 'श्रीपाल जी को चम्पापुरी के सिंहसेन राजा, रानी कमलावती का पुत्र' जानो, पिता की मृत्यु हो जाने के बाद श्रीपाल जी को राजगद्दी पर बैठा दिया गया, किन्तु 'चाचा वीरदमन राज्य सम्भालता था, उसके मन में पाप आया, श्रीपाल जी को मारने का षड्यन्त्र रचने लगा, यह समाचार मन्त्री द्वारा मुझे ज्ञात हुआ, तब पुत्र की रक्षा हेतू मैं अपने भाई के यहाँ बनारस आ गयी, वहाँ दैवयोग से कुष्ट हो गया, अतः परिकर के साथ वन में आ गया। इस कथा को सुनकर मैनासुन्दरी को बहुत सन्तोष हुआ। सास ने कहा हे बेटी ! आपके पुण्योदय से और परम पवित्र सिद्धचक्र पूजा

विधान के प्रभाव से इसका शरीर कामदेव के समान कान्तिमय हो गया है। ये सब हमारी कथा है, पुण्य का माहात्म्य सुनकर पुत्र वात्सल्य से प्रेरित होकर मैं यहाँ आई हूँ। पुनः मैनासुन्दरी का पिता प्रजापाल पुत्री को कामदेव के समान रूपवान पुरुष के साथ देखकर पुत्री पर सन्देह करते हैं, तब 'पुत्री के मामा' ने यथार्थ बतलाकर राजा का सन्देह दूर किया, जिन महिमा से राजा का क्षोभ और कोप विलीन हो गया, पिता स्वयं मैनासुन्दरी और श्रीपाल जी के पास गया दोनों ने उनको आता देखकर खड़े होकर अभिवादन किया, राजा ने कहा हे कुलदीपक बेटी ! भक्ति के समान और कुछ नहीं है तथा सिद्धचक्र की महिमा स्वीकार करते हैं और श्रीपाल जी को राज देना चाहते हैं किन्तु उन्होंने स्वीकार नहीं किया, तब राजा सन्तोष रूप परिणामों से अधिक प्रभावित होते हैं और प्रेम से उनको देश, कोष, ग्राम, गजादि से सम्मानित कर घर चले जाते हैं तथा सिद्धचक्र का प्रभाव कपूर की भान्ति सर्वत्र फैल जाता है।

चतुर्थ परिच्छेदः-श्रीपाल जी का विदेशगमन-मैनासुंदरी की सीख-

सुख पूर्वक रहते हुए बहुत समय बीत गया, एक दिन श्रीपाल जी ने सङ्गीतकारों द्वारा अपनी स्तुति सुनी वह स्तुति ससुर के नाम से गायी जा रही थी। गुणानुवाद राजा प्रजापाल के जमाई के नाम से किया गया था। सोचने लगे मेरे लिये धिक्कार है, मैं ससुर के नाम से जाना जाता हूँ, मेरे पिता का नाम मिट रहा है। मैनासुन्दरी ने श्रीपाल जी को चिन्तित देख पूँछा हे प्राणेश्वर ! मुख कमल की मलिनता का कारण क्या है ? तो कहा हे सुन्दरी ! मेरे पिता का नाम नष्ट हो गया है इसलिये खेद है, मामा, बहन, ससुर और स्त्री के नाम से जीना अधमाधम है। लोक में धन विना व्यक्ति शोभित नहीं होता है जैसे गन्ध के विना पुष्प शोभित नहीं होता है। मैं विदेश जाकर धन कमाकर लाऊँगा। मैनासुन्दरी सुनकर काँपने लगी मैं तुम्हारे विना नहीं रह सकती, श्रीपाल जी ने कहा ! स्त्री के साथ विदेश गमन दुःख का कारण है। तुम पिता के पास सुख से रहो, मैं बारह वर्ष बाद पुनः आऊँगा।

मैनासुन्दरी की सीख

1.पञ्चपरमेष्ठी का स्मरण करना, 2.चार प्रकार का दान, 3.पूजा आदि अपने षडावश्यकों का पालन करना, 4.धीरे बोलो-शान्ति मिलेगी, 5.भक्ति करो-मुक्ति मिलेगी, 6.सेवा करो-शक्ति मिलेगी, 7.दान करो-सम्मान मिलेगा, 8.सन्तोष रखो-सुख मिलेगा, 9.सहन करो-साथ मिलेगा, 10.अहं छोड़ो चमन खिलेगा इत्यादि सीख दी। जब जाने लगे तो वस्त्र पकड़ कर रोने लगी, तब श्रीपाल जी ने कहा ! अपशकुन मत करो मैं सिद्धचक्र की शपथ पूर्वक कहता हूँ कि बारह वर्ष में अवश्य आ

जाऊँगा। माता को नमस्कार कर विदेश जाने का समाचार दिया एवं मैनासुन्दरी की रक्षा के लिए माता से निवेदन किया, **माता की सीख** 1.पञ्चपरमेष्ठी ही मङ्गल एवं शरणाधार हैं, 2.सिद्धचक्र की आराधना करना, 3.तात्कालिक चमत्कार में नहीं फँसना, 4.स्त्रियाँ स्वभाव से चञ्चल होती हैं उनका सहसा विश्वास नहीं करना,5.परदेश में ढोंगी, कपटी, मिथ्याचारी कौन है इसे समझकर विवेक से आत्मरक्षा करना,6.परदेश में अत्यन्त सावधानी की जरूरत है, 7.परधन व परस्त्री पर भूलकर भी दृष्टिपात नहीं करना, 8.सप्त व्यसनों से सदैव दूर रहना, 9.जल, ठग, कञ्जूस, हठी, शस्त्रधारी, नेत्रहीन, नख सींग वाले पशु, वेश्या, रोगी, ऋणि, बन्दी, शत्रु, जुआँरी, चोर, झूठ बोलने वालों का विश्वास नहीं करना। इनके मिष्ठ व्यवहार को गुड़ लपेटी तलवार समझना। 10.जटाधारी, मुण्डितशिर भस्मधारी, तान्त्रिक वनवासी, कुबड़ा, बोना, काना, छोटी गर्दन वाला, डाकिनी, शाकिनी, दूतों, दासियों का विश्वास नहीं करना। 11.धन प्राप्त होने पर अहङ्कार नहीं करना। 12.सबको माता बहिन तुल्य समझना, 13.स्थान, वन, नगर, राजकुल का विश्वास नहीं करना,14.घोड़े से सात हाथ, सींग वाले पशु से पाँच हाथ, नारी से बीस हाथ, हाथी से साठ हाथ की दूरी बनाए रखना, क्रूर, पशु का और चार्वाक् मत का विश्वास नहीं करना।15.बोलना कम-विचारना ज्यादा,16.बैठना कम-चलना ज्यादा, 17.लेना कम-देना ज्यादा,18.उपदेश कम देना-आचरण ज्यादा करना,19.आज्ञा कम देना-सेवा ज्यादा करना, 20.खेद कम करना-प्रसन्न ज्यादा रहना। माँ ने अपनी सीख में कहा कि यह भी ध्यान रखना कि-

किसकी आँखों में क्या रहता है। 1.माँ की आँखों में ममता, 2.पिता की आँखों में फर्ज, 3.पत्नी की आँखों में कर्तव्य, 4.भाई की आँखों में प्यार, 5.बहिन की आँखों में दुलार, 6.अमीर की आँखों में अहङ्कार, 7.गरीब की आँखों में दीनता, 8.मित्र की आँखों में सहयोग, 9.दुश्मन की आँखों में बदला, 10. कामी की आँखों में वासना, 11. क्रोधी की आँखों में ललिमा, 12. मानी की आँखों में बड़प्पन, 13.लोभी की आँखों में स्वार्थ, 14. कपटी की आँखों में चंचलता, 15.ज्वाँरी की आँखों में धन, 16.मांसभक्षी की आँखों में क्रूरता, 17.सज्जन की आँखों में दया, 18.शिष्य की आँखों में आदर,19.गुरु की आँखों में 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की भावना ही रहती है। ये शिक्षा स्वीकार कर **श्रीपाल जी ने विदेश गमन कर दिया।** वन-उपवन पार करते हुए 'भृगुकच्छ नामक गाँव में' पहुँचे। वहाँ धवल सेठ पाँच सौ जहाजों को लेकर रत्नपुर द्वीप जा रहा था कि समुद्र में जहाज अटक गये, तब

ज्योतिषी से पूँछा तो उसने कहा बत्तीस लक्षण युक्त पुरूष जहाज को स्पर्श करेगा तब जहाज चलेगा। सेठ जी ने चारों ओर उस व्यक्ति को खोजने के लिए अपने सेवक भेजे, श्रीपाल जी नगर की शोभा देख रहे थे, सेवकों ने उनका परिचय पूँछकर चलने को कहा, श्रीपाल जी तैयार हो गये और सेठ के पास आ गये। सेठ ने सम्मान किया, श्रीपाल जी ने **''पञ्चनमस्कार मन्त्र का स्मरण कर जहाजों में फूँक मारी तो जहाज चल पड़े'', जो क्षुद्र देव थे वे मन्त्र के प्रभाव से नष्ट हो गये,** सेठ ने श्रीपाल जी की प्रशंसा की और कहा ! आप हमारे साथ चलो, श्रीपाल जी ने स्वीकार कर लिया। सभी लोग यात्रा का आनन्द ले रहे थे। तभी बर्बर देश के चोरों ने धावा बोल दिया, दस हजार योद्धओं के साथ सेठ का सारा धन लूट कर ले जाने लगे, हा हा कार मच गया। श्रीपाल जी ने सिंहनाद किया युद्ध शुरू हुआ। श्रीपाल जी की विजय हुई। सारी सम्पत्ति वापिस लेली। श्रीपाल जी ने सभी चोरों को बढ़िया भोजन करा कर विदा किया। चोरों ने भोजन से सन्तुष्ट होकर श्रीपाल जी को सात जहाज भेंट किये और स्तुति की। सेठजी सुख से 'रतनपुर द्वीप' पहुँच गये, समुद्र के किनारे जहाज खड़े कर सेठ नगर में व्यापार को गये। उस द्वीप में रत्नमयी वज्रकपाट युक्त हजारों शिखरों और ध्वाजाओं से युक्त त्रिलोकतिलक नामक सहस्त्रकूट जिनालय को देखकर खुश हुये। द्वारपाल से पूँछा किसने कपाटों में ताला लगाया है ? **द्वारपाल ने कहा कि जिनालय के कपाट देव भी खोलने में समर्थ नहीं हैं फिर मनुष्यों की क्या बात है? श्रीपाल जी ने यह सुनकर 'पञ्चनमस्कार का स्मरण कर कपाटों का स्पर्श किया और कपाट खुल गये''**। आँखों के लिये रम्यक औषधि के समान श्रीपाल जी को देवदर्शन हुआ जय-जयकार करते हुए मन्दिर में प्रवेश किया। पाप नाशक प्रतिमाओं के दर्शन कर 'एक हजार आठ नामों से प्रभु की स्तुति कर भाव विभोर हो गये'। द्वारपाल ने राजा को सूचित किया, श्रीपाल जी जब मन्दिर जी से निकले तब विद्याधरों का राजा प्रेम से बोला हे महाभाग्यशालिन् ! मैं इस रत्नद्वीप के विद्याधरों का राजा हूँ मेरी रानी का नाम मेघमाला है, रयणमञ्जूषा मेरी पुत्री है। एक बार मैंने 'परम तपस्वी आचार्य ज्ञानसागर जी' से पूँछा था, कि मेरी पुत्री के लिऐ वर कौन होगा ? तब महाराज ने कहा था कि जो सहस्त्रकूट चैत्यालय के वज्र कपाट खोलेगा वही तुम्हारी बेटी का वर होगा। आज पुण्य उदय से आपका आगमन हुआ है, घर चलकर मेरी पुत्री को स्वीकार करें। 'श्रीपाल जी ने 'ओम्' कहकर स्वीकृति' दी। शुभ लग्न में सेकड़ों उत्सवों के साथ रयणमञ्जूषा के साथ शादी हुई, भारी वैभव और रयणमञ्जूषा के साथ श्रीपाल जी धवल सेठ के पास आया। एक बार रयणमञ्जूषा ने पूँछा आपकी

कितनी पत्नियाँ है ? माता-पिता का स्थान कहाँ है ? तब 'श्रीपाल जी ने कहा अवन्ती देश, उज्जयनी नगरी', 'सिंहसेन पिता', 'कमलावती माता', 'वीरदमन चाचा', कुष्ठ से पीड़ित मेरे साथ मैनासुन्दरी की शादी हुई इत्यादि परिचय दे दिया।

पञ्चम् परिच्छेद:-धवल सेठ की कूटनीति-श्रीपाल जी की समुद्र यात्रा-

धवल सेठ रत्नद्वीप से हीरा माणिक आदि अनेक वस्तुओं का व्यापार कर अपने देश को चल दिया, जहाज में स्थित रयणमञ्जूषा को देखकर सेठ काम से पीड़ित हो गया और सोचने लगा इसके विना जीवन व्यर्थ है उसे काम के दस वेग सताने लगे।

विषयासक्त चित्तानां गुण: को वा न नश्यति।
न मानुष्यं न वैदुष्यं नाभिजात्यं च सत्यवाक्।।

विषयासक्त मनुष्य के मनुष्यता, विद्वत्ता, कुलीनता एवं सत्यवचन आदि कौन से गुण नष्ट नहीं हो जाते हैं ? वह पापी अपने मन्त्री से बोला ! मैं श्रीपाल जी की पत्नी को चाहता हूँ, मन्त्री ने कहा ! तुम धर्मपिता हो, कामी नरकगामी होता है, रावण आदि क्षय को प्राप्त हुए हैं, श्रीपाल जी उपकारी है उसने जहाज चलाये, चोरों से रक्षा की, उसी को ठगने का विचार कर रहे हो, इत्यादि मन्त्री ने बहुत समझाया पर सेठ को समझ में नहीं आया।

'पित्तज्वरवत: क्षीरं तिक्तमेव हि भासते' (पित्तज्वर वाले को दूध भी कड़वा लगता है)।

एक वणिक् को एक लाख रुपए का लोभ देकर श्रीपाल जी को समुद्र में पटकने का निश्चय किया, वणिक् ने कपट से कहा ! कि 'मगरमच्छ उछल कर सर्वनाश करेंगे' ऐसा कोलाहल कर दिया, यह सुनकर श्रीपाल जी मत्स्य को देखने के लिए रस्सी के सहारे मस्तूल पर चढ़ने लगे, पापी वणिक ने रस्सी काट दी, श्रीपाल जी समुद्र में गिर गये, **'गिरते ही पञ्चनमस्कार मन्त्र का स्मरण किया'**, जैसे-तैसे डूबकर जल प्रवाह में एक लकड़ी के सहारे तैरने लगे इधर-उधर दृष्टि फैलायी पर न जहाज दिखा न किनारा। अपनी भुजाओं से जल राशि तैरने लगे, अनेक जल जन्तुओं से भरे **'समुद्र को एक माह तक तैरकर' जैसे मन्त्र के प्रभाव से कुत्ता देव हो गया उसी प्रकार श्रीपाल जी 'दलवर्तन नामक रत्नद्वीप' को प्राप्त हो गये**, 'दलवर्तन द्वीप का राजा धनपाल रानी वनमाला' के तीन बेटे और 'गुणमाला नाम की बेटी' थी। एक बार धनपाल राजा ने मुनिराज से पूँछा मेरी बेटी का वर कौन होगा ? तब मुनिराज ने कहा था कि जो समुद्र पार करके आयेगा, वही उसका पति होगा, मुनिराज के वचन

सुनकर तब से राजा वर की प्रतीक्षा में थे, आज सौभाग्य से मन सन्तुष्ट हुआ है, राजा ने श्रीपाल जी का स्वागत किया और घर चलने का निवेदन किया, घर ले जाकर शुभ लग्न में गुणमाला का विवाह श्रीपाल जी के साथ कर दिया। दान, पूजादि षट्कर्म करते हुए श्रीपाल जी सुख से रहने लगे, वहाँ जहाज में धवल सेठ मायाचार से हाहाकार करने लगा, श्रीपाल जी समुद्र में गिर गये, रयणमञ्जूषा महादुःख से रोती हुई मूर्छित हो गई, होश आने पर पुनः रोने लगी। इधर पापी धवल सेठ ने रयणमञ्जूषा को वश में करने के लिए दूती भेजी, लेकिन वह महासती के मन को विचलित नहीं कर सकी। धवल सेठ स्वयं आकर रयणमञ्जूषा को समझाने लगा और बोला ! मुझे रति दान दे दो, नहीं तो मैं मर जाऊँगा। तब रयणमञ्जूषा ने कहा हे पापी ! ऐसे पाप युक्त वचन मत बोल, क्षणभर में क्षय को प्राप्त हो जाएगा। जहाज में स्थित देवताओं ने उसकी पिटाई शुरु कर दी। अन्त में सेठ ने देवों के कहने पर रयणमञ्जूषा से क्षमा माँगकर देवों को शान्त किया। रयणमञ्जूषा पति वियोग के कारण दुःखी रहने लगी। कुछ दिन बाद सेठ समुद्र पारकर दलवर्तन द्वीप में पहुँचा, रत्नादिक भेंट लेकर राजदरबार में गया, राजा का योग्य सत्कार करने के बाद श्रीपाल जी पर दृष्टि पड़ी तो आश्चर्य में पड़ गया, राजदरबार से बाहर निकलकर द्वारपाल से श्रीपाल जी की सारी जानकारी ली। उसने कहा समुद्र तैरकर आये हैं और अब राजा के जमाई हैं, सेठ ने सोचा मेरे द्वारा किया गया कार्य असफल हो गया अब श्रीपाल जी को कैसे मरवाया जाए ? धवल सेठ ने 'चाण्डालों को' बुलाकर कहा ! तुम लोगों को 'मनचाहा धन' देंगे, राजा के पास जाकर नृत्य गान करो, जब श्रीपाल जी पुरस्कार देने लगे तब उसको पकड़कर कहो कि ये हमारा बेटा है, समुद्र में गिर गया था आज मिल गया। इससे राजा उसको मार डालेगा, चाण्डालों ने ऐसा ही किया। ' श्रीपाल जी सोचने लगे कर्म कैसा नाच नचाता है' ? राजा ने श्रीपाल जी को चाण्डालों का लड़का जान क्रोध किया। राजा ने श्रीपाल जी से पूँछा तो मौन हो गए, तब राजा ने 'श्रीपाल जी के टुकड़े-टुकड़े करने को' जल्लादों के हाथ में सौंप दिया। नगर मे हाहाकार मच गया। घबरायी हुई दूती ने गुणमाला से कहा कि हे देवी ! क्या श्रृङ्गार कर रही हो राजा ने श्रीपाल जी को मारने का आदेश दे दिया है। यह सुनकर गुणमाला घबराई हुई श्रीपाल जी के पास आयी, बोली हे स्वामिन् ! आप हमसे अपना कुल मत छिपाओ, सच कहो। तब श्रीपाल जी ने कहा ! हमारा कुल जहाज में स्थित रयणमञ्जूषा से पूँछो, तब गुणमाला ने जल्लादों से कहा ! जब तक मैं न आ जाऊँ, तब तक कुछ नहीं करना। गुणमाला तत्काल पालकी में बैठकर शीघ्र वहाँ गई और रयणमञ्जूषा से बोली

कि बहिन तुम श्रीपाल जी का कुल जल्दी बताओ। तब वह कहती है बहिन श्रीपाल जी कहाँ पर हैं ? तब उसने सारा हाल सुनाया। रयणमञ्जूषा ने कहा ! मैं स्वयं ये समचार राजा के पास जाकर कहूँगी। रयणमञ्जूषा को देखकर राजा ने आदर से पूँछा हे बेटी ! श्रीपाल जी के कुल को तुम जानती हो तो कहो उसका कुल क्या है ? रयणमञ्जूषा ने कहा कि 'अङ्गदेश में चम्पानगरी के राजा सिंहसेन, रानी कमलावती के पुत्र श्रीपाल जी' हैं, व्यापार के लिए रत्नदीप में आये थे। वहाँ सहस्त्रकूट चैत्यालय के वज्रमयी कपाट खोले। जैसा मुनिराज ने कहा था वैसा हुआ, मेरे पिता ने मेरा विवाह श्रीपाल जी के साथ किया, बाद में श्रीपाल जी के साथ हम भी जहाज में चले, हमको पाने की इच्छा से पापी धवलसेठ ने श्रीपाल जी को समुद्र में गिराया। मेरा शील भङ्ग करने की कोशिश की किन्तु देवों द्वारा मेरी रक्षा हुई। धवल सेठ के जहाज यहाँ आए हैं, उसी ने ये कपट जाल रचा है। इतना सुनते ही राजा का सन्देह दूर हो गया। श्मशान में जाकर राजा ने श्रीपाल जी से क्षमा माँगी। श्रीपाल जी ने कहा हे राजन् ! तुम मूर्ख हो, क्या चाण्डाल समुद्र पार कर सकता है ? तुम अपने एक करोड़ योद्धाओं को मेरे सामने खड़ा करो मैं अपना पौरुष तुम्हें दिखाता हूँ। राजा लज्जित हुआ, श्रीपाल जी से क्षमा माँगते हुए ससम्मान घर लाकर वस्त्राभूषणों से सुसज्जित किया। राजा ने सेठ को बुलवाकर 'शिर मुण्डन कराकर काला मुँह करके अश्वारोहण' एवं 'मृत्यु दण्ड' का आदेश दिया, तब श्रीपाल जी ने राजा से कहा ये हमारे धर्म पिता हैं और बन्धन से छुड़वा दिया। दूसरे दिन श्रीपाल जी ने परिकर के साथ सेठ का निमन्त्रण किया, षट् रस व्यञ्जन के भोजन कराये। श्रीपाल जी ने स्वयं पङ्खा से हवा की, श्रीपाल जी की ऐसी भक्ति देखकर 'सेठ का हृदयाघात हो गया और मरकर नरक चला गया'। 'श्रीपाल जी ने अपने सात जहाजों सहित सभी जहाज भृगुकच्छ देश में सेठ के घर भेज दिये'।'श्रीपाल जी दलवर्तन द्वीप में राज्य करने लगे', गुणमाला और रयणमञ्जूषा के साथ सुख से भोग भोगते हुए काल व्यतीत करने लगे।

षष्ठम् परिच्छेद:-आठ हजार कन्याओं के साथ विवाह कर महामण्डलेश्वर बने-

दलवर्तन द्वीप में रहते हुए काल व्यतीत हो रहा था, वहाँ आए हुये व्यापारियों को देखकर श्रीपाल जी ने पूँछा आप कहाँ से आए हो ? वे बोले हम सब 'कुण्डलनगर' से आए हैं, वहाँ का 'राजा मकरध्वज रानी कपूरतिलका' है, उनके 'मदनसुन्दर और अमरसुन्दर नाम के दो पुत्र' हैं और 'चित्रलेखा, जगदरेखा आदि सौ पुत्रियाँ' हैं, उनकी प्रतिज्ञा है कि जो हम लोगों का मन वीणावादन मे जीतेगा वही हमारा पति होगा। श्रीपाल जी कुण्डलनगर जाने को तैयार हुए, वहाँ जाकर वीणावादन में

उन सबका मन मोह लिया और उन सौ कन्याओं के साथ विवाह हो गया, राजा ने अनेक प्रकार का दहेज दिया, वहाँ से चलकर 'कञ्चनपुर में राजा वज्रसेन की गन्धर्व, सुशीला आदि नौ सौ कन्याओं के साथ विवाह किया', वहाँ से चलकर 'कङ्कण नामक महाद्वीप में विजयसेन राजा की अनिन्द्य सुन्दरी आदि सोलह सौ कन्याओं के साथ विवाह किया'। आगे चले तो 'पञ्चपण्डित देश में दो हजार कन्याओं के साथ विवाह किया'। अनेक कन्याओं से व्याह कर बड़े भारी दल-बल के साथ 'दलवर्तन नामक रत्नद्वीप को लौट आये'। वहाँ से गुजरात आदि देशों में अनेक कन्याओं को व्याह कर "**आठ हजार राजाओं का स्वामी हुआ अर्थात् महामण्डलेश्वर बन गया**", नाना उत्सवों के साथ 'उज्जयिनी की ओर प्रयाण' किया, कुछ दिन की लम्बी यात्रा के बाद उज्जयिनी आकर नगर के बाहर डेरा डाल दिया। 'राजा प्रजापाल' ने परचक्र आया हुआ जानकार युद्ध की तैयारी की। श्रीपाल जी सेना की रक्षा सेनापति को सौंपकर मैनासुन्दरी के मनोभाव को जानने के लिए गुप्त रूप से उसके महल मे चले गए। वहाँ जाकर छुपकर चुपचाप बैठ गए, तभी मैनासुन्दरी अपनी सासु से कहती है कि श्रीपाल जी को आज बारह वर्ष पूर्ण हो गए अभी तक नहीं आए मैं सुबह दीक्षा धारण करूँगी। सासु ने कहा बेटा ! 'श्रीपाल जी सत्यवादी हैं, कदाचित् मेरु चल सकता है पर श्रीपाल जी का वचन झूठ नहीं हो सकता', हे बेटी ! चार दिन और रुको तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होगा, हे पुत्री ! परचक्र आया है तुम्हारे पिता क्या करेंगे ? मैनासुन्दरी ने कहा कि 'हे माता ! मेरी बाईं आँख और बाईं भुजा फड़क रही है', हे मातः ! कल्याण का कर्ता जिनभक्त दूसरे देश में है, उसका संयोग कैसे होगा ? ऐसा सास-बहु का आलाप चल रहा था, तभी श्रीपाल जी हर्ष से बोल पड़े हे मातः ! मैं आ गया हूँ। श्रीपाल जी की वाणी सुनकर मैनासुन्दरी ने हर्ष से किवाड़ खोले। श्रीपाल जी ने माता के चरण स्पर्श किए, सारी घटनाएँ बतायीं। इसके बाद मैनासुन्दरी से एकान्त मे मिले, खुशी की रात बीती, सुबह सेना का दर्शन और आठ हजार रानियों का परिचय करवाया, पटरानी मैनासुन्दरी को बनाया। श्रीपाल जी ने मैनासुन्दरी से कहा कि मैं तुम्हारे पिता से मिलना चाहता हूँ, किस रीति से मिलूँ ? मैनासुन्दरी ने कहा हमारे 'पिता अहङ्कारी हैं उन्हें दण्ड दो', उनको आदेश दो कि 'गले से पैर तक कम्बल लपेट कर आयें और कुल्हाड़ी हाथ मे लेकर किसान का रूप बनाकर मिलने आयें' तो कुशल है, अन्यथा नहीं। श्रीपाल जी ने कहा मैना ! 'राजा हमारे उपकारी हैं उनके साथ ऐसा व्यवहार नहीं कर सकते'। अन्त में 'धर्म प्रभावना के लिए श्रीपाल जी को मैनासुन्दरी की बात मानना पड़ी' और 'बुद्धिसागर मन्त्री के हाथ से सन्देश भेजा' उसको

पढ़कर राजा गर्व से बोला ! मैं इसका उत्तर रणाङ्गण में दूँगा, मृगों से क्या शेर डर सकता है ? मन्त्री ने राजा को समझाया, श्रीपाल जी महाबलवान है और विशाल सेना है, राज्य की रक्षा के लिए गर्व छोड़ो। मन्त्री की बात से राजा सन्तुष्ट हो गया, तब दूत को भेजकर कहा कि हे श्रीपाल जी ! 'मुझे आपकी आज्ञा मञ्जूर है', तब श्रीपाल जी ने प्रसन्न होकर कहा की 'अब राजा हाथी पर सवार होकर हमारे पास आयें'। राजा विभूति के साथ श्रीपाल जी से मिला, (चार मिले चौसठ खिले, बीस रहे कर जोड़, ज्ञानी ऐसे मिलन में पुलकित सात करोड़) श्रीपाल जी ने कहा कि ये सब सिद्धचक्र के प्रसाद से हुआ है, राजा ने श्रीपाल जी का नगर प्रवेश कराया, श्रीपाल जी अब सुख से रहने लगे।

सप्तम् परिच्छेदः-वीरदमन की दीक्षाग्रहण- श्रीपाल जी का राज्याभिषेक-

उज्जयिनी में श्रीपाल जी का काल सुख से व्यतीत हो रहा था। एक दिन मन में विचार आया की जो पुत्र क्षत्रिय कुल में उत्पन्न होकर अपने पिता के राज्य को नहीं सम्भाल पाता उस पुत्र के जीवन से क्या प्रयोजन ? जो पुत्र पिता के मरने के बाद अपने वंश का उद्धार नहीं करता तो वह पुत्र कीड़े के समान अपनी माँ को पीड़ा कारक है और जो कुल का उद्योत करता है वह कुलदीपक है, अतः कुलागत राज्य को जब तक नहीं ले लूँगा तब तक शान्ति कहाँ। ये विचार श्रीपाल जी ने राजा और प्रजा के समक्ष रखे। राजा ने कहा हे धीमन् ! तुम आधा राज्य लेकर यहीं रहो, पिता के राज्य से क्या ? किन्तु श्रीपाल जी सहमत नहीं हुए और पिता के राज्य को लेने के लिए चल दिए। चक्रवर्ती की तरह सेना लेकर अनेक नदी पर्वतों को भेदते हुए 'चम्पापुरी पहुँच गए'। बाह्य प्रदेश में रुककर 'भद्रदूत को चाचा के पास भेजा'। दूत ने जाकर बड़ी विनम्रता से अपनी बात रखी और कहा हे वीरदमन ! श्रीपाल जी अनेक देशों को जीतकर अपनी मातृभूमि पधारे हैं, उनका पत्र उपहार स्वरूप स्वीकार करें और आप श्रीपाल जी के दूत बनकर सेवा करें या देशान्तर चले जावें। क्रोध से वीरदमन बोला ! श्रीपाल जी मेरा क्या कर लेगा ? मैं उसे परलोक भेज दूँगा। दूत ने कहा हे राजन् ! व्यर्थ गर्व मत करो, वे अङ्ग-वङ्ग आदि अनेक देशों को जीतकर आए हैं। वीरदमन ने कहा ! इसका उत्तर मैं रणाङ्गण मे दूँगा। दोनों ओर से चतुरङ्ग सेना तैयार होकर रणक्षेत्र मे आ गई, महाविनाशकारी युद्ध को देखकर दोनों राजाओं के मंत्रियों ने कहा हे राजन् ! अहिंसा धर्म की रक्षा के लिए और सेना की रक्षा के लिए आप दोनों मल्लयुद्ध करें। मन्त्रियों की बात को स्वीकार कर दोनों परस्पर युद्ध करने लगे। लातों-घूसों के प्रहार से पृथ्वी काँपने लगी, श्रीपाल जी ने पौरुष से वीरदमन को जीत कर बन्धन में डाल दिया, सत्य की विजय हुई, श्रीपाल जी

की सेना में आनन्द छा गया। वीरदमन का मुख मलिन हो गया यही संसार की दशा है, दयालु श्रीपाल जी ने चाचा की दशा देख बन्धन मुक्त कर दिया और नमस्कार कर कहा ! आप मुझे क्षमा करें, आप हमारे पिता तुल्य हैं, मुझ बालक ने आपके साथ जो अनुचित किया उसके लिए क्षमा प्रार्थी हूँ। वीरदमन को वैराग्य हो गया और श्रीपाल जी से कहा मैं तुम्हारी विनय से सन्तुष्ट हूँ, ये राज्य महापाप का कारण है नरक का कारण है, तुम मेरे परम बन्धु हो, मैं क्षमा करता हूँ। इस प्रकार महाग्रह रूप परिग्रह को छोड़कर 'ज्ञानसागर मुनिराज के पास दीक्षा ग्रहण कर ली'। यहाँ सैकड़ों महोत्सवों के साथ श्रीपाल जी का राज्याभिषेक हुआ। **''पुण्य से अत्यन्त दूर वस्तु भी पास आ जाती है, पाप से हाँथ की वस्तु भी नष्ट हो जाती है''**।

अष्टम् परिच्छेद:-श्रीपालजी का साधु वंदना को जाना और धर्मोपदेश श्रवण करना-

एक बार श्रीपाल जी सभा में विराजमान थे उन पर चमर ढोरे जा रहे थे, तभी वनपाल ने आकर नाना पुष्प-फलों को सामने रखकर कहा हे स्वामिन ! राज वन में 'अवधिज्ञानी श्रुतसागर मुनिराज' आए हैं, जिनके प्रभाव से जन्तु बैर मुक्त हो गए हैं, यह समाचार सुनकर श्रीपाल जी ने सात कदम आगे जाकर नमस्कार किया, नगर मे भेरी बजवाकर हाथी पर बैठ कर वन में चले गए, वृक्ष के नीचे शिला पर बैठे हुये मुनिराज को **''साष्टाङ्ग नमस्कार कर तीन परिक्रमा कर गुरु स्तुति की''**

''जेठ तपै रवि आकरो, सूखे सरवर नीर।
शैल शिखर मुनि तप तपै, दाझै नगन शरीर।।''
''पावस रैन डरावनी, बरसै जलधर धार।
तरुतल निवसै साहसी, चालै झंझा बयार।।''

मुनिराज ने धर्मवृद्धि का आशीर्वाद दिया, श्रीपाल जी ने प्रश्न किया भगवन् ! धर्म का स्वरूप क्या है ? तब मुख चन्द्र से अमृत झराने के समान मुनिराज बोले

'संसार दु:खत: सत्त्वान्, यो धरत्युत्तमे सुखे'

जो संसार के दु:खों से निकालकर उत्तम सुख में पहुँचा दे, उसे धर्म कहते हैं। पच्चीस दोष रहित सम्यग्दर्शन होता है, मुनि और श्रावक के भेद से धर्म दो प्रकार का है, श्रावक धर्म का व्याख्यान, तत्त्वार्थ सूत्र सातवे अध्याय से पच्चीस भावना, बारह व्रत, दाता-पात्र, नवधा भक्ति, ग्यारह प्रतिमा, अन्त में सल्लेखना का स्वरूप, धर्म का माहात्म्य आदि बताया।

नवम् परिच्छेद:-कष्टों का कारण पूँछना-भवान्तर श्रवण करना-

धर्म श्रवण कर श्रीपाल जी ने अपने जीवन में उपस्थित विपत्तियों का कारण पूँछा, कुष्ट रोग होना, बचपन में राज्य मिलना फिर राज्य वियोग होना, मैनासुन्दरी से विवाह, समुद्र में गिरना आदि प्रश्न किये।

राज्य से च्युत होने का कारण- भरत क्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की उत्तर श्रेणी में विद्याधरों की साठ नगरियाँ हैं, एक-एक नगरी के आश्रित एक-एक करोड़ गाँव हैं, उसमें से 'उनञ्चासवीं नगरी का नाम रत्नाकर' है, उस नगर का 'राजा श्रीकान्त एवं उसकी रानी श्रीमती' थी। रानी धार्मिक थी किन्तु राजा भोगी था, एक बार राजा श्रीकान्त रानी के साथ वन क्रीडा को गया वहाँ 'सुगुप्ताचार्य' का दर्शन हुआ उनको प्रणाम कर बैठ गया, मुनिराज ने कहा ! दयामयी धर्म के अलावा और कोई शरण नहीं है। मुनिराज के वचन सुनकर राजा ने **''श्रावक के व्रतों को अङ्गीकार किया, घर आकर राजा ने कुछ दिन तक व्रतों का पालन किया बाद में कुसङ्गति के कारण व्रत छोड़ दिये, मिथ्यादृष्टि बन गया और भव-भव में दु:ख उठाए, व्रत भङ्ग के कारण राज्य से च्युत होना पड़ा, अत: प्राणों के वियोग होने पर भी व्रत भङ्ग नहीं करना चाहिए''**।

कुष्ठी होने का कारण- एक बार आप सात सौ साथियों के साथ वन क्रीड़ा करने गए थे, वहाँ पर ऋद्धिधारी मुनिराज का शरीर कुष्ठ रोग से पीड़ित था, उनको देखकर 'आपने निन्दा की' और सात सौ लोगों ने समर्थन किया, जिससे 'उन सभी को कुष्ठी होना' पड़ा, अत: **''प्राणों का वियोग होने पर भी कभी मुनियों की निन्दा नहीं करना चाहिए''**।

समुद्र में गिरने का कारण- दूसरे दिन नदी किनारे विराजमान **'मुनिराज को नदी में फेंका था', किन्तु कुछ देर बाद जिन्दा निकाल लिया था, जिसके कारण 'आपको समुद्र में फेंका गया' और आप जीवित बच गये।**

चाण्डाल कहे जाने का कारण- 'उग्रोग्र तपधारी मुनिराज को आपने चाण्डाल कहा था', उससे 'आपको भी चाण्डाल कहा गया', इत्यादि राजा के दुराचार देखकर गुणवती नामक श्राविका ने रानी श्रीमती से कहा कि तुम्हारा पति मिथ्यात्व के संसर्ग से मुनि पर सैकड़ों उपसर्ग कर रहा है, इससे तुम्हारा जीवन व्यर्थ है। श्रीमती यह सुनकर बहुत दु:खी हुई ऐसे भाग्य और राज्य से क्या प्रयोजन, मैं तो सुबह होते ही दीक्षा लूँगी, ऐसा उद्वेग में कहा, तब नौकर ने राजा को सन्देश दिया कि

आपके दुराचार से रानी बहुत दुःखी है, सुनकर राजा श्रीकान्त ने कहा हे देवी ! दुःखी क्यों हो ? तब रानी ने कहा कि गृहवास में कभी भी आशाओं की पूर्ति नहीं होती, मैं तो प्रातः संयम लूँगी, राजा श्रीकान्त रानी के दुःख को समझ गया, उसने कहा शोक मत करो मैंने कुसङ्गति के कारण मुनि को पीड़ित किया है उससे जो पाप हुआ है उसकी मैं क्षमा चाहता हूँ। आज से मैं जैन व्रत को पालूँगा, यदि न पालूँ तो राजाओं के मध्य हमारा कुल निंद्य हो। तुम संयम ग्रहण मत करो, गुरु के पास मेरी गलती का प्रायश्चित्त दिला दो। तब श्रीमती के साथ मन्दिर जाकर प्रभु भक्ति की। वहीं विराजमान 'वरदत्त मुनिराज' को नमस्कार कर पापकर्मों का त्याग किया। गुरु स्तुति की और कहा हे स्वामिन् ! व्रतों की शुद्धि हेतु व्रत दीजिए, तब मुनिराज ने श्रावक के व्रत देकर कहा कि **''सर्व सिद्धिदायक सिद्धचक्र का व्रत करो और प्राण नाश होने पर भी व्रतों का त्याग मत करो, सिद्धचक्र की विधि-पञ्चरत्नों से मण्डल माँड़कर चारों कोणो में प्रतिमाएं विराजमान कर अष्टद्रव्य से भक्ति करें, बारह वर्षों तक तीनों कार्तिक, फाल्गुन, आषाढ माह के शुक्लपक्ष में सिद्धचक्र का स्मरण करें, श्रावक श्राविकाओं को बड़ी विनय पूर्वक भोजन करावें, ऐसा करने से स्वर्ग/मोक्ष की सम्पदा प्राप्त होती है। 'इसी व्रत के माहात्म्य से अनन्त सिद्ध हुये हैं'। नन्दीश्वर की महिमा तीनों लोकों मे अपूर्व है''**। श्रीकान्त राजा जगत पूज्य व्रतों का पालन कर ग्यारहवें स्वर्ग में शतारेन्द्र हुआ और श्रीमति शची हुई, वहाँ दिव्य शय्या पर उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्त में नवयौवन से युक्त हो गए, अवधिज्ञान से विचार किया 'कोऽहं कस्मात् समायातः' अर्थात् मैं कौन हूँ और कहाँ से आया हूँ ? ऐसा जानकर नन्दीश्वर दीप के दर्शन को चला गया। शतारेन्द्र वहाँ से चयकर महाबलवान श्रीपाल जी हुये और शची चयकर मैनासुन्दरी हुई, श्रीपाल जी ने अपने भावान्तर सुनकर मुनिराज को नमस्कार कर सिद्धचक्र का व्रत लिया।

दशम् परिच्छेदः-श्रीपाल जी का राजभोग फिर वैराग्य योग-

श्रीपाल जी मुनि वन्दना कर और पूर्वभव सुनकर परिकर के साथ घर आयेऔर आष्टान्हिक महापर्व को मनाने के लिए चम्पापुरी को ध्वजाओं आदि के द्वारा दुल्हन की तरह सजाया और आठ दिन सिद्धों की भक्ति की, इस व्रत के पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए या शक्ति न हो तो व्रत दूना करना चाहिए, श्रीपाल जी विपुल भोगों को भोगते हुये आठ हजार रानियों के साथ दान-पूजादि करते हुये रहने लगे, मैनासुन्दरी के चार पुत्र थे पृथ्वीपाल, भूपाल, सारधि और चित्रक, रयणमञ्जूषा के सात

पुत्र थे, गुणमाला के पाँच पुत्र थे, कुल मिलाकर सभी रानियों के बारह हजार पुत्र थे, श्रीपाल जी महामण्डलेश्वर राजा थे उनकी आठ हजार राजा सेवा करते थे, बारह हजार हाथी, बारह लाख घोड़े, बारह करोड़ योद्धा थे, करोड़ों गाँव थे इत्यादि अवर्णनीय वैभव था, श्रीपाल जी जिनभक्त थे तथा सारी प्रजा भी राजा का अनुसरण करती थी।

राज्ञि धर्मणि धर्मिष्ठा, पापे पापः समे समः।
लोकास्त्वनुवर्तन्ते, यथा राजा तथा प्रजा।।

अर्थात् यदि राजा धार्मिक होता है तो प्रजा भी धार्मिक होती है और यदि राजा पापी होता है तो प्रजा भी पापी होती है, सम होने पर सम होती है लोग तो अनुशरण करते हैं जैसा राजा होता है वैसी प्रजा होती है। **''ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य श्रीपाल जी के राज्य में सभी दयायुक्त धर्म का पालन करते थे''**, इस प्रकार पुण्योदय से बहुत काल व्यतीत हो गया था।

वैराग्य- एक बार राजा श्रीपाल जी सरोवर के तट पर कीचड़ में फँसकर मरे हुये हाथी को देखकर विचार करने लगे कि अरे रे ! यह महागजेन्द्र कीचड़ में फँसकर मर गया, ओ हो ! इस संसार में प्राणी भी मोह रूपी कीचड़ में फँसे हैं और मैं मूढ़ स्त्री की काय रूपी कीचड़ में फँसा हूँ, ये मौत प्राणियों को हटात् ले जाती है, इस अनादि संसार में जो मोहरूपी शत्रु को जीतकर परमपद को प्राप्त हुये हैं वे धन्य हैं, इस संसार में धनादि सब अनित्य हैं, इस दुःख के सागर में इन्द्र-धरणेन्द्र आदि कोई शरण नहीं, जिस प्रकार सिंह के द्वारा पकड़े हुये हिरण को कोई बचा नहीं सकता, रत्नत्रय ही शरण है और कोई नहीं, इस संसार में छेदन-भेदन, इष्ट वियोग-अनिष्ट संयोग, रोग-शोक, जीव स्वयं भोगते हुए संसार में चौरासी लाख योनियों में भटकता हुआ दुःख पा रहा है, इस प्रकार बारह भावनाओं का चिन्तन करने लगे, शरीर रोगों का घर है, **''एक आँख बराबर स्थान में छियानवे रोग हो सकते हैं, पूरे शरीर में पाँच करोड़ अड़सठ लाख निन्यानवे हजार पाँच सौ चौरासी रोग हो सकते हैं''**, 'भोग बुरे भव रोग बढ़ावे' ऐसा विचार करते हुये राज्य को त्याग कर संयम धारण करने को कटिबद्ध हुये, महीपाल नामक पुत्र को राज्य देकर 'सुव्रताचार्य' के पास दीक्षा लेकर आत्मकल्याण में तत्पर हुये, अनेक राजा साथ में दीक्षित हुये। अनेक उपसर्ग परिषहों को सहते हुये क्षपक श्रेणी पर आरोहण किया, मोह आदि छत्तीस प्रकृतियों का क्षय कर द्वितीय शुक्ल ध्यान में आरूढ़ हुये। घातिया कर्मों का क्षय करके केवलज्ञान को प्राप्त हुये, देवों ने गन्धकुटी की रचना की, एक छत्र, दो चमर, पुष्पवृष्टि

करके जय-जय की ध्वनि के साथ केवलज्ञान की पूजा की, प्रभु ने सात तत्त्व, छः द्रव्य, पाँच अस्तिकाय, कर्म प्रकृतियों के बन्ध-उदय व छः लेश्याओं का उपदेश दिया, चौदहवें गुणस्थान के अन्त में अघातिया कर्मों का क्षय करके मोक्ष को प्राप्त हुये, **''मैनासुन्दरी ने तप के प्रभाव से दसवें स्वर्ग में स्त्रीपर्याय को छेदकर इन्द्र पद को प्राप्त किया, आगे मोक्ष जावेंगी। सिद्धचक्र के प्रभाव से अनन्त संसारी श्रीपाल जी ने मुक्ति पद को पाया था''**।

'इति श्रीपाल चरितं पूर्णम्'।

★★★

"आज का दान-अक्षय तृतीया महान्"

1 भरत क्षेत्र में अठारह कोड़ाकोड़ी सागर तक दाता-पात्र का अभाव था, इतने काल तक भोगभूमि थी, (षट्काल का वर्णन)।

2 जघन्य भोगभूमि के काल में पल्य का आठवां भाग शेष रहने पर कुलकरों की उत्पत्ति हुयी थी, उन्होंने कर्मभूमि का परिचय कराया था, चौदहवें कुलकर नाभिराय के यहाँ प्रथम तीर्थङ्कर सर्वार्थसिद्धि से पधारे थे।

3 इन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने गर्भ के छः माह पूर्व नगरी की रचना की थी, रोज तीन या चार बार साढ़े तीन करोड़ रत्नों की वर्षा पन्द्रह माह तक करता रहा।

4 सौधर्मेन्द्र जन्म के समय ऐरावत हाथी पर कल्याणक मनाने आता है। हाथी की अवगाहना विक्रिया से एक लाख योजन होती है। सौ मुख, एक-एक मुख में आठ-आठ दाँत, एक-एक दाँत पर एक-एक सरोवर, एक-एक सरोवर में एक हजार आठ पाँखुड़ी के एक सौ आठ कमल, एक-एक पाँखुड़ी पर एक-एक अप्सरा नृत्य करती हुई आती है।

5 आदिनाथ भगवान् की चौरासी लाखवर्ष पूर्व की आयु थी। बीस लाखवर्ष पूर्व की कुमारावस्था थी। तिरेसठ लाखवर्ष पूर्व राज्य किया, **''एक लाखवर्ष पूर्व तक तप किया था''**।

6 नीलाञ्जना की मृत्यु से वैराग्य हुआ था, पञ्चमुष्ठि केशलोंच कर दिगम्बर बने थे, साथ में चार हजार राजा दीक्षित हुये थे।

7 छह माह का उपवास लेकर ध्यान में स्थित रहे, इसके बाद सात माह सात दिन अर्थात् तेरह

महीने सात दिन में आहार चर्या हुई थी।

8 लोग आहार विधि से अपरिचित थे। अठारह कोड़ा-कोड़ी सागर काल का अन्तराल हो गया था, लोग वस्त्र, आभूषण, राज्य, कन्या, आदि वस्तुयें दान में देने के लिए दिखाते थे, लेकिन नवधा भक्ति नहीं जानते थे इसलिये आदिनाथ जी नहीं रुके थे।

9 तेरह माह छः दिन व्यतीत हो गये थे, तब हस्तिनापुर के राजा श्रेयाँस को वैशाख शुक्ला द्वितीया के पिछले पहर में स्वप्न आया था, प्रातः काल मालूम हुआ कि आदिनाथ जी का चर्या हेतु नगर प्रवेश हो रहा है।

10 राजा श्रेयाँस ने अपने भाई सोम और लक्ष्मीमति से कहा आप हमारे साथ पड़गाहन करने चलो, हम जैसा कहें वैसा करते जाना, राजा श्रेयाँस ने आदिनाथ जी का पड़गाहन किया और हर्ष के आसुओं से पाद प्रक्षालन किया, इक्षुरस से आहार सम्पन्न हुआ। पञ्चाश्चर्य हुये, अक्षीण महानस हो गया, उस दिन सारे नगरवासियों ने इक्षुरस का पान किया था किन्तु समाप्त नहीं हुआ, वह दिन अक्षय तृतीया के नाम से प्रसिद्ध हुआ था। भरतचक्रवर्ती को मालूम हुआ कि भगवान् का आहार हो गया है। तो वे हस्तिनापुर आये, श्रेयाँस के घर गये। वे भगवान् को भेज कर वन से वापस आ रहे थे। भरतचक्रवर्ती वन जा रहे थे, छेवले के वृक्ष के नीचे बैठकर चक्रवर्ती का श्रेयाँस और सोमप्रभ से मिलन हुआ था, चक्रवर्ती ने श्रेयाँस को दान तीर्थङ्कर की घोषणा की थी।

11 आदिनाथ जी धर्मतीर्थ के प्रवर्तक हुए थे। श्रेयाँस जी दानतीर्थ के प्रवर्तक हुए थे। भरतजी आदिनाथ जी के केवलज्ञान के समय चक्रवर्ती बने थे।

12 प्रथम मुनि को प्रथम बार आहार दान देने वाले श्रेयाँस और सोमप्रभ उसी भव से मोक्ष पधारे।

13 षट्कर्म की व्यवस्था के समय, आदिकुमार ने बैल के मुख में मुसीका लगाने का नियम बनाया था, जिसके कारण अन्तराय कर्म का बन्ध किया था, इसलिए उनको तेरह माह छः दिन तक आहार नहीं मिला था।

14 शान्तिसागर जी ने दीक्षा के बाद आगम के अनुसार आहार लेने का नियम लिया था, चार दिन तक आहार नहीं मिला था, तब जनता ने उनके गुरू से पूँछ कर व्यवस्था बनायी थी, आदिनाथ जी के समय बताने वाला कोई नहीं था।

15 अगर जीव ऋजु गति से आया हो, अत्यन्त सरल हो तो पूर्वजन्म का उपकारी मिलने पर पूर्व जन्म का जातिस्मरण होता है।

16 **पुरा गर्भादिन्द्रो मुकुलितकरः किङ्कर इव,**
स्वयं स्त्रष्टासृष्टेः पतिरथनिधिनां निज सुतः।
क्षुधित्वाषण्मासान् स किल पुरुरप्याट जगती-
महो केनाप्यस्मिन् विलसितमलङ्घ्यं हत विधेः।।

इन्द्र गर्भ से पहले ही जिनको नौकर की तरह हाथ जोड़कर खड़ा रहता था और जो स्वयं कर्मभूमि में उपदेशक थे और जिनका पुत्र चक्रवर्ती था, ऐसे आदिनाथ भगवान् स्वयं छः माह तक भूखे रहकर पृथ्वी पर भ्रमण करते रहे, कर्म का चरित्र बड़ा विचित्र है, उसका उल्लङ्घन करने में कोई समर्थन नहीं होता है।

17 **समस्तं साम्राज्यं तृणमिव परित्यज्य भगवान्,**
तपस्यन्निर्माणः क्षुधित इव दीनः परगृहान्।
किलाटद्धिक्षार्थी स्वयमलभमानोऽपि सुचिरं,
न सोढव्यं किं वा परमिह परैः कार्यवशतः।।

जिन्होनें समस्त साम्राज्य को तृण की तरह छोड़कर के निर्वाण के लिए तपस्या की थी, वे भगवान् भी दीन की तरह भोजन के लिए दूसरों के घरों में जाते रहे, लेकिन भोजन नहीं मिला और क्षुधा परीषह सहना पड़ा, फिर दूसरों को तो अपनी कार्य की सिद्धि के लिए परीषह सहन करना ही चाहिये।

★★★

"केवलज्ञान कल्याणक वीर जिनेश का"

1 **ज्ञानं यत्र पुरःसरं सहचरी, लज्जा तपः सम्बलं,**
चारित्रं शिविका निवेशनभुवः, स्वर्गा गुणा रक्षकाः।
पन्थाश्च प्रगुणः शमाम्बुबहल, श्छाया दयाभावना,
यानं तं मुनिमापयेदभिमतं, स्थानं विना विप्लवैः।।

ज्ञान जहाँ पर प्रमुख है, लज्जा सहचारिणी है, तप नाश्ता है, चारित्र पालकी है और बीच में रहने

का स्थान स्वर्ग है, गुण रक्षक हैं, सरल मार्ग है, शान्ति रूपी जल है, दया की भावना ही छाया है, ऐसे मार्ग में गमन करने वाले मुनि विना विघ्न के अपने अभीष्ट स्थान मोक्ष को प्राप्त कर लेते हैं।

2 ज्ञान प्राप्त करने से नहीं ज्ञान रूप बनने से कल्याण होता है।

3 चञ्चल मन में विद्या और धर्म नहीं टिकते हैं।

4 ज्ञानी अभिप्राय को और अज्ञानी शब्दों को पकड़ता है।

5 सरस्वती और लक्ष्मी एक साथ नहीं रहती हैं।

6 मन की शान्ति ही ज्ञान का फल है।

7 स्वाध्यायी जिज्ञासु हो तो बहुत कुछ प्राप्त कर सकता है।

8 विपरीत मति होने पर साक्षर भी राक्षस बन जाते हैं।

9 बुद्धि के साथ यदि संवेदन शीलता न हो तो बुद्धि अनर्थ के लिए जन्म देती है।

10 पुराण पढ़ने के साथ-साथ वर्तमान परिणति को भी पढ़ना चाहिए कि भविष्य में इसका परिणाम क्या होगा ?

11 जिसको ज्ञान का सदुपयोग करना नहीं आता उसके पास ज्ञान व्यर्थ है।

12 मनोरञ्जन के लिए नहीं मन मञ्जन के लिए स्वाध्याय किया जाता है।

13 ऑक्सीजन की यदि वाञ्छित मात्रा में वृद्धि हो जाय, तो मस्तिष्क की कार्य क्षमता बढ़ जाती है।

14 प्रदूषित मानसिकता, प्रदूषित जलवायु व प्रदूषित आहार से व्यक्ति असमय में वृद्ध हो जाता है।

★★★

"श्रुत पञ्चमी"

1 भगवान् महावीर स्वामी से लेकर आचार्य धरसेन के पूर्व तक, आचार्यों का आगम अभ्यास मौखिक होता था, लिपि बद्ध करने की आवश्यकता नहीं थी, भगवान् महावीर के निर्वाण से छः सौ तेरासी वर्ष बाद धरसेनाचार्य हुए, जो द्वादशाङ्ग के एकदेश के ज्ञाता थे। वे अष्टाङ्गमहानिमित्त के पारगामी और लिपि शास्त्र के ज्ञाता थे। गिरनार की चन्द्रगुफा में बैठे हुये विचार आया, कि अब ज्ञान के क्षयोपशम का निरन्तर ह्रास हो रहा है, यदि उपलब्ध ज्ञान को लिपिबद्ध नहीं किया गया, तो इसका विच्छेद हो जायेगा। ऐसा सोचकर निकट ही महिमा नगरी

में हो रहे मुनि सम्मेलन से महासेन आचार्य के दो शिष्यों को बुलाया, पिछली रात धरसेनाचार्य को स्वप्न मे दो बैल परिक्रमा लगाकर नमस्कार करते हुए दिखे, जिससे आचार्य महाराज ने जान लिया कि दो शिष्य मेरे पास आ रहे हैं, पुष्पदन्त और भूतबली मुनिराज धरसेन आचार्य के पास पँहुचे, इनकी सामर्थ्य एवं योग्यता की परीक्षा हेतु, दो दिन के उपवास के साथ मन्त्राराधन करने को कहा, एक मन्त्र में एक अक्षर कम एवं एक मन्त्र में एक अक्षर ज्यादा था, जिससे एक को कानी देवी प्रकट हुई और एक को बड़े दाँत वाली देवी प्रकट हुई, जिसे समझ कर दोनों ने मन्त्र को शुद्ध करके आराधना की तब दोनों मुनि उसमें सफल हुये, तब आचार्य श्री ने मेधावी जानकर, श्रुत का उपदेश दिया, तथा अपना उद्देश्य बताकर ज्ञान को लिपिबद्ध करने का आदेश दिया (धरसेनाचार्य ने महाकम्म पयड़ि पाहुड का अध्ययन कराया)।

आचार्यश्री का आदेश शिरोधार्य कर पुष्पदन्तजी ने णमोकारमन्त्र के रूप में मंगलाचरण कर, ग्रन्थ लिखना प्रांरभ किया, वीसदि नामक(सत् प्ररूपणा पहली पुस्तक) सूत्रों की रचना की, उनको देखकर भूतबलि जी ने द्रव्य प्रमाणानुगम आदि(शेष पन्द्रह पुस्तक) से ग्रन्थ पूर्ण किया।

ज्येष्ठ शुक्ला पञ्चमी के दिन ही इस ग्रन्थ की पूर्णता हुयी, तभी से यह दिन श्रुतपञ्चमी के रूप में मनाया जाता है श्रुतपञ्चमी को ज्ञानपञ्चमी भी कहते हैं।

जीवट्ठाण, खुद्दाबन्ध, बन्धस्वामित्वविचय, वेदना, वर्गणा एवं महाबन्ध नामक छह खण्ड होने से षट्खण्डागम कहलाता है, इस महाग्रन्थ पर कुन्दकुन्द देव की परिकर्म नामक टीका, आचार्य समन्तभद्र कृतटीका, आचार्य शामकुण्ड कृत पद्धति टीका, तम्बूलाचार्य कृत चूडामणि टीका एवं आचार्य वप्पदेव कृत व्याख्या प्रज्ञप्ति टीका का नामोल्लेख मिलता है, वर्तमान में आठवीं शताब्दि में हुये आचार्य वीरसेन द्वारा लिखित धवला टीका उपलब्ध है।

2 जो व्यक्ति हर परिस्थिति में प्रसन्न रहे वह सम्यग्ज्ञानी है।

3 **पूजा दो प्रकार की-** व्यवहार पूजा- शास्त्रों की पूजा, वेष्टन(अछार) लगाना, सफाई करना, जीर्णोद्धार करना, आदि।

निश्चय पूजा- श्रुत के अर्थ को आत्मसात करना, भाव श्रुत को हृदयंगम करना, मिथ्यात्व से मुक्ति आदि।

4 वीरप्रभु के मोक्ष के बाद क्रमशः तीन केवली, पाँच श्रुतकेवली हुये जिनके नेतृत्व में जैन सङ्घ एक सौ बासठ वर्षो तक अविभाजित रहा।

5 **केवली काल बासठ वर्ष-** श्री गौतमस्वामी बारह वर्ष, श्री सुधर्मास्वामी ग्यारह वर्ष, श्री

जम्बूस्वामी उन्तालीस वर्ष। पञ्चम काल में 3 अनुबाद्ध केवली के अलावा 700 केवली और मोक्ष गये जो भगवान् महावीर स्वामी के समवसरण में विराजमान थे। उनको केवल ज्ञान भगवान् के समवसरण में हो गया था और 3 अनुबद्ध केवली को भगवान् के मोक्ष जाने के बाद केवलज्ञान हुआ। अत: इनकी प्रसिद्धि हुयी।

6 **श्रुतकेवली काल सौ वर्ष-** श्री विष्णुमित्र चौदह वर्ष, श्री नन्दिमित्र सोलह वर्ष, श्री अपराजित बाईस वर्ष, श्री गोवर्धन उन्नीस वर्ष, श्री भद्रबाहु उनतीस वर्ष तक रहे। इस प्रकार श्रुतकेवलियों का काल 100 वर्ष का रहा।

7 श्री ब्रम्हदेव सूरी चार सौ वर्ष पूर्व के हैं, श्री जयसेनाचार्य सात सौ-आठ सौ वर्ष पहले के हैं।

8 **एक मत के अनुसार पाँच अनुबद्ध केवली हुए हैं-** इनमें श्रीधर केवली जी अन्तिम हैं।

9 जैसे सूत्र (धागा) से सहित सुई गुमती नहीं है, उसी तरह सूत्र अर्थात् शास्त्र ज्ञान से सहित जीव संसार में भ्रमण नहीं करता है।

10 सर्वज्ञ द्वारा कथित बारह प्रकार के तपों में स्वाध्याय के समान कोई तप न था, न है और न होगा। (मू.आ.409)

11 अज्ञान वह अन्धेरी रात है, जिसमें न चांद है न सितारे अथवा अज्ञान समस्त दुखों को उत्पन्न करने का कारखाना है।

12 अज्ञान को अन्धकार की उपमा दी है, जैसे अन्धेरे में काँच, काँटा, सर्प, गड्ढा आदि दिखाई नहीं देते, उसी प्रकार अज्ञानी की दुर्दशा होती है।

13 आते वक्त वस्त्रों का और जाते वक्त गुणों का सम्मान होता है। शरीर नहीं सिद्धान्त प्यारे होने चाहिए।

14 हम दूसरों को उपदेश देने में चतुर हैं, स्वयं करने में असमर्थ हैं, केवल वेष बना लिया और पर को उपदेश देकर महान बनने का प्रयत्न करते हैं, यह सब मोह की महिमा है।

15 शारदा स्तुति- शारदे नमस्कार करता हूँ बार-बार, ज्ञान का तो वरदान एक बार चाहिए।
माता जगमाता है तू भाग्य की विधाता है तू, तेरा प्यार मात मुझे एक बार चाहिए।
कण्ठ और लेखनी पे होजा तू विराजमान, माथे पे तो हाथ मात एक बार चाहिए।
योगी तो है तेरा दास उससे न हो उदास, ज्ञान तो अधूरा मात्र केवलज्ञान चाहिए।।

★★★

"संयम साधना का योग-पावन वर्षा योग"

★ वर्षा योग की स्थापना प्रत्येक वर्ष आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी के दिन होती है यदि किसी कारण वश चातुर्मास स्थल पर नहीं पहुँच पाये तो पाँच दिन बाद तक वर्षायोग की स्थापना होती है अर्थात् श्रावण कृष्णा चतुर्थी तक हो सकती है।

★ वर्षायोग की स्थापना के दिन उपवास होता है, भक्तियों का पाठ होता है। विशेष साधना का संकल्प होता है। चातुर्मासिक प्रतिक्रमण होता है।

★ वर्षायोग निष्ठापन कार्तिक कृष्ण अमावस्या के दिन होता है। इसके पूर्व चतुर्दशी को उपवास होता है, कार्तिक कृष्ण अमावस्या को प्रातःकाल वर्षायोग निष्ठापन की भक्तियाँ होती है और वीर निर्वाण महोत्सव की भी भक्तियाँ होती है।

1 सन्त के विहार से सूना-सूना और आगमन से सोना-सोना हो जाता है।

2 श्रावक श्रमण का सङ्ग वर्षा योग जिसमें ऊपर से बादल बरसते हैं, नीचे साधु देशना की वर्षा करते हैं, जिससे कई गुणी शीतलता हो जाती है।

3 ठण्डी गर्मी में धनार्जन, वर्षा में धर्मार्जन, वर्षा में गली भवन धुलते हैं, वर्षा योग में दिल दिमाग धुलते हैं।

4 चार माह की उपयोगिता- अषाढ़ में धर्म की बाढ़, सावन में पावन, भाद्रपद में भद्रता हो जाती है, इससे जो वञ्चित है वह कुवाँर में कोरा, कार्तिक में कायर, होकर पलायन कर जाता है, चार माह कायर होने के नहीं वीर होने के हैं।

5 गाय सफेद हो या लाल दूध सफेद ही देती है, साधु द्रव्य लिङ्गी हो या भावलिङ्गी श्रद्धा करोगे तो तिर जाओगे।

6 शास्त्र पढ़ो, झुकना सीखो, श्रद्धा करो, आचरण में उतारो, आत्म कल्याण करो, पशुमय जिन्दगी से बाहर आकर प्रभुमय जिन्दगी व्यतीत करो।

7 बसन्त आने पर प्रकृति मुस्कुराती है और सन्त के आने पर संस्कृति मुस्कुराती है, सूखों को हरा करना बसन्त का काम है, मुर्दों(आलसी) को खड़ा करना सन्त का काम है।

★★★

'गुरु पूर्ण माँ'

-जिसके जीवन में गुरु नहीं उसका जीवन शुरु नहीं-

1 **रत्नत्रयविशुद्धः सन्, पात्रस्नेही परार्थकृत।**
परिपालितधर्मोऽयं, भवाब्धेस्तारको गुरुः।।
जो रत्नत्रय से विशुद्ध हैं, पात्र पर स्नेह करने वाले हैं, परोपकार करते हैं, धर्म का पालन करते हैं, ऐसे संसार से तारने वाले गुरु होते हैं।

2 **विषयाशावशातीतो, निरारम्भोऽपरिग्रहः।**
ज्ञान ध्यानतपोरक्तस्, तपस्वी स प्रशस्यते।।
जो विषयों की आशा से रहित हैं, आरम्भ परिग्रह से रहित हैं, ज्ञान-ध्यान-तप में लीन रहते हैं वे तपस्वी प्रशंसनीय हैं।

3 **मन्त्रे तीर्थे द्विजे देवे, दैवज्ञे भेषजे गुरौ।**
यादृशी भावना यस्य, सिद्धि र्भवति तादृशी।।
मन्त्र, तीर्थ, व्रती, भगवान्, ज्योतिषी, वैद्य और गुरु में जिसकी जैसी श्रद्धा होती है उसको वैसी ही सिद्धि होती है।

4 **विन्यस्येदंयुगीनेषु, प्रतिमासु जिनानिव।**
भक्तया पूर्व मुनीनर्चेत्, कुतः श्रेयोऽतिचर्चिनां।।
वर्तमान मुनियों में, प्रतिमाओं में जिनेन्द्र भगवान् की तरह पूर्व मुनियों की स्थापना करके भक्तिपूर्वक पूजा करनी चाहिये क्योंकि केवल चर्चा करने वालों का कल्याण नहीं होता है।

5 **गङ्गा पापं शशी तापं, दैन्यं कल्पतरुस्तथा।**
पापं तापं च दैन्यं च, हन्ति साधुसमागमः।।
गङ्गा पाप को, चन्द्रमा सन्ताप को और कल्पवृक्ष दीनता को दूर करता है, किन्तु साधु का समागम पाप सन्ताप और दीनता तीनों को दूर करता है।

6 **काले कलौ चले चित्ते, देहे चान्नादि कीटके।**
एतच्चित्रं यदद्यापि, जिनलिङ्गधराः नराः।
कलिकाल है, मन चञ्चल है, शरीर अन्नादि का कीड़ा है, पर यह आश्चर्य है कि आज भी जिन लिङ्ग के धारी मनुष्य इस धरा पर हैं।

7 श्रद्धा है तो गुरु में भी भगवान् के दर्शन कर लेता है, जैसे एकनलव्य ने मिट्टी के गुरु के सामने

लक्ष्य प्राप्त कर लिया। नहीं तो रावण के सामने राम, कंस के सामने कृष्ण खड़े थे, पर उन्हीं के निमित्त से दुर्गति प्राप्त कर ली थी।

8 धर्म में प्रेरणा और अधर्म के निवारण द्वारा इष्ट प्रयोजन को साधता हुआ तथा अनिष्ट प्रयोजन को बाधता हुआ साधुओं का समूह जीवों का जैसा उत्कृष्ट उपकार करता है वैसा तीर्थ, ज्ञान और देव भी नहीं कर सकते हैं।

9 दिगम्बरत्व कोई वेश नहीं है, इसमें सब कुछ छोड़ना होता है, भीतर से भी और बाहर से भी, प्रकृति प्रदत्त वीतराग रूप है। अन्य धर्मों के लोग ओढ़ते हैं, जिन धर्म के लोग छोड़ते हैं।

10 किसी साधु में दर्शन-ज्ञान-चारित्र तीनों ही प्रधानता से रहते हैं। किसी में दो प्रधानता से रहते हैं और किसी में सम्यग्दर्शन के लिए प्रधानता से उद्यम होता है। प्रायः कोई साधु गुणरहित नहीं होता है अतः सभी निर्ग्रन्थ मुद्रा के धारक मुनि सत्पुरुषों के लिए स्तुति करने के योग्य हैं।

11 चित्र में अङ्कित अचेतन साधु भी विद्वानों द्वारा वन्दनीय होता है, फिर जिनशासन को धारण करने वाले चेतन साधु की तो बात ही क्या है?

12 साधु सङ्गति होने पर खोटे कार्यों में प्रवृत्ति नहीं होती। खोटी स्त्री, पुत्र तथा स्वामी आदि के दुर्वचन सुनने का दुःख नहीं होता। राजादिक को प्रणाम नहीं करना पड़ता, भोजन, वस्त्र, धन तथा स्थान की चिन्ता नहीं होती। ज्ञान की प्राप्ति होती है, लोक में प्रतिष्ठा बढ़ती है, शान्ति और सुख में प्रीति होती है। मृत्यु के बाद मोक्ष आदि की प्राप्ति होती है, इस प्रकार श्रामण्य पद के ये गुण हैं अतः हे बुद्धिमान् पुरुषों ! उस श्रामण्य पद को प्राप्त करने का प्रयत्न करो।

13 **सबसे बड़ा कौन-प्रश्न खड़ा मौन-** दो मित्रों में विवाद हुआ कि सबसे बड़ा कौन ? पहले ने कहा पृथ्वी। दूसरे ने कहा पृथ्वी बड़ी तो शेषनाग पर क्यों पड़ी ? तो पुनः कहा शेषनाग बड़ा। तो पुनः पूँछा शेषनाग बड़ा तो महादेव जी के गले में क्यों पड़ा ? तो उसने कहा महादेव जी बड़े। फिर कहा महादेव जी बड़े तो हिमालय पर क्यों पड़े ? तो पुनः कहा हिमालय बड़ा।उसने कहा हिमालय बड़ा तो हनुमान जी की हथेली पर क्यों पड़ा ? पुनः बोला तो हनुमान जी बड़े। पुनः पूँछा हनुमान जी बड़े तो रामचन्द्र जी के चरणों में क्यों पड़े ? तब वह बोला रामचन्द्र जी बड़े। तो पुनः पूँछा रामचन्द्र जी बड़े तो गुरु जी के चरणों में क्यों पड़े ? अतः संसार में सबसे बड़े गुरु होते हैं।

14 **स्मरण गुरु-** जैसे कछवी स्मरण करके अण्डे पकाती है वैसे ही तीर्थङ्कर सिद्धों का स्मरण करके दीक्षित होते हैं।

15 **दृष्टि गुरु-** जैसे मछली अण्डा देखकर पकाती है वैसे ही गणधर मानस्तम्भ या तीर्थङ्कर को देखकर दीक्षित होते हैं।

16 **शब्द गुरु-** जैसे कुररी जमीन में अण्डा देती है और आकाश में शब्द करके पकाती है वैसे ही शेर ने ऋद्धिधारी मुनिराजों के उपदेश से सम्यक्त्व प्राप्त किया था।

17 **स्पर्श गुरु-** जैसे मुर्गी स्पर्श करके अण्डा पकाती है वैसे ही गुरु सिर पर हाथ रख कर अठ्ठाईस मूलगुणों का आरोपण करते हैं।

18 **गुरुं हुङ्कृत्य तुङ्कृत्य, विप्रं निर्जित्य वादतः।**
श्मशाने जायते वृक्षः, कङ्कगृद्धादि सेवितः।।
गुरु से हूँ-हूँ तू-तू करके बात करना और विद्वान या साधु को विवाद करके नीचा दिखने वाला श्मशान में वृक्ष होता है, जिस पर कौए और गिद्ध बैठते हैं।

19 **गुरूर्ब्रह्मा गुरूर्विष्णुः गुरूर्देवो महेश्वरः।**
गुरूर्साक्षात् परमब्रह्म, तस्मै श्री गुरुवे नमः।।
गुरू ब्रह्मा-विष्णु-महेश तथा साक्षात् परम ब्रह्म हैं इसलिए गुरुजी के लिए नमस्कार है।

20 **उच्चैर्गोत्रं प्रणते, र्भोगो दानादुपासनात्पूजा।**
भक्तेः सुन्दररूपं, स्तवनात्कीर्तिस् तपोनिधीषु।।
तपस्वियों को प्रणाम करने से उच्च गोत्र अर्थात् इक्ष्वाकु आदि वंश में उत्पत्ति होती है, दान देने से भोगों की अर्थात् चक्रवर्ती आदि पद की प्राप्ति होती है, सेवा करने से पूजा की अर्थात् तीर्थङ्कर आदि पद की प्राप्ति होती है, भक्ति करने से सुन्दर रूप अर्थात् कामदेव आदि पद की प्राप्ति होती है और स्तवन करने से कीर्ति की अर्थात् शलाका पुरुषों आदि में उत्पत्ति होती है।

21 **निष्ठिवनमवष्टम्भ जृम्भणं गात्र भञ्जनं।**
असत्यभाषणं नर्म, हास्य पाद प्रसारणं।
अभ्याख्यान करस्फोट, करेणकरतारणं।
विकारमङ्गसंस्कार, वर्जयेद्यति सन्निधौ।।
गुरु के सानिध्य में थूकना, टिक के बैठना, जम्हाई लेना, अङ्गड़ाई लेना, झूठ बोलना, असभ्य हँसना, पैर फैलाना, उपदेशक बनना, ताल ठोकना, ताली बजाना, कटाक्ष करना, अङ्ग संस्कार आदि नहीं करना चाहिये।

22 **एकमेवाक्षरं यस्तु, गुरुः शिष्यं प्रबोधयेत्।**
पृथिव्यां नास्ति तद् द्रव्यं, यद् दत्वा ह्यनृणी भवेत्।।

एकाक्षरप्रदातारं, यो गुरुनाभिमन्यते।
श्वान योनिं शतं लब्ध्वा, चाण्डालेष्वभिजायते।।

एक अक्षर भी यदि गुरु शिष्य को देता है, तो पृथ्वी पर ऐसा कोई द्रव्य नहीं है, जिसे देकर गुरु के ऋण को चुकाया जा सके, एक अक्षर भी देने वाले को जो गुरु नहीं मानता वह कुत्ते की सौ योनी प्राप्त करके चाण्डालों में उत्पन्न होता है।

23 **धैर्यं यस्य पिता क्षमा च जननी, शान्तिश्चिरं गेहिनी,**
सत्यं सूनुरयं दया च भगिनी, भ्राता मनः संयमः।
शय्या भूमि तलं दिशोऽपि वसनं, ज्ञानामृतं भोजनं,
एते यस्य कुटुम्बिनो वद सखे !, कस्माद्भयं योगिनः।।

जिसका पिता धैर्य है, माता क्षमा है, स्त्री शान्ति है, पुत्र सत्य है, बहिन दया है, भाई मानसिक संयम है, शैय्या भूमितल है, वस्त्र दिशाएँ है और भोजन ज्ञानामृत है ये जिसके कुटुम्बी हैं, बोलो मित्र उस योगी को किससे भय होगा ?

24 **गुरून् प्रतिभुवः कृत्वा, भङ्क्त्येकम्धृतं व्रतं।**
सहस्त्रकूट जैनेन्द्र, सद्य भङ्गाघ भागलं।।

गुरुओं से व्रत लेकर जो तोड़ता है उसे सहस्त्रकूट जिनालय तोड़ने का पाप लगता है।

25 जो स्नान, उपभोग, पूजा, अलङ्कार से रहित हैं, मधु-मांस का त्यागी है, वह गुणवान अतिथि कहलाता है।

26 मयूर ने गुरू के विना नाचना सीख लिया, पर गुप्ताङ्ग दिखाई देता है जिससे लोक में हँसी का पात्र होता है अतः ज्ञानी वैरागी गुरुओं से ही ज्ञान लेना चाहिए।

27 शम्बूक ने विना गुरू के विद्या सिद्ध करके खड्ग सिद्ध कर लिया, पर उसका फल भोग नहीं सका एवं उसी खड्ग से मारा गया, इसलिए अनुभवी गुरु से ही विद्या प्राप्त करना चाहिए।

28 **जो करते हैं गुरू भक्ति पागलों की तरह।**
उन पर गुरूओं की कृपा बरसती है बादलों की तरह।।

29 **जो पुस्तक पढ़ि सीख है, गुरू को पूँछे नाही।**
सो शोभा नाही लहे, ज्यों वक हँसा माँहि।।

30 **गुरू को पूँछी चालता, सहज थान मिल जाय।**
क्लेश मिटे, आनन्द बढ़ै, लागे सुगम उपाय।।

31 **गुरू समान संसार में, माता पिता सुत नाहि।**
गुरू तो तारे सर्वथा, ये डोबे भव माँहि।।

32 **जहाँ तहाँ मिल जात है, सम्पति तिय सुत भ्रात।**
बड़े भाग ते अति कठिन, सुगुरू कहीं मिल पात।।

33 **पर से यदि होता कभी राई सा उपकार।**
वह कृतज्ञ नर को दिखे ताड़ तुल्य हर बार।।

34 सद्गुरु एक-एक तन्तु को ताना-बाना बुनकर वस्त्र बना देने वाले जुलाहे की तरह हैं, गुरु अनावश्यक अवगुणों को निकाल कर मूर्ति बनाने वाले शिल्पकार की तरह हैं, गुरु माटी को योग्य आकार देने वाले कुम्भकार की तरह हैं।

मुनि निन्दा

35 एक व्यक्ति साधुओं की बहुत निन्दा करता था, तो एक सेठजी ने कहा कि मैं अष्टान्हिक में मुनि को आहार देकर ही आहार करता हूँ, आप आठ दिन के लिए मुनि बन जाएँ, आपको बहुमूल्य वस्तु का इनाम एवं बढ़िया आहार करायेंगे, वह व्यक्ति लोभ वश तैयार हो गया, पर केश लोंच करने में दाँतों पसीना आ गया एवं उस दिन उपवास करना पड़ा तो दिन में तारे दिख गये, पारणा के दिन हलुआ पूड़ी भर पेट खा लिया, पानी की कमी पड़ गयी, तो नानी याद आ गयी, दूसरे दिन सेठजी से हाथ जोड़ कर बोले ! ये तपस्या हमारे वश की नहीं है और उस दिन से उन्होंने मुनि निन्दा करना छोड़ दिया।

दीक्षा मास-हानि-लाभ

36 **चैत्र मास-** ना हो दीक्षा प्रयास-चैत्र में दीक्षा स्वीकार करना बहुत दुःख रूप फल को देने वाला है, वैशाख में रत्नलाभ, ज्येष्ठ में मरण, आषाढ़ में बन्धुनाश, श्रावण में शुभदायक, भाद्रपद में प्रजाहानि, आश्विन में सर्वत्र सुख, कार्तिक में धनवृद्धि, मार्गशीर्ष में शुभदायक, पौष में ज्ञानहानि, माघ में बुद्धि की वृद्धि और फाल्गुन में सर्वत्र सुख-सौभाग्य की प्राप्ति होती है। इस प्रकार मासों में दीक्षा लेने का शुभ-अशुभ फल कहा है।

शिष्य लक्षण

37 जो खेल व कौतूहल से रहित हो, लज्जावान हो, अधिक और अतिमधुर आहार करने वाला न हो, दयालु हो, छलरहित हो, ब्रह्मचारी हो, विनय एवं नीति से सहित हो, ज्ञान का उपयोग करने वाला हो, प्रमाद रहित हो, समीचीन उच्चारण करने वाला हो, कृतज्ञ हो, अनेक बार गुरु की

आज्ञा का पालन करने वाला हो, शान्त हो, एकाग्रचित्त हो, मधु के समान मधुरभाषी हो तथा अभिमानी न हो वह उत्तम शिष्य माना गया है।

38 **विवेकी शिष्य को** जोर-जोर से पढ़ना, गाते हुए पढ़ना, हास-परिहास, स्त्रियों के निवासस्थल में रहना, उनके शरीर को देखना, साथ-साथ वार्तालाप करना, उनके शरीर का स्पर्श करना, उनके पुत्रों को निरन्तर खिलाना, उनके आगे पति की अत्यधिक प्रशंसा करना, ज्योतिष, मन्त्र, निमित्त ज्ञान, औषध, सञ्चित धन और शरीर का पोषण करना इत्यादिक छोड़ देना चाहिए।

39 एकलव्य की अनूठी गुरु भक्ति, मिट्टी के गुरु में आस्था रखी तो भी पक्का धनुर्धारी बना था।

40 एकलव्य से अङ्गूठा माँगा, यदि गर्दन भी माँगते तो वह दे देता, ऐसा समर्पण ही फल प्रदान करता है।

41 दिगम्बर साधु लोभ का नाश करने के लिए सन्तोष को, सुख-शान्ति के लिए धैर्य को और उत्तम तप की वृद्धि के लिए ज्ञान को धारण करते हैं।

42 **माँ, महात्मा, एवं परमात्मा** इन तीन का आशीर्वाद जरूरी है, बचपन में माँ सम्भालती, जवानी में महात्मा, बुढ़ापे में परमात्मा।

43 गृहस्थ के द्वारा मरण पर्यन्त जो पाप सञ्चित किया जाता है, उस सब पाप को एक रात्रि का दीक्षित साधु नियम से भस्म कर देता है।

44 एकान्त में रहने वाला साधु असभ्य जनों के सहवास और दर्शन से होने वाले मोह, राग-द्वेष से पीड़ित नहीं होता है।

45 यह महातप रूपी तालाब गुण रूपी जल से भरा है, इसकी मर्यादा रूपी तटबन्धी में थोड़ी सी भी क्षति की उपेक्षा नहीं करना चाहिए, थोड़ी सी उपेक्षा करने से जैसे तालाब का पानी बाहर निकलकर बाढ़ ला देता है, वैसे ही उपेक्षा करने से महातप में भी दोषों की बाढ़ आने का भय रहता है।

46 विशुद्ध परिणाम वाले क्षपक की आलोचना आदि प्रशस्त क्षेत्र में दिन के पूर्व या उत्तरभाग में शुभतिथि शुभ नक्षत्र और शुभ समय में होती है।

47 आलोचना एवं प्रायश्चित्त किये विना महान तप भी संवर के साथ होने वाली निर्जरा को नहीं करता है, प्रायश्चित्त कर लेने पर निर्मल दर्पण में मुख की तरह तप निर्मल होता है।

48 जिन देशों में धर्म का उद्योत करने वाले दीपक तुल्य साधु नहीं होते, वहाँ धर्म का नाम भी नहीं होता, क्रिया कहाँ से होगी ?

49 शव और शिव- शव की यात्रा दूसरों के आश्रित होती है और शिव की यात्रा स्वयं के आश्रित होती है।

50 जैसे बकरे को सुगन्धित तेल पिलाने पर भी वह दुर्गन्ध रहित नहीं होता है, वैसे ही भ्रष्ट साधु संयमी होने पर भी विषय कषाय का त्याग नहीं करता, जैसे पशु को उत्तम भोजन मिलने पर भी वह घास ही खाता है, उसी प्रकार दीर्घ काल तक दीक्षित होकर भी भ्रष्ट साधु इन्द्रिय विषय और कषाय के परिणाम ही करता है।

51 दिगम्बर मुनि होने के लिये केवल तन के वसन नहीं उतारना पड़ते, बल्कि मन की वासनाओं को भी उतारना पड़ता है।

52 व्रत ग्रहण करने वाला मुनि गुरु की बायीं ओर बैठता है तब गुरु व्रत धारण कराते हैं।

53 आर्यिका सङ्गति त्याग- हे साधो ! अग्नि और विष के सदृश आर्यिका सङ्गति का त्याग करो।

दोहावली

54 **मिथ्यादर्शन ज्ञान की, पीड़ा सही न जात। गुरु का दर्शन जब मिले, दुःख सारा मिट जात।।**

55 **भव जल में डूबे हुए कर्म मगर दे त्रास। गुरु नौका पर बैठ कर होवे भव से पार।।**

56 **गुरु की महिमा वरणी न जाय। गुरु नाम जपूँ मन वचन काय।।**

57 **गुरु कुम्हार घट शिष्य है गढ़-गढ़ काढ़े खोट। अन्दर हाथ पसार के बाहर मारे चोट।।**

58 **गुरु गोविन्द दोउ खड़े काके लागु पाय। बलिहारी गुरु आपकी गोविन्द दियो बताय।।**

59 **जात न पूँछो साधु की पूँछ लीजिये ज्ञान। मोल करो तलवार का पड़ी रहन दो म्यान।।**

60 **चमन में फूल खिलते है, गले का हार बनने को। गुरु उपदेश दे दो तुम, भव से पार होने को।।**

61 **गुरु से शिष्य की कौन सी बात अनजानी है। सागर को पता है बूँद में कितना पानी है।।**

62 **हम निन्दक के प्रतिकूल नहीं, हम पूजक के अनुकूल नहीं।**
हम अपनाते हैं फूल नहीं, और ठुकराते हैं शूल नहीं।।

63 **भीतर लगन लगती है, तो सन्त में अरहन्त दिखते हैं।**
अन्यथा मारीच को आदिनाथ अच्छे नहीं लगते हैं।।

64 शिष्य और शीशी को डाट जरुरी है, अन्यथा कीमती वस्तु नहीं ठहर सकती है।

65 साधु शरीर छोड़ सकते हैं पर सिद्धान्त नहीं, हाड़ मांस के पिण्ड को गुरु नहीं कहते हैं, ज्ञान को गुरु कहते हैं।

66 सन्तों की सेवा, पात्र को दान और सन्तान ये स्वयं करना पड़ते हैं नौकर से काम नहीं चलता है।

67 गुरू जीवन को साक्षर नहीं सार्थक बनाते हैं। जैसे पिता टीचर से बच्चे का परिचय कराता है उसी प्रकार गुरू परमात्मा से परिचय कराते हैं।

68 सन्त और सैनिक को कभी सोने मत देना, सन्त सो गये तो उन्नति रुक जायेगी, सैनिक सो गये तो सुरक्षा कठिन हो जायेगी।

69 **तब लों तुम ध्यान हिये बरतों, तब लों श्रुत चिन्तन चित्त रतों,**
तब लों व्रत चारित चाहतु हों, तब लों शुभ भाव सु गाहत हों,
तब लों सत्सङ्गति नित्य रहों, तब लों मम सज्जम चित्त गहों।
जब लों नहिं नाश करों अरि को, शिव नारि वरों समता धरि को।।

70 **अरि-मित्र महल-मसान कञ्चन-काँच निन्दन-थुतिकरण।**
अर्घावतारन असि प्रहारन में सदा समता धरन।।

71. **जो करते हैं गुरु भक्ति पागलो की तरह।**
उन पर गुरु की रहमत बरसती है बादलों की तरह॥

★★★

वीर शासन जयंति

''एकम् कृष्णा सावन-वीर प्रभु का शासन''

1 वैशाख शुक्ला दशमी के दिन वीर जिन को केवलज्ञान हुआ था, गणधर के अभाव में देशना नहीं खिर रही थी, तब इन्द्र का आसन कम्पित हुआ, गणधर बनने योग्य व्यक्ति को इन्द्र ने अपने अवधि नेत्र से देखा, तब इन्द्रभूति गौतम के पास जाकर प्रश्न किया-

''त्रैकाल्यं द्रव्य-षट्कं, नवपदसहितं, जीव-षट्काय लेश्याः,
पञ्चान्ये चास्तिकाया, व्रतसमितिगति, ज्ञानचारित्रभेदाः।
इत्येतन्मोक्षमूलं, त्रिभुवन महितैः, प्रोक्तमर्हद्भिरीशैः,
प्रत्येति श्रद्धधाति, स्पृशति च मतिमान्, यः स वै शुद्धदृष्टिः।।''

तीन काल, छह द्रव्य, नौ पदार्थ, छह जीवनिकाय, छह लेश्या, पाँच अस्तिकाय, पाँच व्रत, पाँच समिति, चार गति, पाँच ज्ञान, पाँच चारित्र, ये जिनेन्द्र भगवान के द्वारा कहे गए हैं, इनका जो श्रद्धान करता है वह सम्यग्दृष्टि होता है।

इन्द्रभूति गौतम इनका उत्तर नहीं दे सके, अहङ्कार वश महावीर भगवान् के समवसरण में आये और मानस्तम्भ को देखकर सम्यक्त्व हो गया था।

2 अहिंसा के 'अ' को हटाकर, सत्य के आगे जोड़ दिया, अचौर्य के अ' को ब्रम्हचर्य में जोड़ दिया, अपरिगृह के अ' का लोप कर दिया और संसारी प्राणी पाँचों पापों में लग गये हैं।

3 **भील से भगवान् और मारीच से महावीर-** जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह में पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के मधु नामक वन में 'पुरूरवा' नामक भीलों का राजा हुआ, उसकी कलिका नाम की स्त्री थी।

उसी वन में सागरसेन मुनि ध्यान मग्न थे। भील ने उनको मारना चाहा। स्त्री ने रोका, भील ने प्रभावित होकर मुनि से मद्यादि का त्याग किया।

भील मरकर सौधर्म स्वर्ग में उत्पन्न हुआ, स्वर्ग से अयोध्या में भरत चक्रवर्ती की रानी अनन्तमति से ज्येष्ठ पुत्र मारीच हुआ।

भगवान् आदिनाथ के साथ दीक्षित हुआ, फिर भ्रष्ट होकर परिव्राजक बनकर स्वर्ग गया, वहाँ से आकर करीब पाँच भव तक परिव्राजक होता रहा और स्वर्ग जाता रहा।

उसके बाद असंख्यात भव तक त्रस-स्थावरों में भटककर ब्राह्मण हुआ, फिर परिव्राजक होकर पाँचवे स्वर्ग गया।

सुरम्या देश के पौदनपुर में त्रिपृष्ठनारायण हुआ, वहाँ से मरकर सात वे नरक गया, वहाँ से सिंह बनकर प्रथम नरक गया, वहाँ से निकल कर फिर सिंह हुआ।

अजितञ्जय, अरिञ्जय नामक रिद्धिधारी मुनियों के उपदेश से सम्यक्त्व प्राप्त किया, 'दस' भव बाद में तीर्थङ्कर होंगे 'ऐसा श्रीधर तीर्थङ्कर से मैंने सुना है'।

मुनिराज ने शेर से कहा, शेर ने श्रावक के व्रत लिये और सन्यास पूर्वक मरणकर, पहले स्वर्ग में सिंहकेतु नामक देव हुआ, चौथे भव में धातकी खण्ड की पुण्डरीकिणी नगरी में राजा सुमित्र और मनोरमा रानी के प्रियमित्र नाम का चक्रवर्ती हुआ।

दो हजार राजाओं के साथ दीक्षित हो बारहवे स्वर्ग गया, छत्रपुर में नन्दिवर्धन राजा के नन्द नामक पुत्र हुआ।

सोलह कारण भावना भाकर तीर्थङ्कर प्रकृति का बन्ध किया, फिर सोलहवें स्वर्ग गया, भरत क्षेत्र में विदेह देश के कुण्डलपुर में राजा सिद्धार्थ की प्रियकारिणी(त्रिशला) रानी ने सोलह स्वप्न देखे।

फल पूँछा, गर्भकल्याणक, रत्नवृष्टि, नगरी रचना, आश्विन शुक्ल षष्ठी को, छप्पन कुमारी देवियों ने आकर सेवा की।

कल्पवासी के यहाँ घण्टा, ज्योतिष देव के सिंहनाद, भवनवासी देव के यहाँ शङ्खनाद, व्यन्तरों के यहाँ अनहद बाजे बजने लगे।

जन्म कल्याणक के समय सौधर्मेन्द्र एक लाख योजन के ऐरावत हाथी पर आरूढ़ होकर आता है, सौ मुख, एक-एक मुख में आठ-आठ दाँत, एक-एक दाँत पर एक-एक सरोवर, उसमें एक सौ आठ-एक सौ आठ कमल, एक-एक कमल में एक हजार आठ-एक हजार आठ पाँखुड़ी, एक-एक पाँखुड़ी पर एक-एक अप्सरा नृत्य करते हुए आती है।

इन्द्र हजार हाथ, हजार पैर बनाकर ताण्डव नृत्य करता है एवं सुमेरूपर्वत पर आठ योजन गहरे, चार योजन चौड़े, एक योजन मुख वाले एक हजार आठ कलशों द्वारा क्षीरसागर के जल से अभिषेक करता है, बालक्रीडा के लिए देवों को नियुक्त करता है।

इन्द्र ने जन्म के समय वीर और वर्धमान नाम रखे,सञ्जय-विजय मुनि का सन्देह दूर हुआ तो सन्मति नाम रखा,सङ्गम देव ने सर्प बनकर परीक्षा ली निर्भय रहे तो महावीर नाम रखा।

भोजन-वस्त्र, वाहन सभी स्वर्ग से आते थे, तीर्थङ्कर सत्ताईस लड़ी का हार पहनते हैं, जो चक्रवर्ती की सारी सम्पदा से भी अधिक कीमती होता है।

आठ वर्ष में अप्रत्याख्यानावरण कषाय का क्षयोपशम हो जाता है जिससे वे देशव्रती हो जाते हैं, माँ ने आग्रह किया पुत्रवधु को देखना है, वीर ने कहा मुक्ति वधु का वरण करना है।

मित्रों से पिता ने कहा वर्धमान नीचे है, माँ ने कहा ऊपर हैं, तब वीर ने बच्चों को अनेकान्त से समझाया कि बीच में होने से पिता की अपेक्षा नीचे माँ की अपेक्षा ऊपर है। तीस वर्ष में वैराग्य हो गया, लौकान्तिक देवों ने आकर वैराग्य की अनुमोदना की।

चन्द्रप्रभ पालकी पर आरूढ़ हो षण्डवन में चले गये, एक बार उज्जयिनी के श्मशान में प्रतिमा योग धारण किया, तब महादेव रूद्र के द्वारा घोर उपसर्ग होने पर भी अचल रहे, तब अतिवीर नाम रखा गया था।

राजा चेटक की बेटी 'चन्दना' (महावीर की छोटी मौसी) के यहाँ आहार हुआ, पञ्चाश्चर्य हुए, बारह वर्ष घोर तप कर अन्त में जृम्भिका ग्राम में ऋजुकूला नदी के तट पर वैशाख शुक्ला दशमी को केवलज्ञान हुआ।

छियासठ दिन तक गणधर के अभाव में देशना नहीं हुयी, भगवान् महावीर को केवलज्ञान होने के पैंसठ दिन बाद, आज गौतम गणधर ने वीर प्रभु का शिष्यत्व स्वीकार किया था, इसलिए वीर शासन जयन्ती पर्व महावीर प्रभु की देशना से प्रारम्भ हुआ।

समवसरण में ग्यारह गणधर, चौदह हजार मुनि, छत्तीस हजार आर्यिका, एक लाख श्रावक, तीन लाख श्राविकायें थीं ।महावीर का शुभ सन्देश जियो और जीने दो था।

★★★

15 अगस्त

''पन्द्रह अगस्त-तुम मस्ती में मस्त''

1 भारत को ब्रिटिश शासन से सन् 1947 में मुक्ति प्राप्त हुयी थी, भारत की स्वतन्त्रता के अङ्कुर 1857 में प्रकट हुये थे, नब्बे वर्ष तक स्वतन्त्रता के अङ्कुर की रक्षा नहीं हो सकी, इस पौधे को अपने रक्त से सींचकर बड़ा करने वाले बलिदानियों की लम्बी पङ्क्ति हैं, जैसे महारानी लक्ष्मीबाई, तात्याटोपे, टीपूसुल्तान, बालगङ्गाधर तिलक, लाला लाजपतराय, महात्मागाँधी, मोतीलाल नेहरू, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद, सुखदेव आदि अनेक क्रान्तिकारी नवयुवकों ने इस पौधे की रक्षा के लिए अपना बलिदान दिया है।

2 जो शहीद हुये हैं उनकी जरा याद करो कुर्बानी।

3 आज का दिन बड़ी कठिनाई से देखने को मिला था, दुर्भाग्य यह रहा कि हमारी खुशी आधी रह गयी, भारत को खण्डित स्वतन्त्रता प्राप्त हुयी थी, भारत के एक भू भाग को काटकर, पकिस्तान का निर्माण कर दिया गया था।

4 मुख, आँख, कान बन्द किये गाँधी जी के तीन बन्दर हमें शिक्षा देते हैं, बुरा मत बोलो, बुरा मत देखो, बुरा मत सुनो और बुरा मत सोचो।

5 नदी पर बुढ़िया आधी धोती पहनकर धो रही थी, उसकी गरीबी देखकर गाँधी जी ने खादी और घुटने तक धोती पहनने का नियम लिया था।

6 विदेश जाने पर माँ के द्वारा दिये मांस, मदिरा, अण्डे को सेवन न करने के नियमों का पालन किया था।

7 **क्षमा-** एक अंग्रेज ने गाँधी जी के गाल पर चाँटा मारा तो गाँधीजी ने अपना दूसरा गाल आगे कर दिया, तो इसे देखकर वह पानी पानी हो गया था।

8 पिता- 1947 से आज तक पन्द्रह राष्ट्रपति बन गये हैं किन्तु राष्ट्रपिता एक ही हुआ है, राष्ट्रपति चुनाव से बनता है राष्ट्रपिता नहीं।

9 जलिया वाला बाग अमृतसर सभा में स्थित दो हजार लोगों को अंग्रेजों ने मौत के घाट उतार दिया था। दो हजार लाशों की रुधिर नदी के बीच, एक नारी अपने पति की दिया जलाये पूरी

रात रखवाली करती रही थी।

10 सुखी रहें सब जीव जगत् के, कोई कभी न घाबरावे। नहीं सताऊँ किसी जीव को झूठ कभी नहीं कहा करूँ।

11 ''माता'' का सम्बोधन भारत के साथ है पर अन्य देशों के साथ नहीं।

12 राष्ट्र पिता की बेटी 'आजादी' है, उसकी रक्षा के लिये पति का चुनाव होता है।

13 'जियो और जीने दो' के स्थान पर 'पियो और पीने दो' चलने लगा है।

14 हम दो हमारे दो के स्थान पर, देश और समाज होना चाहिये, अतः धर्म की रक्षा के लिये इन दो की जरूरत है।

15 **सत्य अहिंसा प्रेम का बस हमसे इतना नाता है,**
दीवालों पर लिख देते हैं, दीवाली में पुत जाता है।

16 बाह्य स्वतन्त्रता तो मिल गई पर, आन्तरिक स्वतन्त्रता तो इन्द्रियों के जीतने पर ही मिलेगी।

17 **आज हमें मानव मात्र का दुःख दर्द मिटाना है,**
क्योंकि हमें सत्य और अहिंसा का बिगुल बजाना है।

18 महात्मा गाँधी जी नेता कम, साधक ज्यादा थे।

19 **दिल के फोले जल उठे, सीने के एक दाग से।**
घर में ही आग लग गयी, घर के ही चिराग से।।

20 **ढोल की पोल-नरतन बड़ा अनमोल-**
सब कुछ डांवा डोल मिलेगा, आने वाली पीढ़ी को,
ढोल के भीतर पोल मिलेगा, आने वाली पीढ़ी को।
दाने गिनकर दाल मिलेगी, गेहूँ की बस छाल मिलेगी,
पानी के इञ्जेक्शन होंगे, घोषित रोज इलेक्शन होंगे।
हलवाई हैरान मिलेंगे, विन चीनी मिष्ठान्न मिलेंगे,
जलने वाला खेल मिलेगा, बस मिट्टी का तैल मिलेगा।
शीशी में पेट्रोल मिलेगा, आने वाली पीढ़ी को, ढोल के भीतर पोल..।।
रोते हुए बाजार मिलेंगे, हँसते हुए सियार मिलेंगे,
धन्धे केवल काले होंगे, जमकर के घोटाले होंगे।
ऊसर होंगे, बञ्जर होंगे, सूखे हुए समन्दर होंगे,

पेड़ न होंगे, हवा न होगी, अस्पताल में दवा न होगी।
कटा-फटा भूगोल मिलेगा, आने वाली पीढ़ी को, ढोल के अन्दर पोल.....।।
भारी-भारी बस्ते होंगे, आँसू सबसे सस्ते होंगे,
बच्चे बौने हो जायेगें, स्वयं खिलौने हो जायेगें।
पढ़े-लिखे बेकार मिलेंगे, हाथों में हथियार मिलेंगे,
पुण्य न होगा, पाप ही होगा, राम-नाम का जाप न होगा।
मारकाट का बोल मिलेगा, आने वाली पीढ़ी को, ढोल के भीतर पोल.....।।
सारे कवि स्वच्छन्द मिलेंगे, विना भाव के छन्द मिलेंगे,
गीत न होंगे, गले न होंगे, आँख किसी की सजल न होगी।
मञ्चों पर लफ्फाजी होगी, सिर्फ चुटकुले बाजी होगी,
जो सस्तें में बिक जायेंगे, उतने ज्यादा टिक जायेंगे।
मात्र यही किल्लोल मिलेगा, आने वाली पीढ़ी को, ढ़ोल के भीतर पोल.....।।
राजनीति में तन्त्र मिलेगा, इक गहरा षडयन्त्र मिलेगा,
न सुभाष न गाँधी होगें, खादी में अपराधी होंगे।
जनता गूँगी-बहरी होगी बेबस कोट-कचेरी होगी,
गुण्डों को संरक्षण होगा, संसद में आरक्षण होगा।
हर क्षेत्र में राजनीति का रोल मिलेगा, आने वाली पीढ़ी को, ढ़ोल के भीतर पोल.....।।
प्यासों की भी रैली होगी, गङ्गा बिल्कुल मैली होगी,
घरों-घरों में फैक्स लगेगा, सांसों पर भी टैक्स लगेगा।
कम्प्यूटर की माया होगी, बेकारी की छाया होगी,
चादर नीचे पड़ी मिलेगी, खटिया सबकी खड़ी मिलेगी।
सबका बिस्तर गोल मिलेगा, आने वाली पीढ़ी को, ढ़ोल के भीतर पोल.....।।
बाहर से डॉलर आयेंगे, उनको वही देख पायेंगे,
जो अंग्रेजों के प्यारे होंगे, भारत के हत्यारे होंगे।
आज हँस रहे कल रोओगे, पता नहीं कितना खोओगे,
आजादी की लाश मिलेगी, जनता बहुत उदास मिलेगी।
मातम का माहौल मिलेगा, आने वाली पीढ़ी को, ढ़ोल के भीतर पोल.....।।

★★★

"दीक्षा दिवस-स्मरण करें अवश्य"

1 **एवं पणमिय सिद्धे, जिणवरवसहे पुणो पुणो समणे।**
पडिवज्जदु सामण्णं, जदि इच्छदि दुक्खपरिमोक्खं।।
सिद्धों को, अर्हन्तों को और मुनियों को बार-बार नमस्कार करके आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी कहते हैं कि यदि दुःखों से छुटकारा चाहते हो तो मुनिपने को अङ्गीकार करो।

2 मुनि दीक्षा होते ही संसार आधा हो जाता है, गुणस्थान सात हो जाते हैं, मोक्ष के लिये चौदह गुणस्थान पार करना होते हैं, मोहनीय की अट्ठाईस प्रकृति में से चौदह समाप्त हो जाती हैं।

3 **गुरुभत्ति संजमेण य, तरंति संसार सायरं घोरं,**
छिण्णंति अट्ठकम्मं, जम्मण मरणं ण पावेंति।
ये नित्यं व्रत मन्त्र होम निरता, ध्यानाग्नि होत्राकुलाः,
षट्कर्माभिरतास् तपोधनधनाः, साधु क्रियाः साधवः।।
गुरु की भक्ति से और संयम से घोर संसार सागर को तैर जाते हैं, आठों कर्मों का नाश करके ज़रा-मरण रहित हो जाते हैं, जो नित्य ही व्रत मन्त्र एवं ध्यान रूपी अग्नि में कर्मों का हवन करते हैं, षट् कर्मों में रत रहते हैं और तप ही जिनका धन है, वे सम्यक् क्रिया वाले साधु होते हैं।

4 स्वदोषमूलं स्वसमाधि तेजसा। निनाय यो निर्दय भस्मसात् क्रियां।।
हे भगवन् ! आपने अपने दोषों को ध्यान के तेज से भस्म कर दिया था।

5 **दिवि दिवाकरो हन्ति, रात्रौ जैवातृकस्तमः।**
हार्दतम रसाढ्यं तु, गुरुरेव न चापरः।।
दिन में सूर्य, रात में चन्द्रमा अन्धकार को नष्ट करता है और हृदय के गाढ़ अन्धकार को गुरू ही दूर करते हैं।

6 संसार में गुरू कृपा सबसे निराली,
होली यही दशहरा यह ही दिवाली।
जो शिष्य है वह सदैव ऋणी रहेगा,
कोई कभी न उपकार चुका सकेगा।।

7 **प्रसूति गृह में किया संकल्प-** प्रसूति की पीढ़ा से स्त्री को भोगों से वैराग्य होता है उस काल में भोगों के त्याग का सोचती है पर बाद में भूल जाती है।

8 विद्याधर जी से पूँछा मन्दिर कितनी दूर है ? सत्ताईस बार णमोकार पढ़ने में जितना समय लगता

है अर्थात् बाल्यवस्था से ही णमोकार के संस्कार थे।

9 आचार्य ज्ञानसागर जी ने कजोड़ीमल जी से पूँछा विधाधर पढ़ता है या नहीं ? रात में देखा तो पूरी रात पढ़ते ही मिले।

10 आचार्यश्री से पूँछा विधवा विवाह होना चाहिए या नहीं, आचार्यश्री ने कहा मैं तो सभी विवाहों का विरोधी हूँ।

11 आचार्यश्री का प्रथम दीक्षा दिवस मनाने के लिए आचार्य ज्ञानसागरजी से अनुमति ली, उन्होंने कहा विद्या से पूँछ लो, लोगों ने उनसे पूँछा कल आपका दीक्षा दिवस मनायेंगे, आशीर्वाद दे दो, आचार्यश्री ने कहा ! देख लो, दूसरे दिन तैयारी हो गयी, आचार्य श्री ध्यान में बैठ गए उठे ही नहीं, लोगों ने पूँछा महाराज आपने दीक्षा दिवस नहीं मनाया, आचार्य श्री ने कहा हमने तो ध्यान में बैठकर अच्छे से मनाया।

12 कोमलता- कुण्डलपुर में आचार्यश्री के पास आर्यिकायें आयीं, नमोऽस्तु करके बैठ गयीं, वहाँ हल्की सी धूप थी आचार्यश्री वहाँ से उठे, ताकि आर्यिकायें छाया में बैठ जायेंगी।

13 कठोरता- नेमावर में भारी वर्षा सामने दिख रही थी, फिर भी आर्यिकाओं का विहार करा दिया, शिष्यों की दृढ़ता की परीक्षा कठोरता पूर्वक ली।

14 इन्द्रियों के विषयों को त्याग कर पुनः कितना भी कष्ट आये, सहते रहने वाले को सहिष्णु कहते हैं।

15 गृहीत व्रतों का कभी त्याग नहीं करने वाला अच्युत कहलाता है।

16 पतङ्ग की डोर जब तक हाथ में है तब तक अस्तित्व है, छूटने पर कोई ठिकाना नहीं कहाँ जा कर गिरेगी, इसी प्रकार शिष्य की डोर जब तक गुरु के हाथ में है, तब तक ही उन्नति होती है।

17 आचार्य श्री पक्षी की तरह आवास वाले हैं, कोई मठ, महल, कोठी अपने लिए नहीं रखते हैं।

18 इन्द्रिय दमन और कषाय का शमन जहाँ होता है उसे दीक्षा कहते हैं।

19 आठ दर्शन, आठ ज्ञान, तेरह चारित्र, बारह तप मिलकर इकतालीस प्रकार की आराधना कहलाती है।

20 संसार शरीर भोगों से वैरागी साधु होता है इनमें जो राग करे वह स्वादु होता है।

21 आशीर्वाद के समय हाथ का पञ्जा कुछ झुका रहता है, अर्थात् 'मिल कर रहो और नम्र बनो' यह शिक्षा देता है।

22 आचार्य श्री की दीक्षा स्थली अजमेर में जिनालय बनाया गया है, जन्मस्थली सदलगा में भी

जिनालय बनाया गया है।

23 **दीक्षा पर्व मनाने-**

तप का दीपक श्रद्धा वाती ज्ञान का दीप जलाने,
भक्ति भाव घी डाल-डाल कर दीक्षा पर्व मनाने।
अशुभ भाव तज भक्ति करना गुरुवर की शुभ भावों से,
दीक्षा का सम्बन्ध जुड़ा है मात्र भीतरी भावों से।।

24 **दीक्षा एक लड़ाई है-**

दीक्षा एक लड़ाई है, जिसको लड़ने में ही भलाई है।
जो खुले मैदान में, बाहर नहीं वालों से, भीतर वालों से लड़ी जाती है।
गुरू चरणों में कर, आत्म समर्पण अदृश्य कर्म शत्रुओं से लड़ी जाती है। दीक्षा एक लड़ाई है...
दिगम्बरत्व को धार कर, अम्बर को त्याग कर। विषय सरिता पार कर,
कटीले रास्ते को पार कर लड़ी जाती है। दीक्षा एक लड़ाई है...
यह एक खुली किताब है, जिसमें अनन्त का हिसाब है।
जो मौन होकर, चर्म चक्षुओं को बन्द कर, ज्ञान चक्षुओं से लड़ी जाती है। दीक्षा एक लड़ाई है...

25 आदिनाथ भगवान के परिवार की तरह आचार्यश्री के परिवार ने भी दीक्षा ली, यह कम नहीं, परोपकार के कार्य करके आज भी सैकड़ों जैन बना कर आचार्यश्री द्वारा आहार किया जाता है।

★★★

"मोक्ष सप्तमी"

1 खास दास की आस बस, श्वाँस-श्वाँस पर वास ,
पार्श्व करो मत दास को, उदासता का दास।
न तो सुर सुख चाहता, शिव सुख की न चाह ,
तव थुति सरवर में, सदा होवे मम अवगाह।।

2 **त्वं तारको जिन ! कथं भविनां त एव, त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः।**
यद्वा दृतिस्तरति यज्जलमेष नून, मन्तर्गतस्य मरुतः स किलानुभावः।।
हे भगवन् ! आप भक्तों को कैसे तारते हैं ? वे ही आपको अपने हृदय में धारण करके पार उतर जाते हैं अथवा ठीक है मशक जो पानी में तैरती है, उसका कारण उसके अन्दर रहने वाली हवा है, उसी प्रकार संसार से पार होने में भगवान् आप ही कारण हैं।

3 **आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि, नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या।**
जातोऽस्मि तेन जनबान्धव ! दुखपात्रं, यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भाव शून्याः।।
हे जनबान्धव ! मैंने आपका नाम सुना, पूजा की दर्शन भी किये, किन्तु भक्ति पूर्वक हृदय में धारण नहीं किया, इसलिए दुःखों का पात्र हुआ हूँ, क्योंकि भाव शून्य क्रिया पूर्ण फलदायी नहीं होती है।

4 यह पर्व हमें उपसर्ग, परिषहों को सहन कर हर बाधा को उत्सव के रूप में समझकर निर्माण नहीं, निर्वाण की ओर बढ़ने की शिक्षा देता है।

5 यह बैर न बैर मिटाता है यह बैर निरन्तर प्राणी को भव सागर में भटकाता है.....।

6 भगवान् ने संसार के चार मार्ग पार कर पञ्चम गति को प्राप्त किया है।

7 **मोह मुक्ति का फार्मूला-** सच्चाई के पत्ते एक ग्राम, ईमानदारी की जड़ तीन ग्राम, परोपकार के बीज पाँच ग्राम, सङ्गठन के बहेड़े तीन ग्राम, करुणा का छिलका ग्यारह ग्राम, मिलाप के आँवले दस ग्राम, सत्सङ्ग का रस एक ग्राम, स्वदेश प्रेम का रस पाँच ग्राम इन सब को मिलाकर, परमात्मा की हाण्डी में डालकर, भक्ति के चूल्हे पर रखकर, प्रेम की अग्नि में पकायें, अच्छी तरह पक जाने पर नीचे उतार कर ठण्डा करें, फिर शुद्ध मन के कपड़े से छानकर, मस्तिष्क की शीशी में भर लें। सेवन विधि- इस औषधि को प्रति दिन सन्तोष के गुलकन्द के साथ, इन्साफ की चम्मच से सेवन करें, परहेज- क्रोध की मिर्च, अहङ्कार का तेल, लोभ की मिठाई, धोके के पापड़, दुराचार के मसाले से बचें।

8 महापुरूष की हर चेष्टा बिना बाजे के प्रभावना का कारण होती है।

पार्वनाथ मोक्ष कल्याणक

9 भगवान् पार्श्वनाथ जी वैशाख कृष्णा दूज के दिन प्राणत स्वर्ग से वाराणसी में राजा अश्वसेन-वामादेवी के गर्भ में आये, उग्रवंश में पौष कृष्णा ग्यारस को जन्म हुआ, इन्द्र ने अपने वैभव के साथ आकर पाण्डुक शिला पर अभिषेक किया, पौष कृष्णा ग्यारस पौर्वाण्ह बेला में दीक्षा ली, विमला पालकी से वन में पधारे, देवदारू वृक्ष के नीचे दो उपवास के साथ दीक्षा ली, साथ में तीन सौ राजा दीक्षित हुये, धन्यराजा के यहाँ क्षीरान्न का प्रथम आहार हुआ, धव वृक्ष के नीचे चैत्र कृष्णा त्रयोदशी को केवलज्ञान हुआ, सवा योजन का समवसरण, दस गणधर, प्रथम गणधर स्वयम्भू, प्रथम आर्यिका सुलोका, एक लाख श्रावक, तीन लाख श्राविकाएँ, मुख्य श्रोता महासेन, श्रावण शुक्ला सप्तमी को स्वर्णभद्र कूट सम्मेदशिखर जी से छत्तीस मुनिराजों के साथ एक माह तक योग निरोध कर खड्गासन से मोक्ष पधारे थे।

★★★

"दीपावली"

1 नीरस जीवन को सरस, सूने आँगन में रौनक, पतझड़ में बसन्त, निराश जीवन में उत्साह भरने वाले त्यौहार कहलाते हैं।

2 राष्ट्रीय, सामाजिक, आध्यात्मिक के भेद से त्यौहार तीन प्रकार के होते हैं। स्वतन्त्रता दिवस, गणतन्त्र दिवस ये राष्ट्रीय त्यौहार हैं। जो समाज को वात्सल्य, सद् व्यवहार, नैतिकता, धार्मिक आचरण की ओर ले जायें उन्हें सामाजिक त्यौहार कहते हैं। दशलक्षण, आष्टान्हिक आदि अध्यात्मिक पर्व हैं।

3 अमावस्या की घनघोर रात्रि से लड़ने वाले नन्हे दीपक हमें शिक्षा देते हैं, कि स्वयं को कमजोर न समझो, यदि सभी मिलकर ज्ञान का प्रकाश करें तो अज्ञान अन्धकार दूर हो सकता है।

4 **ज्ञान दीप तप तैल भर घर शोधे भ्रम छोर।**
या विधि बिन निकसे नहीं पैठे पूरव चोर।।

5. **"जैसी करनी वैसा फल, आज नहि तो निश्चित कल"।**

ज्ञान रुपी दीप में तप रुपी तेल भरकर, भ्रम छोड़कर आत्मा रुपी घर का अवलोकन करना चाहिए, इसके विना पहले के बैठे हुए कर्म रुपी चोर नहीं निकल सकते हैं।

6. मान्यताएँ भले ही अलग-अलग हैं पर दीपावली पर्व सभी जाति के लोग मनाते हैं-

प्रथम मान्यता- जैन परम्परा में प्रत्यूष बेला में महावीर भगवान् को निर्वाण प्राप्त हुआ था,

उसके उपलक्ष्य में लड्डू चढ़ाते हैं, उसी दिन शाम को गौतम गणधर को केवलज्ञान हुआ था, इस कारण दीप प्रज्वलित करते हैं।

द्वितीय मान्यता- हिन्दु परम्परा में रावण का वध करके रामचन्द्र जी अयोध्या लौटे थे, जनता को इच्छित राजा प्राप्त हुआ था, इसलिये दीप जलाते हैं।

तृतीय मान्यता- आज कृष्ण जी ने नरकासुर का वध किया था और हजारों लोगों को उसके चङ्गुल से मुक्त किया था, इसलिए दीप जलाते हैं।

चतुर्थ मान्यता- इस दिन समुद्र मन्थन हुआ जिससे लक्ष्मी जी प्रकट हुयी थीं, इसलिये देवताओं ने लक्ष्मी जी की पूजा की थी।

पञ्चम मान्यता- सिक्खों के अनुसार उनके छठवें गुरू हरगोविन्ददास जी ने जेल से मुक्ति पायी थी।

7. **धनतेरस**- आज के दिन भगवान् ने योग निरोध किया था, जिससे धन्य तेरस कहने लगे, आज यह धनार्जन तेरस हो गयी है।
8. संसार से मुक्ति दिलाने वाले अहिंसा पर्व को मनाते हैं और पटाखा जलाकर असंख्य जीवों को मारते हैं, यह धर्म विरुद्ध है।
9. भगवान् कर्मों से मुक्त हुए थे इस दिन साधु भी चतुर्मास के बन्धन से मुक्त हो जाते हैं, भगवान् ने कर्मजाल को साफ किया था, लोग घरों से मकड़ी के जाल को साफ कर लेते हैं।
10. अर्थी उठने के पहले महावीर की तरह अपने अर्थ(कल्याण) को प्राप्त कर लेना चाहिये।
11. लोगों को तीर्थ नहीं अब अस्पताल, श्मशान एवं कत्लखानों के दर्शन को जाना चाहिए, तीर्थ यात्राएँ अभी तक जो चमत्कार नहीं कर सकीं, वह चमत्कार कत्लखाने कर दिखायेंगे, वहाँ रोंगटे खड़े कर देने वाले दृश्य देखने के बाद शायद ही कोई मांसाहारी रह पायेगा।

★★★

पिच्छी परिवर्तन

1 **रजसेदाणमगहणं, मद्दवसुकुमालदा लहुत्तं च।**
जत्थेदे पञ्चगुणा तं, पडिलिहणं पसंसन्ति।।

जो धूल और पसीना को ग्रहण नहीं करती, कोमल होती है, सुकमार होती है और हल्की होती

है ये पाँच गुण जिसमें होते हैं वह पिच्छिका प्रशंसनीय है, जैसे मयूर पङ्ख कुछ ग्रहण नहीं करते, उसी प्रकार साधु भी कुछ ग्रहण नहीं करते हैं।

2 मयूर कार्तिक माह में पङ्ख स्वयं छोड़ता है, अतः साधु कार्तिक माह में नये पङ्ख ग्रहण करते हैं, पुराने छोड़ देते हैं।

3 मुनि बैठने-उठने, सोने, हाथ-पैर फैलाने में, सङ्कोच करने में, करवट बदलने इत्यादि में पिच्छी का प्रयोग करते हैं।

4 पिच्छि जीव दया का चिन्ह है, लोगों में साधु के प्रति विश्वास कराने वाला चिन्ह है, प्राचीन मुनियों की प्रतिनिधि स्वरूप है।

5 **गाँव के लोग आबाद रहें**-साधु ने सज्जनों की भक्ति पर प्रसन्न होकर बर्बाद होने का आशीर्वाद दिया, अर्थात् सज्जन जहाँ जायेंगे वहाँ धर्म की प्रभावना होगी इसलिए वे फ़ैल जाएँ और प्रमादियों को आबाद होने का आशीर्वाद दिया, अर्थात् प्रमादी लोग जहाँ रहेंगे वहाँ धर्म का ह्रास होगा इसलिए वे एक ही जगह पर रहें।

6 दयालुता एक ऐसी भाषा है जिसे बहरे भी सुन सकते हैं और अन्धे भी देख सकते हैं।

7 **पिच्छी की डण्डी सम्यक्त्व का प्रतीक है, पङ्ख-** चरित्र के प्रतीक हैं और डोरी- ज्ञान का प्रतीक है, जैसे डोरी डण्डी और पङ्ख को सम्भालती है उसी प्रकार ज्ञान बीच में रखा है जो सम्यक्त्व और चरित्र दोनों को सम्भालता है, तथा पिच्छी रत्नत्रय का प्रतीक है।

8 साधु न नोट, न वोट, न सपोर्ट चाहते हैं, केवल श्रावक की खोट चाहते हैं।

9 मयूर ब्रह्मचारी होता है, इसकी आँख के आँसू को मोरनी चाँट लेती है इससे वह गर्भवती हो जाती है।

10 मयूर ऊपर उड़ने के लिये अपने प्रिय पङ्ख स्वयं छोड़ देता है, उसी प्रकार साधु भी ऊर्ध्वगमन करने के लिए प्रिय विषय भोगोंको स्वयं छोड़ देते हैं।

11 श्रावक का साधु के कमण्डलु की भांति आय का श्रोत बड़ा एवं टोंटी की भांति व्यय का श्रोत छोटा होना चाहिए तभी गृहस्थ जीवन धर्ममय हो सकता है।

12 साधु का पिच्छी कमण्डल देखकर यदि श्रावक का आभामण्डल नहीं चमकता है तो समझ लो वह श्रावक मिथ्या दृष्टि है।

★★★

''बुढ़ापे में पत्र आया- समझ में कुछ न आया''

1 सज्जनों के मन में पहले बुढ़ापा आता है अर्थात् सज्जन बुढ़ापा आने के पहले ही विषयों से विरक्त हो जाते हैं और शरीर में बाद में, परन्तु दुर्जनों के शरीर में बुढ़ापा पहले आता है और मन में कभी नहीं आता है। दुर्जनों के शरीर में वृद्धावस्था आने के पहले ही बुढ़ापा आ जाता है पर वे विषयों से विरक्त होते ही नहीं हैं।

2 सफेद बाल रूपी दूत समस्त मनुष्यों के मस्तक पर आरूढ़ हो जोर-जोर से चिल्ला रहा है कि बुढ़ापा और मरण तुम्हारा अनादर कर रहे हैं अत: धर्म करो और पाप से विरक्त हो जाओ।

3 मन, विवेक, आचार, कुलीनता, दृष्टि, लज्जा आदि समस्त गुण वृद्धावस्था में नष्ट हो जाते हैं।

4 जिसमें हड्डियों के टुकड़े पड़े हैं ऐसे चाण्डाल के कुंए को छोड़कर स्त्रियाँ जैसे दूर चली जाती हैं वैसे ही अनादर के अत्यधिक स्थानभूत पुरुषों के बालों की सफेदी को देख तरुण स्त्रियाँ शीघ्र ही दूर चली जाती हैं।

5 शरीर सिकुड़ गया, गति नष्ट हो गई, दाँत गिर गये, दृष्टि चली गई, अन्धेरी बढ़ने लगी, मुख लार से भर गया, बाँधव जन कहा नहीं मानते और स्त्री सेवा नहीं करना चाहती, हाय बड़े कष्ट की बात है कि बुढ़ापे के कारण वृद्ध मनुष्य का पुत्र भी उसके शत्रु के समान हो जाता है।

6 बुढ़ापा राजा, मन्त्री, वैद्य और तपस्वी साधुओं को अलङ्कृत करता है और वेश्या, पहलवान तथा गायक की प्रभुता को समाप्त कर देता है।

★★★

''मृत्यु महोत्सव-जीवन का सबसे बड़ा उत्सव''

1 **उपसर्गे दुर्भिक्षे, जरसि रुजायां च नि:प्रतिकारे।**
धर्माय तनु विमोचनमाहु: सल्लेखनामार्या:।।
जिसका प्रतिकार न किया जा सके ऐसे उपसर्ग के आने पर, दुर्भिक्ष के पड़ने पर, वृद्धावस्था आने पर, धर्म के लिए शरीर का विसर्जन करना सल्लेखना कहलाती है।

2 **अन्त:क्रियाधिकरणं, तप: फलं सकलदर्शिन: स्तुवते।**
तस्माद्यावद्विभवं, समाधि मरणे प्रयतितव्यं।।
सर्वज्ञ भगवान् समाधि मरण को तप का फल कहते हैं, इसलिए शक्ति के अनुसार समाधिमरण के लिए प्रयास करना चाहिये।

3 **आबाल्याज्जिन देव देव ! भवत:, श्रीपादयो: सेवया,**
सेवासक्त विनेय कल्प लतया, कालोऽद्ययावद्गत:।

त्वां तस्याः फलमर्थये तदधुना, प्राणप्रयाणक्षणे,
त्वन्नामप्रतिबद्ध वर्णपठने, कण्ठोऽस्त्व कुण्ठो मम्।।

हे भगवन् ! कल्पवृक्ष के समान फलदायी आपके श्री चरणों की सेवा में आज तक जो मेरा समय व्यतीत हुआ है, उससे जो पुण्य सञ्चित हुआ हो उसके बदले में मैं प्रार्थना करता हूँ कि अन्तिम समय में मेरा कण्ठ अवरुद्ध न हो आपका ही नाम निकले।

4 उपसर्ग में अनेक मुनियों ने सल्लेखना ली, गजकुमार, सुकुमाल आदि बड़े समाधि मरण पाठ से देखें।

5 दुर्भिक्ष- भद्रबाहु स्वामी आदि चौबीस हजार मुनियों को दक्षिण में जाना पड़ा था।

6 **पाँच प्रकार का मरण-** नौ केवल लब्धि वाले केवली का पण्डितपण्डित मरण होता है, छठवें आदि गुणस्थान वाले मुनि का पण्डित मरण होता है, देशव्रती का बाल पण्डित मरण होता है, चौथे गुणस्थान वाले सम्यग्दृष्टि का बाल मरण होता है, मिथ्यादृष्टि जीवों का बालबाल मरण होता है।

7 **पण्डित मरण के तीन भेद हैं-1.भक्त प्रत्याख्यान मरण-** बारह वर्ष तक अपने शरीर की सेवा स्वयं कर सकते हैं एवं पर से करा सकते हैं, **2.इङ्गिनीमरण-** स्वयं की सेवा स्वयं करते हैं दूसरों से नहीं कराते हैं, **3.प्रायोपगमन मरण-** न स्वयं की सेवा स्वयं करते हैं न पर से सेवा करवाते हैं।

8 शास्त्रोक्त विधि से आहार का त्याग कर मरण करना भक्त प्रत्याख्यान कहलाता है।

9 **बारह वर्ष की सल्लेखना-** क्षपक प्रथम के चार वर्षों में काय क्लेश तप करता है, आगे चार वर्षों में षट् रसों का त्याग करता हुआ शरीर कृश करता है, आगे दो वर्ष काँजी का भोजन, स्वाद रहित भोजन करता है, आगे एक वर्ष आचाम्ल भोजन, आगे छह माह मध्यम तप से, अन्तिम छह माह उत्कृष्ट तप करता है।

10 किसी सड़क से गुजरती अर्थी देखकर भगवान् को और अपनी मृत्यु को याद रखना और दूसरों पर किये उपकार को एवं दूसरों ने की तुम्हारी बुराई को भुला देना।

11 अर्थी को देखकर ये मत कहना कि बेचारा चल बसा, किन्तु यह सोचना कि एक दिन हमारी अर्थी भी इसी रास्ते से गुजर जायेगी, लोग सड़क के दोनों ओर खड़े देखते रह जायेंगे, दूसरों की मौत अपने लिये चुनौती है।

12 **शराबियों ने खेई नाव-बढ़ी नहीं एक पाँव-** शराबियों ने रातभर नाव चलाई, रस्सा खोला

नहीं इसलिए वहीं के वहीं रहे, इसी प्रकार मिथ्यात्वरूपी रस्सा नहीं खोला एवं समाधि मरण नहीं किया इसलिए संसार में ही रुल रहें हैं।

13 कोई मुनि यदि मरण काल में एक बार भी अरहन्तों को नमस्कार करता है, तो वह संसार का नाश करता है, जैसे अकेला सूर्य अन्धकार का नाश करता है।

14 ड्रेस और एड्रेस का चेञ्ज होना मरण है।

15 परिचय, परिग्रह, परिकर, परिवार का सम्बन्ध इसी जन्म तक का है।

16 'मृत्यु' मित्र है, उपकारी है, शरीर रूपी पिञ्जरे से छुड़ाने वाली है, इसके विना हम अपने पुरुषार्थ का फल नहीं पा सकते हैं एवं समाधि के समय आत्मविश्वास कार्यकारी होता है।

17 सबसे पहले शरीर के राग का त्याग करना चाहिए, यही मोह की जड़ है।

18 **पिता का मरण न बिगड़ जाय- अतः प्रेम का अभिनय किया जाय-** पति-पत्नी में बहुत दिन से विवाद चल रहा था,इस कारण वे अलग-अलग रहते थे, कुछ दिनों में तलाक होने ही वाला था। एक दिन पत्नी के पिताजी का पत्र आया कि 'बेटा अब हम काशी जाकर सन्यास मरण करना चाहते हैं, इसके पहले हमारी इच्छा है कि कुछ दिन तुम्हारे पास रह लें और देख लें कि तुम सुख से रहती हो, तो हमारा सन्यास मरण अच्छे से हो जायेगा', पत्नी पति के पास आई और बोली 'पिताजी आ रहे हैं इसके बाद उन्हें काशी सन्यास मरण के लिए जाना है, कहीं उनका मरण न बिगड़ जाए इसलिए हम लोग कुछ दिन साथ-साथ रहते हैं', पिताजी आये पति-पत्नी प्रेम पूर्वक रहे, जब जाने लगे तो दोनों पिताजी को छोड़ने रेल्वे स्टेशन गये, जब लौटे तो पुनः अलग-अलग जाने लगे, तो पति ने कहा कि 'पिता का मरण न बिगड़ जाए इसके लिए हम लोग साथ-साथ रह सकते हैं, पर हम लोगों का मरण न बिगड़ जाए इसके लिए हम साथ-साथ नहीं रह सकते ?' पत्नी ने कहा जब बनती नहीं तो साथ-साथ कैंसे रहें, पति ने कहा कि हम प्रेम से रहने का अभिनय करेंगे तो धीरे-धीरे प्रेम हो ही जायेगा, फिर वे मरण बिगड़ने के डर से साथ-साथ रहने लगे।

19 **दुनिया को जीता-किन्तु मौत से हार गए-** जिनके शरीर में नाखून की खरोंच तक नहीं थी, जिन्होंने अनेक राजाओं को जीता था, जो तीन खण्ड के अधिपति थे, जिनके पास सात रत्न थे, एक-एक रत्न की हजार-हजार देव सेवा करते थे, तो भी मृत्यु को नहीं जीत सके, ऐसे लक्ष्मण चाचा की मौत देखकर लव-कुश को वैराग्य हो गया, पिता बलभद्र श्री रामचन्द्रजी को नमस्कार किया और दीक्षा के लिए वन की ओर चले गये।

20 **चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शान्तिसागर जी-**

शक् संवत् 1784/विक्रम संवत्1929, अश्विन कृष्णा षष्ठि (25 जुलाई 1872 बुधवार की रात) को भोजग्राम में पिता भीम गौड़ा, माता सत्यवती के यहाँ जन्म हुआ, आपका नाम सत्यगोड़ा एवं दामोदर भी था। नौ वर्ष की उम्र में सात वर्ष की कन्या के साथ विवाह हुआ, सोलह माह बाद पत्नी की मृत्यु हो गयी, पुनः विवाह कराने से इनकार कर दिया, बैल बीमार होने पर अनुकम्पा वश स्वयं हल जोता एवं मुनि सिद्धसागरजी से आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया। बत्तीस वर्ष की उम्र में वृद्धा माँ को पीठ पर बैठाकर सम्मेदशिखर जी की वन्दना करायी एवं स्वर्णभद्रकूट पर आजीवन घी और तैल का त्याग किया। सैंतीस वर्ष की उम्र में पिता का वियोग हुआ, उसी दिन से एक आहार एक उपवास का नियम लिया। आचार्य देवेन्द्रकीर्ति जी से मुनि दीक्षा का निवेदन किया, फिर उत्तूर ग्राम में विक्रम संवत् 1972(सन् 1915) में क्षुल्लक दीक्षा प्राप्त हुई।

मार्च मङ्गलवार सन् 1920 यरनाल कर्नाटक में मुनि देवेन्द्रकीर्ति जी से मुनि दीक्षा, आठ अक्टूवर सन् 1924 बुधवार को समडोली में आचार्य पद, गजपन्था जी सन् 1937 में चारित्र चक्रवर्ति की उपाधि एवं अठारह सितम्बर सन् 1955 रविवार को कुन्थल गिरी सिद्ध क्षेत्र में भाद्र शुक्ला द्वितीया के दिन समाधि हुयी।

मुक्ता गिरी, श्रवण बेलगोला एवं सोनागिर में क्रमशः तीन बार शेर निकट आया, जङ्गल के मन्दिर में रात भर चींटियों का उपसर्ग हुआ, अठारह करोड़ जप किये, छत्तीस बार भगवति आराधना का स्वाध्याय किया, नौ हजार नौ सौ अड़तीस उपवास किये, छत्तीस दिन सल्लेखना चली, शिथिलाचार परिहार हेतु गुरू ने शिष्य से पुनः दीक्षा ली, आचार्य विद्यानन्दी जी कहते थे कि आचार्य शान्तिसागर जी की साधना के आगे हमारी साधना कुछ भी नहीं है।

21 **आचार्य ज्ञानसागर जी का व्यक्तित्व कर्त्तृत्व-** जन्म वि.सं. 1951 माघ-मास, छाबड़ा-गोत्र, पिता-चतुर्भुज, माँ-घृतवरीदेवी, ग्राम-राणोली, जिला-सीकर राजस्थान, खण्डेलवाल जाति, पाँच भाई, आप दूसरे नम्बर के थे, आठ वर्ष में पिता की मृत्यु, आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी, प्रारम्भिक शिक्षा गाँव में, बाद में बड़े भाई छगनलाल जी के साथ 'गया'(विहार) नौकरी हेतु गये, पुन अध्ययन हेतु बनारस गये, गङ्गा घाट पर गमछा बेचकर आजीविका चलाते थे, शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण की, आजीवन ब्रह्मचर्य लिया, दयोदय, भद्रोदय, सुदर्शनोदय, वीरोदय, जयोदय, विवेकोदय आदि कवि कालीदास के ही जैसी रचनायें की।

22 1978 में अजैन छात्रा किरण टण्डन ने आचार्य ज्ञानसागरजी के व्यक्तित्व-कर्तृत्व पर कुमायु

विश्वविद्यालय से पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। आचार्यश्री ने वि.सं. 2004 में सात प्रतिमा ग्रहण की थी, वि.सं.2012 में क्षुल्लकदीक्षा और वि.सं.2014 में शिव सागर जी से मुनि दीक्षा जयपुर खानियाजी में ग्रहण की थी और बाद में आचार्य पदारोहण हुआ। 30 जून 1968 को अजमेर में कन्नड़ भाषी विद्याधर बालक को मुनि दीक्षा दी। 75 वर्ष की उम्र में चार-पाँच घण्टा न्याय, व्याकरण, साहित्य सिद्धान्त आदि पढ़ाते थे। 22 नवम्बर 1972 को नसीराबाद में आचार्यपद अपने शिष्य विद्यासागर जी को देकर, समाधि की याचना की। 1 जून 1973 को नसीराबाद में समाधिमरण हुआ।

23 **जिनेन्द्र वर्णी**- व्यक्तित्व कर्तृत्व-जिनेन्द्र वर्णी जी का जन्म पानीपत हरियाणा में हुआ था। पिता का नाम भगवानदास एडवोकेट था। इनकी शिक्षा पिताजी से हुयी थी। स्वयं इञ्जीनियर थे, पहले आचार्य विमलसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा हुयी थी। पिता विद्वान् थे, गणेशप्रसाद वर्णीजी भी पानीपत में विराजमान थे, वहाँ पर आर्यसमाज से संस्कृत में शास्त्रार्थ हुआ। जैनी संस्कृत नहीं जानते नहीं थे, तब वर्णी जी ने एक बच्चे को द्रव्य सङ्ग्रह रटा दिया था। जब शास्त्रार्थ हुआ तो सबसे पहले बच्चे को खड़ा कर दिया, आर्य समाज प्राकृत नहीं जानती थी। वे उसका उत्तर नहीं दे सके, भगवानदास जी सभा में खड़े हो गये कि तुम हार गये एवं वर्णीजी ने समर्थन कर दिया, सभा के लोगों ने नारे लगा दिये, जैन समाज की जीत हो गयी थी।

24 शरीर और कषाय का कृश करना सल्लेखना है, जिनेन्द्र वर्णीजी का एक फेफड़ा था, डॉक्टर ने दूसरी बार पानी लेने को कहा, तब सारे समाचार पत्रों में निकलवाया एवं व्रत खेद पूर्वक छोड़े, बाम्बे हास्पिटल में डॉक्टर ने कहा आपको सूप लेना पड़ेगा, वर्णी जी से पिताजी ने कहा डॉक्टर ऐसा कह रहा है, वर्णीजी डॉक्टर के पास स्वयं गये और कहा कि क्या आप दावा कर सकते हैं कि मैं सूप लेकर जिन्दा रह सकता हूँ ? किन्तु मैं दावा करता हूँ कि मैं शाकाहार से जिन्दा रह सकता हूँ। एवं वर्णी जी ने जैनेन्द्र सिद्धान्त कोष की रचना कर जैन संस्कृति को अद्भुत धरोहर समर्पित की है। आचार्य श्री विद्यासागर जी से बाद में पुनः व्रत ग्रहण कर सल्लेखना शुरू की, क्षमासागर जी समयसार सुनाते थे, पन्द्रह गाथा सुनाने के बाद पूँछा और सुनाऊँ ? तो हाथ जोड़ कर बोले इतना उतर जाये तो पर्याप्त है, आचार्य श्री ने कहा वो महान साधक थे वर्णीजी की सन् 1983 ईसरी में सल्लेखना पूर्ण हुयी थी।

25 नैनागिर जी में सब साधुओं की चरणछूकर वन्दना करते थे तो सब साधुओं ने कहा वहीं से कर लिया करो, वर्णीजी ने कहा अविनय होती है।

26 जिसके मन में छल होता है उसकी समाधि बिगड़ जाती है।

27 आचार्य श्री आहार करके आ गए थे, उसी समय वर्णीजी का हाथ जोड़ कर ओम् की ध्वनि के साथ प्राणान्त हो गया था।

28 कुछ महान होते हैं, कुछ महान बनते हैं और कुछ के लिये महानता थोप दी जाती है।

29 मौत और सन्यास उम्र को नहीं देखते हैं।

30 जैसी करनी वैसा फल, आज नहीं तो निश्चित कल।

31 मौत को टाला नहीं जा सकता पर सुधारा अवष्य जा सकता है।

32 अब मेरे मन में नहीं है किञ्चित इच्छा, इसलिये धारण कर रहा हूँ मैं मुनि दीक्षा अर्थात् जिनके मन में सांसारिक कोई इच्छा नहीं रह जाती है वे मुनि दीक्षा लेकर आत्म कल्याण करते हैं।

33 संसारी प्राणी सन्त की तरह जन्मता है, कंस की तरह जीता है और कष्ट से मरता है एवं जन्म के समय दोनों हाथ कानों के पास होते हैं, अर्थात् कहता है कि हे भगवान् ! अब मैं कान पकड़ता हूँ कोई पाप नहीं करूँगा, मुट्ठी बाँध के आता है अर्थात् पुण्य लेकर आता है और खाली करके अर्थात् पाप लेकर जाता है।

34 आज संवेदना खत्म हो गयी है, अखबार में पढ़ते जाते हैं 'बाम्बे में विस्फोट पाँच सौ मौते', चाय की चुस्की लेते जा रहे हैं, लेकिन न प्याला छूटता, न आहार छूटता, न अखबार छूटता है।

35 फूल की सुगन्धी फूल में, शक्कर की मिठास शक्कर में, दीपक का प्रकाश दीपक में, वैसे ही आत्मा का सुख आत्मा में रहता है।

★★★

"गणेश प्रसाद वर्णी"

1 गणेशप्रसाद वर्णी जी निष्काम जनसेवक थे उन्होंने समाज की कुरीतियों पर कुठाराघात किया, समाज की टूटती हुई डाल को हरा भरा किया था, सुलझे विचारों वाले थे एवं जनहित के लिये जगह-जगह पर पाठशालाएं खुलवाई थीं।

2 **अनुकम्पा-** गणेशप्रसाद वर्णी जी सागर मोराजी से वेदान्ती के आगे नदी तक लड़कों के साथ घूमने जाते थे, नदी के पास एक लकड़ी का गट्ठा लिए बुढ़िया बैठी रो रही थी, वर्णीजी ने पूँछा क्या हो गया ? उसने कहा पैर में काँटा लग गया है, चलते नहीं बन रहा, शाम हो गयी, वर्णी जी ने लुहार के यहाँ से संसी मँगायी, उसने नहीं दी, वर्णीजी रोष में बोले ! ''छीन कर ले आओ'' और काँटा निकाला, एक-एक लकड़ी लड़कों को देकर बुढ़िया को उसके घर भेज दिया था।

3 **आठ विशेषताएं-** निरभिमानी, अत्यन्त सरल, आडम्बर शून्य, बातचीत में अपनत्व का अनुभव कराने वाले, उनका जीवन ज्ञान और कर्म की दृष्टि से विकास शील था, सदैव नई बात जानने के इच्छुक, हर धर्म के सन्त, वाणी सीधी-साधी हृदयग्राही होती थी।

4 जिज्ञासु ने थोड़े अक्षर में जैन धर्म जानना चाहा तो वर्णीजी ने कहा- रत्नत्रय।

5 दया और सरलता की मूर्ति, दृढ़ता और अनूभूतिमय प्रवृत्ति 'वज्रादपि कठोराणि, मृदूनि कुसुमादपि' अपने लिए वज्र से भी कठोर एवं दूसरों के लिए फूल से भी कोमल थे।

6 **चादर दान-** जबलपुर कमानिया गेट पर चादर दान दी, तीन हजार में बोली गयी और वह राशि आजाद हिन्द की फौज को भेंट कर दी, यह थी देशभक्ति।

7 **संस्मरण-** खुरई में विद्वान् से पढ़ने की भावना व्यक्त की, उन्होंने पूँछा जैन क्यों बनना चाहते हो ? वर्णीजी ने कहा विशेषता यह है कि जैन लोग पानी छान कर पीते हैं, रात्रि में भोजन नहीं करते, शुद्ध भोजन करते हैं, देवदर्शन करते हैं आदि, तब पण्डित जी बोले- यहाँ अच्छा-अच्छा खाने को मिलता है, इसलिये जैन बनना चाहते हो, वचन रूपी बाण हृदय में लगे, लेकिन सङ्कल्प लिया कि पढ़कर ही मिलूंगा।

''वर्णीवाणी''

8 पर के परिणमन को देखकर हर्ष विषाद करना संसार वृक्ष को पानी देना है, अनन्तानन्त जीव हैं सबके परिणमन स्वतन्त्र हैं।

9 ज्ञान वृद्धि कल्याण की नियामिका नहीं, किन्तु मोह की कृशता नियम से कल्याण की अविनाभावी है।

10 हम उपदेश देने में चतुर हैं पालन करने में असमर्थ हैं, वेश बनाकर मात्र पर को उपदेश देना मोह का विलास ही है।

11 लोक निन्दा के भय से व्रत पालन करने से कोई लाभ नहीं, आत्मा की भयादि परिणति दूर करो।

12 आत्म कल्याण के लिये स्वाध्याय, ब्रह्मचर्य, शुद्ध भोजन आवश्यक है, एवं अपने गुणों-अवगुणों का चिन्तन करें।

13 इच्छाओं का अभाव ही शान्ति का मार्ग है।

14 मोक्ष मार्ग में उतावली करने से कर्मों से छुटकारा नहीं मिलेगा, संसार का वियोग ही मोक्ष का संयोग है।

15 व्रतों का पालन करते हुए ज्ञानार्जन करो, जैन धर्म संसार से पार उतरने की नौका है, इसे पाकर प्रमादी मत बनो।

16 पहले जो कमाया उसे भोगने में आनाकानी मत करो, सम्यग्दृष्टि वही है जो पाप से स्वयं को अलिप्त रखे।

17 खुशी में सब साथ देते हैं, विपत्ति में कोई साथ नहीं देता हैं।

★★★

पण्डित गोपालदास जी बरैया के अनुकरणीय प्रसंग

1 ग्रन्थ की समाप्ति सिद्ध क्षेत्र या अतिशय क्षेत्र पर करते थे, धर्म के प्रति अगाढ़ श्रद्धा थी, एक बार सोनागिर जी गये, दर्शन स्तुति के बाद, एक पद बड़ी मधुर वाणी में पढ़ना प्रारम्भ किया 'नाथ सुधि लीजो जी म्हारी भव-भव दुखिया जानके' इस पद को पढ़ते जाते अविरल अश्रु धारा बहती गयी, ऐसी भक्ति देख लोग गद-गद हो गये थे।

2 **'दिग्भ्रान्त्या पतिता वयं भव वन मध्ये देव।**
सहामहे कष्टं चिराद् दर्शय वर्त्म सदैव।।'
इस पंक्ति को पढ़ते ही पण्डित पन्नालाल जी साहित्याचार्य की आँखों में आँसु आ जाते थे, जब महावीर भगवान की पूजा की जयमाला में 'घननं घननं घन घण्ट बजे' इसको पढ़ते तो मुख कमल खिल जाता था।

3 **सत्य निष्ठ-** पण्डित गोपालदास जी ने बम्बई यात्रा में बेटे माणिक का टिकिट नहीं लिया, वहाँ पहुंचने पर याद आया कि बच्चे की उम्र तीन वर्ष छः दिन हो गयी, इसलिये टिकिट लेना चाहिये था, रेलवे की चोरी का खेद हुआ, घर आकर मनि आर्डर से रेलवे आफिस को आधे टिकिट का पैसा क्षमा माँगते हुए भेज दिया, अङ्ग्रेज था उसने सोचा भारत में इतने प्रमाणिक लोग रहते हैं, उसने पण्डितजी का एड्रेस लेकर सूचना प्रसारित की कि पण्डित गोपालदास जी बरैया, मुरैना न्याय प्रिय व्यक्ति है, यात्रा में इनकी टिकिट और लगेज में पूँछताछ न की जाये।

कुर्त्ता पुराना करना

4 पण्डित गोपालदास जी ने कुर्ते सिलवाये जब बाहर जाने लगे तो, एक-एक कुर्ता पहनते जाते और उतारते जाते, लोगों ने पूछा क्या कर रहे हो? तो कहा इनको पुराने कर रहा हूँ, नये कपड़ों पर टेक्स देना पड़ता है, पण्डितजी सरकारी नियम का उल्लङ्घन नहीं करते थे।

5 पण्डित गोपालदास जी 1958 में बम्बई में रुई व चाँदी का व्यापार करते थे, एक व्यापारी को पचास हजार की रुई बेची, दूसरे दिन वह सस्ती हो गयी, उसको दस हजार का घाटा लग गया, उसने कहा पण्डित जी हमारा मकान ले लो कर्जा चुक जायगा, पण्डित जी बोले मैं खून पीकर पेट नहीं भरता, मैं तुम्हारा मकान ले लूं और तुम्हारे बच्चे दर-दर फिरें, मैं ऐसा नहीं कर सकता, न हमें मकान चाहिये न रुपया।

6 **सुधारक-** विद्यालय के बच्चों ने एक दिन किसी के खेत के चने चुरा लिये, पण्डित गोपालदास जी को पता चला उस दिन भोजन नहीं किया, पण्डितजी को बहुत मनाया पर वे नहीं माने, उन्होंने कहा कि चोरी ही सीखना थी तो संस्था में क्यों आये, मीटिंग हुयी बच्चों ने चोरी के त्याग की प्रतिज्ञा ली, तब पण्डितजी ने शाम को भोजन किया।

7 **ईमानदार-** ट्रेन में पन्द्रह किलो लगेज फ्री में जाता था, पण्डित गोपालदास जी ने छात्रों के साथ लगेज स्टेशन पर भेजा और कहा इसको तुलवा लेना, लगेज बनवा लेना, छात्रों ने लगेज तुलवाया सत्रह किलो निकला, छात्रों से पण्डितजी ने पूँछा लगेज दे दिया, नहीं ! पण्डितजी टी.टी. के पास गये, कहा लगेज बनाओं, टी.टी. ने कहा इतना तो चलता है, पण्डितजी ने टी.टी. से कहा तुम चोरी करते हो और करवाते हो, इतने में गाड़ी चल दी, पण्डितजी ने नास्ते का डिब्बा छात्रों को बापस पकड़ा दिया जो ढाई किलो का था।

8 **पुरुषार्थी-** पण्डित गोपालदास जी का स्वास्थ खराब था, बम्बई से प्रवचनार्थ निमन्त्रण आया, पण्डित जी जाने को तैयार हो गये लोगों ने रोका मत जाओं, तब पण्डितजी ने कहा- जैसे युद्ध में शूर और जुआ में जुआरी को निमन्त्रण मिलने पर रुकता नहीं, ऐसा ही विद्वान् भी होता है।

9 **निरपेक्षवृत्ति-** पण्डित गोपालदास जी की पत्नी ने एक बार विद्यालय के बढ़ई से बच्चे को एक खिलौना बनवा लिया, पण्डित जी को पता चला तो पण्डितजी ने काष्ठ की कीमत, दो घण्टे कारीगर की मेहनत का पैसा विद्यालय में जमा कर दिया, विद्यार्थियों को निरपेक्ष वृति से पढ़ाते थे, उनके पढ़ाये बच्चे सभी ठोस विद्वान् निकले जो समाज के कर्णधार बने।

पत्नि ज्वालामुखी

10 पण्डित गोपालदास जी की पत्नी का तेज स्वभाव था, अपशब्दों के साथ कभी-कभी मार-पीट भी कर देती थी, लोगों ने कहा पण्डितजी इनका स्वभाव ठीक कर दो, पण्डितजी कहते थे भैया, ये हमारे परिणामों की परीक्षिका है, हममें कितना आत्म बल है, ये परीक्षा लेती हैं, मुझे

क्रोध करने का क्या अधिकार है।

गोमटेश यात्रा

11 पण्डित गोपालदास जी की पत्नी ने गोमटेश की भक्ति की और भाव विभोर हो बाहुबली भगवान को साष्टाङ्ग नमस्कार किया, आधा घण्टा तक लेटी रही, पण्डितजी ने समझा शायद बेहोश हो गयी, ठण्डा पानी मँगाकर चेहरे पर छीटे मारे, वैसी ही रही, दुबारा अधिक पानी डाला, जल्दीं उठी और बोली ! क्या होली मचा रखी है, मुझे आनन्द से दर्शन भी नहीं करने देते, पण्डितजी को लगा कि काँटों में भी फूल होते हैं, कठोर हृदय में भी कहीं-कहीं मृदुता छिपी होती है।

12 **सन्तोषी-** पण्डित गोपालदास जी धर्म प्रचार के लिये जाते थे, तो समाज से भेंट या परिश्रम नहीं लेते थे, मात्र मार्ग व्यय लेते थे, उसमें भी ज्यादा आ जाता तो मनि ऑर्डर से वापस कर देते थे।

★★★

दीन हीन अनाथ की सेवा अवश्य करें

13 एक ट्रक में आठ गाय भैंस से ज्यादा नहीं जायेगी, ये कानून है।

14 ट्रक जिस दिशा में जा रहा हो तो पशु का मुख भी उसी दिशा में होना चाहिए।

15 आठ राज्यों में गो हत्या बन्द है, कसाईयों ने अपील की तो नौ जजों ने बैठकर निर्णय लिया चौदह वर्ष से छोटा पशु न काटा जाय।

16 फसल में गो मूत्र के छिड़काव से जीव मरते नहीं, भाग जाते हैं, फसल अच्छी होती है, फलों पर गोमूत्र का छिड़काव करने से फल औषधि युक्त हो जाते हैं, गोमूत्र में एक सौ आठ औषधियां हैं, गोमूत्र के सेवन से अनेक रोग शान्त होते हैं।

17 गाय एक वर्ष में तीन हजार रुपए का घास खाती है, बीस हजार रुपए का सिर्फ गोबर देती है।

18 माँ के दो स्तन होते हैं गाय के चार, दो बछड़े के लिए और दो पालक के लिए होते हैं।

19 माँ बच्चे को दूध पिलाती है, स्तन मुख में कान हृदय में होता है, बालक हृदय से संस्कार लेता है।

20 नेपाल में गाय राष्ट्रीय पशु है, उसको मारने पर फाँसी की सजा होती है।

★★★

पहला सुख निरोगी काया

आयुर्वेद

1 **नित भोजन के अन्त में, तौला भर गुड़ खाय।**
अपच मिटे भोजन पचे, कब्ज शीघ्र मिट जाय।।

2 **हर्र, बहेरा आँवला, घी शक्कर से खाय।**
स्वास्थ्य सदैव बना रहे, अतुलित शक्ति प्रदाय।।

3 **आधा भोजन कीजिये, दुगुणा पानी पीव।**
तिगुणा श्रम चैगुणी हँसी, वर्ष सवा सौ जीऊ।।

4 **काली मिर्च जो पीसकर घी शक्कर से खाय।**
नेत्र दोष वाके मिटे, गिद्ध दृष्टि हो जाय।।
(ग्यारह नग काली मिर्च, पाँच ग्राम गाय का घी, दस ग्राम बूरा)

5 **वमन करे तै कफ मिटे, मरदन मैटे वात।**
स्नान किये ते पित्त मिटे, लङ्घन से जुर जात।।

6 बहेड़ा की छाल को अग्नि में सेंककर चूसने से खाँसी ठीक होती है।

7 मीठा, खट्टा, नमकीन, ''वातनाशक'' रस हैं। मीठा, कषायला, कड़वा, ''पित्तनाशक'' रस है। कड़वा, कषायला, चरपरा ''कफनाशक'' रस है।

8 प्रतिदिन एक या दो नींबू का रस पानी में मिलाकर अन्त में पीने से खायी हुयी वस्तु सड़ती नहीं है।

9 ताजे शीतल जल से स्नान करने से हृदय बलशाली एवं सदा स्वस्थ्य रहता है।

10 कम भात से दूना बल, अधिक भात से रसातल।

11 शरीर की रोज मालिश करने वाला सौ पहलवान से अधिक शक्ति शाली होता है।

12 **घृतात् अष्ट गुणं तैलं मर्दनात् न तु भक्षणात्।** अर्थात्-घी खाने से आठ गुनी ज्यादा शक्ति तैल मर्दन करने से होती है।

13 सोते समय पैर गरम होना चाहिये, भोजन के समय पैर गीले होने से भूख अच्छी लगती है।

14 कान खीचने से दिमाग खुलता है, पहले लोग बड़े-बड़े कुण्डल पहनते थे कि कान खिंचते रहें।

15 आधा चम्मच त्रिफला को छाछ के साथ प्रतिदिन लेने से मोटापा ठीक हो जाता है।

16 जीरे वाला दूध पीने से कर्ण-रोग ठीक होते हैं, श्रवण शक्ति बढ़ती है।

17 **प्राकृतिक चिकित्सा को अपनाएं-** जल चिकित्सा, योग, व्रत, मिट्टी, मालिश, एक्युप्रेशर, सूर्यचिकित्सा, सात्विक भोजन, शान्ति दायक सफ़ेद आदि रङ्गों का प्रयोग करें, आपातकाल में एलोपेथिक का प्रयोग कर सकते हैं।

उचित रङ्गों का चुनाव- नीला रङ्ग शीतलता, हरा रङ्ग सन्तुलन, सफ़ेद रङ्ग शुद्धता व आध्यात्मिकता, लाल व पीला रङ्ग सुस्त मन पर प्रेरक प्रभाव, उत्साह व शक्ति भरते हैं, काला रङ्गघृणा द्वेष को दर्शाता है और मस्तिष्क को सुस्त, मन्द तथा निष्क्रिय बनाता है।

हँसिये और हँसाइये- स्वयं प्रसन्न रहें एवं अपने सानिध्य में रहने वालों को प्रसन्न रखें।

18 सूर्योदय से पूर्व का समय ही सर्वाधिक उपयोगी होता है, जब आप प्राणवायु से भरपूर लाभ प्राप्त करते हैं। श्वाँस एवं हृदय रोगों से भी मुक्ति मिलती है। प्राणायाम प्राचीन तकनीक है, इससे ऋषियों ने सैकड़ो वर्षों की उम्र पायी थी और अपने मस्तिष्क को बुद्धिमत्ता का अक्षय कोष बनाया था। प्राणायाम वह उत्तम विधि है, जिससे आप एक पन्थ दो काज नहीं तीन काज वाली उक्ति चरितार्थ करते हैं। एक तो हृदय एवं फैफड़ों का व्यायाम जो हृदय और श्वाँस सम्बन्धी रोगों को व्यक्ति के पास फटकने भी नहीं देता है, दूसरे मस्तिष्क को ऋणायन से भरपूर प्राणवायु रूपी पर्याप्त भोजन मिलता है, तीसरा प्राणायाम से आप अद्भुत शान्ति का अनुभव के साथ मानसिक तनाव से मुक्ति प्राप्त करते हैं।

19 आधा अन्न, दुगनी सब्जी, तिगुना पानी, चार गुनी हँसी से सदा स्वस्थता और प्रसन्नता रहती है।

20 दोपहर भोजन के बाद विश्राम और शाम के भोजन के बाद टहलना कभी न भूलें।

21 प्रेम की भावना स्वास्थ्य प्रदान करती है।

दिशा विज्ञान

22 पूर्व, आग्नेय, दक्षिण, नैऋत्य, पश्चिम, वायव्य, उत्तर, ईशान, धरती, आसमान ये दस दिशाएं हैं।

23 पूर्व में सिर रख कर सोने से विद्या की प्राप्ति होती है, दक्षिण में सिर रख कर सोने से बल और आयु की प्राप्ति होती है, पश्चिम में सिर रख कर सोने से चिन्ता बढ़ती है, और उत्तर में सिर रख कर सोने से धन और जीवन की हानि होती है।

24 चार पहर-शाम छः बजे से नौ बजे तक रौद्र पहर, नौ बजे से बारह बजे तक राक्षस पहर, बारह बजे से तीन बजे तक गन्धर्व पहर, तीन बजे से छः बजे तक मनोहर पहर कहलाता है।

25 रोगी पूरब सिर जो सोए, तन मन का सुख चैन संजोए।
शयन करो ले बाँयी करवट, उठो सदैव दाँहिनी करवट।।
पश्चिम मुख मज्जन कर आना, पूर्व मुखी हो सदा नहाना।
पढ़ने उत्तर मुख हो जाना, भोजन दक्षिण मुख न पकाना।।
पूर्व मुखी होकर जो खाता, लम्बे जीवन का सुख पाता।
दक्षिण मुख होकर जो खाता, भारी नाम बढ़ाई पाता।।
श्वेत वस्त्र उत्तर मुख धारो, पूर्वोत्तर मुख जाप सम्हारो।
उत्तर दक्षिण मुख निहारा, दिशा बोध यह सीखो सारा।।

26 कार्तिक सुदी अष्टमी से अगहन वदी अष्टमी तक, सोलह दिनों को प्राणघातक माना जाता है, इन दिनों में रोग हो गया तो व्यक्ति की मृत्यु भी हो सकती है।

★★★

-संस्कृत श्लोक अनुक्रमणिका-

अ

अनेकसंशयो 5
अजरामरवत्प्राज्ञो 5
अन्यूनमनतिरिक्तं 8
अन्तो णत्थि सुदीणं 8
अन्यदीयमिवात्मीय 25
अश्रोत्रीव तिरस्कृता 28
अर्थनाशं मनस्तापं 28
अनभ्यासे विषं विद्या 29
अयं निजः परोवेति 97
अणुरप्यसतां सङ्गः 97
अमन्त्रमक्षरं नास्ति 101
अभ्युत्थानमुपागते 101
अनाहूतो प्रविशति 102
अनुचित कर्मारम्भो 103
अस्तङ्गते दिवानाथे 120
असम्भवं हेम मृगस्य 126
अबुद्धि पूर्वापेक्षाया 132
अप्पा मेल्लिवि जग 154
अनवरतमहिंसायां 164
अरावप्युचितं कार्य 164
अज्ञान तिमिर व्याप्ति 176
अन्नेन गात्रं नयनेन 191
अचेतनमिदं दृश्य 192
अपकुर्वति कोपश्चेत् 193
अण थोवं वण 230
अङ्गं गलितं पलितं 231
अर्थार्थी जीवलोऽकोयं 231
अरतिकरं भीतिकरं 238
अपि दावानल प्लुष्टं 239
अजल्पन्तो गुणान् 244
अभिमानवने गृद्धि 252
अज्जवि तिरयण शुद्धा 260
अत्थि अणन्ता जीवा 261
अन्धादयं महानन्थो 268
अक्खाणं रसणी 274
अन्तो णत्थि सुइणं 274
अवश्यं यदि नश्यन्ति 274
अहम्मिको खलु सुद्धो 284
अपत्य वित्तोतर 291
अत्यल्पता निमित्त 300
अन्नदान समं दानं 301
अकिञ्चिनोऽहमित्या 321
अहमेदं एदमहं 323
अभ्यस्यान्तरदृशं 324
अकिञ्चनस्य दान्त 324
अन्यायोपार्जितं द्रव्यं 329
अङ्कस्थाने भवे 334

अपिहित महाघोर 340
अदु:खभावितं ज्ञानं 399
अन्त: क्रियाधिकरणं 452

आ

आयु वित्तं ग्रहं 10
आकर्णितोऽपि महितोऽपि 143
आस्तां तव स्तवन 143
आदहिदं कादव्वं 163
आपगासागरस्नान 161
आत्मा प्रभावनीयो 177
आज्ञा भङ्गो नरेन्द्राणां 200
आज्ञा विधायिनी 222
आशा गर्त: प्रति 230
आत्मा नदी संयमतोय 230
आवश्यके मलक्षेपे 252
आहारनिद्राभयमैथुनञ्च 261
आरम्भे णत्थि दया 266
आत्म वित्त परित्यागात् 301
आपदार्थे धनं 306
आसि मम पुव्वमेदं 323
आयु तेजो बलं 339
आद्यं शरीरसंस्कारो 339
आत्मायत्तं विषय 402
आकर्णितोऽपि 448
आबाल्याज्जिन देव 452

इ

इदमेवे दृषमेव 158
इह जन्मनि विभवादी 159
इह जाहि वाहिया 266
इंदिय कसाय सण्णा 291
इत्येतन्मोक्षमूलं 439

उ

उपदेशो हि मूर्खा 9
उद्यमेन हि सिद्धयन्ति 133
उत्सवे व्यसने चैव 164
उत्तमे तु क्षणं कोप: 182
उपाध्याये नटे धूर्ते 216
उद्योतनं महेनेकं 254
उत्कृष्ट पात्रम् 301
उत्तमा स्वात्म चिन्ता 322
उवसम सुहमाहारे 369
उच्चैर्गोत्रं प्रणते 434
उपसर्गे दुर्भिक्षे 452

ए

एकस्यापि विरोधेन 28
एक: स्वादु न भुञ्जीत् 111
एकत: सकलं पापं 240
एग णिगोद सरीरे 261
एकाकी निष्पृह: शान्त: 322
एयत्तु असम्भूदं 323
एगो मे सासदो 323
एक्को जीवो जायदि 323

एदम्हि रदो णिच्चं	349
एकेनाकर्षन्ती	360
एकमेवाक्षरं यस्तु	434
एकाक्षर प्रदातारं	435
एवं पणमिय सिद्धे	445
ऐहिक फलानपेक्षा	300
ऐश्वर्यस्य विभूषणं	335

औ

औचित्यमेकमेकत्र	27

क

काव्य शास्त्रविनोदेन	5
काक चेष्टा वकु:	21
कीटोऽपि सुमनसङ्गा	97
को जानात्यत्र किं	126
कृत्वा धर्म विघातं	267
कषायाकुलितो जीव:	151
कालुष्य कारणे जाते	151
कर्मपाक भवानेक	152
काम क्रोध मदादिषु	162
कर्म परवशे सान्ते	159
क्षुत्तृष्णा शीलोष्ण	160
कापथे पथि दु:ख	161
कौरव शतं वयं	160
क्रोधात् भवति सम्मोह:	181
क्षणे रुष्टा क्षणे	181
कषायै: रञ्जितं	182
क्षमा शस्त्रकरे यस्य	191
करोतु न चिरं घोरं	191
क्रोधस्त्वया यदि	192
कास्ता: दृशो यासु	216
कार्यार्थं भजते लोको	224
कर्म बध्नाति यज्जीवो	229
किमिराय चक्कतणुमल	230
कोहो पीइं पणासेइ	231
केयूरा न विभूषयन्ति	245
कुलप्रसूतस्य न	245
कर्त्तव्यमेव कर्त्तव्यं	260
करिष्यामि करिष्यामि	267
कधं चरे कधं चिट्ठे	275
कषाय विषयाहारो	287
करोतु न चिरं	291
किं काहदि वणवासो	291
किमिति कठोरं	299
क्षिति गतमिव	301
काले कलौ चले	301
कृपणेन समोदाता	307
कुण्डनी, पेषणी	307
कादाचित्को बन्ध:	329
कुशल विलय ज्वाला	340
कावि अपुव्वा दीसई	402
काले कलौ चले	432

ख

खण्डितानां विरूपाणां 244
खादन्न गच्छामि 29
खम्मामि सव्व जीव 353
खलानां कण्टकानां च 103

ग

ग्रामो नास्ति कुतः 26
गतानुगतिको लोको 156
गुणा गुणज्ञेषु गुणी 97
गुणाः सर्वत्र पूज्यन्ते 104
गुणाः कुर्वन्ति दूतत्वं 104
गुरुभक्तो भवाद् 207
गुणाधिकतया मन्ये 227
गदिमधिगदस्स देहो 268
गृद्धयै हुङ्कारादि 252
गृहकर्मणापि 303
गोदुग्धं वाटिका 309
गङ्गा पापं शशि 432
गुरुं हुङ्कृत्य तुङ्कृत्य 434
गुरूर्ब्रह्मा गुरू 434
गुरून् प्रतिभुवः 435
गुरु भक्ति संजमेण 445

घ

घृतात् अष्ट गुणं 462

च

चण्डो ण मुचई 23
चागी भद्दो चोक्खो 24
चरिया पमादबहुला 292
चक्षुभ्यां हँसते विद्वान् 26
चन्दनं शीतलं लोके 98
चातुर्मासे तु सम्प्राप्ते 120
चरिया पमाद बहुला 125
चतुर्विधस्य सङ्घस्य 152

छ

छेदन भेदन मरण 238

ज

जिणसत्थादो अट्ठे 6
जेण रागा विरज्जेज्ज 6
जिणवयणमोसहमिणं 8
जना घनाश्च वाचालाः 9
जाणइ कज्जाकज्जं 24
जिन पूजा प्रभावेन 134
जिनाधीशस्य सत्पूजां 134
जो जाणदि अर्हन्तं 137
जन्मोन्मार्ज्यं भजतु 143
जिने भक्ति र्जिने 143
जातेऽत्र दुष्कृते घोरे 151
ज्ञानं मद दर्पहरं 208
ज्ञानं पूजां कुलं 208
ज्ञान हीनोऽविवेकी च 240
ज्ञानं यत्र पुरस्सरं 276/427
ज्ञानारूढ़ं शमयम 402

जो चिन्तेई ण बंकम्	213
जन्मभूमिरविद्याना	217
जनकश्चोपनेता च	224
जेसिं विसएसु रदी	264
जो खलु संसारत्थो	268
जने जने न वैराग्यं	274
जलेन जनितः पङ्कः	287
जो विसहदि दुव्वयणं	292
जिनालये च तदबिम्बे	293
जह णाम को वि	349
जे णय दिट्ठि विहीणा	360
जई जिणमयं पवज्जह	360
जह भारवहो पुरिसो	373
जाड्यन्धियो हरति	411
ज्ञानं यत्र पुरः सरं	427

ण

ण य पत्तियइ	23
ण य कुणइ पक्ख	24
णवि सिज्झई वत्थधरो	260
णिव्वेग तियं भावई	298

त

तवयरणं वयधरणं	275
तत्व ज्ञान विहीनानां	22
तुष्यन्ति भोजने विप्राः	27
तुष्यन्ति भोजने	126
त्वत्संस्तवेन भव	143
तारुणं लावणं पिय	222
तृष्णा न जीर्णा	231
तत्तपोऽभिमतं बाह्यं	291
तृष्णा दानव पीड़ित	299
तपस्वी व्रती मौनी	238
तिल तैलमैवमिष्टम्	339
तित्थयरा तप्पियरा	376
त्रैकाल्यं द्रव्य-षट्कं	439
त्वं तारको जिन	448

द

दिव्येन ध्वनिना देवास्	10
दिवसेनैव तत्	25
देहेनिर्ममता गुरौविनमता	26
दुर्जन जन संसर्गात्	97
दुर्जनेन समं सख्यं	98
दोषान् गृह्णाति यत्नेन	103
दारिद्रं नाशनं शीलं	105
देवाधिदेव चरणे	142
देवागम नभोयान	144
देवे सङ्घे श्रुते	152
दर्शनाच्चरणाद्वापि	162
दग्धं दग्धं त्यजति	193
दुःखे णज्जइ अप्पा	276
दया दम त्याग	276
दाता नीचोऽपि	304
देवः सः किं भवति	304

दानाय यस्य न धनं 304
दिग्देशेभ्यः खगा एत्य 322
दिगम्बराः हि जायन्ते 322
दर्शनेन जिनेन्द्राणां 411
दिवि दिवाकरो 445
दिग्भ्रान्त्या पतिता 459

ध

धर्मे धर्मफले शास्त्रे 151
धर्मोऽभिवर्द्धनीयः 162
धर्म निर्मूल विध्वंसं 177
धर्मनाशे क्रियाध्वंसे 245
धम्मो मंगल मुक्किट्ठं 291
धैर्यं यस्य पिता 435

न

न कश्चित् कस्य 164
न चोरहार्यं न च 4
नास्ति कामसमो 4
न शीतलाश् चन्दन 6
नित्यं हिताहार 25
न रणे विजयाच्छूरा 27
नदीनां शस्त्र पाणि 28
नयेन नेता विनयेन 29
निधानं सर्व रत्नानां 97
न्यायोपात्तधनो यजन 102
नासा मुखे तथा 138
नरत्वेऽपि पशूयन्ते 155
नरस्याभरणं रूपं 192
नास्ति क्रोध समं 192
नमन्ति फलिनो वृक्षाः 208
नागो भाति मदेन 222
नृ जन्मन्यपि यः 239
न तथा चन्दनं चन्द्रः 245
नापृष्टः कस्यचिद् 254
न तदस्तीन्द्रीयार्थेषु 267
न्यायोपात्त धनो 275
नामापि यः स्मर 304
नाहं रामो न मे 323
नाहं जानामि 349
नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि 362
निष्ठिवनमवष्टम्भ 434

प

पुस्तकस्था तु या 7
पदमक्खरं च एक्कं 8
प्राज्ञः प्राप्त समस्त 9
प्रथमेनार्जिता विद्या 104
पतिते जिनबिम्बे 138
परोपकाराय वहन्ति 169
प्राणात्य येऽपि 193
पश्य लक्ष्मण ! पम्पायां 216
पात्रे त्यागी गुणे 222
परिभोगोप 230
पैशून्य हास गर्भं 238

प्राप्नुवन्त्यति घोरेषु	239
पर परिभव परिवाद	239
प्रियवाक्य प्रदानेन	249
पदानि यानि विद्यन्ते	253
प्राणि पञ्चेन्द्रिया ज्ञेयाः	258
पाषाणेषु यथा हेम	258
प्राप्ते रत्नत्रये सर्वं	260
पदमायान्निधिं कुर्यात्	298
पलितैक दर्शनादपि	307
पाकं त्यागं विवेकं	339
पुढवी आदि चउण्हं	373
पर निन्दा समं	394
पडपडिहारसिमज्जा	396
प्रथमानुयोगमार्था	408
पुरा गर्भादिन्द्रो	427

ब

बिम्बादलोन्नति	144
बन्धाय विषयासक्तं	260
बारसविधम्हि वि	287
बाह्य ग्रन्थ विहीनाः	321

भ

भीत्येवाभिमुखान्त	28
भोगे रोग भयं	103/225
भिक्खं चर वस रण्ये	273
भोगी च रोगमाप्नोति	274
भोज्यं भोजन शक्तिश्च	301
भुक्ति मात्र प्रदाने	301

म

मातेव रक्षति	6
मोहेन सवृतं ज्ञानं	8
मन्दो बुद्धि विहीणो	23
मरणं पत्थेइ रणे	24
मूर्खाः यत्र न पूज्यन्ते	28
मूखैरलब्धतत्वैश्च	28
मूढ़त्रय मदाश्चाष्टौ	156
मौनं कालविलम्बश्च	102
माता यस्य गृहे नास्ति	103
माता शत्रुः पिता वैरी	103
माद्यनमित्रकलत्र	151
मृग मीन सज्जनानां	181
मैत्री प्रमोद कारुण्य	191
मनस्येकं वचस्येकं	216
मित्रद्रुहः कृतघ्नस्य	225
मा धाव मा धाव	230
मूकता मतिवैकल्यं	240
मौनमेव हितं पुंसां	250
मूकः परापवादे	254
मणुआ सुरामरिंदा	266
मनो यस्य वशं	274
मा मुज्झह मा	286
मणुवगईए वि तवो	292
मोहादिना निषिद्धे	298

मा कुरु मा कुरु	299
मिथ्यादृशोऽपि	305
मलबीजं मलयोनिं	334
मासे मासे व्यतिक्रान्ते	338
माता स्वसा दुहित्रा	339
मैथुनाचरणे मूढ़:	340
मत्तेभ कुम्भ दलने	348
मनसा जनितं पापं	389
मान्यं ज्ञानं तपो	400
मन्त्रे तीर्थे द्विजे	432

य

य: शम: प्राक् सम	193
य: श्वाभ्रान्मां समा	193
यत्र विद्वज्जनो	4
यथा खरश्च चन्दन	6
येषां न विद्या	7
यत्पुष्णाति भवे भवे	9
यस्य त्रिवर्ग शून्यानि	104
यौवनं जीवितं चित्तं	105
यादृशं भक्षयेदन्नं	105
यस्य पुण्यं च पापं	129
यदर्च्चा भावेन	142
ये परस्खलितोन्निद्रा:	162
यद् यद् कुरुते	194
यदा किंचिज्ञोऽहं	208
यदीच्छसि वशी कर्तुं	249
यदि स्वयमशान्तोऽसि	254
यावज्जीवं सुखं	267
यावत् स्वस्थ मिदं	276
यो न वेत्ति परं	286
यदज्ञानेन जीवेन	287
यज्जीवस्योपकाराय	287/291
यदि क्रोधादयस्क्षीण	292
याचका: नैव याचन्ते	311
यान्ति न्याय प्रवृत्त	322
यतो न किञ्चित्ततो	322
यस्य मोक्षेऽपि ना	324
य: पर दारेषु मातृ	334
योषिद्विषय सङ्कल्पं	339
यां चिन्त्यामि सततं	342

व

वासी चन्दन तुल्यान्त	193
विद्या विवादाय	5
विद्या ददाति विनयं	5
वैराग्य रङ्गा पर	6
वैदुष्येण हि वंशत्वं	7
विद्वत्वं च नृपत्वं	7
विद्या नाम नरस्य	7
वरमेको गुणी पुत्रो	22
व्यसनानि सन्ति	26
वित्ते त्याग: क्षमा	27
विषय विरति: संग	29

विनयं राजपुत्रेभ्यः 29
विषय कषाओ गाढ़ो 30
वृथा वृष्टिः समुद्रेषु 111
वार्द्धक्ये वनिता मृति 127
वने रणे शत्रु जला 129
विपदि धैर्यमथाभ्यु 130
विघ्नौघाः प्रलयं 142
विषापहारं मणिमौषध 142
वरं नरक वासोऽपि 155
वरोपलिप्सयाशावान् 161
वैरं वैश्वानर व्याधिः 181
वत्थु सहावो धम्मो 192
विद्या विवादाय 207
विद्या ददाति विनयं 207
वेणुव मूलोरब्भय 215
विहाय ये निर्वृतिमव्य 231
वाणी मनोरमा तस्य 253
वद समिदि कसायाणं 258
वत्थु सहावो धम्मो 258
वरं व्रतैर्पदं दैवं 261
विपति धैर्यमथाभ्युदये 276
वनेऽपि दोषाः प्रभ 286
व्याजेन द्विगुणं 304
विषयासक्त चित्तानां 339
वपुर्गृहं धनं दाराः 30/339
वैराग्यं तत्वविज्ञान 286/399
विषयासक्त चित्तानां 416
विन्यस्येदंयुगीनेषु 432
विषयाशावशातीतो 432

र

रूपयौवन सम्पन्ना 5
रूसई णिन्दइ अण्णे 23
रागो जस्स पसत्थो 129
राजपत्नी गुरोः पत्नी 224
रात्रिर्गमष्यिति भवि 267
रविवारात्तु लवणं 275
रे खर्जूरानोकह ! 299
रागद्वेषासंयम 300
रत्तो बन्धदि कम्मं 307
राज्ञि धर्मणि 424
रत्नत्रय विशुद्धः सन् 432
रज सेदाणमगहणं 450

ल

लालनात् बहवोदोषा 104
लोके शास्त्राभासे 161
लक्ष्मी वसति जिव्हाग्रे 250
लौल्य त्यागात् तपो 253
लब्धं जन्म फलं 260
लक्ष्यमेकं तु निश्चित्य 261
लालयेत् पञ्चवर्षाणि 104

श

शनैः पन्था शनैः 102

श्वभ्रद्वाराणि चत्वारि 120
श्वापि देवोऽपि देवः 126
शुद्धे ज्ञाने, शुचिनि 142
श्रद्धानं परमार्थाना 140
शम बोध वृत्त 155
शरीरस्थिति हेतु 192
श्रूयतां धर्म सर्वस्वं 208
श्वापाकोलूक मार्जार 239
शतेषु जायते शूरा 245
शुद्धमौनान्मनः सिद्धया 254
श्रोतृणां यः सभामध्ये 254
शुद्धै र्धनै र्विवर्धन्ते 329
शुचं भूमिगतं 334
शीलेन ही त्रयो 335

स

संयमाय श्रुतं धत्ते 29
सकलमनेकान्ता 158
सपरं बाधा सहियं 159
स्वभावतोऽशुचौकाये 160
स्वयं कृतं कर्म यदा 194
सर्वलोके प्रिये तथ्ये 240
साक्षात् मनो-वच 300
सुखार्थिनः कुतो विद्या 7
स्वदेशे पूज्यते राजा 7
सामान्य शास्त्रतो 9
सम्पत्तौ नियमः शक्तौ 26
सत्यं वदात्र यदि 28
स्त्रीषु राजकुले 28
साधूनां दर्शनं पुण्यं 97
सहसा विदधीत न 109
सर्वे भवन्तु सुखिनः 111
सिद्धोऽसि बुद्धोऽसि 113
स हि गमन बिहारी 126
स्नपनं पूजनं 134
सुखाय दुःखानि 142
सोऽहमित्यात्त संस्कारस् 146
संवेयो णिव्वेओ 151
सम्यग्दनर्शन शुद्धः 153
सद्हृदिय पत्तेदिय 155
सग्रन्थारम्भहिंसानां 161
स्वयं शुद्धस्य मार्गस्य 161
स्वयूथ्यान्प्रति सद् 163
सुख दुःख सुबहू 181
सिल पुढवि भेद 191
सेलट्ठीकठ्ठ वेत्ते 200
स्वामिन् ! सुदूरम 208
संसारश्रान्त जीवानां 223
सम सन्तोष जलेण 231
सङ्गात्कामस्ततः 231
सत्येन शुद्धयते वाणी 244
सत्येन धार्यते पृथ्वी 244
सति सन्ति व्रतान्येव 245

सत्यं ब्रूयात् प्रियं	249
सन्तोषः भाव्यते	253
समीक्ष्य व्रतमादेय	275
सङ्ग त्यागः कषाया	286
सर्वेषां जीवानां	286
सङ्ग्रहमुच्चस्थानं	300
सद्मागते किल	305
सुद परिचिदाणु	323
सुरेन्द्र प्रतिमाधीरा	338
सत्यं शौचं श्रुतं	340
सत्वं रेतश्छलात्	340
सत्त दिणा छम्मासा	369
साधूनां सङ्गतिस्सत्यं	410
समस्तं साम्राज्यं	427

ह

हीयते हि मतिस्तात	98
हिंसोज्झित एकाकी	155
हिंसा रहिए धम्मे	155
हुङ्काराङ्गुलि खात्कार	253
हीने संहनने जीवा	260
हिंसैव नरकं घोरं	261
हंहो ! गुणधर	298
हं हो मलयज ! मूले	299
हावो मुख विकारः	338
हत्वा स्व पुण्य	194

हिन्दी पद्यानुक्रमणिका-

अ

अपराजित शत्रु... 53
अनशन ऊनोदार करें... 148
अंधकार में दीप... 169
अप्रसिद्धि में... 207
अगनि, चोर, भूपति... 229
अप्रिय कटुक कठोर... 247
अंधे को अंधा... 250
अंतर विषय... 269
अरी मित्र महल... 439

आ

आतम को हित है... 229
आधा भोजन 462
आदमी देवता... 189
आदमी की जात... 207
आप हर मंजिल... 291
आँख खुली तो... 329
आराम यदि... 341
आज हमें मानव... 443

इ

इच्छा झगड़ा ज्ञान... 117
इच्छाये उस... 190
इक लख पूत... 207
इत्र मित्र चरित्र पवित्र 157

उ

उद्यम साहस... 133
उपकारी निज को 170
उसे सव दुष्ट... 218
उत्तम तप निरवांछित... 291

ऊ

ऊँचे गिरि से... 269

ऋ

ऋषियों का जो... 52

ए

एक चरण हु नित... 11
एक व्यक्ति के... 190
एक बार खाए... 269

ऐ

ऐसों वेद न देखो पांडे... 148

ओ

ओला घोर बड़ा... 119

क

काली मिर्च जो... 462
कम भात से दूना... 462
किसी आम के... 10
कैसे अदा करेंगे... 21
काम क्रोध मद... 53
क्रोधी लोभी कामी... 98
को स्वामी माम मित्र... 116
कम खाना कम... 115
कफ काटन वादि... 117
कर्मों की गति... 128
कहीं पर भूख... 132
कथनी बिन... 133

क्रोध इंसान को शैतान... 178
काले भुजङ्ग... 190
क्रोध तुल्य... 190
कंचन तजना... 206
कारज धीरे होत... 207
कपट छिपाये... 218
कौन कहता है... 218
काया तो बूढ़ी भई... 229
किसी आम के वृक्ष... 328
कनक-कनक ते सौ... 229
कर्म कमण्डलु... 229
केसर चन्दन पुष्प... 229
कोयल काको देत 246
काका घड़ी न खोईये... 269
काना पोंड़ा... 291
कोई मर कर के... 310
क्षण भंगुर जीवन... 148
क्षमा शोभती... 190

ख

खास दास की... 448
खोदो जितना स्रोत... 11
खोटी सङ्गति कटु... 98
खोद खाद घर... 190

ग

गणेशजी के भक्त नाव में... 140
ग्राम वृक्ष के फूल 170
गाली सुनी मन... 190
गो धन गज धन... 229
गाली आवत एक... 250
गिरि से गिर परवो... 336
गुरु को पूँछी... 435
गुरु समान सम... 436
गुरु की महिमा... 438
गुरु कुम्हार... 438
गुरु गोविंद... 438
गुरु से शिष्य... 438

घ

घड़ी न रावको जाने... 268
घास पूस 338
घीव दूध में... 404

च

चित्त मिले तो चेला... 98
चार मिले चौसठ खिले... 168
चिन्तन कुछ... 218
चाह गयी चिंता गयी... 229
चोरी करे निहाई की... 302
चमन में फूल... 438

छ

छोटी सी जिंदगी... 229
छाया माया एक... 328

ज

ज्ञान ही भव का... 10
जो भी सीखा जीव... 11
जैसे माता पुत्र... 11
जाँचे सुर तरु... 35
जो पदार्थ इस... 52

जिस बुध ने... 52
ज्ञान बढ़े गुणवान... 98
जिसके सिर माँ बाप... 110
जा के किये लाज आए... 116
जुआँ माँस अरु... 117
जब तक तेरे पुण्य... 128
जन्म जरा तृखा क्षुधा... 147
जीवन है अनमोल... 133
जो धर्म निभाते... 133
जब चिन्तये तब... 148
जहाँ सुमति तहां... 168
जो तुझको काँटा... 190
जो रहा किसी... 206
जो आज एक... 206
जो मानता है... 207
जब तलक दम... 207
ज्ञानी आप ठगाइए... 221
जो दस बीस पचास... 227
जिसके श्रृंगारों में... 229
जब अपना मन... 229
जो अपनी जिंदगी... 229
जो तप तपे... 291
जहाँ देह अपनी नहीं... 321
जो दिन कटे सो... 332
जेठ तपे रवि... 421
जो पुस्तक पढ़ी... 435
जहाँ तहाँ मिल... 436
जात न पूछो... 438
जो करते हैं गुरु... 435/439
ज्ञान दीप तप... 449
जैसी करनी वैसा... 449

त

तब लों तुम... 439
तन रोगों की खान... 12
तुम निरखत... 134
तरु अशोक के निकट... 147
तुम्हारी शान घट... 191
तीन थान सन्तोष... 229
तुम मत बोलो इस... 250
तप करते योवन... 288
तन मिला तुम... 290
तप चाहे सुरराय... 290
तन से सेवा 302
तप का दीपक... 447

ढ

ढ़ोल की पोल... 443

द

द्रव्य क्षेत्र साधन... 53
दुष्ट तिया का पोषना.. 116
द्वादश तप दश धर्म... 148
दुष्ट भलाई न 170
दुर्जन क्रूर कुमार्ग... 190
दगा किसी का... 218
दश अतिशय जन्म... 146
दुनिया में दो ही बड़े 226
दिन कब बीते हैं... 229

दो पथ पंथी... 287
दिल के फोले... 443
दीक्षा एक लड़ाई है... 447

ध

धीरे धीरे रे मना... 12
धर्मात्मा का रूप... 52
धूर्त नहीं है... 52
धर्म हानी संकलेश... 116
धाम पराया वस्त्र... 116
धर्मी खड़ा बाजार... 168
धर हृदय सन्तोष... 229
धरती पर सोता हूँ... 321

न

नित भोजन के अन्त... 462
निंदक जन पर... 52
न जाने कैसे... 132
निन्दक नियरे... 190
नानक नन्हें... 206
नहीं लहे लक्ष्मी... 218
नमन-नमन में फेर... 218
नारी जने के... 340

प

पर औगुण मुख न... 11
परिजन धन कछु... 11
पाप समय निर्बल... 59
पानी पीना छान... 116
पंक के बिना... 132
पावन मेरे नयन... 134
पूजा तीन प्रकार... 148
पतझड़ में पेड़ के... 148
प्रीति एसी कीजिये... 168
पोथी पढ़ पढ़ जग मुआ... 169
परहित सरस 170
पत्थर अहं का... 207
पैदा हुए व्यापार 226
पर निन्दा सरल... 250
पूत सपूत तो 228
प्रभु जी इतना... 229
पाप त्याग के... 278
पानी बाढ़े नाव... 311
पर नारी पैनी... 341
पर से यदि... 436
पश्चिम मुख मज्जन... 464
पूर्व मुखी होकर जो... 464

ब

बनती है भूमिकाए... 12
बड़े न होते गुणन... 116
बंधु विरोध करें... 125
बढ़े पाप से... 128
बुझते हैं वे दीप जो... 158
बैर की भावना... 190
बल का मान कियो... 200
बिपदाओं के दुःख... 128
बिन स्वारथ कैसे सहे... 240
बहुत पढे तो क्या... 240
बोल उठे अवसर बिना... 248

बहु सुनवो कम बोल... 248
बीतने वाली घड़ी... 268
बाल पने में... 269
बाल पने में ज्ञान... 269
बड़ा फर्क है... 291
बिन माँगे ते दूध... 302

भ

भूख सहो दारिद्र... 10
भला बुरा लखिये... 116
भक्ति भाव भादों नदी... 183
भाव विशुद्ध किये... 206
भोगों को इतना... 288
भोग बुरे भव... 341
भव जल में... 438
भीतर लगन... 438
भविजन धागा प्रेम का... 168

म

मनुष्य जन्म... 12
मूढ़ मुढ़ाना... 12
मंजिल उन्हीं को... 116
मरघट में जाकर... 128
मर जाऊँ माँगू नहीं... 168
मारना है गर... 190
मत रूप निहारो... 206
मन मे होय सो... 213
मुनाफा चौगुना... 218
मन मलिन... 218
माया तो ठगनी भई... 221
मैं जो बन्धन में पड़ा... 240
मनुज जन्म... 269
मन में नवधा... 306
मैं हूँ कौन कहाँ... 321
मैं एकाकी की... 328
मेरे न हुये मैं... 328
मिथ्या दर्शन... 438
यह राग आग... 289

व

वाणी ऐसी बोलिए... 250
वमन करे ते कफ... 462
विविध भाव के... 12
वह जीवित... 52
विपदा को धन राखिए... 116
विश्व का कल्याण... 132
विषय बड़ा... 278
वह मार्ग जरूर... 340

र

रोगी भोगी आलसी... 116
राचन जोग स्वरूप... 291
रोगी पूर्व सिर... 464

ल

लगती है तकदीर... 128
लघुता से प्रभुता... 206
लाख छिपाओ... 218
लोभ पाप का बाप... 229

लाख मूर्ख तज... 11

श

शर सीधा होत है... 52
श्रम इसमें कितना... 53
शास्त्रों का हो पठन... 148
श्वेत वस्त्र... 464
शिक्षित को सारी... 11

स

सरस्वती के... 12
संसार में गुरु कृपा... 22
सङ्गत कीजे साधु की... 98
सुख दुःख दाता... 116
समकित दर्शन ज्ञान... 147
सिद्धों का सुमिरण करें... 147
सुलझे पशु... 10
स्वाध्याय से मिलता... 11
सीख सरल को... 11
साधना अभिशाप को... 148
स्वार्थ त्याग के 170
समझाने में है नहीं... 206
सत्य अहिंसा प्रेम... 240
साँच बराबर तप 246
सच्चा दान वही... 302
सदा सुहागन... 341
सुखी रहें सब... 443
सत्य अहिंसा... 443
संसार में... 445

ह

हर्र बहेड़ा आँवला... 462
हँसी जिसे भाती... 52
हमने जिसे सिखाया... 218
हम निन्दक के... 438
हाय कुछ न कर... 115



प.पू. मुनिश्री निर्लोभसागरजी

जीवन-परिचय

पूर्व नाम	– बाल ब्रह्मचारी श्री कमलकुमार जैन
जन्म स्थान	– तारादेही, जिला-दमोह (म.प्र.)
जन्म तिथि	– 05 अप्रैल 1970
पिता का नाम	– श्री भागचन्द्र बड़कुल
माता का नाम	– श्रीमती मालतीबाई जैन
भाई (दो छोटे)	– श्री अखिलेश जैन, श्री प्रवीण जैन
बहिन (दो)	– श्रीमती सुशीला जैन, श्रीमती संगीता जैन
अध्ययन	– सिद्धांत रत्न, न्याय रत्न
मातृभाषा	– हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत
ब्रह्मचर्य व्रत	– पूज्य 108 श्री निर्वाणसागरजी से 29 जून को
मुनि दीक्षा	– 10 अगस्त 2013, रामटेक, नागपुर
मुनि दीक्षा गुरु	– संत शिरोमणि आचार्यश्री 108 विद्यासागरजी महाराज
कृति संपादन	– सूक्तिमुक्तावली, सुबोध संस्कृत भारती, श्रावक चर्या, दशधर्म स्कंध, वृहद् सामायिक पाठ, नाममालादि शब्दकोश, अराधना पाठावली, जयसेन प्रतिष्ठा पाठ, अमृत भारती, श्रुताराधना, तत्त्वार्थ सूत्र (प्रभाचंद्राचार्य कृत), जैनेन्द्रवृत्ति, आराध्य सूत्र, आराध्य सूक्ति, आराध्य सूत्र भाग-2, णमोकार का जाप करो अपनी रक्षा आप करो इत्यादि।

